अनुक्रमणिका/Index

01. अनुक्रमणिका /Index 01

02. क्षेत्रीय सम्पादक मण्डल/सम्पादकीय सलाहकार मण्डल 06/07

03. निर्णायक मण्डल 08

04. प्रवक्ता साथी 10/11

(Science / विज्ञान)

05. Medicinal Plant, Cynodon Dactylon (L.) Pers. Use As 'Epilepsy' In Amarkantak Region, Central India (Radhe Shyam Napit) 12

06. Ethnomedicinal Study Of Jashpur District With Special Reference To Birhor Tribe Of Chhattisgarh India (Rakesh Kumar Sharma) 16

07. Effect Of Nostophycin Allelochemical On Oryza Sativa (Vaishali Gupta, Deepak Vyas) 20

08. Overview Of Late Sequence Stratigraphy Of Cretaceous Rocks Of Bagh Beds, India (Mamta Pathrade, Amrita Khatri) 24

09. Study On Water Quality And Piscean Diversity Of Bansagar Dam Of Shahdol District MP India (Dr. Prabhu Das Rawat) 28

10. Research Methods and Methodology : A Comprehensive Review (Dr. Pramod Pandit) 34

11. Synthesis of Some 2- styrylquinolines as possible Antimalarial (Part II) (Dr. Malti Dubye (Rawat)) 38

12. Separation Of Amino Acids And Carbohydrates From The Leaves Of Boswellia Serrata Plant By Thin Layer Chromatography (Arti Chaurasia, Anil Gharia) 40

13. Micro analysis of Ascorbic acid and its pharmaceutical preparation with potassium dipertelluratocuprate (III) Reagent (Alok Mishra) 42

14. A Study Of Distribution Of Speed And Angular Width Of Coronal Mass Ejection During 1996 To 2012 (Vinod Kumar Ade) 44

15. Superconductivity (Dr. Neeraj Dubey) 47

16. Mathematics of Cryptography- an Overview (Sudhish Kumar) 50

17. उत्तराखण्ड में पाई जाने वाली औषधीय प्रजातियां (डॉ. अर्चना कुकरेती सकलानी) 53

(Home Science / गृह विज्ञान)

18. महाविद्यालय छात्राओं का जल संरक्षण के प्रति जागरूकता का अध्ययन करना (डॉ. सुषमा शर्मा, प्रियंका गहलोत) 56

(Commerce & Management / वाणिज्य एवं प्रबंध)

19. Dimensions Of Women Empowerment And Non Government Organisation (Dr. M. D. Somani, Bhavana Nahar) 58

20. Comparative Analysis Of Rupee Depriciation On IT And OIL Companies In Period Of (2006-2011) (Jyotsana Verma, Dr. Rajeev Kumar Jhalani) 62

21. A Study of Agricultural Activities Performed by Rural Women and Problems faced by them in Khandwa District of M.P. State (Neha Purohit, Dr. Shailendra Mishra) 67

22. JANMANREGA - Mirror of MGNREGA (Mahatma Gandhi National Rural Employment Guarantee Act) (Amita Singh, Dr. Deepak Talwar) 72

23. Comperative Study Bharat Sanchar Nigam Limited Bharti Airtel Private Limited (Indore Distt.) (Dr. Ashok Verma, Dr. Anita Shinde) 76

24. Is provide monthly salary package avoided suicide by the farmers : an analytical study(Special Reference To The Farmers Of Madhya Pradesh State) (Dr. Rajesh Jain) 79

25. A Critical Evaluation Of Working Capital Management Of Rajasthan Co-Operative Dairy Federation Ltd. (RCDF)(Dr. Nuzhat Sadriwala) 83

26. An Empirical Analysis of Mandatory Disclosure Practices in Listed Manufacturing Companies in India (Dr. Sunil More Jindal, CA Mukesh Agrawal) 86

27. Role Of Women Entrepreneur In Small And Medium Entreprises (Smes) In Madhya Pradesh (Dr. Anoop Kumar Vyas, Urvashi Verma) 89

28. Gender Gap and Women Entrepreneurship (Rahul Suryawanshi) 92

29. Contributions of Cooperative societies in development of Small Scale Industries (Dr. Sapna Soni, Smita Patidar) 94

30. Customer Satisfaction Towards Solar Panel Product In Indore Region : An Analytical Study (Dr. Rajesh Jain) 96

31. मध्य प्रदेश एवं महाराष्ट्र राज्य में केला उत्पादन एवं व्यवसाय का तुलनात्मक अध्ययन (डॉ. अमर वतनानी, वरूण महाजन) 100

32. कृषकों के आर्थिक विकास में राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना का योगदान (इन्दौर जिला विशेष) (डॉ. अनूप व्यास, सीमा परमार) 105

33. फुटकर व्यापारियों द्वारा कम्प्यूटरीकृत लेखांकन प्रणाली का अंगीकरण (डॉ. देवेन्द्र प्रसाद पाण्डेय, आशीष सिंह) 109

34. जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित, धार के वित्तीय विवरणों का विश्लेषण (सोहन सिंह डावेल, डॉ. सुनील कुमार शर्मा) 113

35. नगर पालिका निगमों में कर वसूली एवं कर दायित्व का विश्लेषणात्मक अध्ययन (जबलपुर नगर पालिका निगम के विशेष संदर्भ में) (डॉ.गणेश कुमार दुबे) 116

36. संघर्ष और उसका प्रबंधन (डॉ. पी. वाय. मिश्र) 119

37. ग्रामीण विकास नवीन भारत के संदर्भ में (डॉ. रवि प्रकाश पाण्डेय) 122

38. भारतीय कृषि पर उदारीकरण के फलस्वरूप पड़ने वाले प्रभाव का आर्थिक अध्ययन उमरिया जिला के विशेष सन्दर्भ में (डॉ. राजू रैदास) 124

39. मध्य प्रदेश के औद्योगिक विकास में अधोसंरचना की भूमिका (रामजस चमार) 126

40. जोतों की संख्या की अधिकता एवं जोत का आकार कम होना (म.प्र. के बड़वानी जिले के विशेष सन्दर्भ में) (डॉ. स्मिता शाह) 128

41. आधुनिक अर्थव्यवस्था में उद्यमिता विकास की भूमिका (रमेश कुमार साकेत) 130

42. मध्यप्रदेश पर्यटन में व्यवसायिक सम्भावनाएँ (विजय कुमार साकेत) 132

(Economics / अर्थशास्त्र)

43. Economic Impact of Climate Change on Agriculture Productivity of Madhya Pradesh 134
(With Special Reference to Anuppur District) (Dr. Rajkumar Nagwanshee)

44. जिला अग्रणी बैंक द्वारा निष्पादित कार्य का विश्लेषणात्मक अध्ययन(खरगोन जिले के विशेष सन्दर्भ में) 138
(ललिता बर्गे)

45. आर्थिक सुधारों की बहुप्रतीक्षित पहल-जी.एस.टी. (डॉ. संध्या आमगा) 146

46. मध्यप्रदेश के कृषि विकास में सिंचाई परियोजनाओं का योगदान(छिंदवाड़ा जिले के संदर्भ में) (डॉ. नैनवती धारणे) ... 149

47. भारतीय रेल का अर्थव्यवस्था में योगदान (डॉ. सुनीता बाथरे, आस्था रजक) 152

48. विमुद्रीकरण - कैशलेस अर्थव्यवस्था की दिशा में सार्थक कदम (डॉ. संध्या आमगा) 155

49. शिक्षा का सामाजिक विकास में योगदान का अध्ययन (म.प्र.के पूर्व निमाड़ खण्डवा एवं बुरहानपुर जिले के 158
विशेष संदर्भ में) (राकेश कुमार दिलावरे, डॉ. उषा कुमठ)

50. विज्ञापन का ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों पर प्रभाव का तुलनात्मक अध्ययन (डॉ. अरूणा कुसुमाकर) 160

(Political Seience / राजनीति विज्ञान)

51. पंचायती राज लोकतंत्र का सही स्वरूप - (बड़वानी जिले के संदर्भ में) (डॉ. मीनाक्षी पँवार) 162

52. भारत में न्यायिक विधायन की बढ़ती प्रवृत्ति का परिसंघात्मक स्वरूप में प्रभाव (विकास कुमार दीक्षित) 165

53 नवीकरणीय ऊर्जा - भारत के संदर्भ में एक विवेचना (डॉ. समीना खान खटक) 168

54. छत्तीसगढ़ व नक्सलवाद (डॉ. सुनीला एक्का) 170

55. अम्बेडकर दर्शन और नारी (डॉ. मुकेश शारदे) 172

56. आतंकवाद का वैश्वीकरण (डॉ. रजनी दुबे) 174

57. प्राकृतिक व्यवस्था एवं मानव विकास की संकल्पना (डॉ. जी.एस. वास्कले) 176

58. स्वतंत्र भारत के विकास में महिलाओं का योगदान एवं चुनौतियां (विविध क्षेत्रों में योगदान एवं चुनौतियां) 178
(कृष्ण कुमार गुप्ता)

(History / इतिहास)

59. History of Indigenous Inventions & Innovations (Dr. Aditi Pitaniya) 180

60. Unique Architecture of Ancient Payer Temple of Kashmir (Sabeen Ahmad Sofi) 183

61. भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन में पूँजीपति वर्ग की भूमिका (पंकज कुमार मिश्र) 185

(Sociology / समाजशास्त्र)

62. रायगढ़ के राजनैतिक आंदोलन में स्वर्गीय श्री अमरनाथ तिवारी एवं स्वर्गीय श्री किशोरी मोहन त्रिपाठी की भूमिका (डॉ. रामरतन साहू) 188

63. गोंड़ जनजातियों में गोत्रज व्यवस्था (डॉ. सुदामा प्रधान) 190

64. समाज निर्माण की आधार शिला है , परिवार - एक सामाजिक विश्लेषण (डॉ. उमा लवानिया) 194

65. भारत में बालश्रम और कानून (डॉ. ज्योति मेहता) 196

66. सामाजिक एकता एवं सुरक्षा की दृष्टि से संयुक्त परिवार की आवश्यकता (डॉ. मनोज वानखेड़े) 198

(Geography / भूगोल)

67. जयसिंह नगर एवं जैतपुर विकासखण्ड में शिक्षा का भौगोलिक अध्ययन (डॉ. दशरथ प्रसाद साकेत) 200

(Hindi Literature / हिन्दी साहित्य)

68. इक्कीसवीं सदी के प्रथम दशक के हिन्दी उपन्यास - सांस्कृतिक परिवेश में भूमण्डलीकरण (विनोद कुमार) 203

69. विनय - पत्रिका में भक्ति -दर्शन (निर्मला निठारवाल) 206

70. साहित्याकाश में चमकने वाले दो चाँद, बंकिमचंद्र एवं प्रेमचंद (डॉ. कोयल विश्वास) 209

71. पं. दीनदयाल उपाध्याय का व्यक्तित्व एवं उनके धार्मिक विचारों की प्रासंगिकता (डॉ. भारती शर्मा) 211

72. मोहन राकेश के नाटकों में सामाजिक यथार्थ (शक्ति नेमा) 213

73. राष्ट्रीय आन्दोलन और भारतीय पत्रकारिता (डॉ. गुरविन्दर सिंह गिल) 215

74. 'वेद' अध्ययन की मूल अवधारणा अनुशासन और अधिकार (डॉ. राजश्री नरवणे) 217

75. समकालीन काव्य की राजनीतिक पृष्ठभूमि (डॉ. कला जोशी, रेमी जायसवाल) 219

76. मुक्तिबोध के गद्य साहित्य पर एक दृष्टि (डॉ. अनसूया अग्रवाल) 221

77. बादल सरकार और मोहन राकेश का नाट्य चिंतन -तुलनात्मक अवलोकन (डॉ. कौशल्या शर्मा) 223

78. राष्ट्र की जरूरत के रचनाकार - राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त (डॉ. सरोज जैन) 225

79. आदिवासियों में 'गुदना' प्रथा (डॉ. एम. सिंह मरकाम, बिरज मुवेल) 227

(English Literature / अंग्रेजी साहित्य)

80. The Concept Of Chastity And Naga - Mandala (Dr. Anurodh Chadar) 229

81. Use of Negative capability in the odes of John Keats (Twishampati De) 235

82. Elaboration Of Wisdom In Essays Of Charles Lamb (Dr. Jalaj Dixit) 238

(Sanskrit / संस्कृत)

83. परमऋषियों के आत्मज्ञान का तत्विक अनुशीलन (डॉ. मृगेश कुमार निरत) 240
84. श्रीमद्भागवत महापुराण में उपमामूलक अलंकार का विवेचन (जितेन्द्र ठाकुर) 243

(Education / शिक्षा)

85. Study of Vocational Guidance Needs in Relation to Social Value and Nature of School of Higher Secondary School Students of Indore District (Dr. Pallavi Acharya) 245
86. आचार्य शंकराचार्य एवं टेम्बे स्वामी – एक तुलनात्मक अध्ययन (डॉ. प्रेम छाबड़ा, डॉ. भारती भट, धनराज पाटील)....... 248
87. ऑटिज्म (आत्मकेन्द्रितता) (डॉ. जयबाला गुप्ता) 251

(Law/ विधि)

88. Bail , Its Type & Cancellation in India (Deeksha Dubey) 253
89. अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर विकलांगों के मानव अधिकारों का संरक्षण – एक अध्ययन (डॉ. जैनेन्द्र कुमार पटेल, शशाँक कुमार उपाध्याय) 256

(Others / अन्य)

90. Assessment of awareness regarding eco-friendly garments among students of fashion designing (Dr. Sonal Bhati) 259
91. संचार अनिवार्यता की वैयक्तिक और अंतर्वैयक्तिक तत्वों में भूमिका (डॉ. दीपमाला गुप्ता) 262
92. मीडिया के बाजार में पीछे छूटता सामाजिक सरोकार (संकर्षण परिपूर्णन)........ 265
93. डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन् का परम सत् (नमिता कुमारी) 267
94. डोगरी क्हानियें च बजुर्गें उप्पर आधुनिकीकरण दा असर (शिव कुमार खजूरिया) 269
95. डोगरी लोकगाथाएं च कर्मफल सिद्धांत (डॉ. प्रीति रचना) 271
96. Social Change and Processes in India (Dr. Gouri Shanker Meena) 273
97. Semiconductor Devices & their Importance (Ashok Kumar Verma) 278
98. Employee Turnover: Reasons, Impacts and Retaining Approaches in the Indian Organizations (Dr. Monika Jain, Juned Nagori) 284
99. Employee Retention Strategies (Dr. Syed Saleem Aquil, Sabiha Aquil)........ 291
100. A Sociological Insight into the Process of Town Planning in India (Dr. Rishi Kumar Sharma) 294
101. समकालीन उपन्यास और अमृतलाल नागर (डॉ. सिद्धि जोशी) 299
102. बाल श्रमिकों की समस्या – एक समाजशास्त्रीय अध्ययन (डॉ. आराधना सक्सेना) 303
103. संस्कृतियों और समुदाय पर वैश्वीकरण का प्रभाव (डॉ. लक्ष्मी गुप्ता) 306
104. The Impact of De-Colonisation and Post Modernism on the Poetry of Nissim Ezekiel (Dr. Sitaram) 310

क्षेत्रीय सम्पादक मण्डल अन्तर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय (Regional Editor Board- International & National) मानद्

(01) डॉ. मनीषा ठाकुर .... फुल्टन कॉलेज, एरिजोना स्टेट यूनिवर्सिटी, अमेरिका
(02) श्री अशोककुमार .... एम्प्लॉयब्लिटी ऑपरेशन्स मैनेजर, एक्शन ट्रेनिंग सेन्टर लि. लन्दन, यूनाईटेड किंगडम
(03) प्रो. डॉ. सिलव्यू बिस्यू .... वाईस डीन (वाणिज्य एवं प्रबन्ध) कृषि एवं ग्रामीण विकास महाविद्यालय, बूचारेस्ट, रोमानिया
(04) श्री खगेन्द्रप्रसाद सुबेदी .... सीनियर सॉयकोलॉजिस्ट, पब्लिक सर्विस कमीशन, सेन्ट्रल ऑफिस, अनामनगर, काठमाँडू, नेपाल
(05) प्रो. डॉ. ज्ञानचंद खिमेसरा .... पूर्व प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.) भारत
(06) प्रो. डॉ. प्रमोद कुमार राघव .... शोध निदेशक, ज्योति विद्यापीठ महिला विश्व विद्यालय, जयपुर (राज.) भारत
(07) प्रो. डॉ. एन.एस.राव. .... संचालक, जनार्दनराय नागर राजस्थान विद्यापीठ विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
(08) प्रो. डॉ. अनूप व्यास. .... (पूर्व) संकायाध्यक्ष, वाणिज्य, देवी अहिल्या विश्व विद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत
(09) प्रो. डॉ. पी.पी. पाण्डे .... संकायाध्यक्ष, वाणिज्य (डीन), अवधेश प्रतापसिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत
(10) प्रो. डॉ. संजय भयानी. .... अध्यक्ष, व्यवसाय प्रबंध विभाग, सौराष्ट्र विश्व विद्यालय, राजकोट (गुजरात) भारत
(11) प्रो. डॉ. प्रताप राव कदम .... अध्यक्ष, वाणिज्य, शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.) भारत
(12) प्रो. डॉ. बी.एस. झरे . ... प्राध्यापक वाणिज्य विभाग, श्री शिवाजी महाविद्यालय, आकोला (महाराष्ट्र) भारत
(13) प्रो. डॉ. राकेश शर्मा .... अध्यक्ष, अर्थशास्त्र विभाग, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गुड़गांव (हरियाणा) भारत
(14) प्रो. डॉ. संजय खरे .... प्राध्यापक, समाजशास्त्र विभाग, शास. स्वशासी कन्या स्नात. उत्कृष्टता महा., सागर (म.प्र.) भारत
(15) प्रो. डॉ. आर.पी. उपाध्याय........ परीक्षा नियंत्रक, शासकीय कमलाराजे कन्या स्वशासी स्नातकोत्तर महा., ग्वालियर (म.प्र.) भारत
(16) प्रो. डॉ. प्रदीप कुमार शर्मा .... प्राध्यापक, वाणिज्य विभाग, शासकीय हमीदिया कला एवं वाणिज्य महा., भोपाल (म.प्र.) भारत
(17) प्रो. अखिलेश जाधव .... प्राध्यापक, भौतिकी, शासकीय जे. योगानन्दम् छत्तीसगढ़ महाविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़) भारत
(18) प्रो. डॉ. कमल जैन .... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत
(19) प्रो. डॉ.डी.एन. खड़से .... प्राध्यापक, वाणिज्य, धनवते नेशनल कॉलेज, नागपुर (महाराष्ट्र) भारत
(20) प्रो.डॉ. वन्दना जैन .... प्राध्यापक, हिन्दी, शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
(21) प्रो. डॉ. हरदयाल अहिरवार .... प्राध्यापक, अर्थशास्त्र, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शहडोल (म.प्र.) भारत
(22) प्रो. डॉ. शारदा त्रिवेदी.............. सेवानिवृत्त प्राध्यापक, गृहविज्ञान, इंदौर (म.प्र.) भारत
(23) प्रो. डॉ. उषा श्रीवास्तव .... अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, आचार्य इंस्टीट्यूट ऑफ ग्रेच्यूट स्टडी. सोलदेवानली, बैंगलुरू (कर्ना.) भारत
(24) प्रो. डॉ. गणेशप्रसाद दावरे .... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय महाविद्यालय, बड़वाह (म.प्र.) भारत
(25) प्रो. डॉ. एच.के. चौरसिया .... प्राध्यापक, वनस्पति, टी.एन.वी. महाविद्यालय, भागलपुर (बिहार) भारत
(26) प्रो. डॉ. विवेक पटेल .... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय महाविद्यालय, कोतमा, जिला अनूपपुर (म.प्र.) भारत
(27) प्रो. डॉ. दिनेशकुमार चौधरी .... प्राध्यापक, वाणिज्य, राजमाता सिन्धिया शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत
(28) प्रो. डॉ. आर.के. गौतम .... प्राध्यापक ,वाणिज्य, शासकीय मानकुंवर बाई कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत
(29) प्रो. डॉ. जितेन्द्र के. शर्मा .... प्राध्यापक, वाणिज्य एवं प्रबंध, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय केन्द्र, पालवाल (हरियाणा) भारत
(30) प्रो. डॉ. गायत्री वाजपेयी .... प्राध्यापक, हिन्दी, शासकीय महाराजा स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.) भारत
(31) प्रो. डॉ. अविनाश शेन्द्रे .... विभागाध्यक्ष, अर्थशास्त्र, प्रगति कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, डोम्बीवली, मुम्बई (महाराष्ट्र) भारत
(32) प्रो. डॉ. जी.सी. मेहता .... पूर्व अध्यक्ष, अध्ययन मण्डल वाणिज्य, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत
(33) प्रो.डॉ. बी.एस. मक्कड़ .... अध्यक्ष, अध्ययन मण्डल वाणिज्य, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
(34) प्रो.डॉ. पी.पी. मिश्रा .... विभागाध्यक्ष, गणित, छत्रसाल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पन्ना, (म.प्र.) भारत
(35) प्रो.डॉ. सुनील कुमार सिकरवार.... प्राध्यापक, रसायन, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, झाबुआ (म.प्र.) भारत
(36) प्रो.डॉ. के.एल. साहू................ प्राध्यापक, इतिहास, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत
(37) प्रो.डॉ. मालिनी जॉनसन .... प्राध्यापक, वनस्पति, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, महू (म.प्र.) भारत
(38) प्रो.डॉ. विशाल पुरोहित........... एम.एल.बी. शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, किला मैदान, इन्दौर (म.प्र.) भारत

सम्पादकीय सलाहकार मण्डल (Editorial Advisory Board, INDIA) मानद्

(01) प्रो. डॉ. नरेन्द्र श्रीवास्तव ....प्रसिद्ध वैज्ञानिक 'इसरो' बैंगलुरू (कर्नाटक) भारत

(02) प्रो. डॉ. आदित्य लूनावत ....निदेशक, स्वामी विवेकानंद कॅरियर मार्गदर्शन प्रकोष्ठ उच्च शिक्षा विभाग, म.प्र. शासन, भोपाल (म.प्र.) भारत

(03) प्रो. डॉ. संजय जैन ....पूर्व सहायक नियंत्रक, म.प्र. व्यावसायिक परीक्षा मंडल, भोपाल (म.प्र.) भारत

(04) प्रो. डॉ.एस.के. जोशी ....पूर्व प्राचार्य, शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

(05) प्रो. डॉ. जे.पी.एन. पाण्डेय ....पूर्व प्राचार्य, शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत

(06) प्रो. डॉ. सुमित्रा वास्केल ....प्राचार्य, शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर(म.प्र.) भारत

(07) प्रो. डॉ. पी.आर. चन्देलकर ......प्राचार्य, शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत

(08) प्रो. डॉ. मंगल मिश्र ....प्राचार्य, श्री क्लॉथ मार्केट, कन्या वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

(09) प्रो. डॉ.आर.के. भट्ट ....पूर्व प्राचार्य, शासकीय महिला महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत

(10) प्रो. डॉ. अशोक वर्मा ....पूर्व संकायाध्यक्ष, वाणिज्य (डीन) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत

(11) प्रो. डॉ. टी.एम. खान ....प्राचार्य, शासकीय महाविद्यालय, धामनोद, जिला-धार (म.प्र.) भारत

(12) प्रो. डॉ. राकेश ढण्ड..............संकायाध्यक्ष, विद्यार्थी कल्याण विभाग विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

(13) प्रो. डॉ. अनिल शिवानी...........अध्यक्ष, वाणिज्य एवं प्रबंध विभाग श्री अटल बिहारी वाजपेयी हिंदी विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

(14) प्रो. डॉ. पद्मसिंह पटेल...........अध्यक्ष, वाणिज्य विभाग शासकीय महाविद्यालय, महिदपुर (म.प्र.) भारत

(15) प्रो. डॉ. मंजु दुबे ....संकायाध्यक्ष (डीन), गृह विज्ञान संकाय, जीवाजी विश्वविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

(16) प्रो. डॉ.ए.के. चौधरी ....प्राध्यापक, मनोविज्ञान, राजकीय मीरा कन्या महाविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

(17) प्रो. डॉ. प्रदीप सिंह राव ....प्राचार्य, शासकीय महाविद्यालय, सैलाना, जिला-रतलाम (म.प्र.) भारत

(18) प्रो. डॉ. पी.के. मिश्रा ....प्राध्यापक ,प्राणी शास्त्र, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बैतूल (म.प्र.) भारत

(19) प्रो. डॉ. के. के. श्रीवास्तव ....प्राध्यापक ,अर्थशास्त्र, विजया राजे शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

(20) प्रो.डॉ. कान्ता अलावा............. प्राध्यापक, राजनीति विज्ञान, शहीद भीमा नायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

(21) प्रो. डॉ. एस. के. जैन.............प्राध्यापक ,वाणिज्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, झाबुआ (म.प्र.) भारत

(22) प्रो. डॉ. किशन यादव ....एसोसिएट प्रोफेसर (राजनीति विज्ञान) शोध केन्द्र, बुन्देलखण्ड कॉलेज, झांसी (उ.प्र.) भारत

(23) प्रो. डॉ. बी.आर.नलवाया ....प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.) भारत

(24) प्रो. डॉ. नव्वरलाल गुप्ता ....अध्यक्ष, अध्ययन मण्डल वाणिज्य, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत

(25) प्रो.डॉ. पुरुषोत्तम गौतम ....संकायाध्यक्ष, वाणिज्य (डीन) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय,इन्दौर (म.प्र.) भारत

(26) प्रो. डॉ. एस. सी. मेहता...........प्राध्यापक एवं अध्यक्ष, शासकीय भगत सिंह स्नातकोत्तर महाविद्यालय, जावरा (म.प्र.) भारत

(27) प्रो.डॉ. तपन चौरे .... अध्यक्ष, अध्ययन मण्डल, अर्थशास्त्र, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

****

निर्णायक मण्डल (Referee Board) मानद्

****** विज्ञान संकाय ******

गणित:- .... (1) **प्रो. डॉ.वी.के. गुप्ता,** संचालक वैदिक गणित एवं शोध संस्थान, उज्जैन (म.प्र.)

भौतिकी:- .... (1) **प्रो. डॉ. आर.सी. दीक्षित**, शासकीय होल्कर विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(2) **प्रो.डॉ. नीरज दुबे,** शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

कम्प्यूटर विज्ञान:- .... (1) **प्रो. डॉ. उमेश कुमार सिंह,** अध्यक्ष कम्प्यूटर अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

रसायन:- .... (1) **प्रो. डॉ. मनमीत कौर मक्कड़,** शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्ज्ैन (म.प्र.)

वनस्पति:- .... (1) **प्रो. डॉ. सुचिता जैन,** राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटा (राज.)
(2) **प्रो.डॉ. अखिलेश आयाची,** शासकीय आदर्श विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

प्राणिकी:- .... (1) **प्रो.डॉ. मंजुलता शर्मा,** एम.एस.जे., राजकीय महाविद्यालय, भरतपुर (राज.)
(2) **प्रो. डॉ. अमृता खत्री,** माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.)

सांख्यिकी:- .... (1) **प्रो. डॉ. रमेश पण्ड्या,** शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

सैन्य विज्ञान:- .... (1) **प्रो. डॉ. कैलाश त्यागी,** शासकीय मोतीलाल विज्ञान महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

जीव रसायन:- .... (1) **डॉ. कंचन डींगरा,** शासकीय एम.एच. गृह विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

भूगर्भ शास्त्र:- .... (1) **प्रो. डॉ. आर.एस. रघुवंशी,** शासकीय मोतीलाल विज्ञान महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. सुयश कुमार,** शासकीय आदर्श महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)

चिकित्सा विज्ञान:- .... (1) **डॉ. एच.जी. वरूधकर,** आर.डी. गारड़ी मेडिकल महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

सूक्ष्म जीव विज्ञान:- .... (1) **अनुराग झँवेरी,** बायो केयर रिसर्च (आई) प्रा.लि., अहमदाबाद (गुजरात)

****** वाणिज्य संकाय ******

वाणिज्य :-..................... (1) **प्रो. डॉ. पी.के. जैन,** शासकीय हमीदिया महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. शैलेन्द्र भारल ,** शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(3) **प्रो. डॉ. लक्ष्मण परवाल,** शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

****** प्रबंध एवं व्यवसाय प्रशासन संकाय ******

प्रबंध :- .... (1) **प्रो. डॉ. रामेश्वर सोनी**, अध्यक्ष अध्ययन शाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. आनन्द तिवारी ,** शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर कन्या उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

मानव संसाधन:- .... (1) **प्रो. डॉ. हरविन्दर सोनी**, पैसेफिक बिजनेस स्कूल, उदयपुर (राज.)

व्यवसाय प्रशासन:- .... (1) **प्रो. डॉ. कपिलदेव शर्मा ,** राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटा (राज.)

****** विधि संकाय ******

विधि:- .... (1) **प्रो. डॉ. एस.एन. शर्मा,** प्राचार्य, शासकीय माधव विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. नरेन्द्र कुमार जैन,** प्राचार्य श्री जवाहरलाल नेहरू स्नातकोत्तर विधि महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)

****** कला संकाय ******

अर्थशास्त्र:- .... (1) **प्रो. डॉ. पी.सी. रांका,** श्री सीताराम जाजू शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. जे.पी. मिश्रा,** शासकीय महाराजा स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.)
(3) **प्रो. डॉ. अंजना जैन,** एम.एल.बी. शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, किला मैदान, इन्दौर (म.प्र.)

राजनीति:-..................... (1) **प्रो. डॉ. रवींद्र सोहोनी,** शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. अनिल जैन,** शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(3) **प्रो. डॉ. सुलेखा मिश्रा,** मानकुंवर बाई शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

दर्शनशास्त्र:- .... (1) **प्रो. डॉ. हेमन्त नामदेव,** शासकीय माधव कला-वाणिज्य-विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

समाजशास्त्रः- .... **(1) प्रो. डॉ. एच.एल. फुलवरे,** शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. इन्दिरा बर्मन , शासकीय गृह विज्ञान महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(3) प्रो. डॉ. उमा लवानिया , शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना, जिला-सागर (म.प्र.)

हिन्दीः- .... **(1) प्रो. डॉ. चन्दा तलेरा जैन,** अध्यक्ष अध्ययन मण्डल, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र)
(2) प्रो. डॉ. जया प्रियदर्शनी शुक्ला, वनस्थली विद्यापीठ (राज.)
(3) प्रो. डॉ. कला जोशी, श्री अटल बिहारी वाजपेयी शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)

अंग्रेजीः- .... **(1) प्रो. डॉ. अजय भार्गव,** शासकीय महाविद्यालय, बड़नगर (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. मंजरी अग्निहोत्री, शासकीय कन्या महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)

संस्कृतः- .... **(1) प्रो. डॉ. भावना श्रीवास्तव,** शासकीय स्वशासी महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. बालकृष्ण प्रजापति, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गंजबासौदा जिला विदिशा (म.प्र.)

इतिहासः- .... **(1) प्रो. डॉ. नवीन गिडियन,** शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

भूगोलः- .... **(1) प्रो. डॉ. राजेन्द्र श्रीवास्तव** शासकीय महाविद्यालय, पिपलियामण्डी, जिला मंदसौर (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. काजल मोइत्रा , डॉ. सी वी रामन् विश्वविद्यालय, बिलासपुर (छ.ग.)

मनोविज्ञानः- .... **(1) प्रो. डॉ. कामना वर्मा,** प्राचार्य, शासकीय राजमाता सिंधिया कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. सरोज कोठारी, शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)

चित्रकलाः- .... **(1) प्रो. डॉ. अल्पना उपाध्याय,** शासकीय माधव कला-वाणिज्य-विधि महाविद्यालय उज्जैन (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. रेखा श्रीवास्तव, महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

संगीतः- .... **(1) प्रो. डॉ. भावना ग्रोवर (कथक),** स्वामी विवेकानन्द सुभारती विश्वविद्यालय, मेरठ (उ.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. श्रीपाद अरोणकर, राजमाता सिन्धिया शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिन्दवाडा (म.प्र.)

****** गृह विज्ञान संकाय ******

आहार एवं पोषण विज्ञानः- .... **(1) प्रो.डॉ. प्रगति देसाई,** शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. मधु गोयल, स्वामी केशवानन्द गृह विज्ञान महाविद्यालय, बीकानेर (राज.)
(3) प्रो. डॉ. संध्या वर्मा, शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)

मानव विकासः- .... **(1) प्रो. डॉ. मीनाक्षी माथुर,** अध्यक्ष, जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर (राज.)
(2) प्रो. डॉ. आभा तिवारी, अध्यक्ष अध्ययन मण्डल रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

पारिवारिक संसाधन प्रबंधः- ... **(1) प्रो. डॉ. मंजु शर्मा,** माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इंदौर (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. नम्रता अरोरा, वनस्थली विद्यापीठ (राज.)

****** शिक्षा संकाय ******

शिक्षा .... **(1) प्रो. डॉ. मनोरमा माथुर,** महींद्रा कॉलेज ऑफ एजुकेशन, बैंगलुरू (कर्नाटक)
(2) प्रो. डॉ. एन.एम.जी. माथुर, प्राचार्य एवं डीन पेसेफिक शिक्षा महाविद्यालय, उदयपुर (राज.)
(3) प्रो. डॉ. नीना अनेजा, प्राचार्य, ए.एस. कॉलेज ऑफ एजुकेशन,खन्ना (पंजाब)
(4) प्रो. डॉ. सतीश गिल, शिव कॉलेज ऑफ एजुकेशन, तिगाँव, फरीदाबाद (हरियाणा)

****** आर्किटेक्चर संकाय ******

आर्किटेक्चर .... **(1) प्रो. किरण पी. शिंदे ,** प्राचार्य, स्कूल ऑफ आर्किटेक्चर, आई.पी.एस. एकडेमी, इंदौर (म.प्र.)

****** शारीरिक शिक्षा संकाय ******

शारीरिक शिक्षा .... **(1) प्रो. डॉ. जोगिंदर सिंह,** पेसेफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.)

****** ग्रन्थालय विज्ञान संकाय ******

ग्रन्थालय विज्ञान .... **(1) डॉ. अनिल सिरौठिया,** शासकीय महाराजा महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.)

प्रवक्ता साथी (मानद्)

(01) प्रो. डॉ. देवेन्द्र सिंह राठौड़ .... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(02) प्रो. श्रीमती विजया वधवा .... शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(03) डॉ. सुरेंद्र शक्तावत .... ज्ञानोदय इंस्टीट्यूट ऑफ मेनेजमेंट एंड टेक्नोलॉजी, नीमच (म.प्र.)
(04) प्रो. डॉ. देवीलाल अहीर .... शासकीय महाविद्यालय, जावद, जिला नीमच (म.प्र.)
(05) श्री आशीष द्विवेदी .... शासकीय महाविद्यालय, मनासा, जिला नीमच (म.प्र.)
(06) प्रो. डॉ. मनोज महाजन .... शासकीय महाविद्यालय, सोनकच्छ, जिला देवास (म.प्र.)
(07) श्री उमेश शर्मा .... कृष्णा शिक्षा महाविद्यालय, जावी, जिला- नीमच (म.प्र.)
(08) प्रो. डॉ. एस.पी. पंवार .... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(09) प्रो. डॉ. पूरालाल पाटीदार .... शासकीय कन्या महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(10) प्रो. डॉ. क्षितिज पुरोहित .... जैन कला-वाणिज्य-विज्ञान महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(11) प्रो. डॉ.एन.के. पाटीदार .... शासकीय महाविद्यालय, पिपलियामंडी, जिला मन्दसौर (म.प्र.)
(12) प्रो. डॉ. वाय.के. मिश्रा .... शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(13) प्रो. डॉ. सुरेश कटारिया .... शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(14) प्रो. डॉ. अभय पाठक .... शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(15) प्रो. डॉ. मालसिंह चौहान .... शासकीय महाविद्यालय, सैलाना, जिला रतलाम (म.प्र.)
(16) प्रो. डॉ. गेंदालाल चौहान .... शासकीय विक्रम महाविद्यालय, खाचरौद, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(17) प्रो. डॉ. प्रभाकर मिश्र .... शासकीय महाविद्यालय, महिदपुर, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(18) प्रो. डॉ. प्रकाश कुमार जैन .... शासकीय माधव कला वाणिज्य विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(19) प्रो. डॉ. कमला चौहान .... शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(20) प्रो. डॉ.आभा दीक्षित .... शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(21) प्रो. डॉ. पंकज माहेश्वरी .... शासकीय महाविद्यालय, तराना, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(22) प्रो. डॉ. डी.सी. राठी .... स्वामी विवेकानंद कॅरियर मार्गदर्शन प्रकोष्ठ, उच्च शिक्षा विभाग, म.प्र. शासन, इंदौर
(23) प्रो. डॉ. अनिता गगराड़े .... शासकीय होलकर विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(24) प्रो. डॉ. संजय पंडित .... शासकीय एम.जे.बी. कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.)
(25) प्रो. डॉ. रामबाबू गुप्ता .... शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(26) प्रो. डॉ. अंजना सक्सैना .... शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(27) प्रो. डॉ. सोनाली नरगुन्दे .... पत्रकारिता एवं जनसंचार अध्ययनशाला देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(28) प्रो. डॉ. भारती जोशी .... आजीवन शिक्षण विभाग देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(29) प्रो. डॉ. एम.डी. सोमानी .... शासकीय एम.जे.बी. कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.)
(30) प्रो. डॉ. प्रीति भट्ट .... शासकीय एन.एस.पी. विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(31) प्रो. डॉ. संजय प्रसाद .... शासकीय महाविद्यालय, सांवेर, जिला इन्दौर (म.प्र.)
(32) प्रो. डॉ. मीना मटकर .... सुगनीदेवी कन्या महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(33) प्रो. मोहन वास्केल .... शासकीय महाविद्यालय, थांदला, जिला - झाबुआ (म.प्र.)
(34) प्रो. डॉ. नितिन सहारिया .... शासकीय महाविद्यालय, कोतमा, जिला अनूपपुर (म.प्र.)
(35) प्रो. डॉ. मंजु राजोरिया .... शासकीय कन्या महाविद्यालय, देवास (म.प्र.)
(36) प्रो. डॉ. शहजाद कुरैशी .... शासकीय नवीन कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, मूंदी, जिला खण्डवा (म.प्र.)
(37) प्रो. डॉ. शैल बाला सांधी .... महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(38) प्रो. डॉ. प्रवीण ओझा .... श्री भगवत सहाय शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(39) प्रो. डॉ.ओमप्रकाश शर्मा .... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, श्योपुर (म.प्र.)
(40) प्रो. डॉ. एस.के. श्रीवास्तव .... शासकीय विजया राजे कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(41) प्रो. डॉ. अनूप मोघे .... शासकीय कमलाराजे कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(42) प्रो. डॉ. हेमलता चौहान .... शासकीय महाविद्यालय, बड़नगर (म.प्र.)
(43) प्रो. डॉ. महेशचन्द्र गुप्ता .... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.)
(44) प्रो. डॉ. मंगला ठाकुर .... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वाह, जिला खरगोन (म.प्र.)
(45) प्रो. डॉ. के.आर. कुम्हेकर .... शासकीय महाविद्यालय, सनावद, जिला खरगोन (म.प्र.)
(46) प्रो. डॉ. आर.के. यादव .... शासकीय कन्या महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.)
(47) प्रो. डॉ. आशा साखी गुप्ता .... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.)

(48) प्रो. डॉ. बी. एस. सिसोदिया .... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.)
(49) प्रो. डॉ. प्रभा पाण्डेय .... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मैहर, जिला- सतना (म.प्र.)
(50) डॉ. राजेश कुमार .... शासकीय महाविद्यालय अमरपाटन, जिला-सतना (म.प्र.)
(51) प्रो. डॉ. रावेन्द्रसिंह पटेल .... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.)
(52) प्रो. डॉ. मनोहरलाल गुप्ता .... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, राजगढ़ ब्यावरा (म.प्र.)
(53) प्रो. डॉ. मधुसुदन प्रकाश .... शासकीय महाविद्यालय, गंजबासोदा, जिला-विदिशा (म.प्र.)
(54) प्रो. युवराज श्रीवास्तव .... सी.वी. रमन विश्वविद्यालय, कोटा-बिलासपुर (छ.ग.)
(55) प्रो. डॉ. सुनील वाजपेयी .... शासकीय तिलक स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कटनी (म.प्र.)
(56) प्रो. डॉ. ए.के. पाण्डे .... शासकीय कन्या महाविद्यालय, सतना (म.प्र.)
(57) प्रो. डॉ. यतीन्द्र महोबे .... शासकीय महिला महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.)
(58) प्रो. डॉ. शशि प्रभा जैन .... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, आगर-मालवा (म.प्र.)
(59) प्रो. डॉ. नियाज अंसारी .... शासकीय महाविद्यालय,सिंहावल, जिला सीधी (म.प्र.)
(60) प्रो. डॉ. अर्जुनसिंह बघेल .... शासकीय महाविद्यालय, हरदा (म.प्र.)
(61) डॉ. सुरेश कुमार विमल .... शासकीय महाविद्यालय, भैंसादेही, जिला बैतूल (म.प्र.)
(62) प्रो. डॉ. अमरचन्द्र जैन .... शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)
(63) प्रो. डॉ. रश्मि दुबे .... शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)
(64) प्रो. डॉ. ए.के. जैन .... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बीना, जिला- सागर (म.प्र.)
(65) प्रो. डॉ. संध्या टिकेकर .... शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना, जिला- सागर (म.प्र.)
(66) प्रो. डॉ. राजीव शर्मा .... शासकीय नर्मदा स्नातकोत्तर महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(67) प्रो. डॉ. रश्मि श्रीवास्तव .... शासकीय गृह विज्ञान महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(68) प्रो. डॉ. लक्ष्मीकांत चंदेला .... शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिंदवाड़ा (म.प्र.)
(69) प्रो. डॉ. बलराम सिंगोतिया .... शासकीय महाविद्यालय सौंसर, जिला-छिन्दवाड़ा (म.प्र.)
(70) प्रो.डॉ. विम्मी बहल .... शासकीय महाविद्यालय, काला पीपल, जिला - शाजापुर (म.प्र.)
(71) प्रो. डॉ. अमित शुक्ल .... शासकीय ठाकुर रणमतसिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
(72) प्रो. डॉ. मीनू गजाला खान .... शासकीय महाविद्यालय, मक्सी, जिला-शाजापुर (म.प्र.)
(73) प्रो. डॉ. पल्लवी मिश्रा .... शासकीय महाविद्यालय, नई गढ़ी, जिला- रीवा (म.प्र.)
(74) प्रो. डॉ. एम.पी. शर्मा .... शासकीय महाविद्यालय, दतिया (म.प्र.)
(75) प्रो. डॉ. जया शर्मा .... शासकीय कन्या महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)
(76) प्रो. डॉ. सुशील सोमवंशी .... शासकीय महाविद्यालय, नेपानगर, जिला बुरहानपुर (म.प्र.)
(77) प्रो. डॉ. इशरत खान .... शासकीय महाविद्यालय, रायसेन (म.प्र.)
(78) प्रो. डॉ. कमलेशसिंह नेगी .... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)
(79) प्रो. डॉ. भावना ठाकुर .... शासकीय महाविद्यालय रेहटी, जिला सीहोर (म.प्र.)
(80) प्रो. डॉ. केशवमणि शर्मा .... पंडित बालकृष्ण शर्मा नवीन शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शाजापुर (म.प्र.)
(81) प्रो. डॉ. रेणु राजेश .... शासकीय नेहरु अग्रणी महाविद्यालय, अशोक नगर (म.प्र.)
(82) प्रो. डॉ. अविनाश दुबे .... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.)
(83) प्रो. डॉ. वी.के. दीक्षित .... छत्रसाल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पन्ना (म.प्र.)
(84) प्रो. डॉ. राम अवेधश शर्मा .... एम.जे.एस. शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भिण्ड (म.प्र.)
(85) प्रो. डॉ. मनोज कुमार अग्निहोत्री .... सरोजिनी नायडू शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(86) प्रो. डॉ. समीर कुमार शुक्ला .... शासकीय चन्द्र विजय महाविद्यालय, डिण्डोरी (म.प्र.)
(87) प्रो. अपराजीता भार्गव .... अध्यापक ,आर. डी. पब्लिक स्कूल, बैतूल (म.प्र.) भारत
(88) प्रो. डॉ. अनूप परसाई .... शासकीय जे. योगानन्दन छत्तीसगढ़ स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़)
(89) प्रो. डॉ. अनिलकुमार जैन .... वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राज.)
(90) प्रो. डॉ. अर्चना वशिष्ठ .... राजकीय राजऋषि महाविद्यालय अलवर (राज.)
(91) प्रो. डॉ. कल्पना पारीख .... एस.एस.जी. पारीख स्नातकोत्तर कॉलेज, जयपुर (राज.)
(92) प्रो. डॉ. गजेन्द्र सिरोहा .... पेसिफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.)
(93) प्रो. डॉ. कृष्णा पैन्सिया .... हरिश आंजना महाविद्यालय, छोटीसादड़ी, जिला- प्रतापगढ़ (राज.)
(94) प्रो. डॉ. प्रदीप सिंह .... केंद्रीय विश्व विद्यालय हरियाणा, महेंद्रगढ़ (हरियाणा)
(95) प्रो. डॉ. स्मृति अग्रवाल .... शोध सलाहकार, नई दिल्ली
(96) प्रो. डॉ. कविता भदौरिया .... शासकीय कन्या महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to September 2017, Vol. I

Medicinal Plant, Cynodon Dactylon (L.) Pers. Use As 'Epilepsy' In Amarkantak Region, Central India

Radhe Shyam Napit *

Abstract - The present paper study has offered immense scope and opportunities for the development of new medicine (drug). Some well has known modern drugs have been developed through ethnic (folklore) and traditional system of medicine. However, out of 1000 medicinal plant, only 15-20 % have so for been used for development of ethnobotanical sources for drugs by the ethnic (tribal) people in the Amarkantak area. A report only one specie Medicinal plant of "Doob Ghass" (Cynodon dactylon (L.) Pers.), family (Fabaceae) is present here. The plant has various phytochemical substances occur that contained terpenoides, triterpenoids flavonoids, alkaloids, glycosides, steroids, saponins, tannins, resins, Phytosterol, reducing sugars, carbohydrates, proteins, volatile oils and fixed oils. Previous studies showed that Cynodon dactylon possessed epilepsy, central nervous, cardiovascular, anti-diabetic, gastrointestinal, antioxidant, immunological, antiallergic, anti-inflammatory, antipyretic, analgesic, anticancer, dermatological, diuretic, protective, antimicrobial, anti-parasitic, insecticidal and repellent. This review will highlight the chemical constituents, pharmacological and therapeutic effects of this plant.
Key words - Medicinal plant, *Cynodon dactylon,* Use as "Epilepsy", Amarkantak region.

Introduction - The use of traditional medicine is widely accepted by rural people in Amarkantak biosphere. Amarkantak is rich in medicinal and aromatic plant's having a biodiversity of about 300-500 species about 80 percent of these are collected from wild. Maheshwari (1992) reported that the country has many areas where the traditional medicine culture is rich and diverse, making it an ideal site for ethnobotanical study.

Amarkantak, a beautiful hill station in Anuppur district of Madhya Pradesh, is situated in 22^0 41' N and 81---^{0} 46' E on the eastern most extremity of Maikal range. It is a holy place of pilgrimage and origin of river Narmada, Son, Johila and Mahanadi. It lies on a plateau at an altitude of approximately 1100 meters.

The forest vegetation of the Plateau is of sub tropical type dominated by Sal trees then, soil in usually latrite. The climate is monsoonic tide with well defined summer, rainy and winter. May and June are the hottest month December and January are the coldest Month (T.1-4^0C). The average annual rain fall is 1000-1450 mm.

Anuppur, Amarkantak is the home of many ethnic groups. Within this small district, more than 12 ethnic groups and different castes live (Pranaya Verma 1994) viz., Agaria, Baiga, Kol, Gond, Pao Bheel, Bhaina, Kanvar, Bhumia, and Panika, etc. The density of Baiga & Gond Population is higher than others. They live in remote areas of the forest. They mainly depend on natural products of the forest for their livelihood and have retained their traditional cultures and folklores, due to close and constant association with the forests. They have fairly good knowledge of the medicinal and other value of their surrounding plants and mostly depend on them for the remedies of their ailments and diseases.

Study Sites - Four study sites were selected in different parts of Amarkantak as Bhundakona, Jaleshwar, Sonemuda and Narmada Kund (Mai ki bagiya) Bhundakona, Jaleshwar, Son muda, Podki, Bhejri, Bhamaria, Farrisemar, Bijauri, Lapti, Amgawa, Khati Bilaspur, Pamra, Kerha, Bhelma, Khursa, Harri, Sonhra, Vaihar, Barbaspur, Doniya, Sarhakona, Jamuna Dadar, Nonghati, Barsot, Johilatola (Podki), Masnatola Kapilasangam, Tikritola, and also surrounding of Amarkantak, **Bilaspur district- Kevchi, Padmania, Devergavan, Vedrapani, Jaleshwar, GramUmania** and **Dindauri district- Kabeer Chbutra**, **Pakri, Sonda, Karanjia, and Narigwara** for the collection of plant's being used by tribes traditionally (ethnobotanically). These areas were selected on the basis of varied altitude and richness of species, which also comprise rich cultural diversity.

Amarkantak Location Map (Madhya Pradesh, India) **(See in the last page)**

Notable Worker - The local healers and knowledgeable villagers were consulted during the field trips covering three different seasons during Sep. 2014 – Jul 2015. Ethnomedicinal information were collected following the methods described by Jain (1965) and Jain & Rao (1976), Maheshwari & Singh (1965), Jain (1968), Sikarwar, Maheshwari (1992) & Jain & Tarafder 1970, Chopra et.al;

*Asst. Professor (Botany) Centre for Excellence, IGNTU, Amarkantak (M.P.) INDIA

1958, 1969, Nadkarni, 1954., Napit, R. S., Shrivastava D. K. & Mishra S. K. 2011. Napit, Radheshyam, 2015. Knowledgeable people and medicine men were interviewed for recording medicinal use; parts used method of drug preparation, dosage and local name. Under enumeration plant names have been arranged alphabetically. The correct botanical name is followed by family within parentheses, local names, medicinal uses name of tribe locality. All the specimens have been deposited in the Botany department Govt. P. G. College Shahdol (M.P.) Some local worker studied here like M. P. Singh (2001) & S.L.Bondya, K. K. Khanna et al. (2005).

Methodology - The method adopted for the ethnomedicinal study was adopted by Jain 1981. During the study knowledgeable person rural areas of Amarkantak regions & Pushprajgrah block with Shahdol division survey during April. 2013 – July 2014. Information was collected from tribals medicine men and vaidyas and some formers, about the interviewed therapeutic used of plants in the treatment of various diseases. Information about used and local name of plants was secured from the information. The collected plant specimens were identified by consulting Flora of British India by Benthum and Hooker (1872-1879). Voucher specimens of the species collected are deposited in the Department of Botany Govt. P.G. College Shahdol, Madhya Pradesh (M.P.).

Enumeration of plants - Correct botanical names are arranged by using worker like Hara et.al. (1978, 1982) and Hara and Williams (1979) followed by family in brackets, vernacular name in apostrophe and collection number in brackets. Other details given are plant parts used, quantity of plant parts, details of preparation method, and mode of use.

1. ***Cynodon dactylon* (Linn.) Pers. (Poaceae) “Doob Ghass/Dubi/Durba”**

Common & Regional Name - LN.- Doob ghass; H. - Dhub; S. - Dhurva; Eng.- Doob grass (creeping cyanodon); B.- Dubh - Dubra; Tel.- Harvali; Tam.- Arugampullu; Marathi- Haryali.

Vegetative Character - A perennial ever green herbaceous grass prostrate 1-3 mt and 1-1.5ft high, and Growth begins at temperatures above 15-20 °C with optimum growth between 25 and 40 °C; in winter, the grass becomes dormant and turns brown. Growth is promoted by full sun and retarded by full shade, e.g., close to tree trunks. Root- adventitious stolons, rooting at nodes, forming a dense tuft on the surface of the soil, runners sometimes 20 m long;. Stem – erect or prostrate herbaceous, branched, grass creeps along the ground and roots wherever a node touches the ground, forming a dense mat. Leaf - blades are a grey-green color and are short, usually 2–10 cm long. ; inflorescence on culms 15 cm to 1 m tall consisting of 2-12 spikes arranged star-like at apex of stem; spikes 2.5-10 cm long with numerous spikelets, arranged in 2 rows on one side of spike; spikelets flat, 2-2.5 mm long, awnless, with 1 floret; glumes unequal, the upper longer and one-third to three-fourths length of floret flower bisexual irregular incomplete, zygomorphic. Androecium- 10 stamens Ovary- superior. Fruit- seed heads are produced in a cluster of two to six spikes together at the top of the stem, each spike 2–6 cm long. Found all over India. Flowering – Throught the year. Medicinal part use as whole plant.

Classification -

- Kingdom - Plantae,
- Super division - Spermatophyta,
- Division - Magneliophyta,
- Class - Liliopsida,
- Subclass - Commelinidae,
- Order - Cyperales,
- Family - Poaceae,
- Genus - Cynodon,
- Species - dactylon

Mode of Use -

Use – The juice of whole plant two spoons taken orally 2 times a day for 2-3 month to cure epilepsy.

Biological Properties - Epilepsy, Pain, diarrhoea, dysentery, wounds, secondary syphilis, chronic diarrhoea, dysentery vomiting vesical hemuturesis, and as application in catarrhal opthalmia, and also can be applied to cuts and wounds, and in chronic diarrhoea and dysentery, Traditionally, calculus, syphilis, stoppage of bleeding from piles, and irritation of urinary organs, hemorrhages and hyperdypsia, demulcent, astringent dropsy, anasarca, etc.

Chemical Constituents - Nutritional analysis showed that each 100 g contained (on a zero-moisture basis) 11.6 g protein, 2.1 g fat, 75.9 g total carbohydrate, 25.9 g fibres, 10.4 g ash, 530 mg Ca, 220 mg P, 112.0 mg Fe, 1630 mg K, 28 mg betacarotene equivalent. A total of 20 compounds were identified from the hydroalcoholic extract of the whole parts of Cynodon dactylon. Hexadecanoic acid, ethyl ester linolenic acid, ethy ester d-mannose were the major components of the hydroalcoholic extract, and hexadecanoic acid ethyl ester was the most abundant one (17.49%). The phytochemical analysis showed that the plant contained flavanoids, alkaloids, glycosides, terpenoides, triterpenoids steroids, saponins, tannins, resins, phytosterols, reducing sugars, carbohydrates, proteins, volatile oils and fixed oils. Quantitative estimation of phytoconstituents showed glycosides reached 12.2 %, tannins 6.3%, alkaloids 0.1%, resins 1.0%, free reducing sugar 10% and total reducing sugar 12%. However, the isolated compounds were included: 3H-pyrazol-3-one, 2,4-dihydro-2,4,5-trimethyl 2.2112%, 4H-pyran-4-one, 2,3-dihydro-3,5-dihydroxy-6-methyl3.2157%, menthol 1.1807%, benzoic acid, 2- hydroxy-, methyl ester 2.0455%, benzofuran, 2,3-dihydro 0.9639%, 2-furancarboxaldehyde, 5- (hydroxymethyl)- 2.3088%, 2-methoxy-4-vinylphenol 3.2348%, decanoic acid, ethyl ester 2.4063%, dmannose 11.4820%, 3-Tert-butyl-4-hydroxyanisole 0.9040%, Ar-tumerone 5.7431%, tumerone1.9123%, . On the other hand, 22 compounds were identified from the phenolic fraction of the whole parts of Cynodon dactylon. [1]

Result and discussion - The most frequently used traditional phytotherapies are those against gastro-intestinal problems as in other areas in Amarkantak in Anuppur district. The survey provides **anti epilepsy** plants *C. dactylon* (L.) Pers., sufficient ground to believe that traditional medicinal practice using native medicinal plants is alive and well functioning in the study area. In many communities, wild plant's species are used as important parts of the primary healthcare system due to belief in the effectiveness, lack of modern medicines and medication and poor economic status of people. The treatment of diseases with plants and plants products also causes no side effects. It is cost effective too.

Acknowledgements - The research scholar is also thankful to the people of Amarkantak district Anuppur who shared with him their indigenous knowledge. R. S. Napit would like to express thankful to Dr. Smt. D. Thakur, Retired Principal Govt. P.G. College Narsinghpur and Dr. K. B. Sulakhiya, Deptt. of Center for excellence Prof Dr. A. K. Shukla, and Prof Dr. Navin Sharma, Head and Dean of the Botany Deptt. IGNTU Amarkantak M.P., for their kind cooperation and good support, in this research work.

References :-

1. Chandra, G. 1970., Chemical composition of the flower oil of Nyctanthes arbor-tristis Linn. Indian perfume 14 (pt. I), 19.
2. Dhingra, V. K., Seshadri T. R. and Mukherjee S. K. 1976., Carotenoid glycosides of Nyctanthes arbor-tristis Linn. Indian J. Chem. 14B, 231.
3. Chopra, R.N. Chopra I.C. and Verma, B.S. 1968., Supplement to Glossary Indian medicinal plants, CSIR New Delhi.
4. Bhattacharjee, S.K. 1998, S.K. 1998., Handbook of Medicinal plants. Pointer publishers, New Delhi.
5. Brown, J.E., Rice-Evans, C.A. 1998., Luteolin rich artichoke extract protects low density lipoprotein from oxidation in vitro. Free Radical Res., 29: 247-255.
6. Jain, S.K. and Tarafder, C.R. 1970., Medicinal plant lore of the Santhals (A revivals of P.O. Bodding's work). Econ., Bot. 24, 241.
7. Kapale, R. Prajapati. A.K., Napit, R.S., and Ahairwar, R.K. 2013.Traditional Food Plants Of Baiga Tribal's: A Survey Study In Tribal Villages Of Amarkantak-Achanakmar Biosphere, Central India.
8. Napit, R. S. and Kumar K. 2012. Ethnomedicinal use Euphorbia Plants by Tribal Communities of Shahdol District of M. P. Agrobios News Letter Page. N0. 47-48.
9. Napit, R. S., Shrivastava D. K. & Mishra S. K. 2011. Ethno-medico Botanical Study of Paliha Tribe of Gohparu Block Distt. Shahdol M. P. (India) Journal of Tropical Forestry Vol. 27. Pag N0. 62-64.
10. Napit, Radhe shyam, 2015.Ethnomedicinal Studies on Baiga Tribes in Jaisinghnagar Block District Shahdol M.P. Central India. Research Hunt An International Multi Disciplinary e-journal, Vol.÷ Issue. I, Jan-Feb -2015 Pag. 9- 12.
11. Napit, Radhe shyam, 2015. Medicinal Plant King of Bitters "Swertia chirata Buch.Ham." (Gentianaceae) Chirayata Used by Tribals of Amarkantak regions District Anuppur Central India. Research Hunt An International Multi Disciplinary e-journal,. Vol.÷ Issue. I Jan-Feb. 2015 Pag.1-4.
12. Napit, Radhe shyam, 2015. Ethnomedicinal Plants (Ptreridophytes) Study and Indegenous Knowledge of Pushprajgrah block with Special Reference to Amarkantak Anuppur District M.P. India. Research Hunt An International Multi Disciplinary e-journal, Vol.÷ Issue. I Jan-Feb -2015 Pag.5-8.
13. Napit, Radhe shyam, 2015. Calotrapis (Asclepiadaceae) Plants Used By The Tribal And Local Peoples. In The Administered Of Skin Disease "Leucoderma" District Shahdol Central India.Naveen Shodh Sansar (An International Refereed Research Journal) Jan. to March Vol.1 Pag.34-35.
14. Napit, R. S.2016. Calatropis Plant Species Used By The Tribal People In The Administered of Jaundice District Shahdol Central India.Pag.147-152. ISSN:2395-3449. Naveen Anveshan A Journal of Multidisciplinary Subjects. Govt.PG college Shahdol (MP).
15. Napit, Radhe shyam,2016. Traditional Knowledge of Plant "Tinospora cordifolia" Used by Local People in Loss of Blood Platelets of Shahdol Central India. Pag.198-202. Vol-2.
16. Napit, Radhe shyam 2016. Anti- Diabetic Plant Pterocarpus Marsupium Roxb. Used By Tribals Of Shahdol District M.P. INDIA. Vol-2.
17. Napit, R.S. 2016. Medicinal Plant , Mucuna prurita Hook., and its use as 'Antidote,' in Amarkantak Biosphere Region, (M. P.) India.Pag.17-19.
18. Napit. R. S. 2016. Ethnomedicinal Plant, Rubia cordifolia Linn. and its use as 'Anti Psoriasis', Amarkantak Biosphere Region, (M. P.) India. Pag. 1921.
19. Napit, Radhe shyam, et al.2105. Studies on Ethnomedicinal Plant (Scoparia dulcis L.) used by Gond Tribes in Weak Teeth of Shahdol Madhya Pradesh India. Pag. 64-70..
20. Napit, R. S. 2015. Studies on Traditional Knowledge Anti-Diabetic Plant Used By Local People Shahdol District (M.P.) India. Pag. 30-33.
21. Napit, R S. 2015. Ethno-Medicinal Studies on Skin disease in Kol Tribe of Jaisinghnagar Tehsil District Shahdol Central India 24-26.
22. Napit, Radheshyam, et al. 2015.Ethno-medico Plants to Cure Calculi Disease of Amarkantak Anuppur District Central India.Pag.16-19.
23. Napit, R.S. 2015. Anti cancerous plants of Amarkantak Region of Shahdol Division, Madhya Pradesh, India. Pag. 21-23.
24. Napit, Radheshyam, et al.2015.Ethno- bilogical Sudies on traditional Traditional Knowledge of medicine of

Shahdol District Central India. Pag. 28-30.

25. Napit, R.S. 2015, Ethnic plants to cure stone disease of Shahdol District Central India. Pag. 24-27.
26. Napit, Radhe shyam, and Singh, Uma, 2015. Studies On Floral Diversity In The Tribal Areas Of Shahdol District (M.P.) India. Pag.18-20.
27. Shah, G.L. 1984., Some economically important plants of salsette ISI and near Bombay. J. Econ. Taxon. Bot. 5 : 753-765.

Amarkantak Location Map (Madhya Pradesh, India)

Fig 1, 2 - Plants C. dactylon (L.) Pers.

****

Ethnomedicinal Study Of Jashpur District With Special Reference To Birhor Tribe Of Chhattisgarh India

Rakesh Kumar Sharma *

Abstract - Frequent botanical surveys were conducted during Dec. 2001 to Dec. 2005. In district Jashpur. Processing and Recognition of Ayurvedic plants. Furthermore, In the present study medicinal paints of Jashpurnagar and its adjoining localities have been studied. Disease wise use of plants has been presented in some diseases.

During the course of present investigation, ethnobotanical studies of the tribals of Jashpur district with special reference to Birhor endangered tribe, field tours were made during the above mentioned. These field tours were planned in such a way as to cover the tribal areas in different seasons to collect the ethno botanically interesting species either in flowering or fruiting. After having identified the particular tribes and their regional jurisdiction or purpose of ethnobotanical investigation, some familiarity about the people, their culture and dialect, their religion, the vegetation pattern and so on was sought with the help of available literature.

Key Words - Ethnomedicinal study, Jashpur district, reference to Birhor tribe.

Introduction - At present, Jashpur district is situated at 22021' to 23016' North Latitude and 83028' to 84024' E Longitude. Total geographical area of the district is 5339.78 Km2.

The forest vegetation of the Plateau is of sub -tropical type dominated by Sal trees, and the soil in usually laterite. The climate is masonic tide with well-defined summer, rainy and winter. May and June are the hottest month December and January are the coldest Month. During present of investigation monthly maximum rainfall 600-832 mm. has been recorded, in month of July. In the study area Red & yellow soils are predominant Chhattisgarh is very rich in natural vegetation. 41.52% geographical area of the state is covered by forests. Jashpur district is covered by dense forests like herb, shrub and trees, of Teak, Sal, Bamboo and mixed forests.

The history of medicinal plants is intimately connected with' the history of botany. From The earliest times, tribal medicine men used plants and other products, to drive out the evil spirits which they believed to the cause of disease. In India the earliest mention of the medicinal use of plants is found in the Rig- Veda. Then Ayurveda, Sushruta Samhita and Charak Samhita followed. These books contain remarkable description of medicinal plants as it was known to ancient Hindus.

All India Survey of Medicinal and Poisonous Plants has resulted in a-large number of collections and extensive information. Due to continuous decrease in forest cover, a number of medicinal plants have become endangered or at the brink of extinction. In the present study medicinal paints of Jashpurnagar and its adjoining localities have been studied. Disease wise use of plants has been presented in some diseases.

Power (1874) used the term “Aboriginal Botany” to include all forms of vegetable world which the aboriginals used for medicine, food, textile, fabrics, ornaments etc. “An introduction to the subsistence Economy of India” Faulks (1958), published an important text entitled. “An Introduction to Ethnobotany”. This was followed by Anderson (1967). “Plants, man and life” Dukes (1968) published Darien Ethnobotanical Dictionary. Jain (1981), published the first book on Indian ethnobotany i.e. “Glimpse of Indian Ethnobotany”based on fieldstudies about phytogeographical areas of India.

Napit, R. S.2016. Calatropis Plant Species Used By The Tribal People In The Administered of Jaundice District Shahdol Central India.Napit, Radheshyam, 2016. Traditional Knowledge of Plant “Tinospora cordifolia” Used by Local People in Loss of Blood Platelets of Shahdol Central India.

There have been organized many seminars and conferences of ethnobotany in India and abroad. The review is present the contribution of Angiospermic flora and their ethnobotanical importance.

Methodology- During the course of present investigation, ethnobotanical studies of the tribals of Jashpur district with special reference to Birhor endangered tribe, field tours, and Interview started were made during the period Dec. 2001 to Dec. 2005. These field tours were planned in such a way as to cover the tribal areas in different seasons to collect the ethnobotanically interesting species either in flowering or fruiting. After having identified the particular

*Research Scholor, Pt S.N.S. Govt. PG College, Shahdol (M.P.) INDIA

tribes and their regional jurisdiction or purpose of ethnobotanical investigation, some familiarity about the people, their culture and dialect, their religion, the vegetation pattern and so on was sought with the help of available literature.

For the collection of plants and the preparation of herbarium sheets the methods adopted and recommended by Lawrence (1951) and Davis and Heywood (1963) have been followed.

Study Site - Jashpur is a part of Chhattisgarh study site is surrounded by Sarguja district and Jharkhand state in the North, Jharkhand and Orissa in the East; Orissa and Raigarh district (Dharmjaygarh) in the South; & Sarguja district in the west. The district of Jashpur, has 4 Tahsils viz.- Jashpurnagar, Bagicha, Kunkuri and Pathalgaon. The district of Jashpur, can be divided into two distinct geographical parts- Upper Ghat and Lower Ghats Northern Part is known as Upper Ghat due to its elevation, which ranges from 488 meter to 1136 meter. Southern part is known as Lower Ghat which has a lower height, which range from 274 meter to 488 meter.

Drainage of Upper Ghat is made by Ib and Kanhar rivers, Drainage of North-Western Upper Ghat is brought about by Kanhar river which joins Sone River in Mirzapur district of Uttar Parades. Rest of the drainage of North-Western region is brought about by Sankha river and its tributaries Lava and Baki.

Map of Jashpur is being presented on Fig.1

Usage of Medicinal Plant - The history of medicinal plants is intimately connected with' the history of botany. From The earliest times, tribal medicine men used plants and other products, to drive out the evil spirits which they believed to the cause of disease.

In the present study medicinal paints of Jashpurnagar and its adjoining localities have been studied. Disease wise use of plants has been presented in some diseases.

FEVER-

(1) Aegle marmelos, Corr. (Rutaceae), "Bel"
The root bark is given in intermittent fever.

(2) Allium sativum. Linn. (Liliaceae), "Lahsun"
Bulb is carminative expectorant stimulant in fevers.

(4) Ammannia baccifera Linn. (Lythraceae), "Dadhmari"
Bulb is carminative expectorant stimulant in fevers.

(5) Carissa carandas. Linn. (Apocynaceae) "Karaunda"
A decoction of leaves given at the commencement of remittent fever.

DYSENTERY -

(1) Bauhinia variegata. Linn. (Caesalpiniaceae), "Kachnar"
Dried buds of plant used in treatment of dysentery.

(2) Corchrus capsularis. Linn. (Tiliaceae), "Jute"
Infusion of leaves given in dysentery.

(3) Citrus limon. Wall. (Rutaceae), "Bara nebu"
Juice of ripe fruit used in dysentery.

(4) Syzigium cumini. skeels. (Myrtacae) "Jamun"
Juice of leaves given in dysentery and bark is largely used in dysentery.

(5) Emblica officinalis. Gaertn, (Euphorbeaceae), "Amla"
The fruit is arcid cooling refrigerant given in dysentery.

DIARRHOEA -

(1) Aegel marmelos. Corr. (Rutaceae), "Bel"
Unripe fruit used in digestive stomachic in diarrhoea.

(2) Bauhinia variegata. Linn. (Caesalpiniaceae), "Kachnar"
Dried buds are used in diarrhoea.

(3) Butea monosperma. Lamk, (Papilionaceae), "Parsa"
Extrect of plant stem like gum is given in diarrhoea.

(4) Corchrus capsularis. Linn. (Tiliaceae), "Jute"
Decoction of root and unripe fruit used in diarrhoea.

(5) Citrus limon Wall. (Rutaceae), "Bara nebu"
Juice of ripe fruit used in diarrhoea.

(6) Ficus bengalensis. Linn. (Moraceae), "Bargad"
Infusion of bark used as a tonic given in diarrhoea.

JAUNDICE -

(1) Argemone maxicana. Linn. (Papaveraceae), "Pili Katili"
The latex or yellow juice of plant used in affection of jaundice.

(2) Asterancantha longifolia. Nees. (Acanthaceae), "Tal-makhana"
The leaves, roots & seed are employed for jaundice.

(3) Boerhaavia diffusa. Linn. (Nyctaginaceae) "Pathar Chatta"
Crushed root useful in jaundice.

(4) Eclipta a1ba. Linn. (Asteraceae) "Ghamira"
Juice of plant given in fever of jaundice.

(5) Emblica officinalis. Gaertn, (Euphorbeaceae), "Amla"
Dried fruit in combination with iron used for jaundice.

BURNS -

(1) Amaranthus spinosus. Linn. (Amaranthaceae), " Kataili chaulai "
The leaves and root boiled and applied as emollient

poultice to burns.

(2) **Beta vulgaris. Linn.(Amaranthaceae), " Suger beet**"
Leaves applied as a paste to burning.

(3) **Eucalyptus globulus. Linn. (Myrtaceae), "Lyptus"**
Oil form leaves used in ointment for burns.

(4) **Linum usitatissimum. Linn. (Linaceae), "Alsi"**
Oil mixed with lime water used as application to burns.

(5) **Tectona grandis. Linn (Verbenaceae) "Sagwan"**
Wood powdered made into a paste and applied to burning.

(6) **Tridax procumbens Linn. (Compositae), "Barmasiya"**
Leaf paste mixed with a small amount of salt and is applied on boils.

ULCERS -

(1) **Azadirachta indica. Juss. (Meliaceae), "Neem"**
Decoction of leaves is antiseptic and use in ulcers.

(2) **Bauhinia variegata. Linn. (Caesalpiniaceae), "Kachnar"**
The bark is rubbed to and used to ulcers.

(3) **Eclipta alba. Linn. (Asteraceae) "Ghamira"**
Seeds, root used in externally as antiseptic to ulcers.

(4) **Heliotropium indicum. Linn. (Boraginaceae), "Balkamu"**
Juice of tender leaves applied to ulcers.

(5) **Jasminum sambac. Ait. (Oleaceae), "Mogra"**
Dried leaves soaked in water and made into a poultice used in indolent ulcers.

SKIN DISEASES -

(1) **Azadirachta indica. Juss. (Meliaceae), "Neem"**
Decoction of leaves is antiseptic and use in Eczema.

(2) **Buchanania lanzan. Roxb, (Anacardiaceae), "Chironji"**
Kernal as ointment used in skin disease.

(3) **Cassia fistula Linn. (Caesalpiniaceae), "Amaltas"**
Juice of leaves used as skin diseases.

(4) **Cassia occidentalis. Linn. (Caesalpiniaceae), " Khasaundi "**
Juice of leaves used as skin diseases.

(5) **Cassia tora. Linn. (Caeslpininiaceae) "Chakora"**
Leaves and seed are used in skin diseases for ringworm and itch.

RHEUMATISM -

(1) **Adhatoda vasica. Nees (Acanthaceae), " Adusa"**
Crushed leaves and root used in treatment of chronic rheumatism.

(2) **Asterancantha longifolia. Nees. (Acanthaceae), "Tal-makhana"**
The leaves, root and seed are employed for rheumatism.

(3) **Brassica campestris. Linn. (Curcifere) " Sarson"**
Oil combined with camphor forms an efficacious embrocation in muscular rheumatism

(4) **Cassia fistula. Linn. (Caesalpiniaceae), "Amaltas"**
The fruit are cathartic and are applied in rheumatism.

(5) **Semicarpus ancardium. Linn (ancardiaceae)**
" Bhiwa" The seed oil is apply for pain.

ABSCESSES -

(1) **Amaranthus spinosus Linn. (Amaranthaceae), " Kataili chaulai** "
Leaves and roots applied as emollient poultice to abscesses.

(2) **Ficus bengalensis. Linn. (Moraceae), "Bargad"**
Leaves are applied as poultice to abscesses.

(3) **Jasminum sambac Ait. (Oleaceae), "Mogra"**
The plant used in affection of the mouth.

Discussion - Ethnomedicine is the most important discipline of ethnobotany, which is constantly being exploited by scientists and extensively studies for herbal drugs herbal medicines, folk medicines phototherapy, medicinal agent, traditional medicines etc.

Acknowledgements - The research scholar is also thankful to the people of Amarkantak new district Anuppur who shared with him their indigenous knowledge. would like to R.K. Sharma express thankful to Guide Dr. Vijay Kumar Shrivastava Principal Govt. G.D. College Rewa, Dr. Smt. D. Thakur Principal Govt. P.G. College Narsinghpur, Dr. S. K. Mishra Govt. P.G. College Shahdol, R. S. Napit for their kind cooperation and good support and guidance in the form of research work.

References :-

1. Arora, R.K., 1981. Native food plants of north eastern tribals. In S.K. Jain (Ed.) Glimpses of Indian Ethno-botany 91-106.
2. Chaudhary, et. al. 1977, Ethnobotanical uses of her-baria Bull. Bot. Surv. India. 19 : 256-261.
3. Harshberger, J.W. 1895. Some new ideas, Philadel-phia Evening Telegraph.
4. Jain, S.K., 1963. Studies on Indian Ethnobotany II, Plants used in medicine by the tribals of Madhya Pradesh. Vanyajati. 11: 126-128.
5. Jain, S.K. & Rao, R.R. 1983. Ethnobotany in India - An over view Howrah : Botanical Survey of India.
6. Janaki Ammal, E.K. 1955. An introduction to the sub-sistence economy of India. Background paper No. 10 Webner. Grof. Foundation International Sympo. On "Man's role in changing the face of the Earth." Princeton inn. Princeton. N.J. June 16-22.
7. Lawrence, G.H.M. 1951. Taxonomy of Vascular Plants. Macmillan, New York.
8. Maheshwari, J.K. and R.P. Dwivedi, 1985. Ethnobotany of Abujmarhia tribe of Bastar district, M.P. - I. Eightn All India Botanical Conference (Hyderabad), J. India Bot. Soc. Abste. Vol. 64 Supplement, p 53.
9. Nair, P.T. 1965. Tree symbol worship among the Nairs of Kerela. Folklore 6: 114- 1.124.
10. Kapale, R. Prajapati. A.K., Napit, R.S., and Ahairwar, R.K. 2013.Traditional Food Plants Of Baiga Tribal's: A Survey Study In Tribal Villages Of Amarkantak-Achanakmar Biosphere, Central India.
11. Napit, R. S. and Kumar K. 2012. Ethnomedicinal use Euphorbia Plants by Tribal Communities of Shahdol

District of M. P. Agrobios News Letter Page. N0. 47-48.

12. Napit, R. S., Shrivastava D. K. & Mishra S. K. 2011. Ethno-medico Botanical Study of Paliha Tribe of Gohparu Block Distt. Shahdol M. P. (India) Journal of Tropical Forestry Vol. 27. Pag N0. 62-64.
13. Napit, Radheshyam, 2015.Ethnomedicinal Studies on Baiga Tribes in Jaisinghnagar Block District Shahdol M.P. Central India. Research Hunt An International Multi Disciplinary e-journal, Vol.÷ Issue. I, Jan-Feb -2015 Pag. 9- 12.
14. Napit, Radheshyam, 2015. Medicinal Plant King of Bitters "Swertia chirata Buch.Ham." (Gentianaceae) Chirayata Used by Tribals of Amarkantak regions District Anuppur Central India. Research Hunt An International Multi Disciplinary e-journal,. Vol.÷ Issue. I Jan-Feb. 2015 Pag.1-4.
15. Napit, Radheshyam, 2015. Ethnomedicinal Plants (Ptreridophytes) Study and Indegenous Knowledge of Pushprajgrah block with Special Reference to Amarkantak Anuppur District M.P. India. Research Hunt An International Multi Disciplinary e-journal, Vol.÷ Issue. I Jan-Feb -2015 Pag.5-8.
16. Napit, Radheshyam, 2015. Calotrapis (Asclepiadaceae) Plants Used By The Tribal And Local Peoples. In The Administered Of Skin Disease "Leucoderma" District Shahdol Central India.Naveen Shodh Sansar (An International Refereed Research Journal) Jan. to March Vol.1 Pag.34-35.
17. Napit, R. S.2016. Calatropis Plant Species Used By The Tribal People In The Administered of Jaundice District Shahdol Central India.Pag.147-152. ISSN:2395-3449. Naveen Anveshan A Journal of Multidisciplinary Subjects. Govt.PG college Shahdol (MP).
18. Napit, Radheshyam,2016. Traditional Knowledge of Plant "Tinospora cordifolia" Used by Local People in Loss of Blood Platelets of Shahdol Central India. Pag.198- 202. Vol-2.
19. Napit, Radheshyam 2016. Anti- Diabetic Plant Pterocarpus Marsupium Roxb. Used By Tribals Of Shahdol District M.P. INDIA. Vol-2.
20. Napit, R.S. 2016. Medicinal Plant , Mucuna prurita Hook., and its use as 'Antidote,' in Amarkantak Biosphere Region, (M. P.) India.Pag.17-19.
21. Napit. R. S. 2016. Ethnomedicinal Plant, Rubia cordifolia Linn. and its use as 'Anti Psoriasis', Amarkantak Biosphere Region, (M. P.) India. Pag. 19-21.
22. Napit, Radheshyam, et al.2105. Studies on Ethnomedicinal Plant (Scoparia dulcis L.) used by Gond Tribes in Weak Teeth of Shahdol Madhya Pradesh India. Pag.64-70..
23. Power, S. 1875 : Aboriginal Botany. California Academy of science proceeding 5 : 375-379.
24. Pushpangadan, P. 1984. All India coordinated Research project on Ethnobiology (AICRPE)
    a. An Annual Report MAB projects 1984, Man and Biosphere Programme. Govt. of
    b. India.
25. Rao, R.R. 1997. Medico botany of Mysore plants. Jour. Res. Med. Ham. 12 : 53-58.
26. Shah, N.C. 1996. The Identity of "Tukmaria" A Unani Medicine and an Export Item from
    a. India. Ethnobotany. Vol. 8. pp. 105-108.

1. A natural secen of Astha Village of Jashpur

2. Birhor husband and wife

3. Semicarpus anacardium, Linn

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to September 2017, Vol. I

Effect Of Nostophycin Allelochemical On Oryza Sativa

Vaishali Gupta * Deepak Vyas **

Abstract - Cyanobacteria are beneficial for rice plants and can produce a wide range of allelochemicals which affect the growth of other organisms. In the view *of this,* effect of allelochemical on rice plant has been studied. *Nostoc calcicola* was isolated from domestic sewage of Sagar, Madhya Pradesh, India. Nostophycin allelochemical was extracted from *Nostoc calcicola*. Rice seeds were treated with different concentration of nostophycin and quantitative and qualitative effects were studied. In present investigation Nostophycin, a cyclic peptide was isolated from *Nostoc calcicola* which contain an unusual Ahoa â-amino acid. 50% concentration of nostophycin enhance germination rate of seeds as compared to control. Various concentrations of allelochemicals affect the growth rate differently.
Key Words - Allelochemical, germination, Nostophycin.

Introduction - Cyanobacterial features conspicuous researchers due to their capability of synthesis of natural products, diverse range of habitats, wide diversity and morphological variability of cyanobacteria. According to Kalaitzis *et al.,* (2009) cyanobacteria can produce immense range of bioactive compounds which help in survival in endurance and competitive ecological niche. Among prokaryotes cyanobacterial group are more susceptible to flourish in fierce niche and capable of produce bioactive compound (Clardy and Walsh, 2004; Lin *et al*., 2008). Biotic and abiotic factors or species itself induce to produce such type of bioactive compounds (Singh, 2014; Cheng and Cheng, 2015). Beneficial or harmful biochemical substances released by one organism and influence the growth, survival and reproduction of other organisms, called allelochemicals and phenomenon known as allelopathy. *Anabaena, Nostoc* and *Tolypothrix* are species which is beneficial for rice plants and soil as well. It becomes important to study its effect on rice plants.

Materials and Methods -

Collection of Sample - International standard methods were followed for sampling and analysis of waste water. The waste water samples were collected in triplicate (2 liters each) from each of three sites in sterilized colored plastic bottles (Tarsons Product Pvt. Ltd., New Delhi, India) in a regular uninterrupted interval from July 2012 to June 2013 in mid of every month.

Culture Requirements

Culture Vessels - Borosil glass vessels were used throughout the experimental work. The flasks were washed with chromic acid and sterilized in autoclave before use. The test tubes and conical flasks were stoppered by non-absorbent cotton plugs.

Culture Conditions - Cultures were maintained in culture racks at 2500-3000 lux light intensity for 14 h light and 10 h dark alternate intervals (Rippka *et al.*, 1981a) at temperature approximately 30ÚC (Waterbury, 2006). The illumination came from fluorescent lamp with a constant light intensity at about 3000 lux.

Culture Medium- The modified Chu No. 10 (Chu, 1942) (Table 1.1) and BG 11 (Rippka *et al.*, 1979) (Table 1.2) media were used as a media for culture of cyanobacteria. After screening and purification BG 11 was used as a culture media for flourish growth. The media was sterilized in autoclave under pressure of 15 lbs for 15-20 minute at 121^0C temperature before use and pH was maintained at 7-7.5.

Table 1.1: Composition of Chu No. 10

Deionised water	**1L**
$Ca(NO_3)_2$	40 mg
K_2HPO_4	10-50 mg
$MgSO_4.7H_2O$	2.5 mg
Na_2CO_3	20 mg
Na_2SiO_3	2.5 mg
EDTA	0.8 mg

Table 1.2 (See in the last page)

Isolation of Cyanobacteria - Samples were incubated for approximately 20-25 days at 2500 lux light intensity of alternate 16 h and 8 h of dark regular intervals at temperature 25 ± 2^0C (Waterbury, 2006).

Direct Isolation from Samples -

Streak Culture-

Dilution Method -

Identification of Cyanobacteria - Isolated cyanobacteria

* Department of Botany, Dr. Hari Singh Gour Central University, Sagar, (M.P.) INDIA
** Department of Botany, Dr. Hari Singh Gour Central University, Sagar, (M.P.) INDIA

were observed under microscope for systematic analysis. Camera lucida drawings were prepared for taxonomic identification of cyanobacteria by using the keys and description based on treaties of Desikachary (1959), Komark and Anagnostidis (1986, 1989), Fogg *et al*., (1973), Rippka *et al.,* (1979, 1981b) and Bergey's Manual of systemic Bacteriology (Castenholz, 1989 a, b, c, d), Hindak and Hindakova (2003), Veerendra *et al*., (2008).

Preparation of Crude Extract from Cyanobacterial Samples - Cells were harvested in mid log phase and washed with double distilled water. After harvesting, cells were centrifuged at 10000×g for 15 min and supernatant was removed and pellet was lyophilized (freeze dried) for 12 h. Furthermore, freeze dried pellet was suspended in methanol and 0.01% TFA (Trifluoroacetic acid), then shaken for 8 h by orbital shaker. Later, it was kept for overnight at -20^{0}C and further sonicated in a cold room. Subsequently, centrifuged at 10000×g for 15 minute and supernatant was vacuum dried at 40^{0}C and pellet was re-extracted twice.

Biological Assay -

Experimental Setup for Studies of Allelochemicals Effects on Rice Plants - Allelochemicals Nostophycin (NPC) was isolated from cyanobacteria *Nostoc calcicola* MTU1010 rice variety (*Oryza sativa*) was used as an experimental object.

Experimental Setup for Biological Assay - 10 g of rice seeds were weighed in triplicate for each treatment. All grain samples were surface sterilized with 0.1% HgCl----$_2$ for 1 min immediately followed by rinsing five times in distilled water. Four concentrations 25%, 50%, 75% and 100% were prepared for treatment and distil water was used for control. Seed samples were imbibed for 72 h separately in prepared different concentration and distilled water. After imbibition seeds were transferred into different pots separately and pre sowing observation of seed germination was recorded.

Morphological Study - Post sowing parameters such as root length, shoot length, plant height, number of tillers per ear, leaf length and weight of seeds were recorded in regular intervals.

Biochemical Study - Concentration of free amino acids, carbohydrate contents and protein contents were estimated in 110th days after sowing (DAS).

Estimation of Protein - Protein estimation was done with the help of Lowry's method (Lowry *et al.,* 1951).

Estimation of Glycine - Quantitative estimation of glycine was carried out by Ninhydrin method (Sawhney and Singh, 1999).

Estimation of Proline - For rapid quantitative analyses of proline from de-hulled germinated paddy seeds Bates method was followed (Bates *et al*., 1973).

Estimation of GABA - GABA was estimated by the method of Kitaoka and Nakano (1969).

Estimation of Carbohydrate - Carbohydrate content was estimated by the method of Dubois *et al.,* (1969).

Results - Rice seeds were imbibed in Nostophycin for 72 h and afterwards, monitored for 110th days. After imbibitions, germination rate was recorded for every concentration in table 2.1.

Table 2.1 - Effect of allelochemicals on seed germination.

Treatments	Concentration			
	25%	50%	75%	100%
NPC	65.7±2.3	66.3±3.5	65.3±2.1	59.0±2.6
Control	62.3±4.0	62.3±4.0	62.3±4.0	62.3±4.0

In a regular interval shoot length, root length, plant height and leaf length of rice seedling was monitored and represented respectively in table 2.2, 2.3, 2.4, 2.5.

Table 2.2 - Effect of allelochemicals on shoot length of rice seedlings.

Concentrations	NPC	Control
	After 6 days	
25%	2.64±0.11	2.45±0.12
50%	2.59 ±0.11	
75%	1.57±0.21	
100%	1.46±0.07	
	After 12 days	
25%	3.14±0.62	2.97±0.10
50%	3.09±0.10	
75%	1.93±0.60	
100%	1.65±0.11	
	After 18 days	
25%	3.37±0.40	3.49±0.10
50%	3.25±0.20	
75%	2.19±0.19	
100%	1.80±0.11	

Table 2.3 - Effect of allelochemicals on root length of rice seedlings.

Concentration	NPC	Control
	After 6 days	
25%	1.87±0.17	2.14±0.33
50%	1.70±0.39	
75%	1.43±0.15	
100%	1.25±0.09	
	After 12 days	
25%	2.64±0.59	2.72±0.19
50%	2.50±0.34	
75%	2.28±0.62	
100%	2.15±0.03	
	After 18 days	
25%	2.85±0.17	3.01±0.20
50%	2.80±0.48	
75%	2.56±0.12	
100%	2.40±0.03	
	After 110 days	
25%	7.86±0.53	8.05±0.81
50%	7.59±0.20	
75%	7.37±0.21	
100%	7.20±0.27	

Table 2.4 - Effect of allelochemicals on plant height of rice seedlings.

Concentration	NPC	Control
	After 35 days	
25%	36.99±1.64	32.79±2.57

50%	33.67±2.16	
75%	26.37±2.54	
100%	23.14±1.43	
	After 70 days	
25%	46.60±1.73	43.52±2.41
50%	43.09±2.05	
75%	35.77±2.77	
100%	31.70±2.1	
	After 110 days	
25% **50%**	59.07±3.09 55.30±2.26	51.19±3.99
75%	45.70±2.98	
100%	44.15 ± 2.46	

Table 2.5 - Effect of allelochemicals on leaf length of rice seedlings.

Concentration	NPC	Control
	After 35 days	
25%	5.86±0.69	5.29±0.24
50%	5.64±0.30	
75%	4.03±0.32	
100%	3.93±0.30	
	After 75 days	
25%	10.10±0.50	12.27±0.55
50%	10.33±0.27	
75%	8.25±0.42	
100%	6.83±0.21	
	After 110 days	
25%	23.83±0.55	23.53±1.30
50%	25.57±1.61	
75%	19.10±0.53	
100%	20.00 ±0.7	

After 110 days, protein, free amino acids, GABA and carbohydrate were estimated in treated and non treated seeds in table 2.6.

Table 2.6 (See in the next page)

Conclusion - In present investigation allelochemicals viz. Nostophycin was found to be effective on growth of rice plant. A limited literature was published on the effect of cyanobacterial allelochemicals on rice plants. Object of the present investigation was to understand in vitro allelopathic role of isolated allelochemicals on the growth of rice seedlings. Different concentrations of allelochemicals (0%, 25%, 50%, 75%, 100%) affected the growth of rice seedlings at different rate during the observed time of periods (6^{th}, 12^{th}, 18^{th}, 35^{th}, 70^{th}, 110^{th} DAS). After analyzing results throughout the experiment, it is found that lower concentrations of Nostophycin stimulated the growth and higher concentrations of same allelochemical was found to be inhibitory on the growth of rice seedlings. It is clear that there is inverse relationship between Nostophycin concentration and growth of rice seedlings, as concentration increases it results in decreases in growth parameters.

References :-

1. Bates L, Waldren R and Teare I (**1973**) Rapid determination of free proline for water-stress studies. Plant and soil 39(1):205-207.
2. Castenholz RW, Rippka R, Herdman M, and Wilmotte A (**1989**) Subsection III Bergey's Manual of Systematics of Archaea and Bacteria
3. Castenholz RW (**1989b**) Order Nostocales vol 3 Williams and Wilkins Baltimore.
4. Castenholz RW (**1989c**) Order Oscillatoriales vol 3 Williams and Wilkins Baltimore.
5. Castenholz RW (**1989d**) Order Stigonematales vol 3 Williams and Wilkins Baltimore.
6. Cheng F and Cheng Z (**2015**) Research Progress on the use of Plant Allelopathy in Agriculture and the Physiological and Ecological Mechanisms of Allelopathy. Frontiers in plant science 6:1020.
7. Chu SP (**1942**) The influence of mineral composition of the media on the growth of planktonic algae-I Method and culture media. The Journal of Ecology 31:284-325.
8. Clardy J and Walsh C (**2004**) Lessons from natural molecules. Nature 432:829-837.
9. Desikachary TV (**1959**) Cyanophyta 686.
10. Dubois M, Gilles KA, Hamilton JK, Rebers P and Smith F (**1956**) Colorimetric method for determination of sugars and related substances. Analytical chemistry 28(3):350-356.
11. Fogg GE, Stewart WDP, Fay P, Walsby AE (**1973**) The Blue-Green Algae. London and New York.
12. Hindák F, Hindáková A (**2003**) Diversity of cyanobacteria and algae of urban gravel pit lakes in Bratislava, Slovakia: a survey. Hydrobiologia 506:155-162.
13. Kalaitzis JA, Lauro FM, Neilan BA (**2009**) Mining cyanobacterial genomes for genes encoding complex biosynthetic pathways. Natural product reports 26:1447-1465.
14. Kitaoka S and Nakano Y (**1969**) Colorimetric determination of *w*-amino acids. Journal of biochemistry 66(1): 87-94.
15. Komarek, Jiri, Anagnostidis K (**1986**) Modern approach to the classification system of Cyanophytes 2-Chroococcales. Algological Studies/Archiv für Hydrobiologie 73:157-226.
16. Komarek, Jiri, Anagnostidis K (**1989**) Modern approach to the classification system of Cyanophytes 4-Nostocales. Algological Studies/Archiv für Hydrobiologie 56:247-345.
17. Lin Y, Schiavo S, Orjala J, Vouros P, Kautz R (**2008**) Microscale LC-MS-NMR Platform Applied to the Identification of Active Cyanobacterial Metabolites. Analytical chemistry 80(21):8045-8054.
18. Lowry OH, Rosebrough NJ, Farr AL and Randall R.J (**1951**). Protein measurement with the Folin phenol reagent. J biol Chem 193(1):265-275.
19. Rippka R, Waterbury JB and Stanier RY (**1981a**) Isolation and purification of cyanobacteria: some general principles. The prokaryotes Springer 212-220.
20. Rippka R, Derulles J, Waterbury JB, Herdman M and Stainer RY (**1979**) Generic assignment, strain histo

ries and properties of pure cultures of cyanobacteria. Journal of General microbiology 111(1):1-61.

21. Sawhney SK and Singh R (**1999**) Introductory practical Biochemistry. Narosa Publishing House.
22. Singh S (2014) A review on possible elicitor molecules of cyanobacteria: their role in improving plant growth and providing tolerance against biotic or abiotic stress. Journal of applied microbiology 117(5):1221-1244.
23. Veerendra DN, Manjappa S, Puttaiah ET (**2008**) Diversity of Phytoplankton in Mani Reservoir, Hosanagar, Karnataka. Environmental Issues and Solutions:62.
24. Waterbury JB (**2006**) The cyanobacteria—isolation, purification and identification The prokaryotes. Springer US 1053-1073.

Table 1.2 - Composition of BG 11 medium Deionised water (1L)

Macronutrients		**Micronutrients Deionised water (1L)**	
$NaNO_3$	1500 mg	**H_3BO_3**	286 mg
K_2HPO_4	400 mg	**$MnCl_2.4H_2O$**	181 mg
$MgSO_4.7H_2O$	75 mg	**$ZnSO_{4.}7H_2O$**	22.2 mg
$CaCl_2.2H_2O$	36 mg	**$NaMoO_4.5H_2O$**	39 mg
Na_2CO_3	200 mg	**$CuSO_4.5H\text{-}_2O$**	7.9 mg
Ferric ammonium citrate	6 mg	**$Co(NO_3)_2.6H_2O$**	4.9 mg
Citric acid	6 mg	**pH**	7-7.5
EDTA	1 mg		
Micronutrient	1 ml		

Table 2.6 - Estimation of protein, free amino acids, GABA and carbohydrate in rice seed.

Treatment	**Protein (g/100g)**	**Free Amino Acid**		**GABA**	**Carbohydrate (g/100gm)**
		Glycine	**Proline**		
25% NPC	2.40	0.34	0.90	0.43	2.36
50% NPC	2.76	0.36	0.94	0.42	2.45
75% NPC	2.38	0.31	0.96	0.38	2.21
100% NPC	2.26	0.26	0.90	0.36	2.20
Control	2.25	0.22	1.19	0.35	2.23

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to September 2017, Vol. I

Overview Of Late Sequence Stratigraphy Of Cretaceous Rocks Of Bagh Beds, India

Mamta Pathrade * Amrita Khatri **

Abstract - Regional analysis of the explored representatives of the Bagh Beds of Narmada valley during the Cretaceous period is focused as for as the sequence stratigraphical aspects are concerned. Overview of the current paleontological study has been undertaken in an area of Dhar district of Madhya Pradesh. The existing nomenclature of classification of the Bagh Beds shows the main disparity about the validity of Deola-Chirakhan Marl, Coraline limestone and Bryozone limestone. In this paper, the sequence stratography of the constituent lithounits of Bagh Beds are compared, summarized and overviewed chronologically, with respect to nomenclature suggested by other stratigraphers for eliminating uncertainty in nomenclature.
Keywords - Stratigraphy, Cretaceous period, Bagh Beds, Sequence.

Introduction - The perception of sequence stratigraphy was visualized more than two hundred years ago, but its scientific groundwork developed gradually, as our understanding of Earth and its geological record has been developed. Perceptive relationship between worldwide changes in sea level and sedimentary environments was modified with advancement of new technologies.

Chronological framework of Sequence stratigraphy highlights facies relationships and stratal architecture, which is measured by many as one of the latest elusive revolutions in the wide field of sedimentary geology (Miall, 1995). The use of sequence stratigraphic analysis is significant for improving the resolution of time correlation within individual sedimentary basins and potentially at a global scale. In this paper efforts have been made to include the literature related to the sequence stratigraphic analysis given by different paleontologists to reveal conflicting ideas about nomenclature of the lithounits of bagh bed's stratigraphy since 1975.

1. Chiplonkar et al. (1975) have discussed the stratigraphic nomenclature of the Bagh Beds in considerable detail. The classification of the Bagh Beds proposed by Chiplonkar et al. is given below :

	Upper Coralline limestone with Oyster bed at top
B	Upper Inoceramus bed
A	Deola and Chirakhan Marl with
G	*Hemiaster*
H	Lower Coralline limestone
B	Lower *Inoceramus* bed
E	Nodular limestone.
D	*Astarte -Turritella* bed.
S	Oyster bed with shark teeth.
	Trace fossil horizon
	Lower portion of Nimar sandstone with oyster bed.

2. Dassarma and Sinha (1975) studied the marine Cretaceous formation of Narmada valley of Madhya Pradesh and Gujarat, on the basis of the field and paleontological evidences. These authors also divided the Bagh exposures of Narmada valley into two groups :

- **Eastern exposures –** extend from Barwaha through Man valley and Bagh up to Jobat and Alirajpur in Jhabua district Madhya Pradesh.
- **Western exposures –** extended from west of Alirajpur through Kawant up to Rajpipla in Bharuch district, Gujarat.

The classification proposed by Dassarma and Sinha is given below:

Eastern part of Narmada Valley
(Barwaha – Man valley, Bagh – Alirajpur)

__________ Deccan traps __________
__________ Lametas______________

Senonian……………………………………………		
Coniacian……………………………………………		
Turonian to Cenomanian	Coralline Limestone Nodular Limestone Calcareous Sandstone Locally with clusters of Oysters (Upper Nimars)	Bagh Beds
Lower Cretaceous	Nimar sandstone	
	___________________ Precambrians	

Western part of Narmada Valley
(Kawant-Rajpipla)

__________ Deccan traps __________
__________ Lametas______________

Senonian…………………… Rajpipla Limestone
Coniacian………………….. Oyster Bed

* Department of Zoology, M.J.B. Govt. P. G. Girls College, Moti Tabela, Indore, (M.P.) INDIA
** Department of Zoology, M.J.B. Govt. P. G. Girls College, Moti Tabela, Indore, (M.P.) INDIA

Turonian to Cenomanian — Calcareous Sandstone (Upper Nimars)

Lower Cretaceous — Nimar sandstones

Precambrians

The generalized classification of Bagh Beds given by Dassarma and Sinha (1975) is as follows.

Deccan Traps

Lametas : Shales, Sandstones, Limestone and Conglomerates

Bagh Beds
- Coralline Limestone
- Nodular Limestone
- Calcareous Sandstone (uppermost Nimars)

Nimar Sandstone Series
- Alternations of grits, ferruginous sandstones, quartzitic and conglomeratic sandstones

---

Metamorphics

3. Guha (1976) proposed new names "Karondia limestone" for the Nodular limestone and "Chirakhan limestone" to include the Deola-Chirakhan Marl and Coralline limestone of Bose (1884). He remarked that these names are suggested following the 'Code of Stratigraphic Nomenclature of India' (1971). The classification given by him is as follows:

Group	Formation
	Deccan Traps/ Unclassified sedimentaries
Bagh Group	Chirakhan limestone
	Karondia limestone
	Nimar sandstone
	Metamorphics

4. Smith (2010) suggested that the stratigraphic log has been divided into five fold subdivisions, labeled A-E separated by some different depositions. Unit A comprises of 4-5 meters of gray colored bedded micritic limestone showing a wavy appearance. Unit B is 1.1- 1.3 meter micritic limestone having nodular and rubbly appearance. The upper part of this unit is dark red color. Unit C is calcarenite unit up to 120 cm thick and forms a more resistant bed. Many bryozoans were recorded from in this region. This unit represent a sand sole deposit Unit D is similar to Unit C but it has truncated burrows and its top is a haematite coated hardground. Unit E is 1.5 – 2.5 meter thick showing pink to cream colored micrites (Fig.1).

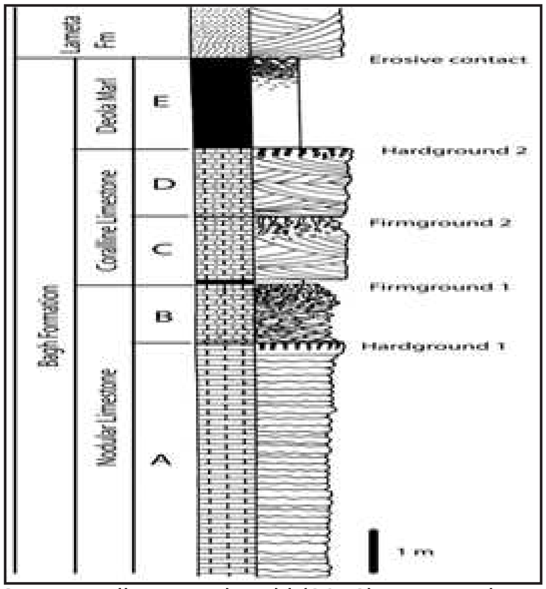

Fig.1 Composite lithological log of the Bagh formation as exposed in the region South of Zirabad, Dhar (after Smith, 2010).

5. Gangopadhyay and Maiti (2012) proposed two formations of Bagh groups viz. the older Nodular limestone and the younger Bryozoan limestone (also known as Coralline limestone, Barwah Bryozoan limestone, and Chirakhan limestone). Nodular limestone formation is divisible into three sub units vertically. The basal subunit is consisting of planar-laminated lime mudstone. Just above the basal sub unit is the region of middle sub unit bearing a recognizable nodular characters. Remarkably under characteristic representing the top most subunit which contains a higher proportion of argillaceous material in the form of clay seems, wrapped around the limestone nodule. A 3-5 cm thick purple clay horizon is observed at the place of contact of basal and middle sub unit. A regionally persistent, heavily bored hardground (H1) is demarcated at the junction of middle and upper subunit. General planar, bored, synsedimentary cemented surface form the hardground. Polycheat, annelids and sponges made the bores in the thin horizons (Fig.2).

Fig. 2 (See in last page)

Discussion - The present study regarding the stratighaphic set up of the Bagh beds, worked out by previous workers, was screened and compared. The authors also made a significant gathering of fossil faunal forms from Dhar district. A systematic analysis of the excavated faunal materials denotes the biozonations and age of the beds. It was realized during the present exploration that the fossils were not dispersed uniformly in all beds and hence well organized biozonations become a difficult task.

Dassarma and Sinha (1975); Phansalkar & Borgohain (1984) and Gangopadhyay & Maiti (2012) have not followed Chiplonkar et al. (1975). They argued the placement of Deola-Chirakhan Marl and Coralline limestone together because the Deola-Chirakhan Marl according to them is a distinct unit having its own paleontological characteristics. These authors have not honored the names proposed by Guha (1971) mainly on the grounds that no valid reasons have been assigned for displacing the old terms and moreover, the type section of Karondia limestone was ill-

chosen.

The new names suggested in the classification of Bagh Beds add to the multiplicity of nomenclature and created confusion. In addition, no justifiable reasons have been assigned for displacing the old nomenclature which has been deeply gripped in the Indian geological literature for more than a century (Chiplonkar et al., 1975, Chiplonkar, 1982).

The Bagh Beds of the Narmada valley have been divided into two groups of exposures namely - the Eastern Narmada valley and the Western Narmada valley (Poddar, 1964; Dassarma and Sinha, 1975; Chiplonkar et al., 1975). The Bagh Beds were considered to constitute a single paleontological unit in spite of lithological differences of the different members of these Beds (Chiplonkar, 1982).

The majority of the workers including Roy-Chowdhury and Sastri (1954, 1962); Sahni and Jain (1966); Dassarma and Sinha (1975); Guha (1976); Gangopadhyay and Maiti (2012) have not recognized the Deola-Chirakhan as a distinct stratigraphic unit, whereas Rode and Chiplonkar (1935) followed the Deola-Chirakhan Marl proposed by Bose (1884) as a distinct constituent member of the Bagh Beds. Chiplonkar and Badve (1972), Chiplonkar et al. (1975), Chiplonkar (1982) and Smith (2010) emphasized the recognisation of Deola-Chirakhan Marl as a distinct lithounit on the basis of the stratigraphic and paleontological work carried out by them. These authors have contradicted the observations of Roy-Chowdhury and Sastri (1962); Sahni and Jain (1966) who considered the Deola-Chirakhan Marl as a product of the weathering of Nodular limestone and also having insignificant thickness.

Gangopadhyay and Maiti (2012) have changed the name of Coralline limestone as Bryozoan limestone formation. It is because of the fact that corals are lacking and bryozoans were dominating in the younger formation. The contact between Nodular limestones with the Bryozoans limestone is very sharp. The Lameta group covers Bryozoans limestone in some regions but at most of the places the Deccan trap overlies the Lameta group. Many sedimentological information were known due to mining activities, digging and collecting raw material for cement factories near the study area, as a result many good sections of horizons were exposed.

Pathrade & Khatri (2016) reviewed and compared recently the constituent lithounits of Bagh beds chronologically with other stratigraphers regarding the validity of Deola –Chirakha Marl as a separate stratigraphic unit. They confirmed the views of Gangopadhyay and Maity (2012) about Bryozoan limestone formation.

Conclusion - The Bagh beds in the Narmada Valley of Madhya Pradesh, India yielded a rich and varied invertebrate fossil fauna but lack of standardization reflects conflicts among nomenclature of lithounits. The international code of stratigraphic nomenclature permits introduction of new names for the existing stratigraphic units on the basis of some solid grounds. In the light of existing controversy the authors reported the Bagh Beds to be divisible into three lithounits viz. Nimar sandstone, Nodular limestone and Bryozoan limestone. The future approach may be pooled with other types of stratigraphic as well as several non-stratigraphic disciplines for standardized stratigraphic code.

References :-

1. **Bose, P. N.** 1884. Geology of the lower Narbada valley between Nimawar and Kawant. *Mem. Geol. Surv. Ind*., 21(1): 1-72.
2. **Chiplonkar, G. W. and Badve, R. M**. 1972. Newer observations on the stratigraphy of the Bagh Beds. *Jour. Geol. Soc. Ind*., 13(1): 92-95.
3. **Chiplonkar, G. W., Badve, R. M. and Ghare, M. A.** 1975. On the stratigraphy of Bagh Beds of the Lower Narmada valley. *Proc. IV Ind. Colloq. Micropal. and Strat*., 209-216.
4. **Dassarma, D. C. and Sinha, N. K.** 1975. Marine Cretaceous formations of Narmada Valley (Bagh Beds), Madhya Pradesh and Gujarat. *Mem. Geol. Surv. Ind. Palaeontologia Indica new series*, 42:1-123.
5. **Gangopadhyay, T. K. and Maiti, M.** 2012. Geological implication of a Turreted Gastropod and Astartid Pelecypod bearing horizon in the Nodular limestone of Sukar nala section near Zirabad of Bagh, Dhar district, M.P., India. *Jour. of Mahasa. University Thailand,* 31(1):45-49.
6. **Guha, A. K.** 1971. Age and affinity of the Bagh fauna-A discussion. *Geol. Sci*., 8:47-55.
7. ***Guha, A.K.*** *1976*. A Lithostratigraphic classification of the Bagh group (Beds), Madhya Pradesh. Proc.VIth Ind. Colloq. *Micropal. and Start*., 66-76.
8. **Mail, A.D. 1995.** Description and interpretation of fluvial deposits: a critical perspective.*Jour. Sedimentology,* 42(2): 379.
9. **Pathrade, M., Khatri, A.** 2016. Review of Early Chronostratigraphical Study on Cretaceous Rocks of Bagh Beds, India. *Jour.Divya Shodh Samiksha,* I(VIII): 20-23.
10. **Phansalkar, V. G. and Borgohain, R.** 1984. Depositional environments of Bagh Beds of Mau, Uri and Waghni river valleys of Dhar district, Madhya Pradesh. *IVth Convention, Indian Absor. Sedimentlogist (Abst.)*: 16-17.
11. **Poddar, M.C.**1964. Mesozoic of Western India- their geology and oil possibilities. *Int. Geol. Cong. 22nd Sess*., Pt. 1:126-143.
12. **Rode, K. P. and Chiplonkar, G. W.** 1935. A contribution to the stratigraphy of the Bagh Beds. *Curr. Sci*., 4(5): 322-323.
13. **Roy-Chowdhary, M. K. and Sastri, V. V.** 1954. A note on the revised classification of the Cretaceous and associated rocks of the Man river section of the Lower Narmada Valley. *Sci. and Cult.,* 20 (4): 184-185.
14. **Roy-Chowdhary, M. K. and Sastri, V. V.** 1962. On the revised classification of the Cretaceous and the associated rocks of the Man river section of the

Narbada Valley. *Rec. Geol. Surv. Ind.,* 91(2): 283-304.

15. **Sahni, M.R. and Jain, S.P.** 1966. Note on a revised classification of the Bagh Beds, Madhya Pradesh. *Jour. Pal. Soc. Ind.,* 11:24-25.

16. **Smith, A. B.** 2010. The Cretaceous Bagh formation, India: a Gondwana window onto Turonian shallow water echinoid faunas. *Cretaceous research,* 31: 368-386.

Fig. 2 Generalized Stratigraphy of the Bagh group along the Man river valley (after Gangopadhyay and Maiti, 2012).

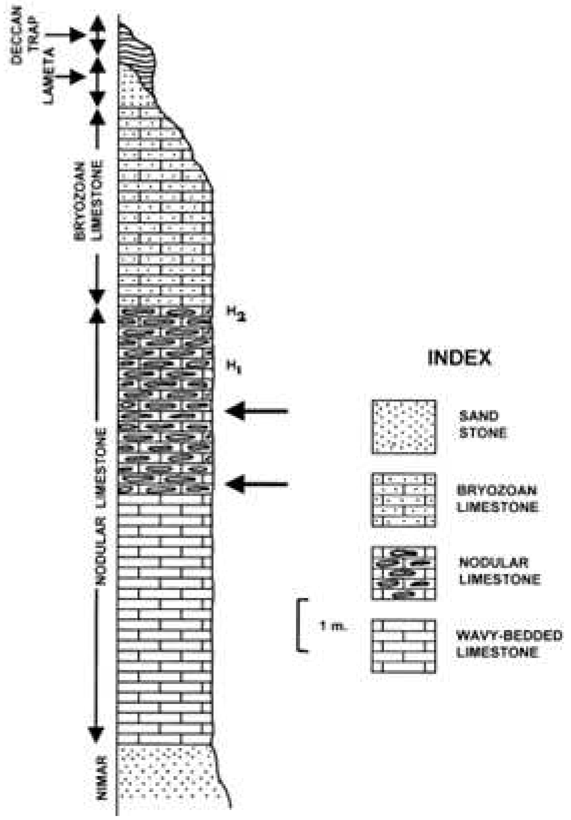

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to September 2017, Vol. I

Study On Water Quality And Piscean Diversity Of Bansagar Dam Of Shahdol District MP India

Dr. Prabhu Das Rawat *

Abstract - The quality of water has been studied extensively in different rivers, dams and other water bodies in India and abroad by a number of workers such as **Ramanujan SN (2005), and Sen N (2009).** The observations recorded in the present study may prove valuable as a reference for assessing the changes due to the environmental conditions in the locality, in future. The findings of the present study underline the importance of Bansagar dam in providing preferred abode for fishes

In the present study, two species of fish under endangered, eight species of fish under of vulnerable, twenty species under the category of lower risk near threatened, three species under the category of lower risk least concern and four species were reported as data deficient. In conclusion, it may be stated that Bansagar reservoir harbours 51 species of fishes belonging to 30 genera, 13 families and 07 orders. Order Cypriniformes was found to be a major order with 10 species.

Key Words - Study on Water quality and Piscean diversity of Bansagar Dam.

Introduction - Present investigations have an objective to explore the water quality and fish diversity in Bansagar dam constructed on river Son to fulfill the need of irrigation to the states of Madhya Pradesh, Bihar and Uttar Pradesh along with fish culture. The Bansagar dam is constructed in river Son a tributary of Ganga River System at Deolond in Shahdol district of Madhya Pradesh. The dam fulfils the requirement of irrigiation , drinking water to the states of Madhya Pradesh, Bihar and Uttar Pradesh. Besides irrigation it also provides energy through its hydro electric power generation plants. The river Son is not only a river, but also a lifeline of the peoples of area as it provides water for their livelihood in several ways and the dam fulfils the requirement of their irrigation in large level.

Urbanization, industrialization and steep demand for water have led to serious problems of water quality degradation in different water resources in the country. The physicochemical analysis of Ganga river shows that the water has high TDS, TSS, BOD, and COD. The coli form bacteria were found to be alarmingly high in the river. Most of the parameters analyzed were found high near the bank in comparison to the water in the middle stream of that station. The XRF analysis of sediments of the Ganga river showed that Si, Fe, Ca, Al and K are the major elements of the Ganga sediment.

Many of its tributaries are heavily polluted and the main water quality issues are, organic pollution indicated by BOD and pathogens indicated by coli form count. There is a fluctuating trend of water quality attributed to the flow conditions in the river which depend on rainfall and water abstraction. In view of water scarcity in the basin, it is very important that no wastewater be discharged into the river. There is an urgent need to augment water availability in the basin by rainwater collection, water conservation and environmental flow determination in various segments of the river affected by water abstraction.

Physico-Chemical changes occurs as a result of water contamination in the aquatic environment frequently affect the injury and intoxication of fish. Following physico-chemical factors found to be responsible for intoxication of fish-

- Water Temperature, Water pH, Oxygen, Ammonia, Nitrate and Nitritrs, Sulphate (Hydrogen Sulphide), Carbon Dioxide, Chlorine.

Review of Literature - The quality of water has been studied extensively in different rivers, dams and other water bodies in India and abroad by a number of workers such as Pradhan, B.R. and D. Swar, (1988),Beveridge, M.C.M. and M.J. Phillips, (1988), HMG, (1993) , Helland-Hansen, E., T. Holtedahl and K.A. Liye, (1995).

In and around Madhya Pradesh, the interest in fish fauna has been quite old. Allen DJ, Molur S, Daniel BA (Compilers) (2010). The Status and Distribution of Freshwater Biodiversity in the Eastern Himalaya. Cambridge, UK and Gland, Switzerland: IUCN, and Coimbatore, India: Zoo Outreach Organisation.

A total of 71 fish species were recorded from Chambal division Barman RP (1989). On a small collection of fish from Mizoram, India. J. Bombay Nat. Hist. Soc., Bombay 86(3):463-466. 46 species of fishes were recorded from Kunwari river of Chambal division Saxena R., Shrivastava

*Research Scholar (Zoology) Pt. S.N.S. Govt. P.G. College, Shahdol (M.P.) INDIA

P. (1989). Finally it is suggestive to ensure essential measures for the conservation of existing fish fauna at Bansagar reservoir by the authority concerned.

Materials & Methods - The methodology adopted during the course of study can be summarized under following heads -

- Preliminary survey of the collection area
- Water sampling
- Collection of Specimens
- Preservation techniques
- Identification of genus & species

Water sampling was done from pre established sampling stations to study the water quality. Water was brought to laboratory for estimation of its quality. Simple techniques were adopted through titration method to analyze water quality. Some of the parameters were determined with help of water analyzer.

Before the collection work, a preliminary survey of the area was done to identify the spots where collection of specimen can be done easily. Collection covers the total area as fisher mans use boats for fishing and the moves everywhere in the dam during fishing.

Observation - The present observations were carried out in Bansagar dam of Shahdol district situated in village Devlond on Son River and cater the need of irrigation to the states of Madhya Pradesh, Uttar Pradesh and Bihar with production of electricity through its hydroelectric power generation plant along with fish cultivation. Objectives of this study were -

- To explore water quality of dam
- To study the diversity of fish species population.
- Statistics of fish population
- To suggest conservation measures to preserve fish diversity in the reservoir.

To Explore Water Quality Of Dam - An attempt has been made to find out the physico-chemical parameters of the dam and their impact over fish diversity. The parameters were recorded in pre established sampling stations of the dam. The dam is the main picnic spot of area and about an average, more than 500 people visit regularly except rainy season. Human activities also affect the parameter up to some extent. Data obtained have been represented in table-3 and correlated for different months of year **(Table see in the last page)**

Table 1 - Showing the Physico- Chemical parameters of the Bansagar dam during the different months of year.

Figure 1 - Bar diagram showing water temperature of the dam during different months of year **(See in the last page)**

Figure- 2 Line diagram showing water temperature of the dam during different months of year.

Diversity Of Fish Species Population - During the course of study a total 51 species of primary fresh water fishes belonging to 6 orders, 13 families and 10 genera were recorded from the study sites.

In the assemblage structure, cyprinid constituted the dominant group with 7 families 12 genera and 51 species. Among cyprinids ***Labeo rohita, Catla catla, Cirrhinus mrigala ,Osteobrama cotio, Puntius sophore, Puntius ticto, Rasbora daniconius*** were represented in all study sites.

In brief the fish fauna recorded during the course of observation can be summarized as follows:-

Order - 1. CLUPEIFORMES 2. CYPRINFORMES

Family - 1. Notopteridae 2. Cyprinidae

Species - 1. Notopteridae2. Cyprinidae, Notopterus notopterus, Notopterus chitala

Cyprinidae , Barilius bendelesis, Catla catla,Cirrhinus mrigala, Cirrhinus reba, Danio devorio, Danio equipinatus, Esomus danricus, Discognathus lamta.

Morphometeric features -

1. PARAMETER OBSERVATION- The 02 Morphometeric features study here only.

1. Scales Type Cycloid scale 2 Barbels Absent 3 Total Length 24 cm 4 Standard length 22.3 cm 5 Length of Head 5.3 cm 6 Height of the body 7.1 cm 7 Length of caudal Peduncle Not measured as Anal fin confluent with caudal 8Height of caudal peduncle Not measured as Anal fin confluent with caudal 9 Length of head excluding snout 4.1 cm 10 Width of head 3.5 cm 11 Inter orbital width 0.4 cm 12 Diameter of the eye 1.0 cm 13Snout 1.2 cm 14 Predorsal length 13.1 cm Fin formula:- D.8 (1/7); P.17; V.6; A. 100, C, 19; L.l. 225.Vert.30-60.

Dorsal profile not convex. A distinct median groove on the head. Anal fin confluent with caudal fin. Anal fin is pointed. Color silvery but is varies accordingly ecological conditions

2. Observation -

1 .Scales Type Cycloid scale 2 Barbels Absent 3 Total Length 20. 3cm. 4 Standard length 18.7 cm 5 Length of Head 4.5cm. 6Height of the body3.87cm. 7 Length of caudal Peduncle Not measured as Anal fin confluent with caudal 8 Height of caudal peduncle Not measured as Anal fin confluent with caudal 9 Length of head excluding snout 3.9 cm 10 Width of head 2.7 cm 11 Interorbital width 1.2 cm 12 Diameter of the eye 0 . 7 cm 13Snout 1.9 cm 14 Predorsal length 7.6 cm

Fin formula:- D.9 (1/7); P.17; V.6; A. 100, C, 19; L.l. 225

* Fin formula:- D.11(2/9) P.15; V.9; A.8 (2/6); L. l. 32-36; L.tr 4½/5 Vert-18-14; Barbels 2 pairs. Snout very diversified covered with pores having deep transverse depressions.Eyes directed up wardly.Generally a dark spot behind the gill opening.

Upper profile of head is concave and lower is convex. Preorbital is entire two distinct spines on either side of throat. Anal fin confluent with caudal fin. Ventral fin is minute and caudal fin is pointed. Lateral line present. color bluish brown. **(See in the last page)**

Disscution - The quality of water has been studied extensively in different rivers, dams and other water bodies in Shahdol. observations on limnological factors responsible for the proper growth of fish species.

In present observations several parameters of dam

water were taken into consideration during the course of study and it has been noticed that average water temperature of the dam was minimum 17.5 in the month of January and maximum 25.4 in the month of June. Minimum value of pH was 6.5 in the month of November and it was maximum 8.1 in June. The minimum value of oxygen 4.8 mg/liter was in the month of July whereas the values were maximum 6.8 in the months of April and September. Though quantity of ammonia was recorded negligible but the minimum value was in the month of November while it was maximum in the month of July. The scenario of water quality strongly recommends that water during summer do not favours fish physiology.

In the present study, two species of fish under endangered, eight species of fish under of vulnerable, ten species under the category of lower risk near threatened, three species under the category of lower risk least concern and four species were reported as data deficient. In conclusion, it may be stated that Bansagar reservoir harbours 51 species of fishes belonging to 30 genera, 13 families and 06 orders and also research paper in represent of fishes belonging to 10 genera, 02 families and 02 orders.

Acknowledgement

I owe my profound indebtedness to my supervisor, Dr. Binay Kumar Singh, Professor & Head, Department of Zoology for his kind support and moral encouragement in every walk of research work during Ph.D. I pay my tender compliments to all senior faculty members, Dr. Bharat Sharan Singh, Professor, Dr. Kaushalendra Kumar, Assistant for his ever moral encouragement and full support whenever needed. I also pay my heartiest thanks to Dr. Ritesh Mandal for providing best support in drawing photographs, plotting graphs and composing thesis. I would like to pay tender compliment to Dr. Radhe Shyam Napit for his painstaking support in doing field work.

References :-

1. Allen DJ, Molur S, Daniel BA (Compilers) (2010). The Status and Distribution of Freshwater Biodiversity in the Eastern Himalaya. Cambridge, UK and Gland, Switzerland: IUCN, and Coimbatore, India: Zoo Outreach Organisation.
2. Ao S, Dey SC, Sarmah SK (2008). Fish and Fisheries of Nagaland. Department of Fisheries, Government of Nagaland, Kohima, Nagaland, p. 234.
3. B. Khalil and T.B.M. Ouarda. J. Environ.Monit. 2009, 11, 1915-1929.
4. Beveridge, M. C. M. and M. J. Phillips, 1988. Aquaculture in reservoirs. *In*: Proceedings of a Workshop on Reservoir Fishery Management in Asia (S.S. De Silva, ed.): 234-243. IDRC, Ottawa..
5. Daniels RJR (2001). Endemic fishes of the Western Ghats and the Satpura Hypothesis. Curr. Sci. Bangalore 81:240-244.
6. Helland-Hansen, E., T. Holtedahl and K.A. Liye, 1995. Enviromental Effects. Vol. 3. Hydropower Development. Norwegian Institute of Technology.
7. HMG, 1993. National Guidelines for EIA (Environment Impact Assessment) of Hydro-Electric Projects. HMG, Nepal.
8. M. Kido, Yustiawati, M.S. Syawal Sulastri, T. Hosokawa, Environ. Monit. Assess, 2009, 156, 317-329.
9. North Eastern Council (2008). Ten years perspective plan: Water resources of North East India.
10. P.K. Dubey, L.P Maheshwari and A.K. Jain,91980): Ichthyo-Geographical survry of the Chambal Division, Madhya Pradesh. Journaln of Jiwaji University, 1980,8(2):113-122.
11. Pradhan, B. R. and D. Swar, (1988). Limnology and fishery potential of the Indrasarovar Reservoir Kulekhani, Nepal. *In*: Proceedings of a Workshop on Reservoir Fishery Management in Asia (S.S. De Silva, ed.): 87-93. IDRC, Ottawa.
12. Ramanujan SN (2005). Biodiversity of aquatic fauna of Mizoram: The present scenario. Aquatic Biodiversity in India: The Present Scenerio. Daya Publ. House, New Delhi, pp. 61-80.
13. Saxena , R.N. 1988.A checklist of Reva District, Madhya pradesh (India). Cheetal, 29 (1): 40-50.
14. Yearly Progress, (2005). Limnobiological/Biological Study of Sunkoshi River. *In*: Yearly Progress Report of Inland Aquaculture Fisheries Section Balaju. Kathmandu.

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to September 2017, Vol. I

Table 1 - Showing the Physico- Chemical parameters of the Bansagar dam during the different months of year.

Months	Temp. In 0 C	pH of water	Oxygen Mg/ liter	Ammonia Mg / liter	Nitrites Nitrates Mg/ liter	H2sMg/ liter	Co2Mg/ liter	ChlorineMg / liter
January	17.5	7.0	6.2	0.37	30.6	0,008	1.60	0.006
February	18.0	7.1	6.4	0.59	31.8	0.008	0.80	0.004
March	19.0	7.5	6.1	0.94	31.9	0.007	1.20	0.005
April	21.7	7.6	6.8	1.47	22.8	0.006	1.50	0.008
May	24.2	7.8	5.7	2.06	29.8	0.005	1.20	0.009
June	25.4	8.1	5.2	2.85	28.9	0.003	0.80	0.001
July	23.2	6.8	4.8	3.62	24.2	0.001	1.20	0.002
August	22.6	7.8	5.2	2.32	26.9	0.004	3.80	0.006
September	21.8	7.3	6.8	1.01	60.8	0.006	3.20	0.005
October	23.5	7.4	6.4	0.64	63.0	0.006	2.80	0.006
November	18.5	6.5	6.3	0.32	58.6	0.008	1.20	0.005
December	18.3	7.1	6.2	0.36	38.6	0.009	0.20	0.005

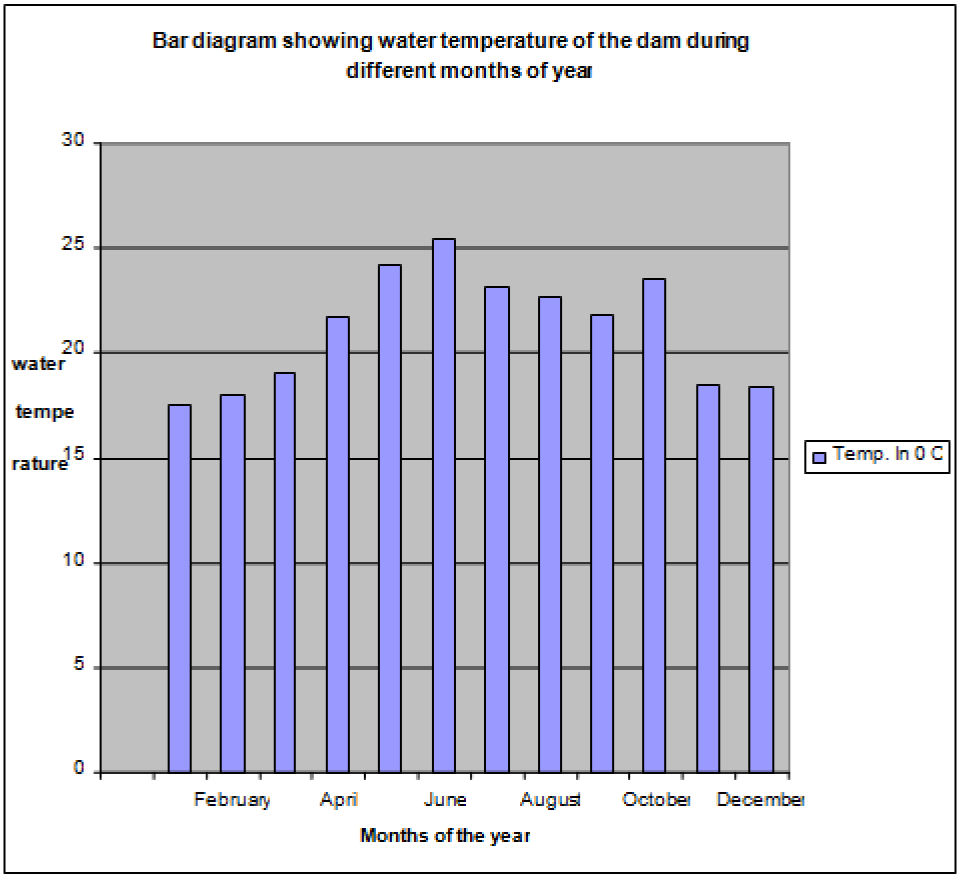

Figure - 1

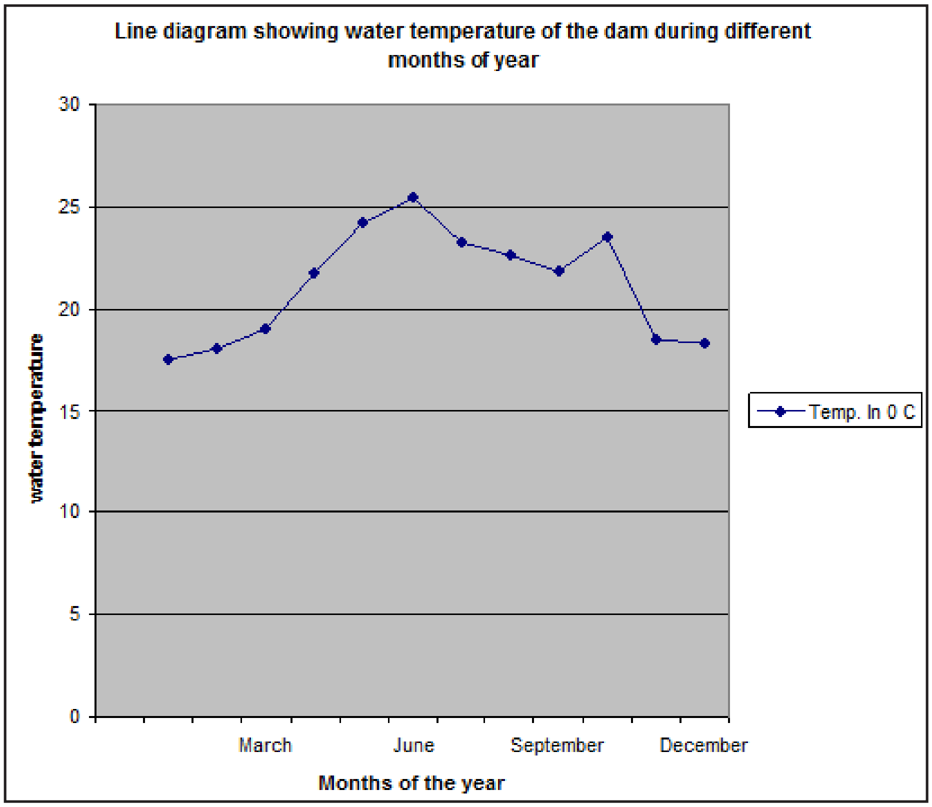

Figure - 2

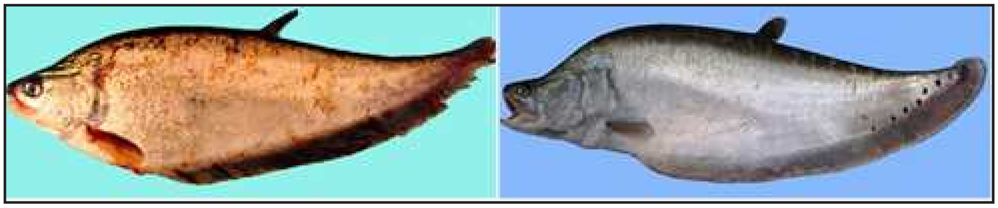

Figure:1 - Photo graph of *Notopterus notopterus* Figure:2:-Photo graph of *Notopterus chitala*

Figure:3:-Photo graph of *Barilus bendelisis* Figure:4:-Photograph of *Catla catla*

Figure:5:-Photograph of *Cirrhinus mrigala*   Figure:6:-Photograph of *Cirrhinus reba*

Figure:7:-Photograph of *Danio devario* Figure:8:-Photograph of *Danio equipinatus*

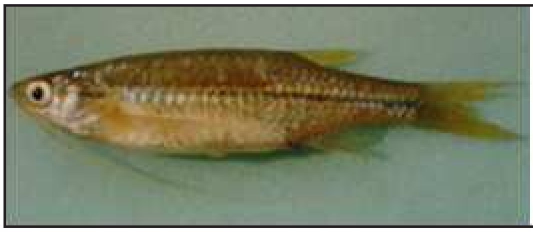
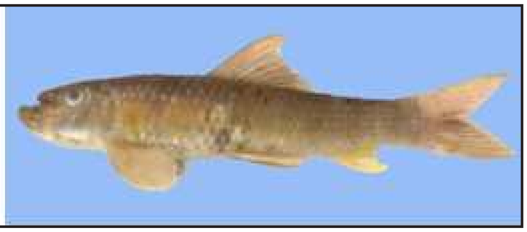

Figure:9:-Photograph of *Esomus danricu*   Figure:10:-Photograph of *Discognathus lamta.*

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to September 2017, Vol. I

Research Methods and Methodology : A Comprehensive Review

Dr. Pramod Pandit *

Abstract - This paper deals with the basic concept and will provide fundamental ideas about the research methods and methodology i.e. the meaning, objectives, scopes and types of research. A person who is going to do research activity must know regarding formulation of the research problem, literature survey, development of hypotheses, preparing the research design, execution of the project, collection and analysis of the data. Hypothesis- testing, generalization and interpretation of data results and conclusion must also be included in the research report.

Today, in the world of nano analysis, none field is untouched regarding to know the origin, properties and uses of anything. It is true that all sets of the material and immaterial world are under the inquisitive approach i.e, Research, research may be in Physical, Biological chemical and in Social Sciences or in Political, Economical and in Commercial fields.

Introduction - All the progress in the society is born of inquiry. Deeper inquiry leads to invention and discovery. Thus an increased amount of inquiry makes research possible. Research inculcates scientific, inductive and logical thinking different. It provides the basis for nearly all government policies and economic systems. As a matter of fact, the role of research in several fields like economical, social, commercial and political etc., apart from scientific has greatly increased. Research has its special significance in solving various operational and planning problems of business and industry. Research is equally important for social scientists in studying social relationships and in seeking answers to various social problems. Likewise, in every field of science, the research plays a significant role in providing the intellectual satisfaction of knowing a few things just for the sake of knowledge and also has practical utility for the scientists.

Here is the emphasis on the challenges which the present research methodology is faced with towards the maintenance and sustenance of its quality, implementation aspect of any research by way of proposing a heuristic and working taxonomy of eight conceptually distinct implementation outcomes such as acceptability, adoption, appropriateness, feasibility, fidelity, implementation cost, penetration and sustainability.

Research is an academic activity that contains defining and redefining problems; formulating hypotheses; collecting, organizing and evaluating data; making deductions and reaching conclusions; and at least carefully testing the conclusions to determine whether they fit the formulating hypotheses. Research is thus an original contribution to the existing treasure of knowledge. It is the pursuit of truth with the help of study, observation, comparison and experiment.

Objectives of Research - The purpose and aims of any research is to discover answers to questions through the application of scientific procedures. The main objective of research is to reach and find out the truth/facts which is hidden and which has not been discovered as yet.

The main goals/ objectives of the research may be fall into the following heads broadly:

1. Exploratory or Formulative Research Studies - This kind of research is to gain familiarity with a phenomenon or to achieve new insights into it.

2. Descriptive or Eleborative Research Studies - It's main aim is to portray accurately the characteristics of a particular individual, situation or groups.

3. Diagnostic or Result Oriented Research Studies - To determine the frequency with which something occurs or with which it is associated with something else.

4. Hypothesis – Testing Research Studies - To justify a hypothesis of a causal relationship between variables.

Motivative Factors in Research - The motivation forces behind any research are of fundamental significance. Some of the motives for doing any research activity may be one or more of the following:

1. Desire to get a research along with its consequential benefits ;
2. Desire to face the challenges in solving the unsolved problems ;
3. Desire to get intellectual joy of doing some creative work;
4. Desire to be of service to society ;
5. Desire to get respectability ;
6. Directives of the government ;

* Head (Chemistry) S.B.N. Govt. P.G. College, Barwani (M.P.) INDIA

7. Employment needs;
8. Curiosity about new things ;
9. Desire to understand causal relationships, social thinking and awakening.

However, this is not an exhaustive list of motives to undertake research, there may be many more such motives which may motivate or at times compel persons to undertake research.

Types and Approaches of Research - Broadly different types & approaches of research can be classified into following basic categories:

1. **Descriptive or Analytical -** Descriptive research includes surveys and fact finding enquires of different kinds. It includes the description of the state of affairs as it exists at present. The main characteristic of this kind of research is that the researcher has no control over the variables. The researcher can only report as to what has happened or what is happening. It is also known as Exposit facto research in social science or business research. In this kind of research, the researchers try to find the causes even when they cannot control the variables. Also the use of survey methods of all kinds, including comparative and correlational methods on the other hand. In analytical research, the researcher has to use facts or information already available. The researcher analyses the information in different ways to do a critical evaluation of the material or problem, calculations and mathematical formulas are also used in such research.

2. **Applied or Fundamental -** The research can either be applied or fundamental. An applied research aims at finding a solution for an immediate problem directly related to or facing by a society or industrial/business organization. The fundamental research, on the other hand, is mainly concerned with the formulation of theory. The fundamental research is also called 'pure' or 'basic' research.

Research concerning some natural scientific phenomenon or relating to pure mathematics or concerning human behaviour to make generalizations about common human behavior are also the some examples of fundamental research. The research aimed at certain conclusions or solutions facing a concrete scientific, economical, social or business problem is an example of applied research.

3. **Quantitative or Qualitative -** The quantitative research is based on the measurement of quantity or amount of any material or problem. It is applicable to any phenomenon that can be expressed in terms of quantity. Qualitative research, on the other hand, is concerned with qualitative phenomena e.g. immaterial reasons for any event human behavior, motivation research, etc. Motivation research aims at discovering the underlying motives and desires. This kind of research uses in-depth interviews, word association tests, sentences completion tests, story completion tests and similar other projective techniques. The qualitative research is specially important in the behavioral sciences where the aim is to discover the underlying motives of human/animal or any material behavior. The qualitative research is relatively a difficult job and therefore one requires guidance from experimental psychologists while doing research.

4. **Conceptual or Empirical -** The conceptual research is related to some absolute/abstract ideas or theory. It is generally used by philosophers and thinkers to develop new concepts or to interpret existing ones. On the other hand, empirical research relies on experience and observation alone. This does not give due regard for the system or theory. It is a data-base research. This research comes up with conclusions verifiable by observations and experiments. This is infact an experimental type of research in which it is necessary to get at facts first hand, at their source, and actively to go about doing certain things to stimulate the production of desired information. Empirical research, on the otherhand, is appropriate when proof is sought that certain variables affect other variables in some way. Evidence gathered through experiments or empirical studies is today considered to be the most powerful support possible for a given hypothesis.

5. **Theoretical or Practical -** Theoretical research includes data based paper work research, in which comparison, analysis and decision are taken on the previous existed theories and ideas. No experimental or field work is included in this type of research. On the other hand practical research work purely and compulsorily includes practical, experimental and field work in which data are collected through sampling and after experiment this data are analyzed and compared to obtain the result and for making the conclusion.

Research Methods versus Methodology - There is a marked difference between research methods and research methodology. Research methods may be understood as those methods/techniques that are used in the conduct of research. In this way, all those methods which are used by the researcher during the course of studying the research problem are termed as research methods.

Research methodology, on the other hand, is a wider concept. It is a way to systematically solve the research problem. It may be understood as a science of studying how research is done scientifically. In it, we study the various steps that are generally adopted by a researcher in studying his research problem alongwith the logic behind them. It is, therefore, necessary for the researcher to know not only the research methods/techniques but also the methodology. Researchers need to understand the assumptions underlying various techniques and they need to know the criteria by which they can decide that certain techniques and procedures will be applicable to certain problems and others will not. All this means that it is necessary for the researcher to design his methodology for his problem as the same may differ from problem to problem.

Thus the scope of the research methodology is wider than that of research methods.

Research Process - Research process consists of a series

of actions or steps necessary to effectively carry out research and desired sequencing of these steps. A brief description of the research process is as follows:

i. Formulating the Research Problem - At the very outset, the researcher must find out the problem, he wants to study; i.e., he must decide the general area of interest or aspect of subject matter that he would like to inquire into. Initially, the problem may be stated in a broad general way and then ambiguities, if any, relating to the problem be resolved. Then, the feasibility of a particular solution has to be considered before a working formulation of the problem can be set up. Essentially two steps are involved in formulating the research problem; viz., understanding the problem thoroughly and rephrasing the same into meaningful terms from an analytical point of view.

ii. Extensive Literature Survey - Once the problem is formulated, the brief summary of it should be written down. It is compulsory for a research worker writing a thesis for a Ph.D. degree to write a synopsis of the topic and submit it to the necessary Committee or Research Board for approval. At this juncture, the researcher should undertake extensive literature survey connected with the problem. For this purpose, the abstracting and indexing journals and published or unpublished bibliographies are the first place to go. Academic journals, conference proceedings, government reports, books, etc. must be tapped depending on the nature of the problem.

iii. Development of Working Hypothesis - After extensive literature survey, researcher should state in clear terms the working hypothesis or hypotheses. Working hypothesis is tentative assumption made in order to draw out and test its logical or empirical consequences. Research hypotheses are developed to provide the focal point of the research. The hypotheses also affect the manner in which the tests must be conducted in the analysis of the data, and indirectly the quality of the data which is required for the analysis. The hypotheses should be very specific and limited to the piece of research in hand because it has to be tested.

iv. Preparing the Research Design - The research problem having been formulated in clear cut terms, the researcher will be required to prepare a research design; i.e., he will have to state the conceptual structure within which the research would be conducted. The preparation of such a design facilitates research to be as efficient as possible yielding maximal information. In other words, the function of the research design is to provide for the collection of relevant evidence with minimal expenditure of effort, time and money. But how all these can be achieved depends mainly on the research purpose. The research purposes may be grouped into four categories; viz. (i) Exploration, (ii) Description, (iii) Diagnosis and (iv) Experimentation. A flexible research design which provides opportunity for considering many aspects of a problem is considered appropriate if the purpose of the research study is that of exploration.

v. Execution of the Project - The execution of the project is a very important step in the research process. If the execution of the project proceeds on correct lines, the data to be collected would be adequate and dependable. The researcher should see that the project is executed in a systematic manner and in time.

vi. Analysis of Data - After the data have been collected, the researcher turns to the task of analyzing them. The analysis of data requires a number of closely related operations such as establishment of categories, the application of these categories to raw data through coding, tabulation and then drawing statistical inferences.

vii. Hypothesis Testing - After analyzing the data as stated above, the researcher is in a position to test the hypotheses, if any, he had formulated earlier. Do the facts support the hypotheses or they happen to be contrary is the usual question which should be answered while testing the hypotheses.

viii. Generalisations and Interpreation - If the hypothesis is tested and upheld several times, it may be possible for the researcher to arrive at generalization; i.e., to build a theory. As a matter of fact, the real value of the research lies in its ability to arrive at certain generalisations. If the researcher has no hypothesis to start with, he might seek to explain his findings on the basis of some theory. It is known as interpretation. The process of interpretation may quite often trigger of new question which in turn may lead to further researches.

ix. Preparation of the Report or the Thesis - Finally, the researcher has to prepare the report of what has been done by him. Writing of the report must be done with great care keeping in view the following:

The layout of the report should be as follows: the preliminary pages ; the main text and the end matter. In the preliminary pages, the report should carry title and date followed by acknowledgements and foreword.

The main text of the report should have the following parts :

1) **Introduction**: It should contain a clear statement of the objective of the research and an explanation of the methodology adopted in accomplishing the research. The scope of the study along with various limitations should as well be stated in this part.

2) **Summary of findings**: After introduction there would appear a statement of findings and recommendations in non-technical language. If the findings are extensive, they should be summarized.

3) **Main reports**: The main body of the report should be presented in logical sequence and broken down into readily identifiable sections.

4) **Conclusion**: Towards the end of the main text, the researcher should again put down the results of his research clearly and precisely. In fact, it is final summing up.

At the end of the report, appendices should be enlisted in respect of all technical data. Bibliography, i.e. list of books, journals, reports, etc. consulted, should also be given in the end. Index should also be given specially in a published

research report.

(a) The report should be written in a concise and objective style in simple language avoiding vague expressions such as 'it seems', 'there may be', and the like.

(b) Charts and illustrations in the main report should be used only if they present the information more clearly and forcibly.

Concluding Remarks - Researchers in India are facing several problems while pursuing their research. The lack of scientific training in the methodology of research is a great impediment for researchers in our country. There is a paucity of competent researchers in our country. Many researchers take a loop in the dark without knowing the research methods. Also there is an insufficient interaction between the university research departments on one side and industrial/business/government departments and research institutions on the other side. So, efforts should be made to develop satisfactory liaison among all concerned for better and realistic researches. The library management and functioning is not satisfactory at many places and much of the time and energy of researchers are spent in tracing out books, journals, reports, etc. So, for quality research, all these problems are required to be eliminated from our research organizations.

References :-

1. Dr.R.N.Trivedi and Dr.D.P.Shukla Research Methodology ISBN 81-85788-28-6, 2005.
2. D .Slesingar, M .S tephenson, T h e Encyclopaedia of Social Sciences, (IX edi.), Mac Millan, 250, 1930.
3. E. Proctor, P. Hovmand and R. Griffey, Adm Policy Ment Health, 38, 65,2011.
4. A. Tong, K. Fleming and E. McJnnes, Entreg , B M C medical research Methodology,12, 181,2012.
5. Pauline V. Young, Scientific Social Surveys, 1949, Prentice Hall, New York, p.321.
6. James Harold Fox, Criteria of Good Research, Phi Delta Kappan 39, 285, 1958.

****

Synthesis of Some 2- styrylquinolines as possible Antimalarial (Part II)

Dr. Malti Dubye (Rawat) *

Introduction - Different types of quinaldines were condesed with some- aldehydes in the presence of condensing agents yielded styrylquinolines.

The antimalarial activity[1-2] of quinoline derivatives has been extensively studied, stryryl quinolines have been found to possess antiseptic[3], antimicrobiol[4], and trypanocidal activity[5], Many styryl derivatives are used as the starting materials for the synthesis of cyaninedyes[6], Antimalarial drugs have been synthesised from 8-aminoquinoline and 4-amino quinoline.

Although the chemotherapeutic properties of a large number of substituted 2-styryl-quinolium salts have been rather intensively studies, styrylquinolines bearing dimethyl Sulphonyloxy-4-mthoxy-benzaldehyde and pyrene have not come to notice therefore it seemed of interest to prepare new styrylquinoline bearing these groups for therepeutic evaluation. Sulphonyloxy-4-mthoxy-benzaldehyde and pyrene were condensed with 6-chloro, 6-bromo, 6-nitro, 6-benzamide qinaldines, in the presence of condensing agents styrylquinolines of the type (I)(II) hve been Obtained in yield ranging from 36 to 89%

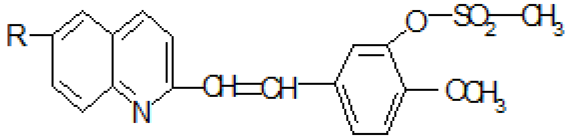

(I)

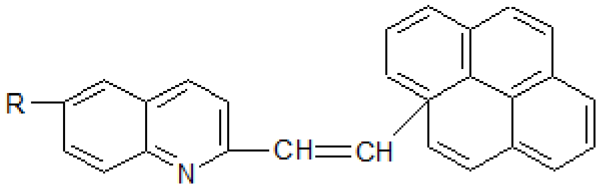

(II)

R = Cl, Br, NO2, NHC_6H_5

The structure of the above compounds were supported by their ir spectra which showed bands at 1610 Cm^{-1} (C = N), 1678 CM^{-1} (Congugated with ring) 1325 Cm^{-1} (-N<),

Experimental - The starting materials 6-chloro quinaldine, 6-bromoquinaldine[7], 6-nitro-quinaldine[8], 6-benzamidoquinaldine[8],were synthesised by the reported procedure.

Equimolecular amounts of quinaldine and aldehyded wre heated in presence of condensing agents such as zinchloride or acetic annydride. The hot solution was poured in to 20% sodium hydroxide solution, The mass was pluverised removed by filtration washed well with water and dissolved in concentrated hydrochloric acid on dilution with water the product separated which was suspended in water and made alkaline with ammonium hydroxide.

Difficulties were encountered in the isolation and purification of styryl-quinolins, several solvents such as ethanol, acetone or acetic acid and mixture of these solvents in appropriate proportions had to be tried for obtaining pure samples.

TABLE 1 : STYRYL QUINOLIEES DERIVED FROM 3-METHANESULPHONYLOXY-4-METHOXY-BENZALDEHYDE (SEE IN NEXT PAGE)

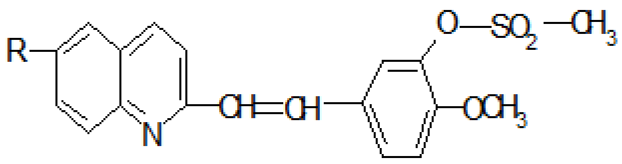

TABLE - 2 : STYRYL QUIOLINES DERIVED FROM PYRENE-3-ALDEHYDE (SEE IN NEXT PAGE)

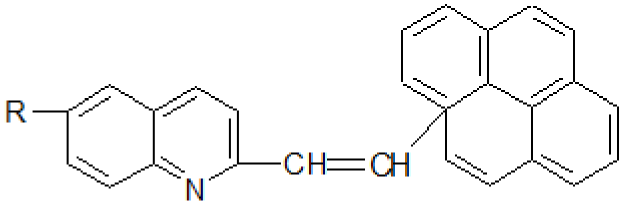

Acknowledgement - I am thankful to Dr. B.K. Latta, Professor, Science College, Gwalior M.P. for Valuable guidance and CDRI Lucknow for providing I.R. spectra.

References :-

1. ELDERFIED etal J. Amer, Chem. Soc. 70, 40, (1948).

* Department of Chemistry, Govt. Girls P.G. Auto College of Excellence, Sagar (M.P.) INDIA

2. KENYCN, WIESMER and KWARTLER Ind. Eng. Chem. 41, 654 (1949).
3. PROC, ROY, Soc. B., 100, 193, (1926).
4. OPANASENKO, E.P., PALU, P.U. KHIM, Farm, E.11, 8(9)18, 21 (1974).
5. PROC ROY, Soc., B., 195, 99 (1929).
6. L.G.S. BROOKER and R.H. SPRAGUE, J. AM. Chem., Soc., 831, 7 (1930).
7. JHOSON AND ADAMS, J. Amer., Chem., Soc, 831, 7 (1930).
8. F.M. HAMER, J. Chem., Soc., 119, 1432 (1921).

TABLE 1 : STYRYL QUINOLIEES DERIVED FROM 3-METHANESULPHONYLOXY-4-METHOXY-BENZALDEHYDE

S.	Quinaldine	Styryl Quino-line R	M.P.°C	Styryl quinoline yield % condensing agent		Colour	Formula
				Acetic anhydride	Zinc Chloride		
1	6-Choloroquinaldine	Cl	127	65 (c)	45.47	Yellow	$C_{19}H_{17}NSClO_4$
2	6-Bromoquinaldine	Br	170	36.3 (c)	42.36	Red	$C_{19}H_{17}NSBrO_4$
3	6-Nitroquinaldine	NO_2	240	62.5 (b)	41.67	Brown	$C_{19}H_{17}N_2O_6$
4	6-Benzamido-quinaldine	$NHCOC_6H_5$	165	26.3 (c)	89.31	Pale Yellow	$C_{26}H_{18}N_3O_5$

Solvent of crystallization: b= Acetone
c = Alcohol

TABLE - 2 : STYRYL QUIOLINES DERIVED FROM PYRENE-3-ALDEHYDE

S.	Quinaldine	Styryl Quino-line R	M.P.°C	Styryl quinoline yield % condensing agent		Colour	Formula
				Acetic anhydride	Zinc Chloride		
1	6-Choloroquinaldine	Cl	198	17.51 (b)	21.2	Yellow	$C_{27}H_{17}ClN$
2	6-Bromoquinaldine	Br	107	63.79 (c)	21.8	Yellow	$C_{27}H_{17}BrN$
3	6-Nitroquinaldine	NO_2	112	27.34 (b)	53.8	Brown	$C_{27}H_{17}O_2N_2$
4	6-Benzamido-quinaldine	$NHCOC_6H_5$	226	29.07 (b)	42.2	Yellow	$C_{34}H_{18}ON$

Solvent of crystallization: b= Acetone
c = Alcohol

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to September 2017, Vol. I

Separation Of Amino Acids And Carbohydrates From The Leaves Of Boswellia Serrata Plant By Thin Layer Chromatography

Arti Chaurasia * Anil Gharia **

Abstract - An Indian traditional medicinal plant Boswellia serrata commonly called salai guggal. All parts of the plant are medicinally important. Analysis of raw materials and final products need reliable methods for the standardization of natural product drugs. Separation of carbohydrates was performed using thin layer chromatographic techniques and compared with the standards. Detection of amino acids from extract was carried out using thin layer chromatographic technique. These were compared with the standards.
Key Words - Boswellia serrata, Amino acids, Carbohydrates, thin layer chromatography, Rf values.

Introduction - Traditional medicines for human diseases have been widely used in many parts of the world. Herbal plants are usually the primary source of medicine in many developing countries. Natural product compounds from plants provide biologically active compounds. Determination of metabolites such as amino acids, carbohydrates are important for the quality control of herbs and herbal products. Chromatographic methods can be used in search for bioactive compounds such as amino acids, carbohydrates. Separation and identification of carbohydrates and amino acids in complex samples like plant extracts have been often carried out using thin layer chromatography. This technique has various merits as: analysis of multiple samples can be performed at one time and also economical in terms of money and time. As stationary phases silica gel has been employed. Mobile phase systems, which have been used, are n-BuOH: Acetone: Acetic acid: H_2O (7:7:2:4) and Hexane: Ethyl acetate: Acetic acid (3:6:1). Ninhydrine and aniline-hydrogen phthalate as spraying reagents are used.

Boswellia serrata (Family: Burseraceae) is a deciduous middle sized tree, which is mostly concentrated in tropical; parts of Asia and Africa. In India it occurs in dry hilly forests of Rajasthan, Madhya Pradesh, Gujarat, Bihar, Assam, Orissa as well as central peninsular regions of Andhra Pradesh, Assam etc. B. serrata gum resin has been reported to have analgesic, anti-inflammatory, antiarthritic and anti-pyretic activity.

Materials and Method - The plant used in the study was collected from Pachmarhi district Hoshangabad Madhya Pradesh. The collected plant materials were cleaned, shade dried, powdered coarsely in a blender and then stored in air-tight containers for further use.

Determination of carbohydrates - The air shade dried powdered material of Boswellia serrata leaves (6g) was mixed with fixed quantity of calcium carbonate in distilled water (45 mL) and heated on water bath for 3 h. The aqueous extract was separated by decantation and the powder was further heated four times with distilled water on water bath. The aqueous filtrate was combined and 15 % w/v solution of lead acetate was added till the precipitate obtained. The solution was filtered, small quantity of ammonia was then added to the filtrate and then H_2S gas was bubbled through the filtrate in order to remove lead acetate as lead sulfide. Lead sulfide was removed by filtration. The neutral solution of filtrate obtained was concentrated over water bath under reduced pressure to a gummy mass of carbohydrates.

Pre-coated silica gel TLC plate was used for TLC chromatography. Hexane: Ethyl acetate: Acetic acid (3:6:1) solvent system was used. The extracts were spotted on the chromatographic plate along with standard samples. The mobile phase was allowed to run to a certain height and the chromatogram was dried at room temperature. The specific spraying reagent, aniline-hydrogen phthalate was used to develop the chromatogram. The Rf values of the test sugars were confirmed by comparing with the Rf values of authentic sugars (Table-1).

TABLE-1

Hexane: Ethyl acetate: Acetic acid (3:6:1)

Carbohydrates	Rf value for Standard Carbohydrates	Rf value for plant sample
Lactose	0.55	0.51
Maltose	0.40	0.39
Insulin	0.18	0.19
Mannitol	0.23	0.21

Determination of amino acids - s Air shade dried material

* Department of Chemistry, MIT College, Indore (M.P.) INDIA
** Department of Chemistry, P M B Gujrati Science College, Indore (M.P.) INDIA

of leaves was used for experiment. Extracts were prepared by using different solvents such as acetone, ethanol and water. Pre-coated silica gel TLC plate was used for TLC chromatography. Acetone: n-BuOH: Acetic acid: H_2O (7:7:2:4) solvent system was used. The extracts were spotted on the chromatographic plate along with standard samples. The mobile phase was allowed to run to a certain height and the chromatogram was dried at room temperature. Ninhydrine, a spraying reagent, (1.80 g of ninhydrine in 20 mL acetone) was sprayed on the chromatographic plate and dried at room temperature. The Rf values of the amino acids of the experimental samples were determined and compared with the standards (Table-2).

TABLE - 2

Acetone: n-BuOH: Acetic acid: H_2O (7:7:2:4)

Name of amino acids	Rf value for standard amino acids	Rf value of plant extract
Arginine	0.145	0.154
Butyric acid	0.572	0.575
Cysteine	0.075	0.080
Glutamic acid	0.242	0.250
Hydroxy proline	0.054	0.055
Histidine	0.550	0.540
Lysine	0.118	0.115
Ornithine	0.033	0.030
Proline	0.560	0.550
Tryptamine	0.630	0.632
Serine	0.185	0.180

Result and discussion - The detection of carbohydrates showed the presence of mannitol, maltose, lactose and insulin. The amino acids are basic units of proteins and therefore their presence was detected. Leaves of Boswellia serrata were found to be a rich source of various amino acids. The amino acid study showed the presence of butyric acid, ornithine, cysteine, histidine, argenine, serine, hydroxy prolin, prolin, glutamic acid, lysine and tryptamine.

Conclusion - It is concluded that this study would lead to the establishment of some valuable compound that has to be used to formulate new, different and more potent drugs of natural origin. Amino Acids are the “building Blocks” of the body. There are about 28 amino acids commonly referred to in human health .They are required by the body as it acts as a precursor. Carbohydrates are essential components of many natural products known for great medicinal importance. The carbohydrate

Moieties increase drug water solubility, decrease toxicity, and contribute to the bioactivity of the natural products.

Acknowledgements - The authors express their sincere gratitude to Dr. M L Gangwal, retired professor, M B Khalsa College and Dr. Anil Gharia, professor, P M B Gujrati Science College, Indore for their constant guidance and encouragement. I am also thankful to the department of chemistry in P M B Gujrati Science College, Indore for helping and providing necessary lab facilities for this research work.

References :-

1. S.G. Joshi, Medicinal Plants, Oxford and IBH Publishing Co. Pvt. Ltd. New Delhi, India, p. 102 (2000).
2. R.N. Yadav and D. Barsainya, Asian J. Chem., 8, 813 (1996).
3. S.K.Prakash, International Journal of poultry science 5(3)259-261,2006 ISSN 1682-8356, Asian Network of Scientific Information , 2006.
4. L.Pral.M.Latha, Singapore Medicinal Journ.2002. Vol.42 (12) 617-621.
5. R.G.Ayo, J.O.Amupitan, and Yimin zhao African. Journal. Biotech. Vol 6, (11) 4 June 2007 p.p .1276-1279.
6. Culea M, Hodisan S, Hosu A and Cimpoiu C (2006). Analysis of free amino acids from plant extracts by chromatographic methods. Studia Universitatis BabesBolyai Chemia, 1: 105-114.
7. Muhammad Nasimullah Qureshi, Guenther Stecher and Guenther Karl Bonn, Quality Control of Herbs: Determination of Amino Acids in Althaea officinalis, Matricaria chamomilla and Taraxacum officinale. Pak. J. Pharm. Sci., Vol.27, No.3, May 2014, pp.459-462.
8. S.A.Gaikwad, Asha Kale, Kavita Mundhe, N.R.Deshpande, J. P.Salvekar, Detection of Amino Acids Present in the Leaves of Cassia auriculata L. Int.J. PharmTech Res.2010, 2(2).
9. Rasika C. Torane, Anjali D. Ruikar, Pranav S. Chandrachood and Nirmala R. Deshpande, Study of Amino Acids and Carbohydrates from The Leaves of Ehretia laevis. Asian Journal of Chemistry, Vol. 21, No. 2 (2009), 1636-1638.
10. Abdurrahman Onaran and Hayriye Didem Saðlam, Antifungal Activity of Some Plant Extracts against Different Plant Pathogenic Fungi. Int’l Journal of Advances in Agricultural & Environmental Engg. (IJAAEE) Vol. 3, Issue 2 (2016).
11. Bhanwar singh hada and S S Katewa, “Ethnomedicinal plants used against various diseases in Jhalawar district of Rajasthan, India,” journal of global biosciences, vol. 4, no. 4, pp. 2077-2086, 2015.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to September 2017, Vol. I

Micro analysis of Ascorbic acid and its pharmaceutical preparation with potassium dipertelluratocuprate (III) Reagent

Alok Mishra *

Abstract - The present paper study has offered immense scope and opportunities for the development of this research. Ascorbic acid [1-2] is used in the prevention and treatment of scurvy. The symptoms of scurvy include weakness and fatigue, with muscle and joint pains, breathlessness and tachycardia. Potassium peroxysulphate (5 gm) potassium hydroxide (10 gm) and tetturic acid (5 gm) were dissolved in 100 ml of distilled water water. This solution was boiled and 0.5 M solution of coppersulphate was added to it gradually till a red colour appears. On further addition of copper sulphate solution a brownish precipitate results. The addition of copper sulphate solution is continued till the precipitation in complete.
Key words - Micro analysis, Ascorbic acid, and pharmaceutical preparation, with potassium dipertelluratocuprate (III) Reagent.

Introduction - Ascorbic acid [1-2] is used in the prevention and treatment of scurvy. The symptoms of scurvy include weakness and fatigue, with muscle and joint pains, breathlessness and tachycardia. The gums bleed, become spongy and imflared, and teeth loosen in their sockets. Haemorrphages occuvs in the skin with a consequent anaemia.

In the present work a new titrimetric method has been described for the microdetermination of ascorbic acid in the pure sample. The oxidation takes place of boiling temperature (25^{0}C) with in 30 minuts and is of general applicability. The accuracy of the method is within most of the cases.

Experiment :

Potassium dipertelluratocuprate (III) Reagent - Potassium peroxysulphate (5 gm) potassium hydroxide (10 gm) and tetturic acid (5 gm) were dissolved in 100 ml of distilled water water. This solution was boiled and 0.5 M solution of coppersulphate was added to it gradually till a red colour appears. On further addition of copper sulphate solution a brownish precipitate results. The addition of copper sulphate solution is continued till the precipitation in complete.

Complete precipitation was tested by the absences of red colour in the supernatant layer of the reaction mixture. The brownish precipitate obtained in this way was filtered through sintered glass crucible(G-4) washed thoroughly with distilled water to remove undecomposed peroxydisulphate and potassium sulphate.

The precipitate was now boiled with 200 ml of a solution containing KOH (6 g) and telluric acid (4g) to get again a red colored solution of copper tellurate complex. The prepared solution of Cu(III) was approximately 0.035m concentration. It was stored in a standard volumetric flask. Since direct titration of Cu(III) with sodium arsenite gives inaccurate results ,an indirect method of standardization of Cu(III) with sodiumarsenite has been attempted. An aliquot of Cu(III) solution is mixed with approximately 1.5 times sodiumarsenite solution (0.02m) . It is allowed to stay for 3-4 minutes and then acidified with a calculated amount of 1NH_2SO_4 till the green suspension is dissolved and a clear solution is obtained which is acidic. It is then treated with 5ml of 0.5m sodium bicarbonate solution the unused arsenite is back titrated with a standard iodine solution using starch an indicator. A stock solution of the ascorbic acid was prepared by dissolved 100mg of sample in 100 ml. Distilled water in 100 ml volumemetre flash. All the sample were either of analar B.D.H. Grade.

General procedure - Aliquots containing 1-5mg of the sample were taken in 150ml Erlenmeyer flask and 5ml of 0.035m Cu(III) solution was added to it. The content were shaken thoroughly. The reaction mixture was heated on a boiling water bath for prescribed reaction time. After the reaction was over , the contents were cooled to room temperature . The unused Cu(III) was determined by arsenite method. A blank was also run simultaneously using all the reagents omitting the sample. The recovery of sample was calculated by the following formula:-

$$\text{Mass of sample (mg)} = \frac{M.N.(S-B)}{N}$$

* Research Scholar (Chemistry) Pt. S.N. Shukla, Govt. P.G. College, Shahdol (M.P.) INDIA

Where M= relative molecular mass of sample
N= Normality of iodine solution
S= Volume of iodine solution for sample experiment
B= Volume of iodine for the blank experiment
And
n= number of moles of Cu(III) per mole of sample

Results and discussion - With the recommended procedure the determination of ascorbic acid (pure sample) and its pharmaceutical preparations has successfully been achieved on 1-5 mg of the sample size with in accuracy of

Taking ascorbic acid as the representative compound, the effect of various variables on the reaction was studied. Cu(III) was found to be necessary for the quantitative oxidation of ascorbic acid. A more concentrated solution does not give any improvement either in this recovery of the sample or the reaction time. The lower concentration gives in accurate results. Therefore, the prescribed amount of Cu(III) reagent was employed for the general procedure.

It was also observed that the quantitative oxidation of ascorbic acid and its pharmaceutical preparation is obtained with in the reaction time of 30 min. Beyond this reaction there was no improvement in the recovery of the sample. The reaction time lesser than this gives in consistent results at lower recovery. The effect of temp. was also studied and it was found that accurate and constant results are obtained at boiling temp. The stoichiometry of the reaction was established for each sample and it was found that 14 equivalents of Cu(III) reagent were needed for the complete reaction.

Table (see in bottom)

In view of above oxidation reaction and considering the amount of Cu(III) consumed per mole of the ascorbic acid sample the following course of reaction maybe proposed for the oxidation of ascorbic acid with the use of Cu(III) reagent.

$$C_6H_8O_6 \xrightarrow[7\,(O)]{Cu\,(III)} 2HCOOH + 4CO_2 + 2H_2O$$

Acknowledgements - Alok Kumar Mishra would like to express thankful to Dr. Dharmendra Dwivedi HOD of Chemistry Govt. P.G. College Shahdol good support, in this research and research scholar is also thankful to my friend Dr. R. S. Napit Deptt. of Botany for their kind cooperation and good support, in this research work.

References:-

1. Bessey, O.A.J. Biol. Chem. 126, 771 (1938)
2. Erdey L. and Z. Anal. Chem. 162, 180 (1958)

Table : Micro analysis of Ascorbic acid and and its pharmaceutical preparation with Cu(III) reagent (0.035M) by the recommended procedure

Sample	Amount Present(mg)	Reaction time (min)	Amount Recovered	Stoichiometry (mg)	Error %
Ascorbic acid (pure)	1.0000	30	1.0051 1.0065 1.0047	14	+0.51 +0.65 +0.47
Sorvicin	1.0000	30	1.0034 1.0020 1.0024	14	+0.34 +0.20 +0.24

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

A Study Of Distribution Of Speed And Angular Width Of Coronal Mass Ejection During 1996 To 2012

Vinod Kumar Ade*

Abstract - The Sun constantly emits matter into the space in the form of more or less steady solar wind. The clouds of gas time to time ejects from the Sun in an event called a Coronal Mass Ejection (CME).We have observed the data more than 19990 Coronal Mass Ejection (CME) which were obtained by Large Angle and Spectrometric Coronagraph (LASCO) on board the Solar and Heliospheric Observatory (SOHO) during the period of 1996 to 2012. Basically, we have determined the angular width and linear speed of CMEs during the period of 1996 to 2012. In this work we have studied that linear speed of CMEs is maximum distribution to near 200 to 400 km/s and angular width of CMEs is majority of distribution in the range of 10 to 50 for the period of 1996 to 2012.
Key Words - Coronal mass ejection, Sun, Speed.

Introduction - Coronal mass ejections are described as the mass ejection of matter from the coronal region of the Sun .The coronal mass ejection is one of the interesting topics in space physics for extensive study. CMEs are magnetized plasma structure that erupt from closed field region on the sun and propagate into the heliosphere [1]. CMEs were first detected in the 1970s by the orbiting solar observatory (OSO-7) on 14 December, 1971 [2]. Detail of the source region is usually detected by using the observations of non-coronagraph. Examples of such observations are X-Ray, EUV Microwave and H-ALPHA [3].

CMEs are eruption of plasma from the sun that range in speed from 10 km/s to more than 33,000 km/s [4]. These solar phenomena are episodic expulsion of mass and magnetic field from the solar corona. The initial detection of CMEs was followed by extensive observation using both space based and ground based instruments. The space based observation included the coronagraph are on board Skylab in 1973 and 1974 [5], solar wind coronagraph on the US. Air force satellite P78-1 from 1979-1985 [6], and recently the large angle spectrometric coronagraph (LASCO) on the solar and heliospheric observatory (SOHO) from 1996 to present [7]. The most extensive set of ground based observation of CMEs have been obtained using the mark-III K corona meter (MK3) which has been replaced by mark -IV (MK4), at the Mauna Loa Solar observatory (MLSO) since 1980 [8]. However, LASCO has significant advance over previous instrument as it has wide field of view, increases sensitivity and increased dynamic range. SOHO satellite can continuously observe the sun (not just optical wavelength). This represent the data from solar cycle and beyond with a single spacecraft.

Recent measurement of speed of the CMEs suggested that there are two different type of speed, slow CME and fast CME which are associated with eruptive prominences and originate from solar active region [9]. Fast CME propagate at constant speed and the slow CME are accelerating [10]. In 1966, the number of CMEs detected by SOHO/LASCO exceeds more than 12000. The median apparent angular width of CME observed in the LASCO field of view is about 50 degree [11], CME with maximum apparent width of 360 degree are commonly called as full halo CMEs, and that with apparent angular width greater than equal 120 degree are taken as Halo CMEs [12].

The physical properties of CMEs were studied and Kimanetic properties of CMEs are summarized by Gopalswamy. CMEs contain coronal material at a temperature of few 10^6 K. The density in the frontal structure of CMEs close to the sun is estimated to be in the range of 10^{8-9} cm^3 and expected to decrease as the CME expand into the interplanetary space. The mass content of CME is range from 10^{12} gram to > 10^{16} gram, wider CMEs being more massive. The average value of CME mass is $4x10^4$ grams. Kinetic energy of CMEs is ~10^{27} erg to > 10^{23} erg making CMEs the most energetic phenomena in the heliosphere. The statistical properties of full halo CME were studied and obtained the average value of speed is 466 km/s [13] and average value speed of Halo CME is 300 km/s to 500 km/s. The Linear speed and angular width are considered to be the basis attributes of CME measurement from a series of image taken during an eruption. In this paper, we have analyzed kinetic properties like linear speed and angular width of CME during the period of 1996 to 2012.

II. Method and Data Analysis - Observation of CMEs is collected from LASCO/SOHO CME catalogue at http: cdaw.gsfe.nasa.gov/cme_list. LASCO/SOHO CME cata

*Department of Physics, Govt. J.S.T. P.G. College, Balaghat (M.P.) INDIA

logue contains list of all CMEs. The SOHO mission's LASCO instrument routinely records CMEs. The SOHO/ LASCO continuously records CME using its two telescopes C2 and C3. The C1 telescope which can observe closer to sun was disabled in June 1998.

The CME are classified on the basis of angular width. Halo CMEs are having angular width greater than or equal to 120 degree and full halo CMEs having angular width =360 degree. We observed CME data from 1996 to 2012 by SOHO/LASCO and distribute the angular width and speed, respectively in difference of 10 degree and 100 km/s to each other.

Mass motion is a basic characteristic of CME quantified by the speed. On tracking a CME feature in successive frames, one can derive the speed of the CME. It is to be mentioned that the measurements are made in the sky plane, so all the derived parameters such as speed, width etc are lower limit to actual values. We observed the CME speed by LASCO/SOHO during 1996-2012 and speed distribution (the no. of event as a function of speed) are exhibited in study.

III. Result and Discussion - CMEs are known as its heavy mass and energy, its containing coronal material at temperature of few 10^6 K. Direct measurement of the magnetic field strength in CMEs has not been possible yet. However, magnetic field in prominences (before eruption) has been measured, which range from a few gauss to 100 G. Kinetic properties of CMEs is associated with phenomena occurring in the chromospheres, corona and interplanetary space. The angular width and speed of CME are measured from a series of images taken during an eruption.

Speed Distribution - Mass motion is one of the basic property of CME quantified by speed. Coronagraphs obtained images with a certain type cadence. So when a CME occurs, the leading edge progressively appears at a greater heliocentric distance. The speed is normally determined from a linear fit to the height-time plots, but CMEs often have finite acceleration, so that the linear fit speed should be understood as the average value within corona graphic field of view. Height time measurements are made in the sky plane, so all of the derived parameters such as speed etc are lower limit to the actual values [14]. Table 1 and Fig. 1 show that distribution of CME speed. Our results are in good agreement with the previous results. In Fig. 1 distribution of the CME by their speed (km/s) is presented.

CME Angular Width - CME angular span in effective word named as CME width is measured as the position angle extent in the sky plane. For CME originating from close to limb, the measured width is likely to be the true width. For CMEs away from the limb, the measured width is likely to be an over estimate. Many CMEs show an increase in angular width as they move out, so measurement is made when the angular width appears to approach a constant value. Distributions of angular width of CME observed during the period of 1996-2012 are illustrated in Table 1 and Fig. 2.During this period, numbers of CMEs greater than 19700 are observed. In Fig. 2, distribution of CMEs by their angular width in degree is presented.

IV. Conclusion - From the above discussion of result, It may be concluded that

1. During the period of 1996-2012, a large no. of CMEs has speed 600 km/s but greater than 100 km/s.
2. Maximum of the CME distribution is located near 200 to 400 km/s and speed of more than 4000 CMEs is 200-300 km/s out of more than 19000 CMEs.
3. The majority distribution of angular width in the range 10 to 50 degree.
4. In this period, highest number of CME has angular width 10 to 20 degree.

Acknowledgement - Authors are thankful to SOHO/ LASCO CME CATALOG for study and therefore the author knowledge SOHO/LASCO CME CATALOG is generated and maintained at the CDAW data center by NASA. We are thankful to N. Gopalswamy for providing literature used in this study and many helpful clarifications.

References :-

1. Gopalswamy, N., 2006, Coronal mass ejections of solar cycle 23 J. Astrophysics, 27,243
2. Tousy R, 1973, Solar Dynamics and its effects on the heliosphere and earth. J. Space Res, 13,713
3. Hundson and Cliver, 2001. JGR, 106, 25199
4. Gopalswamy et al., 2004. The sun and the heliosphere as an integrated system. ASSL series, 201
5. Mac Queen et al., 1976, Initial results from the high altitude observatory white light coronagraph on sky lab, 281, no. 1304,405
6. Koomen et al., 1975, White light coronagraph in OSO-7, Appl. opt., 14(3), 743
7. Brueckner at el., 1995, The large angle spectroscopic coronagraph (LASCO), Sol. Phy., 162,357
8. Mac Queen & Fisher, 1983, The high altitude observation coronagraph/polarimeter on the solar maximum mission, sol. phys., 65, 91
9. Gosling et al. 1976, The speeds of coronal mass ejection events, sol. phys., 48,389
10. Mac Qeen & Fisher 1983, The kinematic of solar inner coronal transients, sol. phys., 89, 89
11. St. Cry, O., at el., 2000, Properties of coronal mass ejections. J. Geophysical Res., 18169, 105
12. Howard at el., 1982, The observation of a coronal transients directed at earth, APJ, 263, L 101
13. Gopalswamy at el., 2010, Coronal mass ejections from sunspot and non sunspot regions astrophysics and space science proceeding, 289
14. Gopalswamy at el., 2006, Evolution of a group of coronal holes associated with eruption of near by prominences and CMEs J. space sci. Rev., 123.303

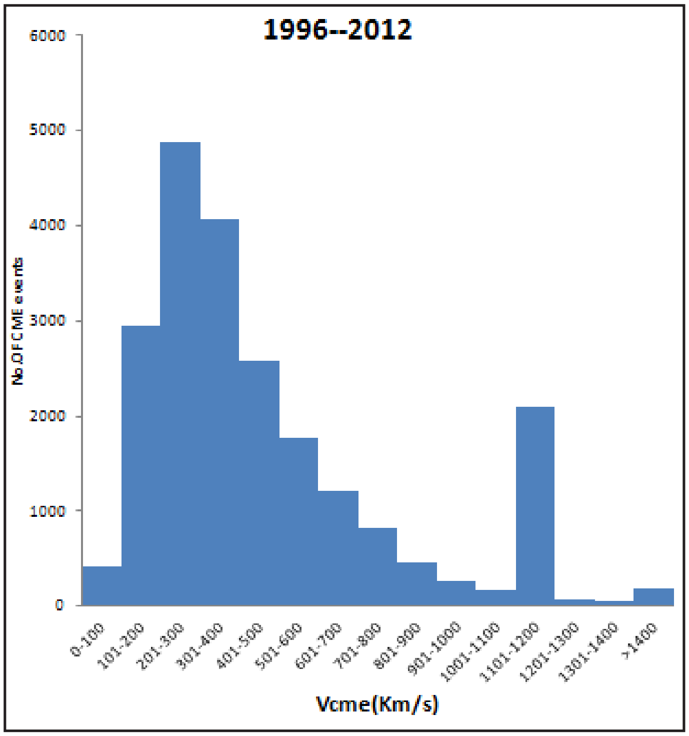

Fig. - 1 - Distribution of CME speed for the period of 1996-2012.

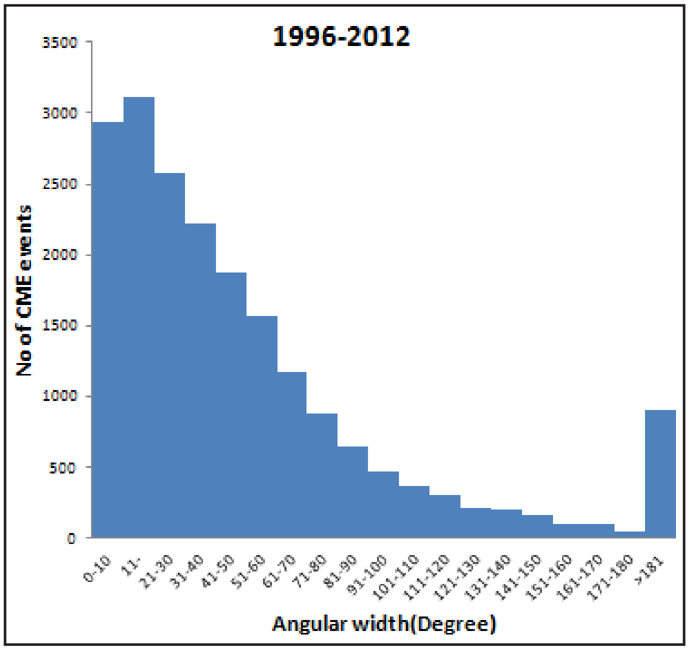

Fig. - 2 - Distribution of CME angular width for the period of 1996-2012.

Table 1. - CME Distribution for Angular width in range type (difference of 10 degree) and linear speed in range type (difference of 100 km/s) from 1996 to 2012

Angular Width (Degree)		Linear Speed (km/s)	
Range	Number of CME events	Range	Number of CME events
0-10	2931	0-100	416
11-20	3114	101-200	2940
21-30	2579	201-300	4879
31-40	2124	301-400	4058
41-50	1875	401-500	2587
51-60	1568	501-600	1769
61-70	1171	601-700	1214
71-80	880	701-800	828
81-90	649	801-900	451
91-100	475	901-1000	262
101-110	366	1001-1100	175
111-120	309	1101-1200	105
121-130	221	1201-1300	74
131-140	207	1301-1400	56
141-150	162	1401-1500	35
151-160	99	1501-1600	29
161-170	103	1601-1700	24
171-180	49	1701-1800	17
181>	906	1801>	78

****

Superconductivity

Dr. Neeraj Dubey *

Introduction - Superconductivity is a phenomenon of exactly zero electrical resistance and expulsion of magnetic flux fields occurring in certain materials, called superconductors, when cooled below a characteristic critical temperature. It was discovered by Dutch physicist Heike Kamerlingh Onnes on April 8, 1911, in Leiden. Like ferromagnetism and atomic spectral lines, superconductivity is a quantum mechanical phenomenon. It is characterized by the Meissner effect, the complete ejection of magnetic field lines from the interior of the superconductor as it transitions into the superconducting state. The occurrence of the Meissner effect indicates that superconductivity cannot be understood simply as the idealization of perfect conductivity in classical physics.

The electrical resistance of a metallic conductor decreases gradually as temperature is lowered. In ordinary conductors, such as copper or silver, this decrease is limited by impurities and other defects. Even near absolute zero, a real sample of a normal conductor shows some resistance. In a superconductor, the resistance drops abruptly to zero when the material is cooled below its critical temperature. An electric current flowing through a loop of superconducting wire can persist indefinitely with no power source.

Elementary properties of superconductors -

- **Zero electrical DC resistance -** The simplest method to measure the electrical resistance of a sample of some material is to place it in an electrical circuit in series with a current source I and measure the resulting voltage V across the sample. The resistance of the sample is given by Ohm's law as R = V / I. If the voltage is zero, this means that the resistance is zero.

Superconductors are also able to maintain a current with no applied voltage whatsoever, a property exploited in superconducting electromagnets such as those found in MRI machines. Experiments have demonstrated that currents in superconducting coils can persist for years without any measurable degradation. Experimental evidence points to a current lifetime of at least 100,000 years. Theoretical estimates for the lifetime of a persistent current can exceed the estimated lifetime of the universe, depending on the wire geometry and the temperature.

In a normal conductor, an electric current may be visualized as a fluid of electrons moving across a heavy ionic lattice. The electrons are constantly colliding with the ions in the lattice, and during each collision some of the energy carried by the current is absorbed by the lattice and converted into heat, which is essentially the vibrational kinetic energy of the lattice ions. As a result, the energy carried by the current is constantly being dissipated. This is the phenomenon of electrical resistance and Joule heating.

The situation is different in a superconductor. In a conventional superconductor, the electronic fluid cannot be resolved into individual electrons. Instead, it consists of bound pairs of electrons known as Cooper pairs. This pairing is caused by an attractive force between electrons from the exchange of phonons. Due to quantum mechanics, the energy spectrum of this Cooper pair fluid possesses an energy gap, meaning there is a minimum amount of energy ΔE that must be supplied in order to excite the fluid. Therefore, if ΔE is larger than the thermal energy of the lattice, given by kT, where k is Boltzmann's constant and T is the temperature, the fluid will not be scattered by the lattice. The Cooper pair fluid is thus a superfluid, meaning it can flow without energy dissipation.

In a class of superconductors known as type II superconductors, including all known high-temperature superconductors, an extremely small amount of resistivity appears at temperatures not too far below the nominal superconducting transition when an electric current is applied in conjunction with a strong magnetic field, which may be caused by the electric current. This is due to the motion of magnetic vortices in the electronic superfluid, which dissipates some of the energy carried by the current. If the current is sufficiently small, the vortices are stationary, and the resistivity vanishes. The resistance due to this effect is tiny compared with that of non-superconducting materials, but must be taken into account in sensitive experiments. However, as the temperature decreases far enough below the nominal superconducting transition, these vortices can become frozen into a disordered but stationary phase known as a "vortex glass". Below this vortex glass transition temperature, the resistance of the material becomes truly zero.

- **Superconducting phase transition -** In

*Professor & H.O.D. (Physics) Govt. Arts & Commerce College, Sagar (M.P.) INDIA

superconducting materials, the characteristics of superconductivity appear when the temperature T is lowered below a **critical temperature** T_c. The value of this critical temperature varies from material to material. Conventional superconductors usually have critical temperatures ranging from around 20 K to less than 1 K. Solid mercury, for example, has a critical temperature of 4.2 K. As of 2009, the highest critical temperature found for a conventional superconductor is 39 K for magnesium diboride (MgB_2), although this material displays enough exotic properties that there is some doubt about classifying it as a "conventional" superconductor. Cuprate superconductors can have much higher critical temperatures: $YBa_2Cu_3O_7$, one of the first cuprate superconductors to be discovered, has a critical temperature of 92 K, and mercury-based cuprates have been found with critical temperatures in excess of 130 K. The explanation for these high critical temperatures remains unknown. Electron pairing due to phonon exchanges explains superconductivity in conventional superconductors, but it does not explain superconductivity in the newer superconductors that have a very high critical temperature.

The onset of superconductivity is accompanied by abrupt changes in various physical properties, which is the hallmark of a phase transition. For example, the electronic heat capacity is proportional to the temperature in the normal regime. At the superconducting transition, it suffers a discontinuous jump and thereafter ceases to be linear. At low temperatures, it varies instead as $e^{-á/T}$ for some constant, α. This exponential behavior is one of the pieces of evidence for the existence of the energy gap.

The order of the superconducting phase transition was long a matter of debate. Experiments indicate that the transition is second-order, meaning there is no latent heat. However, in the presence of an external magnetic field there is latent heat, because the superconducting phase has lower entropy below the critical temperature than the normal phase. It has been experimentally demonstrated that, as a consequence, when the magnetic field is increased beyond the critical field, the resulting phase transition leads to a decrease in the temperature of the superconducting material.

Calculations in the 1970s suggested that it may actually be weakly first-order due to the effect of long-range fluctuations in the electromagnetic field. In the 1980s it was shown theoretically with the help of a disorder field theory, in which the vortex lines of the superconductor play a major role, that the transition is of second order within the type II regime and of first order within the type I regime, and that the two regions are separated by a tricritical point. The results were strongly supported by Monte Carlo computer simulations.

- **Meissner effect -** When a superconductor is placed in a weak external magnetic field **H**, and cooled below its transition temperature, the magnetic field is ejected. The Meissner effect does not cause the field to be completely ejected but instead the field penetrates the superconductor but only to a very small distance, characterized by a parameter λ, called the London penetration depth, decaying exponentially to zero within the bulk of the material. The Meissner effect is a defining characteristic of superconductivity. For most superconductors, the London penetration depth is on the order of 100 nm.

The Meissner effect is sometimes confused with the kind of diamagnetism one would expect in a perfect electrical conductor: according to Lenz's law, when a changing magnetic field is applied to a conductor, it will induce an electric current in the conductor that creates an opposing magnetic field. In a perfect conductor, an arbitrarily large current can be induced, and the resulting magnetic field exactly cancels the applied field.

The Meissner effect is distinct from this—it is the spontaneous expulsion which occurs during transition to superconductivity. Suppose we have a material in its normal state, containing a constant internal magnetic field. When the material is cooled below the critical temperature, we would observe the abrupt expulsion of the internal magnetic field, which we would not expect based on Lenz's law.

A superconductor with little or no magnetic field within it is said to be in the Meissner state. The Meissner state breaks down when the applied magnetic field is too large. Superconductors can be divided into two classes according to how this breakdown occurs. In Type I superconductors, superconductivity is abruptly destroyed when the strength of the applied field rises above a critical value H_c. Depending on the geometry of the sample, one may obtain an intermediate state consisting of a baroque pattern of regions of normal material carrying a magnetic field mixed with regions of superconducting material containing no field. In Type II superconductors, raising the applied field past a critical value H_{c1} leads to a mixed state in which an increasing amount of magnetic flux penetrates the material, but there remains no resistance to the flow of electric current as long as the current is not too large. At second critical field strength H_{c2}, superconductivity is destroyed. The mixed state is actually caused by vortices in the electronic superfluid, sometimes called fluxons because the flux carried by these vortices is quantized. Most pure elemental superconductors, except niobium and carbon nanotubes, are Type I, while almost all impure and compound superconductors are Type II.

Applications - Superconducting magnets are some of the most powerful electromagnets known. They are used in MRI/NMR machines, mass spectrometers, the beam-steering magnets used in particle accelerators and plasma confining magnets in some tokamaks. They can also be used for magnetic separation, where weakly magnetic particles are extracted from a background of less or non-magnetic particles, as in the pigment industries.

Superconductors are used to build Josephson junctions which are the building blocks of SQUIDs, the most sensitive magnetometers known. SQUIDs are used in scanning SQUID microscopes and magnetoencephalography. Series of Josephson devices are used to realize the SI volt. Depending on the particular mode of operation, a superconductor-insulator-superconductor Josephson junction can be used as a photon detector or as a mixer. The large resistance change at the transition from the normal- to the superconducting state is used to build thermometers in cryogenic micro-calorimeter photon detectors. The same effect is used in ultrasensitive bolometers made from superconducting materials.

References:-

1. John C. Gallop (1990). SQUIDS, the Josephson Effects and Superconducting Electronics. CRC Press. pp. 3, 20. ISBN 0-7503-0051-5.
2. Anatoly Larkin; Andrei Varlamov (2005). Theory of Fluctuations in Superconductors. Oxford University Press. ISBN 0-19-852815-9.
3. A. G. Lebed (2008). The Physics of Organic Superconductors and Conductors. **110** (1st ed.). Springer. ISBN 978-3-540-76667-4.
4. Jean Matricon; Georges Waysand; Charles Glashausser (2003). The Cold Wars: A History of Superconductivity. Rutgers University Press. ISBN 0-8135-3295-7.
5. Michael Tinkham (2004). Introduction to Superconductivity (2nd ed.). Dover Books. ISBN 0-486-43503-2.
6. Terry Orlando; Kevin Delin (1991). Foundations of Applied Superconductivity. Prentice Hall. ISBN 978-0-201-18323-8.

****

Mathematics of Cryptography- an Overview

Sudhish Kumar *

Introduction - **Cryptography** or **cryptology** (from Greek κρυπτός *kryptós*, "hidden, secret"; and γράφειν *graphein*, "writing", or -λογία *-logia*, "study", respectively) is the practice and study of techniques for secure communication in the presence of third parties called adversaries. More generally, cryptography is about constructing and analyzing protocols that prevent third parties or the public from reading private messages; various aspects in information security such as data confidentiality, data integrity, authentication, and non-repudiation are central to modern cryptography. Modern cryptography exists at the intersection of the disciplines of mathematics, computer science, and electrical engineering. Applications of cryptography include military communications, electronic commerce, ATM cards, and computer passwords.

History of Cryptography - Cryptography prior to the modern age was effectively synonymous with *encryption*, the conversion of information from a readable state to apparent nonsense. The originator of an encrypted message (Alice) shared the decoding technique needed to recover the original information only with intended recipients (Bob), thereby precluding unwanted persons (Eve) from doing the same. The cryptography literature often uses Alice ("A") for the sender, Bob ("B") for the intended recipient, and Eve ("eavesdropper") for the adversary. Since the development of rotor cipher machines in World War I and the advent of computers in World War II, the methods used to carry out cryptology have become increasingly complex and its application more widespread.

Mathematics and modern Cryptography - Modern cryptography is heavily based on mathematical theory and computer science practice; cryptographic algorithms are designed around computational hardness assumptions, making such algorithms hard to break in practice by any adversary. It is theoretically possible to break such a system, but it is infeasible to do so by any known practical means. These schemes are therefore termed computationally secure; theoretical advances, e.g., improvements in integer factorization algorithms, and faster computing technology require these solutions to be continually adapted. There exist information-theoretically secure schemes that probably cannot be broken even with unlimited computing power—an example is the one-time pad—but these schemes are more difficult to implement than the best theoretically breakable but computationally secure mechanisms.

Legal issues in Cryptographic technology - The growth of cryptographic technology has raised a number of legal issues in the information age. Cryptography's potential for use as a tool for espionage and sedition has led many governments to classify it as a weapon and to limit or even prohibit its use and export. In some jurisdictions where the use of cryptography is legal, laws permit investigators to compel the disclosure of encryption keys for documents relevant to an investigation. Cryptography also plays a major role in digital rights management and copyright infringement of digital media.

Terminology of Cryptology - Until modern times, cryptography referred almost exclusively to *encryption*, which is the process of converting ordinary information (called plaintext) into unintelligible text (called cipher text). Decryption is the reverse, in other words, moving from the unintelligible cipher text back to plaintext. A *cipher* (or *cypher*) is a pair of algorithms that create the encryption and the reversing decryption. The detailed operation of a cipher is controlled both by the algorithm and in each instance by a "key". The key is a secret (ideally known only to the communicants), usually a short string of characters, which is needed to decrypt the cipher text. Formally, a "cryptosystem" is the ordered list of elements of finite possible plaintexts, finite possible cipher texts, finite possible keys, and the encryption and decryption algorithms which correspond to each key. Keys are important both formally and in actual practice, as ciphers without variable keys can be trivially broken with only the knowledge of the cipher used and are therefore useless (or even counter-productive) for most purposes. Historically, ciphers were often used directly for encryption or decryption without additional procedures such as authentication or integrity checks. There are two kinds of cryptosystems : symmetric and asymmetric. In symmetric systems the same key (the secret key) is used to encrypt and decrypt a message. Data manipulation in symmetric systems is faster than asymmetric systems as they generally use shorter key lengths. Asymmetric systems use a public key to encrypt a message and a private key to decrypt it. Use of asymmetric

* **Assistant Professor (Maths.) Govt. College, Khurai, Distt. Sagar (M.P.) INDIA**

systems enhances the security of communication. Examples of asymmetric systems include RSA (Rivest-Shamir-Adleman), and ECC (Elliptic Curve Cryptography). Symmetric models include the commonly used AES (Advanced Encryption Standard) which replaced the older DES (Data Encryption Standard).

In colloquial use, the term "code" is often used to mean any method of encryption or concealment of meaning. However, in Cryptography, *code* has a more specific meaning. It means the replacement of a unit of plaintext (i.e., a meaningful word or phrase) with a code word (for example, "wallaby" replaces "attack at dawn").

Cryptanalysis is the term used for the study of methods for obtaining the meaning of encrypted information without access to the key normally required to do so; i.e., it is the study of how to crack encryption algorithms or their implementations.

Some use the terms *cryptography* and *cryptology* interchangeably in English, while others (including US military practice generally) use *cryptography* to refer specifically to the use and practice of cryptographic techniques and *cryptology* to refer to the combined study of cryptography and cryptanalysis. English is more flexible than several other languages in which *cryptology* (done by cryptologists) is always used in the second sense above. RFC 2828 advises that steganography is sometimes included in cryptology.

The study of characteristics of languages that have some application in cryptography or cryptology (e.g. frequency data, letter combinations, universal patterns, etc.) is called crypto linguistics.

Basic terminology/notation -

• P is the plaintext. This is the original readable message (written in some standard language, like English, French, Cantonese, Hindi, Icelandic, . . .).

• C is the cipher text. This is the output of some encryption scheme, and is not readable by humans.

• E is the encryption function. We write, for example,

E(P) = C

to mean that applying the encryption process E to the plaintext P produces the cipher text C.

• D is the decryption function, i.e.

D(C) = P.

Note D(E(P)) = P and E(D(C)) = C.

The encryption key is piece of data that allows the computation of E. Similarly we have the decryption key. These may or may not be the same. They also may not be secret, as we'll see later on.

• To attack a cipher is to attempt unauthorized reading of plaintext, or to attempt unauthorized transmission of cipher text.

Number theory and Cryptography - Modular Arithmetic:-

Two numbers are **equivalent** mod *n* if their difference is multiple of *n*

Example: 7 and 10 are equivalent mod 3 but not mod 4

7 mod 3 $\equiv$ 10 mod 3 = 1; 7 mod 4 = 3, 10 mod 4 = 2.

Modulo arithmetic – Fermat's Little Theorem:-

If *p* is prime and 0 < *a* < *p*, then Fermat's theorem states-

$a^{p-1} \equiv 1 \pmod p$

Ex: $3^{(5-1)}$ = 81 1 (mod 5)

$36^{(29-1)}$= 37711171281396032013366321198900157303 750656

$\equiv$ 1 (mod 29)

Every number *a* has either 2 square roots (λa, $-\lambda a$)or 0 square roots

Solve $x^2 \equiv a \pmod p$ where *p* is a prime number.

1. *p* mod 4 can be either 1 or 3 – suppose it is 3
2. Then *p* = 4*t* + 3 where *t* is some positive integer
3. but $a^{(p-1)/2} \equiv 1 \bmod p$; $a^{(4t+3-1)/2} = 1 \bmod p$; $a^{2t+1} \equiv 1 \bmod p$

$a^{2t+2} \equiv a \bmod p$; $a^{2(t+1)} \equiv a \bmod p$; $(a^{t+1})^2 \equiv a \bmod p$

4. So, if *p* = 4*t* + 3, then find the *t*, the square root of *a* is a^{t+1}

Example:-

p=19 = 4*4+3, so t=4. Suppose *a* is 7

?7 mod 19 = 75 mod 19 = 11 mod 19

We can check:-

121 mod 19 = 7 mod 19

Symmetric Encryption - An encryption procedure is symmetric, if the encrypting and decrypting keys are the λsame or it's easy to derive one from the other. In nonsymmetrical encryption the decrypting key can't be derived from the encrypting key with any small amount of work. In that case the encrypting key can be public while the decrypting key stays classified. This kind of encryption procedure is known as public-key cryptography, correspondingly symmetric encrypting is called secret key cryptography. The problem with symmetric encrypting is the secret key distribution to all parties, as keys must also be updated every now and then.

Symmetric encryption can be characterized as a so called cryptosystem which is an ordered quintet (P,C,K,E,D), where

• P is the finite message space (plaintexts).

• C is the finite crypto text space (crypto texts).

• K is the finite key space.

function space which includes every possible encrypting function and D is called the decrypting function space which includes every possible decrypting function.

• $d_k(e_k(w))$ = w holds for every message (block) w and key k. It would seem that an encrypting function must be injective, so that it won't encrypt two different plaintexts to the same crypto-text. Encryption can still be random, and an encrypting function can encrypt the same plaintext to several different crypto-texts, so an encrypting function is not actually a mathematical function. On the other hand, encrypting functions don't always have to be injective functions, if there's a limited amount of plaintexts which correspond to the same crypto -text and it's easy to find the right one of them. Almost all widely used encryption

procedures are based on results in number theory or algebra (group theory, finite fields, and commutative algebra).

Towards mobile cryptography - Mobile code technology has become a driving force for recent advances in distributed systems. The concept of the mobility of executable code raises major security problems. We can deal with the protection of mobile code from possibly malicious hosts. We can conceptualize the specific cryptographic problems posed by mobile code, and we are able to provide a solution for some of these problems. There are techniques to achieve "non-interactive evaluation with encrypted functions" in certain cases and give a complete solution for this problem in important instances. We can further present a way in which an agent might securely perform a cryptographic primitive-digital signing-in an untrusted execution environment. Our results are based on the use of homomorphic encryption schemes and function composition techniques.

RSA Algorithm - A public-key encryption technology was developed by RSA Data Security, Inc. The acronym stands for Rivest, Shamir, and Adelman, the inventors of the technique. The RSA algorithm is based on the fact that there is no efficient way to factor very large numbers. Deducing an RSA key, therefore, requires an extraordinary amount of computer processing power and time. The RSA algorithm has become the de facto standard for industrial-strength encryption, especially for data sent over the Internet. It is built into many software products, including Netscape Navigator and Microsoft Internet Explorer. The technology is so powerful that the U.S. government has restricted exporting it to foreign countries.

Conclusion - Thus we observe that cryptography has only recent origin that is only in the second half of last century. Mathematics has great application in Cryptography and applications of cryptography are also increasing its' reach in various fields with recent being the mobile cryptography. Thus we find great opportunities of research for Computer engineers and other scientists in the field of Cryptography.

References:-

1. Open ended material in the shape of primary data and other scholarly Articles found freely on internet.

****

उत्तराखण्ड में पाई जाने वाली औषधीय प्रजातियां

डॉ. अर्चना कुकरेती सकलानी *

प्रस्तावना – वनस्पति प्राकृतिक वातावरण का सजीव तत्व है। प्रचीन काल से ही मानव और वानस्पतिक सम्पदा का घनिष्ट सम्बन्ध रहा है। पर्यावरण का संतुलन वन सम्पदा द्धारा ही सम्भव है। वन सम्पदा से ही वायु प्रदूषण पर नियंत्रण वर्षा की मात्रा का स्थायित्व एवं भूक्षरण का नियंत्रण होता है ईंधन चारा तथा चारा के काष्ठ के अतिरिक्त बहुमूल्य जीवन दायिनी औषधियां वनों से ही प्राप्त होती है। राज्य में वन सम्पदा का अतुल भंडार है। और भारतीय शास्त्रों के अनुसार वृक्ष काटना पाप एवं रोपण पुण्य कार्य माना जाता है अग्निपुराण में 'दशपुत्रों समोद्रुम ' कहा गया है अर्थात दश पुत्रों को एक वृक्ष समान माना जाता है 'क्योंकि इनकी महत्ता ही इतनी व्याप्त है उत्तराखण्ड औषधीय प्रजातियों की दृष्टि से बहुत घना राज्य माना जाता है और राज्य में औषधीय प्रजातियों की भरमार है, जो कि स्वास्थ्य के लिए बहुत हितकारी होता है।

उत्तराखण्ड में निम्न औषधीय प्रजातियां बहुतायत में पाई जाती हैं–

1. **बिच्छू घास (कंडाली) –** इसका वानस्पतिक नाम अर्टिका डायोइका कुल– अरटिकेसी है, यह पौधा य़द्यपि यूरोप का जन्मजात पौधा है। फिर भी यह भारत के कुछ प्रदेशों में प्राकृतिक रूप से पाया जाता है यह पौधा लगभग सम्पूर्ण हिमालय में खरपतवार के रूप में पैदा होता है व बहुतायत में पाया जाता है और सदियों से इस पौधे को महत्वपूर्ण औषधी के रूप में माना जाता है इसकी कोमल पत्तियों की राज्य में सब्जी बनायी जाती है व साग, पराठे आदि बनाए जाते हैं। इसकी पत्तियों में विटामिन व खनिज लवण प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं इस कारण यह एनीमिया के रोगों के लिए अत्यन्त लाभकारी होता है।
2. **किलमोड़ा –** इसका वानस्पति नाम बरबेरिस आरिस्टाटा कुल बरबेरिडेसी है, यह उत्तराखण्ड में व्याप्त एक झाड़ी है और यह झाड़ी हिमालय के सम्पूर्ण शतीषोष्ण भागों में जंगल व खेतों के किनारे प्राकृतिक रुप से पाई जाती है।

   किलमोड़ा की झाड़ी का अर्क, फूल, जड़, छाल, व तना उपयोग में लाया जाता है। इसकी जड़ों व लकडियों में बरबेरिन हाइड्रोलोराइड पाया जाता है जिसका प्रयोग आखों के रोग के उपचार में किया जाता है हालांकि यह अभी अनुसंधान का विषय है इसकी छाल का पानी मधुमेह के रोगी को भी दिया जाता है । इस पौधे को वन्य जीव अधिनियम की प्रथम श्रेणी में रखा जाता है।
3. **घिंघारु –** इसका वानस्पति नाम क्रेटिगस ऑक्सीकेया कुल रोजेसी है यह हिमालय में 12000 फीट तक की ऊंचाई में पाया जाता है इसके फलो को खाया जाता है। आधुनिक औषधियों में इसके सभी भागों का प्रयोग हृदय रोगों काठीक करने के लिए किया जाता है, ग्रामीणों की अनभिज्ञता के कारण उत्तराखण्ड के ग्रामीण क्षेत्रों में इसका उपयोग नहीं के बराबर है। यहां यह एक झाड़ी के रुप में आसानी से खेतों व सड़कों के किनारे दृष्टिगत हो जाता है व पशुओं मवेशी व बन्दरों का भोजन ही बनता है।
4. **बाहमी –** इसका वानस्पतिक नाम सेन्टेला एसियाटिका कुल ऐपेऐसी है बाहमी बूटी सम्पूर्ण भारतवर्ष में पाई जाती है परन्तु हरिद्धार से लेकर लगभग 200 फुट की ऊंचाई पर इसे अधिकांशत: देखा जाता है। यह भू प्रसारीय अत्यन्त कोमल लता होती है, यह गीली व तर भूमि में फैलती है इसके पर्व संधियों से मूल निकलर पृथ्वी में घुस जाते है और एक स्वतन्त्र पौधा बन जाते है, बाहमी के पौधे का स्वाद बहुत कडुवा होता है, इसमें हाइड्रोकोटिलीन नामक क्षारभ, ताजी पत्तियों में एशियाटिकोसाइड नाम ग्लाइकोसाइड होता है, यह एक बहुवर्षीय शाक है, जिसकी पत्तियां हर वर्ष एकत्र की जाती है यह बुद्धिवर्धक एवं बलवर्धक होती है। अत: इसका एकत्रीकरण जंगलों से किया जा सकता है।

   बद्रीनाथ में इसे 700–रूपये प्रति किलो की दर से बेचा जाता है यहां इसका जूस भी भी बहुतायत में बनाया जाता है, जो मुख्यत: हरिद्धार से आती है।
5. **भीमल –** इसका वानस्पतिक नाम ग्रीविया अपोजिटी फोलिया कुल टिलिएसी होता है। उत्तराखण्ड में इसकी अनेक प्रजातियां पाई जाती है, इसका रेशा, तना, पत्ते, फल, लकड़ी आदि सभी उपयोगी होती है यह उत्तराखण्ड के ग्रामीण क्षेत्रों में खेतों के आस–पास बहुत अधिक मात्रा में पाया जाता है। इसकी कोमल शाखाओं को कूटकर शैम्पू के रुप में किया जाता है। उत्तराखण्ड में बालों को धोने के लिए ग्रामीण महिलाएं इसका प्रयोग किया जाता है व इसके पत्तों का प्रयोग जानवरों व मवेशियों को खिलाने में किया जाता है। इसका प्रयोग उत्तराखण्ड के ग्रामीण क्षेत्रों में बहुरुपों से किया जाता है।
6. **निर्गुण्डी–** इसका वानस्पतिक नाम बाइटैवन्स निगुणेडी कुल–बरबीनेसी है। यह पौधा उत्तराखण्ड में 4000 फीट तक की ऊंचाई पर पाया जाता है।

   इसकी पत्तियां, पुष्प व छल औषधि के रुप मे ंप्रयोग की जाती है इसकी पत्तियों जोड़ों की सूजन (गठिया) कटे, जोंक के काटने में उपयोगी होती है इसकी पत्तियों का तकिया बनाकर सिर के नीचे रखने से सर दर्द ठीक होता है और इसके पौधे के पुष्पों का उपयोग पेचिस, हैजा, बुखार, यकृत व हृदय की बीमारियों को ठीक करने में किया

* सहायक प्राध्यापक (संविदा) राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटद्वार (उत्तराखण्ड) भारत

जाता है।

7. **पुनर्नवा** – इसका वानस्पतिक नाम बोरहाविया डिफ्यूजा कुल–(नेक्टाजिनेसी है) यह सम्पूर्ण भारत में 13000फीट की ऊंचाई पर पाया जाता है। यह खर–पतवार के समान बरसात में अधिक पाया जाता है। इसके जमीन से ऊपर के हिस्से में पोटेशियम नाइट्रेट अधिक मात्रा में पाया जाता है। जिस कारण यह मूत्रतल व वमनकारी औषधी के रुप में प्रयोग की जाती है। इसमें पुनर्नवीन नामक एक किंचित चरपरा क्षाराभ, पोटेशियम नाइट्रेट भस्म में 'लोराइड–नाइट्रेट व 'लोरेट पाये जाते है पोटेशियम नाइट्रेट की उपस्थिति के कारण यह हदय की मासपेशियों के संकुचन क्षमता को बढ़ाया जाता है। दूसरी मूत्रल औषधियां जहां शरीर में पोटेशियम नाइट्रेट की मात्रा का ह्रास करती है वही पुनर्नवा मूत्रल होने के साथ–साथ पोटेशियम प्रदायक है।

8. **रीठा** – रीठा का वानस्पतिक नाम स्पाइनडस मुकरोस्सी गाइरटन है। रीठे का पेड़ उत्तराखण्ड के जंगलों (वनों) में बहुतायत में पाया जाता है रीठे की दो प्रजतियां पाई जाती है।

(1) Sapindus Mukorssi - इसके जंगली वृक्ष हिमालय क्षेत्रों में 4000 फुट की ऊंचाई तक पाए जाते है परन्तु उत्तर भारत असम आदि में इसके मनुष्यों द्वारा लगाए हुए वृक्ष बाग बगीचों में या गांवों के आस–पास पाए जाते है।

(2) Sapindus Trifoliatar - इसके वृक्ष विशेषत: दक्षिण भारत भारत में मिलते है इसके फल 3–3 साथ जुडे होते है।

उत्तराखण्ड में Sapindus Mukorssi नाम की प्रजाति पाई जाती है जो कि जंगलों में पाई जाती है व जागरुकता के अभाव में उत्तराखण्ड जंगली पशु ही इसे खा जाते है। रीठे का उपयोग उत्तराखण्ड में बाल कपडे धोने में प्रयोग वा साबुन के स्थान पर प्रयोग करते है।

9. **तेजपात** – इसका वानस्पतिक नाम सिनामोनम टमाला है। यह उष्ण एवं समशीतोष्ण प्रदेश में 3000 से 6000 फुट की ऊंचाई तक तमाल पत्र के जंगली वृक्ष पाये जाते है। इसके सुखाए हुए पत्ते बाजारों में तेजपाल के नाम से बिकते है। इसकी पत्तियों में एक उड़नशील तेल पाया जाता है जिसका मुख्य घटक युजिनेल है, इसके अतिरिक्त तार्पीन व सिन्नेमिक ऐल्डिहाइड भी पाया जाता है।

उत्तराखण्ड के ग्रामीण क्षेत्रों में ग्रामीण महिलाएं इसका घरेलू उपयोग मवेशियों के चारे के रुप में विशेषत: करती है। जागरुकता के बाद उत्तराखण्ड के ग्रामीण लोग इससे अधिक आर्थिक लाभ प्राप्त कर सकते है। क्योंकि खडे मासालों के रुप में इसका बहुयात से प्रयोग किया जाता है व इससे उत्तराखण्ड के ग्रामीण क्षेत्रों में पुरुष पलायन को आसानी से रोका जा सकता है व ग्रामीणों को रोजगार भी प्राप्त हो सकता है।

10. **गिलोय** – गिलोय का वानस्पतिक नाम टिनोस्पोरा कर्डिफोलिया है इसे अमृता भी कहा जाता है। यह कभी न सूखने वाली एक बडी लता रुपी झाड़ी है। यह समुद्र तल से लगभग 1000 फुट की ऊंचाई तक पाई जाती है। इसका तना काफी मोटा होता है देखने में यह रस्सी जैसा लगता है कोमल तने तथा शाखाओं में कई वायुवीय जडे निकलती है। इस पर पीले व हरे रंग के फूल झुड के रुप में लगते है, इसके पत्ते पान के जैसे व बीज मटर के दाने के रुप में लगते है वह बेल उत्तराखण्ड के जंगलों में वृक्षों पर फैली हुई आसानी से दिखाई देती है, गिलोय की बेल प्राय: उत्तराखण्ड के जंगल में खेतों में मेढ़ो चट्टानों आदि स्थानों में कुडलाकार चढ़ती हुई मिलती है। इसकी विशिष्ट पहचान यह है कि इसकी बाहय छाल हल्के भूरे रंग की कागज के परत जैसी होती है खुरचने पर यह परत के जैसे निकलती है और अंदर से हरा गूढा होता है।

गिलोय में लगभग 12 प्रतिशत स्टार्च के अतिरिक्त अनेक कड़वे जैसे जैव सक्रिय संघटक पाये जाते है गिलोय में गिलोइन नामक एक कडुवा ग्लूकोसाइड तथा तीन प्रकार के एल्कोलाइड होते है इसमें गिलोइमिन कैसेमंधिन पामरिनरीनात्पेरिण, टीनोस्पेरिक नमाक जैव सक्रिय पदार्थ पाये जाते है इसमें एक उडनशील तेले होता है एवं वसा एल्कोहल गिलस्सैल एक एसोशियल आयल तथा कई प्रकार के वसा अम्ल होते है इसका औषधीय मूल्य बहुत अधिक होता है

11. **बहेड़ा** – इसका वानस्पतिक नाम टेरमिनालिया बेलिरिका है, यह उत्तराखण्ड के जंगलों में सर्वत्र पाया जाता है। यहां के ग्रामीण क्षेत्रों में लोगों की उदासीनता के कारण इसका उपयोग हो नहीं पाया है लेकिन यह उत्तराखण्ड के जंगलों से निःशुल्क प्राप्त होने वाला एक अण्डाकार फल है। जिसका कि प्रयोग औषधी के रूप में अनेक रोगों को दूर करने में किया जाता है। इसके फल में टेनिन बी1– सिटोस्टेराल गौलिक एसिड़ इलेगी एसिड़, एथिल गैलेट, चेकुलेचिक एसिड़ मैनिटल, ग्लूकोज गैलेक्टोज फ्रक्टोज तथा रैमनोज होते है। बीज से चमकीले पीले रंग का स्थिर तेल निकलता है इसका औषधीय मूल्य बहुत अधिक होता है। अनेक रोगों जैसे– नेत्र रोग, गले के रोग, कफ में उपयोगी होता है।

12. **शिकाकाई**– इसका वानस्पतिक नाम सीजलपीनिया जाति व सजिलपीनिएस कुल का पौधा है। यह उत्तराखण्ड मे प्राकृतिक रुप से 8000 फीट तक बहुत मात्रा में पाया जाता है इसके पक्के फलों से आयुर्वेदिक शैम्पू बनाया जाता है उत्तराखण्ड के बाजार में फलों का 40–50 रू0 किलो के दामों में बेचा जाता है।

13. **पुनर्नवा**– इसका वानस्पतिक नाम बोरहाविया डिफ्यूजा है यह उत्तराखण्ड में 13000 फीट की ऊंचाई पर पाया जाता है। यह खरपतवार के रुप में बरसात में अधिक पाया जाता है यह बहुवर्षीय प्रसरणशील 2–3 मीटर लंबा क्षुप कई कोमल शाखाओं और प्रशाखाओं से युक्त पत्ते आधे से एक इंच लंबे गोल या अण्डाकार, मृदु रोमश आमने–सामने लगे होते है पुष्प छोटे गुलाबी छोटे–छोटे मुण्डकों के समान अवृन्त होते है फल) इंच लम्बे, पंच रेखीय ग्रन्थि युक्त होते है। मूल स्थूल दृढ़ व श्वेत होता है। वर्षाकाल में इसमें फल व फूल लगते है। इसमें पुनर्नवीन नामक एक किंचित चरपरा क्षाराभ पोटेशियम नाइट्रेट भस्म में 'लोराइड, नाइट्रेट और 'लोरेट पाए जाते है। इसका प्रयोग अनेक बीमारियों में औषधों के रुप में किया जाता है। उत्तराखण्ड के जंगलों में यह बहुतायत में पाया जाता है।

14. **मक्कू/झूला/छडीला**– इसका वानस्पतिक नाम पारमेलिया है, इसकी पारमेलिया व असनिया नाम की प्रजातियां पाई जाती है। जो कि अपने विभिन्न गुण धर्म के आधार पर अनेक प्रकार की औषधी बनाने में महत्वपूर्ण होती है। उत्तराखण्ड को सर्वाधिक आय मक्कू के व्यापार से प्राप्त होती है, इसका प्रयोग सोबर व गरम मसाला, रंग रोगन, हवन सामग्री बनाने में व रेजिनोइड निकालने में किया जाता है, जो सुगन्धी में प्रयोग किया जाता है। उत्तराखण्ड के प्रथम ग्रेड के मक्कू को फ्रांस को निर्यात किया जाता है, इस प्रकार मक्कू के द्वारा उत्तराखण्ड की आर्थिक आय को मजबूती प्राप्त होती है।

इस प्रकार यदि देखा जाए तो उत्तराखण्ड प्राकृतिक सम्पदा की दृष्टि से बहुत ही सम्पन्न राज्य कहा जाए तो अतिश्योक्ति न होगी यहां राज्य में प्रकृति द्वारा निःशुल्क प्रदत ही इतनी सम्पदा है कि यदि यहां के राज्यवासी इस सम्पदा को यथोचित उपयोग करें तो यहां से पलायन की आवश्यकता ही नहीं होगी। क्योंकि विधिक दृष्टि से उत्तराखण्ड में वन क्षेत्र की स्थिति इस प्रकार है –

1 आरक्षित वन – 46.08 प्रतिशत
2 संरक्षित वन – 18.48 प्रतिशत
3 निजी वन – 0.23 प्रतिशत
4 गैर वन क्षेत्र – 35.21 प्रतिशत

इस प्रकार यदि राज्य में देखा जाए तो वन क्षेत्र अधिक है व राज्य वन सम्पदा की दृष्टि से अत्यन्त धनी है। जिस कारण इसे वन सम्पदा में उन्नत कहा जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. उत्तराखण्ड ईयर बुक 2011 – पृष्ठ सं0–393
2. उत्तराखण्ड ईयर बुक 2013 – पृष्ठ सं0–403
3. उत्तराखण्ड ईयर बुक 2011 – पृष्ठ सं0–402
4. आयुर्वेद– पृष्ठ सं0–118, 150, 164, 201, 321

****

महाविद्यालय छात्राओं का जल संरक्षण के प्रति जागरूकता का अध्ययन करना

डॉ. सुषमा शर्मा * प्रियंका गहलोत**

शोध सारांश - प्रस्तुत शोध सारांश 'महाविद्यालय छात्राओं का जल संरक्षण के प्रति जागरूकता का अध्ययन करना' एक सर्वेक्षण प्रकार का शोध है, जिसमें महाविद्यालय छात्राओं का जल संरक्षण के प्रति जागरूकता का अध्ययन किया गया। प्रस्तुत शोध का उद्देश्य - जल संरक्षण के प्रति महाविद्यालय की छात्राओं की जागरूकता का अध्ययन करना था। शोध के न्यादर्श हेतु उद्देश्य परक न्यादर्श तकनीक का उपयोग किया गया। प्रस्तुत शोध में इन्दौर शहर के माता जीजाबाई कन्या महाविद्यालय की 50 छात्राओं को न्यादर्श के रूप में लिया गया। प्रस्तुत शोध में जल संरक्षण के प्रति जागरूकता के सन्दर्भ में 'छात्राओं की प्रतिक्रियाएँ' से संबंधित प्रदत्त एकत्र किए गए। इस परिवर्ती के आकलन हेतु शोधकर्ताओं द्वारा विकसित प्रतिक्रिया मापनी का उपकरण के रूप में उपयोग किया गया। प्रस्तुत शोध में प्रदत्त विश्लेषण हेतु प्रतिशत मान सांख्यिकी का उपयोग किया गया। प्रस्तुत शोध से अग्र निष्कर्ष प्राप्त हुआ- महाविद्यालय छात्राओं का जल संरक्षण के प्रति जागरूकता पाई गई।

प्रस्तावना - एक सर्वेक्षण प्रकार का शोध है, जिसमें महाविद्यालय छात्राओं का जल संरक्षण के प्रति जागरूकता का अध्ययन किया गया। जल संरक्षण का अर्थ होता है जल के दुरूपयोग का रोककर उसकी सुरक्षा करना । यह सत्य है कि अगर जल संरक्षण नहीं किया गया तो इसके परिणाम भयानक होगे । हम सब को बचपन से ही बताया जाता है कि 'जल ही जीवन है ' यह बात बिल्कुल सत्य है, पेड - पौधे हो,कोई मुनष्य हो या फिर कोई भी जानवर क्यों न हो हर किसी को पानी की जरूरत होती है । पानी के बिना कोई भी ज्यादा समय तक जिंदा नहीं रह सकता । आप को जानकर हैरानी होगी कि मानव शरीर का 70 प्रतिशत भाग जल होता है । जल को प्रदुषित होने से बचाकर भी हम जल संरक्षण कर सकते है । जल प्रदूषण से हमारा तात्पर्य है नदियॉ,तालाब व समुद्र आदि के पानी का दूषित होना इसके अलावा ऐसे अवांछित बाह्य तत्व की जल में उपस्थिति जिससे कि जल के भौतिक व रासायनिक गुणो मे परिवर्तन हो जाए तथा वह जल पीने योग्य न रहे,जल प्रदूषण के अंतर्गत आता है ।

इस प्रकार जल में अवांछित तत्वों को आने से रोकना तथा उसके भौतिक व रासायनिक स्वरूप मे काई परिवर्तन न होने देना जल संवर्द्धन कहलाता है ।

हमे जल संरक्षण की आवश्यकता क्यों है - इस प्रश्न का उत्तर देने से पहले हमे हमारे जीवन में जल के महत्व को पहले समझना होगा। मनुष्य ऑक्सीजन, पानी और खाने के बिना नहीं जी सकता इन तीन मूल्यवान चीजों में पानी का महत्व सबसे अधिक है। प्रश्न तो यह होना चाहिए कि पृथ्वी में पीने का पानी कितना है और इसका संरक्षण कैसे करना होगा ? आंकड़ो के अनुसार पृथ्वी में 71 प्रतिशत पानी है। परंतु उसमें से मात्र एक प्रतिशत जल ही पीने योग्य है।

अगर हम विश्व की पुरी जन संख्या के साथ पीने के पानी का अनुपात निकालें तो पता चलता है कि गैलन पानी का उपयोग प्रतिदिन 1 अरब लोग कर रहे है। यह भी अनुमान लगाया जा चुका है है कि 3 अरब से ज्यादा लोग 2025 तक पानी की कमी से पीड़ित होंगे ।

हालाकि लोगों को थोड़ा-थोड़ा पानी का महत्व समझ में आने लगा है परन्तु अभी मनुष्य ने पूरी तरीके से पानी को संरक्षित करना नही सीखा है। जल का संरक्षण आज से ही लोगों को शुरू करना होगा क्योंकि ऐसे ही पानी बर्बाद होता रहा तो वह दिन दूर नहीं जब तीसरा विश्व युद्ध पानी के लिए हो। कुछ वर्षो पहले पानी को कोई नहीं बेचता था पर अगर आज आप देखेंगे तो कई कंपनियों ने इसको बेचना शुरू कर दिया है। क्योंकि सभी जगह स्वच्छ पानी उपलब्ध नहीं है। इसलिए पानी लोग खरीद कर पीते है। आज एक पानी के एक लीटर का दाम 20-25 रू. हो चुका है। अगर जल संरक्षण और जल को स्वच्छ नहीं रखा जायेगा तो वो दिन दूर नही जब 1 ली. बोतल को 100-200 रूपए देकर खरीदना पड़े।

जल संरक्षण के तरीके - स्वच्छ एवं सुरक्षित जल अच्छे स्वास्थ्य की कुंजी है। गंदा व प्रदूशित जल बीमारियों को फैला सकता है। सभी प्रकार की घरेलू आवश्यकताओं के आधार पर सामान्यतया प्रतिदिन एक आदमी को 40 ली. जल की आवश्कता होती है।

1. प्रतिदिन न्यूनतम सुरक्षित पानी की आवश्यकता (ली. में)

परिवार में सदस्यों की संख्या	पीने / खाना पकानें का पानी	अन्य कार्यो के लिए	कुल योग
6	30	60	90
7	35	70	105
8	40	80	120
9	45	90	135
10	50	100	150

इस प्रकार जल की आवश्यकता है केवल उतना जल उपयोग करें तथा जल को व्यर्थ न बहाएं तो जल संरक्षित किया जा सकता है।

2. वर्षा जल का संरक्षण करके । यदि छत पक्की न हो तो खेत या खुले मैदान मे टॉंका बनवाकर पानी इकट्ठा करें ।

* सहायक प्राध्यापक (गृह विज्ञान) माता जीजा बाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (गृह विज्ञान) डी.ए.वी.वी., इन्दौर (म.प्र.) भारत

वर्षा जल की मात्रा लीटर में (कुल वर्षा का 80 प्रतिशत एकत्र करने पर)

छत का मान (वर्ग मी.) वर्षा (मि.मी)	50	100	150	250
200	8000	16000	24000	32000
300	12000	24000	36000	48000
400	16000	32000	48000	64000
500	20000	40000	60000	80000

राजस्थन में होने वाली औसत बरसात से एक पक्के मकान की छत से इतना पानी संग्रह हो सकता है कि जिससे 10 लोगों के परिवार की 200 से ज्यादा दिनों तक का खाना पकाने एवं पीने के पानी की आवष्कता पूरी हो सकती है।

उद्देश्य – प्रस्तुत शोध का उद्देश्य था– 'महाविद्यालय छात्राओं का जल संरक्षण के प्रति जागरूकता का अध्ययन करना'।

परिकल्पना – प्रस्तुत अध्ययन की परिकल्पना थी – महाविद्यालय छात्राओं का जल संरक्षण के प्रति जागरूकता होगी।

न्यादर्श – प्रस्तुत अध्ययन की समष्टि माता जीजाबाई कन्या महाविद्यालय की किशोरी छात्राएँ थी। इन छात्राओं की समष्टि में से न्यादर्श के रूप में उद्देश्यपरक न्यादर्शन के द्वारा 50 छात्राओं का चयन किया गया। इन छात्राओं की उम्र 18–22 वर्ष के मध्य थी। इन विद्यार्थियों में शहरी एवं ग्रामीण दोनों आवासीय पृष्ठभूमि वाले विद्यार्थी शामिल थे। इनकी सामाजिक–आर्थिक स्थिति काफी हद तक एक जैसी थी।

उपकरण – प्रस्तुत अध्ययन हेतु महाविद्यालय की छात्राएँ की जल संरक्षण के प्रति जागरूकता चर से संबंधित प्रदत्त एकत्रित किए गए। इन चर के आकलन हेतु शोधक द्वारा एक स्व.निर्मित प्रश्नावली का उपयोग किया गया। इस प्रष्नावली में कुल 20 प्रश्न थे। प्रत्येक प्रश्न के सामने दो विकल्प थे– 'हाँ' एवं 'नहीं'। इन दो विकल्पों में से किसी एक विकल्प पर अनुक्रिया कर छात्राओं को अपने उत्तर देने थे। प्रश्नावली को हल करने हेतु छात्राओं को 30 मिनट का समय दिया गया।

प्रदत्त संकलन की विधि – सर्वप्रथम न्यादर्श हेतु चयनित महाविद्यालय के प्राचार्य महोदय से शोध कार्य हेतु अनुमति ली गयी। न्यादर्श की संख्या अनुरूप शोध के चर के आकलन हेतु आवश्यक जागरूकता प्रश्नावली की छायाप्रतियाँ प्राप्त कर ली गयी। इसके पश्चात् चयनित विद्यार्थियों को मौखिक रूप से दिशा–निर्देश देकर अध्ययन का उद्देश्य स्पष्ट किया गया। न्यादर्श हेतु चयनित छात्राओं को जल संरक्षण जागरूकता प्रश्नावली भरने को दी गयी। अन्त में प्रश्नावली को एकत्र कर प्रश्नावली पर अंक प्रदान किए गए। इस प्रकार महाविद्यालय की छात्राएँ की जल संरक्षण के प्रति जागरूकता चर के लिए प्रदत्त एकत्र किए गए।

प्रदत्त विश्लेषण – प्रस्तुत शोध कार्य हेतु महाविद्यालय छात्राओं का जल संरक्षण के प्रति जागरूकता का अध्ययन हेतु **प्रतिशत मान** का उपयोग किया गया।

परिणाम, निष्कर्ष एवं विवेचना – प्रस्तुत शोध अध्ययन से निम्न परिणाम प्राप्त हुए–

1. कुल 90 प्रतिशत छात्राएँ इस बात से सहमत है कि जल संरक्षण आज के युग की माँग है। इससे ज्ञात होता है कि छात्राएँ जल संरक्षण के लिए जागरूक है।
2. जल संरक्षण से संबंधित भविष्य की योजना बनाने के संबंध में 78 प्रतिशत छात्राओं ने सहमति जतायी, जिससे जल संरक्षण से संबंधित भविष्य की योजना बनाने के संबंध में उनकी जागरूकता का ज्ञान होता है।
3. जल संरक्षण विभाग की जानकारी के विषय में 75 प्रतिशत छात्राओं ने अपनी सहमती जताई, जबकि 25 प्रतिशत छात्राओं को इसकी जानकारी नहीं थी।
4. कुल 86 प्रतिशत छात्राएँ जल संरक्षण से संबंधित विशेषज्ञों के मार्गदर्शन को आवश्यक मानती है।

प्रस्तुत शोध के निष्कर्ष रूप मे हम कह सकते हैं कि छात्राएँ जल संरक्षण के लिए जागरूक है। उन्होंने जल संरक्षण से संबंधित भविष्य की योजना बना रखी है। जल संरक्षण से संबंधित प्रशिक्षण कौशल व परामर्श को आवश्यक समझती है। जल संरक्षण से पृथ्वी पर पर्याप्त मात्रा में जल की उपलब्धता बनी रहेगी। जल की उपलब्धता के चलते फसल उत्पादन में वृद्धि होगी जिससे किसानों की आर्थिक दशा भी सुधरेगी तथा देश की अर्थ व्यवस्था भी मजबूत होगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Devadas, R. P. (1958). The meaning of home science. Coimbatore: Sri Avinashilingam Home Science College.
2. Malaviya, R. (2007). Evolution of home science education: the metamorphosis. University News. 45 (08), 1-7.
3. University Grants Commission (2001). UGC model curriculum: Home Science: post graduate programmes.New Delhi: University Grants Commission.
4. University Grants Commission (2001). UGC model curriculum: Home Science: undergraduate programmes. New Delhi: University Grants Commission.

****

Dimensions Of Women Empowerment And Non Government Organisation

Dr. M. D. Somani * Bhavana Nahar **

Abstract - The empowerment of the women is a highly significant issue of our times. Woman empowerment is the most important instrument for the socio-economic development of a nation. Women play a very strategic role in the development of society. Women should have political. Economic and social empowerment. The social empowerment of women includes better status in the family, freedom for marriage, right to property, social mobility, social freedom, family welfare, social transformation and gender equity. The economic empowerment of women includes ownership and control of research right to property, employability, and improvement in the standard of living, fulfilment of basic needs, entrepreneurship development and improvement of bargaining power of women. The political empowerment includes political reservation, political participation and political leadership development of women. That is why the need for NGOs working towards women empowerment and development is so vital in India. Women play a very strategic role in the development of society. That is why the need for NGOs working towards women empowerment and development is so vital in India.
Keywords - Women Empowerment, economic empowerment, social empowerment, political empowerment, NGO.

Introduction - The role and status of men and women are governed by cultural practices. In India status of women is very low. Thus when we talk of women's development and their sustainability, the word comes, empower means to give or to give power, for sustainable development we must emphasis on women empowerment

Bringing women into the main stream is one of the major challenges for every government. Women Empowerment is most vital system to strengthen the future of women in India. The government of India came up in the new millennium by declaring the year 2001 partners like men. Empowerment of women would mean equipping woman to be economically independent, self-reliant, have positive esteem to enable them to face any difficult reaction. NGOs have emerged as the tool that wields power to create a socio, economic revolution in the rural and urban areas of our country. Emancipation of women is a pre-requisite for nation's economic development and social upliftment.

The empowerment of women through self help groups (SHGs) would lead to benefits not only to the individual women, but also for the family and community as a whole through collective action for development self help groups have linkages with NGOs (Non Government Organization) and banks to get finance for development. NGOs focus on development and empowerment of woman in the rural area but also in the urban areas NGOs are recognized for their role in developing new initiatives, new programmes or components of programmes, new approaches, to address development problems and issues. NGOs are playing a significant role in the empowerment of disadvantage women, helping them stand on their oven through such programme as socio-economic programmes, vocational training and other similar programs. In the present times non-government organizations and other institutions are called upon to work together to achieve the goal of empowerment of women in India.

Objective Of The Study - The study has following objectives :

1. To study the dimensions of Women Empowerment.
2. To study the role of NGO in Women Empowerment.

Non Government Organization ; A New Strategy For Women Empowerment:

1. Confidence and mutual respect for women striving for social change
2. A vehicle for the promotion of economic activities
3. A framework for awareness raising, confidence building, self- reliance.

The concept of empowerment moves from the power. Power is the upright of the term empowerment. Empowerment is a lively multidimensional process that allows women to know their full identity and powers in all era of life. There is distinct meaning of term empowerment in distinct socio-cultural and political contexts, and does not convert easily into all languages. An investigation of local terms linked with empowerment around the world always leads to lively discussion. These terms involve self-

* Commerce Department, Mata Jija Bai Govt. Girls P.G. College, Indore (M.P.) INDIA
** Research Scholar (Commerce) Devi Ahilya Vishwidyalaya, Indore (M.P.) INDIA

strength, control, self-power, self-reliance, own choice, life of dignity in context with one's values, capability of fighting for one's rights, independence, own decision making, being free, awakening, and capability to mention only a few.

Dimensions Of Women Empowerment - Empowerment is of central value; it also has instrumental value. Empowerment is appropriate at both the individual and collective level, and can be economic, social, or political.

Economic Empowerment - Economic empowerment is the capacity of women and men to participate in, contribute to and benefit from growth processes in ways which recognize the value of their contributions, respect their dignity and make it possible to negotiate a fairer distribution of the benefits of growth. Economic empowerment increases women's access to economic resources and opportunities including jobs, financial services, property and other productive assets, skills development and market information

Economic empowerment is not only a process but it is also a stage which is to be acquired by making strategies focusing on building credit worthiness and financial independence among women by eliminating all the gender-specific barriers which stop women from gaining access to their rightful share in every spheres of life. As a result, in the development discourse, most of the poverty alleviating programmes carries an implied agenda of women empowerment, which starts with access to credit and participation in income generation which was accepted as sure strategies for economic empowerment.

Therefore, economic empowerment is an essential condition for enabling women to seek justice and equality, because due to the lack of economic strength, women will not be able to exercise their rights and entitlements. In absence of sound income security, people lack real liberty to make rational choices and to become socially responsible. Economic empowerment is not only a process but also the stage which is to be achieved by making strategies emphasizing on building credit worthiness and financial autonomy among women by removing all the gender-specific barriers which create a hurdle for women from gaining access to their rightful share in every spheres of life. Therefore, in the development discussion, most of the poverty alleviating programmes has an implied plan of women empowerment, which initiates with access to credit and participation in income yielding which was acknowledged as sure strategies for economic empowerment.

Economic Empowerment is to ensure provision of training, employment and income generation activities with both forward and backward linkages with the ultimate objective of making all potential women economically independent and self-reliant; and economic empowerment is a necessary condition for enabling women to seek justice and equality, because without economic strength, women cannot be able to exercise their rights and entitlements. It is proved by the recent studies on development issues that the sustainable development is only possible by making women an equally important epitome of the development process.

In economic empowerment women are given her obligations in economy, it is directly related with the status of women's at the society same as the man by voiding injustice and equality. In political empowerment the women should have place in peasant and national meet and concluded one woman have one vote, personal empowerment belonging to exemptions of women in their own matters. That's all brings evolution in the economy.

Social Empowerment - Social empowerment related to the high social place of women in the society. It is mostly apposed that providing access of money to the women proves as unsuccessful tool for getting women's empowerment till it have connectivity with varieties of process like awareness training which greatly influence the awareness of women's subordination, ideas of our own worth and on the understanding of empowering women. Social empowerment has similarity of behaviour, similarity of esteem, similarity of prospect and similarity of grade. Through social empowerment there is a construction of allowed coverage by different confirmatory developmental schemes and policies for the expansion of women for gave them simple and justify access of all necessary suitability which gave them authority to appreciate their actual potentials.

Political Empowerment - Political empowerment is that regular activity which pushes the women's for mobilising and removing the hurdles and the involvement of their in taking the decisions for more awareness and the judgment in removal developmental road blockers. Now all the governmental and non-governmental areas have the involvement of women's judgment process and strength. As all we know that now there is the participation of women in banks, gram panchayats, at the legislative, ministerial and sub- ministerial levels along with the top levels of the corporate sector and other social and economic institutions. There are many progressive hurdles along with health, nutrition; family earning and learning is highlighted as women involvement in Panchayat Raj Institutions (PRI), Village Development Boards and other government bodies. The political participation of women is proves that the women have the leadership skills, which manage all the situations for the social placement along with the strength of taking right place in the society.

To understand the above dimensions 100 women were asked to fill in a questionnaire consisting of various dimensions of women empowerment. They were asked to give their opinion regarding the various aspects of women empowerment and what is a part of it and what is not. The various dimensions included were as follows

1. Educating the Rural Women
2. Supplementation of Government Efforts
3. Efforts Organizing the Rural Women
4. Building various Model and Experiment

5. Ensure Women's Participation in their empowerment
6. Mobilizing the optimum Resources
7. Promoting Rural Leadership
8. Representing the Rural Women
9. Promoting Technology in Rural areas
10. Activating the Rural Delivery System
11. Providing effective & efficient Training to Rural Women.
12. Monitoring and Evaluation.
13. Impact assessment.
14. Planning and Implementation

The data showed the following :

Dimensions of Women Empowerment	Percentage
Educating the Rural Women	67
Supplementation of Government Efforts	86
Efforts Organizing the Rural Women	64
Building various Model and Experiment	50
Ensure Women's Participation in their empowerment	79
Mobilizing the optimum Resources	86
Promoting Rural Leadership	76
Representing the Rural Women	80
Promoting Technology in Rural areas	64
Activating the Rural Delivery System	45
Providing effective & efficient Training to Rural Women	63
Monitoring and Evaluation	72
Impact assessment	56
Planning and Implementation	70

It was found that most of the women felt that the NGOs took care that the women are empowered and feel that some change is happening for their betterment. It was also found that there are some aspects that are more obvious when it comes to women empowerment and there are others that are still to be worked on.

Role Of NGO For Sustainable Development Of Women :

1. The groups can provide many activities that will benefit in present and for future use.
2. Through NGOs they can empowerment in social, economic and political level.
3. Through NGOs the women develop self confidence of family and society.
4. Through NGOs they can provide many activities that will benefit in present and future too.

The growth of this sector consisting of non-government organizations engaged in social welfare and development activities has been accelerated in recent years by several factors increase in fund availability for social causes, positive public perception of the capacity of the voluntary sector to address social concerns and increasing awareness of the limitations of state and public agencies to reach out effectively to sections of society needing transformation. Women's non-profit organizations have long played an important role in the lives of women in many parts of the world. In India, well-educated and affluent women found socially sanctioned work outside the home in the voluntary sector. They worked as volunteers under the aegis of religious organizations and for social service nonprofits dedicated to the alleviation of poverty.

Suggestions for the growth of women empowerment with the help of NGO :

1. There should be a continuous attempt to inspire, courage and motivate women with the help of NGOs.
2. Organize training programs to develop production process, marketing, financial and other skills .This will encourage women empowerment.
3. Vocational training to be extended to women community.
4. Educational institutes should tie with various governments and NGO to assist women empowerment.
5. NGO and government organizations should spread information about policies, plan and strategies on the development of women in various fields. Women should utilize the various schemes provided by the government.

Conclusion - NGO helps to make gender equality and resolute fights to secure women's rights in all ways throughout of life. NGO are promoting employment by working with women by organizing training programmes for the income building activities. NGO have put in intervention strategies to various ends to empower the women and girls to improve their lives.

However, for a significant impact in the present era of liberalisation and globalisation where in market forces adopt a key role, it becomes essential for the NGO sector to take a lead in helping women the challenges posed by the system and this study reveals that the NGOs have been able to provide empowerment to certain extent. NGOs have helped the women by providing access to the system, information on market opportunities, training facilities, information on sources of credit, etc.

Women, although constitute half of humanity, are socially, economically and politically marginalized. The nature of empowerment can be diverse, depending upon the parameters that define the lack of power within the institutional framework in operation. For the past several decades, national governments, non-governmental organizations and international agencies have been aware and concerned about the status of women. Empowerment is a process of internal change, or power within, augmentation of capabilities, or power to, and collective mobilization of women, and when possible men, or power with, to the purpose of questioning and changing the subordination connected with gender, or power over. The concept of participation in NGO's programme is related to involvement in programmes that are organized by NGOs to improve the community situation. After joining NGO's, drastic changes are seen in the life style and living standard of women. Now women have started earning money, becoming independent and self motivated. They can take their own decisions in some matters and give their suggestions in family concerns. NGOs help women for their

empowerment.

Written by Kaiser, Empowerment is not giving people power, people already have plenty of power, in the wealth of their knowledge and motivation, to do their jobs magnificently. It encourages people to gain the skills and knowledge that will allow them to overcome obstacles in life or work, help them develop within themselves or in the society.

References :-

1. R.K. Rao (2001) Women and Education, Delhi.
2. Women's Education India (1995-98) Present status perspective plan, statistical indicators with global view, Vol 111 Concept Publication Co., New Delhi.
3. Malhotra, Anju, Sidney Ruth Schuler and Carol Boender (2002) Measuring Women's Empowerment as a Variable to International Development, World Bank, Washington D.C.
4. Das vijayalakshami; formation of saving and credit group for poor women, IWWB, Ahmadabad.
5. Behuria A. 2004. Woman empowerment through Self Help Groups, Human touch, 1 (5).
6. Bhuyan. D. 2011. Empowerment of Indian women: A Challenge of 21st Century, Orissa Review, pp. 60-63.
7. Ramakrishna. H. 2013. The Emerging Role of NGOs in Rural Development of India, International Journal of Social Science & Interdisciplinary Research, Vol. 2 (4).
8. N.L. Gupta (2003) Women's Education through Age, concept, population Co, New Delhi.

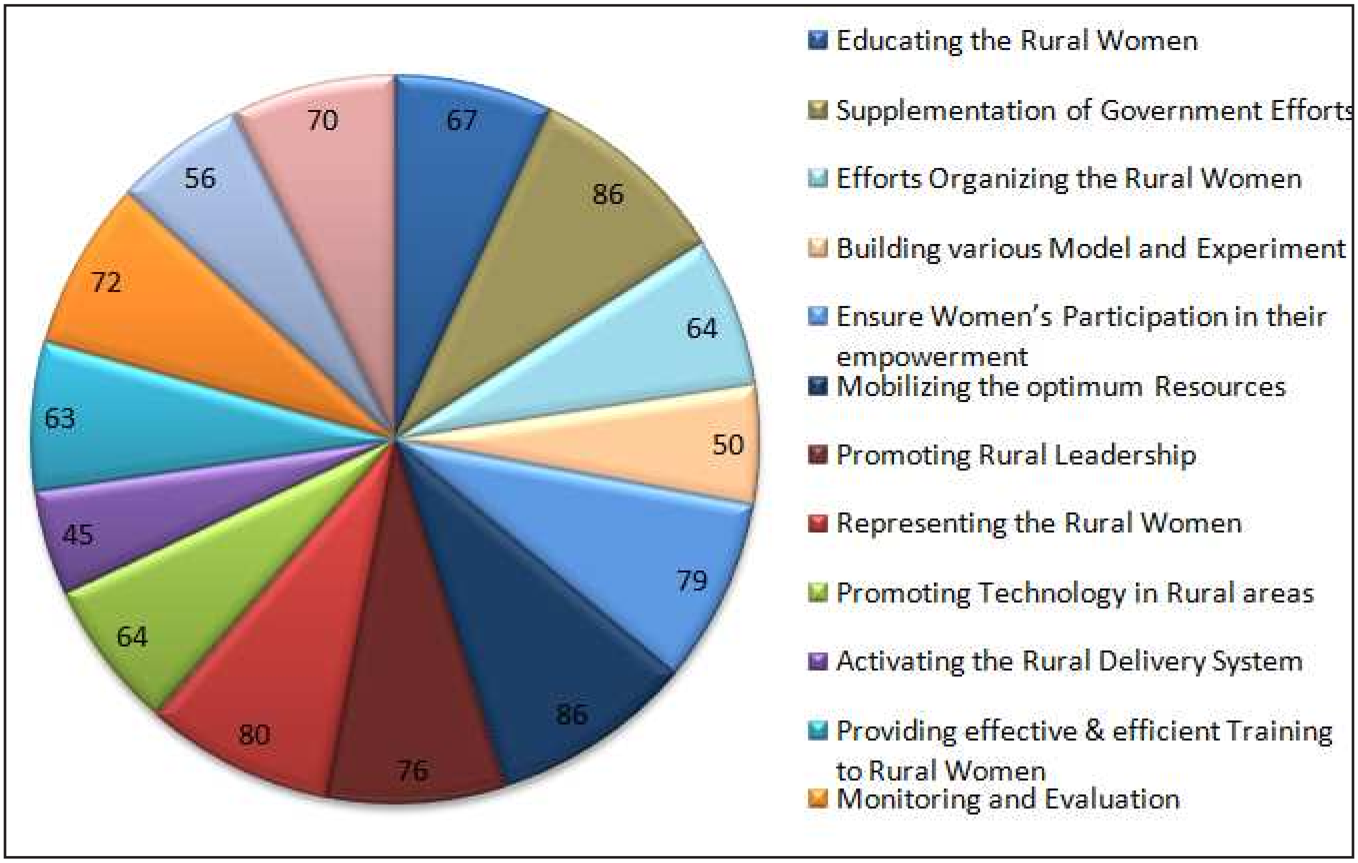

****

Comparative Analysis Of Rupee Depriciation On IT And OIL Companies In Period Of (2006-2011)

Jyotsana Verma* Dr. Rajeev Kumar Jhalani**

Abstract - Rupee has been depreciating for a long period. A country like India is heavily dependent on oil import, we have seen imbalance in our Balance of payment due to the high depreciation of the Indian Rupee. India established a float exchange regime, with the Rupee's effective rate placed on a controlled, floating basis and linked to a "basket of currencies" of India's major trading partners. More recently, the Indian Rupee has been depreciating in step formation, but roughly in line with the fall in its Purchasing Power Parity since the early 1980s. for this study I have taken 2 IT and 2 Oil companies for time series of 6 years.

Introduction - The Indian Rupee is the original official currency of India. The issuance of the currency is controlled by the Reserve Bank of India. The Indian rupee symbol "₹" (officially adopted in 2010) is derived from the Devanagari consonant "र" (Ra) with an added horizontal bar. The symbol can also be derived from the Latin consonant "R" by removing the vertical line, and adding two horizontal bars (like the symbols for the Japanese Yen and the Euro). The first series of coins with the rupee symbol was launched on 8 July 2011.

The English translation of "Rupee" is "silver," and the name exists because it was previously a silver coin. This very fact had severe consequences in the 19th century, when the strongest economies in the world were on the gold standard. The discovery of vast quantities of silver in the U.S. and various European colonies resulted in a decline in the relative value of silver to gold.

Suddenly, the standard currency of India could not buy as much from the outside world. Such circumstances led to what is now referred to as "the fall of the Rupee." During the period 1950-1951 until mid-December 1973, India followed an exchange rate regime with the Rupee linked to the Pound Sterling, except for the devaluations in 1966 and 1971. When the Pound Sterling floated on June 23, 1972, the Rupee's link to the British unit was maintained-thus, paralleling the Pound's depreciation and de facto devaluation. In 1975, the Rupee's ties to the Pound Sterling were disengaged.

While the PPP was 15 around 1982, the actual exchange rate was 9.30 per US dollar. After the devaluation, the Rupee underwent the change from a controlled regime to a "Managed" or "Dirty" float regime, where the market supposedly determines the exchange rate.

Rupee Depreciation - Rupee depre-ci-a-tion means that rupee has become less valu-able with respect to dol-lar. If the rupee moves upward from 30 per dol-lar to 40 per dol-lar then rupee is said to depre-ci-ate. It means that rupee is now cheaper than what it used to be ear-lier, so if the dol-lar was Rs 30 and now it reached 40.

Rupee Fluctuation From 2006 To 2011 (Graph see in the last page)

levels. companies that have foreign borrowings on their books will see a negative impact on their profits. On the other hand, Indian companies (like those from the IT and pharmaceutical sectors) that are major exporters, will benefit from the falling rupee.

Causes of Depreciation -

1. **Withdrawal by FII's -** The main driver of rupee depreciation in the last three months has been the withdrawal of funds by foreign institutional investors (FIIs) from domestic economy. The rather pessimistic view of FIIs is being governed by global developments. FIIs have registered a net sales position of US $ 1,581 million, between August and November so far. **(Graph See in the last page)**
2. **Strengthening of Dollar -** As these downbeat forces have played strong over the last few months, investor risk-appetite has contracted, thereby increasing the demand for safe haven such as US treasury, gold and the greenback. The Euro has depreciated 6.55% against the dollar in the last three months which has in turn made the dollar stronger vis-à-vis other currencies, including the rupee. With winter, the demand for oil and consequently dollar is only expected to move further upwards. Domestic oil importers have also contributed to this strengthening to meet higher oil import bills.
1. **Widening Current Account Deficit -** The current account balance is composed of trade balance and net

*Lecturer, Rukma Devi Pannalal Ladhha Maheshwari College, D.A.V.V., Indore (M.P.) INDIA
**Principal, Rukma Devi Pannalal Ladhha Maheshwari College, D.A.V.V., Indore (M.P.) INDIA

earnings from invisibles. While earnings from invisibles have been quite robust this year (growth of 17% y-o-y), the trade account has deteriorated on unfavourable terms of tradeFurthermore on a quarterly basis, even invisibles earnings have registered some decline. With contribution of exporters remaining on the sidelines and earnings from invisibles continuing to decline, a further widening of the CAD would result in outflow of dollars from the Indian economy accentuating the depreciation in rupee

2. Decline in other Capital Flows - Foreign Direct Investments (FDI), External Commercial Borrowings (ECBs) and Foreign Currency Convertible Bonds (FCCBs) have maintained robust trends this year, when compared with net inflows in FY11. However, on a month-on- month basis, ECBs and FCCBs have registered slowdown. A prospective decline in these other inflows on the capital account of the balance of payments could cause further depreciation in rupee.

Review Of Related Leterature -

Krishnas in Economy, Indian Economy - The past two weeks have been disastrous for the rupee value against dollar currency. The same time last month (22-Aug-2011), rupee value against dollar was 44.5 – 45.0 range, at this time of writing this article it is hovered to the range of 49.0 – 50.0. It is expected to raise further which would result in weakening the rupee value against the dollar currency. This kind of increase would have the drastic impact on the macro economy of the country like heavy raise in the import cost where countries like India heavily depends on the importing on Oil and other crucial raw materials needs for the industries.

Mr Sujit Sircar, Chief Financial Officer, iGATE Patni - The rupee could rise to 50 levels in the near-term; the IT industry looks for stability in the currency; and even as revenue rises with a depreciating rupee, costs for the Indian IT companies also shoot up. Operationally, I think that the rupee depreciation will impact the October to December quarter results of IT companies positively. There could be a 2 to 3 per cent gain in profitability. However, it must be noted that there will be a hedging loss that will need to be absorbed in the bottom-line.

Alan Greene, Vice President and Senior Credit Officer at Moody's - Moody's investor service on Wednesday said in a report that a sharp decline in rupee exerts pressure on oil marketing companies such as Indian Oil Corporation, HPCL and BPCL and companies with foreign currency debt faces direct impact of the weaker currency.

"Energy constitutes the largest portion of India's import bill, and IOC, together with the other unrated Indian refining and marketing companies BPCL and HPCL, which import oil to supplement their small amounts of domestic production, have the most direct exposure to a weaker local currency,".

Vijay Bhambwani, Author, CEO, BSPLindia.com - The pure oil marketing company plays first, HP, BPCL and IOC. Of these, BPCL and HPCL might fall as compared to IOC. Although it appears weak on the charts and is resisting a precipitous decline in the absolute near term but is definitely a short sell. As far as Reliance is concerned, Reliance is also facing tremendous amount of pressure. Levels of Rs 720-725 band is what I would watch out for. If that is breached, Reliance is into a very bad time then. The stock may even go all the way to Rs 660 or Rs 680.

Objectives -

1. To study the impact of currency depreciation.
2. To measure effect of currency depreciation on account of OIL and IT company.
3. To study the factors arising out because of currency depreciation.

Methodology - The methodology is based on secondary data. I will use exchange rates and time as independent variables(X) and profit of TCS, Infosys, IOC and HP as dependent variables(Y). For showing the impact of dependent variables on independent variables I will use Regression Analysis. In Regression Analysis I will calculate R-square (Coefficient of determination), Coefficient, Standard error, T stat, Significance.

R-square - Measures the proportion of the variation in the dependent variable that was explained by variations in the independent variables.

Std error of the estimate measures the dispersion of the dependent variables estimate around its mean. Compare this to the mean of the "Predicted" values of the dependent variable. If the Std. Error is more than 10% of the mean, it is high.

The table "**Coefficients**" provides information on the confidence with which we can support the estimate for each such estimate.

If the value in **"Sig."** is less than 0.05, then we can assume that the estimate is true with a 95% level of confidence. Always interpret the "Sig" value first. If this value is more than 0 .1 then the coefficient estimate is not reliable because it has "too" much dispersion/variance.

The **standard error** here refers to the estimated standard deviation of the error term u.

After regression analysis I will calculate **percent growth rate** of all the companies from the period of 6 years (2006 to 2011). I will use the formula of percent growth rate ie. Final value – Initial value divided by Initial value then multiply by 100.

Analysis Of Data

Regression Analysis Of TCS Profit

year	ex rates (X)	Time	TCS profit(cr){Y3}
2006	45.1768	1	4445.23
2007	41.341	2	
2008	43.6193	3	
2009	48.4237	4	
2010	45.7152	5	
2011	46.8466	6	7569.99
4161.65			
4508.76			

4696.21
5618.51

Dependent Variable: TCS Profit (See in the last page)

Here r^2 explain 71% of dependent variable is explained by independent variable.

Std error explain the difference(error) between the actual value and expected value of exchange rate(193) and time(256).

Significance explain the level of significance(5%) in the exchange rate and time.

Regression Analysis Of Infosys Profit

year	ex rates (X)	Time	INFY profit(cr){Y4}
2006	45.1768	1	4395
2007	41.341	2	4095
2008	43.6193	3	4470
2009	48.4237	4	5819
2010	45.7152	5	5803
2011	46.8466	6	6443

Dependent Variable: Infosys Profit (See in the last page)

Here r^2 explain 97% of dependent variable is explained by independent variable.

Std error explain the difference(error) between the actual value and expected value of exchange rate(41) and time(54).

Significance explain the level of significance(5%) in the exchange rate and time.

Regression Analysis Of Indian Oil Corporation Profit

year	ex rates (X)	Time	IOC profit(cr){Y5}
2006	45.1768	1	6412.56
2007	41.341	2	7525.06
2008	43.6193	3	6962.58
2009	48.4237	4	2949.55
2010	45.7152	5	10220.55
2011	46.8466	6	7445.48

Dependent Variable: Indian Oil Corporation Profit (See in the last page)

Here r^2 explain 49% of dependent variable is explained by independent variable.

Std error explain the difference(error) between the actual value and expected value of exchange rate(471) and time(625).

Significance explain the level of significance(5%) in the exchange rate and time.

Regression Analysis Of Hindustan Petroleum corporation Profit

year	ex rates (X)	Time	HP profit(cr){Y6}
2006	45.1768	1	956.26
2007	41.341	2	1268.19
2008	43.6193	3	726.27
2009	48.4237	4	574.98
2010	45.7152	5	1301.37
2011	46.8466	6	1539.01

Dependent Variable: Hindustan Petroleum corporation Profit (See in the last page)

Here r^2 explain 44% of dependent variable is explained by independent variable.

Std error explain the difference(error) between the actual value and expected value of exchange rate(77) and time(103).

Significance explain the level of significance(5%) in the exchange rate and time.

Year On Year Growth Of All The Companies (See in the last page)

Findings - The profits of **IT** and **OIL** companies are not fluctuating due to fluctuation in the exchange rate. The fluctuation in profit is measured by other factors like subsidies of govt. because when exchange rate is declining the profit of TCS is increasing but at the same time the profit of Infosys is moving according to the fluctuation in the exchange rate. On the other hand fluctuation in profit of IOC and HP is not moving according to fluctuation in the exchange rate.

Hence I can say that the impact of fluctuation in exchange rate is not alone can affect the profit of IT and OIL companies.

Conclusion - In research of comparative analysis of rupee depreciation on IT and OIL companies I have used secondary data for calculating impact of fluctution in exchange rate in profit of TCS, Infosys, IOC, HP with the help of time series data of 6 years from 2006 to 2011.

For calculating the impact I have used regression analysis and percent growth rate in profit of all the companies with exchange rate and time.

After calculating all the impact I have shown percent growth rate with the help of scattered line chart .

References :-

1. www.bseindia.com
2. www.nseindia.com
3. www.moneycontrol.com
4. www.rbi.org.in
5. www.economictimes.indiatimes.com
6. finmin.nic.in
7. planningcommission.nic.in

Rupee Fluctuation From 2006 To 2011

Dependent Variable: TCS Profit

	Coefficient	Std. Error	T Stat	Sig.	R^2
Intercept	3081.60893	8274.49999	0.372422	0.734332	0.712656089
Exchange Rate	1.572694004	193.4572312	0.008129	0.994024	
Time	575.4430255	256.4791302	2.243625	0.110589	

Dependent Variable: Infosys Profit

	Coefficient	Std. Error	T Stat	Sig.	R^2
Intercept	-3657.219697	1770.723144	-2.06538	0.130819	0.977085123
Exchange Rate	168.1587667	41.39938329	4.061866	0.026904	
Time	351.2702928	54.88591847	6.400008	0.007727	

Dependent Variable: Indian Oil Corporation Profit

	Coefficient	Std. Error	T Stat	Sig.	R^2
Intercept	38771.06	20175.3	1.921709	0.150385	0.493905
Exchange Rate	-770.112	471.6972	-1.63264	0.201049	
Time	-770.112	625.3604	1.346583	0.270813	

Dependent Variable: Hindustan Petroleum corporation Profit

	Coefficient	Std. Error	T Stat	Sig.	R^2
Intercept	4844.603	3331.591	1.454141	0.241885	0.447529
Exchange Rate	-95.6259	77.89236	-1.22767	0.307115	
Time	153.5619	103.2671	1.487036	0.233719	

Year On Year Growth Of All The Companies

Year	YOY Profit OF TCS(cr)	YOY Profit OF INFOSYS(cr)	YOY Profit OF IOC(cr)	YOY Profit OF HP(cr)
2006	Nil	Nil	Nil	Nil
2007	-6.37	-6.83	17.35	32.62
2008	8.34	9.16	-7.47	42.73
2009	4.16	30.18	-57.65	-20.83
2010	19.64	-0.27	246.51	126.33
2011	34.73	11.03	-27.15	18.26

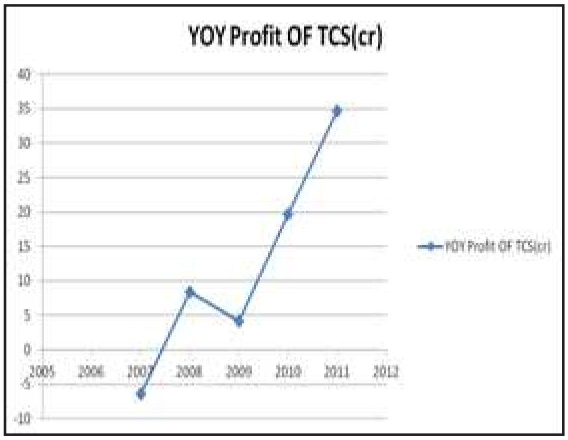
YOY Profit OF TCS(cr)
YOY Profit OF TCS(cr)

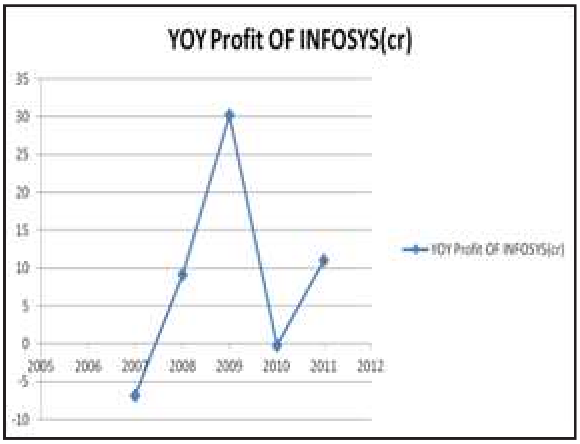
YOY Profit OF INFOSYS(cr)
YOY Profit OF INFOSYS(cr)

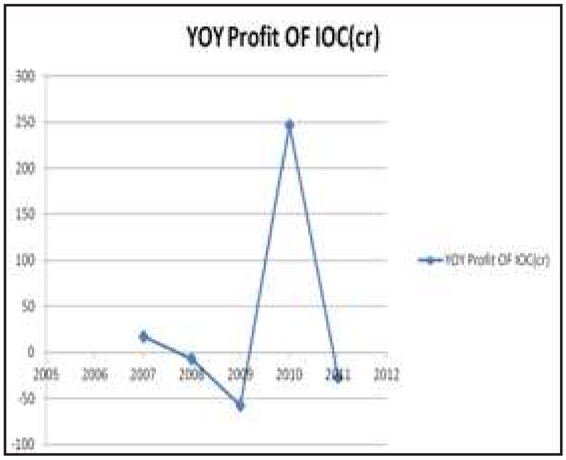
YOY Profit OF IOC(cr)
YOY Profit OF IOC(cr)

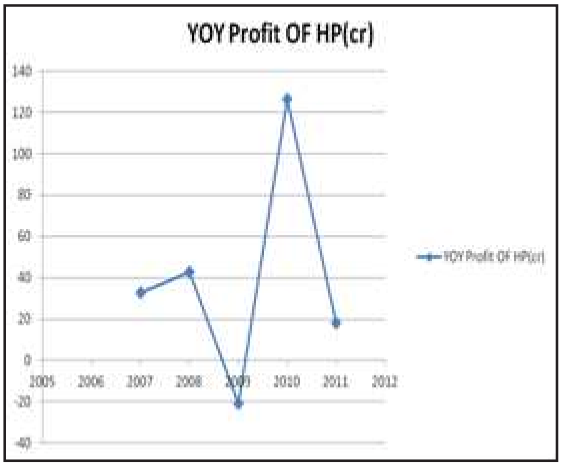
YOY Profit OF HP(cr)
YOY Profit OF HP(cr)

****

A Study of Agricultural Activities Performed by Rural Women and Problems faced by them in Khandwa District of M.P. State

Neha Purohit * Dr. Shailendra Mishra **

Abstract - Rural Women in MP are extensively involved in different type of agricultural activities. About 20 to 70% of the rural women are involved in agricultural production and post harvest activities. The agricultural activities in which the women play a very leading role in the state are transplantation, weeding, threshing, reaping, looking after the farm cattle and other live stock (goat rearing etc.) collecting fodder, watering fruits plants, preparing and transporting manure and other inputs to the field. They also help in constructing and repairing of irrigation channels and storage facilities. A sample of 80 farm women belonging to 3 different villages of Khandwa District were selected by using random sampling technique with the objective of studying different activities performed and the problems being faced by them in doing these activities. For data collection interview schedule, field observation and case studies were framed. Data was analyzed both quantitatively and qualitatively.The data has ben collected through likert's five [5] point scale structured questionnaire from 80 women farmers of Khandwa District in MP State.
Keywords - Agriculture Production, activities performed by women, problem faced by women.

Introduction - Swaminathan, the famous agricultural scientist describes that it was women who first domesticated crop plants and therby initiated the art and science of farming. While men went out hunting in search of food, woman started gathering seeds from the native flora and began culvating those of interest from the point of view of food, feed, fodder, fibre and fuel. Woman have played and continue to play a key role in the conservation of basic life support systems such as land, water, flora and fauna. They have protected the health of the soil through organic recycling and promoted crop security through the maintenance of varietal diversity and genetic resistance.

That women play a significant and crucial role in agricultural devlopement and allied fields including in the main crop production, livestock production, horticulture, post harvest operations, agro/ social forestry, fisheries etc. the nature and extent of women's involvement in agriculture, no doubt, varies greately from region . Even within a region, their involvement varies widely among different ecological sub-zones, farming systems, castes, classes and stages in the family cycles. But regardless of these variations, there hardly any activity in agricultural production, except ploughing in which women are not actively involved. Studies on women in agriculture conducted in India and other developing and under developed countries all point to the conclusion that women contribute far more to agricultural production than has generally been acknowledged. Recognition of their crucial role in agriculture should not obscure the fact that farm women continue to be concerned with their primary function as wives, mothers & homemakers.

Women are active partners in farming and undertake management along with men. There are certain unit operations in production agriculture in which women dominate in production agriculture, post harvest management and agro processing.

Literature review:

1. **Grover (2004)**The agriculture policy 2000 highlights incorporation of greater issues in agriculture. The national policy on empowerment of women stream need to maintain stream gender prepestive in devlopement process, and policy framework for agriculture extension suggested mainstreaming women in agriculture .
2. **Singh (2003)**Without the total intellectual and physical participation of women, it will not be possible to popularize alternative systems of land management to shifting cultivation, arrest gene and soil erosion, and promote the care of the soil and health of economic plants and farm animals. The women perform the maximum farm operations thereby contributing a lot of towards the upliftment of the economic and social status of their families and finally, accelerating the pace of rural devlopement.
3. **Gupta MP (2005)**Rural women have been intensively involved in agriculture and its allied fields. They perform numerous labour intensive jobs such as weeding, hoeing, grass cutting, picking and cotton stick collections. Women are also excepted to collect fuel wood from fields, which is

*Research Scholar, School of Commerce, D.A.V.V., Indore (M.P.) INDIA
** Professor, School of Commerce, D.A.V.V., Indore (M.P.) INDIA

being used as a major fuel source for cooking .

4. **Vinod Sharma (2015)**Women's contribution to the farm sector has ben ignored and inadequately understood. In our economy, very few scientific attempts have been made to examine the actual participation of female labour in crop production and other subsidiary activities at the farm level.

5. **BrohiSikandar (2005)** in his research paper entitled "NDP Irrigation Reforms Lack Gender Equality" argued that despite gargantuan efforts and uncasing participation in socio-economic field,women role has been discarded.

6. **ZarQuresh (2005)**has mentioned in his paper " Role of rural women" that role of women in agriculture sector is as important as men, therefore, women should educate themselves in agricultural. He also highlights the importance of education to rural female and proposed to educate women in floriculture and food preservations.

7. **Alam SM (2006)** has pointed out in his entitled " ProductionHazards,Marketing Risks" mentioned that majority of women is self-employed and work in dangerous environments. Their daily tasks included keeping and caring for the livestock at farms. They grow grains,cotton, fibers, fruits and vegetables. The crop farmer plants, tills, fertilizers, sprays, harvests, packs and stores the product. The livestock farmer feeds and cares for animals, while the horticulture farmers produce ornamental plants and nursery products.

In spite of the major role played by women in different agricultural and allied activities, their role in the decision making is negliagible. In addition there are many other problems which the rural farm women are facing such as, difficulties in carrying major agricultural operations, unhygienic condition in the field, time management between farm and household activities, veiling problems etc. keeping these in view, the present study has been undertaken to study the type of activities performed by these women and also to assess the problems being faced by them in doing these activities.

Main Objectives of the study - The main objectives of the present study are as follows :

1. To find out the role of women in agriculture and its allied fields.
2. To find out main obstacles in women growth in agriculture sector.
3. To analyze the gender differences in roles and activities in agriculture sector.

Research Methodology :

1.Nature of Study -The study is descriptive in nature. The study will be done in a completely natural and unchanged natural environment.Descriptive research design is a valid method for researching specific subjects and as a precursor to more quantitative studies.

2.Sample and Population -The population consists of MP State residents and sample has been collected from women rural farmerof MP State.

3.Sample Size - A sample of 80 respondents has been collected for study purpose.

4.Collection of data-Primary data was collected through a structured questionnaire and response were collected on dichotomous and liker's five [5] point scale.

Secondary data was collected from available literature, journals, gazettes, publications and internet.

5.Statistical tool used for analysis - Appropriate statistical tool, Excel spread sheet and SPSS software were used for analysis.

Observation - This study about rural women farmer was conducted with the help of circulation of structured questionnaires among 80 women farmers of Khandwa District. The questions asked, were about problems ans solutions of agricultural field. The demographic result of these 80 respondents is mentioned here along with pie charts:

Age - The data has collected from different age groups framed as follows : The demographic result related to the rural farmer Of 80 respondents has been included in this paper. Among these 80 respondents 43 were 25-35 age group, 26 were 36-45 age group and 11 were 45-55 group.

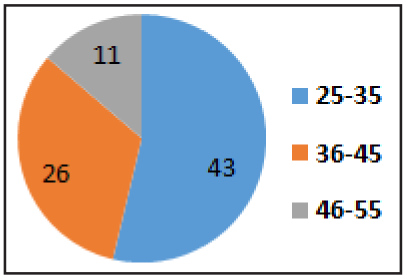

Age Group	No. of respondents
25-35 years	43
36-45 years	26
46-55 years	11

Educational Qualifications - The qualification of 80 respondents very as 80 respondents include 68 Illiterate, 5 Higher Secondary, 3 High School, 3 Graduate and 1 Post Graduate respondent.There wasn't any response from special other courses.

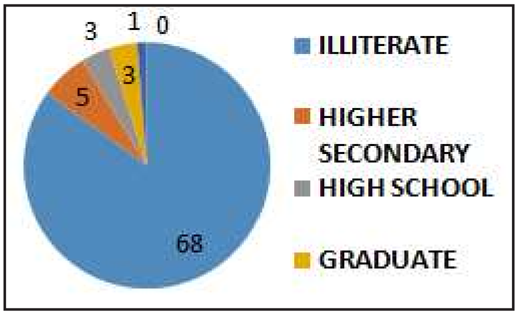

Educational Qualification	No.of respondents
Illiterate	68
Higher Secondary	5
High School	3
Graduate	3
Post Graduate	1
Others	0

Marital Status - There were 4 options given under this questions as married, unmarried, widowed, divorced. The responses were taken from 76 married, 2 unmarried and 2 widowed. There wasn't any response from divorced lady.

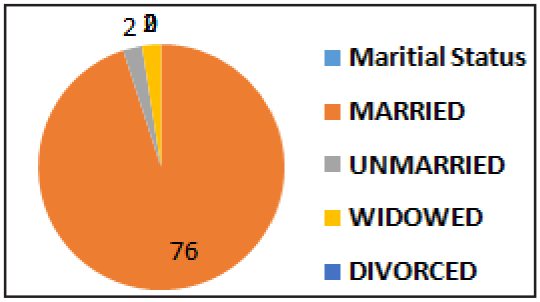

Marital Status	No. of respondents
Married	76
Unmarried	2
Widowed	2
Divorced	0

Caste - The data has been collected from different caste framed as follows :

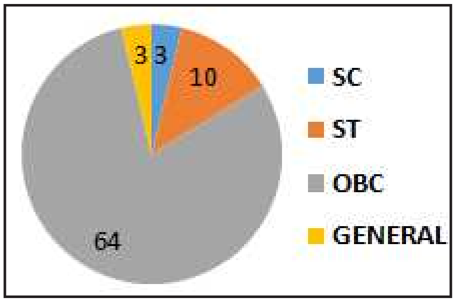

Caste	No. of respondents
SC	3
ST	10
OBC	64
GENERAL	3

Main Occupation - The main occupation of 80 respondents vary as 80 respondents include 34 related agriculture, 3 related job, 43 related agricultural labour .No respondent related in agro-based enterprises.

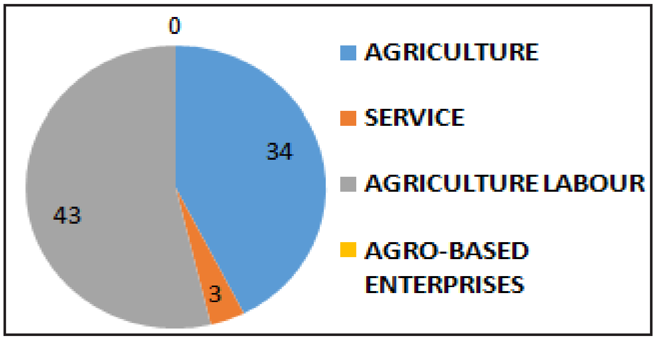

Main Occupation	No. of respondents
Agriculture	34
Service	3
Agricultural labour	43
Agro-based enterprises	0

Result and Discussion :

Table 1 : Activity Profile of Farmer in Khandwa District

ACTIVITY	MEN	WOMEN
A.*HOUSE HOLD ACTIVITY*	-	+++
1.Child Care	-	+++
2.House Keeping	-	+++
3.Cooking	-	+++
4.Caring Sick Person	+	+++

(+) = Low involvement , (++) = moderate involvement, (+++) = High involvement,
(-) = Not at all

All women farmer's are highly obliged to carry out domestic activities. These domestic obligation of women farmers restrict their mobility , time and energy to do farming activities. Women form all are highly involved in the traditional farming activities as these activities do not demand much physical body strength and energy .

Table 2 : Access and Control Profile of farming population in the study area in Khandwa District

RESOURCE/ BENEFITS	ACCESS	CONTROL
1.Home Land	+++	+++
2.Farm Land	+++	+
3.Farm Tools	+++	++
4.Formal credit	+++	++
4Informal credit	++	+++
5.Market retail/village	++	+++
6.Farm produce-food crops	++	+++
7.Farm produce-cash crops	+++	-
8.Farm income	+++	++
9.Non-farm income	+++	++

(+) = Low involvement , (++) = moderate involvement, (+++) = High involvement,
(-) = Not at all

Women has full access to home lands and low access to farm land as low lands are found away from the residences. Women's low control over lands and assests even they have ownership is mainly due to cultural traditions and fear to their husbands. Women in the study area get land ownership is mainly due to cultural traditions and fear to their husbands. Womens in the study area get land ownership from their parents as a dowry for marriage. Women have moderate access and low control over farm tools due to lack of knowledge and skills on improved farm implements .Women have little access to formal crdits even they have property ownership as a result of limited social interaction , time constraints and cultural barriers. Women have full access and control to village level and retail markets as they have to sell their products to meet households and personal needs . The variation in th access and control attain extension activities indicates the difference in the existing power relationship between men and women .

Table 3 : Participation of Rural Women in farm activities in Khandwa District

S.	Farm Activities	Frequency	% Age
1.	Ploughing of field	3	3.75%
2.	Cleaning of field	74	92.5%
3.	Leveling of field	35	43.75%
4.	Raising nursery seedling (chilly,tomato)	78	97.5%
5.	Sowing	72	90%
6.	Transplanting	78	97.5%
7.	Manure application	74	92.5%
8.	Fertilizer application	18	22.5%
9.	Weeding	77	96.25%
10.	Thinning	71	88.75%
11.	Gap filling	72	90%
12.	Irrigation	31	38.75%
13.	Plant protection measures (use of insecticides, pesticides)	13	16.25%
14.	Harvesting of crop and cutting of grass	78	97.5%
15.	Picking	76	95%
16.	Shifting produce to threshing floor	7	8.75%
17.	Threshing	13	16.25%
18.	Winnowing	33	41.25%
19.	Drying of grains	77	96.25%
20.	Cleaning of grains	44	55%
21.	Grading	54	67.5%
22.	Storage	73	91.25%
23.	Marketing	13	16.25%
24.	Processing	59	73.75%

Farm Activities - As agriculture is a multi activity venture and comprises of large number of diverse activities each one of which is equally important and has a direct bearing on the net productivity of the agriculture produce.The present study reveals that women are an integral part of every agriculture activity and many of the activities are exclusively undertaken by women folk. The extent of women participation in these activities is an under.

1. Ploughing of field - The ploughing of agricultural fields in the study area is mainly done by tractors which are either self owned or hired. Both mechanical and animalploughing is carried out by men and only 3.75% of the women sampled are performing this task.

2. Cleaning of the field -Cleaning of the field is carried out after ploughing and before sowing of seeds and is considered essential for better seed germination and healthy seedlings.The study shows that about 92.5% of the women are involved in this activity.

3. Leveling of fields -It is carried out for the final preparation of fields for sowing of seeds or transplanatation of seedlings. The study shows that about 43.75% of the women are engaged in this activity in the study area.

4. Raising nursery and Transplanatation -Majority of the women i.e.97.5% are actively onvolved in the preparation of nurseries for raising seedlings of vegetables and paddy . 97.5% of the women are engaged in transplanting these in different fields.

5. Manure and Fertilizers applications -The survey in the study area reveals that 92.5% of the women carry out manuring of the fields and only 22.5% are engaged in the application of chemical fertilizers . The application of chemical fertilizers in the area is mainly done by men>

6. Weeding- It is essential for obtaining higher yieldof the crops and about 96.25% of the farm women are doing this task in the study area.

7. Thinning and gap filling - Thinning of crop palnt is carried out in the fields with dense growth an dgap filling is required for ensuring proper coverage of the field by crop plants where seed germination rates of seeds is low . 88.75% of the women are engaged in the thinning and 90% of the women in gap-filling activities in the study area.

8. Irrigation - Only 38.75% of the women are actively carrying aou the Irrigation of their agricultural fields as this activity in the study area is mainly carried out by men who do it round the clock according to water distribution schedule devised by irrigation department of the government.

9. Plant protection measure -Only 16.25% of the women in the study area are carrying out this activity indicating that this activity is predominatly carried out by the man folk of the family.

10. Harvesting crops and cutting of grass - Majority of the womrn in the study area i, e 97.5% are performing this activity is indicating that these activities are exclusively undertaken by women.Picking of the harvest- Majority of the women i.e 95% are actively engaged in picking of the harvest and other crop produce.

11. Shifting produce to threshing floor -Only 8.75% of the women are performing this task as this activity involves heavy load handling and is therefore done mainly by men in the family.

12. Threshing and winnowing -Only 16.25% of the women are doing the work of threshing as this activity is done mechanically by men and winnowing is exclusively done by women as 41.25% of these are performing this activity in the study area.

13. Drying and cleaning of grains - More than 96.25% of the women in the study area under study are carrying out these important post harvest activities.

14. Marketing - Marketing of the produce is considered the male domain in the study area and is wholly carried out by the men in the family but a small percentage of women i.e 16.25% are also actively involved in some way in the process of marketing of crop produce.

15. Processing - Processing of some crop produce is necessary for increasing its self life such as prepration of Jams,Jelly,Picklesetc; 73.75% of the women in the study area are actively involved in the processing of produce for its storage and marketing.

16. Storage - More than 91.25% of the women engaged in agriculture are , at the end of the cropping season storing

the crop produce in a proper way in grain storage containers and other storage structures built for this purpose.

Table 4 : Problems faced by Rural Women in Khandwa District

Problems	N=	% Age
A) Health Problems :		
Backache,headache,fatigue/restless	75	93.75 %
Unhygienic condition in the field	60	75%
Need of healthy diet	70	87.5%
B) Management problems :		
Management of time between farm and home	58	72.5%
Difficulties in carrying major operations like crop harvesting / transplanting, rice cultivation/sowing	50	62.5
C) Social problems :		
Feel shy to work with in-laws in field	48	60%
Veiling problem	77	96.25%
D) Financial problems :		
Lack of resources	68	85%
Lack of finance	78	97.5%

Problems :

1. Health Problems -Almost all the women (93.75%) engaged in agriculture and allied activities activities suffer from back ache, head ache and fatigue while 80% of the women feel that their diet is not balanced and healthy. Majority of the women in the study area i.e 75% feel that the condition in the field is unhygienic.

2. Management problems - 72.5% of the agricultural women face great difficulty in managing the time between farm and home while majority of the women i,e 62.5% face difficulties in carrying out major agricultural operations like crop harvesting , transplanting , sowing etc.

3. Social Problems - A majority of the women in the study area i,e 60% face the traditional veiling problem while 96.25% of them are not very comfortable working along with their in laws in the agricultural fields.

4. Financial Problems - Maximum number of women in the study area i,e between 85-97.5% face financial problems ranging from severe to mild on account of both lack of resources and lack of finances.

Summary and Conclusions - Rural women constitute the most important work force in Indian economy. A good number of economically active women are engaged in Agricultural sector. A study of rural women in different farm activities in Khandwa District showed that women are activiely engaged in all major agriculture related activities such as ploughing, cleaning, and leveling of fields; raising nursery; sowing seeds, transplanting , manure and fertilizers applications, weeding, irrigation etc. Study also shows that majority of the women suffered from minor health problem, management problem, social and financial problem.

Suggestions - As the participation of women in agricultural activities is indispensable and on the increase in rural areas, the following steps need to be taken to enhance their agricultural productivity.

1. Government should conduct workshops,seminars and awareness programmes where the rural farm women are aquatinted with the modern cost effective agricultural techniques.
2. Full awareness about intake of healthy diet among the rural farm women should be undertaken on priority basis.
3. Government should frame some policies which benefits the rural agriculture women and encourage them to diversify the agricultural activities.

References :-

1. Administrative Report (2015-16) Annual Report; Department of Agriculture Cooperation and Farmer's Welfare; Govt. of India; New Delhi
2. Madhya Pradesh Devlopement Report ; Planning Commission;Govt. of India ; New Delhi
3. Women Status in MP and Planned Interventions State Planning Commission , MP (2010)
4. RajaduraiHariharan (Dec 2014) ; A study on women farmers participation in agriculture extention activities in Vavuniya District, Srilanka
5. Bridget Uyoyou&Imonikebe(July 2010);Constraints to Rural Women Farmer's Involvement in Food Production in Nigeria
6. Dr. MunMun Ghosh & Dr. Arindamghosh (June 2014); Analysis of Women participation in Indian Agriculture
7. Jaswinder Singh , Harpreet Singh, Sukhjinder Singh ; A Questionnaire on survey of problems facing by agriculture field using data mining
8. O.J.Okwu& B.I. Omoru (Nov.2009) ; A study of women farmers agricultural information needs and accessibility : A case study of Apu Local government Area of Benwe State , Nigeria
9. AbdalAal, Mohamed (2002) ; Research on women's work in agriculture
10. Bibhu Santosh Behera&AnamacharanBehera (Sep 2013); Gender issues : The Role of women in Agriculture sector in India
11. Dr. S P Shahi ; Technology and Devlopement : Rural women in Focus
12. Mary Barbercheck, Kathryn Brasier, Nancy Ellen Kiernan (June 2009) ; Meeting the extention needs of women farmers : A perspective from Pemsylvania
13. http://www.vigyanprasar.gov.in/.../Role_of_women _in_India_Agriculture.pdf
14. http://www.icar.org.in/files/.../12-OMEN%20IN %20 AGRICULTURE.pdf

****

JANMANREGA - Mirror of MGNREGA (Mahatma Gandhi National Rural Employment Guarantee Act)

Amita Singh * Dr. Deepak Talwar **

Abstract - Mahatma Gandhi National Rural Employment Guarantee Act (MGNREGA) has inherent provisions for proactive disclosure of information to its citizens in reference to implementation of the MGNREGS. Citizen awareness is a key to efficient, effective and transparent execution of the scheme, while the programme rests on participation principles. Janmanrega is an instrument for information flow to and from ground-level, which will connect citizens with the system. An initiative towards good governance, Janmanrega is an interface to improve quality of public services.
Keywords - National Rural Employment Guarantee Act (NREGA), Janmanrega.

Introduction - The National Rural Employment Guarantee Act NREGA, also known as National Employment Guarantee Scheme, NREGS is an Indian job guarantee scheme, enacted by legislation on August 25, 2005. The NREGA provides a legal guarantee for one hundred days of employment in every financial year to adult members of any rural household willing to do public work-related unskilled manual work at the statutory minimum wage. This act was introduced with an aim of improving the purchasing power of the rural people, primarily semi or un-skilled work to people living below poverty line in rural India. It attempts to bridges the gap between the rich and poor in the country.

Achievements (financial year 2017-18) All states:

1.	Approved Labour Budget	:	2155000000
2.	Persondays Generated so far	:	1211829000
3.	% of Total Labour Budget	:	56.23
4.	SC Persondays % as of Total Persondays	:	22.11
5.	ST Persondays % as of Persondays	:	16.73
6.	Women Persondays out of Total(%)	:	54.91
7.	Average days of Employment provided per Household	:	32.23
8.	Average Wage Rate per day per Person (Rs.)	:	162.62
9.	Total no. of HHs completed 100 days of Wage Employment	:	525473
10.	Total HHs Worked	:	36700000
11.	Total Individual Worked	:	53867000

Source: - Ministry of Rural Development as on 06/09/2017

Review of Literature - Bengaluru, July 6,2016,08.15PM IST (IANS) The Mahatma Gandhi National Rural Employment Guarantee Act (MGNREGA) is the single most innovative programme from India and a lesson to the whole world, said Nobel laureate Joseph Stiglitz.

Management Information System- A web enabled MIS www.nrega.nic.in has been developed. This makes data transparent and available in the public domain to be equally accessed by all. The village level household data base has internal checks for ensuring consistency and conformity to normative processes.

It includes separate pages for approximately 2.5 lakh Gram Panchayats, 6465 Blocks, 619 Districts and 34 States & UTs. The portal places complete transaction level data in public domain for example - Job cards, Demand for work and Muster rolls which is attendance cum payment sheet for worker.

MGNREGA Help Line-The Department of Rural Development (DRD), Government of India proposes to establish a network of Helplines under MGNREGA at the National, State, District and Block levels for facilitating the redressal of grievances in relation to the implementation of the MGNREGA Scheme. The Helpline consists of a toll free MTNL number (1800 110 707) that will be used by the MGNREGA households and other individuals and groups to raise their questions, submit their grievances and complaints and seek guidance from the Department of Rural Development The operations will run with the use of latest information and communication technology to provide solutions to complainants on a real time basis. Through the same helpline, the operations will run with the use of latest information and communication technology (ICT) to provide solutions to queries and/or complainants on a real time basis.(Arpita Shrama)

NREGAsoft -Envisions implementing e-Governance across State, District and three tiers of Panchayati Raj Institutions.

*** Assistant Professor, Vidyodaya College, Manawar, Dhar (M.P.) INDIA**
**** Associate Professor (MBA), Medi-caps University, Indore (M.P.) INDIA**

It empowers the common man using information technology as a facilitator. **NREGAsoft** provides information to citizen in compliance with the right to information Act (RTI Act). It makes available all the documents like Muster Rolls, registration application register, job card/employment register/muster roll issue register, muster roll receipt register which are hidden from public otherwise. To facilitate faster information exchange between the various stakeholders through the network.

Objectives of the Study :-

1. To study functions of Janmanrega – Mirror of MGNREGA
2. To study the benefits of Janmanrega

Research Methodology - The research is based on primary and secondary data. Personal visit, group discussion techniques were used for collecting primary data and newspapers, reports, research articles were used to collect secondary data.

Introduction to Janmanrega - Mahatma Gandhi National Rural EmploymentGuarantee Act (mgnrega) has inherent provisions for proactive disclosure of information regarding works and implementations of MGNREGS. Public awareness is must for effective ececution of the scheme,while the programme rests on participation principles. Paradigm shift from an employment-oriented to a sustainable and productive livelihood support programme warrants greater public engagement. Mobile phone acts as a mode of communication with people at farther places, with greater ease and lesser time.

The Ministry of Rural Development (MoRD) launched ‘Janmanrega’ – a Citizen-centric Mobile Application (CCMA). This was launched by Hon’ble Minister of Rural Development on 19th of June 2017. Janmanrega is an instrument for information flow to and from ground-level, which will connect citizens with the system. An initiative towards good governance, Janmanrega is an interface to improve quality of public services. Janmanrega has been developed with collaboration between the MoRD, National Informatics Centre (NIC) and National Remote Sensing Centre (NRSC, Hyderabad). Beta Version of this Android Application is now available at Ministry’s MGNREGA Website that will allow locating already geotagged more than 1.78 crore Mahatma Gandhi National Rural Employment Guarantee Scheme’s (MGNREGS) Assets within Indian Space Research Organisation’s (ISRO) Bhuvan Map Interface along with their attributes and two photographs using an Android mobile phone. Citizens will also be able to provide feedback about assets that have been created under the programme. MGNREGS functionaries, such as Gram Rojgar Sahayaks (GRSs) may also be encouraged and involved to carry out mass campaigns and demonstrations sessions of the app in Gram Sabhas and other village meetings and congregations.

Janmanrega app will go a long way in reinforcing the Ministry’s resolve towards good governance along transparency and accountability.

1. Searching for Assets
2. Searching for Nearby Assets, based on User’s Current Location
3. Providing Feedback on Asset.

BENEFITS of JanmanregaSustainable development - Successful implementation of MGNREGA seriously depends on the establishment and operationalization of a proper computer based Management Information System (MIS) that interconnects all the Gram Panchayats, Blocks, Districts, States and the Union Ministry.It ensures public accountability,strengthening transparency and encouraging activities that tap the productive potential of works undertaken so that it becomes a platform for sustainable development.

Publicity - All information available for public access. The date, time, agenda, importance and sanctity of the schema must be widely publicized so as to ensure maximum participation.

Transparency - The accountability and transparency measures in NREGA have proved to be a catalyst for some state governments and civil society organizations to take innovative steps towards developing and institutionalizing accountability tools into the governance system. Janmanrega provides transparency by providing current status and details of the asset created under mgnrega.Lack of transparency and accountability in delivery systems that have allowed corruption to remain unchecked. **Grievance redressal -** It becomes easy with Janmanrega to lodging of complaints through Grievance Redressal System.The Programme Officer will be the Grievance Redressal Officer at the Block level, and the District Programme Coordinator at the District level.A system of appeal will be designed to deal with grievance at each level. Appeal against the Gram Panchayat will be to the Programme Officer. Appeal against the Programme Officer will be to the District Programme Coordinator. Appeal against the District Programme Coordinator may be with and appropriate authority designated by the State Government.All grievances will be disposed of within the time limit prescribed in the Act.

Effective implementation and management - In view of enormous size of the MGNREGA programme it is necessary to make best use of latest Information Technologies . This will not only help in ensuring effective implementation and proper management of the Programme but will also bring transparency and accountability. Since it is a right based programme, mobile phones and mobile applications can be used as IT tool to ensure rights and entitlements. Janmanrega aap have the potential to capture details of the Assets under mgnrega.

Social audit - Janmanrega facilitation of Social Audit.With the help of Janmanrega we can improve the overall delivery system in the implementation of MGNREGA by capturing all the processes right from registration, demand of work, issue of dated receipt, allocation of work,measurement of work and assets created.This makes data transparent and available in the public domain to be equally accessed by

all.

Functions of JAMANREGA :

1. Display of MGNREGA Assets, as location maker over Bhuvan's Administrative Basemap.
2. Display of MGNREGA Assets, as location maker over Bhuvan's Satellite Imagery.
3. By tapping on any location marker, Asset's details and photographs can be viewed within a information window.
4. Assets details like Asset Name, Asset Description, Asset Id, Asset Creation Date, Work Type, Individual Beneficiary, Scheme Used, Cumulative Cost of Asset.
5. Giving Feedback. Under the option 'Give Asset Feedback' optional questions like

a. Whether the citizen information board (CIB) exists?
b. Whether work is complete?
c. Whether the assets and its description match?
d. Whether the asset is useful?

Suggestions and Findings :

1. Mobile phone acts as a mode of communication with people at farther places, with greater ease and lesser time.
2. Janmanrega app will go a long way in reinforcing the Ministry's resolve towards good governance along transparency and accountability
3. It is an initiative towards good governance.
4. It is an interface to improve quality of public services.
5. Both traditional modes of publicity (such as informing people through the beating of drums) as well as modern means of communication (such as announcements on microphones) should be used to make people aware about the new plans and schemes launched by mgnrega.
6. Citizens will come to know about the current status of the asset under mgnrega.
7. With Janmanrega citizens will also be able to provide feedback about assets that have been created under the programme.
8. MGNREGS functionaries, such as Gram Rojgar Sahayaks should carry out demonstrations sessions of the app in Gram Sabha.

Conclusion - The success of the Janmanrega application depends upon the open and fearless participation of all people,particularly potential beneficiaries of the programme. Effective public participation requires adequate publicity about the application as well as informed public opinion. This itself requires that people have prior access to information from the President of the Gram Panchayat. It can considerably improve the confidence of the grass root level workers. It can ensure better public awareness and information flow about the current status of the assets creaed under MGNREGA. Let us hope that Janmanrega implementation would bring in the desired results in the days to come.

References :-

1. Yamini Aiyar, Salimah Samji,1 February 2009 , Transparency and Accountability in NREGA, A Case Study of Andhra Pradesh. Accountability initiative research and innovation for governance accountability.
2. Dr. Manoj P K Assistant Professor, Dept. of Applied Economics Cochin University of Science and Technology (CUSAT), Kochi –682022.(KERALA) Information and Communication Technology(ICT) for Effective Implementation of MGNREGA in India:An Analysis. E-Mail: manoj_p_k2004@yahoo.co.in
3. Poverty and MGNREGS in India, Title:- Rural Development through the National Rural Employment Guarantee Scheme,(NREGS).
4. Encyclopedia of NREGA and Panchayatiraj
5. Letter of Ministry of Rural Development MNREGA Division, Krishi Bhawan, New Delhi. Dated:- 17/08/2017. By :- Aparajita sarangi (Joint secretory MNREGA).
6. Arpita Shrama, Analysis: The Mahatma Gandhi National Rural Employment Guarantee Act – Recent ICT Innovations, G.B. Pant University.

Webography : -

1. http://www.nrega.net/ict/
2. http://www.nrega.net/ict/information/management-information-system/
3. http://www.nrega.net/ict/information/benefits-NREGA
4. https://www.youthkiawaaz.com/2012/04/analysis-the-mahatma-gandhi-national-rural-employment-guarantee-act-recent-ict-innovations/
5. http://timesofindia.indiatimes.com/city/bengaluru/mgnrega-is-most-innovative-indian-programme-joseph-stiglitz/articleshow/53083919.cms
6. Reference_Document_-_Janmanrega_(14-08-2017).pdf

Current Features of the App :-

Background

About MGNREGA

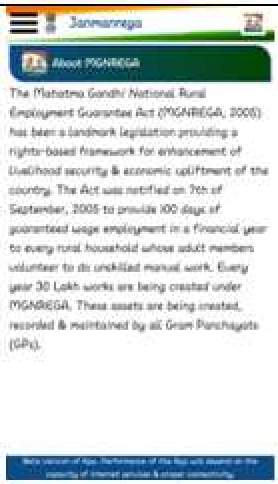

Objectives

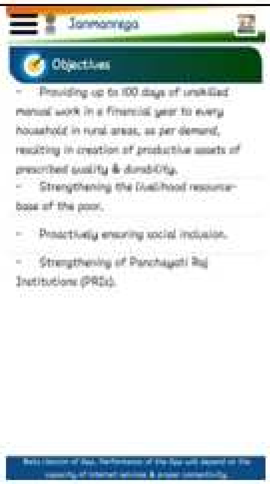

Stakeholders

Ten Entitlements

Works

Referring to Friends

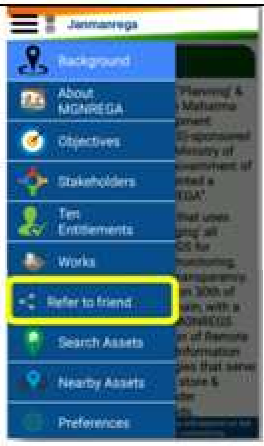

Setting of Preference, for switching between English& Hindi versions

User Registration & Logging-in

User Registration

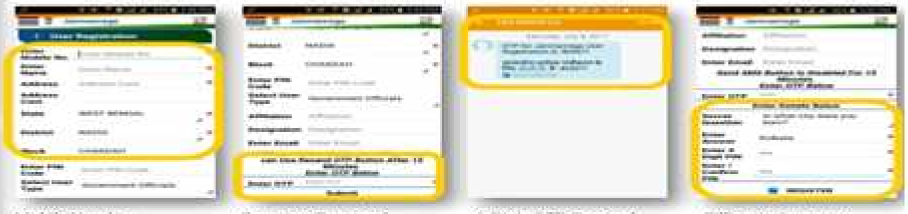

Mobile Number, Name, Address, State, District & Block are Mandatory Fields.*

One-time Password (OTP) Request.

6-Digit OTP Received, as a Short Message Service (SMS).

Filling-in Answer to Secret Question & specifying a 4-Digit Personal Identification Number (PIN)*.*

*** Only after Registration by User, Searching for Assets & Providing Feedback of Assets can be carried out.*

****

Comperative Study Bharat Sanchar Nigam Limited Bharti Airtel Private Limited (Indore Distt.)

Dr. Ashok Verma* Dr. Anita Shinde **

Abstract - Bharat Sanchar Nigam limited the largest public sector& Bharti Airtel private Limited the largest private sector under taking odf the Nation. "Employee re a Companies greatest asset'' and keeping these assets means making sure that They are motivated an satisfied in their job. Monitoring this and making Sure that it is the case depends on effective communication between employees And their managers with any problems they may have. And so a correct Channel of communication needs to be selected and implemented for this Face to face would often be the best method. Removing any hygiene factorFrom an employees. Job through effective communication will help ensure That they are motivate which will lead to greater motivation, and greater Productivity. Today, it has about 36.42 million line basic telephone capacity, 7.13 million WLL capacity, 95.96 million GSM capacity, 34,727 fixed exchanges, 1,17,090 GSM BTSs, 9,594 CDMA Towers, 102 Satellite station 7,73,97 RKm. of OFC, 47RKm. of microconnecting 646 districts, 4519 cities/towns & 6.25 lakhs villages. Bharti Airtel Pvt. Ltd.mobile broadban coverage to all towns Coverage.

Introduction - with a corporate philosophy that considers Human Resource as the most prized assets of the organization, it's natural for BSNL&AIRTEL to continually hone employee skills, enhance their knowledge and their expertise and their aspirations to fruition. Even as BSNL & AIRTEL goes about conducting its business activities, it lays emphasis on constant enhancement of knowledge and skills through regular training programmes.

Bharat Sanchar Nigam Limited has a vast reservoir of highly skilled and experienced work force of about 3,57,000 personnel.Bharat Sanchar Nigam Ltd.& Bharti Airtel Private Ltd.

We believe that our staff, which is one of the best trained manpower in the telecom sector, is our biggest asset.

1. We believe that our future depends on our staff who provide services to our valued customers and stay in touch with them.
2. To meet the technological challenges, employees are trained for technology up-gradation, modernization, computerization etc in BSNL's training Centers spread across Country. These centers are properly equipped with the requisite infrastructure facilities such as Lecture rooms, modern audio-visual aids, libraries, hostels etc.
3. To apex training centers of BSNL i.e. Advance level Telecom Training Center (ALTTC) at Ghaziabad and Bharat Ratna Bhimrao Telecom Training Center at Jabalpur are comparable to any world class Telecom Training Center. Moreover, 43 zonal training centers and a National Academy of Telecom Finance and Management have been running for several years now. Bharti Airtel Private Ltd.training center new Delhi.
4. Different curriculum run in these centers to impart technology based training, training for Attitudinal change, basic educational and skill development program etc.

Bharat Sanchar Nigam Ltd. was incorporated on 15th september 2000 . It took over the business of providing of telecom services and network management from the erstwhile Central Government Departments of Telecom Services (DTS) and Telecom Operations (DTO), with effect from 1st October' 2000 on going concern basis.It is one of the largest & leading public sector units providing comprehensive range of telecom services in India.

BSNL has installed Quality Telecom Network in the country & now focusing on improving it, expanding the network, introducing new telecom services with ICT applications in villages & winning customer's confidence. Today, **it has about 36.42 million line basic telephone capacity, 7.13 million WLL capacity, 95.96 million GSM capacity, 34,727 fixed exchanges, 1,17,090 GSM BTSs, 9,594 CDMA Towers, 102 Satellite Stations, 7,73,976 RKm. of OFC, 4751 RKm. of microwave network connecting 646 districts, 4519cities/towns & 6.25 lakhs villages .**BSNL is the only service provider, making focused efforts & planned initiatives to bridge the rural-urban digital dividin ICTsector.

The company has vast experience in planning, installation, network int switching & transmission networks & also has a world class ISO 9000 certified Telecom Training Institute.During the 2015-16, turnover of BSNL is around Rs. 32,919 Crores.

Bharti Airtel Limited is an Indian global telecommuni-cations services company based in New Delhi, India. It

* Ex.Principal Govt. P.G.College, Sendhwa (M.P.) INDIA
** Research Scholar (Commerce) D.A.V.V. University, Indore (M.P.) INDIA

operates in 18 countries across South Asia and Africa. Airtel provides GSM, 3G and LTE mobile services, fixed line broadband and voice services depending upon the country operation.Itisthe largest mobile network operator in India and the third largest in the world with 400 million subscribers. Airtel was named India's second most valuable brand in the first ever Brandz ranking by Millward Brown and WPP plc.

Airtel is credited with pioneering the business strategy of outsourcing all of its business operations except marketing, sales and finance and building the 'minutes factory' model of low cost and high volumes. The strategy has since been adopted by several operators. Airtel's equipment is provided and maintained by Ericsson and Nokia Solutions and Networks whereas IT support is provided by IBM. The transmission towers are maintained by subsidiaries and joint venture companies of Bharti including Bharti Infratel and Indus Towers in India Ericsson agreed for the first time to be paid by the minute for installation and maintenance of their equipment rather than being paid up front, which allowed Airtel to provide low call rates of ¹ 1 (1.6¢ US)/minute.

Objective -

1. To improve productivity by training and skill development and redeployment Of legacy manpower.
2. developindigenous knowledge pool exposed to latest technological advancements In telecom areawith in BSNL & BHARTI AIRTEL license areas.
3. Be the leading telecom service provider in India.

Training under National Skill Development Scheme - Pursuant to the National Skill Development Scheme, Your Company imparted training to 7121 students, thus achieving a target of 94.9% against the MoU Target of 80% [6000]. Out of7,564 number of students allotted for BSNLAICTEEETP, 7,501 number of students joined the training. Being a leading pan India public sector telecom service provider, Your Company always excellsince the area of disaster management, specially in the areas of faster restoration of communication facilities in the areas affected by natural calamities. During the devastating floods of Chennai, Company swung into action and restored the communication facilities in record time. As part of the nation-wide Swachh BharatAbhiyan,

BSNL Skill Development – Support In Nation Building - Telecom Factories of Company located at Kolkata, Gopalpur, Kharagpur, Jabalpur, Richhai,Bhilai and Mumbai are in-house manufacturing units engaged in production of various telecomproducts. These factories clocked the output of Rs.466.71 crore in the year under review. A target of Rs. 607 crores has been set for the financial year 2016-17.

Computerisation And It ERP Extension of CDR Solutions to new areas ER Management - Telecom Factories of your Company located at Kolkata, Gopalpur, Kharagpur, Jabalpur, Richhai,Bhilai and Mumbai are in-house manufacturing units engaged in production of various telecomproducts. These factories clocked the output of Rs.466.71 crore in the year under review. A targetof Rs. 607 crores has been set for the financial year 2016-17.

BSNLTraining to the Employees - Training to New Recruits:-681 new recruits joined for induction training against the total recruits of 735, and there was an achievement of 100% against the MoU Target of 100%.In-house training to Executives/Non-executives:- Against the MoU Target of 10% of total number of employees of 2,25,867, training was imparted to 40,280 Executives/Non-executives and the achievement is 17.8%

Training under National Skill Development Training - Under this scheme, 7,564 number of students were allotted for BSNL-AICTE EETP and 7,501 number of students joined the training. Against the MoU Target of 80% [6000], a total of 7,121 students were trained, thus achieving a Target of 94.9%.

(see in next page)

Revenue under Training programmes - State of the Art Training Centres of Your Company have generated a Revenue of Rs.41.63 crores during the year under review, comprising Rs.27.63 Crores in providing vocational training and training infra sharing; and Rs.14 crores from training under BSNL AICTE Employability Enhancement Training Programme.

Foreign Deputations - Training programmes and for Attending exhibitions/meetings/conferences/ business visits to get first hand information on latest telecom technology developments.Access for the cycle 2015-18. Two face to face training programmes were scheduled as part of Broadband Access Network Planning Programme. Government policies with regard to reservations for various categories of employees in the matters of recruitments and promotions are being followed.A glimpse of representation of Scheduled Caste, Scheduled Tribe, OBC, Ex-Servicemen, PhysicallyDisabled employees and their representation as on 31.3.2016

Implementation Of Official Language Policy Compliances BSNL& Bharti Airtel - BSNL Company was conferred with the Dalal Street Investment Journal Best PSU Award 2015, in the category of Highest Turnover PSU in Mini Ratna – Non manufacturing.

Company completed the prestigious SBI 2 Mbps BW up gradation project in a record period of 3 months. In recognition of the same, airtel the SBI has awarded the **"Certificate of Collaboration Excellence"**, to the Company.

In line with the directions contained in the Right to Information Act 2005, BSNL&BHARTI Airtel Company Unicode software has been installed in all the computers to encourage increased use of Hindi in official work and employees are also trained to use Unicode software. OL Wing carries outinspection of Circles. Skill development workshops are held frequently for sharpening the skills ofemployees.

All theIn collaboration with theGovernment of MadhyaPradesh, launched an internet literacy programme - 'e-Shakti',to build internet awarenessand access for women

workingwith various governmentdepartments and for girlstudents of government-runschools and colleges 500,000+Villages in the countrywill be offered mobile broadband100,000Solutions will be offered through a combination of Wi-Fi hotspots, small cells and indoor solutions 70%Reduction in our carbon footprint 160,000+ Base station deployments.

'In Employees' Wellbeing Bharti Airtel - Bharti Airtel acknowledges the immense potential of its human capital, and therefore, 'Win with People' believes that its success depends on its ability to develop pC company strongly believes 'Win with People' is essential to continue winning in the market. This belief translates in ensuring that every business vertical is equipped with right talent, which is both competent and engaged. The Company achieves this objective by undertaking various initiatives for talent development, employee engagement and communication. This approach has helped the Company in building an organization, which is not only inclusive and entrepreneurial employer by its people. Bharti Airtel has consistently tried to create and promote an inclusive work environment for employees from diverse backgrounds to help them realize their full potential. The objective is to ensure that the -strong workforce of 18,179 employees are both skilled and engaged; and that the organization is perceived as being inclusive, entrepreneurial and an equal opportunity employer. There were 4,968 subcontracted employees as on March31, 2016. During the period, there were no temporary and casual employees. Being in service industry, the Company does not have any labour union or association in the organization. How ever, employees have full access to management to raise their concern at any time without any fear / coercion. All the concerns or issue raised by employees are resolved satisfactorily. The Company is fully committed to the promotion of diversity across all levels of the organization. There were1,491 permanent women employees, which represented around 8% of the total workforce. A total of 123 people with disabilities were employed at various company locations. To nurture workforce diversity, with a particular focus on gender, the Company has implemented practice of its women employees. the Company has conducted awareness and training programmes for employees with respect to this law. Training sessions were also conducted for all members of the Internal Complaints Committee on the legal and practical aspects to enable the members to deal with investigations. Eight cas during the year; and all procedures were followed.

155+ Unique training interventions for the Company's employees, of which over 130 comprised functional training.

Conclusion - Human resource as the most prized assets of the organization, its natural for BSNL Bharti Airtel private limited to continually hone employee skills, our huge Helps us create differentiated experience for our customers through at attractive Portfolio of products and service. our staff which is on of the best trained manpower In the in the telecom sector, is our biggest asset. Employee are trained for technology Up gradation moderzation,computerization BSNLs are training centers spread across Country ,telecom training center at Jabalpur are comparable to any world class telecom training center. BHARTI Airtel private limited training center at Indore in Madhya Pradesh more ever 43 zonal training centers and a National Academy of telecom financial And management have been running for several years now..today ,it has about 36.42 Million line basic telephone capacity 7.13 million WLL capacity, 95.96 million GSM Capacity 34,727 fixed exchanges, 1,17,090,GSM BTSs, 9,594 CDMA OFC, 4751 RKM. OF Microwave network connecting 646 districts ,4519 cities/ towns 6.25 lakhs villages Bharti Infratel and Indus Towers in India.

References :-

1. "BSNL bags 80% of Rs 2,500-crore rural mobile telephony project". The Hindu. Chennai, India. 28 March 2007.
2. Pahwa, Nikhil (29 May 2010). "India's 3G Auction Ends; Operator And Circle-Wise Results". MediaNama. Retrieved 3 September 2014.
3. "BSNL 3G Services Now In 826 Cities In India". 15 July 2011. Retrieved 29 August 2012.
4. "BSNL releases 3G wireless pocket router".
5. "BSNL decides to discontinue 160-year-old telegram service". The Times of India. 12 Jun 2013. Retrieved13 June 2013.
6. "Overview". Airtel.in. Retrieved 12 November 2015.
7. "Telecom Subscription data, June 2015" (PDF). TRAI. Retrieved 30 October 2015.
8. "Airtel becomes third largest globally". NDTV. 30 June 2015.
9. "HDFC Bank named India's most valuable brand in BrandZ ranking"

Table 1 - BSNL Training to the employee -

31-3-2016

Group	Total no.of employee	Scheduled cast	Scheduled tribe	OBC	Ex.service men
Executive	44,906	7,574	2,362	6,367	105
Non-exe.	1,66,180	31,825	8,897	15,190	248
Total	2,11,086	39,399	11,259	21,587	353
31-3-2015					
Executive	46,694	7,729	2,388	5,986	138
Non exe.	1,78,818	32,586	9,303	14,582	404
Total	2,25,520	40,311	11,691	20,568	542

Source- BSNLannual report 2015-2016

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to September 2017, Vol. I

Is provide monthly salary package avoided suicide by the farmers : an analytical study(Special Reference To The Farmers Of Madhya Pradesh State)

Dr. Rajesh Jain*

Abstract - Agriculture is gambling of monsoon. On one side production cost of crops increase more than 200% within last 20 years, prices of equipments-labours-fertilizers-pesticides and other expenses rates also be increased but other hand income of agro product not to be increase proportionally. Therefore farmers taking loan year-by-year and trapping in the cycloid of interest. Finaly they took step for suicide. In this paper, I tried to find basis reasons of suicide by the farmers and also to be find the solution of that problems. One of the best solutions of above problems to provide monthly salary package. It not only provide financial help to them but also will be decrease percentage of taking loan and suicide data in future.
Keywords - gambling, pesticides, trapping, package, suicide.

Introduction - In Madhya Pradesh, Agriculture is gambling of monsoon. Every year state's farmers are uncertain mood for their crops and incomes. It may be bumper crops in a particular year or may be failure due to dryness or flood in the state. As the nature of the income from agriculture is uncertain or low therefore farmers are taking loan from various registered and non-registered financial institutes for complete their finance requirements. Due to compound rate implementation on principal and pending of old loans, farmers are suppress under the weights of loans. Finally, due to stress farmers take step for suicide. There are 11000 farmers took suicide within the duration of last 10 years in Madhya Pradesh.

Causes of Low Productivity in Agriculture

1. Population Pressure - One of the important resources Land is limited, and has almost reached the level where more expansion in cultivated area is not possible. The growth in population creates immense pressure on land. Even though land-human ratio in India is better compared to some of the developed countries like Japan, the Netherlands, Belgium and even China, other factors like very low yields and low levels of industrialisation in India compound the problem of population pressure on agricultural land.

2. Uneconomic Holdings - The average size of landholdings in India in 2001 was less than two hectares. One-fourth of the total rural households own less than 0.4 hectare each, while another one-fourth are landless. This creates difficulties in application of modern inputs, adoption of scientific land improvement, water conservation and plant protection measures and in introducing mechanised operations. These measures alone are capable of securing and stabilising high yields. The tardy progress of land reforms in most states has compounded this problem. Consolidation of land can help improve productivity.

3. Uncertain Monsoons and Inadequate Irrigation Facilities - With more than half of the gross cropped area being rainfed, failure or inadequacy of rains causes fluctuation in yields. Even if the maximum irrigation potential is realised, around 86.5 mHa of gross cropped area will remain under rainfed conditions. This underlines the need to develop rainfed agriculture on scientific lines.

4. Subsistence Nature of Farming - As we know that Indian agriculture is characterized by its subsistence nature, i.e., most of the produce is directly consumed by the producers and surplus, if any, is generally low. This is because most Indian farmers, being poor, use outdated implements and technology, and are not able to afford costly inputs. This results in low levels of returns and meagre incomes, which in turn means low savings and low levels of reinvestments. Thus, a vicious circle operates and stagnation in agriculture prevails.

5. Decline in Soil Fertility - For an agricultural country like India, soil is a precious resource, and degradation- of soil is a serious problem, which leads to depletion of soil fertility. Soil erosion is the main form of degradation which occurs because of deforestation and unscientific agricultural practices like shifting cultivation. Increasing salinity, alkalinity and aridity because of mismanagement and repeated use are other reasons for loss of soil fertility.

6. Lack of Support Services - This refers to the institutional support factors like support pricing, marketing and credit facilities. These services help create a favourable environment to induce a spirit of entrepreneurship among farmers by absorbing the risks involved in the agricultural

* **Asst. Professor (Commerce) IPS Academy, Indore (M.P.) INDIA**

activity. These services are particularly inadequate in case of coarse cereals, and pulses.

7. Poor Organisation of Resourdces and Lack of Entrepreneurship - India has an under-developed agricultural infrastructure and institutions. Conditions of poverty and deprivation and unequal distribution of land resources hamper the evolution of an agricultural entrepreneur class. An underdeveloped agricultural sector on account of low productivity is the main reason for low levels of diversification of the economy. A buoyant agricultural sector has been the basis for industrial development in the developed countrie.

Review of Literature - Gupta Raman (2012) topic – " Increase of unemployment in agricultural sector of nimar " study founded that short rainfall in nimar sector from the last seven years, farmers could not getting proper revenue from the crops and it's a lossable activity for them. Vohra Pooja (2014) topic – Role of banking sector for the development of agriculture "result of this study analyzed that banking institutes provided loans to the farmers on their commercial or non-commercial purpose but improper routine of income, farmers could not repayment loans on time. Jain Sunil (2015) topic – A study of farmer's problems in India founded that high rate of seeds and agriculture equipments, average returns from agro-product push them in depreciation and select way for suicide.

Rationale of Study - The present study is to analyse the unfavourable income from agriculture to the farmer of Madhya Pradesh. Due to costly availability of fertilizer-pesticide, average return of crops in seasons, farmers pushup more burden of loans and take suicide. To avoided this accident, government should provided monthly income to the farmers. It not only helpful to build financial strong position for the farmers but they will also avoiding to take steps for suicide. The significance of the study was to find the reasons of increasing suicide of farmers in mp and to remove them.

Objectives of Study - The objectives of this study were :

1. To know the reasons which are responsible to increase suicide rate of farmers in Madhya Pradesh.
2. To find the way to be control on suicide figures and improve morale status of the farmers
3. To find the alternatives that to be increase financial position of the farmers

Research Methodology :

Research Design - Study area of the farmers for the survey is Madhya Pradesh state.

Sample Design - Sampling method here used is 'Random Sampling Method.'Random Sampling Method was used because it was not known previously as to whether a particular farmer taking loan or not.

Tools for Data Collection - The new gathered data which help to solve the problem in hand which is especially collected for the particular research is known as primary data. Here primary data that are collected in the course of research consist of original information that comes from farmers and includes information gathered from surveys and questionnaires. Information that are already exists somewhere, having been collected for another purpose, is known as secondary data. Here in the research the secondary data was collected through various books, magazines and websites. The geographical area covered for the sampling of the study is related to MP state.

Data Analysis and Interpretation

Table 1 and Graphs 1 & 2 (see in last page)

Interpretation - From the table 1 and graphs 1 & 2 analysis, data shown that in condition of non salary package farmer's net & final income Rs. 62400 where investment nearby Rs. 500 only. When salary package provided by the government, final income of farmers update till 278400 & amount of investment increase till Rs. 15000.

Table 2 : Conditions of Loans with / without Salary Package

Particular	Loan taken before salary package	Loan taken after salary package
a) Loan taken for agricultural purpose	190000	80000
b) Loan taken for non-agricultural purpose	65000	17000
Total Loan Taken	255000	970

Graphs 3 & 4 (see in last page)

Interpretation - Without salary package farmers taking loan Rs. 255000 on which 190000 for productive purpose & remain for non-farming use. But after getting salary package amount of total loan decrease by 158000 in which contribution of agro field 82% and 17% for non- agriculture purpose.

Findings :

1. Before salary package farmers average yearly income is 62400 and there are no other resources of income.
2. After providing salary package farmers total income might be increase by 216000 which helpful to reduce the burden of farmers.
3. When salary package not available to the farmers then investment done by them nearby 0.5% to 2% but after package provide it may be increase between 5% to 8%.
4. Without help of salary package farmers should have to take loan Rs. 255000 out of agro loan 190000 and for other purpose Rs. 65000.
5. Providing the facility of salary package amount of loan taken reduces till 97000 in which amount for non agro loan only Rs. 17000.
6. Due to provide salary package it might be reduce suicide rate of farmers in Madhya Pradesh.

Suggestions :

1. Salary of Package should be provided to the farmers as it be reducing their financial burden.
2. Government should be more provided incentives and subsidy on fertilizer and agricultural equipments which will be beneficial for farmers on financial ground.
3. Different institute can advertise salary package sys

tem and their benefits to the farmers.

4. Facility of salary package should be including in high range of exemption under income tax act.
5. Proper controlling of the government on agriculture markets transactions due to avoided exploitation of farmers.

Conclusion - It is to be clear that agriculture activity in India totally be dependent on rainfall which nature is uncertain. Therefore the nature of farmer's Income also not be certain. If any year raining in a form of flood or dry seasons and damage crops, losses suffer by farmers on financial ground. Due to pending prior loan and repayment of them farmers again taking new loan. This process continues year by year and farmers become trapping in the cycloid of interest. It will become the major causes for taking suicide. To be avoiding this situations, government bodies should be require making a plan to provide monthly salary package to the farmers. Salary package scheme not only will be helpful on financial ground to the farmers but it wills also avoiding suicide mentality. Farmers are one of the important part of our society as their contribution is major for our economy so its necessary to solve their financial problems. And providing salary package is one the best solution of that problem.

References :-

1. Mamoria, C.B. (2014), "Agricultural Problems of India", Jain Brothers.
2. Rao, B. Sambasiva (2015), " Agricultural in India – Policy and Performance", Serials Publication
3. Deb, Bimal J (2014) "Changing Agricultural Scenario in North East India", Concept Publishing Company
4. Ramachandran (2015), " Corporatization in Agricultural ", Anmol Publication
5. Deshpande,R.S.(2010),"Agrarian crisis and farmer suicides", Shree India
6. Kumar Nilotpal (2016), "Unraveling Farmers suicides in India", Amazon Publishing
7. https://en.wikipedia.org/wiki/Farmers%27_suicides_in_India
8. www.hindustantimes.com/india.../farmer-suicides...india.../story-GKLoObJeDtbH2Z2...
9. www.indiacelebrating.com/essay/farmer-suicides-in-india-essay/
10. https://thewire.in/52228/what-is-the-future-of-agriculture-in-india/
11. https://en.wikipedia.org/wiki/Agriculture_in_India
12. www.iegindia.org/ardl/Farmer_Incomes_Thiagu_Ranganathan.pdf

Table 1 : Income with / without salary package

Particular	Farmer's Average Income [Before Salary Package]	Farmer's Average Income [After Salary Package]
(A) Earning from Sales of Crops[wheat, rice, pulse, cotton, fruits & vegetiables etc.]	114000	114000
(B) Expenses regarding Agriculture [seeds, fertilizer, pesticides, Land, tractors, irrigations, transport – loading charges etc.]	51600	51600
Net Income [A – B]	62400	62400
Income Tax Burden	Nil	Nil
Salary Package	Nil	216000
Final Income	62400	278400
Investment (if any)	0.5% to 2%	5% to 8%

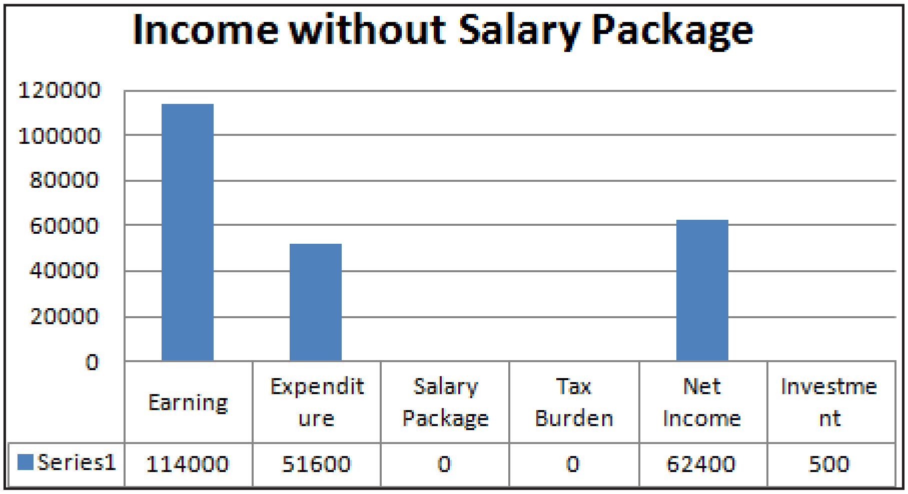

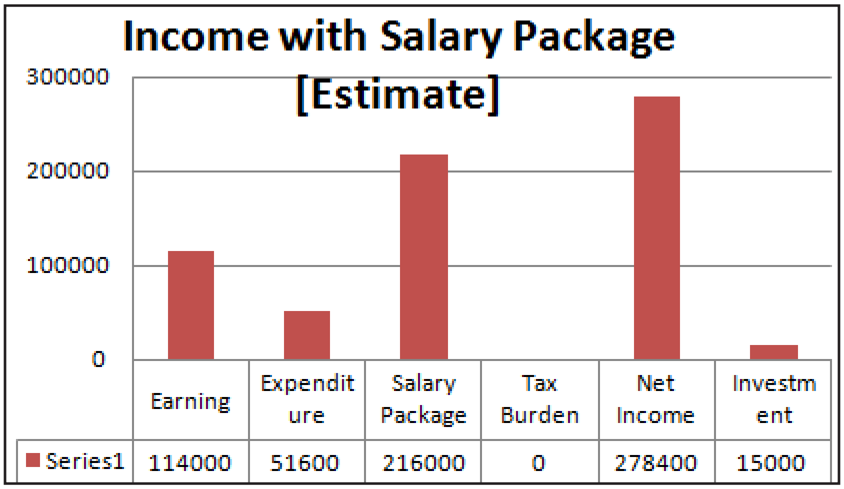
Income with Salary Package
[Estimate]
300000
200000
100000
0
Earning
Expendit ure
Salary Package
Tax Burden
Net Income
Investm ent
Series1
114000
51600
216000
0
278400
15000

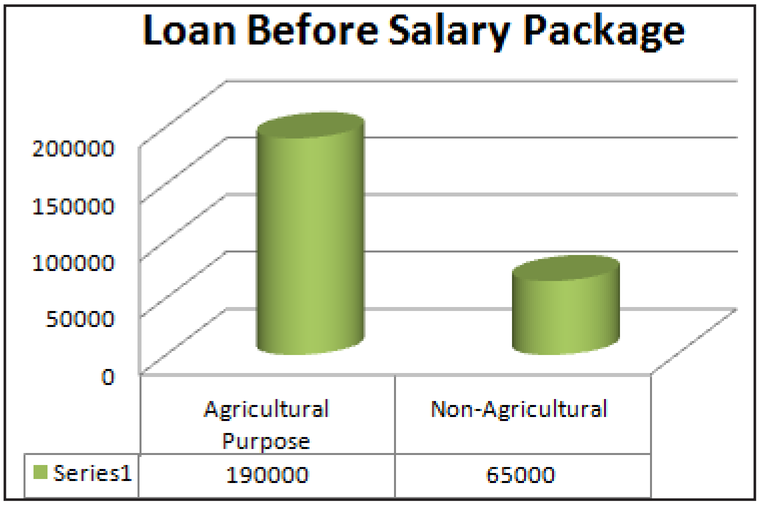
Loan Before Salary Package
200000
150000
100000
50000
0
Agricultural Purpose
Non-Agricultural
Series1
190000
65000

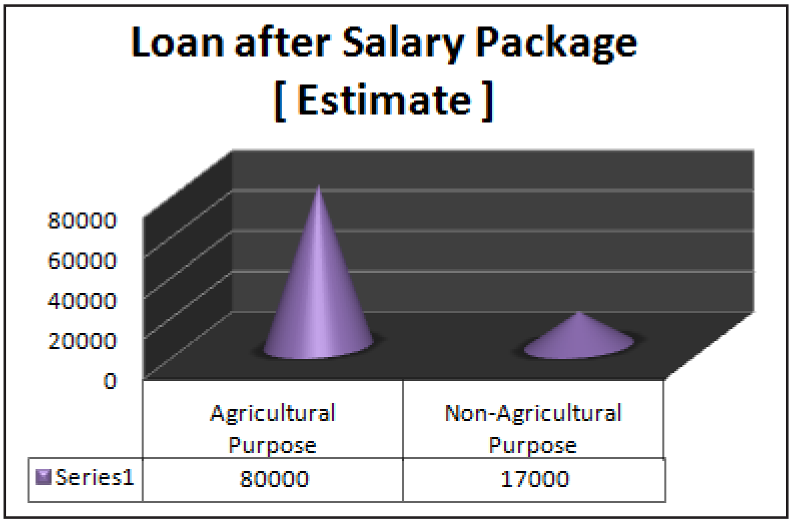
Loan after Salary Package
[Estimate]
80000
60000
40000
20000
0
Agricultural Purpose
Non-Agricultural Purpose
Series1
80000
17000

****

A Critical Evaluation Of Working Capital Management Of Rajasthan Co-Operative Dairy Federation Ltd. (RCDF)

Dr. Nuzhat Sadriwala *

Abstract - Dairy sector in India is ensuring a vital position for the livelihood of many people. Its role in poverty alleviation and inclusive growth is commendable and without which it is hard to imagine the livelihood of the people of the rural India. Dairy cooperatives can bring together the aims of increasing milk supply, enhancing incomes of poor rural households and promoting economic participation of women. This paper analyses the financial efficiency of Rajasthan Cooperative Dairy Federation Ltd. (RCDF) In India. The main objective of the paper is to understand the liquidity management of Rajasthan Dairy Federation Ltd. region as well the problems in liquidity management of these units. In this paper we have used secondary data for analysis of working capital liquidity and profitability of RCDF. We have included last two year datai.e. 2015 and 2016 for comparing the working capital of different units we have used ratio analysis technique and common size statement technique.
Key words - Financial efficiency, Ratio analysis, financial viability, working capital management.

Introduction - Working Capital management and liquidity is an integral part of overall financial management. A firm may exist without making profits but cannot survive without liquidity. Effective working capital management has always increased profitability of the firm. Efficiency of working capital management is determined by the efficient administration of its various components like cash management, accounts receivable management, and inventory management. The adequacy or inadequacy of working capital in a business is to be judged from the nature of business, its operating cycle, the working capital turnover, the size of business and other factors. These factors influence the working capital needs of the business. The ratios may not be a guiding factor for all times to come in the life of a business. If cash not managed and utilized properly, the milk processing plant fails. The researcher has identified RCDF which faced financial difficulty owing to cash inflow problems. The researcher prepared the case and tried to identify the various reasons.

Literature Review - Working capital starvation is generally credited as a major cause if not the major cause of small business failure in many developed and developing countries (Rafuse, 1996).Desai D.K. and Narayanan A.V.S. (1967) sought to measure the impact of modernization of the dairy industry on the economy of Kheda district in terms of investments, value-addition, and employment and infrastructure facilities. The authors could ascertain positive developments in all the above parameters. Working capital starvation is generally credited as a major cause if not the major cause of small business failure in many developed and developing countries (Rafuse, 1996).Shin and Soenen, (1998) highlighted that efficient Working Capital Management (WCM) was very important for creating value for the shareholders. The way working capital was managed had a significant impact on both profitability and liquidity. Kale et al (2000) studied the financial position working and operational efficiency of 23 dairy cooperatives in Raigad district of Maharashtra. They studied the economic efficiency through income expenditure ratio, expenditure income ratio, rate of return on capital and rate of turnover. J. Panda and A.K. Satapathy. It covers a study of 10 private sector companies engaged in production of Cement. The study covers the various aspects of working capital period from 1965 to 1985. He had analyze working capital position of selected units as a whole and as well as individual analysis.A study by Amarjit Gill 1, Nahum Biger 2, Neil Mathur 3 (2010), under the title “The Relationship between Working Capital Management and Profitability: Evidence from the United States”, the aim of this paper is to find the relationship between working capital management and profitability.

Literature reviewed signifies the importance of efficient management of the account receivable practices to generate sufficient cash from operations to ensure the short term survival and growth of business. Small firm needs to managed their working capital in an efficient way as it significantly decides the business success or failure.

Objectives of the study :

1. To examine the management of working capital of the co-operative dairy with the help of ratios and common size statement analysis in Rajasthan cooperative Dairy Federation Ltd.
3. To know the marketing cost by efficient administration of its various components like accounts receivable and

* Assistant Professor, Department Of Accountancy And Statistics, R.M.V. Girls College, Udaipur (Raj.) INDIA

cash.

3. To find out the reasons for inefficient liquidity position of milk processing plants on the basis of financial statement analysis.
4. To give suggestion to follow appropriate financial strategies i.e. short term as well as long term for future.

Research Design and Methodology - Annual statements (2014-15, 2015-16) collected from the dairy plants. Websites, research journals, government published reports, newspapers, referred. Case study prepared and data analysed with the help of MS Excel sheet used for further data processing. Further annual statement of the dairy was analysed with the help of ratio analysis tool and common size statement analysis to diagnose the problems. The important ratios identified which influence contribute substantially in dairy plant failure or success. The decisions taken and reasons thereof analysed. The table shows major ratios calculated to diagnose the health of milk dairy plant.

Table No. 1

RATIOS	2015	2016
Net Profit Ratio	.55	2.76
Current Ratio	.095	.125
Liquid Ratio	.011	.009
Stock To Current Assets	0.004	0.006
Advances To Current Assets	0.161	0.103
Cash And Bank To Current Assets	0.0188	0.0127
Stock Turnover Ratio(STR)	25.398	31.83
STR (Days)	14 days	12 days
Debtor Turnover Ratio(DTR)	12.27	15.36
DTR (Days)	29.23	67.26
Creditor Turnover Ratios(DTR)	15.11	10.72
CTR (Days)	24 days	34 days
Debt To Equity Ratio=LTD/SE +R&SUR	1.03	1.05
Total Debt Ratio=Debt/TA	0.22	.79

Interpretation - The above table depicts that thefinancing structure of the dairy plant indicated through Debt to equity ratio. In the year 2015, it's observed that the debt to equity ratio was 1.03 which increased to 1.05 in 2016. The total debt ratios in the year 2015 and 2016 was 0.22 &0.79 respectively. It indicates that the debt component is around 79% of the total assets. The current ratios increased from .095 to .125 in the year 2015 to 2016.But if we look at debtor turnover in days, it's observed that it decreased from 12.27 to1 5.36 days in 2015 to 2016.It indicates that the payment from the customer is delayed or dairy plant is delayed to recovermoney from the debtors. At the same time, if we take a look at creditor turnover in days, the payment of the supplier delayed by the plant from 24 to 34 days. It is an indication that the dairy plant doesn't have adequate money to pay the creditors. Hence the payment is delayed. The net profit has shown an increase from .55 in 2015 to 2.76 in 2016 which has contributed in the increase in liquidity of the dairy plant.But, still more liquidity is needed to make early paymentsto its creditors.

Table No. 2 (See in next page)

Observations and findings :

1. The current ratio is very poor being .125 which is very far from standard current ratio i.e. 2:1. Dairy plants account receivable practices are not satisfactory as it has shown an increase from 12 to 15 days. The plant has either offered a liberal credit to customers or failed to select a right customer on their credit worthiness. The current ratio is also poor. This is bad sign especially for the high turnover low margin industry wherein the procurement cost constitutes around 94% of the total milk sale. The reason sighted by the director to continue the supply of milk sale to those customers with an anticipation that customers will not pay if milk supply stopped to them. It shows lack of professionalism in following the sound debtor management practices like selecting proper customers on the basis of credit worthiness, setting formal debtor policies and ensuring prompt recovery from the customers or taking business decisions on the basis of debtor aging schedule and daily cash inflow and outflow. The plant authorities might be lacking in financial aspects of management due to poor financial knowledge and skills.
2. On the basis of common size statement analysis, it is observed that the net profit has increased to a good extent but also the dairy plant spend much on their financial cost and their employees. The poor marketing especially in identifying and selecting the wrong customers without verifying their credit worthiness or financial standings. This is clear from the slower or almost non recovery of payments from the customer. The poor cash inflow brings the dairy plant in financial difficulty as it fails to fulfil the current obligations on the basis of current operations of dairy plants.
3. If we look at the dairy plants capital structure, it is debt ridden. It is 79 per cent of the total assets. Debts brings financial obligations of paying interest along with principal and that is risk to the dairy plant. It significantly influences profit and risk. The plan though earned profit but not sufficient which is not enough to pay bank interests and principal. Hence, capital structure decisions substantially affect the working capital performance if finance not allocated and utilized properly.

Conclusions - The study on financial efficiency of RCDF Ltd. is not so satisfactory. The more efficient the milk processing sector in its management particularly the financial management, the more benefits it can pass on to all the stakeholders. On the contrary weak financial management of the milk processing plants led to failure of milk plant and economic drainage of resources. Hence it is important that milk processing industry to be healthy, it should keep on increasing its profitability as it is crucial and significant factor for survival, growth and long term sustainability of milk processing plant. Health of the business depends upon the sound financial management practices and their proper implementation, monitoring and control. The short term survival of business depends upon

the effective management of the current assets and current liabilities. If any business has to thrive or prosper, then they need to make their cash position healthy and ensure that cash inflow and cash outflow properly managed so that short term failure can be avoided.The financial manager must determine the satisfactory level of working capital funds and also the optimum mix of current assets and current liabilities. Dairy plant especially need to refine their account receivable management practices on the basis of sound financial management practices which ensure timely, regular and healthy cash inflow by selecting the right customer, ensuring strict recovery, eliminating poor customers and implementing formal credit policy.

References :-

1. Amarjit, Gill., Nahum, Biger., and Neil, Mathur. (2010). “The Relationship Between Working Capital Management And Profitability: Evidence From The United States”.
2.] Shin, H.H and Soenen, L. 1998. “Efficiency of working capital and corporate profitability”,Financial Practice and Education, Vol 8 No 2.
3. Kale, N.K., Tilekar, S.N., Borude, S.G. and Hinge, B.J., 2000, “An economic enquiry in to working of dairy cooperatives in coastal area of Maharashtra”, Indian Coop Rev., 38(4): 426-433.
4. Technopak. (2010). Public Private Partnership in Indian Dairy Industry 2010. Retrieved 17 June 2011.
5. Vyas V.S. and Chauclari. K.M., “Economics of Dairy Farming in Mahasana District”, Airthvikas, Vol I, No.2, July 1971, pp.20-40.
6. Desai D.K. and Narayan. A.V.S.”Impact of Modernization of Dairy Development in Kheda District”,1967.
7. Rafuse, M. E. 1996. “Working Capital Management: An Urgent Need to Refocus”. vol 6 no.
8. Panda, Jagannath, and Asit Kumar Satapathy. Working Capital Structure of Private Enterprises: A Study of Cement Industry. Discovery Publishing House, 1988.
9. http://www.development-of-dairyindustry-in-india
10. http://www.dairyknowledge.in/article /01-share-agriculture-and-livestocksector-gdp

Table No. 2

PARTICULARS	2015	COST % OF SALES	2016	COST % OF SALES
Sales	4,300,918,774	100	6,351,531,104	100
Procurement Cost	3,956,920,937	92	6,148,189,242	94
Processing Cost	6,565,273	0.153	6,965,064	.11
Employee Cost	237,330,216	4.518	120,116,986	1.89
Selling & Distribution Cost	22,839,645	0.53	15,801,228	.25
Administration Cost	7,393,527	0.172	7,027,049	.11
Financial Cost	143,136,888	1.627	70,523,952	1.11
NET PROFIT	23,820,009	.5538	175,458,979	2.76

****

An Empirical Analysis of Mandatory Disclosure Practices in Listed Manufacturing Companies in India

Dr. Sunil More Jindal * CA Mukesh Agrawal **

Abstract - Manuscript Type: Empirical. Research Question/Issue: The present paper attempts to analyze the level of mandatory disclosure practices among the biggest manufacturing companies in India in the time period 2011-2012 to 2015-2016 and its effects on performance and profitability.
Research Findings/Results: Using the survey of 13 manufacturing companies with the Standard & Poor's score card to assess the mandatory disclosure practices of the companies as a benchmark. It is observed that among the sample manufacturing companies HUL are high disclosure companies and Whirlpool are low disclosure companies in mandatory disclosure practices.
Theoretical Implications: The results of the study support theoretical arguments that mandatory disclosure increases performance.
Practical Implications: A country's government environment—especially legal and market infrastructure—highly affect the companies' rate of disclosure which then increases profitability. To policy makers and practitioners, the results suggest that disclosure should be monitored. Good legislation and a market environment that is free from corruption are essential for mandatory disclosure to be efficient.
Keywords - Mandatory Disclosure Practices, S&P, Listed Companies and Transparency and Disclosure

Introduction - Present day financial improvement to a significant degree relies on upon the accessibility of capital. In creating nations where the objective is to have quick financial development, capital is exceptionally fundamental to build the yield and the supply of monetary products for the advantage of individuals from society. The monetary data ought to be accessible in such a shape, to the point that these invested individuals having various financial premiums are equipped for supporting their activities in an intelligent and objective way. The most critical perspective is the announcing of financial achievement or disappointment of the monetary units that control and utilize the considerable bit of the rare capital assets of the nation.

According to **Healy and Palepu (2001)**, "disclosure comprises all forms of voluntary corporate communications, for example, management forecasts, analysts presentations, the annual general meetings, press releases, information placed on corporate websites and other corporate reports, such as, stand-alone environmental or social reports".

Review of Literature - Jawahar Lal (1985) in his published thesis entitled "Corporate Annual Reports - Theory and Practice" has examined the disclosure practices of manufacturing companies in the private sector. Dr. Lal has considered fifty items for measuring the extent of the quality of disclosure in the annual reports of 180 companies selected for the study. He has examined mainly the impact of four company characteristics, namely - asset size, earning margin, nature of industry and association with a large industrial house - on the quality of XLVII disclosure. He has concluded that there has been a considerable improvement in disclosure quality during the period under study. He has discovered that of the four characteristics, the size of the company has better association with the extent of disclosure than any of the other three variables.

Kohli (1998) made a comprehensive attempt to compare the current status of disclosure level of Indian and U.S. companies for the years 1990-91 to 1994-95.The study was based on 100 Indian and 100 U.S. companies. An index of 212 disclosure items of both 26 mandatory and voluntary nature was prepared. The influence of company attributes like size, profitability, age, nature of industry and auditing firms on the disclosure level of Indian as well as US companies was also studied. Findings of the study showed that there was improvement in mean disclosure score of Indian companies over the period of study. Total assets, turnover, profits, age of the company and auditing firms had a positive and significant effect on the disclosure score. Indian companies lagged behind in the matter of disclosure of corporate information. Study suggested that in order to make the corporate annual reports more informative and decision oriented, these must provide detailed information

* H.O.D (Commerce) Govt. College, Anjad, Distt. Barwani (M.P.) INDIA
** FCA, ISA(ICAI) School of Commerce, D.A.V.V., Indore (M.P.) INDIA

about their future plans and policies.

Sarkar(2011) analyzed the mandatory and voluntary disclosure practices of public limited companies in India for the year 2009-10.For the purpose of the study published annual reports of 12 companies selected on the basis of 10 BSE Sensex stocks in descending order of their market capitalization as on 31-3-11 were scanned. The author identified 22 items of mandatory disclosure and 32 items of voluntary disclosure. Findings of the study showed that there was 100 percent disclosure for mandatory items but wide diversity in the type and presentation of voluntary disclosure among companies. He suggested a common framework for presentation of information in the annual reports to meet the test of comparability and said that failures should also be reported in the annual reports.

Objectives of the study :

1. To study mandatory disclosure practices in Manufacturing companies.
2. To dwell upon mandatory disclosure practices in selected manufacturing companies in India.
3. To study the correlation between mandatory disclosure and performance of companies.

Research Methodology - The present study surveys the mandatory Disclosure practices in Indian Corporate Manufacturing sector. For this purpose it makes use of secondary data. The study adopts on the sample companies to assess the efficiency of its Disclosures. Further, the study makes a judicious use of the various reports of the Ministry of Corporate Affairs, SEBI and other global agencies. The study involves using the mandatory disclosure scorecard to rate the disclosure practices of the sample companies.

Tools used for Analysis - In the first part the study extensively makes use of the disclosure scorecard developed by Standard & Poor's to assess the mandatory disclosure practices of the companies. This scorecard consists of 85 items with a maximum score of 85 and was designed to ensure maximum objectivity in assessing the companies.

The data collected (secondary data) was classified, calculated, tabulated and analysed using appropriate tools such as percentages, One-way ANOVA.

Mandatory Disclosures Practices in Sample manufacturing Companies by Using Score Card - Various regulatory bodies have issued different regulations to improve the disclosure practices of manufacturing companies from time to time. After consulting the provisions issued by these laws and by scanning the annual reports of the selected manufacturing companies an index of 85 items is prepared. Further these 85 items are divided into 4 sub-heads i.e. statutory disclosure , director's report, balance sheet abstract and disclosure as per accounting standards issued by ICAI (Institute of Chartered Accountants of India). Disclosure results of the companies have been analyzed for all these 85 items.

Table:1 Selected key mandatory disclosure parameters: Index Of Mandatory Items

Category	Number of items	Percentage
Statutory disclosure	64	75.29
Balance sheet abstract	5	5.88
Directors Report	10	11.76
Disclosure as per accounting standards	6	7.06
Total	85	100

Source: Researcher compilation

Table:2 (see in next page)

Anova result of MDI

Groups	Count	Sum	Average	Variance
ABNL	5	360	72	4
Apollo tyres	5	315	63	2
Asian paints	5	390	78	10
NMDC	5	380	76	2
Pidilite	5	375	75	10
Bajaj auto	5	395	79	6.5
Havells	5	370	74	2
Whirlpool	5	310	62	5
HUL	5	415	83	6.5
United Spirit	5	355	71	4.5
BOMBAY DYEING	5	380	76	6
L&T	5	410	82	6
Ultra tech	5	380	76	6

Source: Researcher compilation

Company-wise mandatory disclosure of manufacturing companies reflect that HUL and L&T is having highest disclosure score than other companies (83, 82 mean scores respectively). Higher percent change in disclosure score over the year is in Bombay dying. The ANOVA results of score card wise sample of the Manufacturing companies. It is observed that F value 36.5012 is highly insignificant. So the top 13 Manufacturing companies behave very differently with respect to MDI Disclosures.

Conclusion - In the study, we have analyzed the significant differences in mandatory disclosure mechanism and importance given to it by different company policies. Study highlights that, different company's emphasis on different parameters within the company policy framework. The overall averages and ranking given shows the comparative score analysis between the companies.

On the score card average for last 5 years as per the disclosures in Annual Reports , shows the differences in the adherence of norms by different manufacturing companies in last 5 years of operations and reporting. Major mandatory clauses are met with but non mandatory parameters are not integrated in the corporate system or either of the parameters are not disclosed in Annual Reports from which the data had been derived can serve as limitation to this study and as to the disclosure it may have human error as finding the facts. Literature review and overall study envisages the possibility of enhancing the capabilities through mandatory and non mandatory disclosure norms

leading to vigilant and transparent system and shifting major parameters of non mandatory clauses to mandatory norm.

References :-

1. Baneijee Bhabatosh: Harmonization with International Accounting Standards: A Case Study of Earning Per Share: Indian Accounting Review: December 2002
2. D'Souza Dolphy: IFRS- The Way Forward: The Chartered Accountant: May 2007
3. Hyderabad Dr. R.L.: Risk Reporting: The Chartered Accountant: May 2007
4. Mohammad Dr. Jafar, Agarwal Sushil Srinikeshan: Accounting Standards and Gaps in practices in India: The Indian Journal of Commerce; oct-Decl997.
5. Rao prof. Rajeshwar K.: Disclosure Needs for Transparency in Accounting policy and Statement: The Indian Journal of Commerce, July- Sept. 1995
6. Sen Dilip Kumar: Clause 49 of Listing Agreement on Corporate Governance: The Chartered Accountant: December 2004.
7. Tamboli R.L.: Analysis of Accounting Disclosure and Investor Protection: The Indian Journal of Commerce. Oct-Dec 2004.
8. Tiwari Shailendra Kr.: GAAP A Journey From Domestic to International Platform: The Chartered Accountant: July 2002.

List o f Journals and magazines :

1. The Chartered Accountant: New Delhi, issues from September 2005 to August 2007.
2. The Indian Journal of Commerce: issues from July-Sept 2005 to April-June 2007.
3. The Chartered Accountants Today: Taxmann, New Delhi.
4. ICFAI Reader: The ICFAI University Press.
5. Indian Accounting Review: vol-6 No-2

Table:2 Companywise mandatory disclosure score

S.	Company Name	2011-12	2012-13	2013-14	2014-15	2015-16	Mean Score
1	ABNL	70	70	72	74	74	72
2	Apollo tyres	61	63	63	63	65	63
3	Asian paints	74	76	78	80	82	78
4	NMDC	74	76	76	76	78	76
5	Pidilite	71	73	75	77	79	75
6	Bajaj auto	76	77	79	81	82	79
7	Havells	72	74	74	74	76	74
8	Whirlpool	59	61	62	63	65	62
9	HUL	80	81	83	85	86	83
10	United Spirit	68	70	71	73	73	71
11	BOMBAY DYEING	74	74	76	76	80	76
12	L&T	78	82	82	84	84	82
13	Ultra tech	72	76	76	78	78	76

Source: Researcher compilation

ANOVA

Source of Variation	SS	df	MS	F	P-value	F crit
Between Groups	2375.384615	12	197.949	36.501182	5E-21	1.9436
Within Groups	282	52	5.42308			
Total	2657.384615	64				

Source: Researcher compilation

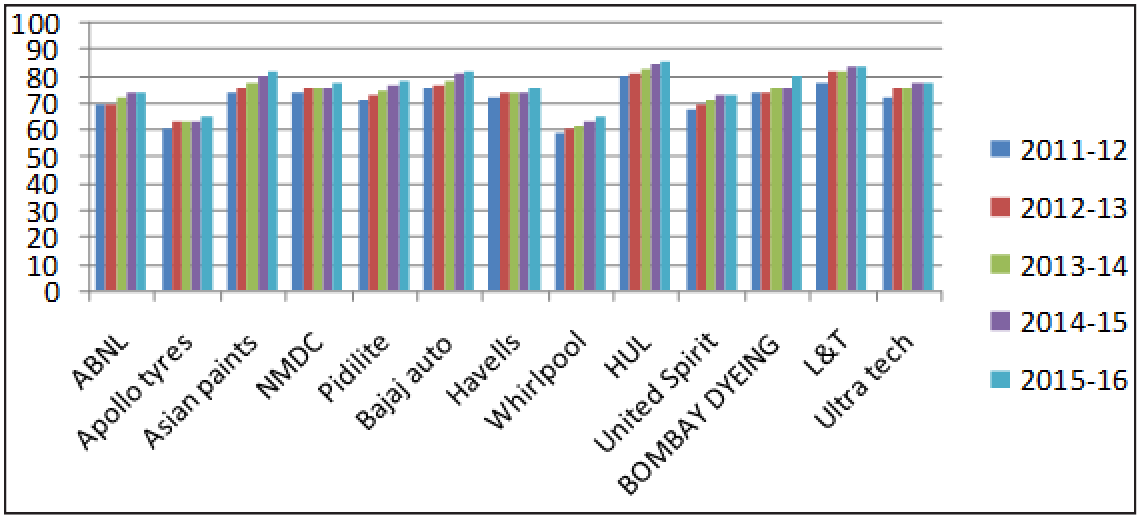

Role Of Women Entrepreneur In Small And Medium Entreprises (Smes) In Madhya Pradesh

Dr. Anoop Kumar Vyas * Urvashi Verma **

Abstract - Women entrepreneurship has a vital role in the development of any economy. Women entrepreneurs are those women who think of a business enterprise, initiate it, organize and combine the factors of production, operate the enterprise and undertake risks and handle economic uncertainty involved in running a business enterprise. The role and participation of women are recognized and steps are being taken for the promotion of women entrepreneurship. The focus of the study is on relationship between women entrepreneur and Small and Medium Enterprises(SMEs) in Madhya Pradesh; secondly focus is on role of government in encouraging women entrepreneurs in SME in Madhya Pradesh. The secondary data is used for study and analyzed in general way.
Key word - Women Entrepreneur, Small & Medium Enterprises (SMEs), Madhya Pradesh

Introduction - Women form a significant human resource of nation. They should be used as instruments for the growth and development of economy of each and every state. Women, on the other hand, are willing to take up business and lend their contributions to the growth of the nation. Women entrepreneur may be that innovative entrepreneur who initiate, organize, innovate, imitate or adopt a business activity and run a business enterprise. Accordingly, the Government of India (G.OI2006) has defined women entrepreneur as "an enterprise owned and controlled by a women having a minimum financial interest of 51 per cent of the capital and giving at least 51 per cent of the employment generated in the enterprise to women."

Though women constitute about 50% of population, the percentage of women owned enterprises is less than 5% in India, which is in sharp contrast to this ratio in USA which is ~40% and ~25 % in UK, as per E&Y. India ranks low at 70 among 77 countries covered in the Female Entrepreneurship Index 2015, with a score of 25.3. Not surprisingly, US, with 82.9 points were rated as No. 1 and Australia and UK followed, in that order. Even though rating of India got improved by 4 points over last year, it is important to have deeper insights into the factors that led to this improvement.

Numbers of Women Entrepreneurs Registered in India (Table See in the last page)

Role Of Women Entrepreneur In Smes - The Centre for Entrepreneurship Development Madhya Pradesh widely known as CEDMAP in a span of over 25 years has achieved enormous success in the field of entrepreneurship development activities for upliftment of society in the state of Madhya Pradesh (MP) and Chhattisgarh (CG). The CEDMAP, an autonomous body, has launched various programmes for entrepreneurship development in Madhya Pradesh for innovative practices and skill certification. The CEDMAP not only has diversified activities in entrepreneurship development and skill development programmes but it also has actively participated in nation-wide financial inclusion programmes.

Association of Industries, Madhya Pradesh and Indore Management Association Professional Women Forum along with India SME Forum, Mumbai launched of nation-wide initiative of 'Empowering Women Entrepreneur Conference' in which Sushma Morthania, Director General of India SME Forum while addressing said, "Entrepreneurship in India is underrated especially for women and it is only women who can change this myth. Indore has given many such examples and that is what has compelled us to launch our forum form Indore."

It currently has 70,000 SMEs working all over the country with the full hand support of the forum with 170 SME in average attending them in every city. Ritu Grover, IMA, Professional Women's Forum who is supporting the initiative said, "We have similar zeal to promote women entrepreneur as that of Indian SME Forum and we try are level best to assist women entrepreneurs to grow them professionally in Indore and the launch of this forum will help us bring all the women entrepreneurs under one umbrella." In SMEs, support for women entrepreneur will help the restructuring large enterprises consolidating manufacturing complexes.

Role Of Government Of India To Support Women Entrepreneur - The Micro, Small & Medium Enterprises Development Organisation (MSME-DO), the various State Small Industries Development Corporations (SSIDCs), the nationalised banks and even NGOs are conducting various programmes including Entrepreneurship Development Programmes (EDPs) to cater to the needs of potential

*Professor & Head (Commerce) S.A.B.V. Govt. Arts & Commerce College, Indore (M.P.) INDIA
**Research Scholar (Commerce) Devi Ahilya Vishwavidyalaya, Indore (M.P.) INDIA

women entrepreneurs. Various government schemes for MSMEs also provide certain special incentives and concessions for women entrepreneurs. Under the scheme, **Prime Minister's Rozgar Yojana (PMRY)**, preference is given to women beneficiaries. The **Credit Guarantee Fund Scheme for Micro and Small Enterprises**, the guarantee cover is generally available upto 75% of the loans extended; however the extent of guarantee cover is 80% for MSEs operated and or owned by women.

Some of the special schemes for women entrepreneurs implemented by the government are provided below:

- **Mahila Coir Yojana** is a woman-oriented self-employment scheme in the coir industry, which provides self-employment opportunities to the rural women artisans in regions producing coir fibre.
- **Rural Employment Generation Programme (REGP)** is a flagship scheme of the government for employment generation programmes in the unorganized sector.
- **Trade Related Entrepreneurship Assistance and Development (TREAD)** scheme for women envisages economic empowerment of women through development of their entrepreneurial skills in non-farm activities.
- **Promotional Package** which comprises several proposals and schemes having direct impact on the promotion and development of the micro and small enterprises. These, inter alias, include credit and fiscal support, cluster-based development, infrastructure, technology and marketing support.
- **Enhanced Credit Flow to the MSEs Sector is scheme which** the Government announced for Stepping up Credit to Small and Medium Enterprises (SME) in August 2005 for doubling the credit flow to this sector within a period of five years.
- **Skill Development** programmes conducted by Ministry of MSME for skill development for nearly 1.8 lakh trainees during 2007-08 and the targets set for 2008-09 is 3 lakh persons.
- **Cluster Development Programme** is a scheme on which the Government has been focusing for development of the MSEs - through which different clusters and concentrations of enterprises are given the benefit of a whole variety of interventions ranging from exposure to skill development.
- **Rajiv Gandhi Udyami Mitra Yojana** scheme was launched to promote and support establishment of micro and small enterprises through handholding of potential first generation entrepreneurs.
- **National Fund For Unorganised Sector** (NCEUS) is one of creation for National Fund for the unorganized sector.

Role Of Government Of Madhya Pradesh To Support Women Entrepreneur - Madhya Pradesh is implementing various schemes, programmes, social welfare schemes ,Health and Nutrition, scholarship for women empowerment, Girl Child pregnant women, mothers, ward members, Anganwadi Workers, Women Health Volunteers, the women living in the rural & tribal areas, ex-servicemen, physically handicapped, nursing women, Lactating mother, widows/destitute, Old age women, women self-help group (SHG), Women Entrepreneurs and Adolescent Girls'.

- **'Mamatva Mela'** is an annual event of the Corporation, in which products of women's self help groups, rural / urban women entrepreneurs, are demonstrated and sold in which training program for self reliance for 14 to 35 years adolescent girls and young women organise to increase awareness, towards the entrepreneurship, and prepare them for sustainable financial development, by providing them information on self employment.
- Since 1999 the plan for organizing the **'Haat Bazaar Opertaing Plan'** at the district level has been launched to make available the market to the products, prepared by women's self help groups and women entrepreneurs of rural areas.
- Under the **'Step Scheme'** Government is given the grant with the aim to make available the self employment and to make financially self reliant to women, the training is provided in Agriculture, animal husbandry, dairy, fisheries, handlooms, handicrafts, khadi and village industries, sericulture etc trades.
- **'Tejaswini Rural Women Empowerment Program'** has enabled to empower the rural women to fully utilize different economic, social and political opportunities for their betterment.

The chief minister **Shivraj Singh Chouhan** said in **'Global Investors Summit-2016',** "Madhya Pradesh government has created a Rs 100 crore venture fund for budding entrepreneurs with innovative ideas for setting up industries, He said M.P., which was "sick state" ten years ago, is now zooming with 10 per cent annual growth rate. According to him, the agriculture sector has been growing at over 20 per cent for the past four years. There are huge opportunities for heavy to small scale industries in MP. Every sector has different policy.

Result - The nominal GSDP of Madhya Pradesh for the year 2014-15 was Rs. 5.08 lakhs crore. The State recorded a 16.85 percent growth in its GSDP over the period of 2013-14 and a Compounded Annual Growth Rate (CAGR) for GSDP of 14.65 percent between 2004 -05 and 2014-15. In last four years alone, the State's GSDP has grown at more than 10% consistently which is significantly better than the national average. The number of registered MSMEs increased to 48179 in a year 2015-2016 from 19835 in a year 2014-2015. In India number of women enterprises of registered sector is 2.15 i.e. 13.72% of the total enterprises and number of women enterprises of unregistered sector is 18.06 i.e. 9.09% of total enterprises. Employment level of female is 19.04 i.e. 20.45% whereas male employment level is 74.05 i.e. 79.55 %. (Fourth all India Census of MSME 06-07).

The Government of Madhya Pradesh has introduced 24 hour energy supply in its districts and villages and the mentioned technical assistance project of Asian Development Bank (ADB) supports the electrification in 32 project districts in three regions of Madhya Pradesh, namely: Bhopal, Indore and Jabalpur. The objective of the project is to build the capacity of women from Self Help Groups (SHGs) through gender mainstreaming interventions and to enable women to build their own energy-based income generating businesses. Since project start in January 2013 until November 2014, 18,000 women have participated in trainings that include topics on gender, efficient energy use, financial literacy and enterprise development. Until project end in April 2015 the target is to train a total of 20,000 women. Amongst the women who received a first training 500 interested female entrepreneurs are identified and trained as trainers on Business Development Support and another 500 women are trained on Gender & Energy. The selected women trainers gain knowledge on the market and on business planning and will serve as advisors to other women in the villages who want to set up an enterprise.

Conclusion - Now state and central government both are concentrating on the development of women entrepreneurship. Coordinated efforts are needed to enable women entrepreneur to make better economic choices. Government has also run number of schemes and programmes to encourage female workers in a country. To promote women entrepreneurship in a country the Ministry of Micro, Small and Medium Enterprises has also launched a special evolution programme for unemployed girls and women to set up their own business. A complete entrepreneurial development can be achieved by the participation of women and therefore the growth and development of women entrepreneurs must be increased in a country.

Refernces :-

1. Priti Goswami: GROWTH OF ENTREPRENEURSHIP IN MSME IN MADHYA PRADESH, Asia Pacific Journal of Research Vol: I. Issue XXVIII, June 2015
2. Chingunta, F. (2001) ‘Youth Livelihoods and Enterprise Activities in Zambia’, Report to IDRC Canada.
3. Rosa, P., Carter, S., & Hamilton, D. (1996). Gender as a determinants of small business performance: insight from a British study . . Small Business Economics, 8 (4), 463-478.
4. Wijewardena, H., & Cooray. (1996). Factors contributing to the growth of small manufacturing firms: perceptions on Japanese owner/manager. Journal of Enterprising culture , 4 (4), 351-361
5. Manichavel, S. (1997). Small Industries:Need for entrepreneurs in villages. Social Welfare , 32 (72).
6. Dr. Robita Sorokhaibam,(2011).Women entrepreneurship in Manipur, North-East India. Interdisciplinary Journal of Research in Business, Vol. 1, Issue. 5,(pp.46-53)
7. June 02, 2014 The SupportBiz.com/Article/News: India SME Forum Empowering Women Entrepreneurs
8. Article: Stepping Stones for Women Entrepreneurship in India. Posted by : YES BANK Date : 26-07-16
9. Women Entrepreneurs: Concept and Functions of Women Entrepreneurs: Article by: D.K.Sinha
10. The Times Of India, Updated: Sep 22, 2016, 03.42 AM IST, http://timesofindia.indiatimes.com/trend-tracking/Madhya-Pradesh-govt-created-Rs-100-cr-venture-fund-for-entrepreneurs/articleshow/54454861.cms
11. The Economic Survey of Madhya Pradesh for 2015-16,www.data.worldbank.org
12. www.dcmsme.gov.in/schemes/wenterpre.htm
13. http://mpmsme.gov.in/mpmsmecms% 5CUploaded%20Document/Whats%20New/%5C01102016010426MP-MSME-%20Vision%20Doc-%20Final%20 (English). pdf
14. http://www.cedmapindia.org/index-main.php
15. http://smallb.sidbi.in/%20/fund-your-business%20/additional-benefits-msmes%20/women-entrepreneurship
16. http://fs-unep-centre.org/projects/enhancing-energy-based-livelihoods-women-micro-entrepreneurs
17. http://www.smetimes.in/smetimes/in-depth/2009/Mar/03/women-empowerment-and-their-role-in-smes.html
18. http://msme.gov.in/Report_working_group_5yearplan-2012-17.

Numbers of Women Entrepreneurs Registered in India

Women Entrepreneurship States	No of Units	Rank	No of Women Registered	Rank	Percentage Entrepreneurs
Tamil Nadu	9,618	1	2,930	2	30.36
Uttar Pradesh	7,980	2	3,180	1	39.84
Kerala	5,487	3	2,135	3	38.91
Punjab	4,791	4	1,618	4	33.77
Maharashtra	4,339	5	1,394	6	32.12
Gujarat	3,872	6	1,538	5	39.72
Karnataka	3,822	7	1,026	7	26.84
Madhya Pradesh	2,967	8	842	8	28.38
Other States & UTs	14,576	9	4,185	9	28.71
Total	57,452		18,848		32.82

Source: Report of MSMEs, 12th Five year plan2012-2017.

****

Gender Gap and Women Entrepreneurship

Rahul Suryawanshi *

Abstract - Most women across the globe rely on the informal work sector for an income. If women were empowered to do more and be more, the possibility for economic growth becomes apparent. Empowering women in developing countries is essential to reduce global poverty since women represent most of the world's poor population. Eliminating a significant part of a nation's work force on the sole basis of gender can have detrimental effects on the economy of that nation. in developing countries today are micro, small or medium enterprises. Often they do not mature. This has negative for growth and poverty reduction. Understanding the specific barriers women's businesses face and providing solutions to address them are necessary for countries to further leverage the economic power of women for growth and the attainment of development goals.
Keywords - Empowering, economic growth, development goals.

Introduction - Under the Ministry of Micro, Small and Medium Enterprises and joint collaboration between different Departments have initiated various schemes for Entrepreneurs in order to motivate and encourage young minds to innovative ideas, to Women Entrepreneurship, to promote self-employment. Schemes and programs for entrepreneurs especially, small, micro and medium business. Government Of India offers various schemes for Entrepreneurs sectors such as Agricultural, Chemicals, and Fertilizers, Finance, Commerce & Industry, Communication And Information Technology, Corporate Affairs, Culture, Food Processing, Housing & Urban Poverty Alleviation, and Science & Technology etc. Entrepreneurs belonging to first generation, various categories, physically handicapped, minorities, ex-servicemen marginalized communities and also General Category etc. is included to avail the benefits. Financial assistance, insurance, subsidy, training, helps early stage tech startup, business loans, special incentive is provided to set up new enterprises for entrepreneurs. Participation in 'Entrepreneurship Development' Programme For Women Owned Businesses will increase the awareness, capacities and confidence.

Contrary to common perception, a large percentage of women in India work. National data collection agencies accept that statistics seriously understate women's contribution as workers However, there are far fewer women than men in the paid workforce. In urban India, women participate in the workforce in impressive numbers. For example, in the software industry 30% of the workforce is female. In rural India in the agriculture and allied industrial sectors, females account for as much as 89.5% of the labour force. In overall farm production, women's average contribution is estimated at 55% to 66% of the total labour. According to a World Bank report, women accounted for 94% of total employment in dairy production in India. Women constitute 51% of the total employed in forest-based small-scale enterprises Infrastructure is another low-hanging fruit for policymakers. The lack of basic amenities affects women more than men, as women are often responsible for a larger share of time-consuming household activities. Better electricity and access to water and sanitation may reduce the burden of women in providing essential household inputs for their families, and allow for more time to be directed toward entrepreneurial activities. Travel in India can also be restrictive and unpredictable, and women face greater constraints in geographic mobility imposed by safety concerns and social norms. Investment in local transport infrastructure may thus directly alleviate a major constraint to female entrepreneurs in accessing markets.

The global workplace gender gap is getting wider and economic parity between the sexes could take as many as 170 years to close after a dramatic slowdown in progress. The slowdown is partly because of chronic imbalances in salaries and labour force participation, despite the fact that, in 95 countries out of the 144 that are ranked, women attend university in equal or higher numbers than men. These are the key findings of The World Economic Forum's (WEF) Global Gender Gap Report 2016,.The report is an annual benchmarking exercise that measures progress towards parity between men and women in four areas: educational attainment, health and survival, economic opportunity and political empowerment. In the latest edition, the report finds that progress towards parity in the key economic pillar of

* Research Scholar (Commerce),D.A.V.V.,Indore (M.P.) INDIA

gender has slowed dramatically with the gap—which stands at 59%—now larger than at any point since 2008. Behind this decline are a number of factors. One is salary, with women around the world on average earning just over half of what men earn despite, on average, working longer hours, taking paid and unpaid work into account.

The Global Gender Gap Index	**Percentage improvement**
Nicaragua	12%
Nepal	11%
Bolivia	11%
Slovenia	11%
France	10%
Cameroon	10%
Iceland	9%
Ecuador	8%
India	8%
Namibia	8%

Note:2016 rank out of 144 countries

Source: The Global Gender Gap Report 2016

Another persistent challenge is stagnant labour force participation, with the global average for women at 54%, compared to 81% for men.

The education gender gap has closed 1% over the past year to over 95%, making it one of the two areas where most progress has been made to date. Health and survival, the other pillar to have closed 96% of the gap, has deteriorated marginally. Two-thirds of the 144 countries measured in this year's report can now claim to have fully closed their gender gap in sex ratio at birth, while more than one-third have fully closed the gap in terms of healthy life expectancy. The pillar where the gender gap looms largest, political empowerment, is also the one that has seen the greatest amount of progress since the WEF began measuring the gender gap in 2006. This is now over 23%; 1% greater than 2015 and nearly 10% higher than in 2006. However, improvements are starting from a low base: only two countries have reached parity in parliament and only four have reached parity on ministerial roles, according to the latest globally comparable data. The slow rate of progress towards gender parity, especially in the economic realm, poses a particular risk given the fact that many jobs that employ a majority of women are likely to be hit proportionately hardest by the coming age of technological disruption known as the Fourth Industrial Revolution. "Women and men must be equal partners in managing the challenges our world faces—and in reaping the opportunities. Both voices are critical in ensuring the Fourth Industrial Revolution delivers its promise for society,"

Conclusion- Many of the barriers to women's empowerment and equity lie ingrained in cultural norms. Many women feel these pressures, while others have become accustomed to being treated inferior to men.] Even if men, legislators, NGOs, etc. are aware of the benefits women's empowerment and participation can have, many are scared of disrupting the status quo and continue to let societal norms get in the way of development. Recent studies also show that women face more barriers in the workplace than do men. Gender-related barriers involve sexual harassment, unfair hiring practices, career progression, and unequal pay where women are paid less than men are for performing the same job. A disproportionate share of women-owned business in developing countries today are micro, small or medium enterprises. Often they do not mature. This has negative for growth and poverty reduction. Understanding the specific barriers women's businesses face and providing solutions to address them are necessary for countries to further leverage the economic power of women for growth and the attainment of development goals.

References :-

1. Tambunan, Tulus. (2009); Women entrepreneurship in Asian developing countries: Their development and main constraints,
2. Journal of Development and Agricultural Economics Vol. 1(2), Page No. 027-040;
3. the glass ceiling. Thousand Oaks,
4. CA: Sage.2 WEF gender gap report 2016**;**
5. https://en.wikipedia.org/wiki/Female_entrepreneurs.

****

Contributions of Cooperative societies in development of Small Scale Industries

Dr. Sapna Soni * Smita Patidar **

Abstract - After Independence role of cooperative societies grew to encompass socio-economic development and eradication of poverty in rural India. Within short span of time role of cooperatives extended beyond industrial credit. It started covering activities such as production forming marketing and processing " The paper examined the contributions of cooperatives to small and medium scale enterprises (SME) development, indentified, the challenges and to suggested way of strengthening this role.
Key words - Small Scale, Co-operative, Nigeria, Economy.

Introduction - Cooperative society means "an autonomous association of person united voluntarily to meet their common economic, social, and cultural needs and aspirations through a jointly-c Wiled and democratically-controlled enterprise". The cooperation, which means living, thinking and working together to achieve a common goal through co-operative principles, envisages a group of persons with one or more common economic needs, voluntarily agreeing to pool their resources both human and material and use them for mutual benefit, through an enterprise / organization managed by the group itself in democratic lines. Subsequently, any organization formed by a group of persons to work together to accomplish the objectives for which it is formed through the co-operative principles is called a co-operative society.

Concept of cooperative societies - The concept of cooperation is as old as mankind and it forms the bask for domestic and social life. The cooperation is nothing but group instinct in human which enable one to live with others, work with others and help each other in times of stress and strain. Without cooperation, the social and economic progress would not be possible. It is impossible for any civilization to flourish unless the cooperation supplements the competition in human society, if any. This is because human beings have developed out of group life and therefore naturally respond to group and social stimuli. So, the co-operative spirit is innate and intrinsic in human beings.

In the modern technical sense, the birth of co-operative movement and its applications in the economic field was traced after the Industrial Revolution in England during the second half of the 18th and first half of 19th century. The cooperation, understood as an economic system today, was born as a peaceful reaction against the mercantile economy and industrial revolution. Now the cooperation occupies a position of primary importance as a form of business organization in almost all the countries in the world.

We know that Cooperation is must necessary in large scale industries but in small scale industries role of cooperation is also plays an important role.

History of cooperative societies in India - The co-operative movement in India is century old. The movement was started in India with a view to encourage and promote thrift and mutual help for the development of persons of small means such as agriculturists, artisans and other segments of the society. It was also aimed at concentrating the efforts in releasing the exploited classes out of the clutches of the money lenders. During British rule, based on the recommendations of Sir Frederick Nicholson (1899) and Sir Edward Law (1901), the Co-operative Credit Societies Act was passed in 1904, paving the way for the establishment of co-operative credit societies in rural and urban areas. Under this Act, only primary credit societies were permitted to register and non-credit and federal organisations of primary co-operative credit societies were left out.

The first urban co-operative credit society was registered in October 1904 at Kanjeepuram now in Tamil Nadu State. In October and December 1905, Betegiri Co-operative Credit Society in Dharwar District and the Bangalore city co-operative credit society, both in Karnataka State were registered. The introduction of the Co-operative Credit Societies Act 1904, for providing credit to farmers marked the beginning of the institutionalization of co-operative Banking in India. This Act was amended in 1912 to facilitate the establishment of central co-operative banks at the district level, thereby giving it a three tier federal character.

Since 1950s, the co-operatives in India have made remarkable progress in the various segments of Indian economy. During the last century, the co-operative movement has entered several sectors like credit, banking, production, processing, distribution/marketing, housing,

*Professor (Commerce) Shahid Bheema Nayak Govt. P.G. College, Barwani (M.P.) INDIA
** Research Scholar (Commerce) D.A.V.V., Indore (M.P.) INDIA

warehousing, irrigation, transport, textiles and even in small scale industries . Today, India can claim to have the largest network of co-operatives in the world numbering more than half a million, with a membership of more than 200 million. After independence, for the first 3 years i.e. up to 1949, no significant development could be made. It was mainly due to the problem created by partition and absence of concrete programme for national re-organisation. However, the leaders of free India could the importance of co-operative movement for a successful democracy importance was given to strengthen co-operative structure of country and various provisions were made through different Five year Plan.

The First Plan also recommended for training of personnel's and setting up of Co-operative Marketing Societies. The Second Plan laid down proposals for extending co operative activity into various fields. It gave special emphasis on the warehousing co operatives at the State and Central level. The Third Plan brought still new areas under Cooperative societies. The cooperative society for sugarcane, cotton; spinning, milk supply was proposed. Some concrete steps were taken to train the personnel's. The co operative training College at Pune and many regional centers were established to train the workers. The Fourth Plan emphasised for consolidation of co operative system. The new programmer high yielding crops was started. Different credit societies were organised to serve these programmes.

Small Scale industries - In Indian economy small-scale and cottage industries occupy an important place, because of their employment potential and their contribution to total industrial output and exports. Government of India has taken a number of steps to promote them. However, with the recent measures, small-scale and cottage industries facing both internal competition as well as external competition. There is no clear distinction between small-scale and cottage industries. However it is generally believed that cottage industry is one which is carried on wholly or primarily with the help of the members of the family. As against this, small-scale industry employs hired labour.

Moreover industries are generally associated with agriculture and provide subsidiary employment in rural areas, As against this, small scale units are mainly located in urban areas as separate establishments.

Objectives of Small Scale Industries - The objectives of small scale industries are:

1. To create more employment opportunities with less investment.
2. To remove economic backwardness of rural and less developed regions of the economy.
3. To reduce regional imbalances.
4. To mobilize and ensure optimum utilization of unexploited resources of the country.
5. To improve standard of living of people.
6. To ensure equitable distribution of income and wealth.
7. To solve unemployment problem.
8. To attain self-reliance.
9. To adopt latest technology aimed at producing better quality products at lower costs.

Role of cooperative societies in development of Small Scale Industries – Cooperative societies play an important role in development of small scale industries and cottage industries. We know that in present age if we want to start any business first we need capital then we take help of banks for business loan. Cooperative society do same thing but in easy way and less paper work.

Cooperative societies play a vital role in development of small scale Industries as we know that in Today's Era for start ups. We need huge amount of capital and assistance also. Co-operative societies assists us from start to marketing of business. Same is in care of SSI As blood is essential for survival of Humans money is essential for survival of Business. So Co-operative societies helps in arranging funds for business and marketing too as small scale industries have shortage of funds so cooperative societies help in marketing their product.

Financial Assistance by Co-oprative Society in Small Scal Industries

The details of financial assistance extended by the co-oprative society given in Table :

Year	Loans Sanctions	Loan Disbursement
2010-11	26832.6	17476.9
2011-12	25867.9	11012.5
2012-13	25898.2	16614.9
2013-14	33937.7	24986.4
2014-15	30799.0	16183.3
2015-16	36490.0	22483.0

Source : Annual Report District Form

Financial Assistance to small scale industries by co-operative 2010-11 to 2015-16 (Rs. in Crores)

It is clear from Table 1 that the co-operative socity loans senctions had increased from Rs. 26832.6 crors in 2010-11 to Rs. 36490 crores in 2015-16 and during the same period disbursement too had increased from 17476.9 crores to Rs. 22483 crores reflecting the rapid industrial and business growth of the country on the one side and the corresponding increase in the mobilization of resources by the development financial institution on the other. In this the co-operative had leading role as it has been the apex financial institutions of the country.

Conclusion - The role of small scale industries is vital in development of industrial sector as they contribute. More than 37% to countries GDP and generate employment for 80s Lakh indians.

References :-

1. Formation and Management of a co-operative society alongwith multi state co-operative societies Act and Rules.
2. (Nabhi Board of Editors)
3. Credit cooperative society in Tribal area – A study (Patel Dilipkumar)
4. entrepreneurship.com
5. www.cooperative.com
6. wikipedia.org

Customer Satisfaction Towards Solar Panel Product In Indore Region : An Analytical Study

Dr. Rajesh Jain*

Abstract - Solar Panel Products are one of the best alternate of electricity. It reduces the amount of electricity coming from fossil fuels by supplying your operations with clean, renewable energy from the sun. In this research paper, I have done research work on customer's satisfaction towards solar panel product in Indore region. The main object of my research to know the overall satisfaction of the consumer towards Solar Product. I have collected data from 500 customers with the help of questionnaire and interpreted them. From above research I founded that majority of the customers got aware about solar panel product and their benefits. Popular brand in the market of solar panel product are Vikram and Tata Power. 85% customers gave important to the 'Price' of the product in this research while 64% prefer on the base of quality of product. Majority of customers are satisfied from solar product as it reduces their electricity bill. With the help of new innovations and better planning for after sales services, there one be a bright future of solar panel product market in present era.
Keywords - solar panel, satisfaction, interpreted, quality, innovation.

Introduction - Solar panels, also called photovoltaic or PV modules as it directly converts sunlight into electricity. It reduces the amount of electricity coming from fossil fuels by supplying your operations with clean, renewable energy from the sun. A solar electric system is a significant investment that can last for decades. That's why choosing the right equipment and installation service is so important. There are so many brand available of solar panel in the Indian market like this :

Branded Solar Panel available for Customer

Vikram SolarWaaree SolarGoldi Green Technologies Pvt. Ltd.Tata Power Solar Systems Ltd.Moser Baer Solar LimitedXL Energy LimitedSolar SemiconductorEmmvee Photovoltaics Private LimitedNavitas Green Solutions Pvt. LtdSatvik SolarPanchwakra SolarSurana Solar

Components of Solar Panel

Customer satisfaction, a term frequently used in marketing, is a measure of how products and services supplied by a company meet or surpass customer expectation. Customer satisfaction plays a major role in determining the likelihood of an organization's success and profitability over the long term.

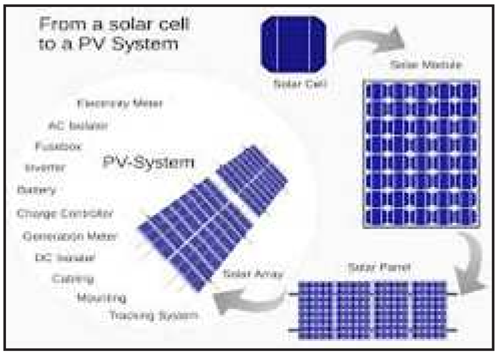

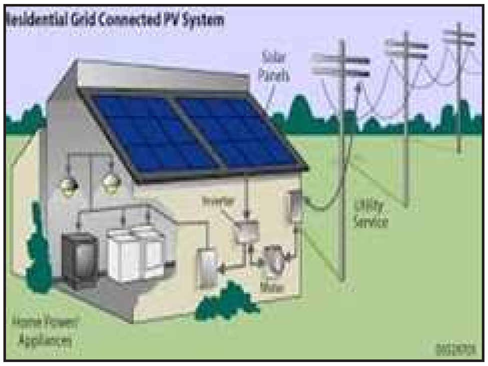

Financial & Environmental benefits

1. Dramatically reduce your electricity bill When there are more than 2 batteries in the series, it will equalize the voltage in them and ensure they do not have different voltages.

* **Asst. Professor (Commerce) IPS Academy, Indore (M.P.) INDIA**

2. Protect your bottom line from rising electricity rates Electricity costs are rising between 4-7% per annually. The sun, however, never invoices you. When you invest in a solar panels, you are essentially purchasing 25 to 30 years of electricity at today's prices.
3. Take advantage of government incentives In addition to the federal investment tax credit, which covers up to 30% of the installed cost, state and local incentives can provide financial assistance as well. Also, most solar electric systems qualify for tax advantages like modified accelerated depreciation, so be sure to check with your accountant or tax attorney when considering whether to go solars
4. Reduce your business's carbon footprint - Solar panels reduce the amount of electricity coming from fossil fuels by supplying your operations with clean, renewable energy from the sun. By providing more energy and lasting longer than other brands, Su-Kam solar panels are the best choice for cutting your carbon footprint down to size.

Review of Literature - Brayden (2008) topic – Impact of Solar module on society study found that the customer service function is changing dramatically in many service business and it involved task-oriented activities. William (2011) topic – Solar Energy is the best alternate of current energy resources study founded that level of customer satisfaction regarding solar module depends on publicity, availability and awareness of consumer. Daniel (2014) topic – Consumer Buying behavior study regarding Solar Product study founded that prices, durability of product and shaping are major factors to determine the satisfaction level of consumers.

Rationale of Study - The present study is to analyse the satisfaction level of those customers who utilize Solar Panel Product. Solar module is very useful for daily routine work. There are so many variables who decided the satisfaction level of a customer like Price of Product, utility of product, return on investment of product helpful to reduce electricity bill etc. The significance of the study was to get the detailed overview of customer satisfaction of those consumers who used solar panel product. Here conducted this research to check the variance in the level of customer satisfaction towards solar panel product.

Objectives of Study - The objectives of this study were :
1. To know the factors which influence the consumer buying behaviour of Solar Panel.
2. To know the overall satisfaction of the consumer towards Solar Product.
3. To know about consumer acceptance of the Solar Product & to understand why customer prefer Solar Product.
4. To find out the most prominent area of dissatisfaction.

Research Methodology

Research Design - Study area of the customer satisfaction towards Solar Panel in Indore region.

Sample Design - Sampling method here used is 'Random Sampling Method.' Random Sampling Method was used because it was not known previously as to whether a particular person will be asked to fill the questionnaire or used solar panel or not.

Tools for Data Collection - The new gathered data which help to solve the problem in hand which is especially collected for the particular research is known as primary data. Here primary data that are collected in the course of research consist of original information that comes from people and includes information gathered from surveys and questionnaires. Information that are already exists somewhere, having been collected for another purpose, is known as secondary data. Here in the research the secondary data was collected through various books, magazines and websites. The geographical area covered for the sampling of the study is related to Indore region.

Data Analysis & Interpretation

1. Do you utilize the Solar Panel Product ?

Yes	No
485	15

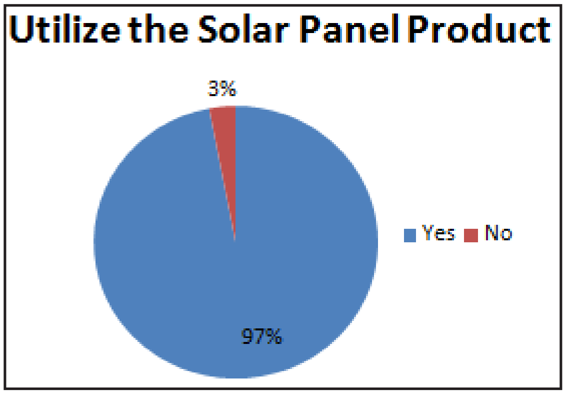

Interpretation : As per above analysis, 97% informer utilize solar panel product. Only 15 are not to be using that product. Reasons might be not proper space to assemble them.

2. Which Company's Solar Panel would you like to purchase ?

Vikram	Waaree	Tata Power	Satwik
218	22	210	50

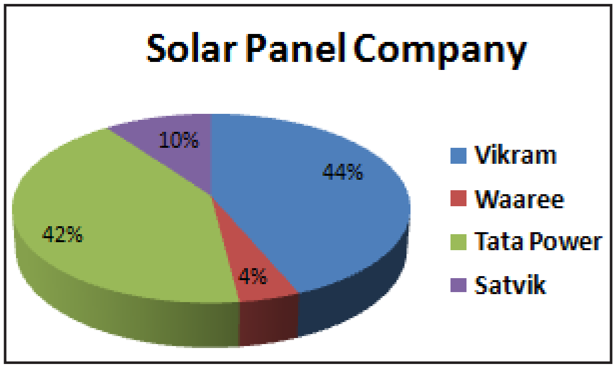

Interpretation: According from survey, majority viewers like vikram (44%) and Tata Power (42%) solar panel. Only 10% like Satvik brand product. Using of Waaree solar panel percentage just only 4%.

3. For which purpose you prefer Solar Panel Product ?

Domestic	Commercial
479	21

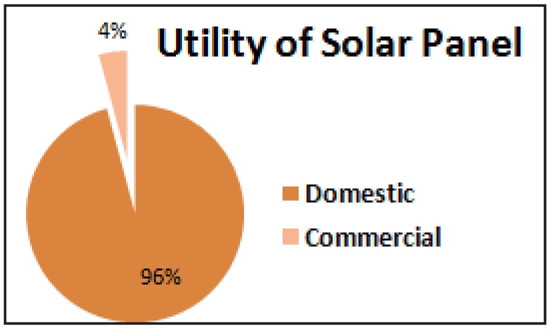

Interpretation: From above analysis, 479 customers who utilize solar panel belong from domestic background. Only 4% customers using solar product for commercial purpose.

4. Have you give preference to 'Price' on purchase of Solar Panel ?

Yes	No
423	77

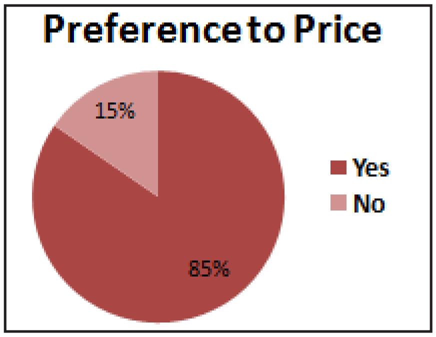

Interpretation: Buying solar panel product 'Price' sector is important for 423 customers out of 500. On other hand only 77 customers shown view that price is secondary for them.

5. Is 'Quality of Product' important factor for you to buy Solar Panel ?

Yes	No
318	182

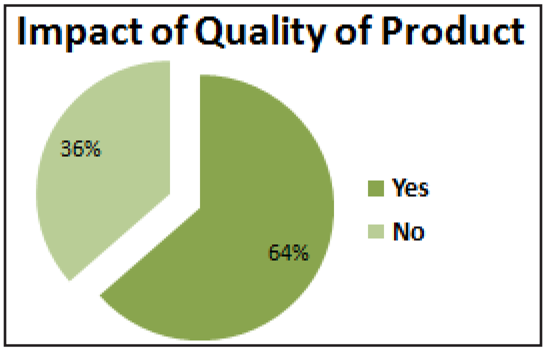

Interpretation - Out of 500 customers, 318 gave important to the quality of product or see quality level when to take a decision to buy product. Only 182 are not gave preference to quality for buying any product.

6. Are you satisfied from Solar Panel Product ?

Satisfied	Dissatisfied
460	40

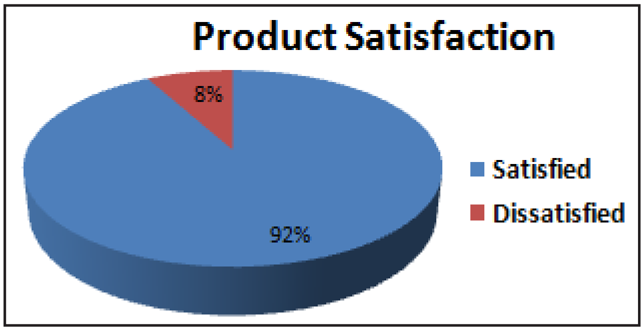

Interpretation: Out of 500 customers, 460 are satisfied from solar product. Only 8% are not satisfied due to many reasons.

7. Is Solar Product helpful to reduce electricity bill ?

Yes	No
445	55

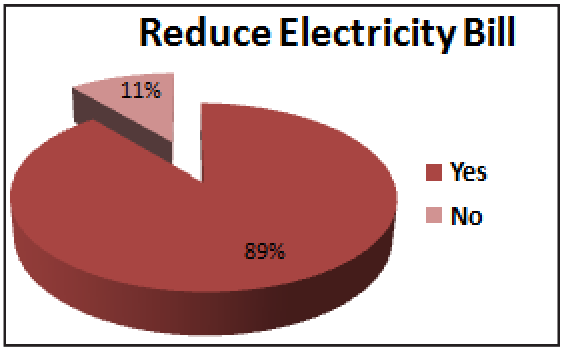

Interpretation: Using solar panel product, analysis show that 445 customer's electricity bill has reduced. On other hand 11% customer's bill have not founded in reducing category.

8. Can you afford the maintains expenses of solar product ?

Yes	No
376	124

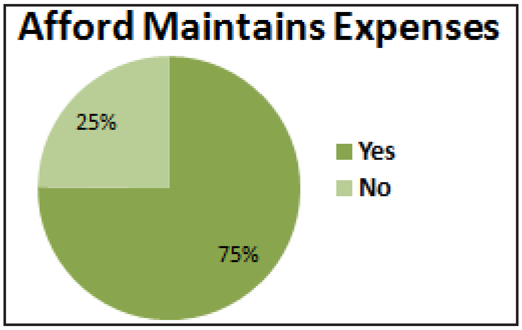

Interpretation: 75% customers agree that they can afford maintains expenses but 124 out of 500 customers are not in position to afford that expenses.

9. Are you satisfied from the after sales services of solar panel product ?

Satisfied	Dissatisfied
289	211

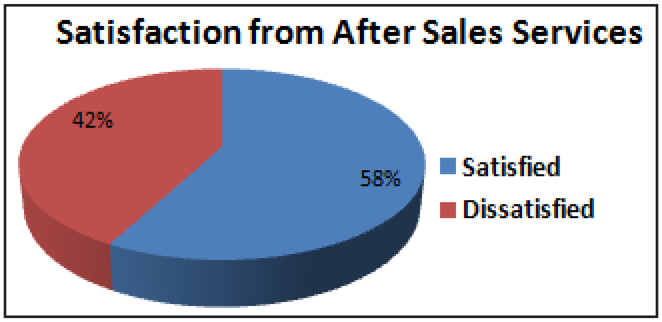

Interpretation: Out of 500 customers 289 are satisfied from after sales services of solar product. But 42% never being satisfied from after sales services.

Findings :

1. 97% customers utilized solar panel product out of 500 survey data.
2. Out of total survey customers 44% prefer to buy vikram solar panel and 42% of tata power product. Only 10% are interested to buy waaree product and 4% to be satwik.
3. 479 customers are utilized solar panel product in domestic use & remain 21 in commercial use out of 500 survey.
4. On one hand 85% customers prefer 'Price' to be purchase solar panel product & on other hand 15% are not giving important to factor of 'Price'.
5. 318 customers gave important the factor 'Quality of Goods' when to buy solar panel product. 36% customers have not given important to the quality of goods.
6. Out of survey, 460 customers are satisfied from the solar panel product. Only 8% gave dissatisfied view regarding product.
7. In survey, 89% customer's electricity bill has reduced after using solar panel product. On other hand 11% customer provided negative response due to reducing electricity bill.
8. 376 customers view that they can afford maintains expenses for using solar panel product. Only 25% customers afford that charges.
9. 58% customers are satisfied from using of solar panel product while 42% are dissatisfied.

Suggestions :

1. Manufacturer company of solar panel product should be doing proper marketing to increase sells of solar product.
2. Solar panel agencies should be launch awareness programme for customers.
3. Company's should launch discount schemes for improve domestic as well as commercial sell of solar panel product.
4. All manufacturer company of solar panel product should reduce price of solar panel product that favorable for customers.
5. Companies should maintain good level of quality in product of solar panel which will be popular in customers.
6. Solar panel producers should find the reasons of dissatisfaction of customers regarding product and remove them.
7. Company should produce more innovative product of solar panel that be helpful to reduce electricity bill of customers.
8. Supplementary parts of solar panel product should be available in the market on easy and cheapest way that customers can afford their expenses easily.
9. All producers of solar panel product should improve the level of after sales services and remove complain in short duration that create positive image of product in the market.

Conclusion - In present era, many of the countries in the world facing problem of low production of electricity due to limited resources. Utilization of solar panel is one of the best alternate of above problems. In India, day by day customers are going to be habitual for using solar product. In my current research area, Companies are trying to aware customers regarding benefits of solar product and consumers are also giving positive response for them. It's the result that 97% customers are using solar product out of 500 research data. If manufactures decrease production cost and improve quality of solar product, graph of sales also be break the record. With innovation in solar product, burden of electricity bill can be reducing. Providing better services after sales, company's can create sound goodwill in consumers mind. Finally, majority of equipments depending on electricity , availability of limited resources to produce electricity and busy lifestyle there one be a bright future of solar panel product.

References :-

1. Boxwell Michael (2014): Solar Electricity Handbook 2014, BooyahChicago .
2. Walker Andy (2013) : Solar Energy: Technologies and Project Delivery for Building, RS Means
3. Johnson Kenneth (2009): Energy Research Development, Nova Science Publisher
4. www.solarpanelenergy.co.za/
5. www.livemint.com › Industry › Energy
6. www.solarpanelindia.in/solar-power-pack/
7. www.puppypoppins.co.uk/unique-customer-solar-panel-items-order-tradition/
8. http://www.roofsol.in/
9. https://dir.indiamart.com/indore/solar-panels.html

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to September 2017, Vol. I

मध्य प्रदेश एवं महाराष्ट्र राज्य में केला उत्पादन एवं व्यवसाय का तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. अमर वतनानी * वरूण महाजन **

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध पत्र का विषय मध्य प्रदेश एवं महाराष्ट्र में केला उत्पादन एवं व्यवसाय की स्थिति का तुलनात्मक अध्ययन करना है। जिसके लिए दोनों राज्यो के केला उत्पादन से संबधित दस वर्षो के समंको को एकत्रित कर उनका विस्तार से अध्ययन किया गया है। अध्ययन करने के बाद यह सिद्ध होता है कि केला उत्पादन से सबंद्धित समस्त क्षेत्र जैसे – केला उत्पादन के लिए प्रयुक्त भूमि का क्षेत्रफल, केला उत्पादन, एवं केला फसल की उत्पादन क्षमता तीनों स्तरों पर महाराष्ट्र राज्य, मध्य प्रदेश की तुलना में आगे है। जिसका मुख्य कारण केला उत्पादन के लिए आवश्यक संसाधन जैसे – केला फसल के लिए आवश्यक भूमि, तापमान, जलवायु, सिंचाई की पर्याप्त व्यवस्था आदि संसाधन महाराष्ट्र राज्य मे मध्य प्रदेश की तुलना में अधिक है, जिस कारण महाराष्ट्र में केला उत्पादन एवं व्यवसाय मध्य प्रदेश की तुलना में अधिक हो रहा है।

प्रस्तावना – भारत देश केला उत्पादन एवं व्यवसाय की दृष्टि से विश्व में प्रथम स्थान रखता है, भारत में उत्पादित होने वाला केला अपने स्वाद एवं रंग के कारण विश्व के अन्य देशों में काफी पसंद किया जाता है। भारत में केला फसल का इतिहास काफी पुराना है, जिसके साक्ष्य हमें रामायण, महाभारत तथा कौटिल्य के अर्थशास्त्र से लेकर अजन्ता की गुफाओं तक मिलते है। हमारे देश में केला फसल का उपयोग एक फलदार फसल के अलावा कई धार्मिक अनुष्ठानों एवं त्यौहारों में भी किया जाता है, जिस कारण इस फसल को और अधिक महत्व दिया जाता है। आज भी हमारे देश में कई जगहों पर विवाह, त्यौहार एवं शुभ अवसरों पर शेजन के लिए केले के पत्तों का उपयोग किया जाता है, भोजन हेतु केले के पत्तों का उपयोग करने के पिछे यह वैज्ञानिक कारण है की इसके पत्तों में काफी ज्यादा मात्रा में फाईबर होता है और जब गरम भोजन को इन पत्तों पर परोसा ज्याता है तो भोजन कि गर्मी से इन पत्तों में मौजुद फाईबर भोजन में मिश्रित हो जाता है जिससे हमारे शरीर को आवश्यक फाईबर की पुर्ति इससे आसानी से हो जाती है, यही कारण है की वर्तमान समय में भी शेजन के लिए केले के पत्तों का उपयोग अत्याधिक मात्रा में किया जाता है। आज भी हमारे देश में कई धर्मिक अनुष्ठानों में तथा सजावट का कार्य करने के लिए केले के पौधों का एवं पेड़ो का उपयोग किया जाता है।

फल की दृष्टि से केला फल एक सदाबहार एवं पौष्टिक फल है, सामान्यत: केले को गरीबों का फल कहा जाता है एवं इस फल को वृद्धावस्था से लेकर बच्चों तक तथा अमीरों से लेकर गरीबों तक समाज के सभी वर्गो में समान रूप से पसंद किया जाता है। प्राचीन काल में यह कथन प्रसिद्ध था कि स्वस्थ रहने के लिए दिन में एक सेब का भोजन मे होना आवश्यक है, परन्तु वर्तमान समय में यह कहा जाता है की अगर किसी को स्वस्थ एवं तन्दुरुस्त रहना है, तो उसे दिन में दो केलों का सेवन अवश्य करना चाहिए, इसका मुख्य कारण यह है की हमारे शरीर को जिन – जिन पौष्टिक तत्वों की आवश्यकता होती है, वह सभी केले मे विद्यमान होते है, जिससे हमारी आवश्यकता पूर्ण हो जाती है।

वर्तमान समय में किसी भी देश की अर्थव्यवस्था में फल उत्पादन एवं व्यवसाय अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान रखता है अगर किसी देश को अपनी आर्थिक स्थिति को मजबुत बनाना है तो यह आवश्यक है की वह फल उत्पादन एवं व्यवसाय में अधिक ध्यान दे, ऐसी नीतियों का निर्माण करे की देश में फल उत्पादन एवं इसके व्यवसाय को बढ़ावा मिल सके।

शोध अध्ययन के उद्देश्य – किसी भी कार्य को पूर्ण करने के लिए स्पष्ट उद्देश्यो का होना अत्यन्त आवश्यक होता है, बिना किसी उद्देश्य के किसी कार्य को पुर्ण करना असंम्भव होता है। प्रस्तुत शोध पत्र का मुख्य उद्देश्य देश के दो राज्य मध्य प्रदेश तथा महाराष्ट्र में केला उत्पादन एवं व्यवसाय का तुलनात्मक अध्ययन करना है, इसके अतिरिक्त शोध पत्र के सहायक उद्देश्य निम्न लिखित है –

- मध्य प्रदेश एवं महाराष्ट्र में केला फसल हेतु प्रयुक्त कृषि भूमि के क्षेत्रफल का तुलनात्मक अध्ययन करना।
- मध्य प्रदेश एवं महाराष्ट्र में केला उत्पादन एवं व्यवसाय का तुलनात्मक अध्ययन करना।
- मध्य प्रदेश एवं महाराष्ट्र में केला फसल की उत्पादन क्षमता का तुलनात्मक अध्ययन करना।

शोध अभिकल्पना – प्रस्तुत शोध पत्र मे निम्न लिखित शोध परिकल्पनाओं का समावेश किया गया है

- मध्य प्रदेश में केला उत्पादन हेतु प्रयुक्त कृषि भूमि महाराष्ट्र में प्रयुक्त क्षेत्र से काफी कम है।
- महाराष्ट्र में केला फसल का क्षेत्र अधिक होने के कारण वही मध्य प्रदेश की तुलना में अधिक उत्पादन होता है।
- महाराष्ट्र में प्रति हेक्टर केला उत्पादन क्षमता मध्य प्रदेश की तुलना में अधिक है।

प्रमुख शब्द – केला उत्पादन एवं व्यवसाय, केला फल, उत्पादकता इत्यादि।

शोध प्रविधि एवं अध्ययन क्षेत्र – उक्त शोध पत्र का मुख्य उद्देश्य मध्य

* प्राध्यापक, श्री अटल बिहारी वाजपेयी शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक, विवेकानंद महाविद्यालय, शाहपुर, जिला – बुरहानपुर (म.प्र.) भारत

प्रदेश एवं महाराष्ट्र में केला उत्पादन एवं व्यवसाय का तुलनात्मक अध्ययन करना है, इसलिए शोध का अध्ययन क्षेत्र मध्य प्रदेश एवं महाराष्ट्र दोनों है। किसी विषय पर अनुसंधान का कार्य करना विकास का एक औपचारिक कार्य है, जिससे व्यक्ति एवं समाज के बौद्धिक क्षमता का विकास होता है। प्रस्तुत शोध पत्र की प्रकृति वर्णात्मक होकर पुर्ण रूप से द्वितीय संमकों पर आधारित है। इन समंको का संग्रहण भारतीय उद्यानिकी विभाग, प्रकाशित पत्रिकाऐं, प्रतिष्ठित शोध पत्रिकाऐं, दैनिक समाचार पत्रों से किया गया है, तथा प्राप्त समंको का अध्ययन करने के लिए सांख्यिकी विधि औसत का प्रयोग किया गया है।

भारत के प्रमुख केला उत्पादक राज्य एवं उनके क्षेत्रों का अध्ययन (सारिणी देखे आगे पृष्ठ पर)

भारत मे केला उत्पादन का क्षेत्र, उत्पादन एवं उत्पादकता के अध्ययन की तालिका व रेखाचित्र (देखे आगे पृष्ठ पर)

सारणी एवं रेखाचित्र का अध्ययन करने के पश्चात यह ज्ञात होता है की भारत में केला उत्पादन एवं व्यवसाय के क्षेत्र में काफी उतार चढाव रहा है। विगत दस वर्षो में केला उत्पादन के लिए सबसे अधिक 830.0 हजार हेक्टर कृषि भूमि का उपयोग वर्ष 2010 - 11 में हुआ है, वही सबसे कम 569.5 हजार हेक्टर कृषि भूमि का उपयोग वर्ष 2005 - 06 में हुआ है। केला उत्पादन की अगर बात की जाए तो सबसे अधिक उत्पादन भी वर्ष 2010 - 11 में उत्पादित हुआ है। इस वर्ष देश का कुल केला उत्पादन 29780 मैट्रक टन प्राप्त हुआ है ।वही सबसे कम उत्पादन वाला वर्ष 16744.5 मीट्रिक टन उत्पादन अध्ययन के प्रथम वर्ष 2004 - 05 में प्राप्त हुआ है।

मध्य प्रदेश में केला उत्पादन एवं व्यवसास का अध्ययन - सम्पूर्ण देश की तरह मध्य प्रदेश में भी केला फसल को एक नगद फसल के रूप में उत्पादित किया जाता है। मध्य प्रदेश के कुल केला उत्पादन का लगभग 75 से 80 प्रतिशत उत्पादन केवल अकेले बुरहानपुर जिले से प्राप्त होता है। वैसे तो मध्य प्रदेश के अन्य जिले खण्डवा , बडवानी , धार जिलो में भी केला फसल का उत्पादन किया जाता है ।

मध्य प्रदेश मे केला फसल का क्षेत्र उत्पादन एवं उत्पादकता का अध्ययन की तालिका

वर्ष	क्षेत्र '000 हेक्टर में	उत्पादन '000 मीट्रिक टन	उत्पादकता
2004 - 05	15.00	756.00	50.00
2005 - 06	15.00	730.00	48.80
2006 - 07	14.90	773.00	52.00
2007 - 08	15.20	788.20	51.90
2008 - 09	28.80	1498.00	51.90
2009 - 10	33.00	1459.80	44.20
2010 - 11	38.10	1719.60	45.20
2011 - 12	24.80	1379.2	55.60
2012 - 13	25.76	1701.0	66.00
2013 - 14	26.27	1735.0	66.00

(स्त्रोत - राष्ट्रीय बागवानी एवं उद्यानिकी बोर्ड डाटाबेस 2005, 2008 2011, 2014)

(आलेख देखे आगे पृष्ठ पर)

आलेख एवं तालिका का अध्ययन करने के पश्चात यह ज्ञात होता है, की अध्ययन काल के दस वर्षो में मध्य प्रदेश मे केला फसल के क्षेत्र में कभी वृद्धि हुई है, तो कभी कमी दर्ज हुई है। अध्ययन के वर्षो मे मध्य प्रदेश में केला फसल की कृषि भूमि का क्षेत्र सबसे कम 14.90 हजार हेक्टर वर्ष 2005-06 में दर्ज है, सबसे अधिक कृषि भूमि का उपयोग वर्ष 2010 - 11 में हुआ है जो 38.10 हजार ह्रेक्टर थी। उत्पादन की दृष्टि से सबसे अधिक उत्पादन 1735 हजार मीट्रिक टन उत्पादन वर्ष 2013 - 14 मे प्राप्त हुआ है वही सबसे कम उत्पादकता वर्ष 2009 -10 में दर्ज हुई है, जो मात्र 44.20 मेट्रिक टन प्रति हेक्टर है।

महाराष्ट्र में केला उत्पादन एवं व्यवसाय का अध्ययन - महाराष्ट्र राज्य फल उत्पादन के क्षेत्र में देश का एक महत्वपुर्ण राज्य माना जाता है, यहाँ उत्पादित होने वाला अंगूर देश में ही नहीं अपितु अपनी मिठास के कारण विश्व में जाना जाता है। वही नागपुर में उत्पादित होने वाले संतरे अपना विशेष महत्व रखते है। अगर हम केला उत्पादन की बात करे तो देश मे उत्पादित होने वाले कुल केला उत्पादन सबसे अधिक महाराष्ट्र राज्य से प्राप्त होता है। राज्य में सबसे अधिक केला उत्पादन केवल जलगांव जिले से प्राप्त होता है, जो राज्य के कुल उत्पादन का लगभग 75 से 80 प्रतिशत होता है।

महाराष्ट्र में केला फसल के क्षेत्र उत्पादन एवं उत्पादन क्षमता के अध्ययन की तालिका

वर्ष	क्षेत्र '000 हेक्टर में	उत्पादन '000 मीट्रिक टन	उत्पादकता
2004 - 05	73.30	4658.4	61.00
2005 - 06	73.20	4608.50	63.00
2006 - 07	73.40	4621.90	63.00
2007 - 08	80.00	4962.90	62.00
2008 - 09	80.00	4960.00	62.00
2009 - 10	85.00	5200.00	61.17
2010 - 11	82.00	4303.00	52.50
2011 - 12	82.00	4315.00	52.60
2012 - 13	82.00	3600.00	43.90
2013 - 14	83.00	4830.60	58.20

(स्त्रोत - राष्ट्रीय बागवानी एवं उद्यानिकी बोर्ड डाटाबेस 2005 2008 2011 2014)

(रेखाचित्र देखे आगे पृष्ठ पर)

रेखाचित्र एवं तालिका का अध्ययन करने के बाद हमें यह ज्ञात होता है कि महाराष्ट्र राज्य में केला उत्पादन के लिए सबसे अधिक कृषि भूमि का उपयोग वर्ष 2009 -10 में हुआ है, जो 85.0 हजार हेक्टर भूमि है। यदि हम केला उत्पादन के विषय पर चर्चा करें तो महाराष्ट्र राज्य में अध्ययन के वर्षो में सबसे अधिक उत्पादन भी वर्ष 2009 - 10 में ही हुआ है, जो 5200 हजार मीट्रिक टन है। महाराष्ट्र राज्य के केला उत्पादन क्षमता की अगर बात करें तो सबसे कम उत्पादन क्षमता वाला वर्ष 2012 - 13 है इस वर्ष राज्य की उत्पादन क्षमता मात्र 43.90 मीट्रिक टन प्रति हेक्टर रही है।

मध्य प्रदेश एवं महाराष्ट्र में केला उत्पादन एवं व्यवसाय का तुलनात्मक अध्ययन

विवरण	मध्य प्रदेश	महाराष्ट्र
केला फसल का क्षेत्र	23.683	79.390
केला उत्पादन	1253.980	4606.030
केला उत्पादन की क्षमता	53.160	57.937

उपरोक्त वर्णित सारणी का विस्तार से अध्ययन करने के बाद हमें यह ज्ञात होता है, की जहाँ प्रतिवर्ष मध्य प्रदेश में केला उत्पादन हेतु लगभग 23.683 हजार हेक्टर कृषि भूमि का प्रयोग हो रहा है, वही महाराष्ट्र में प्रतिवर्ष 79.390 हो रहा है। महाराष्ट्र राज्य मे जहां कुल केला उत्पादन 4606.030 हजार मीट्रिक टन प्रतिवर्ष हो रहा है। वही मध्य प्रदेश में मात्र 1253.980 हजार मीट्रिक टन हो रहा है। मध्य प्रदेश मे प्रति हेक्टर केला उत्पादन क्षमता 53.160 मीट्रिक टन है, वही महाराष्ट्र राज्य की उत्पादन क्षमता 57.937 मेट्रिक टन प्रतिहेक्टर है।

निष्कर्ष – उपरोक्त शोध पत्र का मुख्य उद्देश्य देश के मध्य प्रदेश एवं महाराष्ट्र राज्य में केला उत्पादन एवं व्यवसाय की स्थिती का तुलनात्मक अध्ययन करना था। जिसमें विस्तार से अध्ययन करने के बाद हम इस निष्कर्ष पर पहुचतें है कि महाराष्ट्र राज्य केला उत्पादन एवं व्यवसाय में मध्य प्रदेश से कई कदम आगे है। मध्य प्रदेश में केला उत्पादन हेतु प्रयुक्त क्षेत्र महाराष्ट्र मे प्रयुक्त क्षेत्र का मात्र 30 प्रतिशत है। वही मध्य प्रदेश में जितना केला उत्पादन हो रहा है, वो महाराष्ट्र राज्य का मात्र 28 प्रतिशत है। जहाँ मध्य प्रदेश में केला उत्पादन की उत्पादन क्षमता 53 मीट्रिक टन है, वही महाराष्ट्र की लगभग 58 मेट्रिक टन है, जो मध्य प्रदेश से अधिक है। इस अध्ययन से यह सिद्ध होता है कि महाराष्ट्र राज्य मध्य प्रदेश से कई कदम आगे है, जिसका मुख्य कारण केला उत्पादन के लिए आवश्यक संसाधनों का महाराष्ट्र राज्य में मध्य प्रदेश की तुलना में अधिक होना है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. www.nhb.gov.in
2. www.nhbdatabase.com
3. www.fao.co
4. सांख्यिकी सिद्धांत – साहित्य भवन आगरा।
5. केला – जैन इरिगेशन जलगांव, महाराष्ट्र।
6. केला उत्पादन – कृषि विज्ञान केन्द्र बुरहानपुर म.प्र.।

भारत के प्रमुख केला उत्पादक राज्य एवं उनके क्षेत्रो का अध्ययन

राज्य	जिला	क्षेत्र
महाराष्ट्र	**जलगांव**	चोपड़ा,यावल,रावेर,मुक्ताईनगर,भुसावल,जामनेर,पाचोरा ,भड़गांव,चाळिसगांव,पारोला,अमळनेर
	धुलिया	शिरपुर,सिंधखेड़ा,साकरी,नर्डाना,बोराड़ी,
	बुलढ़ाणा	मलकापुर,खामगांव,चिखली,मेंहकर
तमिलनाडु	**तिरुचिरापल्ली**	तुरयुर,थोटिटयाम,मुसिरी,मनचनाल्लर,लालगुड़ी,श्रीरंगम
	कोयम्बटुर	मुत्तुपल्लयाम,अविनाशीतिरप्पूर,पल्लधाम,उडुतल्लेय, पेटाई पोल्लाची,वललपराई
	थेनी	पेरिईकुलम,अंडिपत्ती,उत्तमापलयाम,बोधिमाया,कुन्नुर, कम्बन,मेगामली,वधुगापटटी
मध्य प्रदेश	**खण्डवा**	हरसूद, पंधाना
	बुरहानपुर	बुरहानपुर , नेपानगर , खकनार , शाहपुर
	धार	बदनावर,सरदापुर,गंधकवानी,मनावर,कुक्षी,धरमपुरी
	बड़वानी	ढ़िकरी,राजपुर,नेवाली,पंसमेल,सेंधवा
आन्ध्र प्रदेश	**गुन्तुर**	तंगेड़ा, डाचिपल्ले, सतेनापल्ली विंगकोड़ा,पोन्नुर ,बापटिया, नारासारा, उपेट पुर्ति,प्रपिडु,पल्लापटला
	विजयनगरम्	प्रवतिपुरम, बोबल्लाई, गजपतिनगरम, चिरुपल्लाशालू
	प्रकाशम्	ऐरगोंडापल्लम, मरकापूर, गिटटलूर, तरनुपाडू कोडिले दरसाई ,बाहुलीपली चॅडी
गुजरात	**सुरत**	मंगरोल, उमरवाडा मांग्वीव्यारा, वलोध महुआ, पलसम, कमरेज,बोलपाडा,निजेर,वढोली उनल
	आनंद	सोजितरा, सरसा, सुनवु, उर्देल, लुनेज,रास, कांथा मोराई, वरताल, बोचसंत, धुवेंद खंम्भात रोहोनी वड़गाम
कर्नाटक	**उत्तरकन्नड**	मलियाल,मुंगोड,यल्लापुरम,सिरसी, सिद्धाप्पुर,भटकल,अंकोल,
	उव्प्पी	कुन्दापूरा, कोकरोनी, करकल, गोलिगुडीलेज, चित्तुर, हयमानु, षिवपूरा, कोंडलामेल, यरमल

स्त्रोत – राष्ट्रिय बागवानी एवं उद्यानिकी बोर्ड।

भारत मे केला उत्पादन का क्षेत्र, उत्पादन एवं उत्पादकता के अध्ययन की तालिका

वर्ष	क्षेत्र'000 हेक्टर में	फल क्षेत्र का कुल प्रतिशत	उत्पादन '000 मीट्रिक टन	फल उत्पादन का कुल प्रतिशत	उत्पादकता
2004 – 05	589.6	11.9	16744.5	34.0	28.4
2005 – 06	569.5	10.7	18887.8	34.1	33.2
2006 – 07	604.0	10.9	20998.0	35.3	34.8
2007 – 08	658.0	11.2	23823.0	36.3	36.2
2008 – 09	709.0	11.6	26217.0	38.3	37.0
2009 – 10	770.0	12.2	26469.5	37.0	34.4
2010 – 11	830.0	13.0	29780.0	39.8	35.9
2011 – 12	796.5	11.9	28455.1	37.2	35.7
2012 – 13	776.0	11.1	26509.1	32.6	34.2
2013 – 14	802.6	11.1	29724.6	33.4	37.0

(स्त्रोत – राष्ट्रिय बागवानी एवं उद्यानिकी बोर्ड डाटाबेस 2014)

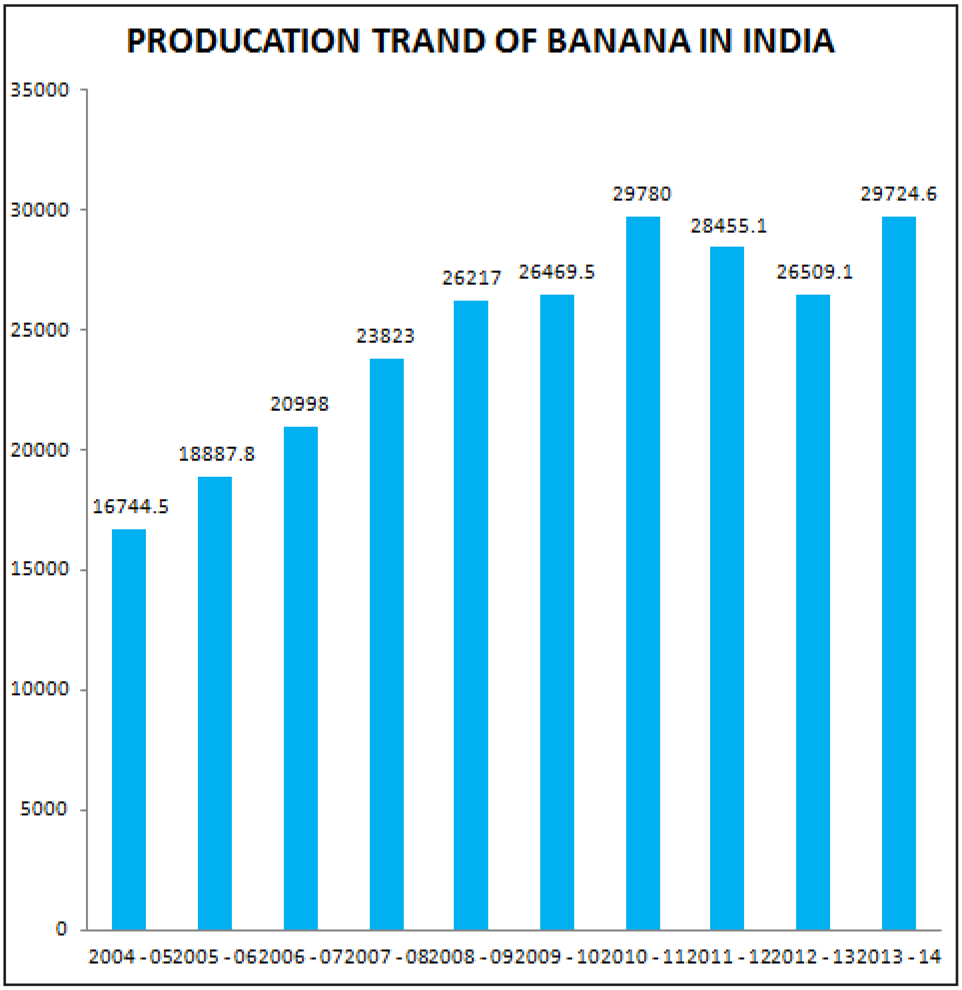

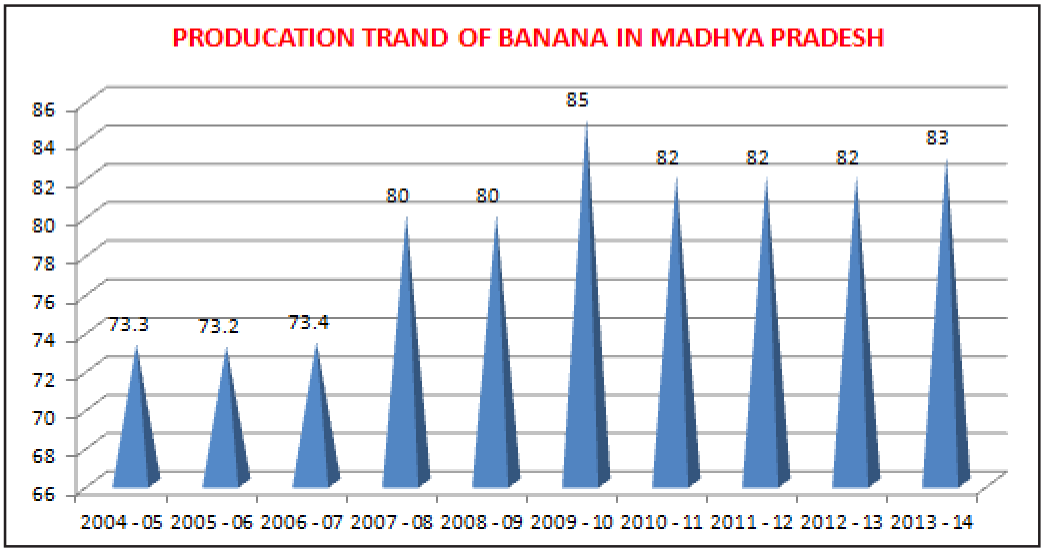
PRODUCATION TRAND OF BANANA IN MADHYA PRADESH
86
84
82
80
78
76
74
72
70
68
66
73.3
73.2
73.4
80
80
85
82
82
82
83
2004 - 05 2005 - 06 2006 - 07 2007 - 08 2008 - 09 2009 - 10 2010 - 11 2011 - 12 2012 - 13 2013 - 14

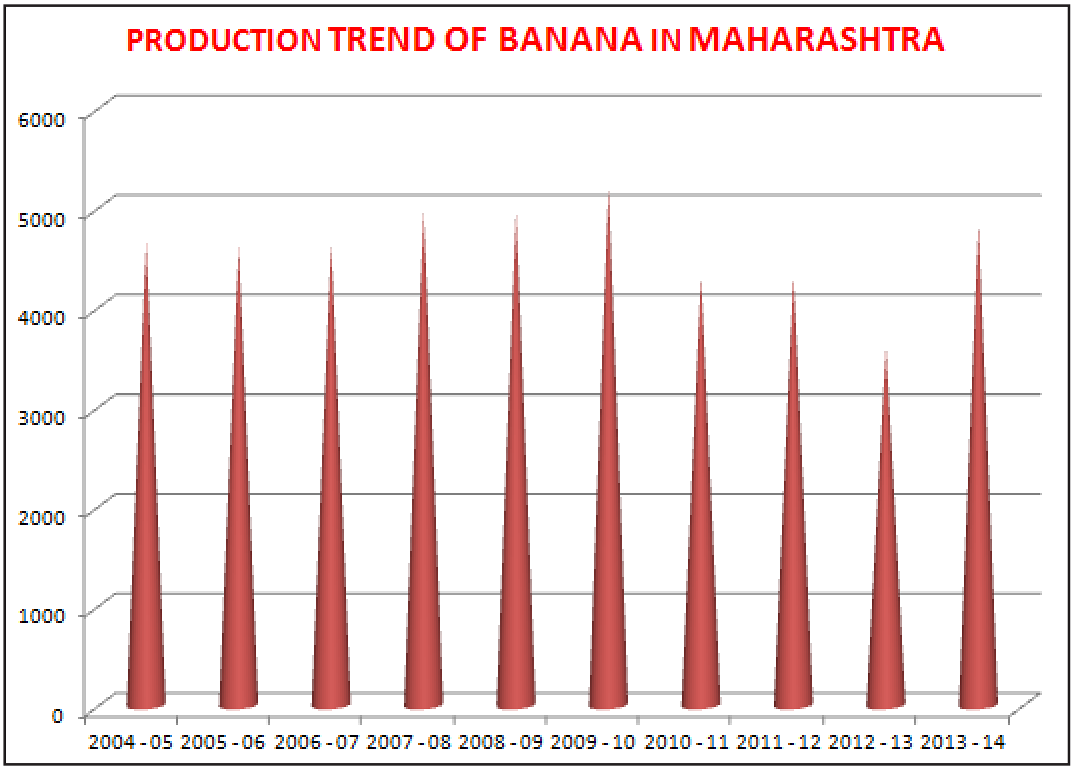
PRODUCTION TREND OF BANANA IN MAHARASHTRA
6000
5000
4000
3000
2000
1000
0
2004 - 05 2005 - 06 2006 - 07 2007 - 08 2008 - 09 2009 - 10 2010 - 11 2011 - 12 2012 - 13 2013 - 14

****

कृषकों के आर्थिक विकास में राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना का योगदान (इन्दौर जिला विशेष)

डॉ. अनूप व्यास * सीमा परमार **

प्रस्तावना – भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि का महत्वपूर्ण स्थान रहा है और आज भी वह महत्वपूर्ण है। वास्तव में कृषि हमारे देश में केवल जीविकोपार्जन का साधन या उद्योग धंधा ही नहीं बल्कि अर्थव्यवस्था की रीढ़ की वृद्धि है। देश के उद्योग धंधों, विदेशी व्यापार, विदेशी मुद्रा अर्जन विभिन्न योजनाओं की सफलता एवं राजनीति स्थायित्व भी कृषि पर निर्भर है।

भारत की कुल जनसंख्या के लगभग 58% लोग कृषि कार्यो में कार्यरत हैं तथा भारत के कुल सकल घरेलू उत्पाद (GDP) में कृषि का योगदान लगभग 14.1% (2012-13) हैं।

इतना अधिक महत्वपूर्ण क्षेत्र होने के बावजूद भारतीय कृषि एवं कृषक अनेक समस्याओं से ग्रसित हैं तथा यहाँ कृषि सूखा और बाढ़, प्राकृतिक आपदाएँ अत्यधिक संवेदनशील है, जिसके कारण जहाँ एक ओर कृषि उत्पादन प्रभावित होता है, वहीं दूसरी ओर कृषक फसलों के नष्ट हो जाने से सूदखोर, महाजनों के जाल में फंस जाते हैं।

भारतीय कृषि एवं कृषकों की उन समस्याओं एवं प्राकृतिक आपदाओं से रक्षा हेतु ही भारत सरकार ने देश भर में कई कृषि बीमा योजनाओं की शुरूआत की हैं तथा राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना जो कि भारतीय साधारण बीमा निगम की सहायता से 1999-2000 में केन्द्र सरकार द्वारा लागू की गई जिसका मुख्य उद्देश्य सूखा, बाढ़, ओलावृष्टि, चक्रवात, आग, कीट, बीमारियों आदि जैसी प्राकृतिक आपदाओं के फलस्वरूप हुई फसलों की क्षतिपूर्ति से किसानों का संरक्षण करना है ताकि आगामी मौसम में उनकी ऋण साख बहाल हो सकें।

यह योजना देश के सभी कृषकों के लिए उपलब्ध है, चाहे वे ऋणग्रस्त हो या नहीं। वर्तमान समय में यह 25 राज्यों एवं 2 संघ क्षेत्रों में लागू है। इसके तहत सीमान्त एवं लघु कृषकों को प्रीमियम में 10% की सब्सिडी दी जाती है; जिसमें केन्द्र एवं राज्यों का हिस्सा 50:50 अनुपात में वहन किया जाता है। राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना में प्रीमियम दर बाजरा एवं तिलहन के लिए बीमित राशि का 3.5% अन्य खरीद फसलों के लिए 2.5% गेहूँ के लिए 1.5% एवं अन्य रबी फसलों के लिए 2% है।

भारत किसानों का देश है। किसानों की आजीविका के संरक्षण का अर्थ देश को खाद्यान्न उपलब्ध कराने वाली प्रक्रिया को मजबूत बनाना है। भौगोलिक रूप से प्राकृतिक विविधता वाले देश में कृषि को महत्व देना जरूरी है। सरकार ने कृषि कार्य को प्राकृतिक आपदाओं/समस्याओं से बचाने तथा एक बड़े वर्ग को भविष्य के लिए आशान्वित रखने के लिए जो राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना लागू की है, वह कितनी सफल हुई है और उसके क्रियान्वयन से भारतीय कृषि तथा इन्दौर जिले के कृषकों के आर्थिक विकास पर क्या प्रभाव हुआ है। अत: कोई कमी पायी जाती है तो उसके कारणों को ज्ञात कर सुझाव प्रस्तुत करना है।

अध्ययन के उद्देश्य:-

1. राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना के क्रियान्वयन का अध्ययन करना।
2. राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना का इन्दौर जिले के कृषकों के आर्थिक विकास पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करना।
3. राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना के क्रियान्वयन में प्राप्त कमियों/समस्याओं को ज्ञात कर उन पर सुझाव एवं निष्कर्ष प्रदान करना।

शोध की परिकल्पनाएँ:-

1. राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना का क्रियान्वयन सफलतापूर्वक हुआ है या राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना का क्रियान्वयन सफलतापूर्वक नहीं हुआ है।
2. राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना के क्रियान्वयन से इन्दौर जिले में कृषि उत्पादन में वृद्धि हुई हैं या राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना के क्रियान्वयन से इन्दौर जिले में कृषि उत्पादन में वृद्धि नहीं हुई हैं।

शोध प्रविधि – प्रस्तुत अध्ययन में द्वितीयक समंक तथा प्रश्नावली पद्धति का प्रयोग किया गया है। शोध पत्र में विभिन्न पत्रिकाओं, वेबसाइट तथा एग्रीकल्चरल इन्श्योरेंस कम्पनी द्वारा जारी समंक का संकलन कर वर्णात्मक तथा विश्लेषणात्मक पद्धति का प्रयोग किया गया है। प्राथमिक स्तर की जानकारी कृषकों से प्रश्नावली के माध्यम से प्राप्त की गयी है।

निदर्शन का चयन – प्रस्तुत अध्ययन देश के मध्यप्रदेश राज्य के इन्दौर जिले की सभी 2 तहसीलों में से प्रत्येक तहसील से 5-5 ग्रामों से राष्ट्रीय कृषि बीमा योजनाओं से लाभान्वित 10-10 कृषकों का दैव निदर्शन विधि द्वारा चयन किया गया हैं। इस प्रकार जिले के 10 गाँवों में से कुल 100 कृषक का अध्ययन किया गया हैं।

राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना का क्रियान्वयन सफलतापूर्वक हुआ है।1999-2000 से प्रारम्भ इस योजना के अन्तर्गत वर्ष 2013-14 तक 164 करोड़ किसानों को कवर किया जा चुका है। जिनकी बीमित राशि 1980553 करोड़ रुपये हैं तथा प्रीमियम राशि 653.06 करोड़ रुपए है और कुल दावे 25073 करोड़ रुपए है।

तालिका-1 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका 1 से स्पष्ट है कि प्रत्येक वर्ष राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना का प्रदर्शन बेहतर हो गया है अर्थात योजना के अन्तर्गत प्रत्येक वर्ष बीमित किसानों की संख्या में वृद्धि होती गयी है, और कृषि भूमि हेक्टेअर क्षेत्र में भी वृद्धि हुई है साथ ही किसानों से प्राप्त प्रीमियम और योजना के अन्तर्गत

* प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (वाणिज्य) श्री अटल बिहारी वाजपेयी शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी, श्री अटल बिहारी वाजपेयी शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म. प्र.) भारत

लाभान्वित कृषकों को किए गए भुगतान राशि में भी वृद्धि ही पायी गयी है। उपर्युक्त तालिका देश के समस्त राज्यों का कुल डाटा लिया गया है तथा पूरे देश का डाटा दर्शाया गया है तथा उपर्युक्त डाटा (तालिका) आर्थिक सर्वेक्षण (2009-10) और एग्रीकल्चरल इन्श्योरेंस कम्पनी ऑफ इण्डिया लिमिटेड, नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित वार्षिक प्रतिवेदन (2013-14) पर आधारित है।

तालिका-2 : जिले में कृषि बीमा योजना के अन्तर्गत बीमित कृषकों की स्थिति (खरीफ व रबी के समय)

वर्ष	बीमित किसानों की संख्या	जिले के कुल किसानों पर बीमित किसानों का प्रतिशत
	खरीफ	
2009	39059	30.23
2010	44221	34.23
2011	48411	37.47
2012	52330	40.51
2013	65420	50.64
	रबी	
2009-10	48228	37.33
2010-11	37656	29.15
2011-12	38928	30.13
2012-13	43552	33.71
2013-14	92586	71.67

स्रोत:-

1. एग्रीकल्चरल इन्श्योरेंस कम्पनी, भोपाल
2. कृषि उपसंचालक विभाग, जिला इन्दौर
3. भू-अभिलेख विभाग, जिला इन्दौर
4. जिला सांख्यिकी विभाग, जिला इन्दौर

उपर्युक्त तालिका के अध्ययन से स्पष्ट है कि जिले में कृषकों का कृषि बीमा योजना के प्रति रूझान बढ़ा है अर्थात प्रत्येक वर्ष कृषि बीमा योजना के अन्तर्गत बीमित कृषकों की संख्या में वृद्धि हुई है क्योंकि खरीफ के समय जहाँ वर्ष 2009 में बीमित कृषकों की संख्या 39059 थी। वह वर्ष 2013 में बढ़कर 65420 हो गयी है, जो लगभग 20.41 प्रतिशत की वृद्धि है तथा वहीं रबी के समय वर्ष 2009-10 में जहाँ बीमित कृषकों की संख्या 48228 थी वही 2013-14 में बढ़कर 92586 हो गयी है, जो कि 34.34 प्रतिशत तक की वृद्धि दर है।

तालिका-3 : जिले में कृषि बीमा योजना के अन्तर्गत कृषि भूमि का बीमित क्षेत्रफल हेक्टेयर में

वर्ष	बीमित क्षेत्रफल (हेक्टेयर में)	बोया गया कुल क्षेत्रफल (हेक्टेयर में)	बोये गये क्षेत्रफल पर बीमित क्षेत्रफल का प्रतिशत
		खरीफ	
2009	121381.55	252919	47.99
2010	130280.56	253044	51.49
2011	135279.71	248997	54.32
2012	137847.00	250459	55.04
2013	172162.21	250728	68.66
		रबी	
2009-10	134309.29	164007	81.89
2010-11	102475.78	178911	57.28
2011-12	102081.20	185870	54.92
2012-13	112951.12	199879	51.07
2013-14	148114.98	210990	70.20

स्रोत:-

1. एग्रीकल्चरल इन्श्योरेंस कम्पनी, भोपाल
2. कृषि उपसंचालक विभाग, जिला इन्दौर
3. भू-अभिलेख विभाग, जिला इन्दौर
4. जिला सांख्यिकी विभाग, जिला इन्दौर

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि जिले में खरीफ व रबी की कृषि के बोए गए क्षेत्रफल में औसतन रूप से वृद्धि के साथ-साथ बीमित क्षेत्र में भी वृद्धि हुई है। इसीलिए तो खरीफ के मौसम में जहाँ वर्ष 2009 में बोया गया व बीमित क्षेत्रफल 252919 और 121381.55 हेक्टेयर था। वह वर्ष 2013 में 250728 व 172162.21 हेक्टेयर हो गया है। और रबी के सीजन में भी वर्तमान समय में कृषि का बीमित क्षेत्र 148114.98 हेक्टेयर है, जो बोए गये क्षेत्रफल का 70.20% है।

राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना के क्रियान्वयन से इन्दौर जिले में कृषि उत्पादन में वृद्धि हुई हैं।

तालिका-4 : वर्ष 2009-14 तक जिले के किसानों द्वारा किया गया गेहूँ का उत्पादन, बीमित किसानों की संख्या एवं क्षतिपूर्ति की प्राप्त राशि

वर्ष	क्षतिपूर्ति की प्राप्त राशि	गेहूँ का उत्पादन (मि. टन)	बीमित किसानों की संख्या
2009-10	29.73	257.84	48228
2010-11	58.93	259.79	37656
2011-12	60.30	490.57	38928
2012-13	0	516.84	43552
2013-14	790.88	347.11	92586

सारांश

	Cases					
	Valid		Missing		Total	
	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
गेहूँ का उत्पादन प्राप्त दावा राशि	5	100.0%	0	0.0%	5	100.0%

गेहूँ के समय बीमित किसानों को वितरित की गई राशि

		बीमित किसानों की संख्या					कुल
		.00	29.73	58.93	60.30	790.88	
गेहूँ का उत्पादन	257.84	0	1	0	0	0	1
	259.79	0	0	1	0	0	1
	347.11	0	0	0	0	1	1
	490.57	0	0	0	1	0	1
	516.84	1	0	0	0	0	1
कुल		1	1	1	1	1	5

x^2 परीक्षण

	मान	df	Asymp. Sig. (2-sided)
Pearson Chi-Square	20.000[a]	16	.220
Likelihood Ratio	16.094	16	.446
Linear-by-Linear Association	.088	1	.767
N of Valid Cases	5		

उपर्युक्त परीक्षण से प्रस्तुत होता है कि x^2 का मान .220 है, जो 5 प्रतिशत से कम है। इसलिए वैकल्पिक परिकल्पना अस्वीकृत हुई है तथा शून्य परिकल्पना स्वीकृत हुई है।

राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना के क्रियान्वयन में प्राप्त कमियाँ/समस्याएँ:-

1. **ऊँची ब्याज दरों पर ऋण प्राप्त करना –** जिन किसानों ने गैर वित्तीय संस्थानों से ऋण लिया हुआ है/लेते हैं, ऐसे ऋणों का न्यूनतम 36 प्रतिशत वार्षिक व अधिकतम 60 प्रतिशत व इससे भी अधिक दरों से ब्याज वसूला जाता है। ऊँची ब्याज दरें छोटे किसानों के आर्थिक विकास में बाधक है।

2. **कृषि वित्त की कमी –** जो किसान बैंकिंग व गैर बैंकिंग संस्थानों से ऋण लेकर डिफाल्टर/अतिदेय हो गए हैं और वर्षो से ऋण लिये हुए ऋण व ब्याज की रकम का भुगतान नहीं कर पा रहे हैं, उन्हें पुन: कृषि वित्त प्राप्त करने में कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा है।

3. **कम आय –** प्रमाणित बीज, रासायनिक उर्वरक, कृषि यंत्रों को क्रय करने तथा सिंचाई व्यवस्था करने में लघु एवं सीमान्त कृषकों के पास आवश्यक कृषि वित्त की कमी है। छोटे किसानों की कृषि भूमि का औसत रकबा 0.62 हैक्टेयर है। कृषि भूमि का रकबा कम होने व असिंचित भूमि होने से फसलों का उत्पादन कम होता है। खाद्यान्न व दलहनी फसलों की उपज को छोटे किसानों के स्वयं के परिवारों द्वारा उपभोग कर लेने से विक्रय योग्य उपज की मात्रा कम हो जाती है। इस कारण उनकी आय में भी कमी हो जाती है।

4. **कृषि सम्बन्धी योजनाओं के नियमों व प्रक्रियाओं की जटिलता –** योजनाओं का लाभ लेने के लिए अनेकों नियमों का पालन करना होता है तथा कई जटिल प्रक्रियाओं की पूर्ति करनी होती है। कहाँ जाना है ? किससे सम्पर्क करना है ? निर्धारित आवेदन पत्र कौन देगा ? आवेदन के साथ और कौन-कौन से प्रपत्र संलग्न करना पड़ेंगे व उन प्रपत्रों को कौन अधिकृत करेगा ? प्रकरण स्वीकृत करने के लिए कौन-कौन अधिकारी अधिकृत है ? जन प्रतिनिधियों की बैठक में प्रस्ताव पास करवाना इत्यादि प्रक्रिया को पूर्ण करने में ग्रामीण कृषकों को अनेकों परेशानियों को सहन करना होता है।

जिले के कृषकों की समस्याओं के समाधान हेतु सुझाव:-

1. **आधुनिक कृषि उपकरणों को जुटाना –** कृषि कार्यों को करने के लिए कृषकों को कई उपकरणों की आवश्यकता होती है। जिन कृषकों के पास कृषि उपकरण उपलब्ध नहीं है, आवश्यकता पड़ने पर कृषि यंत्रों की कमी न रहे। ये उपकरण शासन की विभिन्न कृषि योजनाओं के तहत बैंकिंग संस्थानों से ऋण लेकर क्रय किए जा सकते हैं।

2. **कृषिगत योजनाओं की प्रक्रिया सरल करना –** कृषकों को लाभ देने के लिए बनायी गयी शासकीय योजनाओं की प्रक्रिया सरल होनी चाहिए ताकि निरक्षर कृषक भी उन योजनाओं का लाभ प्राप्त कर सके। उनको उपकरण, बीज, उर्वरक की सुविधाएँ और अनुदान उपलब्ध कराने में कृषि विभाग के अधिकारियों व कर्मचारियों को सकारात्मक व्यवहार अपनाना चाहिए।

3. **बैंकिंग संस्थानों से ही कृषि वित्त प्राप्त करना –** कृषकों को अपने क्षेत्र में स्थित बैंक शाखा से ही कृषि क्रियाओं को सम्पन्न करने के लिए कृषि ऋण प्राप्त करना चाहिए क्योंकि इन ऋणों पर रिजर्व बैंक द्वारा निर्धारित दरों से ब्याज लिया जाता है। ब्याज की दर प्राय: कम ही रहती है, जो 5-12 प्रतिशत वार्षिक रहती है।

4. **ऋण राशि को जमा करवाना –** कृषकों को उनके द्वारा लिए गए ऋणों की राशि को समय पर ऋणदाताओं के यहाँ जमा करवा देना चाहिए। प्राप्त की गयी राशि व इसके ब्याज को समय पर जमा करवा दिए जाने से व्यवहार बना रहता है तथा पुन: ऋण प्राप्त करने में सुविधा होती है। प्राप्त की गयी ऋण राशि को समय पर जमा नहीं करवाए जाने से प्रतिकूल व्यवहार/विवाद उत्पन्न होते हैं तथा नये ऋण प्राप्त करने में कठिनाइयाँ आती है। अत: ऋण राशि को समय पर जमा करवा दिया जाना चाहिए।

निष्कर्ष – राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना के क्रियान्वयन के बाद कृषकों का आर्थिक विकास हुआ है क्योंकि योजना के पश्चात् जहाँ किसानों को ऋण आसानी से प्राप्त हो जाता है, वहीं फसल बर्बाद होने पर क्षतिपूर्ति के रूप में राशि (आर्थिक सहायता) भी प्राप्त होती है एवं कृषक योजना पश्चात् दोहरी, तीहरी फसल तक लेने के साथ-साथ अधिक मूल्य वाली जोखिम भरी फसलों का उत्पादन भी करने लगे हैं, जिससे कृषि की उत्पादकता में वृद्धि हुई है। उत्पादन वृद्धि से कृषकों की आय में वृद्धि हुई तथा आय वृद्धि से कृषकों का आर्थिक जीवन स्तर ऊँचा उठा है व कृषकों का आर्थिक विकास हुआ है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. मध्यप्रदेश एक भौगोलिक अध्ययन डॉ. प्रमिला कुमार मध्यप्रदेश हिन्दी अकादमी, भोपाल 2010
2. आर्थिक विकास एवं नियोजन प्रो. आर. एन. दुबे एवं डॉ. वी. पी. सिन्हा नेशनल पब्लिक शिव हाउस, नई दिल्ली 2008
3. भारतीय अर्थव्यवस्था रूद्र दत्त (के. पी. एम. सुन्दरम्) रस्तोगी एण्ड कम्पनी, मेरठ 2006
4. उपकार मध्यप्रदेश डॉ. लाल एवं जैन उपकार प्रकाशन (प्रिंटिंग यूनिट) आगर 2007
5. प्रतियोगिता साहित्य मध्यप्रदेश लेखन एवं सम्पादन सम्पादक मण्डल साहित्य भवन पब्लिकेशन्स (भवन प्रिन्टर्स, आगरा) 2009

समाचार पत्र एवं पत्रिका :-

1. प्रतियोगिता दर्पण (सामान्य अध्ययन) - भारतीय अर्थव्यवस्था
2. सामान्य ज्ञान दिग्दर्शन (उपकार)
3. योजना (मासिक पत्रिका)

वेबसाइट:-

1. www.economicimes.com
2. www.mpkrishi.org
3. www.aicoindia.com

तालिका-1 : राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना का रबी और खरीफ के लिहाज से वर्षवार प्रदर्शन

क्र.	वर्ष	राज्यों की संख्या	सम्मिलित किसान (लाख में)	क्षेत्र(मिलियन हेक्टेअर में)	बीमित राशि (करोड़ में)	प्रीमियम (करोड़ में)	कुल दावे (करोड़ में)
1	1999-2000	9	5.8	7.8	356	5	8
2	2000-2001	18	105.0	163.3	8506	235	1281
3	2001-2002	20	106.6	160.4	9001	292	559
4	2002-2003	21	121.0	195.7	11270	365	2013
5	2003-2004	23	123.9	188.3	11164	347	1150
6	2004-2005	25	162.2	296.1	16945	535	1199
7	2005-2006	25	167.2	277.5	18589	555	1398
8	2006-2007	25	179.1	273.0	21352	610	2249
9	2007-2008	25	184.43	281.43	24475	683	1722.9
10	2008-2009	25	191.54	265.58	26671	802	3609.1
11	2009-2010	25	200.00	275.60	27855	950	3809.2
12	2010-2011	25	210.00	279.00	28765	959	3988.4
13	2011-2012	25	221.04	285.50	29840	1065	4091.5
14	2012-2013	25	228.20	294.74	30150	1149	5121.6
15	2013-2014	25	254.2	314.70	32144	1244	5431.2
	महायोग	25	164.00	237.4	1980553	653.06	2508.73

स्रोत:-

1. आर्थिक सर्वेक्षण (2009-10) और
2. एग्रीकल्चर इंश्योरेन्स कम्पनी ऑफ इण्डिया लिमिटेड, नई दिल्ली 2014

****

फुटकर व्यापारियों द्वारा कम्प्यूटरीकृत लेखांकन प्रणाली का अंगीकरण

डॉ. देवेन्द्र प्रसाद पाण्डेय * आशीष सिंह **

प्रस्तावना – फुटकर व्यापारी जिनका व्यापार क्षेत्र बहुत सीमित दायरे तक होता है, हमारी रोजमर्रा की वस्तुओं को उपलब्ध कराने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। वर्तमान युग कम्प्यूटर का युग है इन व्यापारियों ने अपने लेखांकन सम्बन्धी कार्य में इसका कितना उपयोग किया है प्रस्तुत शोध का उद्देश्य इसी विषय पर केन्द्रित है। कम्प्यूटरीकृत लेखांकन प्रणाली एक लेखांकन सूचना प्रणाली के समान कार्य करता है। ये वित्तीय क्रियाकलापों के क्रियान्वित और घटनाओं का सामान्य स्वीकार्य लेखांकन सिद्धांन्त के अनुरुप विवरणों/प्रलेखों को उपयोगकर्ता की आवश्यकतानुसार तैयार करता है।कम्प्यूटरीकृत लेखांकन प्रणाली में आकडों के भण्डारण व प्रक्रिया के कार्य ढांचे को प्रचालन वातावरण कहते हैं। इसमें हार्डवेयर व साफ्टवेयर दोनों सम्मिलित होते हैं, जिसमें लेखांकन प्रणाली प्रचलित होती है। प्रयोग की गई लेखांकन प्रणाली प्रचालन वातावरण को निर्धारित करती है। आधुनिक कम्प्यूटरीकृत लेखांकन प्रणाली डाटा बेस की प्रणाली पर आधारित है। डाटा बेस को डाटा बेस प्रबंधन प्रणाली द्वारा लागू किया जाता है, जो कम्प्यूटर प्रोग्राम (अथवा साफ्टवेयर) का वह समूह है जो डेटा को प्राप्त करनें में सहायता करता है। अधिकांश छोटे तथा मध्यम प्रकार के व्यापारियों द्वारा लेखांकन सम्बन्धी कार्य के लिए टैली साफ्टवेयर का प्रयोग किया जाता है। व्यापारियों ने कम्प्यूटरीकृत लेखांकन प्रणाली को अंगीकृत किया है कि नहीं। यह जानने का प्रयास किया गया है।

इस्लाम 2010 - कम्प्यूटरीकृत लेखा प्रणाली (CAS) एक साफ्टवेयर प्रोग्राम है जो विभिन्न लेखांकन संबन्धी जानकारियां जैसे बिक्री,खरीदी,प्राप्तियां,देनदारियां,नकद प्राप्तियां,नकद संविवरण एवं पेरोल सम्बन्धी जानकारी को इकट्ठा करते हैं साथ ही साथ इस प्रक्रिया से वित्तीय विवरण तैयार होता है। **नैश 1989(NASH1989),** व्यवसाय में कम्प्यूटर की उपस्थिति 1950 के दशक में हुई थी। जिसे सूचना प्रणाली की एक बड़ी क्रांति माना जाता है। **Stung, Portz and Busta 2006**, ने कम्प्यूटरीकृत लेखा प्रणाली के बारे में अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा है कि ये लेखा प्रणाली धीरे-धीरे मैन्युअल लेखा प्रणाली की जगह ले रहा है। **क्रिस्टोफर के एवं रिचर्ड डब्ल्यू(Christopher k and Richard w),** द्वारा प्रस्तुत शोध पत्र में यह विचार किया कि केन्या(Kenya) देश के व्यवसायिक प्रतिष्ठानों में से 59.2% प्रतिष्ठानों में कम्प्यूटर उपलब्ध नहीं है केवल 40.8% प्रतिष्ठानों में कम्प्यूटर उपलब्ध है।जब इतने बड़े पैमानें पर प्रतिष्ठानों में कम्प्यूटर उपलब्ध नहीं है, तो कम्प्यूटरीकृत लेखा प्रणाली के अंगीकरण की प्रक्रिया का रास्ता बहुत कठिन हो जाता है। अपने शोध को आगे बढाते हुए इन्होंने अपने सर्वेक्षण में यह भी बताया है कि 80.3% व्यापारियों द्वारा लेखांकन संबंधी गतिविधियां कम्प्यूटरीकृत माध्यम से नहीं किया जाता है। **पोर्टर एवं मिलर 1985**, नें वर्तमान समय में बाजार में व्याप्त प्रतियोगिता ने व्यापारिक अनिश्चितताओं को जन्म दिया है। इस अनिश्चितता को दूर करने के लिए नवाचार करने की आवश्यकता महसूस की जा रही है आईटी के नये तरीके अपना कर हम अपने व्यवसाय की मांग को बाजार में बढ़ा सकते हैं। इसके लिए व्यवसाय की संरचना में आईटी को स्थान देना पड़ेगा।लघु व्यवसायी द्वारा लेखांकन की पारंपरिक विधि मेन्युअल एकाउन्टिंग का प्रयोग लेखा तथा वार्षिक कर रिटर्न में किया जाता है। सूचना प्रौद्योगिकी को अपनाने से हमारी लेखांकन सम्बन्धी कार्यप्रणाली बहुत आसान होगी साथ ही साथ कर विवरणिका दाखिल करने में हमें समस्या का सामना नहीं करना पडेगा। वर्तमान समय में उपलब्ध साफ्टवेयर जो हमारी लेखा सम्बन्धी समस्याओं को काफी हद तक दूर किया है तथा कार्यप्रणाली को काफी आसान बनाया है। **Chenhall and Morris (1986)**, ने अपने विचार व्यक्त करते हुए लघु एवं मध्यम प्रकार के उपक्रमों को लाभ प्राप्त उभरता हुआ संगठन माना है, इन्हें बचानें की और अधिक आवश्यकता है, बाजार में हो रहे परिवर्तन जैसे ग्राहक का व्यवहार, रुझान व मूल्य परिवर्तन की जानकारी होनी आवश्यक है। चीन और वियतनाम द्वारा प्रस्तुत किए गए कम श्रम के लागत के सिद्धांत में बाजार में प्रतिस्पर्धा को बढ़ा दिया है। ऐसी स्थिति में कम्प्यूटरीकृत लेखा प्रणाली हमें शीघ्र एवं सही निर्णय लेने में सहायता करेगा। **लिन्डा 2004 (Linda 2004)** , ने अच्छे लेखांकन प्रणाली के बारे में यह कहा है कि अच्छा लेखांकन प्रणाली सटीक एवं व्यापक परिणाम प्रदान करता है जिससे हम वर्तमान एवं पूर्व के वर्षो के आंकडों का तुलनात्मक अध्ययन कर वित्तीय अनुमान लगा सकते हैं, लेनदेनों, बैंकरों और आयकर रिटर्न में हमारी सहायता प्रदान करता है साथ ही साथ वृद्धियों एवं जालसाजी का खुलासा भी करता है। ऐसे कार्यो के लिए कम्प्यूटरीकृत लेखा प्रणाली की भूमिका अहम हो जाती है। **बनर्जी और लॉयड 1995 (Banerjee and Loyd)** , ब्रिटिश कम्पनियों पर किए गए अपने सर्वेक्षण में यह परिणाम व्यक्त किया है कि कम्पनियों द्वारा 79% डाटा मेन्युअल रखे जाते हैं। इनके द्वारा अधिकांश कार्य मेन्युअल शीट से तैयार की जाती है। इस अध्ययन से यह संकेत मिलता है कि कम्प्यूटरीकृत लेखा प्रणाली के प्रति कम्पनियों का व्यवहार उदासीन है इसे दूर किए जाने की आवश्यकता है। **Klien 2002**, नें अपनें विचार व्यक्त करते हुए कहा है कि छोटे एवं बडे व्यवसाय में लेखांकन संबंधी कार्य प्रणाली में समानता होनी चाहिए। जहां छोटे व्यवसायी को अपनी संपत्तियों , दायित्वों, आय एवं व्ययों का सही तरीके से लेखांकन संबन्धी संचालन

* एसो. प्रोफेसर, महात्मा गाँधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय, चित्रकूट (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी , महात्मा गाँधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय, चित्रकूट (म.प्र.) भारत

करना चाहिये वहीं बडे व्यवसायियों को आय, व्यय, पूंजी एवं दायित्व संबन्धी कार्य लेखा सुचारु रुप से संचालित करना चाहिये। यदि दोनों के लेखांकन सम्बन्धी कार्य प्रणाली में समानता होगी तो कम्प्यूटरीकृत लेखा प्रणाली को अपनाने में समस्या का सामना नहीं करना पडेगा।

कम्प्यूटरीकृत लेखा प्रणाली (CAS) की सामान्य कार्यप्रणाली – कम्प्युटरीकृत लेखा प्रणाली के संचालन के लिए बाजार में विभिन्न प्रकार के साफ्टवेयर मौजूद हैं। जिनके आधार पर लेखांकन सम्बन्धी गतिविधियां जैसे क्रय-विक्रय, प्राप्ति- भुगतान, आय-व्यय, स्टॉक, संपत्तियों , दायित्वों एवं पूंजी आदि का व्यवस्थित एवं सुरक्षित रुप में रखरखाव किया जा सकता है। उपर्युक्त लेनदेनों को नियमानुसार कम्प्यूटरीकृत रुप में रखनें से परिणामों को तैयार करनें की आवश्यकता नहीं होती है। वह अपने आप ही डाटा बेस रिकार्ड के माध्यम से हमें प्राप्त हो जाता है तथा इस परिणाम को आसानी से प्रिन्ट किया जा सकता है एवं एक स्थान से दूसरे स्थान में ले जाया जा सकता है।

चार्ट क्रमांक -01 (देखें अंतिम पृष्ठ पर)

कम्प्यूटरीकृत लेखांकन प्रणाली से लाभ – मेन्युअल लेखा प्रणाली की अपेक्षा कम्प्यूटरीकृत लेखा प्रणाली के बहुत से लाभ हैं , इन लाभों को निम्न बिन्दुओं से स्पष्ट करेंगे-

- मानवीकृत लेखा की लम्बी व झंझट भरी प्रक्रिया से मुक्ति मिल जाती है।
- समय व श्रम की बचत होती है।
- किसी भी समय शीघ्र व विश्वसनीय परिणाम प्राप्त किए जा सकते हैं।
- लेखांकन सम्बन्धी कार्य लागत में कमी आती है। क्यों कि केवल प्राइमरी डाटा अर्थात जर्नल इन्ट्री से काम पूर्ण हो जाता है, परिणाम स्वत: ही प्राप्त हो जाते हैं ।
- तलपट एवं अंतिम खाते बनाने के झंझटों से मुक्ति मिल जाती है।
- कर एवं विवरणिका दाखिल करने में हमें आसानी होती है।
- खातों में संशोधन बहुत ही आसानी से हो जाता है एवं संशोधित परिणाम स्वत: तुरन्त प्राप्त हो जाते हैं।
- खातों की गोपनीयता बनी रहती है।
- कम्प्यूटरीकृत प्रिन्टआउट के कारण साफ-सुथरे व स्पष्ट खाते तैयार हो जाते हैं।
- बैंक समाधान विवरण बनाना व मिलाना बिल्कुल आसान हो जाता है।

सम्बन्धित चार्ट क्रमांक -02(देखें अंतिम पृष्ठ पर)

उद्देश्य-भारत सरकार द्वारा डिजिटल इंडिया को बढावा देंने के लिए समय-समय पर बहुत सारे कदम उठाये जाते हैं। भविष्य में व्यापारियों को व्यापार करनें में कोई असुविधा न हो इससे बचनें के लिए कम्प्यूटरीकृत लेखा प्रणाली अपनाना आवश्यक है।

इस अनुसंधान के उद्देश्य को हम निम्न बिन्दुओं को स्पष्ट करेंगे-

- फुटकर व्यापारियों के लेखांकन सम्बन्धी कार्य की गुणवत्ता में कमी पायी जाती है आधुनिक लेखांकन प्रणाली को अपनी व्यापारिक क्रियाओं में शामिल करें। जिससे उनके लेखांकन सम्बन्धी कार्य की गुणवत्ता में वृद्धि हो और कम्प्यूटर के प्रति उनके अन्दर व्याप्त भ्रांतियों को समाप्त किया जा सके।
- लेखांकन सम्बन्धी कार्यो का विश्लेषण करके वे अपने व्यापार की प्रगति के लिए नयी योजनाएं बना सके और योजनाओं का क्रियान्वयन करके व्यापार लगातार उन्नति की ओर बढ सके।
- लेखांकन सम्बन्धी कार्यों में शुद्धता के साथ-साथ गुणात्मक सुधार हो।
- सरकार द्वारा हर प्रकार के व्यापारिक कर जैसे डायरेक्ट टैक्स,इनडायरेक्ट टैक्स एवं वर्तमान में लागू जीएसटी को आनलाइन कम्प्यूटर के माध्यम से विवरणिका दाखिल करना अनिवार्य कर दिया गया है। व्यापारियों को कोई असुविधा न हो इसके लिए इस लेखा प्रणाली के महत्व को उजागर करने का प्रयास किया गया है।
- मैन्यूअल माध्यम से रखे गए रिकार्ड के खराब होने का डर व उनके रख-रखाव संबंधी खर्चो को कम करनें का प्रयास किया गया है ।
- लेखांकन प्रक्रिया को सरल,पारदर्शी ,व्यवस्थित, शुद्ध एवं परिलक्षियत करने का प्रयास किया गया है।

शोध प्रविधि – प्रस्तुत शोध में सतना जिले के कुल व्यापारियों में से 40 फुटकर व्यापारियों का चयन दैव निर्देशन विधि का प्रयोग शोध के लिए किया गया है। अनुसूची के माध्यम से व्यापारियों के कम्प्यूटरीकृत लेखांकन प्रणाली के अंगीकरण की स्थिति को जानने का प्रयास किया गया है। अनुसूची से प्राप्त परिणामों की समीक्षा करते हुए आवश्यक सुझाव प्रस्तुत किए गए हैं।

आंकडों का विश्लेषण –प्रस्तुत शोध अध्ययन के लिए सतना जिले के हर वर्ग के फुटकर व्यापारियों में से न्यादर्श विधि का प्रयोग करते हुए अनुसूची के माध्यम से प्रश्नों के उत्तर जानने का प्रयास किया गया। उत्तरों के आधार पर यह परिणाम प्राप्त होता है कि 35%व्यापारियों द्वारा किसी भी प्रकार से कम्प्यूटरीकृत लेखा प्रणाली का प्रयोग नहीं किया जाता है। ये सभी व्यापारी लघु एवं मध्यम प्रकार के फुटकर व्यापारी हैं। इन व्यापारियों में से 29%व्यापारियों को कम्प्यूटरीकृत लेखांकन प्रणाली पर विश्वास नहीं है, जो कि उनके कम्प्यूटर के प्रति निम्न ज्ञान को प्रदर्शित करता है। जागरुकता का अभाव इन आंकडों से स्पष्ट रुप से प्रदर्शित हो रहा है। एकाउन्टिग साफ्टवेयर के प्रयोग के संबंध में पूछे गए प्रश्न से प्राप्त उत्तर में 65%व्यापारी Tally,29% व्यापारी Tata/Exel / Busy तथा 6%व्यापारी स्वंय द्वारा निर्मित एकाउन्टिंग साफ्टवेयर का उपयोग करते हैं। ये 6%व्यापारियों में से ज्यादातर व्यापारी वृहद पैमानें पर फुटकर व्यवसाय करते हैं। जिन व्यापारियों द्वारा कम्प्यूटरीकृत लेखा प्रणाली का प्रयोग किया जा रहा है जब हमने यह जानने का प्रयास किया कि वे कितने संतुष्ट हैं तो 39% व्यापारियों ने कहा पूर्ण संतुष्ट, 45%व्यापारियों ने कहा संतुष्ट(सामान्य) तथा 16%व्यापारियों असंतुष्टि व्यक्त की। यह सर्वेक्षण यह प्रकट करता है कि 84%व्यापारी कम्प्यूटरीकृत लेखा प्रणाली से संतुष्ट हैं।

निष्कर्ष एवं सुझाव –

- कम्प्यूटरीकृत लेखांकन के प्रति व्यापारियों की उदासीनता भविष्य में व्यापार चलाने में समस्या उत्पन्न करेगी क्योंकि भारत सरकार लगातार डिजिटल इंडिया को बढ़ावा देने के लिए कई प्रकार के कदम उठा रही है।
- कम्प्यूटरीकृत लेखा लेखांकन संबंधी कार्य प्रणाली की एक आदर्श विधि है इसे अपनाना व्यापारियों के हित में है।
- व्यापारियों में व्याप्त कम्प्यूटर के प्रति भ्रांतियों को दूर किया जाना चाहिए। इसके लिए भारत सरकार को व्यापारियें के लिए कम्प्यूटर प्रशिक्षण प्रोग्राम चलाना चाहिए।
- मैन्यूअल एवं कम्प्यूटरीकृत लेखा में अन्तर एवं कम्प्यूटरीकृत लेखा के महत्व को ज्यादा से ज्यादा व्यापारियों तक प्रचार -प्रसार के माध्यम

से प्रसारित की जानी चाहिये।

इन सब बिन्दुओं से हम यह कह सकते हैं कि आधुनिक युग कम्प्यूटर का युग है, हर वर्ग कम्प्यूटर को अपना रहा है। ऐसी स्थिति में व्यापारियों को भी कम्प्यूटरीकृत लेखा प्रणाली अपनाना चाहिये, जिससे व्यापारिक लेखा विधि को एक सर्वोच्च आयाम मिल सके और हम व्यापारिक लेखा को सरल एवं शुद्ध तरीके से चला सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची –

1. विजय कुमार, एकाउण्टिग एण्ड फाइनेंशियल मैनेजमेन्ट बुक,मारुति प्रकाशन मेरठ।
2. विजय कुमार, फाइनेंशियल एकाउण्टिग विद टैली बुक, मारुति प्रकाशन मेरठ।
3. एच के कपिल, अनुसंधान विधियाँ बुक, भार्गव बुक हाउस आगरा,2012।
4. Financial Accounting Part -2 Class 11th Book ,NCERT New Delhi ,2006.
5. Aradhana Relhan(2013), " E-Accounting Practices Of Smes In India', International Journal Of Technical Research(IJTR) Vol. 2, Issue 1, Mar-Apr 2013.
6. Mohd Fazli Mohd Sam (2012), "The Adoption of Computerized Accounting System in Small Medium Enterprises in Melaka, Malaysia', International Journal of Business and Management; Vol. 7, No. 18; 2012.
7. Mahesh U. Daru (2015), " ROLE OF COMPUTERIZED ACCOUNTING IN BANKING SECTOR', *International Journal of Advanced Research in Management and Social Sciences,* Vol. 4, No. 2, February 2015.
8. Richard W. (2014), "ADOPTION OF COMPUTERIZED ACCOUNTING SYSTEM BY COFFEE SOCIETIES IN NYERI COUNTY, KENYA', European Journal of Business and Social Sciences, Vol. 3, No.3 , pp 88-103, June 2014.
9. Banerjee , J., & Lloyd, A. (1995). Management Accountings and Information Technology. *Management Accounting.*
10. Naidu, S., & Chand, A. (2012). A Comparative Study Of The Financial Problems Faced By Micro, Small And Medium Enterprises In The Manufacturing Sector Of Figi And Tonga. *International Journal Of Emerging Markets .*

चार्ट क्रमांक –01

कम्प्यूटरीकृत लेखा प्रणाली (CAS) की सामान्य कार्यप्रणाली

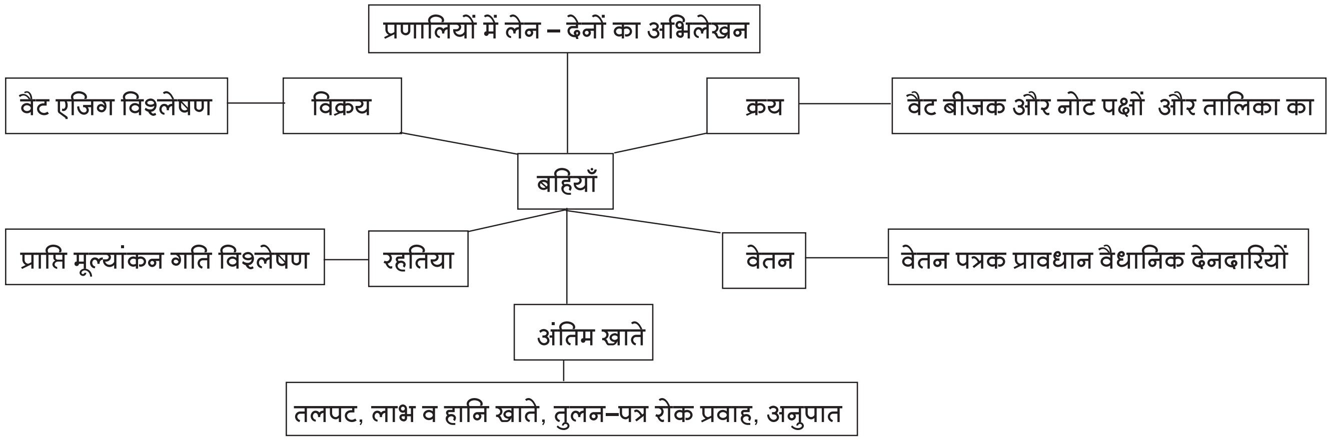

चार्ट क्रमांक –02

कम्प्यूटरीकृत लेखा प्रणाली के लाभ (Advantages of Computerized Accounting System)

त्रुटियों में कमी **(Reduce Error)**	खर्चों में कमी **(Reduce Expenses)**	स्वचालित रिपोर्ट **(Auto Report Generation)**
शुद्धा **(Accuracy)**	स्वचालित **(Automation)**	विश्वसनीयता **(Reliability)**
दस्तावेजों के रख–रखाव में आसानी **(Esay Document Production)**	गति **(Speed)**	यूजर फेडली **(User Friendly)**
डाटा की सुरक्षा **(Secutiry of data)**	शीघ्र सूचना तक पहुंचना **(Istant access of data)**	स्टाफ के लिए सहायक **(Helpful for staff)**
स्पष्टता **(Clarity)**	पुनरावृत्ति क्षमता **(REpetition Power)**	निर्णय क्षमता **(Decision Making Power)**

****

जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित, धार के वित्तीय विवरणों का विश्लेषण

सोहन सिंह डावेल * डॉ. सुनील कुमार शर्मा **

प्रस्तावना – धार जिला मध्यप्रदेश के पश्चिमी भाग में स्थित है। यह अनुसूचित जनजातीय बहुल जिला है। यह विंध्यांचल पर्वत श्रेणियों व मालवा के पठारी भाग पर अवस्थित है। ऐतिहासिक धार नगर प्राचीन काल से ही अपनी कला, साहित्य व संस्कृति के लिए प्रसिद्ध रहा है। इस जिले की अर्थव्यवस्था कृषि तथा कृषित्तर कार्यो पर आधारित है। जिले के पीथमपुर क्षेत्र को मध्यप्रदेश के औद्योगिक क्षेत्र के लिए विकसित किया गया है। पीथमपुर को मध्यप्रदेश का 'डेट्रायट' भी कहा जाता है। इस औद्योगिक क्षेत्र के विकास के अतिरिक्त शेष जिले में नाममात्र के उद्योग स्थापित है।

भारतीय अर्थव्यवस्था के संबंध में यह सर्वविदित विरोधाभास है कि– 'भारत एक धनी देश है, परन्तु यहां के निवासी निर्धन है।' स्वाधीनता के छ: दशक से भी अधिक समय से हम इस निर्धनता के कुचक्र को तोड़ने का भरसक प्रयास कर रहे हैं, लेकिन इसमें हमें आशातीत सफलता प्राप्त नहीं हुई है। भारत में आर्थिक विकास के लिए प्रथम पंचवर्षीय योजना से ही कृषि एवं उद्योगों को बढ़ावा देने की नीति का पालन किया गया। देश में स्थापित अधिकांश उद्योग कृषि आधारित है और भारतीय कृषि को वर्तमान में भी 'मानसून का जुआ' कहा जाता है।

देश में सहकारी बैंकों की स्थापना सहकारिता के आदर्शो के साथ की गई है। समाज में व्यक्ति के लिए सहकारिता एक जीवन दर्शन है। प्रत्येक अर्थव्यवस्था में सहकारिता का महत्वपूर्ण स्थान है। सहकारी बैंक मुख्य रुप से कृषि तथा कृषित्तर ऋण प्रदान करने के साथ–साथ छोटी बचतों को भी आकर्षित करती हैं। कृषकों एवं लघु व कुटीर उद्यमियों को वित्तीय सुविधा हेतु सहकारी बैंक सतत् प्रयत्नशील है। इनका मुख्य उद्देश्य ग्रामीण कृषक व लघु/कुटीर उद्यमियों को साहूंकारों से मुक्त कराना है। इससे न केवल कृषि व लघु/कुटीर उद्यम का विकास होगा, बल्कि देश की अर्थव्यवस्था पर भी इसका अच्छा प्रभाव होगा।

सहकारी बैंकों की इस महत्ता के कारण ही मध्यप्रदेश में जिला सहकारी बैंक स्थापित किए गए हैं। इन सहकारी बैंकों को ढ़ांचागत रुप से तीन स्तरों पर विभाजित किया गया है:– प्रथम–राज्य स्तर पर– राज्य सहकारी बैंक द्वितीय–जिला स्तर पर – जिला सहकारी बैंक।
तृतीय–ग्रामीण स्तर पर – प्राथमिक सहकारी कृषि साख समितियां।

हमारे देश में सहकारी साख संस्थाएँ बहुत पहले से ही कार्यरत् है। इसके सम्बन्ध में सन् 1904 में ही अधिनियम बनाया गया था। जिला केन्द्रीय बैंक एक ओर तो प्रांतीय बैंक और दूसरी ओर प्राथमिक समितियों के बीच मध्यस्थ का कार्य करती हैं। प्राथमिक साख समितियों की आर्थिक स्थिति अच्छी न होने के कारण वे अपनी आवश्यकता के अनुरुप वित्तीय साधन एकत्रित नहीं कर पातीं। व्यापारिक बैंक इन समितियों को ऋण नहीं प्रदान करते। अत: केन्द्रीय बैंक का मुख्य कार्य प्राथमिक समितियों की साख सम्बन्धी आवश्यकताओं को पूरा करना है। इस प्रकार वे कृषि समितियों के उत्पादक कार्यो के लिए विपणन समितियों का विपणन के तथा पूर्ति कार्यो के लिये, और औद्योगिक तथा अन्य प्रकार की समितियों के चालू व्यय के वित्तीय साधनों की पूर्ति का कार्य करते हैं।

केन्द्रीय सहकारी बैंक सम्बद्ध समितियों को वित्तीय साधन उपलब्ध कराने हेतु बैंकों द्वारा अंश पूंजी एकत्र करके, जनता से जमा प्राप्त करके तथा राज्य सहकारी बैंकों से ऋण लेकर कोष बनाती हैं और उसे बढ़ाती हैं। 'केन्द्रीय सहकारी बैंकों से यह अपेक्षा की जाती हैं कि वे प्राथमिक सहकारियों से निकट का व निरंतर संपर्क बनाए रखे, उनकी आवश्यकताओं और कठिनाइयों के प्रति सहानुभूति व सहयोग प्रदान करे और नीति विषयक मामलों पर उनका मार्गदर्शन करें। कुछ राज्यों के केन्द्रीय सहकारी बैंकों के पास प्राथमिक सहकारियों के निरीक्षण व देख रेख के अधिकार है, जबकि कुछ राज्यों में देख रेख का कार्य सहकारी विभाग करते हैं। अब उत्तरोत्तर यह समझा जाने लगा है कि केवल केन्द्रीय सहकारी बैंक ही वित्तीय साधनों एवं वसूली की देख रेख के लिए सर्वाधिक उपयुक्त हैं।

जिला केन्द्रीय बैंकों का प्रबंध संचालक मण्डल द्वारा किया जाता है। संचालक मण्डल का चुनाव साधारण सभा में होता है। साधारण सभा सर्वोच्च सत्ता होती हैं। संचालक मण्डल में प्राथमिक समितियों और व्यक्ति दोनों को प्रतिनिधित्व दिया जाता है, परन्तु प्राथमिक समितियों के प्रतिनिधियों की संख्या व्यक्तियों के प्रतिनिधियों से दुगनी होती हैं। संचालक मण्डल की सभा माह में एक बार होती हैं। संचालक मण्डल प्राथमिक समितियों के ऋण संबंधी प्रार्थना पत्रों की जांच करता है और उसकी सिफारिश प्रस्तुत करता है। अन्तिम निर्णय साधारण सभा के हाथ में होता है।

सम्बन्धित समितियों की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए बैंक निम्न चार स्त्रातों से वित्तीय साधन जुटाता है –

- अंशपूंजी
- जमा पर प्राप्त धन,
- शीर्ष बैंकों से प्राप्त ऋण
- रक्षित कोष।

बैंक निजी पूंजी के अन्तर्गत अंशपूँजी एवं रक्षित कोष को सम्मिलित किया जाता है। जिला केन्द्रीय सहकारी बैंक अपनी निजी पूँजी से बारह गुना अधिक ऋण ले सकते हैं। केन्द्रीय बैंक अब जनता से पर्याप्त मात्रा में धन एकत्रित करने में सफल हो रहे हैं। जिला केन्द्रीय सहकारी बैंक वित्तीय

* शोधार्थी, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत
** प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय महाविद्यालय, बड़वाह, जिला–खरगोन (म.प्र.) भारत

आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए अधिकतर शीर्ष बैंक पर निर्भर है। केन्द्रीय बैंकों की वित्तीय स्थिति में सुदृढ़ता के लिए ग्रामीण साख सर्वे समिति ने अनिश्चित काल के लिए सरकार की साझेदारी की सिफारिश की है।

8-3लाभदायकता अनुपात:-

अनुपात विश्लेषण (Ratio Analysisi) - किसी भी संस्था की आर्थिक स्थिति ज्ञात करने के लिए प्रतिवर्ष अंतिम खाते (व्यापार, लाभ-हानि खाता और चिट्ठा) बनाऐ जाते हैं। लाभ-हानि खाते से संस्था की लाभदायता और चिट्ठे की सहायता से संस्था की सम्पति/दायित्वों को ज्ञात किया जाता है। इन खातों में संस्था की वित्तीय स्थिति एवं लाभदायकता ज्ञात हो जाती हैं लेकिन इनका विश्लेषण करने के पश्चात् ही ठोस निर्णय किए जा सकते हैं।

वित्तीय विवरणों के विश्लेषण की विभिन्न पद्धतियाँ प्रचलित है। इनमें अनुपात विश्लेषण सर्वाधिक प्रचलित एवं उपयोगी पद्धति है। अनुपात विश्लेषण की सहायता से वित्तीय विवरणों में दिए गए समंकों एवं अन्य सूचनाओं के बीच सम्बन्धों का विश्लेषण किया जाता है। अनुपात विश्लेषण वित्तीय विवरणों के विश्लेषण एवं निर्वाचन की तकनीक है। अनुपात विश्लेषण संस्था के सकारात्मक एवं नकारात्मक पहलुओं को समझने का एक महत्वपूर्ण माध्यम है।

वित्तीय विश्लेषण को वित्तीय विवरणों का विश्लेषण करके फर्म की वित्तीय स्थिति के सम्बन्ध में उसी प्रकार निष्कर्ष निकालना होता है, जिस प्रकार एक डॉक्टर किसी रोगी के रक्तचाप एवं अन्य शारीरिक लक्षणों की सहायता से न केवल बिमारी के सम्बन्ध में निष्कर्ष निकालता है , बल्कि उसका उपचार भी निर्धारित करता है।

लाभदायकता अनुपात (Profitibality Ratio) - व्यावसायिक संस्था का प्रमुख उद्देश्य लाभार्जन होता है। संस्था द्वारा अर्जित लाभ दर्शाता है कि संस्था का संचालन कितनी कुशलता से हो रहा है। लाभ कर्मचारियों और प्रबंधकों की कार्य क्षमता का भी परिचायक है। इसके साथ ही यह निवेशकों को ग्यारण्टी प्रदान करता है कि उनका निवेश सुरक्षित है। अर्जित लाभ संस्था को समग्र रुप से विश्लेषित करने का मापदण्ड भी है। यद्यपि जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक, धार को लाभदायकता के आधार पर मूल्यांकित करना ठीक नहीं माना जा सकता है, क्योंकि बैंक की स्थापना का प्रमुख उद्देश्य कृषकों को साख सुविधा उपलब्ध करना है। बैंक इसके अतिरिक्त अन्य वाणिज्यिक बैंकों के समान अन्य वित्तीय सेवाऐं भी उपलब्ध कराती हैं। यदि लाभार्जन न हो तो बैंक संचालन में कठिनाई होती हैं। बैंक द्वारा अर्जित लाभों के आधार पर लाभार्जन क्षमता व अन्य अनुपातों का विश्लेषण इस प्रकार किया गया है -

सम्पत्ति पर प्रत्याय दर अनुपात (Return Rate on Assets Ratio) - बैंक की कुल सम्पत्तियों (चल + अचल) का शुद्ध लाभ के साथ अनुपात ज्ञात कर प्रत्याय दर का आकलन किया गया है। बैंक की सम्पत्तियां रोकड, देनदान, ऋण, स्थायी सम्पत्तियां, निवेश तथा अर्जित शुद्ध लाभ के समंकों की सहायता से निम्न सूत्र के द्वारा यह अनुपात प्रदर्शित किया गया है -

$$\text{Return on Total Assests} = \frac{\text{Net Profit}}{\text{Total Assests}} \times 100$$

तालिका क्रमांक 01

जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक, धार की कुल सम्पत्ति पर प्रत्याय दर (राशि लाख में)

क्र.	वर्ष	शुद्ध लाभ	कुल सम्पत्ति	अनुपात
1	2010-11	362.32	39132.52	0.92
2	2011-12	324.02	48446.61	0.66
3	2012-13	555.88	57466.10	0.96
4	2013-14	114.15	71287.41	0.16
5	2014-15	835.17	74909.99	1.11

स्त्रोत - वार्षिक प्रतिवेदन (जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित, धार)

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक की कुल सम्पत्ति पर प्रत्याय दर गत पांच वर्षो में असमान रही हैं। बैंक द्वारा कुल सम्पत्ति पर प्रत्याय दर यद्यपि व्यावसायिक दृष्टि से उचित नहीं है, परन्तु सहकारी बैंक का मुख्य कार्य कृषकों को वित्तीय सहायता उपलब्ध कराना है। 2013-14 में प्रत्याय दर सबसे कम रही हैं, इसके पश्चात् इस दर में अपेक्षित वृद्धि हुई, जिससे 2014-15 में प्रत्याक्ष दर सर्वाधिक रही हैं।

अंशपूंजी दर प्रत्याय दर:-

किसी भी संस्था के सदस्यों द्वारा प्रदत्ता अंषपूंजी के साथ अर्जित लाभ की तुलना करने हेतु इस अनुपात की गणना की जाती हैं। जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक के सदस्यों की अंषपूंजी पर बैंक ने किस तरह से लाभ अर्जित किया है, इसका विश्लेषण निम्न तालिका से प्रस्तुत किया गया है:-

$$\textbf{अंशपूंजी पर प्रत्याय दर} = \frac{\textbf{शुद्ध लाभ}}{\textbf{अंशपूंजी}} \times 100$$

तालिका क्रमांक 02

जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक, धार की अंशपूंजी पर प्रत्याय दर (राशि लाख रु. में)

क्र.	वर्ष	शुद्ध लाभ	अंशपूंजी	अनुपात
1	2010-11	362.32	3106.43	11.66
2	2011-12	324.02	3998.49	08.10
3	2012-13	555.88	5131.85	10.83
4	2013-14	114.15	5369.29	02.12
5	2014-15	835.17	5493.77	15.20

स्त्रोत -वार्षिक प्रतिवेदन (जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित, धार)

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि बैंक की अंशपूंजी पर प्रत्याय दर अच्छी है। 2013-14 के वर्ष में अंशपूंजी पर प्रत्याय दर में भारी कमी प्रदर्शित हो रही हैं, जबकि अन्य वर्षो में यह दर औसत रही हैं। 2014-15 में पुन: इस दर में भारी वृद्धि हुई हैं।

कार्यशील पूंजी पर प्रत्याय अनुपात - साधारणत: चल सम्पत्ति और चल दायित्व के अन्तर को कार्यशील पूंजी माना जाता है। बैंक की कार्यशील पूंजी के साथ अर्जित लाभ की स्थिति को स्पष्ट करने के लिए इस अनुपात की गणना की गई हैं। यह अनुपात स्पष्ट करता है कि बैंक अपनी कार्यशील पूंजी पर किस दर से लाभार्जन कर रहा है-

$$\textbf{कार्यशील पूंजी पर प्रत्याय दर} = \frac{\textbf{शुद्ध लाभ}}{\textbf{कार्यशील पूंजी}} \times 100$$

तालिका क्रमांक 03

कार्यशील पूंजी (राशि लाख रु. में)

क्र.	वर्ष	शुद्ध लाभ	कार्यशील पूंजी	अनुपात
1	2010-11	362.32	39082.09	0.92
2	2011-12	324.02	48375.04	0.66
3	2012-13	555.88	55693.91	0.99
4	2013-14	114.15	71022.13	0.16
5	2014-15	835.17	72428.83	1.15

स्त्रोत - वार्षिक प्रतिवेदन (जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित, धार)

उपर्युक्त तालिका बैंक की कार्यशील पूंजी पर प्रत्याय दर वाणिज्यिक बैंकों की तुलना में उचित नहीं है। बैंक कृषकों को उनकी वित्तीय आवश्यकता की पूर्ति कर धनोपार्जन कर रहा है। कार्यशील पूंजी पर प्रत्याय दर 2013-14 में कम रही हैं और 2014-15 में इसमें वृद्धि प्रदर्शित हुई हैं।

जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित, धार की आर्थिक सुदृढ़ता को सत्यापित करने के लिए शोधार्थी ने वित्तीय अनुपातों के द्वारा विश्लेषण किया है। बैंक की स्थायी सम्पत्तियों, दीर्घकालीन कोष, लाभ-हानि, प्रदत्त पूंजी आदि के आधार पर अनुपात ज्ञात किए गए हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. पुस्तिका जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित, धार।
2. सहकारी समाज, प्रचार शाखा, राजस्थान।
3. धार जिला गजेटियर, 1984
4. स्वयं के सर्वेक्षण पर आधारित।

****

नगर पालिका निगमों में कर वसूली एवं कर दायित्व का विश्लेषणात्मक अध्ययन (जबलपुर नगर पालिका निगम के विशेष संदर्भ में)

डॉ.गणेश कुमार दुबे *

प्रस्तावना – लोकतंत्र की मूलभूत मान्यता यह है कि सर्वोच्च शक्ति जनता में निहित होती है। इसलिए यह आवश्यक है कि सर्वोच्च शक्ति का अधिक–से–अधिक विकेन्द्रीकरण हो, जिससे अधिकाधिक व्यक्ति प्रत्यक्ष रूप से शासन कार्य में हिस्सा ले सकें। फलस्वरूप राज्यों द्वारा स्थानीय संस्थाओं की स्थापना की दिशा में कदम उठाए गए हैं। यदि हम वास्तव में देश में लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की स्थापना सुनिश्चित करना चाहते हैं तो हमें स्थानीय प्रशासन को कुशल एवं प्रभावी बनाने के लिए अधिक प्रयास करना होगा। सर्वविदित है कि प्रशासन के तीन स्तर होते हैं – राष्ट्रीय, प्रान्तीय और स्थानीय। राष्ट्रीय और प्रान्तीय स्तर पर प्रशासन के विषय में जनता को पर्याप्त जानकारी होती है, जबकि स्थानीय प्रशासन की जानकारी अपेक्षाकृत कम होती है। इसलिये यह भी आवश्यक है कि जब हम जाने कि स्थानीय प्रशासन क्या और कैसें अपने कार्य एंव कार्य की पूर्ति के लिए राजस्व की पूर्ति किस प्रकार से करते है।

शोध का परिचय – नगर पालिक निगमों का दायित्व है कि नगरों को महानगरीय आधुनिक सुख सुविधाएं उपलब्ध कराए। इन सुख सुविधाओं को उपलब्ध कराने के लिए निगमों को बड़ी मात्रा में धन राशि की आवश्यकता पड़ती है। नगरपालिक निगम इस धन राशि की पूर्ति जनसामान्य से करारोपण के माध्यम से राजस्व प्राप्त करती है।प्रस्तुत शोध नगर पालिक निगमों में कर वसूली एवं कर दायित्व का विश्लेषणात्मक अध्ययन – जबलपुर नगर पालिका निगम के विशेष संदर्भ में यह जानने का प्रयास किया गया है, नगर पालिका निगमों की आय के स्त्रोत कौन–कौन से हैं। नगर पालिका निगम कितने प्रकार के करों का रोपण करता है? कर दायित्व का निर्धारण कैसे किया जाता है? करों के अलावा निगम की आय प्राप्ति के अन्य कौन से स्त्रोत हैं? नगर निगमों की कर राजस्व एवं वसूली की क्या स्थिति है? नगर पालिक निगम को सरकार से चुंगी क्षतिपूर्ति एवं अनुदान कितना प्राप्त हुआ है? नगर पालिका निगम द्वारा जन कल्याण एवं नगर विकास योजनाओं में कितनी धनराशि खर्च की गई है? इत्यादि समस्याओं के समाधान ढूंढ़ने का प्रयास इस शोध कार्य द्वारा किया जा रहा है।

शोध विधि – नगर पालिका निगमों में कर वसूली एवं कर दायित्व का विश्लेषणात्मक अध्ययन – जबलपुर नगर पालिक निगम के विशेष संदर्भ में का अध्ययन करने के लिए प्राथमिक एवं द्वितीयक दोनों प्रकार के समंकों का उपयोग किया गया है।

नगर पालिक निगम द्वारा प्रकाशित वार्षिक प्रतिवेदन, सरकार द्वारा प्रकाशित रिपोर्ट, गैर सरकारी प्रतिवेदन, वार्षिक एवं मासिक पत्र पत्रिकाएं, पुस्तकों, जर्नल, स्थानीय समाचार पत्रों आदि में प्रकाशित समंकों एवं सूचनाओं का प्रयोग शोध कार्य को प्रभावी बनाने एवं निष्कर्षों तक पहुँचाने के लिए किया गया है।

शोध के उद्देश्य – नगर पालिका निगमों में कर वसूली एवं कर दायित्व का विश्लेषणात्मक अध्ययन – जबलपुर नगर पालिक निगम के विशेष संदर्भ में, शोध कार्य करने के उद्देश्यों को निम्न बिन्दुओं के अंतर्गत प्रस्तुत किया गया है –

1. जबलपुर नगर पालिक निगम का परिचय जानना, इसकी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि से परिचित होना।
2. नगर पालिक निगम के विभिन्न कार्य जिनमें नगर विकास एवं जन कल्याण आदि के कार्य हैं, उनकी स्थिति एवं विगत 5 वर्षों में खर्च की जाने वाली राशि का अध्ययन करना।
3. नगर पालिक निगम के राजस्व के विभिन्न स्त्रोतों का अध्ययन करना। करारोपण से आय, करके अतिरिक्त अन्य साधनों से आय, चुंगी क्षतिपूर्ति की राशि, सरकार से प्राप्त सहायता एवं अनुदान, निगम द्वारा लिए गए ऋण आदि की विगत पांच वर्षो की स्थिति का अध्ययन करना।

शोध का महत्व – वित्त व्यवसाय का जीवन रक्त है। जिस प्रकार मानव को जीने के लिए रक्त की आवश्यकता होती है उसी प्रकार व्यवसाय को जीवित रखने के लिए वित्त की आवश्यकता होती है। बिना वित्त के व्यवसाय की कल्पना भी नहीं की जा सकती। ठीक उसी प्रकार नगर पालिक निगम को अपने कर्तव्यों एवं उत्तरदायित्वों के निर्वहन हेतु ऋण की आवश्यकता होती है और इसकी प्राप्ति के लिए नगर पालिक निगम को कई प्रकार के प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष कर लगाने पड़ते हैं। प्रस्तुत शोध में कर राजस्व की वसूली एवं कर दायित्व के विषय में कार्य किया गया है। नगर पालिक निगम द्वारा आरोपित किए गए करों का विवरण, कर दायित्व का निर्धारण एवं वसूली के संबंध में अध्ययन किया गया है। नगर पालिक निगम को करों के निर्धारण एवं वसूली में होने वाली समस्याओं एवं कठिनाईयों का अध्ययन किया गया है तथा इन्हें दूर करने हेतु बहुमूल्य सुझाव दिए गए हैं।

मध्यप्रदेश में नगरीय प्रशासन – राज्य में स्वायत्त शासन की शुरूआत स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व ही हो चुकी थी। अत: अब राज्य की स्थापना 1 नवम्बर, 1956 के बाद नगर पालिका अधिनियम, 1956 लागू किया गया। जिसके पश्चात् नगर निगमों का गठन किया गया। नगर निगमों के कार्यों में सुदृढ़ता प्रदान करने के लिए राज्य सरकार द्वारा जुलाई 1957 में एक समिति गठित की गई, जिसने सितम्बर 1958 में अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत कर दी। इसी रिपोर्ट के तदुपरान्त म.प्र. नगर पालिका अधिनियम, 1961 पारित हुआ। इस नियम के पास होने के पश्चात् राज्य में 30 दिसम्बर, 1993 को विधानसभा में म.प्र. नगर पालिका विधेयक पारित किया गया। इस संविधान

*सहायक प्राध्यापक, माता गुजरी स्वशासी महिला महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत

संशोधन के बाद राज्य में म.प्र. राज्य निर्वाचन आयोग का गठन किया गया जिन्होंने नवम्बर-दिसम्बर 1994 में इन निकायों के चुनाव सम्पन्न कराए। वर्तमान समय में राज्य में उसी संशोधन अधिनियम के अनुरूप त्रिस्तरीय निकाय की व्यवस्था है जो निम्न है -

1. नगर निगम (वृहत्तर नगरीय क्षेत्रों में)
2. नगर पालिका (परिषद लघु स्तरीय क्षेत्रों में)
3. नगर पचांयत (संक्रमणशील नगरों में)

जबलपुर नगर पालिक निगम की आय व्यय का विवरण (वर्ष 2009-10 से 2013-14 तक)

नगर पालिक निगम जबलपुर द्वारा विगत पांच वर्षों में प्राप्त की गई आय एवं व्यय की गई राशि का विवरण तालिका क्र. 1 द्वारा प्रस्तुत किया जा रहा है।

तालिका क्र. - 01 (देखे अगले पृष्ठ पर)

विकास के संबंध में जबलपुर नगर पालिका निगम की प्रमुख योजनाएं जबलपुर नगर पालिका निगम शहर को महानगरों की तरह विकसित करने एवं नागरिकों को महानगरीय सुविधायें उपलब्ध कराने के लिए कृत संकल्पित है। नगर निगम ने नगर को सुन्दर सुव्यवस्थित एवं सुसज्जित करने के लिए अनेक कार्य किए है। नागरिकों को पेयजल, बेहतर सड़कें, स्वास्थ्य, शिक्षा, स्वच्छता, प्रकाश इत्यादि की व्यवस्था कराने के लिये अनेक योजनाएं बनाई हैं जिनका कार्यान्वयन निगम द्वारा विगत कुछ वर्षो से किया जा रहा है। कुछ योजनाएं एक वर्षीय है एवं कुछ योजनाओं का कार्य आने वाले कुछ वर्षों में पूर्ण होगा।

नगर पालिक निगम की योजनाओं का अध्ययन निम्न शीर्षकों के अंतर्गत किया जा रहा है -

1. जल विभाग की योजनाएं।
2. जवाहरलाल नेहरू राष्ट्रीय शहरी नवीनीकरण मिशन की योजनायें।
3. नगरीय जल प्रदाय एवं पर्यावरण उन्नयन परियोजनायें प्रोजेक्ट उदय की योजनायें।
4. शिक्षा विभाग की योजनाएं।
5. स्वास्थ्य विभाग की योजनाएं।
6. उद्यान विभाग की योजनाएं।

शोध अध्ययन के निष्कर्ष - प्रस्तुत शोध अध्ययन नगर पालिका निगमों में कर वसूली एवं कर दायित्व का विश्लेषणात्मक अध्ययन - जबलपुर नगर पालिका निगम के विशेष संदर्भ में, से प्राप्त निष्कर्षो का विवरण निम्न है -

1. जबलपुर नगर पालिक निगम देश का प्राचीन तथा मध्यप्रदेश का प्रथम नगर निगम है, जिसकी स्थापना सन 1864 में हुई थी।
2. स्थापना के समय इसकी सीमा 7 वर्गमील थी। नगर निगम की सीमा सन् 1956 में 52 वर्गमील थी जिसे बढ़ाकर वर्ष 2014 में 172 वर्गमील कर दिया गया। वर्ष 1959 में 30 वार्ड थे जो सन् 2014 में बढ़कर 79 हो गए।
3. जबलपुर नगर कार्पोरेशन अधिनियम 1948 के अंतर्गत इसका संचालन किया जा रहा है। सन् 1952 में से प्रथम निर्वाचन 30 वार्डो के लिये किए गए थे। नवां निर्वाचन 31 जनवरी 2015 को 79 वार्डो के लिये किए गए।
4. सम्पत्ति कर नगर निगम की आय का सबसे बड़ा स्त्रोत है। निगम की आय का लगभग 25 प्रतिशत हिस्सा सम्पत्ति कर से ही प्राप्त होता है।

करों की वसूली एवं आय बढ़ाने के संबंध में सुझाव :

1. नगर पालिका निगम द्वारा करों का निर्धारण राज्य सरकार के दिशा निर्देशों द्वारा किया जाता है। सरकार की सम्पत्ति कर की दरों का निर्धारण करती है। अत: नगर निगम को दरों के निर्धारण के लिए सरकार पर ही निर्भर रहना पड़ता है। राज्य सरकार को चाहिए कि सम्पत्ति कर की दरों को निर्धारित करने का अधिकार संबंधित नगर निगम पर छोड़ देना चाहिए। नगर निगम क्षेत्र की महत्ता और आवश्यकता के अनुसार करारोपण करने के लिए स्वतंत्र होना चाहिए।
2. करों की वसूली के प्रावधान में संशोधन किये जाने की आवश्यकता है। अव्यवहारिक तथा अप्रासंगिक प्रावधानों को हटाने की आवश्यकता है। निगम की आय बढ़ाने के लिए जरूरी है कि करों की वसूली के प्रावधानों को तुरन्त संशोधित किया जावे। सरकार को चाहिए कि विभिन्न नगर पालिकाओं द्वारा प्रेषित किए गए प्रस्तावों पर विचार कर उन्हें स्वीकृतियां प्रदान की जाए।
3 राज्य शासन को विभिन्न नगर पालिका निगमों से कर वृद्धि के प्रस्तावों पर शीघ्रतापूर्वक विचार करना चाहिए। यदि कर वृद्धि आवश्यक है तो ऐसे प्रस्तावों पर तुरन्त स्वीकृति प्रदान की जानी चाहिए। अनुचित कर वृद्धि वाले प्रस्तावों पर विचार नहीं करना उचित है। कर वृद्धि ऐसी होनी चाहिए जिससे करदाता बिना किसी विरोध के स्वीकार कर ले। अत: राज्य शासन को कर की दरों में वृद्धि के परिणामस्वरूप होने वाले जनाक्रोश को भी ध्यान में रखना चाहिए।

उपसंहार - नगर पालिक निगम का प्रशासन स्थानीय स्तर पर चुने हुए व्यक्तियों द्वारा किया जाता है। अत: वे नगर की समस्याओं से परिचित होते हैं। नगर विकास में आने वाली बाधाओं और कठिनाईयों का ज्ञान इन्हें होता है। महापौर, मेयर इन काउंसिल के सदस्य और पार्षद सभी स्थानीय स्तर पर जनता द्वारा चुने जाते हैं। जनता उनसे उम्मीद करती है कि वे न केवल अपने-अपने वार्डो का विकास करेंगे बल्कि नगर के समुचित चहुँमुखी विकास को भी गति प्रदान करेंगे। यातायात के लिए अतिक्रमण मुक्त, बेहतर सड़कें, शुद्ध पेयजल, प्रदूषण रहित पर्यावरण, स्वच्छ नालियां एवं नाले, सुव्यवस्थित यातायात, नागरिकों को स्वास्थ्य एवं शिक्षा की सुविधा उपलब्ध कराना नगर पालिग निगम का उत्तरदायित्व है।

अत: स्पष्ट है कि नगर पालिक निगम की आय का महत्वपूर्ण स्त्रोत कर है। कुल राजस्व में करों से प्राप्त राशि का हिस्सा सर्वाधिक होता है। अत: निगम में करों की समुचित वसूली और संग्रहण पर पर्याप्त ध्यान देना चाहिए। यदि करों की वसूली समय पर सभी करदाताओं से होगी तो नगर पालिक निगम अपने उत्तरदायित्वों के निर्वहन में लगने वाले धन की व्यवस्था कर सकेगा और उसे किसी अन्य वित्तीय संस्था से ऋण एवं सरकार के अनुदान पर निर्भर नहीं रहना पड़ेगा। अंत में निष्कर्ष स्वरूप यही कहा जा सकता है कि जबलपुर नगर निगम की वित्तीय व्यवस्था निगम द्वारा करारोपित किए जाने वाले करों, वसूली की राशि एवं संग्रहण की प्रणाली पर निर्भर करती है अत: कर किसी भी स्थानीय शासन प्रणाली की रीढ़ की हड्डी की तरह कार्य करते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भारत 2010-11, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण, भारत सरकार।
2. भारत संदर्भ - 2009, प्रकाशक, भागीरथी समाजसेवी एवं पर्यावरण मित्र संगठन, जबलपुर।

3. मध्यप्रदेश सांख्यिकी संक्षेप 2011.
4. The Madhya Pradesh Human Development Report, 2010-11.
5. सम्पूर्ण वाणिज्य शब्दकोश-2009, बिंद पाकेट बुक्स प्रा.लि., जी.टी. रोड, नई दिल्ली।
6. Finance of the Jablapur Corporation, Awadhiya V.K.

तालिका क्र. - 01 : जबलपुर नगर पालिक निगम की आय-व्यय (बजट) का सारांश

विवरण	वर्ष 2009-10	वर्ष 2010-11	वर्ष 2011-12	वर्ष 2012-13	वर्ष 2013-14
गतवर्ष का अंतिम शेष	0	0	0	0	0
राजस्व आय चालू वर्ष	1,21,74,84,249	1,60,88,10,629	1,72,37,92,400	261,32,73,600	293,29,12,100
राजस्व आय(बकाया)	25,41,57,182	19,30,02,413	19,78,15,405	69,37,10,000	70,02,42,000
योग (अ)	**1,47,15,41,431**	**1,80,18,13,042**	**1,92,16,07,805**	**3,30,69,83,600**	**3,63,31,54,100**
पूँजीगत आय/प्राप्तियाँ	45,29,42,802	92,37,10,088	141,64,61,636	3,79,76,71,100	4,37,20,52,100
कुल आय/ प्राप्तियाँ	**1,92,45,84,233**	**2,72,55,23,130**	**3,33,80,69,441**	**7,10,46,54,700**	**8,00,52,06,200**
राजस्वय व्यय	1,16,36,24,631	1,38,96,31,827	1,65,96,84,838	1,92,53,55,100	2,03,80,12,100
पूँजीगत व्यय / भुगतान	51,12,74,289	99,92,20,590	1,61,81,94,979	5,09,19,77,100	5,84,93,26,102
पूँजीगत/ अन्य पुर्नभुगतान	1,58,03,918	36,386,554	5,96,29,683	8,37,76,000	11,67,76,000
कुल पूँजीगत भुगतान (ब)	**52,70,78,207**	**1,03,56,07,144**	**1,67,78,24,662**	**5,17,57,53,100**	**5,96,61,02,102**
कुल व्यय / भुगतान	**1,69,07,02,838**	**2,42,52,38,971**	**3,33,75,09,500**	**7,10,11,08,200**	**8,00,41,14,202**
बचत/घाटा	**23,38,81,395**	**30,02,84,159**	**5,59,941**	**35,46,500**	**10,91,998**

****

संघर्ष और उसका प्रबंधन

डॉ. पी. वाय. मिश्र *

प्रस्तावना – किसी भी परिस्थिति या अवस्था के प्रति दो व्यक्तियों का दृष्टिकोण भिन्न–भिन्न रहता है, प्रत्येक कार्य या निर्णय या क्रियान्वयन आदि संबंध में सभी के मत या सोच अलग–अलग हो सकती है – क्योंकि – 'रूचिनां वैचित्र्या, छह कुटिल नानां पथ जुषां' या 'मुण्डे – मुण्डे मतिर्भिंत्रा:।' सबकी रूचि पृष्ठभूमिव आदतें भिन्न–भिन्न हैं। इनके बावजूद भी संगठन के निर्णय को सर्व स्वीकार्य अवस्था तक लाना और फिर उस निर्णय का पूरी शक्ति से क्रियान्वयन करवा पाना एक चुनौती हैं, क्योंकि सर्व स्वीकार्य अवस्था या पूर्ण क्रियान्वयन के मार्ग में संघर्ष एक सबसे बड़ा अवरोध है।

इसी को यदि अलग दृष्टिकोण से देखें तो यह भी कहा जा सकता है कि संघर्ष तो संगठन के अस्तित्व से जुड़े हैं, और कोई भी संस्था संघर्षो का पूर्णत: निराकरण नहीं कर सकती है और अब तो यह माना जाने लगा है कि किसी भी संगठन में संघर्ष को टालने या दबाने से किसी भी समस्या को हल नहीं किया जा सकता, अपितु संघर्ष की प्रक्रिया में जो ऊर्जा, नेतृत्व और टीम उभरती है, उसी का रचनात्मक उपयोग करके संगठन की शक्ति बढ़ाई जानी चाहिए। यह भी माना जाने लगा है कि संघर्ष के द्वारा व्यवहारों का पुनर्मूल्यांकन योग्यताओं का अनुपरिंभाषीकरण, नये मतों, नये विचारों व नये दृष्टिकोण का उदय होता है। अत: आवश्यकता है कि संघर्ष को पूर्णतया समझ कर उसका सकारात्मक प्रबंध – संगठन के हित में सुनिश्चित किया जाना चाहिए।

संघर्ष क्या है? (What is Conflict?) - किसी भी संगठन में संघर्ष वास्तव में दृष्टिकोणों, दो विचारों या दो हितों की टकराहट है। यह एक ऐसी स्थिति है, जिसके फलस्वरूप हमारे अन्तर्वैयक्तिक व्यवहारों में भारी परिवर्तन आ जाता है। जब संगठन में संघर्ष उत्पन्न होता है, तो असहमति, तनाव, मनमुटाव, विघ्न, टकराव, अन्तर्द्वन्द्व और विद्धेषपूर्ण व्यवहार आदि भी घटित होने लगते हैं।

संघर्ष मानव इतिहास के प्रारंभिक दौर से जुड़ा है, जब समुद्र मंथन के सामूहिक संगठन कार्य में जो कि सार्वजनिक लाभ हेतु आयोजित था, उसमें भी देव व दानवों के दृष्टिकोण, कार्य पद्धति व मतों में संघर्ष हुआ। यह संघर्ष हमारी सभ्यता की कहानी के प्रत्येक दौर में घटित हुआ है। इस पर आधुनिक दृष्टिकोण से विश्लेषण करने वाले में – Behaviour in Organization के लेखक जोसेफ रिट्ज, Managing Organization Conflict - A Non-Traditional Approach के लेखक एस.पी. रॉबिन्स तथा डेविड हेम्पस, आरत्र लिकर्ट, एस.ए. शेरलेकर जैसे विद्धान् लेखक व चिंतक प्रमुख रूप से शामिल है। संघर्ष के संबंध में इनके दृष्टिकोणों के आधार पर हम कह सकते हैं कि – 'एक संगठन के अंदर संघर्ष को सामान्य कार्य संचालन में बाधा, रूकावट व व्यवधान के रूप में वर्णित किया जाता है, जिसके फलस्वरूप व्यक्तियों के व समूहों को सामूहिक रूप से कार्य करने में कठिनाई अनुभव होती।' या संघर्ष दो पक्षकारों के मध्य एक ऐसे विवाद या मतभेद की स्थिति है, जबकि संघर्ष के पक्षकार, विरोधी पक्षकार को उसके उद्देश्य की प्राप्ति में जान–बूझकर विद्धेषी कार्यवाहियों द्वारा बाधा उत्पन्न करते हैं।

संघर्ष – प्रकार या रूप (Confliect : Types of Forms) – संघर्ष के कारणों व समाधान को सही परिप्रेक्ष्य में जानने के लिए हमें सर्वप्रथम संघर्ष के मूलभूत प्रकारों पर दृष्टि डालना होगी – वे इस प्रकार हो सकते हैं–

1. व्यक्ति के भीतर संघर्ष (Conflict within an Individual)
2. व्यक्तियों के बीच संघर्ष (Interpersonal Conflict)
3. व्यक्ति और समूह के बीच संघर्ष (Conflict between an Individual and a Group)
4. समूहों के बीच संघर्ष (Conflict between Groups)

1. व्यक्ति के भीतर संघर्ष (Conflict within an Individual) – यह आंतरिक संघर्ष है। यद्यपि इससे संगठन सीधे–सीधे प्रभावित तो नहीं होता, फिर भी व्यक्तियों के अंतर्मन या मस्तिष्क में चल रहे ऊहापोह से, उनके बाह्य व्यहवार, कार्यक्षमता, निर्णयन कौशल व मानसिक सजगता पर अत्यंत ही प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। मूल रूप से व्यक्ति के भीतर के संघर्ष की उत्पत्ति – स्वयं के लिए लक्ष्य का चुनाव करने और प्रत्याशित भूमिका का निर्वाह करने को लेकर हो सकती है।

(अ) लक्ष्य संघर्ष (Goal Conflict) – यह तब उत्पन्न होता है, जबकि व्यक्ति को दो या अधिक विकल्पों या अवसरों में से किसी एक का चयन करना पड़ता है। ये विकल्प सादृश्य (अनुकूल) या परिर्जन (प्रतिकूल) हो सकते हैं और परिस्थिति के अनुसार इनमें सादृश्य, सादृश्य संघर्ष, सादृश्य परिवर्जन संघर्ष, परिवर्जन – परिवर्जन संघर्ष हो सकते हैं। सादृश्य – सादृश्य में दो सकारात्मक अवसरों में से एक का चयन सादृश्य – परिवर्जन में – अनुकूल के साथ जुड़े हुए प्रतिकूल अवसर में संघर्ष (पदोन्नति लेकिन दूरस्थ स्थान पर), और परिवर्जन – परिवर्जन में – दो प्रतिकूल अवसरों में से एक का चयन (प्रदूषित स्थान या अत्यधिक दूर स्थित स्थान में से एक का चयन) होता है।

(ब) भूमिका संघर्ष (Roal Conflict) – किसी भी व्यक्ति के अंतर्मन में यह उस समय उत्पन्न होता है जबकि या तो वह अत्यधिक महत्वाकांक्षी व भावुक हो या जब उसे अपनी योग्यता, रूचि व पद के अनुकूल कार्य दायित्व न मिले।

व्यक्ति के भीतर का संघर्ष, किसी भी संगठन की मानव शक्ति के लि

* श्री वैष्णव वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

एक चुनौती बन जाता है, क्योंकि संघर्षरत व्यक्ति अंततः अपने सभी सहयोगियों व संपूर्ण परिवेश को अवश्य ही प्रभावित करता है।

2. **व्यक्तियों के बीच संघर्ष (Interpersonal Conflict) –** ये संघर्ष ऐसे हैं, जो दो व्यक्तियों में होते हैं। जब ऐसे संघर्ष उच्चाधिकारी व अधिनस्थ के बीच होते हैं तो लंबावत् संघर्ष कहलाते हैं और जब ये संघर्ष समान संगठनात्मक स्तर पर कार्यरत व्यक्तियों के बीच होते हैं तो समतलीय संघर्ष कहलाते हैं।

इस प्रकार के संघर्षों का मुख्य कारण व्यक्तियों के स्वभावों में विरोध पाया जाना, अहम् का टकराव होना, कार्य शैली तथा व्यक्ति विशेष की सामाजिक–सांस्कृतिक पृष्ठभूमि में अन्तर होना या फिर दायित्वों, अधिकारों आदि की अस्पष्टता के कारण टकराव होना आदि प्रमुख है।

3. **व्यक्ति और समूह के बीच संघर्ष (Conflict between an Individual and a Group) –** समूह के कार्य प्रदर्शन में प्रत्येक का अहम् योगदान है। जब कोई व्यक्ति अपने समूह की आकांक्षा के अनुकूल प्रदर्शन नहीं करता है तो संपूर्ण समूह पर अतिरिक्त दबाव उत्पन्न हो जाता है व परिणामस्वरूप व्यक्ति व समूह में संघर्ष की शुरूआत होती है।

4. **समूहों के बीच संघर्ष (Conflict between Groups) –** इन्हें अंतसमूह संघर्ष भी कहा जा सकता है। इसके लिए समूहों में अधिकार सत्ताओं व भूमिकाओं का टकराव, सीमित साधनों तथा पारितोषिकों के लिये प्रतिस्पर्धा, या आदर्शों, नियमों सेवा शर्तों आदि का अंतर उत्तरदायी हो सकता है।

संघर्ष – कारण या स्त्रोत (Conflict % Causes or Sources) – यदि सांगठिक संघर्ष के कारणों की हम खोज कर सके तो यह कार्य संघर्ष के समाधान हेतु महत्वपूर्ण हो सकता है। इसी उद्देश्य से संघर्ष के कुछ प्रमुख कारणों का अध्ययन किया गया है। जैसे –

(1) **सीमिति साधनों के लिए प्रतियोगिता –** किसी भी संगठनों में साधन असीमित नहीं हो सकते हैं। जैसे पूंजी, तकनीक, यंत्र आदि। साधनों की सीमितता व मांग की निरंतरता संगठन में दबाव उत्पन्न करती है, जिसका परिणाम अंतर्समूह संघर्ष का अंर्तव्यक्ति संघर्ष के रूप में सामने आता है।

(2) **परस्पर निर्भरता –** संगइन का अधिकांश कार्य परस्पर निर्भरता के ढांचे पर खड़ा होता है, विभिन्न विभागों के कर्मचारी, व्यक्तिगत व विभागीय स्तर पर आपस में आश्रित रहते हैं। इनमें जब अपेक्षा व वास्तविकता का अंतर होता है, तो संघर्ष जन्म लेता है।

(3) **कार्य शैली व धारणाओं में भिन्नता –** संगठन के व्यक्तियों में अपनी उम्र, अनुभव, दायित्व, लक्ष्य आदि के आधारों पर भिन्नता रहती है। जैसे युवा प्रबंधक व अनुभवी प्रबंधक, इंजीनियरिंग विभाग व उत्पादन विभाग आदि की धारणाओं व प्राथमिकताओं में अंतर होता है।

(4) **दोषपूर्ण सम्प्रेषण –** जब सम्प्रेषण की व्यवस्था जटिल हो या सम्प्रेषण कौशल का अभाव हो तो भी संगठन के सदस्यों में भ्रम, संदेह या विवाद उत्पन्न होने की संभावना बढ़ जाती है। सूचना निर्देश या जानकारी के अर्थ या अनर्थ होना ही कई बार संघर्ष का मुख्य कारण होता है।

(5) **संगठन संरचना की अस्पष्टता –** किसी भी संगठन में कार्यों का उचित बंटवारा न होने, सत्ता के संबंधों के अपरिभाषित होने, कार्यों का आवश्यकतानुसार विभाजन न होने, विभागीय संरचना के दूषित होने आदि कारणों से संघर्ष उत्पन्न हो सकते हैं।

(6) **अति महत्वाकांक्षा या समूह से असम्बद्ध व्यक्ति :** कभी–कभी संगठन में नियुक्त कोई अधिकारी या कर्मचारी समूह की सांझा संस्कृति में स्वयं को समाविष्ट नहीं कर पाता है। इसके लिए उसकी अति महत्वाकांक्षा, कुण्ठा, पारिवारिक पृष्ठभूमि, निजी तनाव या धन, बल या संबंधों की शक्ति उत्तरदायीर रहती है। ऐसा व्यक्ति समय–असमय पर संगठन में तनाव या संघर्ष को जन्म देता रहता है।

संघर्ष के उपर्युक्त कारण कभी सामूहिक रूप से तो कभी एकल रूप से संघर्ष हेतु उत्तरदायी रहते हैं।

संघर्ष की प्रक्रिया (Process of Conflict) – कुछ मनोविश्लेषकों एवं संगठन विशेषज्ञों में संघर्ष की प्रक्रिया का अर्थात् इसके उत्पन्न होने से लेकर समाधान की स्थिति तक पहुँचने की प्रक्रिया का सूक्ष्म विश्लेषण किया है। प्रत्येक प्रकार का संघर्ष अपनी आरंभिक अवस्था में एक अंकुर के रूप में रहता है, तत्पश्चात् वही अंकुर वृक्ष के रूप में परिणित हो जाता है।

जैसे यह संघर्ष अव्यक्त रूप में शुरू होता है, जबकि भ्रम व संवादहीनता की शुरूआत होती है, फिर संघर्ष की अनुभूति संपूर्ण परिवेश में होती है, फिर संघर्ष की व्यवहार में अनुभूति होती है, फिर संघर्ष हड़ताल, तोड़फोड़ आदि के रूप में व्यक्ति हो जाता है व अन्तिम चरण के रूप में यह समाधान या दमन के रूप में समाप्त होता है। कुल मिला कर इसकी प्रक्रिया इस प्रकार होती है –

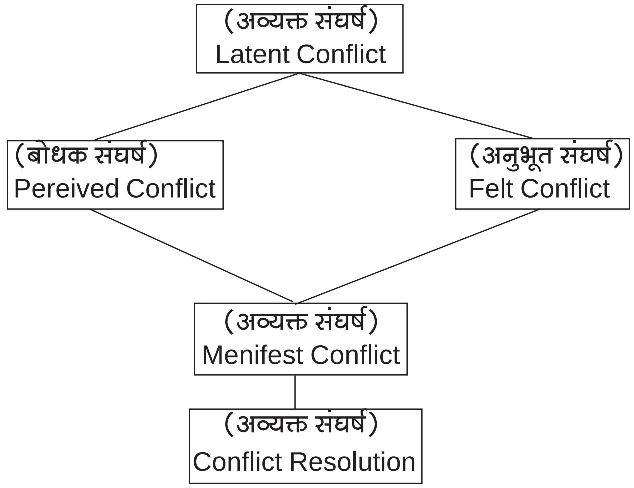

संघर्ष के समाधान के उपाय या तकनीके (Measures or Techniques of Conflict Resolution) – यदि किसी संगठन में संघर्ष उत्पन्न हो चुका है तो फिर उसका समाधान किया जाना भी आवश्यक होता है। अलग–अलग परिस्थितियों में या अलग–अलग संघर्षों में समाधान के उपाय भी अलग–अलग ही होंगे। फिर भी कुछ सामान्य उपाय इस प्रकार हो सकते हैं –

(1) **सत्तावादी निर्देशन (Authoritative Order) –** इसमें उच्च अधिकारी द्वारा अपने अधिनस्थों को आदेश या निर्देश देकर संघर्ष दबाया जाता है व दबे होने की दशा में ही समाधान के सकारात्मक कदम भी उठाए जाते हैं।

(2) **परम कोटिक लक्ष्यों का उपयोग (Use of Superordinate Goals) –** इसमें विभिन्न पक्षों को संगठन के उच्च लक्ष्यों की याद दिलवाई जाती है। जैसे संगठन के अस्तित्व का प्रश्न, या गहरी मानवीय संवेदनाओं की बातें आदि। ऐसा होने पर संघर्षरत व्यक्ति

सहयोग करने, श्रम करने व त्याग करने हेतु तत्पर हो जाते हैं।

(3) **साधनों का विस्तार** (Expansion of Resources) – यदि संघर्ष का मुख्य कारण साधनों की सीमितता है, तो इनमें वृद्धि करने का प्रयास करके भी संघर्ष समाप्त किया जा सकता है।

(4) **संगठन संरचना में सुधार** (Reform in Organization Structure) – कई बार संगठन के ढांचे के दोष को दूर करके या संगठन के क्रम दायित्व, कार्य क्षेत्र आदि का पुर्ननिर्धारण करके भी संघर्ष का समाधान हो सकता है।

(5) **व्याख्यानों, प्रशिक्षण सत्रों का आयोजन** (Lecture, Training Sessions) – यदि संघर्ष का कारण किसी छोटे-छोटे समूह की अनुशासनहीनता या अकुशलता है, तो इसका समाधान प्रभावपूर्ण व्याख्यानों या प्रशिक्षण सत्रों से किया जा सकता है। व्याख्यानों या प्रशिक्षण सत्रों से कार्य के प्रति गम्भीरता व संगठन के प्रति समर्पण की भावना विकसित की जा सकती है।

संघर्ष समाधान की उपर्युक्त तकनीकों के अतिरिक्त सूचना व सम्प्रेषण प्रणाली में सुधार करके या नये विचारों को प्रोत्साहित करके या अति महत्वाकांक्षी कर्मचारियों को अतिरिक्त पद या दायित्व आदि सौंप कर भी संघर्ष का न केवल समाधान ही किया जा सकता है, अपितु संगठन की मानवीय सम्पदा की ऊर्जा का सकारात्मक कार्यों में प्रयोग भी बढ़ाया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

ग्रामीण विकास नवीन भारत के संदर्भ में

डॉ. रवि प्रकाश पाण्डेय *

प्रस्तावना – भारतीय अर्थव्यस्था का आधार गॉव ही है, गॉवों के समुचित विकास के बिना राष्ट्र के आर्थिक विकास की प्रत्येक योजना अर्थहीन एवं राष्ट्र की प्रगति का प्रत्येक स्वप्न अधूरा रहेगा सन् 2011 की जनगणना के ताजा आँकडो के अनुसार भारत की लगभग 69% जनसंख्या अब भी गॉवो में बसती है 121 करोड भारतीयो में 83.3 करोड ग्रामीण क्षेत्रों में तथा 37.7 करोड शहरो में निवास करते है यही कारण है कि प्राचीन काल से भारत के संपूर्ण राष्ट्रीय जीवन की इकाई इसके गॉवों में ही केन्द्रीकृत रही है। प्राचीन काल में भारत आर्थिक दृष्टि से संपन्न देश रहा है किन्तु समय में परिर्वतन के कारण भारत की आर्थिक तथा समाजिक व्यवस्था में अनेक परिर्वतन होते गए।

भारत के माननीय प्रधानमंत्री जी नरेन्द्र मोदी ने इसी संदर्भ में सांसदो को एक गॉव गोद लेने का आव्हान किया जिससे कि उस एक गॉव का समग्र विकास हो।

महात्मा गांधी की मान्यता थी कि सच्ची आजादी प्राप्त करनी है तो लोगों को गॉव में रहना चाहिए। उन्होंने कहा था कि सत्य और अहिंसा के बिना मनुष्य जाति का विकास नहीं हो सकता सत्या और अहिंसा हमें ग्रामीण जीवन की सादगी से प्राप्त होती है गाँधी जी गॉवो में प्रजातंत्र और पंचायत के माध्यम से गाँव का विकास करना चाहते थे। वास्तव में गांधी के विचारों को अपनाकार गांव के प्रत्येक व्यक्ति को अर्थव्यस्था की बागडोर संभालने के लिए सक्षम बनाना एक अदभुत व्यवस्था है।

भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति का निर्माण प्राचीन काल से ग्रामीण समुदाय की नींव पर ही हुआ है। आज भारतीय संस्कृति मुख्य रूप से गांवो में ही जीवित है। राष्ट्र का जीवन गांवो द्वारा ही पोषित हो रहा है गांवो की उन्नति की अनदेखी करना था। उन्हें पतन की ओर जाने देना एक गंभीर भूल होगी। आज ग्रामीण आबादी का बहुत बडा वर्ग गरीबी के अभिशाप से पीडित है। कई ग्रामीण परिवारों की हालत तो ऐसी है कि उन्हे दो जून की रोटी भी नसीब नहीं होती है। आजादी के 70 वर्ष बाद भी ग्रामीण जनता के पास मूलभूत सुविधाऍ जैसे–रोजगार, आवास, शिक्षा, बिजली, स्वास्थ, स्वच्छता, शुद्ध पेयजल आदि उपलब्ध नहीं है।

मूल रूप से देखा जाए तो ऐसा प्रतीत होता है कि ग्रामीण क्षेत्रों में अनेक समस्याऍ विद्यमान है, जो न केवल ग्रामीण विकास हेतु अपितु संपूर्ण देश के विकास में बाधक है वास्तव में स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् प्रथत सामुदायिक विकास परियोजना (1952) के द्वारा ही प्रथम बार ग्रामीण समस्याओं को दूर करने का प्रयास किया गया था। वर्ष 1956 में राज्यों के पुनर्गठन होने के पश्चात् म.प्र. राज्य को सर्वाधिक ग्रामीण आबादी और समस्याओं वाला भाग विरासत में मिला था। सन् 2000 में हुए पुन: विभाजन के पश्चात् भी शेष म.प्र.की स्थिति में कोई खास बदलाव दृष्टिगोचर नहीं होता है य़द्यपि स्वाधीन भारत में विगत वर्षो में आर्थिक औद्योगिक, समाजिक एवं विज्ञान के क्षेत्र में उल्लेखनीय विकास हुआ, परंतु पृथक म.प्र. में समुचित विकास की जो संकल्पना की गई थी, उसमें प्रदेश के कई क्षेत्र आज भी पिछडे हुए है विकास की धारा शहरों में तो तेज है, परंतु अधिकांश ग्रामीण क्षेत्रों में विशेषकर सुदरवर्ती ग्रामीण क्षेत्रों में तथा इन क्षेत्रों में लोग विकास की रोशनी से आज भी वंचित है।

ग्रामीण कम्प्यूटर पढ़ रहे हो –

ग्रामीण विकास में समस्या –

1. अशिक्षा
2. निर्धनता
3. आधारभूत ढांचा
4. उपलब्ध न होना
5. सरकारी योजना की जानकारी न होना
6. कार्य के प्रति अरूचि
7. नवीनतम तकनीकी का ज्ञान न होना
8. सरकारी प्रतिनिधि व नौकरशाहों से संवाद न होना

ग्राम उदय से भारत उदय अभियान श्री नरेन्द्र मोदी द्वारा दिनांक 14 अप्रैल 2016 को यह म.प्र. से किया गया। जिसमें सरकार ने किसानों की आय 2 गुना करने का लक्ष्य रखा, पंचायती राज संख्याओं को और मजबूत और अधिक जीवंत बनाना होगा, जनधन योजना से ग्रामीण लोगों के जीवन में बदलाव आया, कई लोगों ने (L.P.G) सब्सिडी छोड़ी जिससे कई गरीबों के जीवन में बदलाव आया ।

प्रधानमंत्री ने वर्ष 2016 का बजट किसानों और गॉवों का समर्पित किया उन्होंने कहा कि विकास की पहलो को ग्रामीण विकास पर केंद्रित होना चाहिए। 1000 दिनों की समय सीमा के भीतर उन 18000 गांवो को विद्युतीयकरण किया जा रहा है, जो बिजली की सुविधा से वंचित है। उन्होंने कहा कि गर्व....... के जरिए लोग इस लक्ष्य की प्राप्ति हो रही है इसका अवलोकन कर सकते है, गांवों में डिजिटल कनेक्टिविटी आवश्यक है । सरकार ने इसके लिए गर्व एप जारी किया है ।

ग्रामीण विकास की योजनाऍ निम्न है –

1 प्रधानमंत्री ग्रामीण विकास अध्येता योजना
2 प्रधानमंत्री ग्राम सडक योजना
3 नेषनल क्वालिटी मॉनिटर करने के दिशा निर्देश
4 समेकित कार्य योजना जिलों में ग्रामीण विकास योजनाएँ
5 ग्रामीण विकास मंत्रालय का बजट

* प्राध्यापक, शारदा महाविद्यालय, सरलानगर, मैहर (म.प्र.) भारत

6 राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन की रिपोर्ट

7 स्वर्ण जयंजी ग्राम स्वरोजगार योजना

8 ग्रामीण विकास मंत्रालय की विभिन्न योजनाएँ

प्रधानमंत्री आवास योजना जो 31 दिसंबर 2016 को लायी गयी उसके अंतर्गत मध्य आय (middle Ion) लोग 3 या 4 % पर होम लोन मिलेगा जो वर्ष 2017 में अपना मकान बनाना या पुनर्निर्माण कराना चाहते है 09 to 12 lakh तक लोन मिलेगा 33% मकान गांव के बनाए जाते है।

निष्कर्ष – भारत की नई सरकार बनने के बाद गॉवों के सशक्तिकरण का प्रयास कॉफी तेज किया गया, जिसमें सूचना तकनीक का प्रयोग किया गया, खातों का लेनदेन बैंको के माध्यम से और डिजिटल तरीके से किया गया तथा प्रधानमंत्री सडक कार्यो की वीडियों ग्रॉफी (Videography)की जा रही है जिससे सही कार्य का मल्याँकन किया जा सके।

सडकों का निर्माण आधुनिक तरीकों से किया जा रहा है, पेयजल के लिए समुचित व्यवस्था की जा रही है, समग्र स्वच्छता अभियान के द्वारा गॉव एवं शहरों में जनभागीदारी के द्वारा स्वच्छता का कार्यक्रम पूरे देश में लागू किया जा रहा है तथा वर्तमान सरकार ने अपना बजट गॉव, गरीब किसान पर वर्ष 2016 का केन्द्रित किया गया जिससे कि गॉव का ज्यादा से ज्यादा विकास हो सके।

भारत शुरू से ही गाँवों का देश रहा है और अब ज्यादा से ज्यादा विकास गाँवों में ही किया जाए तभी देश का विकास संभव हो सके, इस दिशा में सडकों की आनलाईन जानकारी ग्रामीण सीधे सरकार को दे सकते है, जनधन खातों का खोला जाना, गरीब महिलाओं को उज्ज्वला योजना के तहत मुफ्त गैस कनेक्शन, अंत्योदय योजना के तहत सस्ते दर पर खाद्यान का वितरण जिससे कोई गरीब न भूखा मरें एवं गाँव की बेटी योजना मिहिला सशक्तिकरण के माध्यम से महिलाओं को आत्मनिर्भर बनाना आदि शामिल है।

अत: अंत में कहा जा सकता है कि यदि गंभीर एवं आर्थिक प्रयास किए जाए तो जन–भागीदारी, निजीक्षेत्र एवं सरकार के प्रयासों के माध्यम से नवीन भारत का निर्माण 2022 तक संभव है।

प्रतिवर्ष सरकार नई–नई योजनाओं की घोषणा एवं उनके कार्यान्वयन में करोडों रूपये व्यय करती है। साथ ही राज्य सरकारें भी ग्रामीण क्षेत्रों की बदहाली दूर करने के लिए आकर्षक योजनाओं की घोषणा करती है। वास्तव में आज यदि हम सरकार के पिछले वादों का मूल्यांकन करें तो पाते हैं कि आजादी के बाद हमारे गाँवों एवं ग्रामीण की दशा में सुधार तो हुआ है, परन्तु जिस अनुपात में विकास के लक्ष्य निर्धारित किए गए और धनराशि खर्च की गई उस अनुपात में गाँवों एवं ग्रामीण कि दशा में सुधार नहीं हुआ। अत: लोगों के जेहन में बात घर करने लगी हैं कि क्या ग्रामीण विकास के वायदें बस कागजी है अगर उनका शुभारंभ हो भी जाता है तो निर्धारित समय में कियान्वयन नहीं हो पाता है।

फलस्वरूप इन योजनाओं पर होने वाले खर्च की राशि बढती जाती है तथा विकास के लक्ष्य अधूरे रहते है। नोबेल पुरूस्कार से सम्मानित सुप्रसिद्ध 'अर्थशास्त्री प्रोफेसर अमर्त्य सेन' न्यायिक विकास में निर्धनता और विषमता को ही बाधक माना है और अपने अध्ययन में चर्चा की है कि भूख और गरीबी ही अर्थशास्त्र के अध्ययन की बुनियादी आवश्यकता है। न्याय और नैतिकता के नये प्रतिमान तथा अर्थशास्त्र की नई अवधारणा तभी विकासित की जा सकती है। जबकि वंचित शोषित और विषमता पीड़ित साधारण व्यक्ति के यर्थात का तर्कसंगत विश्लेषण प्रस्तुत किया जाए।

वास्तव में ग्रामीण भारत में बदलते स्वरूप के बीच ऐसे अनेक सच भी है,जो प्रकृति के दावों को झुठला देते है। यद्यपि अर्थव्यवस्था की संरचना में बदलाव आया प्रशासनिक क्षेत्र की भूमिका घटी और तृतीय क्षेत्र का महत्त्व बडा है। यही कारण है कि सकल घरेलु उत्पाद(GDP) में कृषिका हिस्सा 18.5% रह गया। वैश्वीकरण की आंधी ने देश की परंपारगत लघु एवं कुटीर उद्योगो की कमार तोड दी है। खेती की बढती लागत व उत्पादन में स्थिरता से घाटे का सौदा बन गये है। दूसरों का पेट भरने वाले किसानो का पेट आज खाली है। इसलिए अन्नदाता किसान आत्महत्या करने पर विवश हो रहे है। ग्रामीण क्षेत्रों मे रोजगार के अवसरों में कमी से शहरों की ओर पलयान बढ रहा है। किसानों को स्वंय आत्मनिर्भर होना चाहिए व नवीन तकनीकि व प्रशिक्षण व सही जानकारी से खेती को लाभ का व्यवसाय बनाना चाहिए जिससे किसान समृद्धि की ओर अग्रसर हो सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. पाण्डेय. पी. एन. ग्रामीण विकास एवं संरचनात्मक परिवर्तन, रावत पब्लिकेशन, न्यू दिल्ली।
2. थामस जे.एम. सामान्य ज्ञान, सेठी पब्लिकेशन जयपुर 2012
3. भारत सरकार ग्रामीण रिपोर्ट वर्ष 2016
4. आर्थिक सर्वे रिपोर्ट वर्ष 2016

****

भारतीय कृषि पर उदारीकरण के फलस्वरूप पड़ने वाले प्रभाव का आर्थिक अध्ययन उमरिया जिला के विशेष सन्दर्भ में

डॉ. राजू रैदास *

शोध सारांश - उमरिया जिला समुद्र सतह से 489 मीटर ऊँचाई पर तथा 23^0-31'-37' उत्तरी अक्षांश 80^0-50'-10' पूर्वी देशान्तर के बीच स्थित है। उमरिया जिले के उत्तर में सतना, उत्तर पश्चिम में कटनी, उत्तर पूर्व में शहड़ोल, पश्चिम दक्षिण में जबलपुर, उत्तर पूर्व में शहड़ोल, दक्षिण में डिड़ौरी जिलों से घिरा हुआ है।

प्रस्तावना - भारत के मानचित्र पर उमरिया जिले का नामकरण स्वतंत्रता के पश्चात हुआ है, स्वाधीनता के उपरान्त देशी राज्यों के विलीनीकरण प्रक्रिया में बुन्देलखण्ड और बघेलखण्ड की छोटी - बड़ी 36 रियासतों को मिलाकर विन्ध्यप्रदेश का गठन किया गया, जुलाई 1998 में करकेली, पाली एवं मानपुर तहसीलों को मिलाकर यह जिला बना। 1 नवम्बर 1956 को महाकौशल, मध्यभारत, विन्ध्यप्रदेश एवं अन्य सीमावर्ती क्षेत्र के 43 हिन्दी भाषी जिलों को मिलाकर मध्यप्रदेश राज्य बनाया गया।

उमरिया जिला उत्तर से दक्षिण लगभग 115 किलोमीटर लम्बा तथा पूर्व से पश्चिम लगलग 95 किलोमीटर चौड़ा है। इसका कुल क्षेत्रफल 4503 वर्ग किलोमीटर है। उमरिया जिले को पूर्व में 3 तहसीलों में विभक्त किया गया था। मानपुर, बॉधवगढ़ एवं पाली तथा बाद में चौथी तहसील के रूप में चंदिया, नौरोजाबाद को दर्जा दिया गया। इस प्रकार वर्तमान में कुल 5 तहसीलों एवं 03 विकासखण्ड है। तहसीलों का क्षेत्रफल क्रमश: मानपुर 1952, करकेली 1678 एवं पाली 873 किलोमीटर है।

उदारीकरण से तात्पर्य एक ऐसी प्रक्रिया से है, जिसके अंर्तगत एक अत्यंत नियंत्रित अर्थव्यवस्था खुली दिखने वाली अर्थव्यवस्था के रूप में परिवर्तित की जाती है। नियंत्रण एवं संचालन को कम कर आंतरिक अर्थव्यवस्था के रूप में परिवर्तन किया जाता है। इस शोध पत्र का उद्देश्य उदारीकरण से भारतीय कृषि पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन करना है।

कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था का मेरू दण्ड है। पिछले दो दशकों में औद्योगीकरण काफी तीव्र गति से बढ़ा है। नई तकनीकि एवं कम्प्यूटर के उपयोग से विशिष्टीकरण एवं प्रमापीकरण को बढ़ावा मिला है। देश में लगातार बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का आगमन हो रहा है, जिसके फलस्वरूप लोगों को रोजगार मिल रहे हैं, राष्ट्रीय आय में वृद्धि हो रही है। इसके उपरांत भी कृषि का गौरवपूर्ण स्थान बना हुआ है। आज भी देश के 75 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या के जीविकोपार्जन का साधन कृषि ही बना हुआ है। कृषि के साथ वानिकी एवं मत्स्य पालन का देश के सकल घरेलू उत्पाद में 1/3 योगदान है। केन्द्रीय सांख्यिकी विभाग के अनुसार वर्ष 2015-16 में कुल सकल घरेलू उत्पाद का 26.27 प्रतिशत अंश कृषि तथा उससे जुड़े क्षेत्रों से है। भारतीय अर्थव्यवस्था की लक्ष्य प्राप्ति के लिए कृषि का विकास एक अनिवार्य शर्त है। कृषि के विकल्प के बिना भारत के विकास की कल्पना नहीं की जा सकती। देश के उद्योगों का विकास दर संतोषजनक है। सेवा क्षेत्र में भी प्रगति संतोषजनक है परन्तु प्रत्येक श्रम शक्ति को रोजगार उपलब्ध कराने में उद्योग सक्षम नहीं है। इस समस्या का समाधान कृषि क्षेत्र में है। अत: हमें अतिरिक्त रोजगार कृषि एवं कृषि पर आधारित उद्योगों में खोजना होगा। भारत द्वारा विश्व व्यापार संगठन (WTO) समझौते पर हस्ताक्षर करने के उपरांत अर्थशास्त्रियों द्वारा इसका गहनता से अध्ययन एवं विष्लेषण किया गया है कि इस समझौते का भारतीय कृषि पर क्या प्रभाव पड़ेगा। इस संबंध में अर्थशस्त्रियों में मतभेद है। विश्व व्यापार संगठन कृषि सब्सिडी (अनुदान) को पूर्णत: समाप्त करने के पक्ष में है। दूसरी ओर यदि भारत इसका अक्षरश: पालन करता है, तो किसानों की स्थिति दयनीय हो जाएगी और किसानों द्वारा किए जा रहे आत्महत्याओं की संख्याओं में और वृद्धि होगी।

उदारीकरण का भारतीय कृषि पर संभावित अनुकूल प्रभाव (कृषि अनुदान में कटौती संबंधी प्रभाव) - उदारीकरण का भारतीय कृषि पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा क्योंकि भारत में कृषि क्षेत्र में दी जाने वाली सब्सिडी (अनुदान) कृषि उत्पादन के मूल्य के 7 प्रतिशत से 9 प्रतिशत तक ही है जबकि समझौते में यह 10 प्रतिशत तक दी जा सकती है। अत: भारतीय कृषि पर कोई विपरीत प्रभाव नहीं पड़ेगा। भारत अपनी कृषि उत्पादों की खेपों में निर्यात बढ़ा सकेगा क्योंकि विकसित देशों के अनुदान में विश्व व्यापार संगठन द्वारा कटौती की सीमा को घटा कर 10 प्रतिशत तक ही किया जाएगा, इस कारण से उनकी कृषि एवं अन्य पदार्थों की लागत बढ़ जाएगी। खाद्यान्नों के न्यूनतम समर्थन मूल्य एवं बाजार मूल्य में समानता रखने के बाध्यता इस समझौते में नहीं रखी गई है, अत: इन पर कोई विपरीत प्रभाव पड़ने की भी संभावना नहीं है। विश्व-व्यापार संगठन ने उपभोक्ता वस्तुओं की सब्सिडी के संबंध में कोई प्रावधान नहीं किए हैं, अत: सार्वजनिक वितरण प्रणाली पर भी विपरीत प्रभाव पड़ने की संभावना नहीं है। विदेशी विनिमय संकट के समय प्रावधानों के अनुरूप भारत को निर्यात सब्सिडी का लाभ निरन्तर मिलता रहेगा, जबकि विकसित देशों के निर्यात में कटौती जारी रहेगी। गैट के प्रावधानों के 1993 से 1999 के मध्य सामान्य सीमा षुल्क में औसतन 36 प्रतिशत तथा प्रत्येक वस्तु के सीमा शुल्क में कम से कम 15 प्रतिशत कटौती करना आवश्यक रखा गया है और कुछ रियायतें भी प्रदान की गई है। ऐसी कटौती का लाभ भारत को मिलने की संभावना है क्योंकि भारतीय कृषि उत्पाद, विदेशी बाजार एवं प्रतिस्पर्धा में अच्छी स्थिति प्राप्त कर सकेगें। भुगतान संतुलन की कठिनाईयों के कारण भारत खाद्यान्न

* अतिथि विद्वान (वाणिज्य) शासकीय महाविद्यालय, उमरिया (म.प्र.) भारत

न्यूनतम आयात की शर्तों से भी मुक्त रहेगा। आज कल प्रस्तावों की विवेचना की जाए तो हमें ज्ञात होगा कि विकसित देशों के आर्थिक विषमताओं का फायदा उठाकर वहाँ की विशाल प्राकृतिक सम्पदा का दोहन करके उन्हें विकसित देशों से प्रतिस्पर्धात्मक स्थिति में पहुँचने से रोक कर बहुराष्ट्रीय निगमों के हवाले करना ही मूल उद्देश्य था। यह प्रस्ताव भारत जैसे देशों को लूटकर कंगाल व गुलाम बनाने की एक नई सभ्य चाल थी।

उदारीकरण का संभावित प्रतिकूल प्रभाव (सब्सिडी समाप्ति के परिणाम) – भारत के निर्यात का मुख्य आधार आज भी कृषि उत्पाद, सूती कपड़ा, कालीन एवं हस्तशिल्प है। आज भी इन परम्परागत वस्तुओं का निर्यात 85 प्रतिशत है। इन परंपरागत वस्तुओं का उत्पादन मुख्यत: स्थानीय कच्चे माल, स्थानीय तकनीक एवं लघु तथा कुटीर उद्योगों पर आधारित है। सरकार कृषि के विकास के लिए किसानों को सिंचाई, विद्युत, खाद, कीट–नाशक दवाओं तथा खेती संबंधी उपकरणों पर आवश्यक अनुदान (सब्सिडी) देती है। प्रस्तावों को लागू करने के बाद भारत सरकार एवं राज्य सरकारों द्वारा किसानों को खाद, बीज, कृषि यंत्रों, बिजली, भैंस, गाय, बैल खरीदने पर दिए जाने वाली सहायता राशि समाप्त करनी पड़ेगी, जिसके कारण –

(अ) भारतीय किसान महंगे खाद खरीदने की स्थिति में नहीं रहेगा और खाद उत्पादन करने वाले कारखाने बंद हो जाएगे। वैसे भी पिछले वर्षो में ही उर्वरकों की कीमतों में लगभग 90 प्रतिशत वृद्धि हो चुकी है।

(ब) खुरपी, हँसिया, फावड़ा, हल आदि के दामों में बेतहाशा वृद्धि होगी। इन छोटे उपकरणों को विदेशी कम्पनियाँ छीन लेंगी और गाँव के लौहार–बढ़ई–कामगार सब के सब बेरोजगार हो जाएगे।

(स) किसानों को मिलने वाली बिजली की दरों में दो गुना से भी अधिक की वृद्धि हो जाएगी। इससे भारतीय किसान और खेती के विकास पर विपरीत प्रभाव पड़ेगा।

(द) भारत को पुन: अनाज के लिए अमेरिका आदि देशों की ओर मुँह ताकना पड़ेगा और वहीं सड़ा–गला अनाज आयात करना होगा।

नई सरकारी योजना – नई सरकार द्वारा कृषि में उत्पादकता बढ़ाने का प्रयास किया जा रहा है। इसके हेतु सरकार द्वारा मुख्यत: तीन तत्वों पर ध्यान दिया जा रहा है। उत्पादन विकास, बफर स्टॉक को संतुलित रखना एवं आधारभूत संरचना को सुदृढ़ करना।

उद्देश्य –

1. आर्थिक उदारीकरण से भारतीय किसानों की दशा पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन करना।
2. भारतीय किसानों का विकसित राष्ट्र के किसानों से होने वाली प्रतियोगिता का अध्ययन करना।

अध्ययन पद्धति – प्रस्तुत शोध आलेख में प्राथमिक एवं द्वितीयक स्त्रोत का उपयोग किया गया है। विशेष कर कृषि उत्पादकों पर अध्ययन केन्द्रीत किया गया है।

निष्कर्ष – भारत में जहाँ 85 प्रतिशत किसानों के पास 2 हेक्टेयर से भी कम भूमि है। अत: उन्हें पूर्ण कृषक नहीं कहा जा सकता। क्योंकि वे कृषि के साथ–साथ मजदूरी करके अपना जीवन यापन करते है। अत: इन्हें सरकारी मदद की आवश्यकता होती है। चूंकि पिछले कुछ वर्षों में बढ़ती हुई महंगाई दर के आधार पर कृषि उत्पाद के समर्थन मूल्य में वृद्धि नहीं हो पाई है। परिणाम स्वरूप कृषि पर होने वाले व्यय एवं इसके उत्पाद से मिलने वाले मूल्य में ज्यादा अंतर नहीं होता। कभी–कभी उत्पाद मूल्य के बराबर विक्रय मूल्य प्राप्त नहीं होती है। परिणाम स्वरूप किसानों की स्थिति भारत वर्ष में लगातार दयनीय होती जा रही है। जब तक कृषि मजबूत नहीं होगा देश मजबूत नहीं हो सकता। क्योंकि 85 प्रतिशत आबादी कृषि में संलग्न है। राष्ट्रीय खाद्यान्न सुरक्षा पर सरकार विशेष ध्यान दे रही है। परन्तु देश को खाद्यान्न उपलब्ध कराने वाले किसानों की स्थिति दयनीय हो रही है। इस पर कोई ध्यान नहीं दिया जा रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची : –

1. भारतीय अर्थव्यवस्था, एस.चंद एंड कंपनी लि0, नई दिल्ली।
2. कृषि अर्थशास्त्र, साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, आगरा।
3. आर्थिक नियोजन एवं विकास, अर्जुन पब्लिसिंग हाऊस, दरियागंज नई दिल्ली।

****

मध्य प्रदेश के औद्योगिक विकास में अधोसंरचना की भूमिका

रामजस चमार *

शोध सारांश – भारत एक विकासशील राष्ट्र है। साथ ही यह अत्यधिक जनसंख्या वाला भी राष्ट्र है। यहाँ की लगभग जनसंख्या का एक चौथाई भाग कृषि कार्य पर आधारित है। जिसमें ग्रामीण क्षेत्र पर अत्यधिक जनसंख्या निवास करती है। यहाँ की कृषि के साथ–साथ औद्योगिक विकास नितांत आवश्यक है। मध्य प्रदेश, राष्ट्र के मध्य स्थित राज्य है। मध्यप्रदेश का रीवा संभाग राज्य के पूर्व में राष्ट्रीय राजमार्ग क्रमांक 07 पर स्थित है। जो मध्य प्रदेश की पूर्वी सीमा और उत्तर प्रदेश के इलाहाबाद की सीमा पर स्थित है। मध्य प्रदेश का रीवा संभाग कृषि एवं औद्योगिक विकास में पिछड़ा हुआ है। इसका प्रमुख कारण औद्योगिक विकास में अधोसंरचनात्मक विकास का न होना है। इस विकास में परिवहन (यातायात) संचार, पानी, सिचाई, बिजली, शिक्षा एवं स्वास्थ्य के साथ–साथ कच्चे माल की अपूर्ति, पर्यावरण संतुलन आदि सम्मिलित है। 'जी.एन.पी. में देश के सभी निवासियों तथा नागरिकों द्वारा उत्पादित वस्तुऐं एवं सेवाऐं सम्मिलित रहती है।इसे हम दो स्वरूपों में विभाजित कर सकते हैं।'[1]

प्रस्तावना – आजादी के अनेकों वर्ष बीत गए किन्तु विकास कितना हुआ यह विचारणीय प्रश्न है। जिसमें रीवा संभाग में अधोसरंचनात्मक विकास पर्याप्त रूप से नहीं हो पाया है। हाल के वर्षो में रीवा संभाग मुख्यालय के आठ रेल सेवाएं देश के प्रमुख शहरों से जोड़ने के लिए बनाई गई हैं। इसके बावजूद भी संपूर्ण संभाग में अधोसंरचनात्मक विकास पर्याप्त रूप से नहीं हो पाया है। इसके अलवा भी संपूर्ण संभाग इन साधनों से वंचित है। प्रमुख शहरों से जोड़ने के लिए बनाई गई हैं। इसके बावजूद भी सम्पूर्ण संभाग इन साधनों से वंचित है। जिससे संसार व्यवस्था प्रभावित है। वर्षा जी को एकत्र न करना सिचाई के पर्याप्त साधन के अभाव में कृषि उत्पाद की कमी, बे–मौसम वारिस से कृषिगत क्षति बनी रहती है। तथा कृषकों द्वारा आत्महत्या दिन प्रतिदिन बढ़ना। विद्युत पूर्ति भी अबाध गति से नहीं होती है। विद्युत ऊर्जा निर्माण, वितरण की कमी से औद्योगिक कार्य शक्ति कम हो जाती है। 'आधुनिक अर्थशास्त्रियों की विचारधारा के अनुसार मजदूरी का निर्धारण श्रम की माँग तथा पूर्ति द्वारा होता है।'[2] इसके साथ नियमित विकास कार्य प्रभावित होता है। शिक्षा में सुधारात्मक कदम न उठाए जाने से शिक्षण में गुणवत्ताहीन आलम छाया है। दो दशक पूर्व से सरकारी शिक्षा की अपेक्षा निजी शिक्षा को बल मिल जाने से यह मात्र व्यवसाय, खानापूर्ति बनकर रह गया है। जिससे बेरोजगारी में तीव्र वृद्धि हुई है। स्वास्थ्य सेवाऐं संस्थान तो पर्याप्त है पर संसाधनों व चिकित्सा सुविधा न मिलने से रोगी व्यक्ति बिना मौत के मृत्यु हो जाती है। संचालित उद्योगों में कच्चे माल की आपूर्ति का सही क्रियात्मक उपयोग न होना, कच्चा माल की कमी, औद्योगिक अवरूद्ध को प्रकट करने का संकेत देता है। निर्मित माल का सही बाजारीकरण की अव्यवस्था औद्योगिक विकास हेतु राजनैतिक, आर्थिक और औद्योगिक नैतिकता के मात्रा में भारी अभाव सा पाया जाता है। जिससे रीवा संभाग की औद्योगिक विकास में अधोसरचना विकास किस प्रकार महत्वपूर्ण है। इसका आर्थिक और सामाजिक रूप से लोगों पर क्या असर रहेगा। बाजारीकरण की अव्यवस्था से चक्रिय कारण की पद्धतियों का निर्माण होने लगता है। औद्योगिक संरचना को आधुनिकीकरण के पश्चात् होने वाले नियोजित अधोसंरचना की सफलता का अनुमान लगाया जा सकता है। औद्योगिक उत्पादों के आधार पर प्राकृतिक संसाधन–हवा, पानी, वन संपदा, खनिज, पर्यावरण आदि के दोहन से मनुष्य का विकास होता है। इसके विपरीत दिशा में आप्रकृतिक संसाधन के दोहन के कारण मानव का विकास अवरूद्ध होता जा रहा है। जिसमें बिजली, संचार, यातायात, शिक्षा प्रशिक्षण, स्वास्थ्य कृषिगत उत्पादन एवं अन्य भौतिक व अभौतिक सुविधाओं का समुचित उपयोग कर किस प्रकार औद्योगिक विकास किया जाये एवं इस पर अद्योसंरचना का क्या योगदान है? सभी उद्योग (लघु मध्यम, विकसित) पर अधोसंरचना की भागीदारी कितनी है, को आंकलन करना पड़ा। अर्थव्यवस्था को विकसित करने में क्या स्थान रखता है, का समुचित अन्वेषण किया जाएगा। अधोसंरचना विकास में आने वाली कठिनाईयों का अध्ययन किया जाएगा। उत्पत्ति के साधनों का किस प्रकार विस्तार कर औद्योगिक विकास की गति को तेज किया किया जा सकता है। इसके लिए सुनिश्चित सुझाव की आवश्यकता सरकार को होती है। जिससे उद्योगों का चक्रीय विकास हो सके। अधोसंरचनात्मक रूप से औद्योगिक विकास के लिए संपूर्ण संसाधनों का चक्रीय विकास हो सके। अधोसंरचनात्मक रूप से औद्योगिक विकास के लिए सम्पूर्ण उद्योग और संसाधनों का अध्ययन करनें में बल प्रदान होता है। इसके साथ–साथ औद्योगिक संरचना के आधार पर अधोसंरचना मध्यप्रदेश के साथ अन्य राष्ट्रीय स्तर की अर्थव्यवस्था को विकसित करने का प्रेरणा स्त्रोत होगा।

शोध प्रविधि – शोध पत्र **मध्य प्रदेश के औद्योगिक विकास में अधोसंरचना की भूमिका** नामक यह शोध पत्र एक प्रकार का द्वितीयक सामग्री का प्रयोग किया है। जिसमें विश्लेषणात्मक पद्धति सैद्धान्तिक और प्रयोगिक रूपों को संकलन का आधान माना जाता है। इसमें व्यक्तिगत साक्षात्कार प्रत्यक्ष और परोक्ष रूपों से भी शोध पत्र निर्माण की भूमिका का आकलन किया गया है। शोध प्रविधि के माध्यम सें अनेक विद्वानों के मार्गदर्शी सुझाव को भी चुना गया है। जिसके कारण शोध पत्रिका, एवं अन्य पत्रिकाओं को अध्ययन का माध्यम बनाया गया है। इन्हीं दृष्टिकोणों के साथ उद्योगों पर अधिक जोर दिया गया है। क्योंकि आज भी बेरोजगारी की दिशा में व्यक्ति भटक रहा है। इसके कारण भारत में भी औद्योगिक रूप से

* शोधार्थी (वाणिज्य) शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.) भारत

अधोसंरचना के आधार पर अर्थव्यस्था को समुचित करने का अथक प्रयास किया गया है। औद्योगिक रूप से आर्थिक पहलू को छूने से भारतीय अर्थव्यस्था भी सुदृढ़ होती है। इन आर्थिक पहलू के साथ राजनैतिक, सामाजिक, पारिवारिक स्थिति भी बदल जाती है। इस प्रकार के संन्दर्भो को अध्ययन का आधार के रूप में प्रयोग किया गया है। पुस्तकालयों एवं इन्टरनेट की भी सामग्री का उपयोग करते हुए इस तथ्य को समझने का भरपूर प्रयास किया गया है।

उद्देश्य – औद्योगिक संरचना के आधार पर अधोसंरचना की स्थिति के अध्ययन का आधार बनाया गया है। जिससे भारतीय अर्थव्यस्था को भी सुदृढ़ रखा जा सके।

1. औद्योगिक संरचना रूप से उपलब्ध संसाधन की उपयोगिता का अध्ययन करना।
2. औद्योगिक विकास में आने वाली कठिनाइयों एवं समस्याओं का अध्ययन कर आवश्यतानुसार निराकरण एवं सुझाव देना।
3. अधोसंरचना के अन्तर्गत आने वाली प्राकृतिक संसाधनों की हवा, पानी, खनिज, पर्याप्त मात्रा में पर्यावरण की उपलब्धता का अध्ययन करना।
4. अधोसंरचना के अन्तर्गत उद्योगों के अन्दर ऊर्जा, प्रकाश का सुनियोजित विकास करना।
5. अधोसंरचनात्मक रूप से उद्योगों से निकला अपशिष्ट (अनुपयोगी) का यथायोचित निकास व संग्रहण करना।
6. अधोसंरचनात्मक रूप से उद्योगों से निकला अपशिष्ट (अनुपयोगी) का यथायोचित विकास व संग्रहरण करना।
7. औद्योगिक उत्पाद को नियमित बाजारीकरण करने आर्थिक व गैर आर्थिक संसाधनों का अध्ययन व सुझाव देना।
8. नियमित उत्पाद की जानकारी हासिल कर श्रम एवं रोजगार का सृजन करना।
9. निजी व सरकारी औद्योगिक इकाईयों अद्योसंरचना का तुलनात्मक अध्ययन करना।

योगदान – औद्योगिक विकास के लिए आवश्यक रूपों में अद्योसंरचना के विकसित होने के लिए महत्वपूर्ण आवश्कयता प्रतीत होती है। क्योंकि मध्यप्रदेश की विविधता का पूर्ण क्षेत्र विकास की ओर उन्मुखता से बढ़ रहा है। 'राष्ट्रीय आय किसी देश की उत्पादन व्यवस्था से प्राप्त होने वली वस्तुओं एवं सेवाओं का वह परिणाम है जो कि अन्तिम उपभोक्ताओं को प्राप्त होती है या जो देश में कुल पूँजीगत वस्तुओं में वृद्धि करता हैं।'[3] जिसके विकास का महत्व अधिक है। स्वतंत्रता से लेकर आज तक के आर्थिक परिदृश्य की चर्चा की जाए तो पता चलता है। देश के पिछड़े क्षेत्रों को विकसित करना औद्योगिक रूप की गतिशील नीतियों का बनाया जाना सही दिशा की ओर क्रियान्वयन करना है। जिसके आधार पर औद्योगिक नीतियों का निर्धारण होता है। तब समय-समय पर पंच वर्षीय योजनाओं के कार्य कारण के प्रतिरूपों में नई-नई नीतियों का सृजन होता है।

'विज्ञान के विकास के साथ-साथ आधुनिक समय में औद्योगिक क्षेत्र में कुछ महत्वपूर्ण क्रान्तिकारी परिवर्तन हुए हैं। जिनके फलस्वरूप प्रबन्धकीय क्रियाओं का सम्पादन पुराने तौर-तरीकों से लाभदायक सिद्ध नहीं हो सकता है।'[4]

औद्योगिक क्रांतियों का भी मूल कारण उनकी विचारधाराओं को प्रमाणित करना माना जाता है। जिसके प्रोत्सहन हेतु अनेक संसाधनों की विचारधारा प्रवाहित होती है। इसी चेतना का माध्यम भी सामाजिक और राजनैतिक स्थित के साथ विकास की दिशा को अग्रसर करता है। औद्योगिककरण को प्रोत्साहित करने की पूँजीगत उद्योगों को भी शामिल किया जाता है। जिससे उद्योगों का अभाव ही बना रहा है। अर्थशास्त्रियों ने ऐसा किया है। कि निर्धन राष्ट्र तभी प्रगति कर पाएगा जब उनमें अच्छे औद्योगिक क्षेत्र विकसित होते हैं। उद्योग के रोजगार की उपल्बध को ध्यान में रखकर उनके विचारों का सृजन करते है। प्राथिमक क्षेत्र की कृषि अर्थव्यस्था अच्छे औद्योगिक क्षेत्रों के रूप में सन्निहित होती है। जिसके कारण उद्योग और रोजगार की उपलब्धता के विचारों का संयोजन भी होता रहता है। जिससे रोजगार की संभावनाऐं अधिक होती है। आज की औद्योगिक विचारधारा समाज को जोड़ने का काम कर रही है। इसका प्रयास सफल होगा। कार्य प्रणाली पर निर्भर करता है। निजी क्षेत्रों के औद्योगिक नीतियों के निर्माणक के लिए अनेकों प्रश्न उपस्थित होते है। जिसके कारण वह मजबूर हो जाता है। जिसकी व्याख्या करना ही मानव जीवन के लिए हितकर न होकर अहितकारी सिद्ध हो जाती है।

औद्योगिक विकास हेतु अधोसंरचनात्मक ढंग के विकास का मार्ग और भूमिका का प्रोत्सहन पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध होता जा रहा है। क्योंकि किसी भी क्षेत्र की चक्रीय विकास का ढ़ाचा भी सामाजिक रूपों में औद्योगिक क्रान्तियों का परिणाम बन गया है। जिससे उद्योगों के द्वारा कच्चे माल की पूर्ति करना। कच्चा माल को निर्मित करने से भागव का परिवहनीय करण सूचनाओं का त्वरित प्रसारण, श्रम शक्ति का विश्लेषण, औद्योगिक व तकनीकी विश्लेषण औद्योगिक उत्पाद को बाजार पहुँचाना, नवीन बाजार संरचना की खोज करना ही उत्पादन की नई प्रक्रिया को विकसित करना है। यहाँ तक कि उत्पादन की शुरूआत ही कच्चे माल से होती है। इसके लिए नये स्त्रोतों का औद्योगिक संचालन हेतु नियमित बिजली, पानी की आपूर्ति, समग्र औद्योगिक विकास के लिए श्रम शक्ति की वृद्धि करना और शिक्षा प्रशिक्षण की उपलब्धता और तकनीकी संसाधनों की पूर्ण उपयोगिता, के साथ औद्योगिक सृजन में वृद्धि करने के लिए औद्योगिक पर्यावरण को संतुलित रखना ही उद्योगों का विकास होता है। जिससे उद्योगों द्वारा निकलने वाले हानिकारक अपशिष्ट पदार्थ को यथा उचित निकासी व संग्रहरण की व्यवस्था करना है। खनिजों की उपलब्धता, औद्योगिक स्वास्थ्य व्यवस्था में औद्योगिक संसाधनों को पूर्व में किये गये कार्यो की समीक्षा का वर्तमान व भविष्य की संभावना का गहन अध्ययन करेगा। विकास में आने वाली समस्याओं का सूचीबद्ध अध्ययन करना तथा शीघ्र निराकरण हेतु आवश्यक सुझाव देना है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. डी.सी. अग्रवाल, व्यावहारिक अर्थशास्त्र, साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, आगरा, 2002, पृष्ठ 23
2. डॉ. बी.आर. नलवाया, समष्टि अर्थशास्त्र, जवाहर पब्लिकेशन्स, आगरा, प्रथम संस्करण, पृष्ठ 50
3. डॉ. विनोद त्रिपाठी, व्यवहारिक अर्थशास्त्र, समष्टि अर्थशास्त्र, राम प्रसाद पब्लिकेशन्स, आगरा, पृष्ठ 14
4. डॉ. बी.के. मेहता, प्रबन्धकों के लिए लेखांकन, एसबीपीडी पब्लिशिंग हाउस, आगरा, 2011-12, पृष्ठ 1.19

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to September 2017, Vol. I

जोतों की संख्या की अधिकता एवं जोत का आकार कम होना (म.प्र. के बड़वानी जिले के विशेष सन्दर्भ में)

डॉ. स्मिता शाह *

प्रस्तावना – भारत एक कृषि प्रधान देश है तथा यहाँ लगभग 67.67% जनसंख्या गाँवों में निवास करती है तथा उनकी आजीविका स्त्रोत कृषि कार्य है। भारतीय कृषि की एक प्रमुख विशेषता हैं, जोत इकाइयों की संख्या बहुत अधिक होना एवं अधिकांश जोतों का आकार कम होना है। कृषि के आकार से अर्थ खेत की लम्बाई-चौड़ाई से हैं । एक हेक्टेयर से कम वाली जोतों को सीमान्त जोत, एक हेक्टेयर से अधिक तथा दो से कम को लघु, दो से अधिक तथा चार हेक्टेयर से कम अर्द्धमध्यम, चार हेक्टेयर तथा अधिक वृहद जोत बताया गया है । भारत में जोत आकार के अनुसार कार्यशील जोतों की संख्या एवं उनके अंतर्गत क्षेत्रफल के आंकड़ों से स्पष्ट है कि देश में भू- स्वामित्व का अब समान स्वरूप विद्यमान है। यह असमानता खाद्यान्नों के उत्पादन वृद्धि मे प्रमुख बाधक है। देश में विभिन्न भुमि- सुधार कार्यक्रम समय समय पर अपनाए गए , लेकिन भू-स्वामित्व का यह असमान वितरण आज भी विद्यमान है।

परिमाणत: जोत के प्रति इकाई क्षेत्र से उत्पादन की मात्रा कम प्राप्त होती है और उत्पाद की उत्पादित प्रति इकाई मात्रा पर उत्पादन लागत अधिक आती है।

बडवानी जिला – हमारे अध्ययन क्षेत्र बडवानी जिले की **85.29 प्रतिशत** जनसंख्या गाँवो में निवास करती है, जिनका मुख्य व्यवसाय कृषि हैं। देश की तरह जिले में भी भू- स्वामित्व का असमान स्वरूप विद्यमान है। जिले का **भौगोलिक क्षेत्रफल 5298.46** वर्ग कि.मी हैं ।

बडवानी जिले में जोतों की संख्या –

तालिका क्रं. 1 (देखे आगे पृष्ठ पर)

तालिका देखने से ज्ञात होता है कि जिले में लघु जोतों की संख्या सभी तहसीलों में अधिक है तथा वृहद जोतों की संख्या बहुत ही कम है तथा जिलें में कुल जोत संख्या देखे तो विभिन्न तहसीलों में संख्या में विषमताएं है। इसमें सबसे अधिक राजपुर तहसील में 24,417 जोतों की संख्या है, जबकि सबसे कम अजंड तहसील में जोतों की संख्या 7,740 है। जोतों की संख्या से वास्तविक स्थिति का ज्ञान नहीं होता है, जोतों का क्षेत्रफल में वितरण वास्तविक स्थिति का परिचय कराता है। क्षेत्रफल की दृष्टि से देखे तो सबसे अधिक राजपुर तहसील में 46,864 वर्ग कि.मी जोतों का क्षेत्रफल है, जबकि सबसे कम अजंड तहसील में जोतों का क्षेत्रफल 17545 वर्ग कि.मी है। **जिलें में कुल जोत संख्या 1,11,163 हैं एवं क्षेत्रफल 2,27,100 वर्ग कि.मी है।**

जिले में आकार अनुसार कृषि जोतों की संख्या तथा क्षेत्रफल (चार्ट देखे आगे पृष्ठ पर)

चार्ट से स्पष्ट हैं कि **जिले में सबसे अधिक सीमान्त जोत संख्या 35451 व क्षेत्रफल 20471 वर्ग कि.मी है, जो कि जिले में सबसे कम हैं एवं वृहद जोत संख्या सबसे कम 1308 व क्षेत्रफल 18154 है।** जिले में जोत आकार के अनुसार कार्यशील जोतों की संख्या एवं उनके अंतर्गत क्षेत्रफल के आंकड़ों से स्पष्ट है कि देश की तरह जिले में भी भू-स्वामित्व का असमान स्वरूप विद्यमान है। अत: स्पष्ट है कि देश की तरह जिलें मे भी जोतों की संख्या बहुत अधिक है और उनकी संख्या निरंतर बढ़ रही है। जोतों के अंतर्गत भूमि के क्षेत्र में असमानता भी व्याप्त है और यह असमानता भी बढ़ती जा रहीं है। जोतों की संख्या से वास्तविक स्थिति का ज्ञान नहीं होता है, जोतों का क्षेत्रफल में वितरण वास्तविक स्थिति का परिचय कराता है। लघु एवं सीमान्त जोतों पर सिंचाई के लिए कुआँ बनाने , पम्प - सैट लगाने, उन्नत कृषि विधियों एवं मशीनों का उपयोग करना आर्थिक दृष्टि से लाभकर नहीं होता है। परिमाणत: जोत के प्रति इकाई क्षेत्र से उत्पादन की मात्रा कम प्राप्त होती है और उत्पाद की उत्पादित प्रति इकाई मात्रा पर उत्पादन लागत अधिक आती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. जनगणना 2011**अधिक भू-अभिलेख, बडवानी** भारत 2008 प्रकाशन विभाग सूचना व प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार
2. Agriculture statistics at a glance directorate of economics and statistics, ministry of agriculture, government of India new Delhi.
3. Agricultural situation in india – various issues, directorate of economics & statistics, ministry of agriculture, government of india, new Delhi.
4. Indian Agriculture In Brief, Various Issues, Directorate Of Economics And Statics, Ministry Of Agriculture, Government Of India , New Delhi.

* (वाणिज्य) श्री उमिया कन्या महाविद्यालय, रंगवाशा राउ, इन्दौर (म.प्र.) भारत

तालिका क्रं. 1 आकार अनुसार कृषि जोतो की संख्या तथा क्षेत्रफल

जिला/तहसील/वि.खं.	सीमांत (एक हेक्टर से कम)		लघु 1 हेक्टर से अधिक तथा दो से कम		अर्द्धमध्य, दो से अधिक तथा चार हेक्टर से कम	
	संख्या	क्षेत्रफल	संख्या	क्षेत्रफल	संख्या	क्षेत्रफल
1	2	3	4	5	6	7
जिला बड़वानी	35451(31.90)	20471(9.01)	34532(31.06)	48891(21.52)	28238(25.4)	72195(31.79)
तहसील बड़वानी	5516(38.85)	3024	4190(29.51)	6038	3122(21.99)	8379
तह. ठीकरी	4068(39.16)	2111(11.63)	3408(32.81)	4718(25.98)	2096(20.18)	5764(31.74)
तहसील राजपुर	8704(35.65)	5044(10.72)	7734(31.67)	11027(23.53)	5466(22.39)	14836(31.66)
तह. पानसेमल	4584(33.32)	2758(11.53)	4886(35.51)	6674(27.91)	3209(23.32)	8271(34.59)
तहसील निवाली	3058(29.83)	1756(07.53)	2960(28.87)	4000(17.14)	2741(26.74)	7293(31.26)
तहसील सेंधवा	4079(27.58)	2377(8.05)	4022(27.19)	578(01.96)	4588(31.02)	11501(38.96)
तहसील वरला	2866(31.33)	1718(09.75)	2718(29.71)	3935(22.33)	2719(29.72)	6572(37.30)
तहसील अंजड़	2139(27.64)	1322(07.53)	2557(33.04)	3751(21.38)	1959(25.31)	5437(30.99)

जिला/तहसील/वि.खं.	मध्यम 4 हेक्टेयर से अधिक तथा 10 से कम		वृहद 10 हेक्टेयर से अधिक		योग	
	संख्या	क्षेत्रफल	संख्या	क्षेत्रफल	संख्या	क्षेत्रफल
0	8	9	10	11	12	13
जिला बड़वानी	11634(10.45)	67389(29.67)	1308(1.18)	18154(7.99)	111163(100)	227100(100)
तहसील बड़वानी	1285(9.05)	7434(28.61)	85(0.61)	1110(4.27)	14198(100)	25985(100)
तह. ठीकरी	716(06.89)	4014(22.11)	99(0.01)	1551(8.54)	10387(100)	18158(100)
तहसील राजपुर	2331(09.55)	13642(29.11)	182(0.74)	2315(04.94)	24417(100)	46864(100)
तह. पानसेमल	1036(07.53)	5632(23.55)	44(0.32)	579(02.42)	13759(100)	23914(100)
तहसील निवाली	1324(12.91)	7965(34.14)	169(01.65)	2318(09.93)	10252(100)	23333(100)
तहसील सेंधवा	1792(12.11)	10664(36.13)	310(02.09)	4396(14.89)	14791(100)	29516(100)
तहसील वरला	783(08.86)	4574(25.96)	62(00.68)	820(04.65)	9148(100)	17619(100)
तहसील अंजड़	991(12.80)	5718(32.59)	94(01.21)	1317(07.51)	7740(100)	17545(100)

नोट –कोष्ठक प्रतिशत को प्रदर्शित करता हैं।

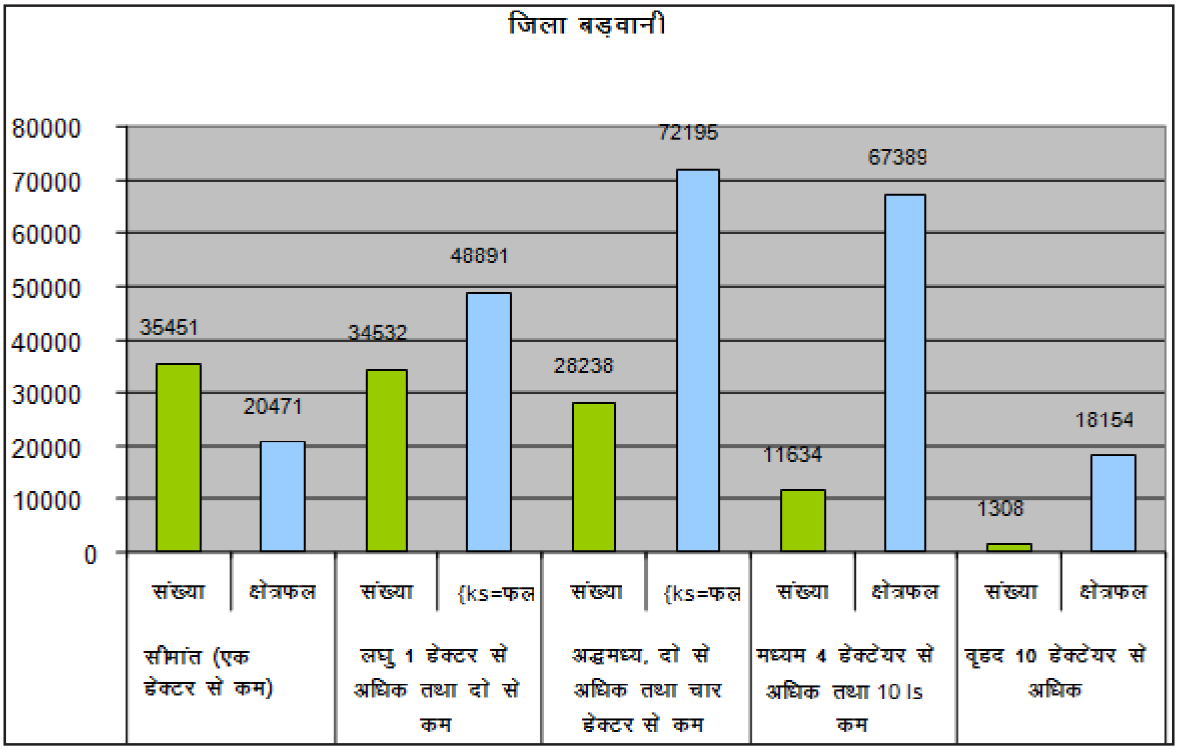

आधुनिक अर्थव्यवस्था में उद्यमिता विकास की भूमिका

रमेश कुमार साकेत *

शोध सारांश – आधुनिक अर्थव्यस्था के आधार को विकसित रूपों में कार्य करने की योजना तैयार करना है। जिससे सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था सुदृढ़ हो सकें। अर्थव्यवस्था के सम्बन्ध में भारतीय योजना आयोग का मानना है कि 'एक विकासशील देश वह है जहाँ एक ओर अल्प-प्रयुक्त जन शक्ति तथा दूसरी ओर अशोषित संसाधनों का न्यूनाधिक रूप में सहअस्तित्व पाया जाता है।''इस तरह की अर्थव्यस्था में विकसित राज्य भी अपने अस्तित्व को और मजबूत करने का प्रयास करता है। क्योंकि कोई भी उद्योग प्राकृतिक साधनों से समृद्धि होता है। इसी में औद्योगिक विकास भी करता है। इसके बिना औद्योगिक विकास संभव नहीं है। यह एक प्रकार का महत्वपूर्ण तथ्यों की विशेषताओं पर निर्भर करता है। जिसकी पिछले दो दशकों में मध्यप्रदेश में जल माध्यमों और लघु प्रमाप के उद्योगों का जन्म होता है।'' आधुनिकीकरण का ही एक दूसरा पहलू ग्रामीण-जन द्वारा उपयोग की जाने वाली वस्तुओं का स्वरूप है। परम्परागत ग्रामीण जीवन स्थानीय निर्मित वस्तुओं से ही जुड़ा रहता था। उद्योगों में निर्मित कुछ गिनी चुनी वस्तुऐं जैसे साबुन, माचिस, नमक आदि ही ग्रामीण जीवन का अंश थी।'' वहीं दूसरी ओर कुटीर उद्योग के साथ-साथ ग्रामीण उद्योगों की भी विशेषताऐं निर्भर होती है। जिस प्रकार की बुनियादी उद्योगों की अविरल धारा में निहित बौद्धिक क्षमता भी परिलक्षित होती है।

शोध प्रविधि – शोध पत्र आधुनिक अर्थव्यवस्था में उद्यमिता विकास की भूमिका एक प्रकार का द्वितीयक स्त्रोत के संकलन के द्वारा शोध पत्र का अध्ययन कर लिखा गया है। जिसमें संश्लेषणात्मक पद्धति के द्वारा अध्ययन के क्षेत्र को विस्तारित करने का प्रयास किया गया है। इस शोध प्रविधि में शोध जर्नल, पत्रिकाओं एवं विद्वानों का मार्गदर्शन भी परिलक्षित हुआ है। इसके अनेक दृष्टिकोणों को छूने के लिए मूल ग्रन्थों के साथ-साथ पुस्तकालयों और इन्टरनेट का भी शोध पत्र में प्रयोग किया गया है।

शोध पत्र का उद्देश्य :

1. आर्थिक विकास में योजनाओं का उपभोक्ता तक क्रियान्वयन किया जाना।
2. इन योजनाओं से सम्मिलित होने पर उद्योग को आर्थिक व्यवस्था से मजबूत करना।
3. तकनीकि शिक्षा के द्वारा उद्योगों को विकसित करना।
4. उद्योग विकसित होने से बेरोजगारी को दूर किया जा सकता है।
5. औद्योगिक विकास को पिछड़ापन खत्म करना।

समस्याऐं – उद्योगों का ह्रास तब होता है। जब औद्योगिक विकास में पूँजी की कमी आती है। इससे आर्थिक विकास की दिशा ही बदल जाती है। क्योंकि प्रत्येक क्षेत्र में औद्योगिक विकास में आर्थिक विसंगतियों की दिशा अधिक चिन्तनीय विषय बनता जा रहा है। किसी भी जिले में उद्योग के बहुमुखी विकास के लिए योजनाओं का सहयोग महत्वपूर्ण भूमिका रहती है। जिसके कारण औद्योगिक विकास उन्नति करता है। उद्योगों की सभी पहलुओं का सूक्ष्म विश्लेषण करते हुए उनकी अनेक दिशाओं की समस्याओं का निरीक्षण होना भी बहुत महत्व रखता है। जिसमें लघु उद्योग और कुटीर उद्योगों की समस्याओं की अनेक कठिनाईयों का दूर किया जा सकता है।

कुटीर उद्योगों की कुछ समस्याऐं मुख्य रूप से औद्योगिकरण को प्रभावित करती है।

1. कच्चे माल सही दिशा में न उपलब्ध होने की समस्या है।
2. बिजली की न रहने की समस्या से भी उद्योग को समस्या आती है।
3. स्थानीय कच्चे माल को ले जाने और ले आने के लिए परिवहन की समस्या।
4. तैयार माल को बेचने के लिए बाजार की स्थिति की समस्या।
5. कच्चे में माल को तैयार करने वाले कुशल श्रमिकों की समस्या।

जिस प्रकार से कुटीर उद्योगों को निर्मित करने में चिराई उद्योग, कढ़ाई उद्योग, चूना बनाने बाले भट्ठी की, बीड़ी उद्योग इसके साथ कई स्थानीय कच्चे मालो पर आधारित है। कार्य की परियोजनाओं की अनेक समस्याऐं खड़ी होती रहती है। जिससे पर्याप्त कच्चे माल के न होने से वर्ष भर उत्पादन की समस्या निरंतर बनी रहती है।

उपयोगिता – कुटीर उद्योगों को चलने वाले पूँजीपतियों का हाथ होने से कच्चे माल को ले आने वाले किसानों को मूल लाभ से वंचित कर देते है। उसकी वह पूँजीपति मोटी रकम को खाता है। इसके साथ मौसम के समय में कच्चे माल को एकत्रित कर अपनी व्यवसायिक को बढ़ाने में लग जाता है। जिसके आधार पर कारीगरों को विश्वास दिला कर उनके परिश्रमिक का भरपूर शोषण करता है। क्योंकि वह पूँजीपति स्थानीय व्यक्ति होता है। इस कारण कारीगरों को केवल कम मजदूरी देकर अधिक से अधिक माल को उपलब्ध कर लेता है। जिससे वह माल की दोगुनी कीमत वसूलता है। जबकि वह कम से कम मजदूरी देकर अधिक से अधिक कार्य कराने के पक्ष में रहता है। इससे उद्योग तो निर्मित होता किन्तु उसकी मूल सम्भावनाओं को ही खत्म कर देता है। इस तरह से कुटीर उद्योगों में कार्यरत कारीगर लाभ से वंचित हो जाते है। ''पूँजीवादी अर्थव्यवस्था में कीमत यन्त्र आर्थिक क्रियाओं के निर्देशक का कार्य करता है। वह एडम स्मिथ का आदृश्य हाथ है। कीमत यन्त्र एक ऐसी व्यवस्था है, जो फर्मो व निजी व्यक्तियों के द्वारा व्यक्तिगत लाभों को अधिकतम करने की दृष्टि से संसाधनों के मितव्ययितापूर्ण आवंटन

* शोधार्थी (वाणिज्य) शासकीय स्नातकोत्तर संजय गाँधी स्मृति महाविद्यालय, सीधी (म.प्र.) भारत

की व्यवस्था करती है। इससे समस्त अर्थ-व्यवस्था के संसाधन स्वतः ही आवंटित हो जाते हैं।''जिससे दर्लभ कच्चे माल का प्रदाय आर्थिक रूप में करने वाले को कम लाभ होता है। जिससे कारीगरों की स्थिति में भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। जिसके कारण इनकी दशा भी बहुत ही दयनीय होती जा रही है। जिसका मूल कारण अज्ञानता के साथ-साथ पूँजी की कमी भी कहीं जा सकती है। इन्हीं निर्धनताओं के कारण उन श्रमिकों का विकास नहीं हो पाता है। ऐसी स्थिति में वे साधन विहीन हो जाते है। क्योंकि किसी भी उद्योग को सुचारू रूप से चलाने के लिए अर्थ की महत्वपूर्ण आवश्यकता होती है। इस प्रकार मध्यप्रदेश के कारीगरों द्वारा लाभ की स्थिति अच्छी न होने के कारण वहाँ निर्मित करने वाले माल घटिया किस्म का होता जा रहा है। ''उद्योग, जहाँ आज भी पुराने किस्म के उपकरण उपयोग में आ रहे हैं तथा विलोपन सापेक्षिक रूप में कम महत्व की वस्तु है, परिवहन तथा लोक-सेवाएँ, खाद्यान्न, प्रक्रियाएँ, परिधान-उद्योग तथा अन्य है। विलोपन की दृष्टि से महत्वपूर्ण उद्योग हैं, मोटर उद्योग, स्थायी उपभोक्ता वस्तुएँ, इलेक्ट्रॉनिक्स, कार्यालय उपकरण उपस्कर तथा खनिज-उद्योग।'' इस प्रकार से लागत भी दिन प्रतिदिन बढ़ोत्तरी के कगार में है। जिसका प्रभाव बेरोजगार व्यक्तियों पर भी पड़ता है। क्योंकि जब तक सुगम उद्योग नहीं होगे तब तक रोजगार की स्थिति को कैसे आँका जा सकता है। पुराने उपकरण से भी कभी खारब होने पर सरकारी तंत्र होने के कारण उनकी बहुत ही समस्या उत्पन्न हो जाती है। जिसके कारण सुधारने में पुराने उपकरण की जगह नये आ सकते हैं। नये उपकरण से कुशल यंत्र चालक को भी कार्य करने में सहायता और उत्सुकता रहती है।

''ग्रामीण अर्थव्यवस्था के भावी विकास के लिए जो भी योजना बनायी जाए उसके एक परमावश्यक तत्व के रूप में परिवहन एवं दूर-संचार साधनों के विकास को भी उचित स्थान दिया जाना चाहिए। इन साधनों के अभाव में ग्रामीण विकास कल्पना मात्र ही प्रतीत होगा।'' कुटीर उद्योगों की समस्याओं को हल करने में कच्चे माल अधिक मात्रा में मिलता है। तब वहाँ की सभी समस्याऐं हल हो जाती है। किन्तु यह कार्य सहकारी कार्य प्रणाली के आधार पर अनेक समितियों का लाभ भी उपभोक्ता को प्राप्त होता है। मध्यप्रदेश में वर्तमान समय में खादी ग्राम उद्योग के अनेक केन्द्र निर्मित हुए है। जिससे वहाँ की स्थिति का मूल्यांकन करना उत्पादन की क्षमता पर निर्भर करता है। इस खादी ग्राम उद्योग के लिए बनी हुई समितियों का अनेक उत्पादकों को समय-समय पर समुचित मात्रा कच्चे माल का मूल्य प्राप्त होता है। इस कार्य का जिम्मा फर्म सोसायटी और सहकारी समितियों के साथ खादी ग्रामोद्योगों के साथ कुटीर उद्योगों की सस्ती कीमत पर निर्भर करता है। क्योंकि कच्चे माल समय पर उपलब्ध होने से उसकी अच्छी कीमत वसूली जाती है।

इन कच्चे माल को रखने के लिए भंड़ार ग्रहों की सुविधा न होने के कारण भी हानि का सामना करना पड़ता है। जिससे कारीगरों को समय पर उस समान को रखने के लिए जगह की भी बहुत अधिक आवश्यकता होती है। अतः इसके निर्माण से कुटीर उद्योगों के विकासात्मक दिशा में एक रचनात्मक कार्य सम्भव हो सकता है। ''कृषि उत्पादन की एक विचित्र विशेषता यह है कि भरी-पूरी फसल उत्पादक के लिए संकट का कारण बन सकती है।''

निष्कर्ष – वर्तमान समय में कुटीर उद्योगों की स्थिति के लिए वित्तीय सहायता के साथ अस्तित्व की भी आवश्यकता होती है। जिसके कारण आने वाली साख एवं पूँजी दोनों की बहुत ही आवश्यकता होती है। इसका व्यापक प्रभाव लघु एवं कुटीर दोनों उद्योगों पर पड़ता है। जिसके कारण अनेक शाखाओं की अति संख्या के कारण उसमें कच्चे माल का उत्पादन के लिए पूँजी की आवश्यकता होती है। इन उपकरणों की पूर्ति के लिए कुटीर उद्योगों में कार्य करने वाले कुशल कारीगरों की आवश्यकता होती है। जिसमें महत्वपूर्ण होता है, पूँजी व्यवस्था कि उसे अच्छे वेतन देकर अच्छे कारीगर रख सके। व्यापारिक अधिकोष प्रायः कुटीर उद्योगों को साख के रूप में स्वीकृत प्रदान करती है। कुटीर एवं ग्रामीण उद्योगों के लिये प्रथम दृष्टया उपकरणों की आवश्यकता होती है। जिसमें उपकरण और कच्चे माल के क्रय और विक्रय हेतु अच्छे बाजार की भी आवश्यकता होती है। क्योंकि कारीगर धन के अभाव में कार्यशील पूँजी की व्यवस्था करने में असमर्थ रहते हैं। इस हेतु आधुनिक उद्योगों के विकास में होने वाली सबसे बड़ी बाधा आर्थिक कमी होती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. एस.सी. जैन, ग्रामीण एवं कृषि विपणन, कैलाश पुस्तक सदन, भोपाल, 2014, पृष्ठ 189
2. ईश्वर धींगरा, ग्रामीण अर्थव्यवस्था, सुल्तान चन्द्र एण्ड सन्स, नई दिल्ली, 1989, पृष्ठ 6
3. डॉ. टी.एन. चतुर्वेदी, तुलनात्मक आर्थिक पद्धतियाँ, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 1990, पृष्ठ 74
4. मार्टिन जे. बेले, अनुवादक विजेन्द्र कुमार श्रीवास्तव, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल, 1972, पृष्ठ, 143
5. ईश्वर धींगरा, ग्रामीण अर्थव्यवस्था, सुल्तान चन्द्र एण्ड सन्स, नई दिल्ली, 1989, पृष्ठ 119

****

मध्यप्रदेश पर्यटन में व्यवसायिक सम्भावनाएँ

विजय कुमार साकेत *

शोध सारांश – मध्यप्रदेश पर्यटन में व्यवसायिक सम्भावनाएँ विश्व में पर्यटन के लिए आर्थिक, सामाजिक और सौन्दर्य की जरूरत और विविधता जैविक प्रक्रिया है। संसाधनों के प्रबंधन के लिए स्थाई रास्ता परिकल्पित किया गया है, जिसमें पर्यटकों को संगठन के लिए संस्कृतिक अखण्डता आवश्यक है। पारिस्थितिकी और जीवन का समर्थन और जीवन की विचार धारा एक सिस्टम है। जिसमें आने वाले पर्यटकों को भी उनके जीवन की अनेक आवश्यतानुरूप वस्तुओं को मेले के माध्यम से भी उपलब्ध कराया जाता है।'पर्यटन बहुदिशायुक्त प्रवृत्ति है, पर्यटकों को एक स्वेच्छा किस्म की सेवाएं प्रदान करने में बहुत-सी क्रियाओं का योग रहता है। ये क्रियाऐं अपना अलग अस्तित्व बनाऐ रखती हैं। पर्यटन स्वयं एक पूर्ण स्वरूप नहीं है।'[1] किन्तु इसका असर संबंधित क्रियाओं और व्यवसायिक क्षेत्रों में भी पड़ता है। जिसके साथ-साथ मिलकर अनेक सिद्धान्तों के विचारधारा से करती हैं। पर्यटक स्थलों में व्यवसाय के आधार पर होटल हो या मालिकों के विचारों को देखकर गाड़ी मालिक या चालक के लिए पर्यटक को घूमने हेतु वाहन की आवश्यकता होती है। ऐसी दशा में सहयोग और सामंजस्य के साथ अनेक जरूरतों को पूरा करने का प्रयास करते हैं।

प्रस्तावना – मध्यप्रदेश का छोटा सा शहर खजुराहो के परिदृश्य का समान रूप से संयोगिक कार्य के व्यासायिक दृष्टि से मंदिरों का कलात्मक परिदृश्य पर्यटन के रूप में देखा जाता है। यहाँ तक कि बाहर से आने वाले पर्यटकों के लिए व्यवसायिक महत्व भी है। इसके आस-पास उपयोगी वस्तुओं को व्यवसायिक रूपों में दिखाया गया है। यह खजुराहो मंदिर दुनिया के सभी क्षेत्रों में आकर्षक पर्यटन का केन्द्र बिन्दु बन गया है। खजुराहो के इस भव्य मंदिर का निर्माण 1050 ई. मध्य निर्मित किया गया लगता है। यह चंदेल वंश की शासन काल की अवधि में लगभग किया गया प्रतीत होता है।

जबकि वहाँ अनेक प्रकारों की मंदिरों का निर्माण हुआ है। 'हमारे देश की प्राचीन संस्कृति, स्मारक, धरोहर, नैसर्गिक छटा यहाँ के पर्यटन के चार चाँद लगा सकती हैं।'[2] जिसके आधार पर 85 मंदिर चारो तहफ से निर्मित है। जबकि हजारों सालवाद भी केवल 22 मदिर अजीब अभी भी खड़ा दिखाई देते है। इसकी खोज करने में अनेक प्रकार की मन्दिरों के निर्माण और व्यवस्था की बहुत ही सौन्दर्यता दिखाई देती है। यह खजुराहो का मंदिर बहुत ही आकर्षक है। इनमें से शायद एक ब्योरा मंदिरों के रूप में इनोस्को साइट के द्वारा मान्यता प्राप्त विरासत दुनिया के रूप में बहुत ही कम है। जबकि यह मन्दिर में दर्शक के भीड़ का बहुत ही माहौल रहता है। पर्यटन खजुराहो की सौन्दर्य को देखने के लिए बहुसंख्या में आते है। मंदिरों की मूर्तियाँ दीपक की तरह दीवारों के कपर्ण बहुत ज्यादा है। मूर्तियों को पर्यटक खरीददारी भी करते हैं।

प्रविधि – शोध पत्र मध्यप्रदेश पर्यटन में व्यावसायिक संभावनाऐं एक प्रकार का द्वितीयक तथ्यों का प्रयोग किया गया है। जिसमें विश्लेषणात्मक पद्धति के आधार पर अध्ययन किया गया है। शोध प्रविधि में साक्षात्कार, विद्वानों के मार्गदर्शन प्राथमिक स्त्रोतों एवं शोध पत्र एवं पत्रिकाओं के माध्यमों से भी अध्ययन का माध्यम बनाया गया है। इसके साथ-साथ सन्दर्भ के लिए पुस्तकालयों एवं इन्टरनेट के माध्यम से शोध पत्र पूर्ण करने में सहायता प्राप्त हुई है।

उद्देश्य – यात्रा के दौरान पर्यटन में जाने के लिए पर्यटक को अपने जीवन की अनेक दृश्य को देखते हैं। जिसके आधार पर उन्हें पर्यटन की स्वतंत्रता एक महत्वपूर्ण अवयव के रूप में उभर कर सामने आता है। भारत का सर्वोच्च द्वितीय स्थान पर्यटकों के लिए मध्यप्रदेश के पचमढ़ी को कहा जाता है। पचमढ़ी भी बहुत ही सौन्दर्य परक है। जिसकी सीमा का सबसे स्थित भाग सतपुड़ा के बीच शांत पचमढ़ी शहर निर्मित है। जो भोपाल राजधानी से 3500 फिट की ऊंचाई पर है। भोपाल और पचमढ़ी के बीच 200 कि.मी. दूरी पर है। यह नींद और पर्यटन के लिए सबसे अस्मरणीय स्थल है। जिसकी सौन्दर्यता को वर्णन पर्यटक के निगाहों में और किया जा सकता है।

यहाँ हरी साल और बांस के जंगल है, और नहरी घाटियाँ हैं जो बहुत ही स्मरणीय स्थल लगता है। इसके कारण व्यवसायिक केन्द्रों के द्वारा भी पर्याटकों को कोई असुविधा नहीं होती। उनकी आवश्यकता हेतु अनेक सामग्री उपलब्ध हो जाती है।

सांची – गौतम भगवान बुद्ध के गंतव्य – सांची शहर से भोपाल की दूरी 48 किमी है। जबकि उसी के आसपास भोपाल स्थित सहरद। शहर के विदिशा जिले के अन्तर्गत आता है। जिसकी हम कौतूहल को देख सकते है। साँची की मान्यताओं का श्रेय सम्राट अशोक को जाता है। सपनों का जीवांत उदाहरण साँची में प्रस्तुत होता है। शहर स्तूप और खम्भे बौद्ध संरचनाओं की तरह कई जगहों में बिखरे हुए कुछ खण्डित अवस्था में पाए जाते हैं। जहाँ व्यवसायिक दृष्टि से बहुत ही महत्व है। हालांकि सइटों के शहर बौद्ध के लिए दुनिया में जाना जाता है। 'एक दृश्यावलोकन करने वाला व्यक्ति जो कि यात्रा करता है।'[3] एक तीर्थ यात्रा शहर के लिये कारण है। जिससे यह कहा जाता है कि सम्राट अशोक यहाँ आया था और जो स्थानीय व्यापारी की बेटी से शादी की। साँची इस प्रकार केन्द्र बन गया है और वह अपने भवनों के कई किए नए पुराने बाहर अशोक स्तंभ और ग्रेट साँची स्तूप उत्तम कार्य में सबसे अधिक है। बौद्ध स्तूप एक इमारतों के रूप में वस्तुकला है। पुरातात्विक संग्रहालय की ऐतिहासिकता और व्यवसायिक उद्योगों को भी इसका आधार

* शोधार्थी (वाणिज्य) शासकीय संजय गाँधी स्मृति महाविद्यालय, सीधी (म.प्र.) भारत

माना जा सकता है।[4] इन्हीं इमारतों साथ–साथ अनेकों यात्राऐं करने पर्यटक आते है। इसके लिए बहुत ही सुन्दर और सुगम सौन्दर्य की छठा दिखाई देती है। वह स्तंभ के ऊपर अशोक शनि प्रसिद्ध छवि है। 'पर्यटन क्षेत्र में आवास की विशेष भूमिका है। क्योंकि पर्यटन स्थल पर यह पर्यटक यात्रा में पर्यटकों की प्रथम आवश्यकता है। यदा–कदा अच्छा आवास पर्यटकों को अधिक समय तक विश्राम करने की प्रेरणा देता है। भारत के मौजूदा संदर्भ में इस मौलिक सुख–सुविधा का अभाव पर्यटकों के आवागमन के लिए सबसे बड़ा बाधक है। विभिन्न केन्द्रों पर दिए जाने वाले आवास की मात्रा एवं स्वरूप पर्यटकों की अवश्यकताओं पर निर्भर करेगा। किन्तु कुल मिलाकर पर्यटन के लिए आवास आरामदेह समग्र सुविधाओं तथा सेवाओं सहित और आर्थिक तथा भौतिक दृष्टिकोण से स्थिति के अनुसार होना चाहिए।'[5] पर्यटकों के घूमने लायक सबसे अच्छा मौसम और समय मार्च और अक्टूबर माह के बीच होता है। इससे व्यवसायिक संगठनों के द्वारा भी कुछ पर्यटन के लिए छूट भी दी जाती है। शायद प्रदेश में भ्रमण करने के बाद यह मालूम होता है कि जीवन में मनुष्य के लिए पर्यटन की आवश्यकता मानसिक संतुलन को नियंत्रित करने के लिए आवश्यक होता है। साँची में बनाए गए बौद्ध विहार बौद्धों के लिए एक पवित्र स्थल माना जाता है। यह स्तूप के अवशेष पवित्र स्थान के रूप में दिखाई देते है। इसके भीतरी कांच के छाता के अंदर अपने सौन्दर्य को दिखाई दे रहा है। पर्यटक एक अद्‌भुत परिरक्षक होता है। 'मध्यप्रदेश के पर्यटन केन्द्रों में उपलब्ध अन्य पर्यटकीय सुविधाओं में मनोरंजन की सुविधा, सूचना की सुविधा, बाजार की सुविधा, प्रायोजित पर्यटन की सुविधा, स्थानीय दृश्य दर्शन यात्रा की सुविधा रहती है।'[6] जिसमें उद्योगों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। पर्यटकों की जानकारी लेने और आकर्षण संग्रहालय के आधार के लिए जगह बदली थी। गुप्त के खोज लेख सबसे अधिक सॉची में पाये गये। पर्यटन के लिए बहुत ही स्मरणीय रूकने के लिए व्यवसायिक रूप से पर्यटन केन्द्रों में व्यवस्था होती है। जिससे कोई भी पर्यटक अच्छे पूँजीपति हो या आम नागरिक दोनों के हिसाब से भी होटल जो विलासिता पूर्ण और बजट की अच्छी संख्या है। इसके साथ–साथ वैशिष्ट पूर्ण व्यवस्था है और वहाँ के ग्रंथालयों में विभिन्न स्मरणीय है और बहुत ही आनन्ददायक पार्क है जो बहुत ही पुरानी खोज को भी दिया है।[7]

निष्कर्ष – मध्यप्रदेश में पर्यटन की सम्भावनाए है। क्योंकि यहाँ इस प्रकार की प्राचीन धरोहर कहा जाय। या दर्शनीय स्थल जिसमें औद्योगिक और व्यवसायिक दृष्टि से भी इसका महत्व बढ़ता जा रहा है। पर्यटन व्यवसायिक दृष्टि से देश में अपनी सम्भावनाओं को लेकर आ रहे हैं। इसके उद्देश्यों को भी नकारा नहीं जा सकता है। पर्यटन से आर्थिक वृद्धि का भी एक हिस्सा बनता जा रहा है। जिसकी हम कल्पना नहीं कर सकते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. राजेश गोयल, पर्यटन सुविधाओं का प्रबन्धन, वंदना पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2011, पृष्ठ 19
2. डॉ. बी.पी. सिंह, पर्यटन विकास समस्याएँ एवं सम्भावनाएँ, आशा पब्लिशिंग काम्पनी, आगरा, 2013–14, पृष्ठ 197
3. राजेश गोयल, पर्यटन सुविधाओं का प्रबन्धन, वंदना पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2011, पृष्ठ 14
4. के.एल. अग्रवाल, भारत के सांस्कृतिक केन्द्र, खजुराहों दि मैकमिलन कम्पनी, नई दिल्ली, 1980, पृष्ठ 8
5. राजेश गोयल, भारतीय पर्यटन उद्योग, वंदना पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2011, पृष्ठ 81
6. डॉ. बी.पी. सिंह, पर्यटन विकास समस्याएँ एवं सम्भावनाएँ, आशा पब्लिशिंग काम्पनी, आगरा, 2013–14, पृष्ठ 110
7. मध्यप्रदेश पर्यटन विभाग, परिवहन एवं संचार विभाग मंत्रालय, नई दिल्ली, 1958, पृष्ठ 89

****

Economic Impact of Climate Change on Agriculture Productivity of Madhya Pradesh (With Special Reference to Anuppur District)

Dr. Rajkumar Nagwanshee *

Abstract - In this paper we are estimating the economic impact of change in climate on productivity of agriculture of Madhya Pradesh in Anuppur District. Agriculture is one of the oldest activities in all economic activities and it is not only the backbone of food grain supply but also provide the raw material to industries. Approximately 70% of the farming population of Madhya Pradesh is employed mainly in Agriculture, horticulture, animal husbandry, fisheries and dairy etc. Farming sector leads to 30% Net Domestic Product of central India. Climate is the main factor which influences the agricultural production of any country. The crops being grown in any particular area are dependent on the climate, which means that the crop is grown according to the rain, temperature and weather, and also climate change can affects the production of crops to a great extent. Higher production of crops depends on their optimum climate of which the direct effect on the income of the farmers. Thus, the favorable climate is the basis of high yield of agricultural sector; high yield increases the income of the farmers and also helps in increasing their living standards. Thus, the effect of the optimum climate of a particular area is the main cause of high yield of crops and higher income of the farmers, like this the effect of unfavorable climate is the main cause of low yield crops, shifting of crops and decrease in the income of the farmer. This paper attempts to discuss and analyze the economic impact of climate change on Agricultural productivity of Madhya Pradesh in Anuppur district.
Keywords - Climate Change, Agriculture Productivity, Economic Impact, Indian Economy.

Introduction - Agricultural productivity is fully dependent on the weather, climate and availability of water, out of which any one of the factor changes will affect the agriculture production and crop pattern. In such situation, agriculture is an important, in which any change or decline can affect the country's population and agriculture dependent entrepreneurs. Approximately 70% of the rural population are living in central India is pursued in agricultural activities. Not only the agriculture has for food surety but also huge dependency on agriculture sector for living also lights up its importance and uplift the economic status of the Anuppur district. In central part of India, continuously rising in temperature and uncertainty in rain are the main causes of negative impact on Rabi crops as well as Kharif crops. Also various other examples are seen in the world where increase in the possibilities in change in the climatic conditions due to growing population, modern technology, speedy urbanization, more industrialization, transport, innovation, deforestation and more high economic development etc.

Objective of the study :

1. To evaluate the climate changes of Anuppur district of Madhya Pradesh.
2. To evaluate the impact of climate change on agricultural productivity of Anuppur district.
3. To study the probable effect of climate change on agriculture sector of Anuppur district.
4. To suggest the ideas for improving the productivity of agriculture sector of Anuppur district.

Methodology - This research paper estimates its results on the basis of secondary data only. The data related to the present study on agriculture productivity has been collected from the various Government institutes like Economic Survey of India, Annual Reports of Ministry of Agriculture, Statistics office Anuppur and refer various reputed journals and websites. Various statistical methods are used for the analyses of the present study on the economic impact of climate change on agriculture productivity of Anuppur District.

Impact of Climate Change on Agriculture - Change in climate and weather directly affects the Agriculture production. Agriculture sector are fully dependent on the climate and geographical factors. Soil, water, weather and temperature play a main role in the productivity of crops similarly so that climate and production of crop is directly proportional.

* **Assistant Professor (Economics) Indira Gandhi National Tribal University (A Central University) Amarkantak (M.P.) INDIA**

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to September 2017, Vol. I

Temperature of Anuppur District, 2015

Temperature in (⁰C)

Month	**Max. in Month**	**Min. in Month**
January	30.1	01.4
February	35.7	05.5
March	38.7	9.9
April	42.5	17.0
May	45.9	21.1
June	45.6	21.9
July	35.4	22.4
August	36.2	23.31
September	36.7	20.3
October	37.0	19.3
November	32.9	28.6
December	33.4	02.5

Source: Statistics office Anuppur

Change in the climatic condition of a particular region plays a crucial role in the emergence of any nation. Rain and temperature largely affects productivity of agriculture of that particular region and together with change in crops, temperature also plays a crucial role means every crop has its own optimum temperature. If temperature is rapidly fluctuated then definitely crop production changes and affects the agriculture. Regarding the effect of change in climate, largely affected the development of agriculture of Anuppur district. In the study of temperature, we found that the temperature is increasing continuously month wise in the year 2015. As a result of increase in temperature in future the cropping pattern will change.

Years wise average rainfall of Anuppur District

Years	**Average Total Rain (M.M.)**
2010-11	978.50
2011-12	1563.00
2012-13	1264.00
2013-14	1208.10
2014-15	1186.80

Source: Statistics office Anuppur

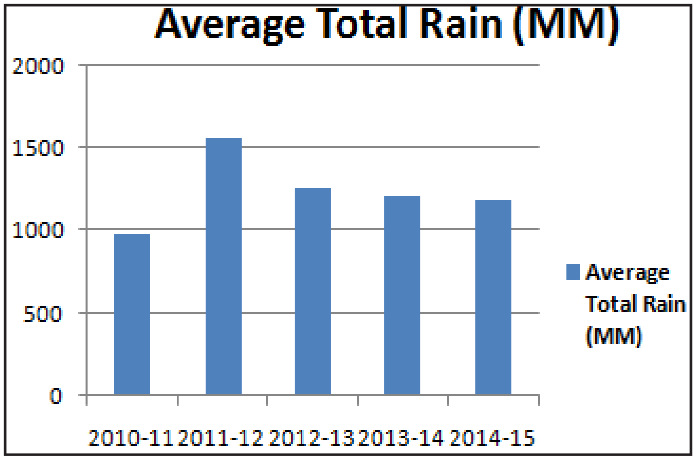

Water resource is a factor which is highly influenced by the change in climate. In the present scenario the problem of water crisis and unequal distribution of water have been seen all over the world, these similar conditions are also seen in the study area. These situations are increases due to uncertainty of rainfall. In the present table according to the year 2010-11 and 2011-12 total average rainfall was 978.50 mm and 1563.00 mm calculated respectively. After that again the amount of rainfall was decreased in the year 2014-15 total average rainfall was 1186.80 mm. Through estimated values found that change in climate shows that continuous uncertainty in rainfall occurs. As a result, continuous negative effects are shown on the main crops of production area and their productivity which is not good indication in the agricultural development.

Impact on Agricultural Productivity - Impact on Agriculture is highly susceptible to change in climate because India is a large populated country having great challenges of supply of food grain and employment so that we have tried to increase in the crop production. In this reference we studied the area under major crops (in hectares) which is given in the following table.

Area under major crops (in hectares)s

Years	Wheat	Paddy	Jowar	Maize	Arhar
2010-2011	10883	97568	338	11619	7389
2011-2012	11637	99732	287	11468	6249
2012-2013	13374	105693	250	11464	6020
2013-2014	13770	10566	244	11382	5612

Source: Statistics office Anuppur

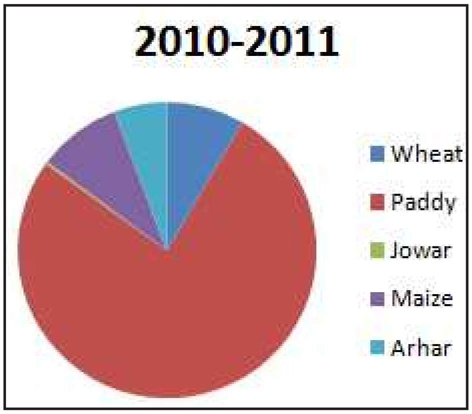

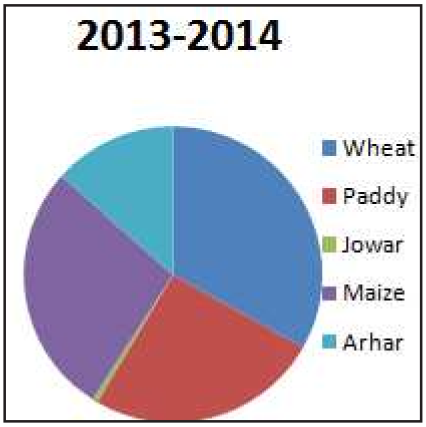

It is clear from the table that the study on the condition of agriculture of Anuppur district and regarding development, experienced that the entire area of usable land is increased. In which Rabi crops increases the area of agricultural

cultivation. In the year 2010-11 area of wheat was 10883 hectare where as the area is increased by 13770 hectare in 2013-14 also increases the area of rice crop where as the area of crops preferably jowar, maize and arhar gets decreased. According to the year 2010-11 the area of crops preferably jowar, maize and arhar was 338, 11619 and 7389 respectively and found that the area of crops is decreased like 244, 11382 and 5612 respectively in 2013-14.

Production under major crops (in metric tons)

Years	Rice	Wheat	Jowar	Maize	Arhar
2010-11	216.39	12.21	0.25	12.24	3.96
2011-12	253.28	31.17	0.30	16.82	4.36
2012-13	280.55	35.18	0.47	23.24	5.85
2013-14	294.25	32.95	0.49	30.8	6.49

Source: Statistics office Anuppur

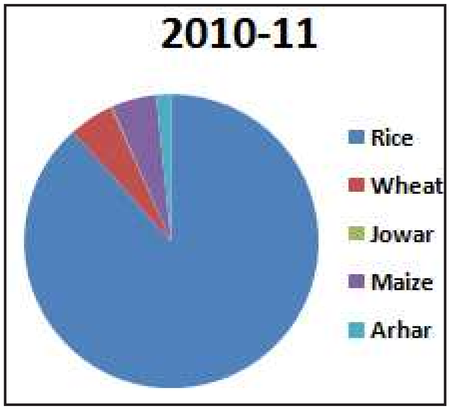

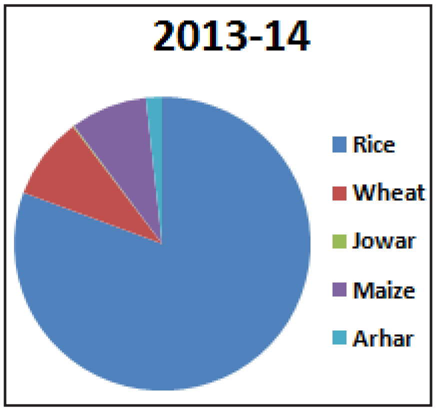

Whereas raising the population of India all food demand will increase as a result, we will face a severe problem of food crisis and Climate change will not only affect crop productivity but also adversely affect their nutrition. It is clear from the table that the study on the condition of agriculture of Anuppur district and in the context of development, the total production of main crops like wheat, rice, jowar, maize and arhar is increased during the year 2010-11 to 2013-14. According to the above table, some crops (wheat and rice) production is continuously increased in high quantity, whereas jowar, maize and arhar are also increasing but in very low quantity. It means this low quantity crops are highly affected by the climate change.

Probable effect of Climate Change :

1. Productivity of crops will get decrease if the climate is changed.
2. Rabi crop will be adversely affected by the change in the climatic conditions of the atmosphere and agricultural persons will be facing more and more loss in the cultivation.
3. Situation of Uncertainty will occur in the productivity of crops due to the increase in droughts and floods.
4. According to the change in the climate, crops are shifted to other crops i.e. soybean is shifted to maize and paddy.
5. Due to change in climate the farmer's income would be adversely affected.
6. Irrigation is highly affected by the change in climate which directly affects the production of agriculture.
7. Farmers are highly confused for the selection of proper crops at the time of sowing as they are not properly analyzing the climate and future climate.
8. Fertility of land is also adversely affected by the climate change which directly affects the production of crops.

Suggestion :

1. We require for creating a new crop varieties that can tolerate the climate change.
2. We have to formulate novel progressed agricultural technology and equipments according to changing in climate.
3. To aware the farmers about the continuous change in the climatic condition so that they can shift from traditional pattern of agriculture to advance farming technology which can resist the variation in climate.
4. To invent the substitutes for facing the problems created by the change in the climatic condition.
5. To aware the farmers about the information of weather and forecasting.

Conclusion - Climate change is not only the problem of only Indian agriculture sector but also it affects the whole world agriculture. Indian economy is mainly dependent on the agricultural sector and agriculture is severely affected by the climate change. In this study we were analyze that in the Anuppur district the temperature is gradually rising month wise during the year 2015. Similarly we also studied the rainfall during the year 2010-2015 according to data total average rainfall is continuously decreasing. Area under crop in hectare is gradually increasing in case of wheat and paddy and cropping area is decreasing in case of maize, jowar and arhar it implies that the pattern of crops is changing due to change in climate. In case of production under major crops (in metric tons) we found that all the crops are gradually increasing in its production but the rice and wheat are heavily produced as compared to maize, jowar and arhar it means low produced crops are not favoring the present climatic conditions. To save Indian agriculture from the adverse effects of change in climate, we have to use our resources equitably. Now, it is very necessary to take those steps which are friendly to the environment so that fertility of soil can maintained and our natural resources can be saved like we have to crop the

agriculture in variety, use advanced agricultural technology and equipments, aware about the problems created by climate change and forecasting of weather for farmers.

References :-

1. Mahato, Anupama (2014), "Climate Change and its Impact on Agriculture", International Journal of Scientific and Research Publications, Volume 4, Issue 4, April 2014, Vol. 1 ISSN 2250-3153.
2. Kamble P. S. (2015) "Concerns of Climate Change for Indian Agriculture" International Journal in Management and Social Science Vol.03 Issue-01, ISSN: 2321-1784.
3. District Statistical Office, Anuppur, Madhya Pradesh, 2016.
4. Government of India (2016-17)
5. Economic Survey 2016-17.
6. Nimole M. (2014) "Water Crisis in Rural and Urban Areas: Planning and management" Aksharvinyas Ujjain ISBN 9788192813325.
7. K N Ninan and Satyasiba Bedamatta (2012) "Climate Change, Agriculture, Poverty and Livelihoods: A Status Report", The Institute for Social and Economic Change, Bangalore, ISBN 978-81-7791-133-6.
8. **S. K. Misra** and **V.K. Puri (2017)** Indian Economy (Chapter**-** Basic Issues in Agriculture), Himalaya Publishing House, New Delhi, ISBN: 978-93-5273-171-8.
9. **Reddy V K (2012) "**Agriculture and Rural Development" Himalaya Publishing House, New Delhi, ISBN: 978-93-5051-556-3.

****

जिला अग्रणी बैंक द्वारा निष्पादित कार्य का विश्लेषणात्मक अध्ययन(खरगोन जिले के विशेष सन्दर्भ में)

ललिता बर्गे *

प्रस्तावना – बैंकिंग क्षेत्र देश के आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। प्राथमिकता प्रद्दत क्षेत्रो में ऋण प्रदान कर भारतीय अर्थव्यवस्था के विकास में बैंको की भागीदारी असाधारण रही है। प्राथमिकता प्रदत्त क्षेत्र के अंतर्गत कृषि एवं सम्बन्धित क्षेत्र, लघु मध्यम इकाई, एवं सेवा क्षेत्रों को शामिल किया गया तथा इन क्षेत्रों के विकास हेतु नरीमन समिति के सुझावों के आधार पर वर्ष 1969 में जिला अग्रणी बेंक की स्थापना की गयी, जिसका प्रमुख ध्येय बेरोजगारी एवं अल्प–रोजगार को खत्म करना, गरीबों एवं जरुरतमंदो के जीवन स्तर में सुधार कर उनको आधारभूत सुविधाए उपलब्ध करवाना हैं, साथ ही ग्रामीण क्षेत्र एवं प्राथमिकता प्रदत्त क्षेत्रों में वित्तीय सहायता प्रदान कर ग्रामीण अर्थव्यवस्था को मजबूत करना है क्योंकि इस योजना के क्रियान्वयन से पूर्व में व्यापारिक बैंकों का झुकाव शहरी क्षेत्र एवं महानगरो में स्थित लघु एवं मध्यम इकाइयों की ओर था (सुरेन्द्रम एवं मनोहरं)।[1] जिला अग्रणी बैंक योजना में ग्रामीण एवं अर्ध शहरी क्षेत्रों को प्राथमिकता दी जाती है। जिला अग्रणी बैंक योजना का मुख्य भाग जिला साख योजना होता है, जिसमें मुख्यत: ग्रामीण क्षेत्रों की प्राथमिक क्षेत्रक क्रियाओं को सम्मिलित किया जाता है। जिला अग्रणी बैंक जिला साख योजना विभिन्न बैंकों एवं वित्तीय संस्थानों के सहयोग से संचालित करती है (कुमार एवं कुमार 2012)[2] जिला अग्रणी बैंक योजना के अंतर्गत ग्रामीण अर्थव्यवस्था के प्रमुख क्षेत्र को ऋण प्रदान किया जाता है। इस योजना के अंतर्गत न केवल ऋण प्रदान किया जाता है, अपितु ऋण वितरण में आने वाली कठिनाइयों के सन्दर्भ में जमीनी स्तर पर बैंक एवं विभिन्न सरकारी कार्यालयों को उचित मार्गदर्शन कर एक अच्छी ऋण वितरण व्यवस्था स्थापित की जाती है।

इस योजना के अंतर्गत सभी राष्ट्रीयकृत बैंक एवं कुछ निजी बैंकों को विशिष्ट जिले प्रदान कर उनको मुख्य भूमिका दी जाती है। अग्रणी बैंक की भूमिका का वितरण जिले में बैंक का आकार तथा संसाधनों की पर्याप्तता के आधार पर किया जाता है। (State bank of india) द्वारा वर्तमान समय में मुख्य महानगरो को छोड़कर सम्पूर्ण भारत में यह योजना लागू कर ग्रामीण अर्थव्यवस्था को वित्तीय सहायता प्रदान कर विकास हेतु अग्रेषित किया जा रहा हैं, तथापि वर्तमान सरकार ने विगत 2 वर्षो में ग्रामीण विकास के क्षेत्र में नवीन पहल करते हुए कई नए कार्यक्रमों एवं नवाचारो को प्रारंभ किया है इसी कड़ी में वित्तीय समावेशन के माध्यम से सदियों से वंचित कमजोर एवं ग्रामीण समाज को बैंकिंग तंत्र से जोड़ा गया साथ ही किसानो के हित को सर्वोच्च प्राथमिकता देते हुए कृषि को लाभ का क्षेत्र बनाने के लिए कृषि से जुडी सरकारी नीतियों में भी काफी परिवर्तन किया गया है। क्योंकि कृषि साख एवं कृषि वृद्धि दर में धनात्मक सम्बन्ध है (मल्होत्रा (1986)[3]। भारत की राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में ग्रामीण चरित्र की प्रमुखता है यहाँ पर 83.3 करोड़ से अधिक लोग गावों में रहते है। सरकार द्वारा अपनायी गयी कोई भी रणनीति ग्रामीण लोगों एवं प्राथमिक क्षेत्रों की अवहेलना कर सफल नहीं हो सकती।

जिला अग्रणी बैंक के द्वारा निष्पादित कार्य को भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा 1976 में स्थापित उच्च शक्ति समिति द्वारा जाँच की जाती है। यह समिति जिला अग्रणी बैंक को निर्देशित करती है कि जिला अग्रणी बैंक 3 वर्षो के लिए जिला साख योजना का निर्माण करे तथा प्रत्येक वर्ष के दिसम्बर में वार्षिक साख योजना प्रस्तुत करे। जिले में बैंकिंग विकास की संभावनाओ की पहचान कर बैंकिंग शाखाओं का विस्तार करें एवं जिला साख योजना के माध्यम से जिले में वित्त उपलब्ध कराएं एवं अन्य वाणिज्यिक बैंकों से इस योजना के अंतर्गत प्रगति की जाँच करे। खरगोन जिले में बैंक ऑफ इंडिया, जिला अग्रणी बैंक के रूप में कार्यरत है। बैंक ऑफ इंडिया की खरगोन जिले में 24 शाखाएं स्थित है। जिला अग्रणी बैंक खरगोन जिले हेतु, जिले की समस्त बैंकों की शाखा अनुसार वार्षिक साख योजना का निर्माण करती है मध्य प्रदेश में खरगोन एक ऐसा जिला है जहाँ 84.04 प्रतिशत ग्रामीण जनसँख्या निवासरत है। चुँकि वर्तमान परिपेक्ष्य में अधिकांश योजनाओं को बैंकिंग क्षेत्र से जोड़ा गया है। जन धन योजना द्वारा ग्रामीणों को भी बैंक से जोड़ने की कोशिश की गई है। ग्रामीण स्तर पर जिला अग्रणी बैंक योजना की सफलता का विश्लेषणात्मक का अध्ययन करने के लिए खरगोन जिले का चयन किया गया है। अत: यह अध्ययन करना आवश्यक हो जाता है कि अग्रणी बैंक की ग्रामीण विकास के लिए क्या मुख्य भूमिका रही है एवं जिले में बैंक वार प्राथमिकता प्रदत्त क्षेत्र में ऋण वितरण की प्रवृत्ति किस प्रकार की है।

शोध के उद्देश्य –

- खरगोन जिले में बैंक ऋण वितरण की प्रवृति का अध्ययन करना।
- जिले में क्षेत्र वार प्राथमिकता प्रदत्त क्षेत्र में ऋण वितरण की प्रवृत्ति का अध्ययन करना।
- जिले में बैंक वार प्राथमिकता क्षेत्र में ऋण वितरण की प्रवृत्ति का अध्ययन करना।
- ऋण वितरण एवं प्राथमिकता प्रदत्त क्षेत्र के सम्बन्ध में नीति निर्माण हेतु सुझाव प्रदान करना।

शोध प्रविधि – प्रस्तुत शोध पत्र खरगोन जिले में स्थित बैंकों के द्वारा प्राथमिकता प्रदत्त क्षेत्र (कृषि क्षेत्र, लघु, मध्यम व्यवसाय क्षेत्र तथा अन्य प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्र) में वितरित किए गए ऋण से सम्बंधित द्वितीयक समंको पर आधारित है। बैंकों के ये द्वितीयक समंक जिला अग्रणी बैंक से

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत

प्राप्त किये गए है एवं इन समंकों पर सांख्यिकीय उपकरण (Tools) tSls – two way anova, माध्य, मानक विचलन एवं गुणांक परिवर्तन के प्रयोग द्वारा ऋण वितरण की प्रवृत्ति का अध्ययन बैंक वार एवं क्षेत्र वार किया गया है। इनमें गुणांक परिवर्तन इंगित करता है कि जिस चर का गुणांक परिवर्तन सबसे कम है, उस चर में नियमितता अधिक है, वही औसत वार्षिक वृद्धि दर ज्ञात करके देखा गया की किस बैंक एवं क्षेत्र में खरगोन जिले में अधिक ऋण वितरण किया गया है।

समंको का विश्लेषण एवं निर्वचन –

अग्रिम (एडवांसेस) से आशय – बैंकों को साख का व्यापारी कहा जाता है, क्योंकि उनका मुख्य व्यवसाय, व्यापारियों और औद्योगिक संस्थाओं को ऋण प्रदान करना होता है। बैंक निधियों को सबसे अधिक लाभप्रद नियोजन ऋण प्रदान करता है। अत: बैंकर अपने वित्तीय साधनों का उपयोग ऋण देने, बिलों का भुगतान करने में करता है। लाभ का अधिकांश भाग बैंकों को ब्याज अथवा बट्टे के रूप में ही प्राप्त होता है। अग्रिमों को देकर बैंक न केवल अपनी आय को बढ़ाती है बल्कि देश के आर्थिक विकास में भी सहायता प्रदान करती है। बैंक व्यक्तियों, व्यापारियों व औद्योगिक संस्थाओं तथा अपने अन्य ग्राहकों को उनकी आवश्यकतानुसार अनेक प्रकार से अग्रिम प्रदान करता है। बैंक मुख्यत: ऋण, अधिविकर्ष (ओव्हर ड्राफ्ट), नकद साख तथा विनिमय विपत्रों की कटौती (डिस्काऊटिंग ऑफ बिल) के रूप में अग्रिम प्रदान करती है। खरगोन जिले में वर्ष 2012 से 2015–16 के मध्य बैंकों के अग्रिम विकास दर को निम्नाकित तालिका में दर्शाया गया है

तालिका क्रमांक 01 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका से स्पष्ट है कि अध्ययन अवधि में जिले की सभी बैंकों की विकास दर (LDB को छोड़कर) धनात्मक है, जो अधिकतम (HDFC Bank) 1842.17 तथा न्यूनतम 9.15 (UCO BANK) का है। सभी बैंकों ने दिए गए लक्ष्य से अधिक अग्रिम प्रदान किया है। कुल अग्रिम से प्राथमिकता प्रदत्त क्षेत्र में वितरित अग्रिम की स्थिति अग्र तालिका में दी गई है।

तालिका क्रं. 02 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका क्रमांक 02 में खरगोन जिले में समस्त बैंकों द्वारा कुल ऋण एवं कुल प्राथमिकता प्रदत्त क्षेत्रों में वितरित कुल ऋण को दर्शाया गया है। जिससे यह स्पष्ट होता है कि वर्ष 2013 में कुल ऋण एवं प्राथमिकता प्रदत्त क्षेत्रों में ऋण वितरण की वार्षिक वृद्धि दर क्रमश 29.21 एवं 28.86 थी वह वर्ष 2016 में घटकर 19.85 एवं 18.86% मात्र रह गयी वही यदि हम कुल प्राथमिकता प्रदत्त क्षेत्रों में ऋण वितरण की स्थिति को जाने तो स्पष्ट होता है कि वर्ष 2012 में वितरित कुल ऋणों में प्राथमिकता प्रदत्त क्षेत्रों में वितरित ऋणों का प्रतिशत 95.09 था वह निरंतर आगामी वर्षो में घटकर वर्ष 2016 में 93.46 रह गया। कुल वितरित ऋण एवं प्राथमिकता क्षेत्रो में प्रदत्त ऋणों में धनात्मक एवं पूर्ण सहसंबंध पाया गया।

तालिका क्रं. 03 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका 3 जिले में समस्त बैंकों द्वारा वर्षवार 2012 से वर्ष 2016 के मध्य कुल अग्रिम से प्राथमिकता प्रद्दत क्षेत्रों में वितरित ऋण राशी एवं ऋण राशि की वार्षिक वृद्धि को दर्शाती है तालिका से स्पष्ट है कि कृषि, लघु एवं मध्यम व्यवसाय तथा अन्य प्राथमिकता क्षेत्र की तुलना में कृषि क्षेत्र को सर्वाधिक ऋण प्रदान किया गया एवं मानक विचलन (4.5) भी सबसे कम रहा है, अन्य प्राथमिकता क्षेत्र में वितरित ऋण राशि की वार्षिक वृद्धि दर का मानक विचलन 19.02 रहा वही लघु एवं मध्यम व्यवसाय क्षेत्र को वितरित ऋण राशि का मानक विचलन सर्वाधिक 79.7 रहा है। जिससे स्पष्ट होता है कि जिले में लघु–मध्यम व्यवसाय क्षेत्र में वार्षिक साख योजना द्वारा विशेष ध्यान आकर्षित कर ऋण वितरण राशि में स्थायित्व लाया जाये।

क्षेत्र वार ऋण वितरण की वृद्धि दर को देखे तो स्पष्ट होता है कि वर्ष 2013 से वर्ष 2014 तक कृषि क्षेत्र को प्रदत्त ऋण राशि की वृद्धि दर धनात्मक रूप से बढ़ी तत्पश्चात वर्ष 2014 से निरंतर वृद्धि दर में कमी देखने को मिली है। जहा वर्ष 2014 में यह 23.3 थी वही 2016 तक घटकर 12.7 प्रतिशत हो गई है। जबकि लघु एवं मध्यम व्यवसाय क्षेत्र में वर्ष 2013 में 18.41**%** की वार्षिक वृद्धि दर के साथ उत्तरोत्तार वर्षो में निरंतरता देखने को मिली एवं अन्य प्राथमिकता क्षेत्र में भी वितरित ऋण राशि में वर्ष 2013 में नकारात्मक वृद्धि दर के बाद के उत्तरोतर वर्षो में धनात्मक परन्तु अनिरंतरता देखने को मिली है।

वर्षवार एवं क्षेत्र वार वितरित ऋण राशि के मध्य सार्थक अंतर को जानने हेतु **2 way anova** का प्रयोग कर परिणाम देखे गए है, जो इस प्रकार है –

Hypothesis-

H^0- there is no significant difference among the variance of sectors and years of loan disbursement

H^1- there is significant different among at least one variable between years and sectors of loan disbursement.

तालिका – 04 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका 04 में वितरित ऋण राशि का विभिन्न क्षेत्र जिसमें कृषि , लधु एवं मध्यम व्यवसाय क्षेत्र एवं अन्य प्राथमिकता क्षेत्र में वर्ष 2012 से वर्ष 2016 के विचलनों का अध्ययन करने के लिए Anova संखिकीय तकनीक का प्रयोग किया गया है जिसके द्वारा वर्षवार वितरित ऋण राशि का 5 % सार्थक स्तर पर उनके माध्य विचलनो में अंतर को देखा गया है तालिका से स्पष्ट है की क्षेत्रवार एवं वर्षवार वितरित ऋण राशि के मध्य अंतर पाया गया, अत: यहाँ पर शुन्य परिकल्पना को अस्वीकार कर दिया गया है सम्भवत: विचलनों के मध्य यह सार्थक अंतर क्षेत्रों में ऋण की आवश्यकतानुसार वितरण के कारण हुआ है। परन्तु वेणुगोपाल (2014) ने अपने शोध में यह पाया कि वित्तीय संस्थानों द्वारा कृषि लघु, मध्यम व्यवसाय कुल प्राथमिकता क्षेत्र में ऋण वितरण में कोई सार्थकता नहीं पाई गयी परन्तु सार्वजनिक, निजी एवं अन्य बैंकों के मध्य ऋण वितरण में सार्थक अंतर पाया गया।

क्षेत्र वार ऋण वितरण की स्थिति के पश्चात बैंकों द्वारा जिले में कुल ऋण से अग्रिम ऋण वितरण में बैंकों का योगदान ज्ञात करने हेतु क्षेत्र वार बैंको का निष्पादन निम्नानुसार है सर्वप्रथम जिला अग्रिम बैंक के साथ साथ वाणिज्यिक बैंकों एवं ग्रामीण बैंकों द्वारा कृषि क्षेत्र में वितरित कुल ऋण से अग्रिम ऋण राशी का ब्यौरा निम्नवत है ।

तालिका क्रं.–05 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका क्र.5 में जिले में स्थित विभिन्न वाणिज्यिक एवं जिला अग्रणी बैंक (बैंक ऑफ इंडिया) द्वारा वर्ष 2012 से वर्ष 2016 तक की अवधि में कुल अग्रिम से कृषि क्षेत्र में अग्रिम की राशि को दर्शाया गया है। अध्ययन अवधि में कृषि क्षेत्र में अधिकतम अग्रिम वितरित करने के अनुसार बैंक को क्रम दिया गया है जिससे स्पष्ट होता हैं कि DCCB बैंक द्वारा सर्वाधिक 42.57 प्रतिशत ऋण दिया गया है। तत्पश्चात जिला अग्रणी बैंक (BOI) ने सर्वाधिक ऋण (20.12) वितरित किया है। जो की अन्य वाणिज्यिक बैंकों से बेहतर है। इससे स्पष्ट होता कि जिला अग्रणी बैंक कृषि क्षेत्र हेतु

बेहतर ऋण प्रदान कर रही है। इस बैंक द्वारा अग्रिम राशि का माध्य मान 289.77 है। कृषि क्षेत्र में अध्ययन अवधि में सर्वाधिक अग्रिम राशि वितरण में उच्च पांच बैंक को देखे तो इनके क्रम इस प्रकार है – DCCB] BANK OF INDIA] NARMADA MALVA BANK] STATE BANK OF INDIA, oa BANK OF BARODA इन बैंको की भागीदारी कृषि क्षेत्र हेतु अग्रिम राशी का 86.44 प्रतिशत है। जबकि सबसे कम अग्रिम राशि में विजया बैंक, केनरा बैंक, एवं देना बैंक है। तालिका क्र. **5** से भी यह स्पष्ट है की कृषि क्षेत्र में अग्रिम राशी में निरंतर कमी देखने को मिली। अत: कृषि क्षेत्र जो कि राज्य एवं जिले की आर्थिक स्थिति की परिचायक है, के विकास हेतु अन्य वाणिज्यिक बैंकों को कृषि में अग्रिम राशि बढ़ाने हेतु प्रोत्साहित किया जाए। इन्ही 5 (पांच) उच्च ऋणदाता बैंकों को निम्न पाई चार्ट के माध्यम से भी दर्शाया गया है:-

Below pai chart showing top five banks who provides highest loan amount in for agriculture sector during 2012-2017

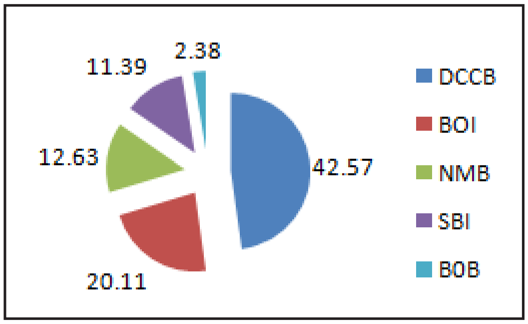

तालिका क्रं.- 06(देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका क्र.6 में जिले में स्थित विभिन्न वाणिज्यिक एवं जिला अग्रणी बैंक (बैंक ऑफ इंडिया) द्वारा वर्ष 2012 से वर्ष 2016 तक की अवधि में कुल अग्रिम से SMES क्षेत्र को दिए गए अग्रिम की स्थिति को दर्शाया गया है एवं अध्ययन अवधि में SMES क्षेत्र में अधिकतम अग्रिम वितरण के अनुसार बैंकों को क्रम दिया गया है। जिससे स्पष्ट होता हैं कि बैंक ऑफ इंडिया द्वारा सर्वाधिक 32.52 प्रतिशत ऋण दिया गया है। इसके बाद क्रमश: DCCB बैंक ने 19.5 प्रतिशत स्टेट बैंक ऑफ इंडिया ने 19.48 प्रतिशत एवं अग्रणी बैंक (बैंक ऑफ इंडिया) ने 11.3 प्रतिशत राशि वितरित कर चौथा स्थान प्राप्त किया है। जो की अन्य वाणिज्यिक बैंकों से बेहतर है। इससे स्पष्ट होता कि जिला अग्रणी बैंक SMES क्षेत्र हेतु बेहतर वित्त प्रदान कर रही है। इस बैंक द्वारा अग्रिम राशि का माध्य मान 56.95 है। SMES क्षेत्र में अध्ययन अवधि में सर्वाधिक अग्रिम राशि वितरण में उच्च पांच बैंक में बैंक ऑफ इंडिया भी शामिल है। जबकि सबसे कम अग्रिम राशि देना बैंक , UCO बैंक ब इलाहाबाद बैंकब LDB बैंक ने दिया है। उपरोक्त तालिका क्र. 6 से भी यह स्पष्ट है की SMES क्षेत्र में अग्रिम राशि वितरण में निरंतरता नहीं पाई गयी। अत: SMES क्षेत्र जो कि राज्य एवं जिले की रोजगार की स्थिति का परिचायक है, के विकास हेतु अन्य वाणिज्यिक बैंकों को भी SMES क्षेत्र में अग्रिम राशि बढ़ाने हेतु प्रोत्साहित किय जाए एवं SMES क्षेत्र के विकास हेतु अग्रिम वितरण राशि में नियमितता लाई जाए। उपरोक्त जिन **5** बैंकों ने अधिकतम SMES क्षेत्र के लिए अग्रिम राशि वितरण की है। उन्हें निम्न पाई चार्ट के माध्यम से भी दर्शाया गया है –

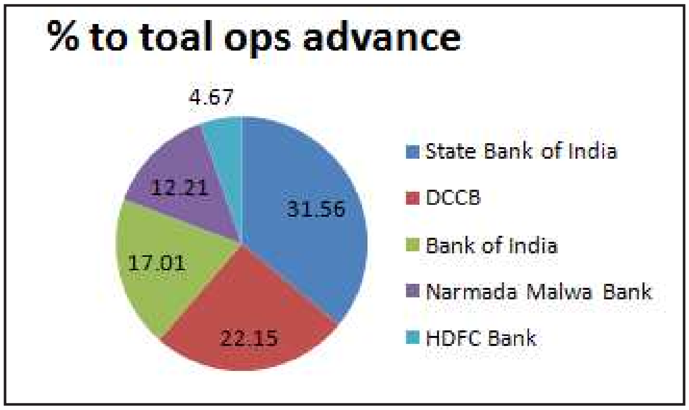

तालिका क्रं.- 07 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका क्र. 07 में जिले में स्थित विभिन्न वाणिज्यिक एवं जिला अग्रणी बैंक (बैंक ऑफ इंडिया) द्वारा वर्ष 2012 से वर्ष 2016 तक की अवधि में कुल अग्रिम से अन्य प्राथमिकता प्रदत्त क्षेत्र को दिया गये अग्रिम की स्थिति को दर्शाया गया है। अध्ययन अवधि में अन्य प्राथमिकता प्रदत्त क्षेत्र में अधिकतम अग्रिम वितरण के अनुसार बैंकों को क्रम दिया गया है जिससे स्पष्ट होता हैं कि स्टेट बैंक ऑफ इंडिया द्वारा सर्वाधिक 39.56 प्रतिशत ऋण दिया गया है। इसके उपरांत क्रमश% DCCB बैंक ने 22.15 प्रतिशत, (बैंक ऑफ इंडिया) ने 96.09 प्रतिशत राशि वितरित कर तीसरा स्थान प्राप्त किया जो की अन्य वाणिज्यिक बैंकों से बेहतर है। इससे स्पष्ट होता कि जिला अग्रणी बैंक अन्य प्राथमिकता प्रदत्त क्षेत्र हेतु बेहतर ऋण प्रदान कर रही है। इस बैंक द्वारा अग्रिम राशि का माध्य मान 40.64 है अन्य प्राथमिकता प्रदत्त क्षेत्र में अध्ययन अवधि में सर्वाधिक अग्रिम राशि वितरण में उच्च पांच बैंकों में बैंक ऑफ इंडिया भी शामिल है जबकि सबसे कम अग्रिम राशि में विजया बैंक UCO बैंक, LDB बैंक, इलाहाबाद बैंक है। तालिका क्र. 07 से यह भी स्पष्ट है की अन्य प्राथमिकता प्रदत्त क्षेत्रों में पहले की तुलना में अग्रिम ऋण राशि वितरण में बढ़ोत्तरी हुई है परन्तु उसमें निरंतरता नहीं पाई गई। अत: अन्य प्राथमिकता प्रदत्त क्षेत्र जो कि राज्य एवं जिले की आजीविका की स्थिति का परिचायक है, के विकास हेतु अन्य वाणिज्यिक बैंकों को अन्य प्राथमिकता प्रदत्त क्षेत्र में अग्रिम ऋण राशि बढाने हेतु प्रोत्साहित किया जाये। अन्य प्राथमिकता प्रदत्त क्षेत्र के विकास हेतु अग्रिम वितरण राशी में नियमितता लाई जाये तथा उपरोक्त 5 उच्च ऋण वितरणकर्ता बैंकों द्वारा अन्य प्राथमिकता प्रदत्त क्षेत्र के लिए अग्रिम राशि वितरण की स्थिति को निम्न पाई चार्ट के माध्यम से दर्शाया गया है –

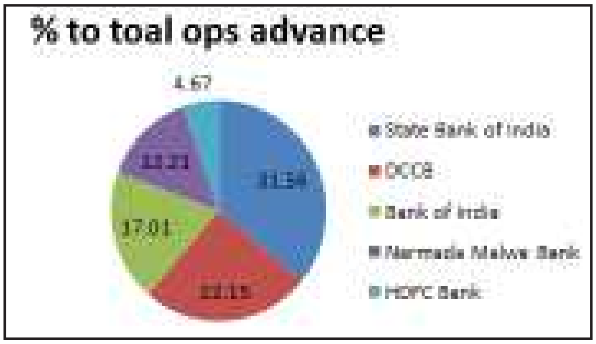

निष्कर्ष– आर्थिक विकास के साथ–साथ आय की असमानता की खाई भी बड़ी है। आज भारत के केवल 1: प्रतिशत लोगों के पास भारत की कुल

संपत्ति का 58 प्रतिशत है (टाइम्स ऑफ इंडिया) एवं इस खाई को दूर करने में बैंकों का विशेष महत्व है। सरकार जिला अग्रणी बैंकों के माध्यम से इन पिछड़े क्षेत्रों में वित्तीय सहायता उपलब्ध करवाती है। प्रस्तुत शोध पत्र में जिला अग्रणी बैंक का विभिन्न क्षेत्रों जिसमें कृषि क्षेत्र, लघु एवं मध्यम व्यवसाय क्षेत्र एवं अन्य प्राथमिकता क्षेत्र सम्मिलित है, में वर्ष 2012 से 2016 के मध्य ऋण राशी वितरण में उनकें योगदान का अध्ययन किया गया। जिसमें पाया गया कि जिला अग्रणी बैंक ने तीनों क्षेत्रों में से सर्वाधिक कृषि क्षेत्र में ऋण राशि का वितरण किया है। वही कृषि क्षेत्र में अग्रिम राशि में निरंतर कमी देखने को मिली है। दूसरी ओर लघु, मध्यम एवं व्यवसाय क्षेत्र (SSMES क्षेत्र) में ऋण राशि का वितरण में बढ़ोत्तारी हुई है। परन्तु अग्रिम राशी वितरण में निरंतरता नहीं पाई गयी। वहीं सबसे कम ऋण राशि का वितरण अन्य प्राथमिकता क्षेत्र को किया गया। अत: इस क्षेत्र में पहले की तुलना में अग्रिम ऋण राशि वितरण में बढ़ोत्तरी तो हुई है परन्तु उसमें निरंतरता नहीं पाई गई। अन्य प्राथमिकता प्रदत्त क्षेत्र जो कि राज्य एवं जिले की सामाजिक स्थिति का परिचायक है। इस क्षेत्र में भी साख प्रदान करने में निरंतरता लाने का प्रयास होना चाहिए। जिले में विभिन्न कार्यरत् बैंकों ने अपनी जमा से अधिक अग्रिम राशि प्रदान कर बैंकिंग सुविधाओं से ग्रामीणों को अधिक साख प्रदान करने का प्रयास किया है। जो सराहनीय है। जिला अग्रणी बैंक द्वारा कृषि क्षेत्र के साथ-साथ लघु, मध्यम व्यवसाय क्षेत्र एंव अन्य प्राथमिकता प्रदत्त क्षेत्र में अधिक अग्रिम प्रदान करने का प्रयास करना चाहिए। जिससे इन क्षेत्रों में रोजगार के अवसरों में वृद्धि की जा सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Kumar, *M. J. S.* kumar, s. (2012) A study on the performance of lead bank scheme Indian Journal of Commerce & Management Studies vol.3 ISSN : 2240-0310 EISSN: 2229-5674
2. Surendran.,A. B.Manoharan, B. Performance of lead bank scheme in virudhunagar district of tamilnadu; national monthly refereed journal of reasearch in commerce & management VOL.1, 2277-1166
3. Malhotra S.R(1987) ,' Institutional Credit to the Needs of Small Farmers', Indian Dissertation Abstrat , ICSSR; New Delhi.
4. G, V. (2014) Priority sector lending by financial institutions with special reference to coimbatore district) Asia Pacific Journal of Research Vol: I no XVIII, ISSN: 2320-5504, E-ISSN-2347-4793.
5. http://timesofindia.indiatimes.com/business/india-business/indias-rising-income-inequality-richest-1-own-58-of-total-wealth/articleshow/56586277.cms
6. https://www.sbi.co.in/portal/hi/web/agriculture-banking/lead-bank-scheme.

तालिका क्रमांक 01

जिले की बैंकों का अग्रिम के संदर्भ में 2011-12 की तुलना में 2015-16 की बैंकवार विकास दर

(Amt. – 000)

क्र.	बैंक का नाम	अग्रिम		अग्रिम का अंतर	ग्रोथ
		2011-12	2015-16		
1	Bank of India	3794533	7796600	4002087	105.46
2	State Bank of India	4150073	6458235	2308162	55.61
3	Bank of Maharashtra	220200	523337	303137	137.66
4	Punjab National Bank	178819 7	40800	561981	314.27
5	Union Bank of India	307641 1	061731	554090	245.12
6	Central Bank of India	157805 4	93645	335840	212.81
7	I.D.B.I. Bank	179134 6	12648	433514	242.00
8	Bank of Baroda	1267597	4749143	3481546	274.65
9	Syndicate Bank	2532 (2013)	70759	68227	2694.58
10	Dena Bank	6100 (2013)	42971	36871	604.44
11	HDFC Bank	64689	1256375	1191685	1842.17
12	ICICI Bank	143316	974040	830724	579.64
13	Axis Bank	219766	688100	468334	213.10
14	Canara Bank	10794 (21015)	109366	98572	913.21
15	UCO Bank	48807 (2015)	53273	4466	9.15
16	Vijaya Bank	-	50302	-	-
17	Allahabad Bank	-	8416	-	-
18	RRB	2569700	4789337	2219637	86.37
19	DCCB	7132945	15294871	8161926	114.42
20	LDB	203507	154113	-49394	-24.27
	G.D.	20589725	45928062		

स्त्रोत - जिला अग्रणी बैंक (बैंक ऑफ इंडिया) खरगोन मुख्य शाखा।

तालिका क्रं. 02

कुल अग्रिम एवं कुल प्राथमिकता क्षेत्र में वितरित अग्रिम की स्थिति

YEAR	TOTAL LOAN	YOY GROWTH	TPS	YOY GROWTH	% of total loan to TP sectors
2012	20589.725	-	19579.476	-	95.09
2013	26604.333	29.21	25232.78	28.87	94.84
2014	31667.431	19.03	30361.098	20.32	95.87
2015	38386.927	21.22	36192.746	19.21	94.28
2016	45928.062	19.65	42926.305	18.6	93.46
STDEV	**9901.81732**	**4.71**	**9126.86439**	**4.8**	**-**
MEAN	**32635.2956**	**22.28**	**30858.481**	**21.75**	**-**
कुल ऋणों एवं प्राथमिकता के स्तर में प्रदत्त ऋण के मध्य सहसंबंध				**0.99**	

स्त्रोत – जिला अग्रणी बैंक (बैंक ऑफ इंडिया) खरगोन मुख्य शाखा।

तालिका क्रं. 03

प्राथमिकता प्रदत्त क्षेत्र से कृषि, लघु–मध्यम व्यवसाय एवं अन्य प्राथमिकता प्रदत्त क्षेत्र को दिए गए अग्रिम की स्थिति

वित्तिय वर्ष 2012 से 2016

(ruppes in 000)

YEAR	AGRICULTURE	yoy	SMES	YOY GROWTH	ops	YOY
2012	15832.2 (76.9)	-	1511.3 (7.3)	-	2285.0 (11.1)	-
2013	19076.4 (71.7)	20.5	4293.2 (16.1)	184.1	1863.1 (7.0)	-18.4
2014	23514.9 (74.3)	23.3	4745.4 (15.0)	10.5	2100.8 (6.6)	12.8
2015	27629.8 (72.0)	17.5	5908.2 (15.4)	24.5	2654.8 (6.9)	26.4
2016	31148.4 (67.8)	12.7	8733.6 (19.0)	47.8	3044.3 (6.6)	14.7
STDEV	**6202.8**	**4.5**	**2621.7**	**79.7**	**466.5**	**19.2**
MEAN	**23440.3**	**18.5**	**5038.3**	**66.7**	**2389.6**	**8.8**

कोष्टक में दी गई संख्या सम्बंधुत संख्या का प्रतिशत दर्शाती है

yoy – वर्षवार वृद्धि दर

स्त्रोत – जिला अग्रणी बैंक (बैंक ऑफ इंडिया) खरगोन मुख्य शाखा।

तालिका – 04

2 way ANOVA

Source of Variation	*SS*	*df*	*MS*	*F*	*P-value*	*F crit*
years	1.11E+14	4	2.77E+13	3.093693	0.08151	3.837853
sectors	1.31E+15	2	6.57E+14	73.48041	7.1E-06	4.45897
Error	7.16E+13	8	8.95E+12			
Total	1.5E+15	14				

तालिका क्रं.-05

कुल अग्रिम से कृषि क्षेत्र को दिया गए अग्रिम की स्थिति (वित्तिय वर्ष 2012 से 2016)

(रू. 00000 में)

Bank	2012	2013	2014	2015	2016	Agriculture total	% to total agri-loan	Rank	Stdev	Average
DCCB	600.56	784.94	1065.39	1227.52	1310.90	4989.67	42.57	1	299.37	997.86
Bank of India	*302.70*	*404.29*	*484.59*	*557.16*	*609.07*	*2357.99*	*20.12*	*2*	*121.91*	*471.56*
Narmada Malwa Bank	237.37	247.58	267.05	333.08	363.77	1448.95	12.36	3	55.66	289.77
State Bank of India	217.33	248.97	248.97	301.65	317.70	1334.72	11.39	4	41.50	266.92
Bank of Baroda	101.95	51.05	19.39	22.44	84.68	279.54	2.39	5	36.83	55.90
Union Bank of India	19.81	25.45	28.88	63.90	81.54	219.59	1.87	6	27.22	43.92
Axis Bank	21.84	34.72	33.50	45.37	47.90	183.34	1.56	7	10.44	36.67
HDFC Bank	3.94	10.74	41.56	60.40	64.44	181.09	1.55	8	27.84	36.22
ICICI Bank	8.38	14.19	22.81	34.91	80.24	160.54	1.37	9	28.70	32.11
I.D.B.I. Bank	16.29	26.29	18.81	40.29	48.62	150.31	1.28	10	13.96	30.06
PNB	10.76	14.87	73.01	10.26	25.68	134.59	1.15	11	26.50	26.92
Bank of Maharashtra	12.74	15.65	16.84	19.33	27.84	92.42	0.79	12	5.75	18.48
LDB Bank	20.19	18.33	16.92	14.27	15.38	85.09	0.73	13	2.35	17.02
Central Bank of India	9.37	10.09	10.77	16.67	23.95	70.85	0.60	14	6.19	14.17
UCO Bank	-	-	-	3.57	4.15	7.72	0.07	15	0.41	3.86
Syncicate Bank	-	0	1.51	1.94	2.02	5.47	0.05	16	0.94	1.37
Dena Bank	-	0.48	1.48	1.22	1.56	4.73	0.04	17	0.49	1.18
Canera Bank	-	-	-	0	4.00	4	0.03	18	2.83	2.00
Vijaya Bank	-	-	-	-	1.39	1.39	0.01	19		1.39
Total	1583.21	1907.64	2351.49	2762.98	3114.84	11721.03	100.01		620.28	2344.03

स्त्रोत: जिला अग्रणी बैंक (बैंक ऑफ इंडिया) खरगोन मुख्य शाखा

तालिका क्रं.– 06

कुल अग्रिम से लघु–मध्यम व्यवसाय क्षेत्र (SMES) को दिए गए अग्रिम की स्थिति
(वित्तिय वर्ष 2012 से 2016 तक)

(राशि रू. 0000 . में)

Banks	2012	2013	2014	2015	2016	total	%	RANK	STDV	AVERAGE
Bank of Baroda	7.40	133.29	174.69	174.84	329.61	819.82	32.54	1	115.24	163.96
DCCB	6.70	70.53	47.72	158.9	207.2	491.12	19.50	2	82.56	98.22
State Bank of India	103.8	105.5	105.5	77.75	98.02	490.77	19.48	3	11.82	98.15
Bank of India	*15.86*	*48.09*	*64.31*	*75.70*	*80.80*	*284.76*	*11.30*	*4*	*26.18*	*56.95*
Narmada Malwa Bank	1.41	21.68	24.34	22.36	26.86	96.65	3.84	5	10.22	19.33
Punjab National Bank	0.25	12.57	12.95	12.42	40.02	78.20	3.10	6	14.65	15.64
Union Bank of India	6.36	11.52	13.47	12.64	9.27	53.27	2.11	7	2.87	10.65
Bank of Maharashtra	3.92	9.78	12.59	11.42	13.69	51.41	2.04	8	3.84	10.28
Central Bank of India	2.45	7.52	9.77	13.31	17.93	50.97	2.02	9	5.85	10.19
ICICI Bank	1.36	6.16	2.46	8.02	14.57	32.58	1.29	10	5.25	6.52
Axis Bank	0.00	0.22	1.90	9.57	13.45	25.14	1.00	11	6.12	5.03
I.D.B.I. Bank	1.31	1.36	0.90	6.62	10.84	21.03	0.83	12	4.39	4.21
HDFC Bank	0.21	0.83	3.23	5.61	1.08	10.97	0.44	13	2.23	2.19
Syncicate Bank	-	0.14	0.47	0.83	2.09	3.53	0.14	14	0.85	0.88
Canera Bank	-	-	-	0.09	3.39	3.48	0.14	15	2.33	1.74
Vijaya Bank	-	-	-	-	2.11	2.11	0.08	16	-	2.11
Dena Bank	-	0.09	0.19	0.67	1.08	2.02	0.08	17	0.46	0.51
UCO Bank	-	-	-	0.02	0.78	0.80	0.03	18	0.54	0.40
Allahabad Bank	-	-	-	-	0.52	0.52	0.02	19	-	0.52
LDB Bank	0.00	0.00	0.00	0.00	0.04	0.04	0.00	20	0.02	0.01
Total	151.13	429.32	474.54	590.82	873.36	2519.17	100.00	21		503.83

स्त्रोत: जिला अग्रणी बैंक (बैंक ऑफ इंडिया) खरगोन मुख्य शाखा

तालिका क्रं.– 07

कुल अग्रिम से अन्य प्राथमिकता प्रदत्त क्षेत्र को दिए गए अग्रिम की स्थिति

वित्तिय वर्ष 2012 से 2016

OPS

BANK	2012	2013	2014	2015	2016	TOTL	%	RANK	STDEV	AVERAGE
State Bank of India	46.82	57.30	84.94	93.99	94.05	377.09	31.56	1	21.96	75.42
DCCB	106.04	70.45	38.98	37.79	11.36	264.62	22.15	2	36.33	52.92
Bank of India	*33.42*	*22.68*	*32.51*	*48.60*	*65.99*	*203.19*	*17.01*	*3*	*16.93*	*40.64*
Narmada Malwa Bank	15.96	10.67	17.25	41.32	60.64	145.84	12.21	4	21.20	29.17
HDFC Bank	0.04	1.53	13.45	16.88	23.88	55.78	4.67	5	10.20	11.16
Union Bank of India	3.77	7.13	1.94	8.09	10.38	31.32	2.62	6	3.39	6.26
Bank of Baroda	7.52	7.49	3.81	5.13	5.93	29.88	2.50	7	1.59	5.98
Bank of Maharashtra	4.31	2.65	3.94	3.61	5.85	20.36	1.70	8	1.17	4.07
Central Bank of India	3.50	2.94	4.40	4.14	4.72	19.71	1.65	9	0.72	3.94
Punjab National Bank	3.94	1.23	3.73	2.07	6.67	17.63	1.48	10	2.09	3.53
Axis Bank	0.01	0.04	2.50	0.00	7.46	10.02	0.84	11	3.23	2.00
ICICI Bank	2.73	1.90	1.51	1.19	0.97	8.29	0.69	12	0.69	1.66
I.D.B.I. Bank	1.57	0.19	0.61	0.19	1.13	3.69	0.31	13	0.61	0.74
Canera Bank				0.03	3.38	3.41	0.29	14	2.36	1.70
Dena Bank		0.02	0.27	0.67	0.71	1.67	0.14	15	0.33	0.42
Syncicate Bank		0.00	0.14	1.03	0.38	1.55	0.13	16	0.45	0.39
Vijaya Bank					0.94	0.94	0.08	17		0.94
UCO Bank				0.68	0.00	0.68	0.06	18	0.48	0.34
LDB Bank	0.16	0.10	0.10	0.07	0.00	0.43	0.04	19	0.06	0.09
Allahabad Bank					0.00	0.00	0.00	20		0.00
Total	228.50	186.31	210.08	265.48	304.43	1194.80	100.00		46.65	238.96

स्त्रोत– जिला अग्रणी बैंक (बैंक ऑफ इंडिया) खरगोन मुख्य शाखा।

****

आर्थिक सुधारों की बहुप्रतीक्षित पहल-जीएसटी

डॉ. संध्या आमगा *

प्रस्तावना - भारतीय अर्थव्यवस्था - ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य - भारत का आर्थिक विकास सिन्धु घाटी सभ्यता से आरम्भ माना जाता है। सिन्धु घाटी सभ्यता की अर्थव्यवस्था मुख्यत: व्यापार पर आधारित प्रतीत होती हैं, जो यातायात में प्रगति के आधार पर समझी जा सकती हैं। लगभग 600 ई.पू. महाजनपदों में विशेष रूप से चिह्नित सिक्कों को ढालना प्रारम्भ कर दिया था। इस समय को गहन व्यापारिक गतिविधि एवं नगरीय विकास के रूप मेंचिह्नित किया जाता है। 300 ई.पू. से मौर्य काल मेंभारतीय उपमहाद्वीप का एकीकरण किया। राजनैतिक एकीकरण और सैन्य सुरक्षा ने कृषि उत्पादकता में वृद्धि के साथ व्यापार एवं वाणिज्य से सामान्य आर्थिक प्रणाली को बढ़ावा मिला।

अगले 1500 वर्षो मेंभारत में राष्ट्रकूट, होयसला और पश्चिमी गंगा जैसे प्रतिष्ठित सभ्यताओं का विकास हुआ। इस अवधि के दौरान भारत को प्राचीन एवं 17 वीं शताब्दी तक के मध्ययुगीन विश्व की सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था के रूप में आंकलित किया जाता है। इसमें विश्व की कुल सम्पत्ति का एक तिहाई से एक चौथाई भाग मराठा साम्राज्य के पास था, यूरोपीय उपनिवेशवाद के दौरान तेजी से गिरावट आयी। आर्थिक इतिहासकार अंगस मेडीसन की पुस्तक 'द वर्ल्ड इकॉनामी : ए मिलेनियल प्ररप्रेस्टिव' (विश्व की अर्थव्यवस्था : एक हजार वर्षो का परिप्रेक्ष्य) के अनुसार, भारत विश्व का सबसे बड़ा धनी देश था और 17 वीं सदी तक दुनिया की सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था था।

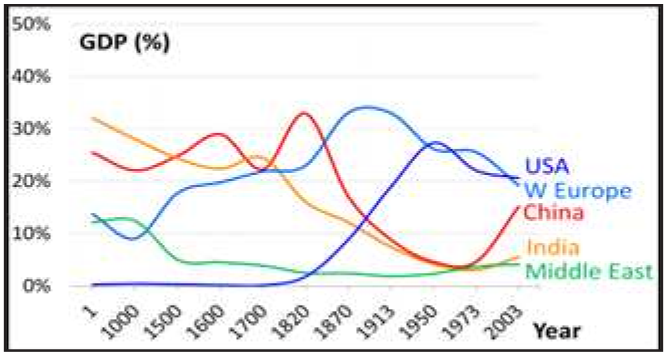

विभिन्न शताब्दियों में भारत एवं अन्य देशों की जीडीपी - स्वतन्त्र भारत में केन्द्रीय नियोजन का अनुसरण किया गया हैं, जिसमें सार्वजनिक स्वामित्व, विनियमन, लाल फीताशाही और व्यापार अवरोध विस्तृत रूप से शामिल है। 1991 के आर्थिक संकट के बाद केन्द्र सरकार ने आर्थिक उदारीकरण की नीति प्रारंभ कर दी। भारत आर्थिक पूँजीवाद को बढ़ावा देने में लग गया और विश्व की तेजी से बढ़ती आर्थिक व्यवस्थाओं में से एक बनकर उभरा।

विश्व में सर्वप्रथम जीएसटी 1954 में फ्रांस में लागू हुआ और वर्तमान में दुनिया के लगभग 150 देशों में लागू हैं, जबकि भारत में जीएसटी को बहुत लम्बे इन्तजार के बाद लागू किया गया है। इसके पूर्व 1978 मेंआरबीआई के पूर्व गवर्नर एल.के. झा के नेतृत्व में इन्डायरेक्ट टेक्सेशन कमेटी माडीफाइड वेल्यू एडेड टेक्स की वकालत की, इसी सूत्र को आगे बढ़ाते हुए राजीव गांधी सरकार में वित्तमंत्री विश्वनाथ प्रतापसिंह ने 1986 में कई तरह के एक्साइज के कब्स्केडिंग इफेक्ट को समाप्त करने वाला माडीफाइड वेल्यू एडेड टेक्स मॉड वेट लागू किया। 1991-92 में नरसिंहराव सरकार में वित्तमंत्री मनमोहनसिह ने राजा चेलैया टेक्स सुधार समिति बनाई, जिसने वेल्यू एडेड टेक्स यानि वैट की वकालत की। उसी समिति की सिफारिशों के मुताबिक साल 1994 में पहली बार सर्विस टेक्स लागू किया।

1997 म दैवेगौड़ा की सरकार के दौरान वित्तमंत्री पी.चिदम्बरम ने बजट में पीक कस्टम ड्यूटी 50 फीसदी से घटाकर 40 फीसदी की, जिसे टैक्स स्ट्रक्चर को बनाने के मामले में एक कड़ा कदम माना जाता है। 1999 मेंअटल बिहारी वाजपेयी की सरकार में वित्तमंत्री यशवंत सिन्हा ने टेक्स रिफॉर्म की गाड़ी आगे बढ़ाई और देश में वैट लाने का प्रयास शुरू हुए। इसी सरकार के दौरान 1 अप्रैल 2002 से वैट लागू करने की घोषणा हुई, लेकिन व्यापारियों के विरोध के चलते इसे 1 अप्रैल 2003 तक टाल दिया गया।

2003 में जब वित्तमंत्रालय का जिम्मा जसवंतसिंह के पास था, तो वित्तीय सुधारों के लिए बनाए गए एक टास्क फोर्स के निष्कर्ष में जीएसटी का पहला स्वरूप सामने आया जिसमें राज्यों के लिए 7 फीसदी और केन्द्र के लिए 5 फीसदी टेक्स रेट की बात थी। साल 2007 के बजट में तत्कालीन वित्तमंत्री पी.चिदम्बरम ने अप्रैल 2010 से जीएसटी लागू करने की घोषणा की और एमपॉवर्ड कमेटी बनाकर सहमति के प्रयास शुरू किए गए।

2009-10 मेंतेरहवें वित्त आयोग ने अपनी सिफारिशों मेंजीएसटी के लिए गुंजाइश बनाई। 2011 में राष्ट्रपति प्रणब मुखर्जी ने तत्कालीन वित्तमंत्री के, जीएसटी के लिए संविधान संशोधन का बिल पेश किया, तब सरकार व विपक्ष:में एक राय न होने के कारण बिल लैप्स हो गया।

वस्तु एवं सेवा कर या माल एवं सेवा कर (जीएसटी) - अन्तत: भारत में 1 जुलाई 2017 से लागू किया गया हैं, जिसे सरकार व कई अर्थशास्त्रियों द्वारा इसे स्वतंत्रता के पश्चात् सबसे बड़ा आर्थिक सुधार बताया है। इससे केन्द्र एवं विभिन्न राज्य सरकारों द्वारा भिन्न-भिन्न दरों पर लगाए जा रहे विभिन्न करों को हटाकर पूरे देश के लिए एक ही अप्रत्यक्ष:कर प्रणाली लागू की गयी, जिससे भारत को एकीकृत साझा बाजार बनाने में मदद मिलेगी। भारतीय संविधान में इस कर व्यवस्था को लागू करने के लिए संशोधन भी

* प्राचार्य, सुभाष यादव मेमोरियल डिग्री महाविद्यालय, बोरावां (म.प्र.) भारत

किया गया है।

1 जुलाई 2017 से पूर्व किसी भी सामान पर केन्द्र एवं राज्य सरकार के द्वारा कई तरह के अलग-अलग कर लगाती हैं, लेकिन जीएसटी आने से सभी तरह के सामानों पर एक जैसा ही कर लगाया जायेगा। पूर्व में किसी भी सामान पर 30 से 35 प्रतिशत तक कर देना पड़ता था। कुछ चींजों पर तो प्रत्यक्ष अप्रत्यक्षःरूप से लगाया जाने वाला कर 50 प्रतिशत से ज्यादा होता था। जीएसटी आने के बाद यह कर अधिकतम 28 प्रतिशत हो जाएगा, जिसमेंकोई भी अप्रत्यक्ष कर नहीं होगा। जीएसटी भारत की अर्थव्यवस्था को एक देश एक कर वाली अर्थ व्यवस्था बनायेगा जिसमें कोई अप्रत्यक्ष कर नहीं होगा। जीएसटी भारत की अर्थव्यवस्था को एक देश एक कर वाली अर्थव्यवस्था बना देगा। फिलहाल भारतवासी 17 अलग-अलग तरह के कर चुकाते हैं, जबकि जीएसटी लागू होने के बाद केवल एक ही तरह का कर दिया जायेगा। इसके लागू होते ही एक्साइज ड्यूटी, सर्विस टैक्स, वैट, मनोरंजन कर, लक्झरी जैसे बहुत सारे कर खत्म हो जाएंगे।

जीएसटी : कर की प्रकृति – जीएसटी एक मूल्यवर्धित कर हैं, जो कि विनिर्माता से लेकर उपभोक्ता तक वस्तुओं और सेवाओं की आपूर्ति पर एकल कर है। प्रत्येक चरण पर भुगतान के लिए इनपुट करों का लाभ मूल्यसंवर्धन के बाद के चरण मेंउपलब्ध होगा, जो प्रत्येक चरण मेंमूल्यसंवर्धन पर जीएसटी और आवश्यक रूप से एक कर बना देता है। अंतिम उपभोक्ताओं को इस प्रकार आपूर्ति श्रृंखला मेंअंतिम डीलर द्वारा लगाया गया जीएसटी ही वहन करना होगा, इससे पिछले चरणों के सभी मुनाफे समाप्त हो जायेंगे।

जीएसटी लागू होने के बाद किसी भी सामान और सेवा पर कर वहा लगेगा, जहाँ वह बिकेगा। जीएसटी अलग-अलग स्तरों पर लगने वाले एक्साइज ड्यूटी, सर्विस टैक्स इत्यादि की जगह अब केवल जीएसटी लगेगा। जीएसटी परिषद ने 66 तरह के प्रोडक्ट्स पर टैक्स की दरें घटाई हैं।

संभावित लाभ –

व्यापार और उद्योग के लिए –

1. **आसान अनुपालन, पारदर्शिता –** एक मजबूत और व्यापक सूचना प्रौद्योगिकी प्रणाली भारत में जीएसटी व्यवस्था की नींव होगी इसलिए पंजीकरण, रिर्टन, भुगतान आदि जैसी सभी कर भुगतान सेवाएँ करदाताओं को आनलाइन उपलब्ध होगी, जिससे इसका अनुपालन सरल और पारदर्शी होगा।

2. **कर दरों और संरचनाओं की एकरूपता –** जीएसटी यह सुनिश्चित करेगा कि अप्रत्यक्ष कर दरऔर ढाँचे पूरे देश मेंएक समान है। एक निश्चिंतता मेंबढ़ौत्री होगी ही व्यापार करना भी आसान हो जायेगा। दूसरे शब्दों में जीएसटी देश में व्यापार के कामकाज को कर तटस्थ बना देगा, फिर व्यापार करने की जगह का चुनाव कहीं भी जाए।

3. **करों पर कराधान (कब्स केडिंग) की समाप्ति –** मूल्य श्रृंखला और समस्त राज्यों की सीमाओं से बाहर टैक्स क्रैडिट की सुचारू प्रणाली से यह सुनिश्चित होगा कि करों पर कम से कम कराधान हो। इससे व्यापार करने मेंआनेवाली छुपी हुई लागत कम होगी।

4. **प्रतिस्पर्धा में सुधार –** व्यापार करने में लेन-देन लागत घटने से व्यापार और उद्योग के लिए प्रतिस्पर्धा में सुधार को बढ़ावा मिलेगा।

5. **विनिर्माताओं और निर्यातकों को लाभ –** जीएसटी में केन्द्र और राज्य के करों के शामिल होने और इनपुट वस्तुएँ और सेवाएँ पूर्ण और व्यापक रूप से समाहित होने और केन्द्रीय बिक्री कर चरणबद्ध रूप से बाहर हो जाने से स्थानीय रूप से निर्मित वस्तुओं और सेवाओं की लागत कम हो जाएगी। इससे भारतीय वस्तुओं और सेवाओं की अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में होने वाली प्रतिस्पर्धा मेंबढ़ौतरी होगी और भारतीय निर्यात को भी बढ़ावा मिलेगा। पूरे देश में एक दरों और प्रक्रियाओं की एकरूपता से अनुपालन लागत घटाने में लम्बा रास्ता तय करना होगा।

केन्द्र और राज्य सरकारों के लिए –

1. **सरल और आसान प्रशासन –** केन्द्र और राज्य स्तर पर बहुआयामी अप्रत्यक्ष करों को जीएसटी लागू करके हटाया जा रहा है। मजबूत सूचना प्रौद्योगिकी प्रणाली पर आधारित जीएसटी केन्द्र और राज्यों द्वारा अभी तक लगाए गए सभी अन्य प्रत्य करों की तुलना मेंप्रशासनिक नजरिये से बहुत सरल और आसान होगा।

2. **कदाचार पर बेहतर नियंत्रण –** मजबूत सूचना प्रौद्योगिकी बुनियादी ढाँचें के कारण जीएसटी से बेहतर कर अनुपालन परिणाम प्राप्त होंगे। मूल्य संवर्धन की श्रृंखला मेंएक चरण से दूसरे चरण मेंइनपुट कर क्रेडिट कर सुगम हस्तान्तरण जीएसटी के स्वरूप मेंएक अन्तःनिर्मित तन्त्र हैं, जिससे व्यापारियों को कर अनुपालन में प्रोत्साहन दिया जायेगा।

3. **अधिक राजस्व निपूणता–** जीएसटी से सरकार को कर राजस्व की वसूली लागत मेंकमी आने की उम्मीद है। इससे उच्च राजस्व निपूणता को बढ़ावा मिलेगा।

उपभोक्ताओं के लिए –

1. **वस्तुओं और सेवाओं के मूल्य के अनुपाती एकल एवं पारदर्शी कर –** केन्द्र और राज्यों द्वारा लगाए गए बहुल अप्रत्यक्ष करों या मूल्य संवर्धन के प्रगामी चरणों में उपलब्ध गैर इनपुट कर क्रेडिट के कारण आज देश मेंअनेक छिपे करों एवं अधिकांश वस्तुओं और सेवाओं की लागत पर प्रभाव पड़ता है। जीएसटी के अधीन विनिर्माता से लेकर उपभोक्ताओं तक केवल एक ही कर लगेगा, जिससे अंतिम उपभोक्ता पर लगने वाले करों में पारदर्शिता को बढ़ावा मिलेगा।

2. **समग्र कर भार में राहत –** निपूणता बढ़ने और कदाचार पर रोक लगाने के कारण अधिकांश उपभोक्ता वस्तुओं पर समग्र कर भार कम होगा, जिससे उपभोक्ताओं को लाभ मिलेगा।

जीएसटी में कर दर – जीएसटी काउंसिल में 4 तरह के कर निर्धारित किए गए हैं, ये 5, 12, 18 एवं 28 प्रतिशत। हालाँकि बहुत सी चींजों को जीएसटी से छूट दी गयी हैं। उन वस्तुओं पर कोई कर नहीं लगेगा या जीएसटी नहीं लगेगा, जबकि लक्झरी एवं महंगें सामान पर जीएसटी के अलावा सेस लगेगा सरकार के अनुसार इसमेंसे 81 प्रतिशत चीजें जीएसटी की 18 प्रतिशत श्रेणी तक आएगी।

आदर्श स्थिति में इस अर्थव्यवस्था में समस्त कर एक ही दर पर लगाए जाने चाहिए, किन्तु भारत मेंराज्य व केन्द्र तथा एक ही वस्तु या सेवा पर भिन्न-भिन्न राज्यों में भिन्न दरआदि होने से प्रारम्भ में चार दर निर्धारित की गई, ताकि वर्तमान राजस्व मेंअधिक अन्तर न पड़े। ये चार दर 5 प्रतिशत, 12 प्रतिशत, 18 प्रतिशत तथा 28 प्रतिशत है। आवश्यक वस्तुओं जैसे दूध, लस्सी, दही, शहद, फल एवं सब्जियाँ, आटा, बेसन, ताजा मीट, मछली, चिकन, अण्डा, ब्रेड, प्रसाद, नमक, बिंदी, सिन्दुर, स्टॉप, न्यायिक दस्तावेज, छपी पुस्तके, समाचार पत्र, चूड़ियाँ और हेण्डलूम आदि वस्तुओं पर जीएसटी नहीं लगेगी।

जीसएटी लागू होने से केन्द्र को तो फायदा होगा, किन्तु राज्यों को इस बात का भय हैं कि इससे उन्हें नुकसान होगा, क्योंकि इसके लागू होने

के बाद वे कई तरह के कर नहीं वसूल पाएंगे, जिससे उनकी कमाई कम होगी। आर्थिक विशेषज्ञों के अनुसार जीएसटी लागू होने से देश की जीडीपी में 1–2 प्रतिशत की वृद्धि हो सकती हैं , जिससे रोजगार में वृद्धि एवं उद्योगों का तेजी से विस्तार होगा। संक्षेप मेंजीएसटी भारत के सबसे बड़े आर्थिक सुधारों में एक क्रांतिकारी पहल सिद्ध हो सकती हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Professor Middison Angus- The World Economy (GDP): Historical Statistics.
2. http://hindi.economictimes.indiatimes.com/business-news.
3. http//hindi.moneycontrol.com/news.
4. https://en.wikipedia.org/wiki/Goods_and_ Services_ Tax _(India)

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to September 2017, Vol. I

मध्यप्रदेश के कृषि विकास में सिंचाई परियोजनाओं का योगदान (छिंदवाड़ा जिले के संदर्भ में)

डॉ. नैनवती धारणे *

प्रस्तावना - भारतीय अर्थव्यवस्था - कृषि प्रधान अर्थव्यवस्था है, कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ मानी जाती है। कृषि देश में जीविकोपार्जन का एक साधन नहीं बल्कि एक प्रमुख उद्योग बन गई। सन् 1956 में 2001 तक औद्योगीकरण के अन्तर्गत देश में उद्योग को बढ़ावा देने के बावजूद भी भारतीय अर्थव्यवस्था आर्थिक विकास के लिए कृषि पर निर्भर है। सामान्यत: देखा गया है कि जिस वर्ष देश में कृषि उत्पादन अधिक होता है, उस वर्ष देश की आर्थिक विकास दर ऊँची होती है। इसके विपरीत कृषि क्षेत्र में सूखा पड़ने के कारण कृषि उत्पादन में कमी होने से आर्थिक विकास की दर भी कम हो जाती है। देश के उद्योग-धन्धें, विदेशी व्यापार, विदेशी मुद्रा का अर्जन, राष्ट्रीय आय तथा रोजगार स्तर में वृद्धि सभी कृषि पर निर्भर है। विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं द्वारा चलाए जा रहे विभिन्न कार्यक्रमों एवं प्रयासों से कृषि को राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में गरिमापूर्ण दर्जा मिला है।

अध्ययन का उद्देश्य - प्रस्तुत शोध कार्य के अन्तर्गत निम्नलिखित उद्देश्य निर्धारित किए गए है -

1. मोटे तौर पर हमारे देश की आधी भूमि कृषि योग्य है तथा वर्तमान में कृषि क्षेत्र का लगभग एक तिहाई भाग सिचिंत है। विभिन्न संसाधनों से कृषि के विकास का अध्ययन करना।
2. कृषि प्रधान देश होने के नाते सिंचाई सुविधाओं में हुई वृद्धि का अध्ययन।
3. कृषि विकास के लिए सिंचाई साधनों की वृद्धि के लिए प्रभावशाली कार्य नीति की आवश्यकता का अध्ययन।
4. अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए जल संसाधनों का दोहन प्रदेश के आर्थिक विकास के कल्याण के आधार पर अध्ययन करना।
5. सिंचाई क्षमता का निर्माण कर उसके उपयोग प्रक्रिया का अध्ययन करना।
6. मध्यप्रदेश में पंचवर्षीय योजनाओं के दौरान सिंचाई परियोजनाओं से कृषि में आए परिवर्तन का अध्ययन।

योजनाकाल में सिंचाई साधनों की प्रगति -

1. **लघु सिंचाई परियोजनाए -** इस वर्ग में वे सिंचाई परियोजनाएँ आती है जिनके अन्तर्गत 2 हजार हेक्टेयर से कम बोए जाने योग्य कमाण्ड क्षेत्रफल होता है।
2. **मध्यम परियोजनाएँ -** इस वर्ग में वे सिंचाई परियोजनाएँ आती है, जिनके अन्तर्गत 2 हजार हेक्टेयर से अधिक तथा 10 हजार हेक्टेयर तक बोये जाने योग्य कमाण्ड क्षेत्रफल होता है।
3. **वृहत् परियोजनाएँ -** इन परियोजनाओं के अनतर्गत उन योजनाओं एवं कार्यक्रमों को शामिल किया जाता है, जिनके अन्तर्गत 10 हजार हेक्टेयर से अधिक बोए जाने योग्य कमाण्ड क्षेत्रफल होता है इसमें मुख्यत: बड़ी नहरें व बहुउद्देश्यी परियोजनाएँ आती है।
4. **अध्ययन की परिकल्पना -** प्रमुख सिंचाई परियोजनाओं के फलस्वरूप कृषि उत्पादन में पर्याप्त वृद्धि हुई है किन्तु कुछ तथ्य उभर कर सामने आते है, वे निम्नलिखित है -

1. सिंचाई परियोजना के वृद्धि होने से कृषि का विकास होता है अर्थात कृषि क्षेत्र में उत्पादन की मात्रा, आय एवं रोजगार में वद्धि होती है।
2. सीमांत कृषक 100 सिंचाई के साधनों की व्यवस्था नहीं जुटा पा रहे, वहीं दूसरी ओर अत्यधिक सिंचाई, जल वितरण की अपर्याप्त व्यवस्था तथा खेतीबाड़ी की खराब विधियों के कारण जलाक्रांति, लवणता तथा बहुमूल्य जैव संसाधनों के नष्ट होने की समस्याएं पैदा हो गई है।
3. जनसंख्या में तेजी से विस्तार के कारण निरन्तर कम हो रही पानी की आपूर्ति पर अधिकाधिक दबाव पड़ रहा है और प्रति व्यक्ति पानी की उपलब्धता कम हो रही है इसलिए हाल के वर्षो में जल का प्रबंध मुख्य चुनौती बन गया है।

कृषि का महत्व -

1. कृषि रोजगार का सबसे बड़ा स्त्रोत - भारतीय कृषि 65% कार्यशील जनसंख्या को प्रत्यक्ष रूप से रोजगार प्रदान करती है। भारत में पूंजी की छबि शर्मीली प्रकृति की वजह से गैर कृषि क्षेत्र का धीमा विकास होता है जबकि जनसंख्या में तेजी से वृद्धि हो रही है। अत: कृषि ही रोजगार का प्रमुख स्त्रोत है।

2. राष्ट्रीय आय का प्रमुख स्त्रोत - कृषि का राष्ट्रीय आय में सबसे अधिक योगदान होता है। सरकारी आंकड़ों के अनुसार देश की राष्ट्रीय आय में कृषि एवं उससे संबंधित हिस्सा 31.3% है।

3. विदेशी व्यापार में महत्व - भारतीय कृषि का विदेशी व्यापार में भी महत्वपूर्ण स्थान है। यहाँ कुल निर्यात का लगभग 25% निर्यात कृषि पदार्थ तथा कृषि से संबंधित कच्चे पदार्थो पर आधारित उद्योगों द्वारा किया जाता है।

4. खाद्यान्नों की पूर्ति - वर्तमान में खाद्यान्नों की आवश्कताओं की लगभग शत प्रतिशत पूर्ति भारतीय कृषि द्वारा ही की जाती है। यहाँ कृषि के हर भाग में लगभग 67% हिस्से में खाद्यानों फसलें जैसे गेहूँ, चांवल, चना आदि उगायी जाती है व्यापारिक फसलों जैसे जूट, कपास आदि की खेती शेष 20% हिस्से में होती है।

5. औद्योगिक विकास का आधार - औद्योगिक विकास हेतु भी कृषि का विकास किया जाना आवश्यक होता है एक तो औद्योगिक क्षेत्र में लगे

* अतिथि विद्वान (अर्थशास्त्र) शासकीय महाविद्यालय, नेपानगर, जिला-बुरहानपुर (म.प्र.) भारत

श्रमिकों की खाद्य आवश्यकताओं की पूर्ति कृषि क्षेत्र से होती है दूसरे कृषि, औद्योगिक कच्चे माल की पूर्ति का मुख्य स्त्रोत होती है। वस्त्र, जूट, वनस्पति, चीनी, डेयरी आदि उद्योग अपने कच्चे माल की पूर्ति के लिए कृषि पर निर्भर रहते है। कृषि उत्पादन में कमी ऐसे उद्योगों के लिए संकट का कारण बन जाती है।

तालिका क्रमांक 6.01

भारत में सिंचाई, साधनों का कुल सिंचित क्षेत्रफल का प्रतिशत

क्र.	विवरण	कुल सिंचित क्षेत्रफल का प्रतिशत
1.	नहरों द्वारा सिंचाई	37.09
2.	तालाबों द्वारा सिंचाई	07.00
3.	ट्यूबवेल द्वारा सिंचाई	28.04
4.	अन्य कुओं द्वारा सिंचाई	20.05
5.	अन्य साधन	06.02

भारत में सिंचाई संसाधन की आवश्यकता – कृषि के लिए सिंचाई संसाधन, बीज व खाद से भी अधिक महत्वपूर्ण है सिंचाई के उचित साधनों के बिना कषि उत्पाद नहीं किया जा सकता है। यदि सिंचाई के साधन पर्याप्त मात्रा में हो तो दो या तीन गुनी फसल प्राप्त की जा सकती है तथा नवीन भूमि को भी काम में लाया जा सकता है और इस प्रकार कृषि उत्पादन बढ़ाया जा सकता है।

'सर चार्ल्स' जिवेलियन के अनुसार – भारत में सिंचाई ही सब कुछ है और पानी भूमि से भी अधिक महत्वपूर्ण है

महात्मा गांधी के अनुसार – सभी गांवों में सिंचाई सुविधाएँ प्रदान करने से भी अधिक आवश्यक कोई कार्य नहीं हो सकता क्योंकि सिंचाई ही वह आधार है, जिस पर खेती की प्रगति निर्भर करती है।

भारत में सिंचाई संसाधनों की आवश्यकता को निम्न बातों से स्पष्ट किया जा सकता है।

1. **वर्षा की अनिश्चितता –** देश का लगभग 70 प्रतिशत फसली क्षेत्र पूर्णतया वर्षा पर निर्भर है। जिन क्षेत्रों में वर्षा काफी और ठीक समय पर होती है, उनमें पानी की कोई समस्या नहीं है किन्तु कुछ क्षेत्रों में वर्षा केवल कम ही नहीं अपितु अनिश्चित भी है। आन्ध्रप्रदेश, मध्यप्रदेश, पंजाब और राजस्थान ऐसे प्रदेश है। जिनमें कृषि के लिए कृत्रिम सिंचाई नितांत आवश्यक है खरीफ की फसलों को जुलाई व सितम्बर में मानसून के सहारे छोड़ा जा सकता है लेकिन रबी के लिए सिंचाई की व्यवस्था होनी ही चाहिए। अत: जब हम विभिन्न योजनाओं के अंतर्गत बहुफसली कार्यक्रम न अपनाकर सघन कृषि कार्यक्रम अपनाना चाहते हैं, तो उसको सफल बनाने के लिए सुविधाओं का विस्तार किया ही जाना चाहिए।

2. **विशेष फसल –** पटसन, गन्ना, धान आदि फसले ऐसी है जिनमें अधिक एवं नियमित पानी की आवश्यकता होती है अत: इन फसलों में अधिकाधिक उत्पादन लेने के लिए आवश्यक है कि सिंचाई में कृत्रिम साधनों का विस्तार किया जाए।

3. **विस्तृत खेती –** भारत की बढ़ती जनसंख्या को खाद्यान्न उपलब्ध कराने के लिए बेकार पड़ी भूमि को उपयोग में लाना होगा और ऐसी भूमि के लिए सिंचाई व्यवस्था भी करनी पड़ेगी।

4. **वर्षा का असमान वितरण –** भारत के पूर्वोत्तर राज्यों व तटीय राज्यों में अत्यधिक वर्षा होती है एवं बाढ़ की स्थिति निर्मित हो जाती है व कृषि करना मुश्किल हो जाता है। जबकि पश्चिमी व उत्तरी राज्यों में वर्षा बहुत थोड़ी मात्रा में होती है। अत: यह जरूरी हो जाता है कि अत्यधिक वर्षा वाले स्थानों पर नहरें बनाकर पानी को कम वर्षा वाले राज्यों की ओर प्रवाहित कर सिंचाई सुविधाएँ उपलब्ध करायी जा सकती है।

5. **अकाल से छुटकरा –** अकाल सामान्यत: सूखा या अत्यधिक वर्षा के कारण ही पड़ता है, सिंचाई सुविधाएँ ऐसा नहीं होने देती और कुछ न कुछ उत्पादन आवश्यक हो जाता है और इस प्रकार अकालों के रूप में छुटकारा मिल जाता है।

6. **बाढ़ों पर नियंत्रण –** सिंचाई सुविधाओं में वृद्धि होने से बाढ़ों पर नियंत्रण किया जा सकता है। जिन स्थानों पर बाढ़े आती है वहाँ नहरों के द्वारा पानी को अन्य स्थानों की ओर प्रवाहित किया जा सकता है इस प्रकार बाढ़ भी नियंत्रित हो सकती है और सिंचाई सुविधाएँ भी बढ़ायी जा सकती है जिससे कृषि उत्पादन में वृद्धि की जा सकती है।

7. **कृषकों की आय में वृद्धि व रोजगार –** यदि कृषकों को सिंचाई सुविधाएँ उपलब्ध हो जाती है, तो उनका प्रति हेक्टेयर उत्पादन बढ़ता है जिससे इनकी आय में वृद्धि होती है और वे पूंजीगत कृषि साधनों में धन लगाने में समर्थ हो जाते हैं तथा उनका रहन–सहन स्तर भी ऊॅचा उठता है सिंचाई सुविधाएँ उपलब्ध हो जाती है, तो उनका प्रति हेक्टेयर उत्पादन बढ़ता है जिससे इनकी माप में वृद्धि होती है और वे पूंजीगत कृषि साधनों में धन लगाने में समर्थ हो जाते हैं तथा इनका रहन–सहन का स्तर भी ऊॅंचा उठता जाता है। सिंचाई सुविधाओं की उपलब्धि रोजगार अवसरों में वृद्धि करती है। एक तो कृषि उद्योग में रोजगार के अवसर बढ़ते हैं। वही दूसरी ओर व्यापारिक कृषि होने से उद्योगां को कच्चा माल पर्याप्त मात्रा में मिलता है। जिससे वहाँ रोजगार अवसरों में वद्धि होती है।

8. **आन्तरिक जल परिवहन का विकास –** सिंचाई सुविधाओं का विस्तार करने से बड़ी व लम्बी नहरें बनायी जाती है। जिससे आंतरिक जल परिवहन का विकास होता है।

9. **सरकारी माप –** सिंचाई साधनों का महत्व इसलिए भी अधिक है कि इनसे सरकार की आय बढ़ती है कृषि करों की मात्रा बढ़ती है माल की ढुलाई व उत्पादन भी परोक्ष रूप से करों में वृद्धि करता है।

10. **आर्थिक विकास –** देश में आर्थिक विकास में सिंचाई का बहुत ही महत्व है इनसे कृषि उत्पादन बढ़ता है। विद्युत उत्पादन होता है उद्योगों का विकास होता है, रोजगार के अवसर बढ़ते हैं व कृषकों का उत्पादन बढ़ने से उनकी आय बढ़ती है। अत: ये सब देश के आर्थिक विकास में योगदान देते हैं।

निष्कर्ष – कृषि विश्व का सबसे पुराना व्यवसाय है और आज भी सम्पूर्ण विश्व की जनसंख्या का लगभग दो तिहाई भाग पूर्ण से कृषि पर आश्रित है। जिस प्रकार मनुष्य के शरीर में रीढ़ की हड्डी का महत्व है ठीक वैसे ही भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि का महत्व है। कृषि हमारे देश के लगभग 70 प्रतिशत लोगों को प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष तौर पर आजीविका उपलब्ध कराती है। कृषि देश के आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है क्योंकि औद्योगिकरण मूल रूप से कृषि विकास की ही देन है।

विकसित पश्चिमी देशों की भांति भारत में भी प्रमुख औद्योगिक क्षेत्रों को कच्चा माल कृषि उत्पादों के रूप में प्राप्त होता है तथा कृषिगत वस्तुओं के निर्यात से बहुमूल्य विदेशी मुद्रा भी मिलती है। राष्ट्र की समृद्धि योजनाओं की सफलता, विदेशी मुद्रा का अर्जन, राजनैतिक स्थायित्व आदि सभी कृषि के विकास पर निर्भर है। अतएव हमारे भारत जैसे कृषि प्रधान देश में व्यापक रूप से यह स्वीकार किया जाता है कि देश के आर्थिक विकास की कुंजी कृषि विकास में निहित है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. राव एवं कोण्डवार (1972) म.प्र. का आर्थिक विकास म.प्र. हिन्दी अकादमी, भोपाल।
2. यादव सुबहसिंह (1992) कृषि अर्थ व्यवस्था, रावत प्रकाशन, नई दिल्ली।
3. निम जयप्रकाश (1999) कृषि अर्थव्यवस्था, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा।
4. वृहत् परियोजनाएँ, वर्ष 2008 म.प्र.शासन, जल संसाधन विभाग, भोपाल।
5. मामोरिया एंड सिंह चौहान (1963) लैंड रिमार्क साहित्य भवन, आगरा।

Magazines -

1. म.प्र. संदेश, जन संपर्क संचालनालय, मध्यप्रदेश भोपाल।
2. प्रचारिणी पत्रिका, हिन्दी प्रचारिणी समिति, छिंदवाड़ा।

****

भारतीय रेल का अर्थव्यवस्था में योगदान

डॉ. सुनीता बाथरे * आस्था रजक **

शोध सारांश – भारतीय रेल एशिया की सबसे बड़ी तथा विश्व की दूसरी सबसे बड़ी रेल व्यवस्था है। विभिन्न वस्तुओं तथा यात्रियों को उनके गंतव्य तक पहुंचाने में भारतीय रेलवे महती भूमिका निभा रही है। द्रुतगति रेल परियोजना जापानी तकनीक एवं वित्तीय सहायता से जल्द पूर्ण होगी व आर्थिक विकास में तेजी आऐगी। मेक इन इंडिया को बढ़ावा मिलेगा। हाईस्पीड कॉरीडोर विकसित होंगे व जापानी स्किल से हमारी विकास की ताकत कई गुना बढ़ जाऐगी। भारतीय रेल का आधुनिकीकरण व द्रुतगति, भारतीय अर्थव्यवस्था में विकास की गति को बढ़ाने में मील का पत्थर होगी।

प्रस्तावना – भारतीय रेल एशिया की सबसे बड़ी तथा विश्व की दूसरी सबसे बड़ी रेल व्यवस्था है। रेल माल तथा यात्री परिवहन का मुख्य साधन है। देश के दूर-दराज इलाके में बसे लोगों को निकट लाने और व्यापार, देशाटन, तीर्थयात्रा एवं शिक्षा के अवसर प्रदान करती है। यह राष्ट्रीय एकता को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। इसने देश के आर्थिक जीवन को एकसूत्र में पिरोया है तथा कृषि एवं उद्योगों के विकास को गति प्रदान की है। भारत में रेल्वे का प्रारंभ 16 अप्रैल 1853 में हुआ, जबकि पहली रेलगाड़ी मुंबई से ठाणे तक 34 कि.मी. चली। विश्व की सबसे पहली रेलगाड़ी 1825 ई. में लीवरपुर से मैनचेस्टर के बीच चली थी। प्रारंभ में रेल्वे का स्वामित्व प्रबंध निजी कंपनियों के अधीन था, जिनके मलिक अंग्रेज थे। सरकार की ओर से इन कंपनियों को न्यूनतम लाभ की गारंटी व अन्य सुविधाएं प्राप्त थी। भारतीय रेल्वे बोर्ड की स्थापना मार्च 1905 ई. में की गयी थी। रेल वित्ता को वर्ष 1924-25 ई. के बाद एटवर्थ कमेटी की सिफारिश पर सामान्य राजस्व से अलग किया गया। 1950 में भारतीय रेलों का राष्ट्रीयकरण हुआ।

भारतीय रेल प्रषासन तथा प्रबंध की जिम्मेदारी रेल्वे बोर्ड पर है। रेल्वे को 17 मंडलों में (जो पहले 9 था) बाँटा गया है। प्रत्येक मंडल का प्रधान महाप्रबंधक होता है।

भारत के रेल-मंडल एवं उनके मुख्यालय

क्र.	रेल-मंडल	मुख्यालय
1	उत्तर रेल्वे	नई दिल्ली
2	दक्षिण रेल्वे	चेन्नई
3	मध्य रेल्वे	मुम्बई (C.S.T.)
4	द. पूर्व रेल्वे	कोलकाता
5	उ. पूर्वी रेल्वे	मालेगांव
6	उ. मध्य रेल्वे	इलाहाबाद
7	द.प. रेल्वे	हुगली
8	पूर्व तट रेल्वे	भुवनेश्वर
9	पश्चिम रेल्व	चर्च गेट मुम्बई
10	पूर्व रेल्वे,	कोलकाता
11	द. मध्य रेल्वे	सिकन्दराबाद
12	पूर्वोत्तर रेल्वे	गोरखपुर
13	पूर्व मध्य रेल्वे	हाजीपुर
14	प. मध्य रेल्वे	जबलपुर
15	उ.प. रेल्वे	जयपुर
16	द.पूर्व मध्य रेल्वे	बिलासपुर
17	कोलकाता मेट्रो रेल	कोलकाता

देश में तीन प्रकार की रेल लाइने हैं –

1. बड़ी लाइन 1.676 मीटर चौड़ा
2. मीटर गेज 1.00 मीटर चौड़ा
3. नेरो गेज 6.10 मीटर चौड़ा

भारत में सबसे लंबी दूरी तय करने वाली रेलगाड़ी विवेक एक्सप्रेस (नवम्बर 2011 से) है, जो डिब्रूगढ़ (असम) से कन्याकुमारी (तमिलनाडु) जाती है। इस दौरान वह 4286 किमी. दूरी तय करती है। इससे पूर्व हिमसागर एक्सप्रेस जो जम्मू-तवी से कन्याकुमारी (3726 किमी.) जाती है सबसे लंबी दूरी तय करने वाली रेलगाड़ी थी। विश्व का सबसे लंबा रेलमार्ग ट्रांस-साइबेरियन रेलमार्ग है, जो लेनिनग्राड से ब्लाडीवॉस्टक तक 9438 किमी. लंबा है। 31 मार्च 2015 तक भारत में कुल 66030 किमी. (कुल का 31.25 प्रतिशत) एंव विद्युतकृत रेलमार्ग की लंबाई 22224 किमी. (कुल का 33.66 प्रतिशत) बिजली से चलने वाली प्रथम गाड़ी डेक्कन क्वीन थी, जो बम्बई एवं पुणे के मध्य चली थी। योजनाकाल में रेल की काफी प्रगति हुई। यात्रियों की भीड़ को कम करने के लिए गाड़ियों की संख्या में इजाफा किया गया। अनेक रेलमार्गो पर लाइनों को दुहरा किया गया। गाड़ियों की रफ्तार बढ़ाई गयी, दूर के स्थानों के लिए तेज रफ्तार वाली गाड़ियों का प्रबंध किया गया, सिगनल करने की प्रक्रिया को आधुनिक किया गया है, स्टेशनों को बिजलीकृत किया गया है। यात्रियों की सुविधाओं में वृद्धि की गयी है। लंबी यात्रा करने वाले यात्रियों के लिए आरक्षण व सोने की व्यवस्था की गयी है व गाड़ियों में पंखे व शीतल जल की सुविधाओं को बढ़ाया गया है। द्वितीय श्रेणी के यात्रियों के लिए भी गद्दे वाली सीट की व्यवस्था की गयी है। कम्प्यूटरीकृत आरक्षण सुविधा उपलब्ध करायी गयी व गाड़ियों में यात्रियों को भोजन, नाश्ता पानी हेतु रसोई यान की समुचित व्यवस्था की गयी।

* प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (अर्थशास्त्र) पं. शंभूनाथ शुक्ल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शहडोल (म.प्र.) भारत
** एम.बी.ए. (मैनेजमेन्ट) स्टेडिज, एस.जी.एस.आई.टी.एस., इन्दौर (म.प्र.) भारत

रेलों का अर्थव्यवस्था पर प्रभाव-

- कृषि विकास में महत्वपूर्ण योगदान।
- रेलों के द्वारा अधिक उत्पादन वाले क्षेत्रों से अभाव वाले क्षेत्रों में वस्तुओं का परिवहन होता है व मूल्य समता बनाए रखने में मदद मिलती है।
- रेलों ने उद्योगों का कच्चा माल पहुंचाकर तथा निर्मित माल को बाजार तक ले जाकर देश में तीव्र औद्योगीकरण में बहुमूल्य योगदान प्रदान किया।
- निर्यात व्यापार में वृद्धि।
- श्रम की गतिशीलता में वृद्धि।
- रेलों के माध्यम से फल, तरकारी, दूध, मक्खन विक्रय दूर स्थानों तक संभव।
- अकालों पर नियंत्रण।
- रेलों के द्वारा देश का समाजिक विकास हुआ है।
- रेलों के द्वारा देश में शांति व राष्ट्रीय एकता बनाए रखना संभव।
- विदेशी आक्रमण से रक्षा संभव।
- डाक भेजने में सहायक।

समस्याएं -

- रेल्वे की प्रमुख समस्या अतिरेक प्राप्त न होने की है, जिसके कारण कार्यकारी व्यय को पूरा करने व विकास कार्यक्रम को अपनाने में कठिनाई आती है। सामाजिक उत्तरदायित्व निभाने हेतु रेल्वे का अनार्थिक लाइने संचालित करनी पड़ती व हानि का सामना करना पड़ता। इसके अतिरिक्त खाद्यान्न, उद्योगों को कच्चा माल सस्ती दरों पर पहुंचाने के कारण हानि का सामना करना पड़ता है।
- बिना टिकट यात्रा के कारण रेल्वे को प्रतिवर्ष करोड़ो रूपये की हानि होती है। हालांकि उड़नदस्ते व चलते-फिरते न्यायलयों का गठन किया गया पर ये अपर्याप्त है।
- यात्रियों को दी जाने वाली सुविधाएं पर्याप्त नहीं।
- रेल दुर्घटना से आर्थिक क्षति होती है यह रेल्वे की प्रमुख समस्या है, इनसे जनहानि के साथ रेल्वे की संपत्ति को नुकसान पहुंचता है। इन दुर्घटनाओं का मुख्य कारण फाटकों का खुला रह जाना, आग लग जाना, रेल मार्ग तथा रेलयंत्र व साज-सज्जा की उपयुक्त व्यवस्था का अभाव, रेल कर्मचारियों की अयोग्यता, अकुशलता व उपेक्षा आदि।
- रेल्वे में अकुशलता व कुप्रबंध में वृद्धि।
- वैगनों की अपूर्ण क्षमता का प्रयोग।
- भ्रष्टाचार व हड़तालों में वृद्धि।
- आधुनिकीकरण की धीमी गति।

भारत सरकार निरंतर रेलमार्गो के विस्तार हेतु कृत संकल्पित है। भूमिगत रेलमार्गो का विस्तार भी किया जा रहा है कुछ महत्वपूर्ण बिंदु-

कोंकण रेल्वे - यह महाराष्ट्र के रोहा से प्रारंभ होकर गोवा के मडगाँव तक जाती है। इसकी ट्रेक की लंबाई 760 किमी. है। इस रेलमार्ग पर पहली बार रेल परिचालन 26 जनवरी 1998 ई. को हुआ। इस रेलमार्ग से लाभांवित होने वाले राज्य महाराष्ट्र, गोवा, कर्नाटक एवं केरल है। कोकण रेलमार्ग 146 नदियों व धाराओं तथा 2000 पुलों एंव 91 सुरंगों को पार करता है। इस मार्ग पर सबसे लंबी सुरंग की लंबाई 6.5 कि.मी. है।

- कोलकत्ता मेट्रो रेल 1972 ई. में बनी। दमदम से टॉलीगंज तक इस भूमिगत रेलमार्ग की कुल लंबाई 16.45 किमी. है। इसकी शुरूआत 24 अक्टूबर 1984 ई. को हुई।
- दिल्ली मेट्रो रेल परियोजना जापान व कोरिया की कंपनियों के सहयोग से बनाई गयी है। सबसे पहली रेल सेवा 25 दिसम्बर 2002 ई. को तीस हजारी से शाहदरा के बीच चलाई गयी।
- बंगलुर मेट्रो रेल जापान के सहयोग से बनाई गई। इसकी शुरूआत 20 अक्टूबर 2011 से नम्मा मेट्रो के नाम से शुरू हुई।
- मुम्बई मेट्रो रेल की शुरूआत 8 जून 2014 को हुई।
- जयपुर व चेन्नई में भी मेट्रो रेल की सेवा शुरू हो गयी है।

2014-15 के दौरान भारतीय रेलवे द्वारा उठाए गए नए कदम-

- उधमपुर-कटरा ब्रॉडगेज लाइन पूर्ण की गयी। जुलाई 2014 कटरा तक चार रेलों की सुविधाएं प्रारंभ हो गई है।
- मेघालय को रेल सुविधा प्राप्त हुई। अगस्त 2014 दुभनोई-मेंदीपाथर नई लाईन पूर्ण हुई।
- सौर ऊर्जा को काम में लाने हेतु सौर संयत्र नई दिल्ली, रेल भवन की छत पर लगाया गया। इस हेतु रेल कोच फैक्ट्री रायबटेली, वर्तमान में, पूर्ण रूप से सौर उर्जा पर कार्य कर रही है।
- चुनिंदा रेल्वे स्टेशनों पर वाई-फाई ब्राडबैंक सेवा बंगलूर नई दिल्ली व अन्य स्टेशनों पर प्रदान की गई।
- चीन के साथ सहयोग

1. हैवी माल-भाड़ा यातायात में प्रशिक्षण।
2. वर्तमान मार्गो पर ट्रेनों की गति को बढ़ाना।
3. स्टेशन पुनर्विकास।
4. उच्चगति की ट्रेनें।
5. रेल्वे विश्वविद्यालय की स्थापना।

नौ गलियारों को 160/200 किमी. प्रति घंटा की उच्चगति वाली रेलों के लिए चुना गया है।

1. दिल्ली - आगरा
2. दिल्ली - चंडीगढ़
3. दिल्ली - कानपुर
4. नागपुर - बिलासपुर
5. मैसूर - बंगलुरू - चेन्नई
6. मुम्बई - गोवा
7. मुम्बई - अहमदाबाद
8. चेन्नइ - हैदराबाद
9. नागपुर - सिकंदराबाद।

द्रुतगति की रेल परियोजना - दिसम्बर 2015 ई. में आर्थिक विभाग की मंत्रिमण्डलीय समिति द्वारा इस द्रुतगति की रेल परियोजना का अनुमोदन प्रदान कर दिया गया था। जिसको जापानी तकनीकी एंव वित्तीय सहायता द्वारा कार्यान्वित किया जाएगा। रेल मंत्रालय की 50 प्रतिशत तथा महाराष्ट्र एवं गुजरात की राज्य सरकारों की 50 प्रतिशत साम्यता प्रतिभागिता सहित एक नये विशेष प्रायोजन वाहन के साथ इस परियोजना का क्रियान्वयन किया जाएगा।

इस परियोजना की मुख्य विशेषताएँ हैं-

- जापानी अधिकारिक विकास सहायता 0.1 प्रतिशत ब्याज के साथ 50 वर्ष के लिए तथा 15 वर्ष की ऋण स्थगन अवधि 79165 करोड़ रू. जो परियोजना की लागत का 81 प्रतिशत होगी।
- प्रस्तावित रेलमार्ग की लम्बाई मुम्बई में बांद्रा कुर्ला काम्पलेक्स से गुजरात में साबरमती/अहमदाबाद के बीच 508 किमी. की होगी। इस

रेल मार्ग पर 12 स्टेशन होंगे।

- अधिकतम निर्धारित गति 320 किमी./घंटा की प्रारंभिक गति के साथ 350 किमी./घंटा की होगी।
- प्रारंभ में यह रेल 10 कोच (750 सीट) की तथा भविष्य में 16 कोच (1200 सीटे) की होगी।
- इससे मेक इन इंडिया को बढावा मिलेगा, अर्थव्यवस्था को गति मिलेगी। शहरों का विकास हाईस्पीड कॉरीडोरों पर होगा।
- जापानी स्किल से हमारी विकास की ताकत कई गुना बढ़ेगी।
- इंडिया पोस्ट और जापान पोस्ट के सहयोग से कुल बाक्स सार्विस शुरू करेंगे। इससे जापान में भारतीय व्यंजनों की मांग पूरी होगी और भारत में जापानी रेस्टोरेंट खुलेंगे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. इंटरनेट।
2. विश्व – इतिहास – जैन एंव माथुर।
3. NCERT – भारत लोग और अर्थव्यवस्था P. 119
4. यूनिफाइड अर्थशास्त्र – अनुपम गोयल।
5. दैनिक भास्कर – 15 सितम्बर 2017
6. लूसेंट सामान्य ज्ञान – सुनील कुमार सिंह।

****

विमुद्रीकरण - कैशलेस अर्थव्यवस्था की दिशा में सार्थक कदम

डॉ. संध्या आमगा *

प्रस्तावना - विमुद्रीकरण एक आर्थिक गतिविधि है, जिसके अन्तर्गत सरकार पुरानी मुद्रा को समाप्त कर देती है और नई मुद्रा को प्रचलन में लाती है। जब काला धन बढ़ जाता है और अर्थव्यवस्था के लिए खतरा बन जाता है तो इसे दूर करने के लिए विमुद्रीकरण का प्रयोग किया जाता हैं, ऐसा माना जाता है कि जिसके पास काला धन होता है। वे उसके बदले में नई मुद्रा लेने का साहन नहीं जुटा पाते हैं और काला धन स्वयं ही नष्ट हो जाता है। भारत में 500 और 1000 रुपये के नोटों के विमुद्रीकरण जिसे मीडिया में छोटे रूप में नोटबंदी कहा गया। इसकी घोषणा 8 नवम्बर 2016 को रात आठ बजे प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी द्वारा अचानक राष्ट्र को किए गए सम्बोधन के द्वारा की गयी। इस घोषणा में 8 नवम्बर की आधी रात से देश में 500 और 1000 रुपये के नोटों को खत्म करने का ऐलान किया गया। इसका उद्देश्य केवल काले धन पर नियंत्रण ही नहीं बल्कि जाली नोटों से छुटकारा पाना ही था।

इसके पहले इसी तरह के उपायों को भारत की स्वतंत्रता के बाद लागू किया गया था। जनवरी 1946 में 1000 और 10000 रुपए के नोटों को वापस ले लिया गया था और 1000, 5000 और 10000 रुपए के नए नोट 1954 में पुन: शुरू किए गए थे। 16 जनवरी 1978 को जनता पार्टी की गठबन्धन सरकार ने फिर से 1000, 5000 और 10000 रुपए के नोटों का विमुद्रीकरण किया था ताकि जालसाजी और काले धन पर अंकुश लगाया जा सके।

विमुद्रीकरण का मुख्य उद्देश्य आतंकवाद के वित्त पोषण पर अंकुश लगाना तथा कालेधन को समाप्त करना था, पर नगद रहित अर्थव्यवस्था की ओर बढ़ना एक आवश्यकता के रूप में उभर कर सामने आया है। वास्तव में, 27 नवम्बर 2016 को 'मन की बात' में राष्ट्र को संबोधित करे हुए प्रधानमंत्री ने यह कहा 'नगदरहित समाज हमारा सपना है। यह सही है कि 100 प्रतिशत नगदरहित समाज कभी संभव नहीं है लेकिन हम एक कमनगद समाज से शुरूआत कर सकते हैं और तब नगदरहित समाज कोई दूर की कौड़ी नहीं होगी।'

यद्यपि विमुद्रीकरण का प्राथमिक उद्देश्य कालेधन को समाप्त करना, आतंकवाद एवं नक्सलवाद पर अंकुश लगाना था किन्तु विमुद्रीकरण विमर्श परिवर्तित हो चुका है, सरकार यह नगदरहित अर्थव्यवस्था के बीज बो चुकी है। 2014 में सरकार ने जन-धन योजना की शुरूआत की। 20 अप्रैल, 2016 तक इसके अंतर्गत लगभग 220 मिलियन खाते खोले गए। फरवरी 2016 में, भारत सरकार ने कार्ड और डिजिटल माध्यमों के जरिए भुगतान को प्रचारित करने के लिए दिशानिर्देष को मंजूरी दी।

एक नगद रहित अर्थव्यवस्था का विचार, दरअसल कागजी मुद्रा से डिजिटल मुद्रा की ओर बढ़ने की एक क्रांति है, जो आमतौर पर कालेधन के प्रवाह को रोकने तथा नगदी के प्रवाह की पारदर्शिता बढ़ाने के उद्देश्य से अपनाया जाता है। चाहे किसी को बिल का भुगतान करना हो, फल खरीदने हों अथवा बस या टैक्सी की यात्रा करनी हों सभी तरह के लेन-देन, कार्ड या डिजिटल माध्यमों द्वारा किए जाते हैं। जेब में रखे जाने वाले पारम्परिक बटुए में रखने की आवश्यकता नहीं होती। ये व्यक्ति के बैंक खाते से जुड़े होते हैं और भुगतान इन्टरनेट अन्य माध्य है, जो नगदरहित समाज की ओर ले जाते हैं।

कम नगदी - भारत एवं अन्य देश - भारत से कुछ अन्य देशों की तुलना करने पर पता चलता है कि भारत में व्यवहार में मौजूद मुद्रा कई अन्य विकसित या विकासशील देशों से ज्यादा है। वर्ष 2015 में भारत की अर्थव्यवस्था में नगदी का चलन सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) का 12.3 फीसदी था, जबकि ब्राजील में यह आंकड़ा 3.8 फीसदी, दक्षिण कोरिया में 5.6 फीसदी और स्वीडन में 1.7 फीसदी था।

नगदी का प्रयोग(कुल जीडीपी के प्रतिशत में 2011-15) (देखे आगे पृष्ठ पर)

वर्ष 2016 में भारत में 68 फीसदी से भी ज्यादा लेन-देन नगदी में हुए, जो दुनिया के बाकि देशों के मुकाबले काफी ज्यादा है।

नगद रहित अर्थव्यवस्था को प्रोत्साहन हेतु शासकीय प्रयास - विमुद्रीकरण के कुछ समय बाद ही सरकार ने लोगों को प्रोत्साहित करने लिए कई कदम उठाए ताकि नगदी की कमी के दुष्प्रभावों को कम किया जा सकें।

उपभोक्ताओं के लिए लकी ग्राहक योजना और व्यापारियों के लिए डिजिधन व्यापार योजना: डिजिटल भुगतान को प्रोत्साहन देने के उद्देश्य से सरकार ने 25 दिसम्बर 2016 को डिजिटल लॉटरी योजना- जैसे उपभोक्ताओं के लिए लकी ग्राहक योजना तथा व्यापारियों के लिए डिजिटल व्यापार योजना की शुरूआत के साथ डिजिटल इंडिया आन्दोलन निष्चित रूप से देश के आर्थिक आधार को सुदृढ़ बनाएगा। रूपे कार्ड, अनस्ट्रक्चर्ड सप्लेमेंट्री सर्विस डाटा (यूएसएसडी) यूपीआई और आधार समर्थित भुगतान प्रणालियां इन योजनाओं का हिस्सा है।

वित्तीय साक्षरता अभियान - वित्तीय साक्षरता अभियान की शुरूआत एक डिजिटल अर्थव्यवस्था और लेन-देन के नगदरहित तरीकों को अपनाने के लिए लोगों को प्रोत्साहित करने के लिए की गई है। इस अभियान का मुख्य उद्देश्य डिजिटल तरीकों को अपनाने के लिए लोगों में जागरूकता फैलाना, उन्हें प्रोत्साहित एवं प्रेषित करना है। मानव विकास एवं संसाधन मंत्रालय ने लोगों से धन अंतरण के लिए डिजिटल नगदरहित आर्थिक प्रणाली का उपयोग करने का आग्रह किया है। मंत्रालय ने यह भी अपील की है कि उच्च शिक्षा प्रदान करने वाले निजी एवं सरकारी संस्थान न तो नगदी ग्रहण करे और न ही नगदी में भुगतान करें तथा एक नगदरहित कैंपस (दुकानें, जलपान गृह सेवाएं) विकसित करें।

बीएचआइएम (भारत इंटाफेस फॉर मनी) - प्रधानमंत्री ने 30 दिसंबर, 2016 को ऑनलाइन लेन-देन को आसान बनाने के लिए बीएचआईएम नामक ई-वॉलेट एप की शुरूआत की। इस आधार-आधारित मोबाइल

* प्राचार्य, सुभाष यादव मेमोरियल डिग्री महाविद्यालय, बोरावां (म.प्र.) भारत

भुगतान एप्लीकेशन के द्वारा कोई भी व्यक्ति अपने बैंक खाते से सीधे भुगतान कर सकता है। केवल आपका मोबाइल नम्बर बैंक खाते से जुड़ा होना चाहिए और उसके बाद धन अंतरण के लिए बस एक क्लिक की ही देरी है। हालांकि यह एप यूपीआई-समर्थित बैंक खातों के साथ जुड़ा हुआ है लेकिन एक समय पर केवल एक ही खाता इससे जोड़ा जा सकता है। जिसके पास दो खाते है, उसे दोनों खातों में लेन-देन के लिए एक खाते से दूसरे खाते पर जाना होगा।

रूपे कार्ड क्रेडिट या डेबिट कार्ड का भारतीय संस्करण है और यह वीसा या मास्टरकार्ड जैसे अन्तर्राष्ट्रीय कार्ड के समान है। भारतीय राष्ट्रीय भुगतान निगम (एनपीसीआई) ने जन-धन योजना ने प्रत्येक खाताधारक को रूपे क्रेडिट कार्ड की शुरूआत की। बैंकों ने प्रत्येक खाताधारक को रूपे डेबिट कार्ड के साथ एक खता रुपये का दुर्घटना बीमा करवाया है। रूपे तीन जगहों (एटीएम, पॉइंट ऑफ सेल तथा ऑनलाइन बिक्री) पर काम करता है और विश्व में इस तरह का सातवां भुगतान गेटवे है। करोड़ों गरीब लोगों के पास रूपे डेबिट कार्ड है, यह नगद रहित अर्थव्यवस्था में निम्न-आय वर्ग को शामिल करे का एक प्रयास है।

आधार भुगतान एप – 25 दिसम्बर, 2016 को सरकार ने एक आधार एप की शुरूआत की। यह किसी व्यक्ति के बैंक खाते को आधार कार्ड से जोड़ता है। यह एप एक बायोमैट्रिक रीडर से जुड़ा होगा और उपभोक्ता अपनी आधार संख्या दर्ज करेगा और अंतरण के लिए एक बैंक का चुनाव करेगा। इस एप की एक विशेषता यह है कि बिना फोन के इसका इस्तेमाल भुगतान करने के लिए किया जा सकता है।

कम नगदी अर्थव्यवस्था के लाभ – भारतीय अर्थव्यवस्था विश्व में सबसे तेजी से बढ़ती हुई अर्थव्यवस्थाओं में से एक है, लेकिन यह कालाधन, भ्रष्टाचार, आंतकवाद, अवैध सम्पत्ति आदि के शिकंजे को तोड़ने के लिए लेखा-परीक्षा और प्रवर्तन अभिकरणों जैसे विभिन्न तरीके हमेशा मौजूद रहे हैं, लेकिन नगदरहित अर्थव्यवस्था का विचार अधिक आकर्षित है, क्योंकि अधिकतर आर्थिक लेन-देन एक औपचारिक प्रणाली का हिस्सा होंगे तथा उन पर नजर रखना आसान होगा। भारत में बहुत कम लोग ही गैर-नगदी भुगतान के तरीकों का प्रयोग करते हैं। केवल 10-15 प्रतिशत आबादी ने ही कभी-भी किसी प्रकार के गैर-नगदी भुगतान उनकरण का उपयोग किया है, जबकि ब्राजील और चीन जैसे देशों में यह आंकड़ा 40 प्रतिशत तक है। 2014 में, भारत के सकल घरेलू उत्पाद में बैंकों से बाहर चलन में मुद्रा की मात्रा 11.1 प्रतिशत थी, जो कि रूस, मेक्सिको और ब्राजील जैसे उभरती अर्थव्यवस्थाओं से अधिक थी।

भुगतान का सुविधाजनक तरीका – लेन-देन में आसानी के कारण यह निश्चित रूप से नगदरहित होने को बढ़ावा देता है। नगदरहित अर्थव्यवस्था सभी को (निम्न-आय वर्ग को छोड़कर) नकदी में व्यापार या लेन-देन करने की लागत में कमी समेत ढेरों लाभ प्रदान करती है।

कम जोखिम – समुचित साइबर-सुरक्षा के साथ ऑनलाइन भुगतान अपेक्षाकृत जोखिम-मुक्त है, जबकि भौतिक नगदी के साथ हमेशा सुरक्षा की समस्या रहती है।

मुद्रा छापने की लागत में कमी – नए नोट छापने और गंदे एवं कटे-फटे नोटों को बदलने में काफी लागत आती है। 2015 में आरबीआई को नोट छापने में 27 मिलियन रुपए की लागत आई। अगर हम एक नगदरहित समाज की और बढ़ते हैं, तो यह लागत कम की जा सकती है।

अपराध-दर में कमी – नशीले पदार्थों की तस्करी, वेश्यावृत्ति, आतंकवाद का वित्त पोषक और कालेधन को वैध बनाने जैसे ज्यादातर समाज-विरोधी एवं अवैध गतिविधियों को केवल नकदी में ही अंजाम दिया जाता है। एक नगद रहित अर्थव्यवस्था में इस तरह की गतिविधियों को अंजाम देना कठिन होगा।

बैंकिंग क्षेत्र के लिए बेहतर – एक डिजिटल अर्थव्यवस्था बैंकिंग प्रणाली की मदद करेगी। एक बार लोग डिजिटल भुगतान एवं अंतरण के आदी हो जाएंगे तो नगदी साथ रखने या नगदी की जमाखोरी में कमी आएगी।

पारदर्शिता एवं निगरानी – सरकार नगद रहित लेन-देन की आसानी से निगरानी कर सकती है। अत: कर अपवंचन कठिन होगा और इससे राजस्व-संग्रह मे वृद्धि होगी।

विगत आठ महीनों में भारत में लेन-देन के डिजिटलीकरण में महत्वपूर्ण वृद्धि दर्ज हुई है और स्वाईप मशीनों की भी मांग बढ़ी है। चाहे छोटी दुकानें हों या फिर फेरीवाले। त्वरित भुगतान वाले इलेक्ट्रानिक लेन-देन में इजाफा हुआ है, जो कि अर्थव्यवस्था के लिए अच्छी बात है। मोबाइल-वॉलेट में काफी बढ़ोतरी हुई है और यह बहुत हद तक संभव है कि भारतीयों का एक बड़ा हिस्सा नगदी से सीधे-सीधे मोबाइल-वॉलेट्स की ओर बढ़ जाएगा मोबीक्विक दावा करता है कि 2017 तक वो आसानी से 10 बिलियन डॉलर तक के भुगतान का आंकड़ा छू लेगा और जल्दी ही एक बिलियन से ज्यादा व्यापारियों द्वारा अपनाया जाएगा।

नकद रहित अर्थव्यवस्था या इलेक्ट्रानिक लेन-देन की ओर बढ़ाया गया कदम कर-अपवंचन को कम करने के द्वारा कालेधन पर रोक लगाने तथा अर्थव्यवस्था का पारदर्शी संचालन सुनिश्चित करने में सहायक हो सकता है। अंतत: नकदी साथ रखने का जोखिम कम होगा और वित्तीय समावेशन का एक अधिक सुनियोजित ढांचा सामने आएगा। विकास की प्रक्रिया की दिशा में सरकार खर्च अधिक करेगी, क्योंकि पारदर्शिता और राजस्व के प्रवाह में बढोतरी के आसार है।

मगर भारत जैसी विकासशील अर्थव्यवस्था में नगद रहित समाज की तरफ बढ़ने का दूसरा पहलू यह है कि गरीब लोगों के लिए नगदरहित लेन-देन व्यावहारिक नहीं है। विमुद्रीकरण में अनौपचारिक समाज तथा बैंक से नहीं जुड़े हुए लोगों को खासतौर पर प्रभावित किया है। समाज के इस हिस्से को नगद रहित व्यवस्था को अपनाने में काफी समय लगेगा। शुरूआत में लेन-देन के तरीकों को अपनाना कठिन लग सकता है लेकिन यह सुनिश्चित करेगा कि अपना पहला कदम बढ़ाए। नगदी समाप्त होने का विचार दूर की कौड़ी लग सकता है लेकिन निश्चित रूप से अब कम नगदी की दिशा में सार्थक परिणाम मिलेंगे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. https://Hi.wikipedia.org/wiki/2016_Indian_ banknote_ demonetisation
2. Gopika Gopakumar, Vishwanath Nair (8 November 2016). 'Rs500, Rs1000 notesmay be back, if history is a guide'. Live Mint.
3. साहू प्रभाकर, अरोड़ा अमोघ, नगदी अर्थव्यवस्था से कमनगद अर्थव्यवस्था की ओर, योजना, फरवरी, 2017
4. कम नगद अर्थव्यवस्था : दुनिया के बरक्स, योजना, फरवरी, 2017
5. *http://www.bis.org/cpmi/publ / d155.pdf (26 Dec.2016)*

नगदी का प्रयोग(कुल जीडीपी के प्रतिशत में 2011-15)

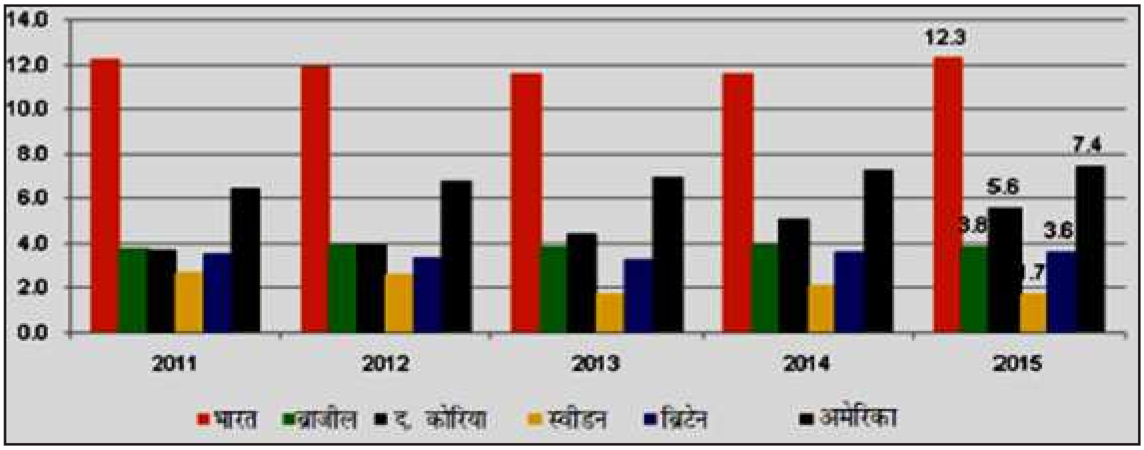

स्रोत – http://www.bis.org/cpmi/publ / d155.pdf (26 Dec.2016)

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to September 2017, Vol. I

शिक्षा का सामाजिक विकास में योगदान का अध्ययन (म.प्र.के पूर्व निमाड़ खण्डवा एवं बुरहानपुर जिले के विशेष संदर्भ में)

राकेश कुमार दिलावरे * डॉ. उषा कुमठ **

प्रस्तावना – एक देश के सामाजिक विकास में शिक्षा का महत्वपूर्ण योगदान होता है। शिक्षा व्यक्ति में सामाजिक एवं सांस्कृतिक गुणो का विकास करती हैं। जिससे व्यक्ति को सही एवं गलत का ज्ञान होता हैं और उसका मानवीय व्यवहार सुधरता हैं। एक व्यक्ति का सामाजिक दृष्टिकोण उसमें निहीत गुणों पर निर्भर करता हैं और उन गुणों का विकास शिक्षा द्वारा ही सम्भव हैं यह हमारे ज्ञान, कुशलता, आत्मविश्वास और व्यक्तित्व में सुधार करती है। यह हमारे जीवन में दूसरों से बात करने की बौद्धिक क्षमता को बढ़ाती है। शिक्षा परिपक्वता लाती है और समाज के बदलते परिवेश में रहना सिखाती है। यह सामाजिक विकास, और उन्नति का रास्ता है।

शिक्षा सभी के जीवन में, व्यक्तित्व का निर्माण, ज्ञान और कौशल में सुधार करके, एक सभ्य मनुष्य बनाने में महान भूमिका निभाती है। यह एक व्यक्ति को भले और बुरे के बारे में सोचने की क्षमता प्रदान करती है। हमारे देश में शिक्षा को तीन श्रेणियों में विभाजित किया जाता है, प्रारम्भिक शिक्षा, माध्यमिक शिक्षा, और उच्च माध्यमिक शिक्षा। यह चीजों और परिस्थितियों का विश्लेषण करने के लिए हमारे कौशल, चरित्र और पूरे व्यक्तित्व को विकसित करती है। शिक्षा एक व्यक्ति के जीवन में लक्ष्य को निश्चित करने के द्वारा उसके वर्तमान और भविष्य को पोषित करती है। शिक्षा के महत्व और इसकी गुणवत्ता में दिन प्रति दिन सुधार व वृद्धि हो रही है।

अध्ययन का उद्देश्य – शिक्षा का सामाजिक विकास पर प्रभाव का अध्ययन करना।

अध्ययन की विधि – प्रस्तुत शोध में हम सरल देव निदर्शन विधि का उपयोग कर रहे है। प्रस्तुत अध्ययन क्षेत्र 2 जिलो में बंटा हुआ है। प्रत्येक जिले से हम सरल देव निदर्शन विधि द्वारा 20 गॉवो का चुनाव कर प्रत्येक गॉव से 10 उत्तरदाताओं का चुनाव कर जानकारी प्राप्त की गयी इस प्रकार एक जिले से 200 परिवार, इसी प्रकार दूसरे जिले से भी 200 परिवारों का चुनाव कर जानकारी प्राप्त की गयी। इस प्रकार 2 जिलो से 400 परिवारों का चयन किया है।

शिक्षा से सामाजिक विकास सम्बंधी ऑकड़ों का विश्लेषण – शिक्षा का सामाजिक विकास पर प्रभाव का विश्लेषण करने के लिए हमने शिक्षित एवं अशिक्षित व्यक्तियों में सामाजिक भेदभाव, महिल सलाह, महिला मतदान,सामाजिक कार्यक्रमों में भागीदारी आदि चरो का विश्लेषण काई वर्गविधि द्वारा किया हैं।

शिक्षित एवं अशिक्षित उत्तरदाताओं द्वारा शिक्षा से भेदभाव में कमी का विश्लेषण

शिक्षा से भेदभाव	कम हुआ हैं	कम नहीं हुआ हैं	योग
शिक्षित	210	94	304
अशिक्षित	09	87	96
योग	219	181	400

H_O:शिक्षा एवं भेदभाव की एक दूसरे पर निर्भरता नहीं हैं।

H_1: शिक्षा एवं भेदभाव की एक दूसरे पर निर्भरता हैं।

α = 5%

d.f. = 1

$X^2_{tab.}$= 3.84

$X^2_{cal.}$= 104.97

5% सार्थकता स्तर पर X^2 का सारणी मूल्य 3.84 हैं जबकि X^2 का परिकलत मूल्य 104.97 हैं जो सारणी मूल्य से अधिक हैं। अत: हमारी H_O(शुन्य परिकल्पना) अस्वीकार होती हैं और H_1(वैंकल्पिक परिकल्पना) स्वीकार होती हैं अर्थात निर्दशन से प्राप्त ऑकड़ों के अनुसार शिक्षा एवं भेदभाव दोनों में निर्भरता पायी गयी। अर्थात शिक्षा से भेदभाव कम हो रहा हैं, मतलब अशिक्षित व्यक्ति अधिक भेदभाव करते हैं।

शिक्षित एवं अशिक्षित उत्तरदाताओं द्वारा महिलाओं से सलाह लेने का विश्लेषण

महिलाओं से सलाह	सलाह लेने वाले	सलाह नहीं लेने वाले	योग
शिक्षित	193	103	296
अशिक्षित	18	74	92
योग	211	177	388

H_O:शिक्षा एवं महिलाओं से सलाह की एक दूसरे पर निर्भरता नहीं हैं।

H_1: शिक्षा एवं महिलाओं से सलाह की एक दूसरे पर निर्भरता हैं।

α = 5%

d.f. = 1

$X^2_{tab.}$= 3.84

$X^2_{cal.}$= 58.94

5% सार्थकता स्तर पर X^2 का सारणी मूल्य 3.84 हैं जबकि X^2 का परिकलत मूल्य 58.94 हैं जो सारणी मूल्य से अधिक हैं अत: अत: हमारी H_O (शुन्य परिकल्पना) अस्वीकार होती हैं तथा H_1 (वैंकल्पिक परिकल्पना) स्वीकार होती हैं। आर्थात निर्दशन से प्राप्त आकड़ों के अनुसार

* (अर्थशास्त्र) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत
** माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत

शिक्षा एवं महिलाओं से सलाह दोनों में निर्भरता पायी गयी। अर्थात शिक्षित व्यक्ति घर की महिलाओं से अधिक सलाह लेते हैं और अशिक्षित व्यक्ति घर की महिलाओं से कम ही सलाह लेना पसंद करते हैं।

शिक्षित एवं अशिक्षित उत्तरदाताओं के घर की महिलाओं के मतदान का विश्लेषण

उत्तरदाताओ के घर की महिलाओं मतदान	मतदान करती हैं	मतदान नहीं की करती हैं	योग
शिक्षित	225	79	304
अशिक्षित	28	68	96
योग	253	147	400

H_O :शिक्षा एवं उत्तरदाताओं के घर की महिलाओं के मतदान की एक दूसरे पर निर्भरता नहीं हैं।

H_1 : शिक्षा एवं उत्तरदाताओं के घर की महिलाओं के मतदान की एक दूसरे पर निर्भरता हैं।

α = 5%

d.f. = 1

$X^2_{tab.}$ = 3.84

$X^2_{cal.}$ = 63.12

5% सार्थकता स्तर पर X^2 का सारणी मूल्य 3.84 हैं जबकि X^2 का परिकलत मूल्य 63.12 हैं जो सारणी मूल्य से अधिक हैं। अत: हमारी H_O (शुन्य परिकल्पना) अस्वीकार होती हैं और H_1 (वैंकल्पिक परिकल्पना) स्वीकार होती हैं अर्थात निर्दशन से प्राप्त ऑकडो के अनुसार शिक्षा एवं उत्तरदाताओं के घर की महिलाओं के मतदान दोनों में निर्भरता पायी गयी। निष्कर्ष प्राप्त होता है कि शिक्षित व्यक्तियों के घर की महिलाऐंअपना बहुमूल्य मत अनिवार्य रूप से करती हैं किन्तु अशिक्षित व्यक्तियो के घर की महिलाऔ में मतदान के प्रति जागरूकता कम ही पायी गयी हैं।

शिक्षित एवं अशिक्षित उत्तरदाताओं का सामाजिक कार्यक्रमो में भागीदारी का विश्लेषण

सामाजिक कार्यक्रमों में भागीदारी	भागीदारी लेते हैं	भागीदारी नहीं लेते हैं	योग
शिक्षित	202	102	304
अशिक्षित	09	87	96
योग	211	189	400

H_O :शिक्षा एवं सामाजिक कार्यक्रमों में भागीदारी की एक दूसरे पर निर्भरता नहीं हैं।

H_1 : शिक्षा एवं सामाजिक कार्यक्रमो में भागीदारी की एक दूसरे पर निर्भरता हैं।

α = 5%

d.f. = 1

$X^2_{tab.}$ = 3.84

$X^2_{cal.}$ = 95.33

5% सार्थक्ता स्तर पर X^2 का सारणी मूल्य 3.84 हैं जबकि X^2 का परिकलत मूल्य 95.33 हैं जो सारणी मूल्य से अधिक हैं। अत: हमारी H_O (शुन्य परिकल्पना) अस्वीकार होती हैं और H_1 (वैंकल्पिक परिकल्पना) स्वीकार होती हैं अर्थात निर्दशन से प्राप्त ऑकडो के अनुसार शिक्षा एवं सामाजिक कार्यक्रमों में भागीदारी दोनों में निर्भरता पायी गयी। निष्कर्ष प्राप्त होता है कि शिक्षित व्यक्ति सामाजिक कार्यक्रमों में अधिक भागीदारी निभाते हैं और अशिक्षित व्यक्ति सामाजिक कार्यक्रमों में कम भागीदारी निभाते हैं।

निष्कर्ष – शिक्षा का सामाजिक विकास में योगदान का अध्ययन करने से हमें निष्कर्ष प्राप्त होता है कि शिक्षित व्यक्तियों में सामाजिक विकास का स्तर बढ़ रहा है। शिक्षित व्यक्तिय अशिक्षित व्यक्तियो की अपेक्षा कम भेद भाव करता हैं, मतलब अशिक्षित व्यक्ति अधिक भेदभाव करते हैं। शिक्षित व्यक्ति घर की महिलाओं से अधिक सलाह लेते हैं और अशिक्षित व्यक्ति घर की महिलाओं से कम ही सलाह लेना पसंद करते हैं।शिक्षित व्यक्तियों के घर की महिलाऐें अपना बहुमूल्य मत अनिवार्य रूप से करती हैं किन्तु अशिक्षित व्यक्तियों के घर की महिलाओं में मतदान के प्रति जागरूकता कम ही पायी गयी हैं।शिक्षित व्यक्ति सामाजिक कार्यक्रमों में अधिक भागीदारी लेतेनिभाते हैं और अशिक्षित व्यक्ति सामाजिक कार्यक्रमों में कम भागीदारी हैं।इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि शिक्षा सामाजिक विकास में अधिक योगदान दे रही हैं।

सुझाव – शिक्षा से सामाजिक विकास हेतु निम्न लिखित सुझाव प्रस्तुत हैं।

1. पिछड़े हुए क्षेत्रों में ऐसी संस्थाओं का निर्माण, जो महिला प्रताड़ना, लड़के-लड़कियों को समान शिक्षा, महिला रोजगार एवं महिला सशक्तिकरण पर कार्य कर लोगों का मार्गदर्शन करें।
2. बाल-विवाह, दहेज प्रथा जैसी सामाजिक कुरुतियों को दूर करने के लिए ठोस कदम उठाए जाए।
3. शिक्षण संस्थानों में सामाजिक कुरुतियों को दूर करने संबंधी विषयों पर विद्यार्थियों को कार्यशालाएं करवायी जाए।
4. महिला रोजगार को बढ़ावा देने के लिए महिलाओं को प्रशिक्षित किया जाए व गृह उद्योग एवं कुटीर उद्योग से जोड़ा जाए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Self, S. and Grabowski, R. (2003).Does Education all Levels cause growth? Indians, a case study. Economic of Education Review, 23 (2003) 47-55.
2. Abiodum, L. N. and Iyiola,W. T. (2011). Education and Economic Growth: The Nigerian Experience.Journal of Emerging Trend¢ in Economics and Management science, Vol. 2, No, 3, PP.225-231.
3. Haldar, S. K. and malik, G. (2006). Does Human Capital Cause Economic Growth? a case study of India. International Journal of Economic sciences and Applied research, 3 (1) 7-25.
4. Kumar, S.(2012). Higher Education and Economic Development in India. International Journal of scientific Research Engineering and Technology, Vol. 1, No, 5, PP.045-0

****

विज्ञापन का ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों पर प्रभाव का तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. अरूणा कुसुमाकर *

प्रस्तावना – विज्ञापन हमारे जीवन में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। हमारी जीवन शैली, कार्यशैली, खानपान तथा हमारी मानसिकता को भी विज्ञापन प्रभावित कर रहे हैं। वास्तव में आज हम विज्ञापन के युग में जी रहे हैं। बाजार में हर उत्पाद विज्ञापन के आधार पर चल रहा है। प्रत्येक उत्पादक विज्ञापन के द्वारा उपभोक्ताओं तक अपने उत्पाद पहुँचाने के लिए प्रयत्नशील है, जिससे उपभोक्तावाद दिन-प्रतिदिन बढ़ रहा है। आज की आर्थिक प्रक्रिया में विज्ञापन ने एक विशिष्ट स्थान बना लिया है। विपणन के क्षेत्र में विज्ञापन एक शक्तिशाली औजार के रूप में काम करता है। किसी विक्रेता के लिए अपने ग्राहकों तक अपनी बात कहने और उन्हें समझाने-मनाने का विज्ञापन सबसे सहज माध्यम है। मनुष्य के आर्थिक, सामाजिक राजनीतिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक जीवन पर विज्ञापन का व्यापक प्रभाव पड़ता है।

अध्ययन का उद्देश्य –विज्ञापन का ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों पर प्रभावों का तुलनात्मक अध्ययन करना।

शोध विधि – अध्ययन से सम्बन्धित जानकारी प्राप्त करने के लिए सर्वेक्षणात्मक पद्धति का प्रयोग किया गया है, जिसके लिए साक्षात्कार एवं अनुसूची का प्रयोग किया गया है। अध्ययन का विश्लेषण प्रतिशत के आधार पर किया गया है। शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्रों के तुलनात्मक अध्ययन हेतु इन्दौर जिले के 75 ग्रामीण एवं 75 शहरी उपभोक्ताओं का चयन सुविधा निदर्शन के आधार पर किया गया है।

ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों पर प्रभाव का तुलनात्मक अध्ययन –

विज्ञापन का उपभोक्ता के क्रय व्यवहार पर प्रभाव

विज्ञापनों का प्रभाव	ग्रामीण क्षेत्र		शहरी क्षेत्र	
	आवृति	प्रतिशत	आवृत्ति	प्रतिशत
हाँ	60	80	55	73
नहीं	15	20	20	27
कुल	75	100	75	100

स्रोत – सर्वेक्षण द्वारा प्राप्त तथ्यों के आधार पर

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि 80 प्रतिशत ग्रामीण क्षेत्र के उपभोक्ताओं पर विज्ञापनों का प्रभाव पड़ता है जबकि 73.3 प्रतिशत शहरी उपभोक्ताओं पर विज्ञापनों का प्रभाव पड़ता है। स्पष्ट है कि शहरी क्षेत्र की अपेक्षा ग्रामीण क्षेत्र के उपभोक्ता विज्ञापनों से अधिक प्रभावित होते हैं। वास्तव में विज्ञापन का उपभोक्ता के क्रय व्यवहार पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

विज्ञापन का सामाजिक लाभ

विज्ञापन द्वारा समाज को लाभ	ग्रामीण क्षेत्र		शहरी क्षेत्र	
	आवृति	प्रतिशत	आवृत्ति	प्रतिशत
हाँ	65	87	60	80
नहीं	10	13	15	20
कुल	75	100	75	100

स्रोत – सर्वेक्षण से प्राप्त तथ्यों के आधार पर

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि ग्रामीण क्षेत्रों के 87 प्रतिशत उत्तरदाताओं के अनुसार विज्ञापनों के द्वारा समाज को लाभ प्राप्त होता है जबकि शहरी क्षेत्र के 80 प्रतिशत उत्तारदाताओं के अनुसार विज्ञापनों से समाज लाभान्वित होता है। यद्यपि ग्रामीण एवं शहरी दोनों क्षेत्रों में विज्ञापनों से लाभ प्राप्त होता है किन्तु तुलनात्मक रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में विज्ञापनों से सामाजिक लाभ अधिक है।

विज्ञापन का स्वास्थ्य पर प्रभाव

शिक्षा के स्तर में वृद्धि	ग्रामीण		शहरी	
	आवृत्ति	प्रतिशत	आवृत्ति	प्रतिशत
हाँ	63	84	58	77
नही	12	16	17	23
कुल	75	100	75	100

स्रोत – सर्वेक्षण द्वारा प्राप्त तथ्यों के आधार पर

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि विज्ञापनों के कारण स्वास्थ्य सुधार पर सकारात्मक प्रभाव पड़ा है। ग्रामीण क्षेत्रों पर 84 प्रतिशत सकारात्मक प्रभाव पड़ा है, जबकि शहरी क्षेत्रों पर 77 प्रतिशत सकारात्मक प्रभाव पड़ा है। तुलनात्मक रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य सुधार का प्रतिशत अधिक है।

विज्ञापनों का शिक्षा के स्तर पर प्रभाव

शिक्षा के स्तर में वृद्धि	ग्रामीण		शहरी	
	आवृत्ति	प्रतिशत	आवृत्ति	प्रतिशत
हाँ	60	80	70	93
नही	15	20	05	07
कुल	75	100	75	100

स्रोत – सर्वेक्षण द्वारा प्राप्त तथ्यों के आधार पर

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि विज्ञापनों के कारण शिक्षा के स्तर पर सकारात्मक प्रभाव पड़ा है। ग्रामीण क्षेत्रों में विज्ञापन के कारण शिक्षा के प्रति रूझान बढ़ने से 80 प्रतिशत शिक्षा का स्तर बढ़ा है, जबकि शहरी क्षेत्रों में 93 प्रतिशत शिक्षा का स्तर बढ़ा है। विज्ञापनों के माध्यम से शिक्षण संस्थाएँ अपनी गुणवत्ता उपलब्धियाँ तथा जानकारियों को प्रस्तुत करते हैं। जिससे शिक्षा के स्तर पर सकारात्मक प्रभाव पड़ा है।

विज्ञापन का नैतिक मूल्यों पर प्रभाव

नैतिक मूल्यों	ग्रामीण	शहरी

* प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय संस्कृत महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

का ह्रास	आवृत्ति	प्रतिशत	आवृत्ति	प्रतिशत
हाँ	55	73	65	87
नही	20	27	10	13
कुल	75	100	75	100

स्रोत – सर्वेक्षण द्वारा प्राप्त तथ्यों के आधार पर

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि समाज पर विज्ञापनों का गहरा प्रभाव पड़ता है। ग्रामीण क्षेत्रों में 73 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मानना है कि विज्ञापन से समाज में नैतिक मूल्यों का ह्रास हुआ है, जबकि 87 प्रतिशत शहरी उत्तरदाताओं का मानना है कि विज्ञापन से समाज में नैतिक ह्रास हुआ है। वास्तव में विज्ञापन का मनुष्य की प्रवत्ति पर बहुत प्रभाव पड़ता है।

विज्ञापन का जीवन स्तर पर प्रभाव

जीवन स्तर में सुधार	ग्रामीण		शहरी	
	आवृत्ति	प्रतिशत	आवृत्ति	प्रतिशत
हाँ	62	83	55	73
नहीं	13	17	20	27
कुल	75	100	75	100

स्रोत – सर्वेक्षण द्वारा प्राप्त तथ्यों के आधार पर

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि ग्रामीण क्षेत्र के 83 प्रतिशत उत्तरदाताओं के अनुसार विज्ञापनों के द्वारा व्यक्ति के जीवन स्तर में सुधार हुआ है, जबकि 17 प्रतिशत उत्तरदाताओं के जीवन स्तर में कोई सुधार नही हुआ है। शहरी क्षेत्र के 73 प्रतिशत उत्तरदाताओं के अनुसार विज्ञापन के द्वारा व्यक्ति के जीवन स्तर में सुधार हुआ है जबकि 27 प्रतिशत उत्तरदाताओं के जीवन स्तर में कोई सुधार नहीं हुआ है।

विज्ञापन का अनावश्यक व्यय पर प्रभाव

अनावश्यक व्यय में वृद्धि	ग्रामीण		शहरी	
	आवृत्ति	प्रतिशत	आवृत्ति	प्रतिशत
हाँ	60	80	65	87
नही	15	20	10	13
कुल	75	100	75	100

स्रोत – सर्वेक्षण द्वारा प्राप्त तथ्यों के आधार पर।

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि विज्ञापन के कारण उपभोक्ताओं का अनावश्यक व्यय बढ़ जाता है। विज्ञापनों के लालच में आकर आवश्यकता न होने पर भी व्यक्ति अनावश्यक रूप से वस्तुएँ खरीद लेता है। ग्रामीण क्षेत्र के 80 प्रतिशत उपभोक्ताओं का मानना है कि विज्ञापन के कारण अनावश्यक व्यय बढ़ जाते है, जबकि शहरी क्षेत्र के 87 प्रतिशत उपभोक्ताओं के अनावश्यक व्यय में वृद्धि हो जाती है।

विज्ञापन का वस्तु के मूल्य वृद्धि पर प्रभाव

वस्तु के मूल्य में वृद्धि	ग्रामीण		शहरी	
	आवृत्ति	प्रतिशत	आवृत्ति	प्रतिशत
हाँ	62	83	65	87
नही	13	17	10	13
कुल	75	100	75	100

स्रोत – सर्वेक्षण से प्राप्त तथ्यों के आधार पर

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि विज्ञापन के कारण वस्तु के मूल्य में वृद्धि हो जाती है। ग्रामीण क्षेत्र के 83 प्रतिशत उपभोक्ताओं के अनुसार विज्ञापन के कारण मूल्यों में वृद्धि हो जाती है, जबकि शहरी क्षेत्र के 87 प्रतिशत उपभोक्ताओं के अनुसार विज्ञापन व्यय के कारण वस्तुओं के मूल्यों में वृद्धि हो जाती है।

निष्कर्ष – अध्ययन से स्पष्ट है कि ग्रामीण क्षेत्र के 80 प्रतिशत एवं शहरी क्षेत्र के 73 प्रतिशत उपभोक्ता विज्ञापनों से प्रभावित होकर वस्तुओं एवं सेवाओं का क्रय करते हैं। विज्ञापन न केवल समाज की जीवन शैली, कार्यशैली, खान–पान वरन् समाज की मानसिकता को भी प्रभावित कर रहे है। विज्ञापनों के सकारात्मक सामाजिक प्रभाव के विश्लेषण से ज्ञात हुआ है कि 87 प्रतिशत ग्रामीण उत्तरदाता मानते हैं कि विज्ञापन से समाज को लाभ प्राप्त हुआ है, जबकि 80 प्रतिशत शहरी उत्तरदाताओं का मानना है कि विज्ञापन से समाज को लाभ प्राप्त हुआ है। विज्ञापन से शिक्षा, स्वास्थ्य एवं उपभोक्ता जागरूकता पर भी सकारात्मक प्रभाव पड़ा है। 80 प्रतिशत ग्रामीण एवं 93 प्रतिशत शहरी उत्तरदाताओं का मत है कि विज्ञापन से शिक्षा के स्तर पर सकारात्मक प्रभाव पड़ा है। 84 प्रतिशत ग्रामीण एवं 77 प्रतिशत शहरी उत्तरदाताओं का मत है कि विज्ञापन से स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता में वृद्धि आयी है। विज्ञापन समाज की जीवन शैली में सकारात्मक परिवर्तन लाते हैं। 83 प्रतिशत ग्रामीण एवं 73 प्रतिशत शहरी उत्तरदाताओं के अनुसार विज्ञापन के कारण उनके जीवन स्तर में सुधार हुआ है। अध्ययन से स्पष्ट है कि विज्ञापन सामाजिक उन्नति में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं किन्तु दूसरी ओर विज्ञापन से समाज में अनेक समस्याओं ने जन्म लिया है। विज्ञापन के कारण समाज में उपभोग प्रवृत्ति बढ़ गई है तथा मंहगी वस्तुओं की ओर आकर्षण बढ़ रहा है। जब इच्छाएँ एवं सपने पूरे नहीं होते हैं तो समाज में कुंठाऐं और असंतोष बढ़ता है तथा अपराधों को जन्म होता है। अध्ययन से ज्ञात हुआ है कि विज्ञापन से ग्रामीण क्षेत्र में 73 प्रतिशत तथा 87 प्रतिशत शहरी क्षेत्र में नैतिक मूल्यों का ह्रास हुआ है। विज्ञापन के कारण समाज में भौतिकवाद का विस्तार हुआ है। जिसके कारण ग्रामीण क्षेत्र में 80 प्रतिशत एवं शहरी क्षेत्र में 87 प्रतिशत अनावश्यक व्यय में वृद्धि हुई।

निष्कर्षत: विज्ञापन एवं उपभोक्ता व्यवहार के मध्य सकारात्मक संबंध होता है। विज्ञापन के समाज पर सकारात्मक एवं नकारात्मक दोनों ही प्रभाव पड़ते हैं। बच्चों व युवाओं पर विज्ञापनों के सबसे अधिक दुष्प्रभाव पड़ रहे हैं। विज्ञापनों के कारण उत्पन्न समस्याऐं भारतीय समाज के अस्तित्व को नष्ट करने का कारण बन रही हैं। अत: आज के भ्रामक, असत्य, अश्लील और निरर्थक आवश्यकताओं को बढ़ावा देने वाले तथा सामाजिक जीवन शैली मूल्यों तथा सांस्कृतियों को विकृत करने वाले विज्ञापनों को नियन्त्रित करना अति आवश्यक है। इसके साथ ही युवाओं को जागरूक करके तथा उपभोक्ता जागरूकता का प्रसार करके विज्ञापनों के नकारात्मक प्रभावों को रोका जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. जैन एस.सी. 2013 ''उपभोक्ता व्यवहार कैलाश पुस्तक सदन, भोपाल।
2. गोयल संतोष 2003 जनसंपर्क और विज्ञापन श्री नटराज प्रकाशन, नई दिल्ली।
3. मालवीय कृष्ण कुमार 2008 आधुनिक विज्ञापन, वीणा प्रकाशन, नई दिल्ली।
4. डॉ. शर्मा कुमुद 2006 विज्ञापन की दुनिया, प्रभाव प्रकाशन, बैगलूर।
5. डॉ. उपाध्याय ए.के. 2004 दूरदर्शन विज्ञापन का प्रभाव एवं सामाजिक गतिशीलता सामाजिक सहयोग, त्रैमासिक पत्रिका वर्ष 13 अंक 49

****

पंचायती राज लोकतंत्र का सही स्वरूप - (बड़वानी जिले के संदर्भ में)

डॉ. मीनाक्षी पँवार *

प्रस्तावना - भारतीय संविधान में लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की अवधारणा तथा इसका सजीव एवं साकार स्वरूप पंचायती राज व्यवस्था के माध्यम से विकसित हुआ। पंचायत पंच+आयत दो शब्दों से मिलकर बना है। जिसका अर्थ पाँच सदस्यों की एक ऐसी संस्था है, जो गांव के लोगों द्वारा निर्वाचित होते है। सीधे शब्दों में पंचायते लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण का एक रूप है, जिसमें प्रशासनिक एवं सत्ता के अधिकारों को केन्द्र से गांव को हस्तान्तरित किया गया है।

विश्व के सबसे बड़े लोकतन्त्र भारत में अद्यतन आँकड़ों के अनुसार 2,26,108 ग्राम पंचायते, 5736 पंचायत समितियाँ एवं 457 जिला परिषदें काम कर रही है। जिसमें विभिन्न स्तरीय 34 लाख जनप्रतिनिधि कार्यरत है।

पंचायती राज की परिकल्पना एवं स्वरूप वर्तमान की बात नहीं है अपितु इसका इतिहास वैदिक काल से भी पूर्व का है। वैदिक काल में गाँव प्रशासन तथा न्याय की स्वतन्त्र इकाई माने जाते थे। ऋग्वेद में इसका विवेचन मिलता है। विष्णु तथा मनु पुराणों में गांव में राज्य को सबसे छोटी स्वतंत्र इकाई के रूप में स्वीकार किया गया। कौटिल्य के अर्थशास्त्र में भी इसका विस्तृत विवरण दिया गया है। रामायण काल की जनपदें वर्तमान पंचायतों का ही विकसित रूप थी। बुद्ध तथा जैन काल में ये स्वायत्त संस्थाएँ इतनी प्रभावषाली रही कि इनका भूमि पर भी अधिकार मान्य था। इसके अपने कानून थे जो सामाजिक व्यवस्था के लिए बनाए गए थे।

मध्ययुगीन ग्राम व्यवस्था में जैसे-जैसे गांवों का विस्तार तथा प्रसार होने लगा, गांव की व्यवस्था तथा न्याय का कार्य समूह के स्थान पर चुने हुए कुछ व्यक्तियों द्वारा किया जाने लगा। पंचायते अपने कानून स्वयं बनाती थी तथा गांवों की सम्पूर्ण व्यवस्था उन्हीं के जिम्मे थी।

गुप्तकाल में विदेशी यात्री मेगस्थनीज, ह्यांग सांग तथा फाय्यान ने पंचायतों की गांव व्यवस्था तथा न्याय व्यवस्था का उल्लेख ग्रामीण जन-जीवन में व्याप्त व्यवस्था के संदर्भ में किया है।

ब्रिटिश काल में ब्रिटिश शासकों ने गांवों का प्रशासन पंचायतों से छीनकर अपने अधिकारियों के हाथों में सौंप दिया।

भारत की स्वतन्त्रता के पश्चात् ही पंचायतें प्रकाशन में आयी, जब भारतीय संविधान के अनुच्छेद 40 में प्रान्तीय सरकारों को यह निर्देश दिये गए कि वे पंचायतों का पुनर्गठन करें तथा उन्हें वे सब अधिकार दे, जो उन्हें स्वायत्त शासन की इकाई बनाने के लिए आवश्यक हो।

मध्यप्रदेश राज्य का निर्माण 1 नवम्बर, 1956 को हुआ। पंचायती राज व्यवस्था को एकरूपता प्रदान करने के उद्देश्य से 'मध्यप्रदेश पंचायत अधिनियम 1962' बनाया गया। इसमें ग्राम स्तर पर यग्राम पंचायत' विकास स्तर पर 'जनपद पंचायत' तथा जिला स्तर पर 'जिला पंचायत' बनाने की व्यवस्था की गई। म.प्र. पंचायत अधिनियम 1962में व्यवहार अनुभव और आवश्यकता के अनुसार समय-समय पर अनेक संशोधन किए गए। विशालता के कारण यह अधिनियम वृहद और क्लिष्ट महसूस किया जाने लगा, परिणाम स्वरूप नया अधिनियम 'मध्यप्रदेश पंचायत अधिनियम 1981' बनाया गया।

प्रशासकीय विकेन्द्रीकरण की प्रणाली 1 अप्रैल 1991 से लागू हो जाने के बाद कुछ कार्य सीधे राज्य शासन द्वारा संचालित किए गए और शेष कार्य जिला परिषद अथवा जनपद पंचायतों के द्वारा संचालित किये गए। 16 सितम्बर 1991 को 72 वाँ संशोधन विधेयक प्रस्तावित किया, जो संसद की संयुक्त समिति के विचारार्थ भेजा गया। समिति ने इस पर विचार कर अपना प्रतिवेदन जुलाई 1992 में संसद को भेज दिया। इसके पश्चात् 20 अप्रैल, 1993 को इसे राष्ट्रपति की सहमति प्राप्त हो गयी और पुन: क्रमांकित कर उसी वर्ष 24 अप्रैल को यह संविधान (73 वाँ संसोधन) अधिनियम, 1992 के रूप में लागू हो गया। यह संशोधन संविधान में एक नये भाग-भाग XI को जोड़ता है, जिसमें 12 अनुच्छेद- अनुच्छेद 243 से अनुच्छेद 243 डी तक है तथा यह नयी अनुसूची 11वीं अनुसूची को जोड़ता है।

मध्यप्रदेश पंचायत राज अधिनियम क्रमांक 1 सन् 1994 यह स्थानीय प्रशासन और विकासात्मक क्रियाकलापों में पंचायती राज संस्थाओं की प्रभावी सहभागिता सुनिश्चित करने के उद्देश्य से पंचायतों की स्थापना से संबंधित विधि को समेकित और संशोधित करने हेतु अधिनियम है। 73 वाँ संविधान संशोधन अधिनियम एक मिल का पत्थर है। इस अधिनियम के द्वारा पंचायती राज व्यवस्था को संवैधानिक मान्यता प्राप्त हो गई।

अध्ययन क्षेत्र - अध्ययन क्षेत्र के लिए मध्यप्रदेश के बड़वानी जिले का चयन किया गया है। भौगोलिक स्थिति की दृष्टि से बड़वानी जिला मध्यप्रदेश के अंतिम पश्चिमी भाग में स्थित है। जिले का कुल भौगोलिक क्षेत्रफल 3664.68 हेक्टेयर है। बड़वानी जिले की कुल जनसंख्या 1,385,88 तथा जिले की साक्षरता कका प्रतिशत 50.23 है। यह जिला झाबुआ और बस्तर के बाद तीसरे नम्बर पर आदिवासी बहुल जिला है। यह जिला 9 तहसीलों एवं 7 विकासखण्डों में विभाजित है। जिसमें 417 पंचायतें अवस्थित है।

शोध प्रविधि - इस शोध पत्र को तैयार करने हेतु गांवों के सरपंच, उप सरपंच, जनपद अध्यक्ष, जनपद उपाध्यक्ष तथा गांवों के जनप्रतिनिधियों के सहयोग और साक्षात्कार अनुसूचित के द्वारा निष्कर्ष प्राप्त कर शोध पत्र में प्रस्तुत किए गए है साथ ही इसके संग्रहण के लिए ग्रन्थों एवं पत्र-पत्रिकाओं का उपयोग कर विश्लेषणात्मक पद्धति का सहारा लिया गया है।

अध्ययन का उद्देश्य - ग्रामीण जन समूह को पंचायतों के माध्यम से प्रजातंत्र

* प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शहीद भीमानायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

की शिक्षा देना तथा उन्हें प्रजातंत्र के सक्रिय नागरिक बनाने की क्षमता प्रदान करना है।, इसके लिए विकास का लाभ सबसे पहले उसको मिलना चाहिए जो सबसे कमजोर, सबसे पीछे और सबसे गरीब हो। समाज के पुनर्निमाण और विकास की योजना सबसे नीचे की सीढ़ी से शुरू होना चाहिए। यदि हम चाहते है कि समाज में सबको समान अवसर प्राप्त हो, समान बढ़े, शोषण और गरीबी समाप्त हो तो विकास का काम अंतिम व्यक्ति से ही प्रारंभ करना होगा।

सर्वोदय का भी यही सिद्धांत है और यह कार्य पंचायती-राज व्यवस्था द्वारा ही प्रभावी रूप से सम्पादित किया जा सकता है।

इस शोध पत्र का एक मात्र उद्देश्य यही है कि हम उन बिन्दुओं को प्राप्त कर सके जिससे उन्हें विकास के लिए नई दिशा प्राप्त हो सके।

पंचायती राज लोकतन्त्र का सही स्वरूप – ग्रामसभा से लोकसभा तक पंचायत राज में विकास का कार्यक्रम सक्षमता की दृष्टि से तीन स्तरों पर इस तरह बाँट दिया गया है कि ग्रामीण आर्थिक विकास का दायित्व सरकार से हटकर जनता की त्रि-स्तरीय लोकतांत्रिक संस्थाओं के हाथ में आ गया है जो लोकसभा से ग्राम सभा तक मिस्त्र के पिरामिंड का आकार बनाते हैं। साथ ही पंचायती राज के लोकतात्रिक स्वरूप के बारे में कहा गया है कि 'पंचायती राज में त्रि-स्तरीय तरीका इस तरह अपनाया गया है कि गाँव के समले ग्राम पंचायतें सुलझांएगी, जो उससे सुलझने सम्भव न होंगे, उन्हें पंचायत समिति निपटाएंगी। पंचायत समिति अपने क्षेत्र का काम करेगी, जो उससे न होगा उसे जिला परिषद् के समान रखेगी। जिला परिषद जिले के काम के साथ पंचायत समिति की कठिनाईयों को भी निपटाएगी।'

दूसरी तरफ जिला परिषद् की सलाह पंचायत समितियों को बराबर मिलती रहेगी। पंचायत अपनी सलाह सूचना मंत्रालय को देगी। विधानसभा जो योजना और नीति बनाएगी, जिला परिषद् उन्हें अमल में लाएगी। विधान सभा का लोक सभा से सम्बन्ध है, जो देश के लिए योजना बनाती है। इस प्रकार राज्य सरकार और संसद का सम्बन्ध जुड़ा हआ है। पंचायती राज में ग्रामसभा से विधान सभा और लोकसभा तक विचारों का आदान-प्रदान चलता है।

स्पष्ट है कि उपर्युक्त व्यवस्था से सत्ता का विकेन्द्रीकरण कर दिया गया है और इस मान्यता को साकार रूप दिया गया है कि विकेन्द्रीकरण और लोकतन्त्र में घनिष्ठ सम्बन्ध है तथा दोनों एक-दूसरे के पूरक है। विख्यात राजनीतिशास्त्री ब्राइस ने लिखा है – 'लोकतन्त्र शासन का वह रूप है, जिसमें राज्याधिकार किसी विशेष श्रेणी के लोगों के को नहीं वरन् समूचे विशेष श्रेणी के लोगों को प्रदान किए जाते हैं।' बलवन्तराय मेहता के अनुसार 'लोकतन्त्र की परिकल्पना यह है कि केवल ऊपर से ही शासन न चलाया जाए, बल्कि स्थानीय प्रतिभाओं का विकास किया जाए। यह तभी सम्भव है, जबकि सक्रियता से वे सरकार के कार्यो में भाग ले। यही सत्ता का विकेन्द्रीकरण अथवा पंचायती राज है।'

इस स्थिति को यों भी रख सकते है कि जिस राज्य में सत्ता का जितना अधिक विस्तार होगा, वह उतना ही अधिक लोक कल्याणकारी राज्य होगा। जब सर्व साधारण के पास अधिकार आएंगे तो वे अपना कर्तव्य पालन भी निष्ठा के साथ करेंगे।

विकेन्द्रित व्यवस्था में जनता अपने विकास और कल्याण कार्यो के लिए शासन पर निर्भर न रहकर स्वयं अपने साधनों से कार्य पूरा करने के लिए तत्पर रहेगी। क्योंकि उसके पास सत्ता होगी, अधिकार होंगे और साथ ही उनके उपयोग की शक्ति भी होगी।

पंचायती राज का त्रिस्तरीय ढ़ाँचा –

जिला-स्तरीय ढाँचा
जिला परिषद्

जिला प्रमुख | मुख्य कार्यपालन अधिकारी | उप जिला प्रमुख

अधिकारी वर्ग एवं कर्मचारीगण

ब्लाक स्तरीय ढ़ाँचा
पंचायत समिति

प्रधान | खण्ड विकास अधिकारी | उप प्रधान

अधिकारी वर्ग एवं कर्मचारीगण

पंचायत स्तरीय ढ़ाँचा
ग्राम पंचायत

सरपंच | उप सरपंच | पंचायत सचिव

निष्कर्ष – गांव के सरपंच, उप सरपंच, जनपद अध्यक्ष, उपाध्यक्ष तथा गांवों के जन प्रतिनिधियों के सहयोग और साक्षात्कार अनुसूची के द्वारा जो निष्कर्ष प्राप्त हुए वह निम्न प्रकार से है :-

1. वर्तमान में पंचायती राज ग्रामवासियों की जीवन पद्धति बनता जा रहा है।
2. पंचायती राज व्यवस्था ने देश के राजनीतिकरण तथा आधुनिकीकरण में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।
3. पंचायती चुनावों और पंचायती राज संस्थाओं के कार्यकलापों ने ग्राम्यजीवन में एक नया जागरण पैदा किया है।
4. अब गांव वालों का इस तरह शोषण नहीं किया जा सकता, जिस प्रकार कि पहले महाजन और जमींदार वर्ग करता था।
5. गाँवों में वोट की कीमत समझी जाने लगी है, ग्रामीण जनता की राजनीतिक हिस्सेदारी बढ़ी हैं।
6. लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकृत संस्थाएँ स्वशासन की इकाईयों के रूप में विकसित हो रही है।
7. ग्राम नेतृत्व पनपता जा रहा है।
8. गांवों की अवहेलना करना आसान कार्य नहीं रह गया है।
9. गांवों के पिछड़े वर्ग में चेतना आयी है।
10. गांवों की महिलाएँ भी राजनीति कार्यकलापों में भाग लेने लगी है।
11. गांवों में राजनीतिक जागृति के साथ सामाजिक चेतना भी बढ़ी है।
12. गांवों का जागरण राज्य और राष्ट्र के स्तर की राजनीति पर दबाव डालने में सक्षम हुआ है।
13. जातिगत, धर्मगत और अन्य प्रकार के हित स्थानीय दवाब समूह के रूप में प्रकट होने लगे है।
14. पंयायती राज से ग्रामीण जनता को अपने अधिकारों ओर उत्तरदायित्वों के विषयों में नई जानकारी मिलती है।
15. पंचायती राज नई-नई मांगों को जन्म देकर गांवों को आगे बढ़ा रहा है।
16. अब गांव वालों में आत्मविश्वास की भावना जागृत हुई है।

17. पंचायती राज व्यवस्था में कई आवश्यक संशोधन हुए है, जिससे कल्याण की अनेक स्तरीय योजनाएँ अधिक मजबूत होकर गांवों में संचालित होते देखी जा रही है।
18. वर्तमान में पंचायत जन प्रतिनिधियों में यह भावना अधिक बलवती होते देखी गई है कि वह अपने अधिकारों का सम्पूर्ण दोहन करने में पूर्ण दक्ष हुआ है।
19. पंचायती राज व्यवस्था ने जनजातीय विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।
20. जिला ई-गवर्नेंस के माध्यम से प्रत्येक ग्राम पंचायत में सी.एस.सी. सुविधा मिलना शुरू हो जाएगी। भारत सरकार ने ई-गवर्नेंस में CSC*. (कॉमन सर्विस सेंटर) इंडिया लिमिटेड कम्पनी का गठन किया है। इसके माध्यम से प्रत्येक ग्राम पंचायत में सीएससी. पोर्टल जारी किया है। इसे 52 योजनाओं और अन्य सुविधाओं को ऑनलाईन किया जा रहा है। इससे एमपी ऑन लाईन सेवा को भी जोड़ा है। इसके सहयोग से गांव में 95 तरह की सुविधाओं व योजनाओं का लाभ लेने, ऑनलाईन जानकारी मिलेगी और आवेदन भी किया जा सकेगा।

तहसील के कार्य भी ग्राम पंचायत स्तर पर होंगे। इसमें सीएससी सेंटर खुलने के बाद इसे पूर्ण रूप से इंटरनेट से जोड़ा जाएगा। पंचायत से ही लोगों को लोक सेवा केन्द्र की जानकारी भी उपलब्ध हो सकेगी। यहां से आय, मूल निवासी, जाति प्रमाण पत्र उपलब्ध कराए जा सकेंगे। कृषि सम्बन्धित दस्तावेजों को भी यहीं से किसानों को उपलब्ध कराया जाएगा।

उपर्युक्त जिला ई-गवर्नेंस के माध्यम से ग्राम पंचायतों में सुविधा की बात को लेकर ग्रामीणों में चर्चा करने पर देखा कि ग्रामवासियों में इस सुविधा को लेकर काफी उत्साह था।

21. पंचायती राज का प्रारम्भ जनता में आत्म-सहायता की भावना पैदा करने, विकास कार्यक्रमों में जनता को भाग लेने का अवसर प्रदान करने तथा उनमें लोकतांत्रिक विचारों का प्रयास करने हेतु किया गया था, जिसमें पंचायती राज पूर्ण रूप से सफल हुआ है।

यदि हमें पंचायती राज संस्थाओं, अपने ग्रामीणजनों तथा उनके अपने छिपे हुए गुणों का उपयोग करने की क्षमता में विश्वास है तो निष्चित रूप से हमें सफलता मिलेगी। लोकतंत्र में पंचायती राज का महत्व और भी अधिक है क्योंकि राज्य पंचायतों के माध्यम से ही अपने बढ़े हुए उत्तरदायित्वों का निर्वाह करता हैं।

पंचायती राज लोकतांत्रिक देशों के भविष्य के लिए एक महत्वपूर्ण शक्ति है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. के.के. शर्मा, भारत में पंचायती राज कॉलेज बुक डिपो, जयपुर, 2009
2. डॉ. मधु राठौड़, पंचायती राज और महिला विकास, पोइन्टर पब्लिषर्स जयपुर, 2010
3. डॉ. रश्मि श्रीवास्तव, म.प्र. शासन एवं राजनीति, कॉलेज बुक डिपों, जयपुर, 2010
4. विद्यासागर शर्मा, पंचायती राज- भारत में पंचायती प्रणाली के महत्व, इतिहास और वर्तमान स्वरूप का विवेचन, हिन्दुस्तानी एकेडेमी, उ.प्र. इलाहाबाद, 1963
5. नई दुनिया समाचार पत्र।

***सी.एस.सी. (CSC) -** (अब ग्रामीणों को सभी ऑन लाईन सुविधाएँ एक ही जगह कॉमन सर्विस सेन्टर (उडउ) के माध्यम से दी जाएगी। इसी पोर्टल पर ग्रामीणों को पेनकार्ड, आधारकार्ड, पासपोर्ट, टी.वी रिचार्ज, अन्य प्रमाण पत्रों को बनवाने की सुविधा दी जाएगी। इसके साथ ही विद्यार्थियों को कम्प्यूटर कोर्स, टेलीफिल्म, एनिमेशन कोर्स सहित अन्य विश्वविद्यालयों के ऑनलाईन ओवदन भी भरे जा सकेंगे।)

साभार - नई दुनिया स.प, ग्रामीणों के शासन की योजनाओं की जानकारी देते पूर्व भाजपा जिलाध्यक्ष।

****

भारत में न्यायिक विधायन की बढ़ती प्रवृत्ति का परिसंघात्मक स्वरूप में प्रभाव

विकास कुमार दीक्षित *

शोध सारांश - (भारतीय परिसंधीय व्यवस्था तत्कालीन समय, परिस्थितियों की देन है, जो कि भारत की विविधता, विषमता, अनेकता को एकरूपता, (यूनीफर्मिटी), समानता तथा एकता (इण्टीग्रिटी) में संयोजित करती है। भारत की शीर्ष न्यायपालिका, दिन-प्रतिदिन अपनी विधायन प्रवृत्ति को बढ़ा रही है जिससे संघवाद के सिद्धान्त को आघात पहुँच रहा है तथा यह प्रकृति शक्ति पृथक्करण सिद्धान्त के भी प्रतिकूल है। मद्रास उच्च न्यायालय के राष्ट्रगीत (बंदेमातरम्) तथा सर्वोच्च न्यायालय के राष्ट्रगान सम्बन्धी निर्देशों ने 'परिसंघात्मकता' पर अतिशयोक्ति पूर्ण सक्रियता दिखाकर न्यायिक विधायन को प्रोत्साहित किया है, वहीं विधायिका के विधायन यथा 'राष्ट्रीय न्यायिक नियुक्ति आयोग, 2014' को शून्य घोषित कर अलोकतांत्रिक कोलॉजियम व्यवस्था को पुनर्जीवित किया है जो 'परिसंधीय व्यवस्था' तथा संसदीय लोकतंत्र पर नकारात्मक प्रभाव डाल रहा है)

प्रस्तावना - भारतीय संविधान का अनुच्छेद प्रथम भारतीय परिसंघवाद की आधारशिला है, जिसके अनुसार 'भारत राज्यों का संघ' घोषित किया गया है। प्राय: विद्वान भारतीय परिसंघात्मकता को लेकर विभिन्न मत-मतान्तर देते रहे यथा डॉ अम्बेडकर ने इस सम्बन्ध में कहा था कि भारत की परिसंघीय व्यवस्था ढोहरे राजतंत्र की स्थापना करती है। जिसमें परिसंघ में केन्द्र और परिसर में राज्य संविधान द्धारा स्थापित सीमाओं के अन्तर्गत संप्रभु की शक्तियों से निहित किए गए हैं। [1] इस सम्बन्ध में संविधान सभा में टी0टी0कृष्णामाचारी, [2] के संथानम, [3] एवं एन0वी0गाडगिल [4] ने भारतीय संविधान को परिसंघीय माना हैं। पाश्चात्य विद्वानों यथा के0सी0व्हीयर ने भारतीय परिसंघात्मक व्यवस्था को कनाडा की परिसंघीय व्यवस्था के अनुरूप आभासिक परिसंघ बताया वहीं सर आइवर जेनिंग्स ने 'केन्द्रीय प्रवृत्तियों वाला परिसंघात्मक' [5] राष्ट्र का नाम प्रदान किया है। परिसंघात्मक व्यवस्था को आत्मसात करने के कारण के विषय में डॉ0भीम राव अम्बेडकर ने सत्य ही कहा है कि यह 'समय एवं परिस्थितियों' की देन है। [6]

भारतीय संघ वास्तव में, न किसी संधि का प्रतीक है और न ही समझौता का परिणाम वरन् विविधताओं, विषमताओं तथा अनेकतओं को एकरूपता, समानता तथा एकता में परिणित करने वाला समायोजन है। यह पारंपरिक परिसंघीय व्यवस्था से न केवल भिन्न है, बल्कि अलग है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात क्षेत्रीय असमानता, भाषायी, विभिन्नता, नस्लीय असमानता, भाषायी विविधता को स्वयतत्ता देते हुए एकता एवं अखण्डता की अवधारणा को मूर्ति रूप देने भारतीय संघ का जन्म हुआ। भारतीय संघ में एकीकृत (यूनीफाइड) न्यायपालिका की व्यवस्था है। संविधान निर्माता, स्वतंत्र एवं निष्पक्ष न्यायपालिका की स्थापना करना चाहते थे। अत: उन्होंने इसे मौलिक अधिकारों का पोषक तथा संविधान का संरक्षक बनाया।

भारतीय सर्वोच्च न्यायालय न्यायपालिका का शीर्ष स्तम्भ है तथा उच्च न्यायालयों के साथ यह न केवल मौलिक अधिकारों का संरक्षण करता है बल्कि अभिलेख न्यायालय के कारण विधायन की प्रवृत्ति में तत्पर है। अल्लादि के अय्यर के अनुसार 'भारतीय उच्चतम न्यायालय विश्व के किसी भी परिसंघीय शासन व्यवस्था वाले राष्ट्रों के उच्चतम न्यायालय से अधिक शक्तिशाली है' [7]

माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अपने विनिश्चयों यथा आटोमोबाइल्स प्रति राजस्थान राज्य [8] के बाद में भारत को परिसंघ माना है तथा केशवानंद भारतीय [9] के बाद में इसे (परिसंघात्मकता) को मूल ढॉचे में वर्णित किया है। वास्तव में 'परिसंघात्मकता' स्वयत्तता के सिद्धान्त पर कार्य करती है। इसकी अवधारणा सीमित सरकार का वृहत्तम शासन है, उक्त सिद्धान्त को वर्तमान प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने 2014 के आम चुनावों के दौरान जनसभाओं में खूब प्रचारित किया था। एकीकृत न्यायपालिका, संघवाद के सिद्धान्त को गौण करती है। तथापि हमारा संविधान एकीकृत न्यायपालिका को संघीय न्यायपालिका के स्थान पर अपनाता है। स्वतंत्र न्यायपालिका, 'संविधानवाद' की संरक्षिका तथा 'संघवाद' की प्रहरी है यह केन्द्र तथा राज्यों के बीच अम्पायर या रेफ्री की तरह व्यवहार करती परन्तु न्यायिक विधायन कार्य सर्वथा वर्जित है तथा निर्वचन (इण्टरप्रेटेशन) न्यायपालिका का मौलिक कार्य है।

भारतीय सर्वोच्च न्यायालय में, जस्टिस पी0एन0 भगवती से लेकर जस्टिस जे0एस0खेहर तक का कार्यकाल कुछ एक अपवादों को छोड़कर इतिहास में न्यायिक सक्रियता या अति सक्रियता का काल खण्ड जाना जाएगा। इस कालखण्ड में न्यायालयों (सर्वोच्च एवं उच्च न्यायालय) ने न केवल विधायन किया वरन् नीति निर्धारण में भी बढ-चढ़कर रूचि दिखाई। और यहीं से प्रारम्भ होता है, न्यायपालिका का कार्यपालिका तथा व्यवस्थापिका के साथ वैनमस्य एवं अन्तर्विभागीय कटुता। आज भारतीय न्यायपालिका का 'न्यायिक सक्रियता' का दर्शन अमेरिकीय पुनर्विलोकन से कोसों आगे जा चुका है, जो परिसंघात्मक संसदीय लोकतांत्रिक व्यवस्था के लिए आघात माना जा सकता है।

भारतीय न्यायपालिका के दो तात्कालिक साहसी विनिश्चयों यथा सर्वोच्च न्यायालय का अभिमत कि सभी सिनेमा घरों में फिल्म के प्रदर्शन से पूर्व राष्ट्रगान को बजाना व तिरंगा प्रदर्शित करना अनिवार्य है [10] तथा मद्रास उच्च न्यायालय का विनिश्चय कि सभी स्कूलो, कालेजों,सरकारी,

* शोधार्थी (राजनीति विज्ञान) रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत

अर्द्धसरकारी, निजी प्रतिष्ठानों में राष्ट्रगीत(वंदेमातरम) का गाना अनिवार्य है [11] ने नवीन बहस को जन्म दिया है कि उक्त विनिश्चय भारत के संविधान की परिसंघीय व्यवस्था तथा राज्यों की स्वयत्तता का अतिक्रमण तो नहीं है। यह कार्य नीति निर्धारक कार्य है तथा कार्यपालिका के क्षेत्र का अतिलंघन है, न्यायिक विधायन के कारण व्यवस्थापिका के क्षेत्राधिकार का अतिक्रमण है एवं परिसंघात्मकता को न्यून करने वाला कारक है। अति विनम्रता के साथ निवेदन है कि उक्त दोनों विनिश्चिय न्यायिक प्रकृति के नहीं है।

यद्यपि राष्ट्रवाद किसी भी देश की पहचान, एकता एवं अखण्डता को पोषण देने वाला कारक समझा जा सकता है। परन्तु परिसंघीय व्यवस्था 'सीमित राष्ट्रवाद' के दर्शन को लेकर चलती है। क्षेत्रीय स्वयत्तता, तथा भाषायी स्वतंत्रता परिसंघीय व्यवस्था के स्तम्भ है। अति विनम्रता के साथ निवेदन है कि उक्त कार्य (दोनों उपरोक्त विनिश्चय) नि:संदेह राष्ट्रवाद के संपोषक है परन्तु यदि यह कार्य प्रतिनिधियों पर छोड़ा जाता तो सम्भवत: परिसंघीय संसदात्मक, प्रतिनिधायी लोकतंत्रात्मक शासन प्रणाली के लिए अधिक श्रेय कर होता।

'कानून व्यवस्था' को राज्य सूची (7वीं अनुसूची के अन्तर्गत) में वर्णित है। 'कानून व्यवस्था' से आशय विधि का शासन है तथा इसमें अपराधों की रोकथाम तथा विधि के अतिलंघन पर दण्ड देना भी सम्मिलित है। 'कानून व्यवस्था' में अन्वेषण, जाँच एवं विचारण सभी पहलू सम्मिलित है। राज्य के परिक्षेत्र में कारित अपराधों को दण्ड देने का कार्य उसी राज्य का है, तथा अपराधों का अन्वेषण राज्य नियंत्रित एजेंसी के द्वारा ही सम्भव है, अन्यथा राज्य के स्वायत्तता तथा राष्ट्र के परिसंघात्मकता का कोई उद्देश्य नहीं है।

राज्य सहमति का सिद्धान्त – भारत में संघीय व्यवस्था अपनाए जाने के कारण, राज्य में कारित किसी भी अपराध का अन्वेषण केन्द्रीय अभिकरण द्वारा कराए जाने हेतु सम्बन्धित राज्य या केन्द्र शासित प्रदेश की सहमति की आवश्यकता होती है। सर्वप्रथम इस सिद्धान्त को मूर्ति रूप में, दिल्ली पुलिस स्पेशल स्टेब्लिसमेण्ट एक्ट 1946 की धारा 6 [12] में होती है। इसके अनुसार बिना राज्य की सहमति के इस विधि के अन्तर्गत कोई भी केन्द्रीय एजेंसी अन्वेषण नहीं कर सकती है। भारत में सी0बी0आई0 इसी कानून से संचालित होती है।

भारतीय सर्वोच्च न्यायालय ने अपने कई विनिश्चयों में इस अहम परिसंघीय व्यवस्था को दर किनार किया है। यद्यपि उक्त विनिश्चय, पूर्ण न्याय (द कन्सेप्ट ऑफ कम्पलीट जस्टिस) के नैसर्गिक न्याय सिद्धान्त की दृष्टि से सत्य प्रतीत होते हो परन्तु परिसंघात्मकता ऐसे विनिश्चयों से अवश्य कुँठित होती है। विशाल जीत प्रति भारत संघ के वाद में मानवतस्करी तथा बाल यौन अपराधों, की जाँच हेतु माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने सी0बी0आई0 को निर्देशित किया तथा विनिश्चिय दिया कि 'गम्भीर समाज विरोधी अपराधों ' की सी0बी0आई0 जाँच बिना राज्य की सहमति के बिना किये जा सकते है। उक्त विनिश्चय की अभिपुष्टि स्वयं उच्चतम न्यायालय ने परमजीत कौर बनाम् पंजाब राज्य के वाद में किया।

नंदीग्राम पुलिस फायरिंग, की सी0बी0आई0 जाँच हेतु एक याचिका की सुनवाई के दौरान माननीय कलकत्ता उच्च न्यायालय ने राज्य अन्वेषण एजेंसियों के हाथ से मामला वापस लेकर सी0बी0आई0 अन्वेषण हेतु आदेश पारित किया था, इस मामले में राज्य सहमति के सिद्धान्त की उपेक्षा की गयी थी, इस विनिश्चय को माननीय सर्वोच्च न्यायालय में चुनौती दी गयी, सुनवाई हेतु माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने एक संविधान पीठ का गठन किया जिसमें तत्कालीन मुख्य न्यायाधीश के0जी0बालाकृष्णन, न्यायमूर्ति आर0वी0रवीन्द्रन, न्यायमूर्ति डी0के0जैन, न्यायमूर्ति पी0सदाशिवम तथा न्यायमूर्ति जे0एस0पंचाल की खण्डपीठ ने निर्णय दिया कि जहाँ राज्य एजेंसियो की भावना संदेहस्पद हो वहाँ बिना 'राज्य की सहमति' के केन्द्रीय एजेंसी को अन्वेषण हेतु आदेश करना सर्वथा उचित है। परन्तु अतिविमन्रता के साथ निवेदन है उक्त विनिश्चिय भी परिसंघात्मकता के सिद्धान्त को कुँठित करता है।

राजनीतिक 'भ्रष्टाचार' पर भी माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने 'राज्य सहमति' के सिद्धान्त की अवधारणा को उपेक्षित किया है। इस परिप्रेक्ष्य में उ0प्र0 के पूर्व मुख्यमंत्री मुलायम सिंह यादव व उनके पुत्र पूर्व मुख्यमंत्री अखिलेश यादव तथा अन्य परिवारजनों के आय से अधिक सम्पत्ति [13] वाद को रखा जा सकता है। इस मामले में एक अधिवक्ता विश्वनाथ चतुर्वेदी ने एक याचिका माननीय उच्चतम न्यायालय में योजित की कि यादव परिवार के पास आय के ज्ञात स्त्रोंतो से कहीं अधिक सम्पत्ति है तथा अनेको बेनामी सम्पत्तियाँ है की जाँच की जाए, प्रस्तुत मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने सी0बी0आई0 को अन्वेषण कर प्रथम दृष्टया रिपोर्ट दाखिल करने का आदेश दिया इस वाद में भी राज्य सहमति के सिद्धान्त की उपेक्षा की गयी तथा 'राजनीतिक भ्रष्टाचार' पर अंकुश लगाने हेतु 'संघवाद' के सिद्धान्त के अवहेलना की गयी।

हिमाचल प्रदेश के मुख्यमंत्री श्री वीरभद्र सिंह की आय से अधिक सम्पत्ति के वाद पर सी0बी0आई0 जाँच का विरोध करते हुए उनके वकील श्री कपिल सिब्बल ने राज्य सहमति के सिद्धान्त की आवश्यकता पर जोर देते हुए माननीय उच्चतम न्यायालय में कहा कि केन्द्रीय एजेंसी को राज्य के परिधि के अन्तर्गत किए गए अपराधों का अन्वेषण करने का कोई अधिकार नहीं हे। अन्यथा की स्थिति में देश के संघीय ढाँचे के प्रतिकूल होगा। यद्यपि ऐसे मामले जहाँ राज्य का मुख्यमंत्री स्वयं अपराधी मुख्यमंत्री से वहाँ निष्पक्ष जाँच सम्भव ही नहीं हैं।

यद्यपि माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अपने विनिश्चयों स्वयं के विनिश्चय बी0आर0कपूर बनाम् तमिलनाडु राज्य [14] के वाद में स्पष्ट तौर पर कहा कि संवैधानिक मत, जनमत पर अविभावी होगा, इस मामले में दोष सिद्ध जयललिता के मुख्यमंत्री बनाने के राज्य पाल के निर्णय को सर्वोच्च न्यायालय ने शून्य घोषित कर दिया था। सर्वोच्च न्यायालय ने स्वयं परिसंघीय व्यवस्था में संवैधानिक व्यवस्था माना है। परन्तु दिन-प्रतिदिन राज्य सूची के विषयों पर बढ़ती न्यायिक सक्रियता एक चिंतन का विषय अवश्य है, न्यायिक कर्ण्यमता की बढ़ती प्रवृत्ति ने 'परिसंचालक सिद्धान्त' पर आघात अवश्य किया है। इसके दो कारण है प्रथमत: हमने एकीकृत न्याय पालिका अपनायी द्वितीय भारतीय संविधान के कार्यपालिका तथा व्यवस्थापिका का ह्रास, उक्त दोनों अंगों के समुचित ढंग से अपने कर्तव्यों का निर्वहन करने के कारण अति सक्रिय भूमिका हेतु न्यायपालिका को आगे आना पड़ा।

भारतीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा न्यायिक नियुक्ति आयोग 2014 (99वाँ संविधान संशोधन) को शून्य घोषित करना [15] तथा अलोकतांत्रिक कोलॉजियम व्यवस्था को पुनर्जीवित करना, वास्तवत में लोकतांत्रिक व्यवस्था पर भी आक्षेप है। सम्भवत: दुनिया की ऐसी कोई भी व्यवस्था अथवा संस्था इस लोकतांत्रिक युग में अस्तित्व में न होगी जो स्वयं को स्वयं के द्वारा नियुक्त करती हो।

निष्कर्ष – न्यायपालिका की अतिसक्रियता को देखते हुए पूर्व राष्ट्रपति प्रणव

मुखर्जी ने बिल्कुल सही कहा कि 'लोकतंत्र में हमारे सभी अंगो को अपनी सीमाओं में कार्य करना चाहिए तथा अन्य अंगों के कार्य क्षेत्र में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए [16] श्री मुखर्जी ने न्यायपालिका को नसीहत दी कि हमारी लोकतांत्रिक राजनीतिक व्यवस्था को संविधान सर्वोच्च है तथा शासन के तीनों अंगो यथा कार्यपालिका, व्यवस्थापिका व न्यायपालिका को अपनी सीमा में कार्य करना चाहिए तथा शक्ति पृथक्करण के सिद्धान्त का सम्मान करना चाहिए। श्री मुखर्जी ने आगे कहा कि न्य ायपालिका को आत्म अनुशासन तथा स्वयं द्वारा अधिरोपित अवरोधों को लागू करना चाहिए ताकि न्यायिक सक्रियता, न्यायिक स्वेच्छा चारिता में न बदल सके।

'परिसंघवाद' का सम्मान, संविधान का सम्मान है, अन्य पिछड़ा वर्ग आयोग को संवैधानिक दर्जा प्रदान करने के दौरान भीड़ जनित हिंसा के प्रश्न पर माननीय संसद सदस्यों के राज्य सभा में एक राय से राज्यों को इस पर कार्यवाही करने के लिए कहा गया तथा कानून व्यवस्था के प्रश्न पर केन्द्र ने तटस्थता दिखाई क्योंकि यही परिसंघवाद का आधार है। न्यायिक विधायन की प्रवृत्ति को सुधांशु रंजन ने, जूडोक्रेसी'[17] कहा है, न्यायिक विधायन 'संविधानवाद' की अवधारणा पर प्रहार है, परिसंघवाद का ह्रास है तथा लोकतंत्र के सिद्धान्त पर कुठाराघात है अतः अतिविनम्रता के साथ निवेदन है कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय एवं उच्च न्यायालयों को इस प्रश्न पर आत्म मंथन अवश्य करना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सी0ए0डी0 8, एल0, पृष्ठ 31
2. तत्रैव पृष्ठ 1132
3. तत्रैव पृष्ठ 718
4. के0सी0व्हीअर मार्डन कान्सटीट्यूशन, 1966 पृष्ठ 21,
5. आइवर जेनिंग्स 'समकरैक्टरिस्टक्स ऑफ इण्डियन कांस्टीट्यूशन' पृष्ठ 1
6. डॉ0भीम राव अम्बेडकर का भारतीय संविधान सभा में भाषण दिनांक 25.11.1949 (संविधान एवं संविधान सभा) 1990 लोक सभा सचिवालय द्वारा मुद्रित) पृष्ठ 176
7. अल्लादि के अय्यर 'द कांस्टीट्यूशन एण्ड फण्डामेण्टल राइट्स ' 6:×1 (आल) 835
8. ए0आई0आर0 1962 सु0को01406
9. केशवानंद भारतीय बनाम् भारत संघ, ए0आई0आर0 1973 सु0को0 1461
10. 25 जुलाई 2017 (दि हिन्दू 26 जुलाई 2017)
11. 2 दिसम्बर 2016 (इण्डियन एक्सप्रेस 3 दिसम्बर 2016)
12. 1946 का 25वाँ अधिनियम (19 नवम्बर 1946)
13. विश्वनाथ चतुर्वेदी प्रति भारत संघ एवं अन्य, रिट पिटीशन (सिविल 633 सन् 2005)
14. सुप्रीम कोर्ट केसेज, वॉल्यूम 7 पृष्ठ 2 (14 अक्टबूर 2001)
15. सुप्रीम कोर्ट एडवोकेट्स ऑन रिकार्ड बनाम् भारत संघ (सु0को0 रिट पिटीशन सिविल) 13 सन् 2015 (16 दिसम्बर 2015)
16. 16 अप्रैल 2017 द हिन्दू
17. सुधांशु रंजन जस्टिस, जूडोक्रेसी एण्ड डेमोक्रेसी इन इण्डिया बाउण्ड्रीज एण्ड ब्रीचेज रट्लेज इण्डिया 2012

****

नवीकरणीय ऊर्जा - भारत के संदर्भ में एक विवेचना

डॉ. समीना खान खटक *

प्रस्तावना - नवीकरणीय ऊर्जा अर्थात भविष्य को नुकसान पहुँचाएं बिना वर्तमान की ऊर्जा की आवश्यकताओं को पूरा करने वाली ऊर्जा के स्त्रोतो का ही नाम हैं - नवीकरणीय ऊर्जा। इस ऊर्जा के स्त्रोतो में सौर, पवन, हाइड्रोजन, जैव, भू-उष्मा, तरंग और ज्वार द्वारा उत्पन्न ऊर्जा शामिल है। हमारे देश में जीवाश्म ईंधन की सीमित उपलब्धता और ग्लोबल वार्मिंग के खतरों को देखते हुये नये व ऐसे ऊर्जा स्त्रोतों को तलाशने की आवश्यकता महसूस हुई जो ईको फ्रेन्डली होने के साथ-साथ भविष्य की ऊर्जा की जरूरतों को पूरा कर सके। विगत करीब एक दशक से देश में यह प्रयास किये जा रहे है कि जीवाश्म ईंधन पर निर्भरता को कम किया जाये क्योंकि इसका सीधा संबंध कार्बन उत्सर्जन से है, जो पर्यावरण के लिये एक बडा खतरा है। नवीकरणीय ऊर्जा के स्त्रोतों को बढ़ावा देने से पर्यावरण संरक्षण के साथ - साथ विदेशी मुद्रा की भी बचत होगी।

शहरीकरण की रफ्तार बढ़ने और ग्रामीण इलाकों में सरकार द्वारा विकास की गति को अधिक से अधिक तीव्र करने के प्रयासो के चलते भविष्य में शहरी और ग्रामीण दोनों ही इलाकों में ऊर्जा की अधिक आवश्यकता महसूस की जाने लगी है। वर्तमान में भारत में प्रति व्यक्ति विद्युत खपत 900 यूनिट प्रतिवर्ष है, जबकि विश्व में औसत खपत लगभग 2600 यूनिट प्रति व्यक्ति प्रतिवर्ष है। एक अनुमान के अनुसार भारत में अगले एक दशक में प्रति व्यक्ति विद्युत खपत 2000 यूनिट प्रतिवर्ष को पार कर जाएगी। अत: हमें सस्ती, इको फ्रेन्डली ऊर्जा हेतु जीवाश्म ईंधन की निर्भरता समाप्त करनी होगी। इस दिशा में केन्द्र सरकार ने नवीन एवं नवीकरणीय ऊर्जा मंत्रालय की स्थापना की है। एक रोड मेप तैयार किया गया है, जिसमें 2030 तक 40 प्रतिशत ऊर्जा का उत्पादन जीवाश्म रहित ईंधन से किया जा सके ताकि कार्बन उत्सर्जन की समस्या से भी निपटा जा सके। नवीकरणीय ऊर्जा क्षमता का लक्ष्य 2022 तक 175 गीगावाट, रखा गया है। इसमें सौर ऊर्जा से 100 गीगावाट, पवन ऊर्जा से 60 गीगावाट, जैवशक्ति से 10 गीगावाट और लघु पनविद्युत से 5 गीगावाट ऊर्जा उत्पादन शामिल है। यदि यह महत्वाकांक्षी लक्ष्य प्राप्त होता है, तो भारत अनेक विकसित देशो को पीछे छोड़ते हुये विश्व के सबसे बडे हरित ऊर्जा उत्पादको में से एक बन जायेगा।

देश में ऊर्जा उत्पादन बढ़ाने के साथ - साथ सौर ऊर्जा उत्पादन में देश को विश्व के पांच शीर्ष देशों की श्रेणी में लाने के प्रयास किए जा रहे है। हमारे देश में सौर ऊर्जा की प्रति यूनिट उत्पादन की लागत 2014 में कोयला आधारित विद्युत की तुलना में 1.5 गुना कम हो गई है। भारत में सोलर पावर मिशन को बढ़ावा देने की दिशा में वर्ष 2010 में जवाहरलाल नेहरू राष्ट्रीय सोलर मिशन लान्च किया गया था। जिसके तहत 2022 तक देश में 20,000 मेगावाट विद्युत उत्पादन का लक्ष्य रखा गया था। वर्तमान सरकार ने इस लक्ष्य को एक लाख मेगावाट कर दिया है।

हाल ही में सरकार ने सोलर शहरो के विकास की भी महत्वाकांक्षी योजना की घोषणा की है जिसके तहत देश में ऐसे शहरों का विकास किया जाएगा, जो केवल सौर ऊर्जा से ही संचालित होगे। इस दिशा में नवीन और नवीकरणीय ऊर्जा मंत्रालय ने राष्ट्रीय राजधानी सहित 50 शहरो को सौर शहरो के रूप में विकसित करने की मंजुरी दे दी है।

हालाकि छोटे स्तर पर सौर ऊर्जा से जो काम हो रहे है, वह बड़े उल्लेखनीय है। मध्यप्रदेश में एक नहीं कई गांव ऐसे हैं, जो घर - घर में सौर ऊर्जा और सोलर लैम्प द्वारा प्रकाश पहुंचा रहा है। बैतुल जिले मे कैसई पहला गांव था जहां सफलतापूर्वक सौर पैनलों का उपयोग करके घर - घर में बिजली पहुंचाई गई। पिछले दिनों मध्यप्रदेश के शहडोल, अनुपपुर और उमरिया जिलों में एक नई पहल शुरू की गई। आई आई टी, मुम्बई की सहायता से छात्रों को ग्रामीण इलाको में सोलर लैम्प वितरित किए गए, जिससे एक पूरा कमरा रात में रोशन किया जा सकता है और इसकी कीमत हैं मात्र 500/। अब मध्यप्रदेश सरकार हर गांव में सोलर पावर स्टेशन बनाने की योजना पर अमल करने जा रही है। जिससे दूर-दराज के गांवो में सस्ती व स्वच्छ बिजली पहुँचाई जा सके। मध्यप्रदेश की तरह दुसरे राज्य भी हरित ऊर्जा की इस मुहिम को आगे बढ़ाने में अपने - अपने स्तर पर प्रयासरत है।

गुजरात ने इस दिशा में बड़ी सफलता प्राप्त की है। इसी प्रकार राजस्थान के रेगिस्तानी और सीमावर्ती इलाको में बदलाव देखा जा सकता है। राजस्थान ने सौर ऊर्जा उत्पादन में गुजरात को पीछे छोडते हुऐ गुजरात के 1000 मेगावाट के उत्पादन से आगे निकलकर 1200 मेगावाट के आसपास पहुंच गया है। पुरा विश्व इन दिनों वैकल्पिक ऊर्जा के तौर - तरीके तलाशने में लगा है, ऐसे में सौर ऊर्जा भारत जैसे देश में भविष्य की ऊर्जा की मांग को पुरा करने में अत्यन्त सस्ता, सुलभ व स्वच्छ विकल्प बनाया जा सकता है।

बिहार जैसे पिछडे राज्यों में सौर ऊर्जा का अपना महत्व है। बिहार का घराई गांव राज्य का पहला सौर ऊर्जा की रोशनी से नहाया हुआ गांव है। इस गांव के पास अपना पावर ग्रिड है। गांव के हर रास्ते व गली में सोलर लाईट के खंभे हे। जिन पर दूधिया रोशनी देने वाले बल्ब लगे है। गांव में 100 किलोवाट सौर ऊर्जा का उत्पादन हो रहा है। 70 किलोवाट बिजली घरेलू उपयोग हेतु और 30 किलोवाट सिंचाई हेतु उपयोग में ली जाती है। इस प्रकार के उदाहरण आजकल दूसरे राज्यो में भी देखने को मिल जाते हैं फिर वो मध्यप्रदेश, उत्तरप्रदेश, राजस्थान, गुजरात, हरियाणा जैसे उत्तर भारत के राज्य हो या दक्षिण भारत के कर्नाटक, आन्ध्रप्रदेश, तमिलनाडु जैसे राज्य हो।

राज्य सभा में नवीन और नवीकरणीय ऊर्जा मंत्री श्री पियुष गोयल ने

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय विक्रम महाविद्यालय, खाचरौद, जिला - उज्जैन (म.प्र.) भारत

एक प्रश्न के उत्तर में जानकारी दी कि दिसम्बर 2015 के आरम्भ तक देश भर में कुल मिलाकर एक लाख से अधिक सौर ऊर्जा आधारित पम्प आवंटित किए गए हैं जिसमे से 30 हजार से अधिक चालू भी किये जा चुके है। श्री गोयल के अनुसार कृषि में देश भर में करीब दो अरब लीटर डीजल का उपयोग होता है। एक लाख सौर पम्पों के चालू होने पर इसमें काफी कमी आ जाएगी। इसके अतिरिक्त केन्द्र सरकार ने एक योजना और बनाई है, जिसके अंतर्गत राज्य सरकारों के सामने 7-10 वर्ष की वार्षिक किस्त चुकाने का विकल्प दिया गया हैं जबकी फौरी तौर पर केन्द्र सरकार की कम्पन्नी एनर्जी एफीशिंयन्सी सर्विसेज लि. (EESC) वित्तिय सहायता दे सकती है। केन्द्र सरकार की इस महत्वकांक्षी योजना से यदि सभी राज्य सरकारे जुड़ जाए तो कृषि के कार्यो में डीजल पर निर्भरता समाप्त हो सकती है जिससे पर्यावरण हितेषी वातावरण बनाने में सहायता मिलेगी।

नवीकरणीय ऊर्जा का एक महत्त्वपूर्ण स्त्रोत है - पवन ऊर्जा। भारत में यह एक नया प्रयोग होने के उपरान्त भी इस क्षेत्र में हमारा देश कुल उत्पादन क्षमता और उत्पादन दोनों में विश्व में चौथे स्थान पर है, जो एक उपलब्धि कही जा सकती है। पवन ऊर्जा के विकास हेतु 1990 के दशक में पवन ऊर्जा प्रौद्योगिकी केन्द्र की स्थापना की गई। आज विश्व का दुसरा सबसे बडा विन्ड फार्म तमिलनाडु में स्थापित है। पवन ऊर्जा का भारत के नवीकरण ऊर्जा क्षेत्र में जो महत्व है उसका अनुमान इससे लगाया जा सकता है कि फरवरी 2016 तक नवीकरणीय ऊर्जा तैयार करने की जो 39 मेघावाट क्षमता थी। उसमें करीब 25.2 मेघावाट अथवा 65 प्रतिशत हिस्सेदारी पवन ऊर्जा की थी। देश में वर्तमान में बिजली उत्पादन की जो क्षमता है, उसमें 13 प्रतिशत हिस्सेदारी अक्षय ऊर्जा अथवा नवीकरणीय ऊर्जा की है और कुल 8 प्रतिशत क्षमता पवन ऊर्जा की है। देश में तमिलनाडु पवन ऊर्जा क्षमता में सबसे आगे हे। जहाँ 14.15 मेघावाट तक की उत्पादन क्षमता हैं ओर 2016 के अंत में वहां पवन ऊर्जा द्वारा 7.68 मेघावाट बिजली बनाने की क्षमता तैयार भी हो चुकी थी। महाराष्ट्र 4.66 मेघावाट क्षमता के साथ दूसरे स्थान पर हैं तथा गुजरात 4.22 मेघावाट के साथ तीसरे स्थान पर है।

राज्यों में स्थापित पवन ऊर्जा क्षमता 19.10.2016 तक

राज्य	स्थापित क्षमता (मेगावाट में)
तमिलनाडु	7,684.31
महाराष्ट्र	4,664.08
गुजरात	4,227.31
राजस्थान	4,123.35
कर्नाटक	3,082.45
मध्यप्रदेश	2,288.60
आन्ध्र प्रदेश	1,866.35
तैलन्गाना	98.70
केरेला	43.50
अन्य	4.30

पवन ऊर्जा का स्त्रोत अन्य नवीकरणीय अथवा अक्षय ऊर्जा के स्त्रोत की तरह कभी ना समाप्त होने वाला स्त्रोत है अर्थात जीवाक्ष्य ऊर्जा के सीमित होते जा रहे स्त्रोत के उलट पवन ऊर्जा का स्त्रोत कभी ना समाप्त होने वाला असीमित स्त्रोत है।

भारत सरकार ने 2015 में राष्ट्रीय अपतटीय पवन ऊर्जा नीति को मंजूरी दी जिसके तहत देश की लगभग 7600 कि.मी. लम्बी तटरेखा के किनारे पवन ऊर्जा उत्पादन को बढ़ावा देना है। इस फैसले से समुद्र के निकट विशिष्ट आर्थिक क्षेत्र में अपतटीय पवन ऊर्जा की योजनाओं, अनुसंधान तथा विकास को बल मिलेगा।

इसमें कोई संदेह नहीं कि भारत जैसे विशाल विकासशील देश में आने वाले समय में कृषि, उद्योग व घरेलु उपयोग हेतु बिजली की मांग में बेतहाशा वृद्धि होने की सम्भावना है। जीवाश्म ईंधन सीमित मंहगा व पर्यावरण को नुकसान पहुंचाने वाला ऊर्जा स्त्रोत होने के कारण हमारे पास नवीकरणीय ऊर्जा स्त्रोत के विकल्पों को और अधिक व्यापक, वैज्ञानिक व तीव्र गति से दोहन करने की आवश्यकता है। केन्द्र सरकार राज्य सरकारों के साथ समन्वय व संवाद स्थापित करके इस दिशा में योजनाओं के निर्माण व क्रियान्वन में तीव्र गति से पारदर्शिता के साथ काम करे ताकि आने वाले समय में देश की ऊर्जा की आवश्यकताओं को सस्ती व स्वच्छ ऊर्जा के साथ पूरा किया जा सके तथा जीवाश्म ईंधन पर निर्भरता को समय रहते समाप्त अथवा न्यूनतम स्तर तक लाया जा सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. योजना, नई दिल्ली।
2. कुरूक्षेत्र, नई दिल्ली।
3. दैनिक भास्कर, उज्जैन।
4. पत्रिका, उज्जैन।

****

छत्तीसगढ़ व नक्सलवाद

डॉ. सुनीला एक्का *

प्रस्तावना – वैचारिक मतभेद दुश्मनी पैदा करता है, चाहे वह मतभेद आर्थिक हो, राजनीतिक हो सामाजिक हो या पारिवारिक हो किसी भी क्षेत्र में अपनी बात को सही मानना तथा 'सभी गलत है' की मानसिकता मनमुटाव पैदा करती है। यही मनमुटाव संघर्ष को जन्म देता है। ऐसी ही मानसिकता नक्सली लोगों की है। ये नक्सली दुर्गम क्षेत्रों में रहने वाले आदिवासियों के अधिकारों का संरक्षण और शोषण से मुक्ति दिलाने के नाम पर बने थे और सत्ता हित सरकार और सरकारी अधिकारियों/कर्मचारियों की नींद हराम कर रखे हैं। आज वे स्वयं असुरक्षित है क्योंकि ये नक्सलवादी वनवासियों की सहायता करने से ज्यादा सरकार और स्थानीय लोगों को नुकसान पहुंचा रहे हैं। आये दिन किसी भी व्यक्ति को पकड़कर मार डालना, बेकसूरों को कैद कर लेना, आज आम बात हो गई है। किसी वनवासी के घर को जला डालना, तो प्रशासन से असंतुष्ट होकर बारूदी सुरंग बिछाकर पूरी पुलिस गाड़ी को उड़ाना, सरकारी खजानों को लूटना, यात्रियों से भरी बसों को जंगलों में रोकना, उन्हें लूटना, चुनाव में बूथ लूटना तथा किसी न किसी तरह की हिंसा हमें रोज अखबारों में पहले पेज पर पढ़ने को मिलती है।

नक्सलवाद एक विचारधारा है, जो मुख्यत: वर्ग संघर्ष पर आधारित है। यह पिछड़ों, दलितों व शोषितों को शोषक वर्ग के विरूद्ध किया गया एक सशस्त्र विद्रोह है, जिसका मूल कारण सामाजिक आर्थिक शोषण है।

नक्सलवाद की शुरूआत 1967 में पश्चिम बंगाल राज्य के सिलीगुडी जिला के नक्सलवाड़ी नामक स्थान से एक किसान विद्रोह के रूप में हुई थी, जो नेपाल सीमा से तकरीबन 8 कि.मी. दूरी पर स्थित है। इस किसान विद्रोहे के नेता थे कामरेड चारूमजुमदार तथा कामरेड फनु सन्याल। प्रारंभ में इस आंदोलन का स्वरूप सुधारवादी था। इसका उद्देश्य दलितों, पिछड़ों एवं जनजातियों की विभिन्न समस्याओं में सुधार करना था। इस हेतु इस संगठन ने पश्चिम बंगाल के चायबागान के मालिकों व जमींदारों के खिलाफ अपनी वाजिब मजदूरी दर के लिए संघर्ष भी किया। वे चाहते थे कि प्रत्येक व्यक्ति को उचित मात्रा में जमीन मिले। मालिक और मजदूर एक समान हों, इनके बीच का मतभेद समाप्त हो जाए। इस तरह नक्सलवाद कालमार्क्स के विचारों पर आधारित है। नक्सलवाद के जनक चारू मजुमदार के कुछ अनुयायियों ने गरीब और बेरोजगारों को लालच देकर धीरे-धीरे अपना संगठन खड़ा करने में सफलता प्राप्त कर ली। उनका उद्देश्य गरीबों को रोटी, कपड़ा और मकान दिलाना और इसके लिए मालदारों को लूटना तथा विरोध करने वालों को लूटना था, इसे इन्होंने सामाजिक न्याय का नाम दिया था।

छत्तीसगढ़ में नक्सली गतिविधियों का प्रारंभ 1971 में माना जाता है। प्रारंभ में उन्होंने सरकार के खिलाफ भ्रामक प्रचार कर अपने पैर पसारना प्रारंभ किया। इनकी जड़ें तारलागुड़ा, उसूर के साथ-साथ सीमांत आंध्र के गोला पल्ली, कोन्टा, जगरगुण्डा क्षेत्रों में जमती चली गई, यदा-यदा किसी सरकारी अफसर के पिटाई की खबरें आने लगी थी।

शोषण विहिन समाज के निर्माण के लिए उठी यह लोक हितकारी आवाज अपने मूल लक्ष्य से भटककर एक हिंसक, विध्वंसक उग्रवादी संगठन में परिवर्तित हो गई है, जो न केवल छत्तीसगढ़ अपितु मध्यप्रदेश, आंध्रप्रदेश, उड़ीसा, महाराष्ट्र और बिहार की प्रशासन व्यवस्था के लिए एक चुनौती बनकर उभरी है।

आज नक्सलवाद का विस्तार छत्तीसगढ़ के दंतेवाड़ा, कांकेर, राजनांदगांव, सरगुजा, पश्चिमी कोरिया, बस्तर में अपनी पूरी यौवनावस्था में है, जबकि रायपुर, बिलासपुर और रायगढ़ में अपनी शैशवा अवस्था में है, जो अपनी किशोरावस्था की ओर तीव्रतर अग्रसर है। इन क्षेत्रों में नक्सलवाद पिपुल्स वार ग्रुप, एम.सी.सी., सी.पी.आई., एम.आई.सी.एस.एस., आदि विभिन्न नक्सलवादी संगठनों के माध्यम से सक्रिय हैं।

छत्तीसगढ़ शांत और सादगी पसंद लोगों का प्रदेश है, लेकिन नक्सलवाद जैसी उग्रवादी संगठन से इसका यह स्वरूप विकृत सा हो गया है। नक्सलवादी इस शांति पसंद प्रदेश में अपनी योजनाओं को कार्यरूप प्रदान करने के लिए संघम और दलम नामक समूह का निर्माण करते हैं जो 20 से 25 सदस्यों से मिलकर बने होते हैं। प्रत्येक समूह में एक या अधिक महिला सदस्य अवश्य होती है। यह समूह छापामार प्रणाली से कार्य करते हैं। रेंज कमेटी इन समूहों एक ऊपर में प्रभावशाली संस्था है, जो इनमें समन्वय और नियमन का कार्य करती है। छत्तीसगढ़ में सक्रिय इन दलों में अबूझमाड़दलम, कुसरम, दलम, केशकाल दलम, कोण्डगांव दलम, भानुप्रतापपुर दलम, सुकुमार दलम आदि प्रमुख है। प्रत्येक दलम में एक कमाण्डर और एक डिप्टी कमाण्डर होते हैं।

छत्तीसगढ़ राज्य को नक्सली समस्या विरासत में मिली है। आज नक्सलवाद प्रशासन के लिए नासूर बन गया है। आए दिन पुलिस कर्मियों, वन अधिकारियों एवं कर्मियों, व्यापारियों और ठेकेदारों पर नक्सलवादी जत्थों द्वारा प्राणघातक हमले इनकी क्रूरतम रणनीति की पहचान है। छत्तीसगढ़ में सबसे ज्यादा नक्सली समस्या से ग्रस्त है, बस्तर संभाग के पांचों जिले। बस्तर में वन विभाग, पुलिस और राजस्व के अफसर कर्मचारी अपने जन विरोधी रवैये के कारण आदिवासियों में अलोकप्रिय एवं शत्रुवत् हो चुके थे। सरकारी अफसरों एवं कर्मचारियों ने भोले-भाले मासूम आदिवासियों का जिस प्रकार शोषण व उत्पीड़न किया, जिससे नक्सलियों को आदिवासियों के बीच जमने का मौका मिला। इसके साथ ही सरकार से न्याय न मिलने व सरकार से मुसीबतें मिलने के कारण आदिवासी नक्सलियों को अपना मददगार मानने लगे। आजादी के पांच दशक से अधिक हो चुके हैं, परंतु आदिवासी क्षेत्र में शिक्षा 50 प्रतिशत तक भी नहीं पहुंच पाई है। ग्रामीण इलाकों में संचार के साधनों की कमी, गरीबों को रोजगार उपलब्ध

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति शास्त्र) शासकीय अग्रसेन स्नातकोतर महाविद्यालय, बिल्हा, जिला-बिलासपुर (छ.ग.) भारत

न हो पाना, वन संरक्षण का कड़ा कानून गरीबों का शोषण, पेयजल की अव्यवस्था, बिजली का न होना आदि ऐसे अनेक कारण थे जो नक्सलियों के हित में साबित हुए और नक्सली आदिवासियों के मसीहा बन बैठे।

हालांकि जब-जब सरकार ने नक्सल प्रभावित क्षेत्रों में सड़क, पुल-पुलिया, स्कूल भवन आदि बनवाना चाहा, तब-तब नक्सलियों ने इसका विरोध किया। उन्हें बम आदि से तहस-नहस कर दिया, वे कदापि नहीं चाहते थे कि इस क्षेत्र में आवागमन व संचार के आधुनिक साधनों का विस्तार हो। यहां लगाये जाने वाले कारखानों का भी नक्सली हमेशा आदिवासियों और परंपरागत संस्कृति के शोषण व पतन का तर्क देकर विरोध करते रहे हैं।

नक्सलवाद के परिणाम स्वरूप वनवासी सरकार और नक्सलियों के बीच पीस रहा है। निरापराध वनवासी बेमौत मारे जा रहे हैं। ऐसे में न व्यक्ति का विकास हो रहा है न समाज का। ये आदिवासी अपने शोषकों से इतने परेशान हो जाते हैं कि अपने बच्चों को स्कूल भी नहीं भेजते है। अत: ये अपने बच्चों को गाय चराने, मछली पकड़ने, चिड़िया पकड़ने, वनोपज संग्रह करने जैसे परंपरागत कार्य करवाते हैं। नक्सलवाद के कारण रोजी-रोटी की समस्या तक खड़ी हो जाती है। दूसरी तरफ सरकारी कर्मचारी भी इन क्षेत्रों में जाने से कतराते हैं। आए दिन पुलिस का अमुक जवान शहीद हो गया, सुनने को मिलता है। तमाम सरकारी योजनाएं भी ठप पड़ जाती हैं। विकास कार्य थम गए हैं। साप्ताहिक बाजार तक नहीं लगते। यहां पर जरूरत की चीजें भी मिलना बंद हो जाती है।

छत्तीसगढ़ शासन द्वारा नक्सलवाद की समस्या का निराकरण करने की दिशा में अनेक प्रयास किए जा रहे हैं। यह एक ऐसी समस्या है, जिसका निवारण जितना जल्द हो उतना ही बेहतर है, क्योंकि नक्सलवाद के माध्यम से आतंक प्रिय ये नक्सलवादी नेता, भोले-भाले आदिवासियों की भावनाओं और विश्वास का अनुचित उपयोग कर रहे हैं। किंतु शासन के इतने प्रयासों के उपरांत भी इस दिशा में आशातीत सफलता नहीं मिल पाई है। इसकी एक वजह यह भी है कि इस कार्य में प्रशासन को स्थानीय लोगों का सहयोग नहीं मिल पा रहा है। स्थानीय लोगों का यह असहयोग प्रशासन के प्रति असंतोष तथा नक्सलवादियों के विरूद्ध कठोर कार्यवाही करने में सबसे बड़ी अड़चन यह है कि नक्सलवादी आम जनता में से ही उपजते हैं। इस कारण ये आम जनता और नक्सलवादियों में अंतर कर पाना एक टेढ़ी खीर है। नक्सलवाद से प्रभावित क्षेत्रों में लोग नक्सलवादियों की सहायता इसलिए ही नहीं करते हैं कि ऐसा न करने पर वे असुरक्षित हो जाएंगे, बल्कि इसलिए भी सहायता करते हैं क्योंकि उनके अपने भी इस गिरोह में शामिल रहते हैं।

जब सन् 2000 में छत्तीसगढ़ का गठन हुआ, तब छत्तीसगढ़ को प्राकृतिक विरासत के साथ नक्सल समस्या भी मिला। नक्सली हिंसा का मुख्य क्षेत्र आदिवासी बहुल क्षेत्र ही है। नक्सली हिंसा के कारण आदिवासी निरीह प्राणी की तरह मारे जा रहे हैं। कभी मुखबिरी के नाम से तो कभी अन्य कारणों जैसे नक्सलियों द्वारा प्रायोजित जन आंदोलन के माध्यम से।

यह एक ऐसी नक्सलवाद है, जिससे होने वाली हिंसा से मृत्यु एक बारगी न होकर तिल-तिलकर अंतहीन दु:खों को सहते हुए होती है। पूरे देश में व्याप्त इन अत्याचारों का समुचित निदान किए बिना नक्सलवाद के उन्मूलन की कल्पना बेईमानी है।

समाधान -

- सर्वप्रथम हमें लोगों को शिक्षा के प्रति जागरूक करना होगा, उन्हें आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करना चाहिए।
- लोगों को उनके मौलिक अधिकारों की जानकारी देनी होगी, ताकि वे अपने शोषण के विरूद्ध आवाज उठा सकें।
- नक्सल गतिविधि पर सरकार द्वारा पैनी नजर रखी जावे।
- शासकीय योजनाओं का उचित क्रियान्वयन होना चाहिए, जिससे आदिवासियों को उनका अधिकार मिल सके।
- कुटीर उद्योगों को पुनर्जीवित करने का समुचित प्रयास करना चाहिए।
- नक्सली समस्या के उन्मूलन के प्रति दृढ़ राजनीतिक इच्छाशक्ति का विकास, क्योंकि बिना दृढ़ संकल्प के किसी भी उपलब्धि की आशा नहीं की जा सकती।
- राष्ट्र के विकास की मुख्यधारा में नक्सलियों को लाने और पुनर्व्यवस्थापन के लिए रोजगार पर विशेष पैकेज की व्यवस्था।
- आजीविका परख एवं सर्वोपलब्ध शिक्षा की व्यवस्था, जिससे सामाजिक विषमताओं पर अंकुश लग सके।

इस समस्या के निदान के लिए लोगों में एक जागरूकता जिसका सूत्रपात प्रशासन के द्वारा ही अपने प्रति लोगों में विश्वास जगाकर किया जाना होगा। नक्सलवाद प्रभावित क्षेत्रों का आर्थिक विकास सर्वोपरि प्राथमिकता होनी चाहिए, क्योंकि लोगों की आर्थिक समस्याएं ही उन्हें नकारात्मक दिशाओं की ओर उन्मुख करती है। नक्सल प्रभावित क्षेत्र में कार्यरत् पुलिस कर्मियों को आधुनिक हथियारों और वाहनों से सुसज्जित किया जाना चाहिए। नक्सल प्रभावित क्षेत्र में पक्की सड़क का निर्माण किया जाना चाहिए, ताकि बारूदी सुरंगों से बचा जा सकें साथ ही क्षेत्र का निरीक्षण भी सुगम हो सकें। प्रभावित क्षेत्रों में मूलभूत मानवीय सुविधाओं यथा, शिक्षा, स्वास्थ्य, यातायात व संचार साधनों की उचित व्यवस्था की जानी चाहिए। वन संरक्षण अधिनियम का इस प्रकार से पुनर्मूल्यांकन किया जाना चाहिए जिससे पर्यावरण संरक्षण के साथ ही आदिवासियों को उनके निस्तार के लिये भूमि व चारा उपलब्ध हो सके। नक्सलवादियों के कल्याणार्थ निर्धारित योजनाओं का क्रियान्वयन स्थानीय बोलियों के माध्यम से संचालित किया जाना चाहिए। इस हेतु संबंधित अधिकारियों और कर्मचारियों को स्थानीय बोली सीखने के लिये प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

प्रशासन को नक्सलवाद से जुड़ नवयुवकों को प्रशिक्षण देकर विभिन्न प्रकार के स्वरोजगार के लिए प्रेरित करना चाहिए। उन्हें आत्म समर्पण करने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। उनके पुनर्वास व जीविका की उचित व्यवस्था भी की जानी चाहिए।

छत्तीसगढ़ में नक्सलवाद की समस्या केवल विधि और व्यवस्था की समस्या नहीं है, अपितु यह सामाजिक एवं आर्थिक विषमता से उत्पन्न क्षेत्रीय पिछड़ेपन की पीड़ा की समस्या है। इस पीड़ा का शीघ्र निदान किया जाना अतिआवश्यक है। इसके लिए न केवल प्रशासन की कार्य योजना को सक्रियता के साथा मूर्त रूप देना होगा, अपितु इस हेतु स्थानीय लोगों का सहयोग प्राप्त करने के लिए उनमें प्रशासन के प्रति विश्वास जगाने की भी आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. राजकिशोर/वनवासियों का संघर्ष 1995/वाणी प्रकाशन/ पृष्ठ 29, 31, 34
2. डॉ. टी.पी. त्रिपाठी/मानव अधिकार 2014/इलाहाबाद लॉ एजेंसी पब्लिकेशन/पृष्ठ 18, 21, 34
3. चन्द्र विपीन/आधुनिक भारत का इतिहास/पृष्ठ 17, 32, 48

अम्बेडकर दर्शन और नारी

डॉ. मुकेश शारदे *

प्रस्तावना – महिलाओं को स्वतंत्र और आत्मनिर्भर बनाने, उन्हें न्याय दिलाने साथ ही उन्हें पुरूषों के समकक्ष खड़ा करना प्राचीन समय से ही एक चुनौती भरा काम रहा है। डॉ. अम्बेडकर मानव अधिकार के सबसे बड़े चैंपियन के तौर पर उभरे! उन्होंने महिलाओं को उनकी सालों पुरानी दासता भरी पितृसत्तात्मक हिन्दू रूढ़ियों से निजात दिलाने में अहम योगदान दिया। उनका कहना था कि दलितों के साथ महिलाएं भी चतुवर्णीय धर्मशास्त्र की सबसे बड़ी शिकार रही है। स्मृति और शास्त्र लिंग के आधार पर भेदभाव करते है। इसलिए शास्त्रों की पवित्रता को खारिज करना होगा और पुरूषों और महिलाओं को इनकी बाध्यताओं से निजात दिलानी होगी।

डॉ. अम्बेडकर की मान्यता थी कि नारी की प्रगति के बिना समाज की प्रगति संभव नहीं है। समाज में नारी की स्थिति को अम्बेडकर समाज की प्रगति का मापदण्ड मानते थे। उनका कहना था कि – 'मैं किसी समाज की प्रगति इस आधार पर मापता हूँ कि उस समाज में नारी ने किस सीमा तक प्रगति की है।' डॉ. अम्बेडकर नारी संगठन के बहुत हिमायती थे, उनका विश्वास था कि यदि एक बार नारी निश्चय कर ले तो समाज की बुराईयों को दूर करने और समाज को सुधारने में वह बहुत कार्य कर सकती है। इसलिए दलितों को कार्य आरम्भ करने से ही डॉ. अम्बेडकर स्त्रियों को साथ लेकर चले। दलित महिलाओं को सम्बोधित करते हुए डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि आप स्वच्छता से रहना सीखे, सभी प्रकार के दुराचारों से दूर रहे, अपने बच्चों को अच्छी से अच्छी शिक्षा दें अपने बच्चों के दिमाग से सभी प्रकार के हीन भावों को दूर करें। डॉ. अम्बेडकर का सोचना था कि समाज की उन्नति के लिए महिलाओं को भी पुरूषों के समान आगे आना चाहिए।'(1) जब तक महिलाओं को सामाजिक समानता का अधिकार प्रदान नहीं किया जाता, आर्थिक क्षेत्र में उनकी भागीदारी का विकास हो नहीं सकता। यदि हम स्त्रियों को आत्मनिर्णय के अधिकार से वंचित करते है तो उससे हमारा राष्ट्रीय आर्थिक विकास अवरूद्ध होता है। वह पति की दासी न होकर उसकी सहभागी है, वह पति की सहकर्मिणी है जो घर के प्रबंध के साथ व्यवसाय का भी प्रबंध भी देखती है। डॉ. अम्बेडकर ने पुरूष और स्त्रियों को आर्थिक समानता प्रदान करने का समर्थन किया है तथा आर्थिक विकास में उनके परस्पर सहयोग पर बल दिया है। शिक्षा तथा आत्म- विकास की दृष्टि से उन्होंने पुरूष और स्त्री में किसी प्रकार का भेदभाव नहीं किया है। इस दृष्टि से वे बौद्ध धर्म से अत्यधिक प्रभावित थे, जहाँ दीक्षा, समन्वय तथा अध्ययन आदि की स्वतंत्रता होती है।

डॉ. अम्बेडकर नारी को स्वावलम्बी बनाना चाहते थे। नारी को यदि सामाजिक समानता प्रदान की जाती है, तो इसके लिए आवश्यक है कि उसे आर्थिक दृष्टि से भी स्वतंत्र बनाया जाए। उनकी यह मान्यता थी कि आर्थिक पराधीनता ही महिलाओं के स्वावलम्बी बनने में सबसे बड़ी बाधा है। डॉ. अम्बेडकर ने महिलाओं में भी नेतृत्व का विकास करने के प्रयास किए। शांतिबाई दाड़ी, गीताबाई गायकवाड़ तथा श्रीमती मनोबल शिवराज आदि महिलाओं को आन्दोलन में सम्मिलित करने का श्रेय डॉ. अम्बेडकर को ही है। दलित महिलाओं के जीवन स्तर को उठाने के लिए आवश्यक है कि उन्हें स्वच्छंद जीवन जीने दिया जाए, दुराचारों से मुक्त किया जाए तथा अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था की जाए। उनकी दूषित मनोवृत्तियों को रोकने के लिए आवश्यकता है कि उन्हें व्यवसाय में भागीदारी बनाया जाए ताकि वे स्वालम्बी हो सकें क्योंकि दलितों की पारिवारिक अर्थव्यवस्था को दूषित प्रवृति के पुरूष नष्ट करते है।

डॉ. अम्बेडकर बाल विवाह पर इस दृष्टि से रोक लगाना चाहते थे कि महिलाओं को आर्थिक जवाबदारी सौंपी जा सके तथा आर्थिक विकास में उनकी सहभागिता को सुनिश्चित किया जा सके। उनकी दृष्टि में गरीबी का मुख्य कारण अधिक सन्तानोत्पत्ति है। इसलिए वे अधिक सन्तान्तोपत्ति को अपराध मानते थे। चूंकि स्त्रियां किसी समाज की प्रगति का दर्पण होती है। भारतीय समाज में बेगारी तथा गरीबी का मूल कारण नारी की उपेक्षा है। आर्थिक विकास का दायित्व जितना पुरूषों का है, उतनी ही महिलाओं की जिम्मेदारी भी है लेकिन महिलाएँ अपने दायित्वों का निर्वाह तभी कर सकती है, जहाँ उन्हें विवाह के पूर्व परामर्शदाता के रूप में तथा विवाह के पश्चात् पति के मित्र तथा सहयोगी प्रबंधक के रूप में स्थान प्राप्त हो।

डॉ. अम्बेडकर का यह निष्कर्ष है कि मनुस्मृति ही नारी स्वतंत्रता, समानता और सम्मान की गिरावट का कारण है। इसकी पुष्टि के लिए उन्होंने मनुस्मृति से उदाहरण देते हुए कहा कि मनु ने नारी को पुरूषाश्रित बनाया है और यह आवश्यक बताया है कि वह पुरूष के सरंक्षण में रहे। बचपन में वह पिता की देख-रेख में पले और बड़ी हो, जवानी में वह पति के संरक्षण में रहे और बुढ़ापे में वह पुत्रों पर निर्भर रहें। परिणामत: वह जन्म से मृत्यु तक पुरूषाधीन रहे। जबकि डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि नारी के बिना पुरूष की बाल्वावस्था असहाय है, युवावस्था आनंदरहित और वृद्धावस्था सांत्वना शुन्य है। मनु ने यहाँ तक कहा कि चाहे बालिका हो या अधेड़ स्त्री परन्तु वह अपने घर में स्वतंत्रतापूर्वक कुछ नहीं कर सकती है। उसे तलाक लेने का अधिकार भी नहीं है। एक बार जिसकी पत्नी हो गई, फिर उसे हमेशा उसके अधीन रहना होगा। डॉ. अम्बेडकर का मानना यह रहा कि मनु ने पुरूष को पूर्ण स्वतंत्र और अधिकार युक्त किया है, जबकि स्त्री को पराधीन तथा अधिकारों से वंचित बना दिया है। उनके मन में यहीं से यह विचार उठा कि नारी को बिना सम्मानीय और स्वतंत्र स्थान दिए भारतीय समाज नहीं उठ सकता क्योंकि मनु के नियम सत्य से दूर रहे है।'(2)

* गेस्ट फैकल्टी (राजनीति विज्ञान) शासकीय स्नातकोत्तर कॉलेज, खरगोन (म.प्र.) भारत

जुलाई 1942 में नागपुर की सभा में डॉ. अम्बेडकर ने कहा था कि किसी समाज की प्रगति का अनुमान उस समाज की महिलाओं की प्रगति से लगाया जा सकता है। उनके अनुसार स्त्री वर्ग राजनैतिक तथा सामाजिक क्षेत्रों में पीछे न रहें। समाज की प्रगति, समृद्धि में स्त्रियों का भी योगदान है। स्त्रियों को सामाजिक, वैधानिक और राजनीतिक स्तर पर पुरूषों के समान ही अधिकार प्राप्त हों और उन्हें हर क्षेत्र में उन्नति के अवसर मिलते रहें, इसके लिए डॉ. अम्बेडकर ने 1927 से 1956 तक सतत् प्रयास किए।

महिला मजदूरों को, विशेषकर खान में काम करने वाली महिला मजदूरों को प्रसूति की सुविधाएं प्राप्त नहीं थी। प्रसूति की अवस्था में उनका काम पर न आना अनुपस्थित माना जाता था और उस अवधि का उन्हें कोई वेतन नहीं दिया जाता था। यह गरीब महिलाओं के साथ अन्याय था। डॉ. अम्बेडकर ने इस अन्याय को दूर करने के लिए खान **'प्रसूति सुविधा अधिनियम 1941'** में संशोधन कराया और उसके द्वारा खान में काम करने वाली महिला मजदूरों को प्रसूति से पूर्व और प्रसूति के पश्चात् अवकाश की सुविधा प्रतिदिन आठ आना की दर से से वेतन के साथ उपलब्ध करवाई। बाद में 1945 में डॉ. अम्बेडकर ने पुनः संशोधन बिल पेश किया और इस सुविधा को और बढ़ाया तथा गर्भावस्था में किसी भी महिला मजदूर के लिए खान के अन्दर जाने पर रोक लगा दी।'[3]

डॉ. अम्बेडकर को नारियों द्वारा अर्जित की गई उन्नति को देखकर खुशी होती थी। डॉ. अम्बेडकर नारी द्वारा पुरूषों की गुलामी करना पसंद नहीं करते थे। वे उन्हें पुरूषों के बराबर का दर्जा देना चाहते थे, इसीलिए वे नहीं चाहते थे कि नारियाँ पुरूषों की गुलामी करें। स्वच्छ रहना सीखे, बुराईयों से दूर रहे, अपने बच्चों को शिक्षा दो, आत्महीनता की भावना से उनको दूर रखों, उन्हें महत्वाकाँक्षी बनाओ, कम उम्र में शादी नहीं करने आदि की सलाह वे नारियों के सशक्तिकरण के लिए देते थे। डॉ. अम्बेडकर विवाह को एक जिम्मेदारी कार्य मानते थे। उनके अनुसार जब तक बच्चें आर्थिक रूप से शादी से उत्पन्न होने वाली जिम्मेदारियों को संभालने में समर्थ नहीं हो, माता-पिता को उन पर शादी एवं परिवार का बोझ नहीं थोपना चाहिए। सबसे बड़ी बात यह है कि जो लड़की शादी करती है, वह अपने पति के समकक्ष खड़ी हो, उससे मित्रता और समानता का दावा करे व उसकी दासी बनने से साफ इनकार कर दे। उनका विश्वास था कि यदि दलित महिलाएं ऐसा करती है तो इससे न केवल उनका वरन् पूरे दलित समाज का सम्मान बढ़ेगा।

हिन्दू कोड में एक पत्नी और एक पति ही एक समय विवाह कर सकते थे। अगर कोई पति अपनी पहली पत्नी के रहते और पत्नी पहले पति के रहते विवाह करे तो उसे कानूनी दण्ड मिलेगा। 'हिन्दू कोड में पति के मर जाने पर हिन्दू स्त्री को पति की सम्पत्ति में उसकी संतान के बराबर हिस्सा या अंश देने का नियम बनाया। पहले हिन्दू धर्म शास्त्रों में विधवा के लिए न तो दूसरी शादी का विधान था और न ही जायदाद में हिस्सा या अंश मिलता था। हिन्दू कोड की कृपा से पिता की मृत्यु के पश्चात् पुत्री को भी भाईयों के बराबर जायदाद का वारिस बना दिया गया था। इसी तरह दत्तक या गोद लेने का अधिकार अपने कुल में से पैदा हुए को ही प्राप्त था, किन्तु कोड के अनुसार किसी भी हिन्दू परिवार में जन्मी लड़की या लड़के को गोद लिया जा सकता था और वह लड़का या लड़की चाहे वह किसी भी हिन्दू जाति के हो, गोद लिए जाने वाले की जायदाद के वारिस बन जाते है। मजे की बात यह थी कि अब न केवल लड़का ही दत्तक बन सकता था, बल्कि लड़की भी दत्तक ली जा सकती थी। यह नियम तो हिन्दू धर्म-शास्त्रों की आज्ञाओं का हनन करने वाला लगता था। वृद्ध माता-पिता के भरण-पोषण की वर्तमान हिन्दू शास्त्रों में कानूनी जिम्मेदारी नहीं थी। केवल लोक-लाज के लिए ही वृद्धो का भरण-पोषण होता था, किन्तु हिन्दू-कोड में यह कानून बना दिया गया है कि ऐसे वृद्धों की औलाद कानूनी तौर पर पालन-पोषण करे।'[4] बाबा साहेब अम्बेडकर ने ब्राम्हण राजा राममोहन रॉय की भांति सती प्रथा की समाप्ति और ब्राम्हण ईश्वरचन्द्र विद्यासागर की तहर हिन्दू विधवा के पुनर्विवाह की एक अछुत होते हुए वकालात की।

निष्कर्षतः यह मानना ही ठीक होगा कि मनु-सिद्धांतों में बंधा हुआ भारतीय समाज ही नारी के पतन का कारण रहा है। डॉ. अम्बेडकर नारी को सम्मानित स्थान दिलाने के लिए संघर्षरत रहे। उनका समग्र चिन्तन भारतीय समाज को जर्जरावस्था से निकालकर स्वस्थ समाज के रूप में ढ़ालने का रहा है। उनके प्रयत्नों की लंबी तथा द्धर्दर्ष-संघर्षपूर्ण गाथा से इस तथ्य की पुष्टि होती है कि उपेक्षितों के मसीहा थे और नारी की गरिमा को पुनः स्थापित करना चाहते थे। भारतीय समाज व भारतीय नारी को ऐसी प्रेरणा व चेतना दी जिसके सहारे एक स्वस्थ समाज की स्थापना की जा सकती है। उनका लक्ष्य अनुकरणीय है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सम्पादक - नागेश्वर राव, गोपालकृष्ण, लेख - सुश्री मेहर सोनी, **'डॉ. अम्बेडकर का चिंतन एवं पुनर्जागरण की आवश्यकता'**, अम्बेडकर पीठ विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन, 2008, पृ.सं.08
2. संकलन - मरम्मट - डॉ. अवन्तिका प्रसाद, धावन डॉ. हरिमोहन **'बौद्ध धम्म एवं संस्कृति का अवैदिक समाज पर प्रभाव'**, म.प्र. दलित साहित्य अकादमी उज्जैन, 2001, पृ.सं. 88-89
3. लेख-सोहरोत-अन्जू, सम्पादक - धावन - डॉ. हरिमोहन, **'महिला सशक्तिकरण'**, म.प्र. दलित साहित्य अकादमी-उज्जैन (म.प्र.), 2002, पृ.स. 149-150
4. शास्त्री - सोहनलाल, **'हिन्दू कोड बिल और डॉ. अम्बेडकर'**, सम्यक प्रकाशन नई दिल्ली, 2011, पृ.सं. 51-52

****

आतंकवाद का वैश्वीकरण

डॉ. रजनी दुबे *

प्रस्तावना – आतंकवाद ने वर्तमान काल में विश्वव्यापी रूप धारण कर लिया है एवं विभिन्न आतंकवादी गुटो एवं संगठनों के बीच निरंतर बढ़ने एवं आसानी से पहचाने जाने योग्य संबंध नजर आते है। वह एक दूसरे के क्षेत्रों का प्रयोग नई भर्ती एवं उनके प्रशिक्षण हेतु करते हैं, अवैध हथियार के लेनदेन में संलग्न है,संयुक्त योजनाओं का निर्माण कर सामूहिक रूप से उनका क्रियान्वयन करते हैं तथा एक दूसरे को प्रशासकीय एंव सामरिक सहयोग भी प्रदान करते है।

आतंकवाद के पनपने के कारण अथवा उनके पीछे की वास्तविक सच्चाई चाहे जो हो जैसे –सामाजिक, आर्थिक पिछड़ापन,जातीय राजनीतिक अपेक्षाए,विचारधाराओं का प्रभाव,अथवा कमजोर वर्गो अथवा समुदायों का दमन एवं उत्पीड़न आदि किन्तु यह तथ्य निर्विवाद है कि अब आतंकवाद राष्ट्र की सीमाओं का अतिक्रमण कर राष्ट्रातीत बन चुका है एवं इसमें विश्वव्यापी रूप धारण करने की समस्त क्षमताए मौजद है। अत: यह विशेषज्ञ मत है कि 'आतंकवाद' भौगोलिक दृष्टि से बहुत विस्तृत तथा वैचारिक दृष्टि से विभिन्ता लिये है।[1] हमें आश्चर्यचकित नहीं करता। स्पष्ट है कि निम्न प्रबलता वाला आतंकवाद जैसी गतिविधियां कम लोगों को उपयुक्त लगती है, यह कम खर्चीला अहम को बढ़ाने वाला एवं तात्कालिक लक्ष्य तुरंत प्राप्त करने में सहायक प्रतीत होता है। स्पष्ट तौर पर कहा जावे तो राष्ट्रातीत आतंकवादी गतिविधियां बड़ी संख्या में लोगों को आकर्षित कर रही हैं क्योंकि प्राथमिक रूप से यह भावना प्रबल है कि अपनी आंतरिक सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक समस्याओं के समाधान की प्राप्ति या तो आसानी से प्राप्त हो सकने वाले वाहन समर्थन (जो व्यक्ति,सामग्री अथवा विचारधारा के रूप में हो सकता है) से हो सकती है अथवा किसी विकसित देश में विकासशील देशों के हितों के विरूद्ध किसी बड़ी आंतकवादी घटना को अंजाम देने से हो सकती है। एक प्रकार से देखा जावे तो संयुक्त राष्ट्र ने आतंकवाद के इस स्वरूप को उसी समय स्वीकार कर लिया था जब उसने 24 अक्टूबर 1970 को निम्न प्रस्ताव पारित किया 'प्रत्येक राष्ट का यह कर्त्तव्य है कि वह अन्य राष्ट्रों के विरूद्ध ग्रहसंघर्ष अथवा आतंकवादी कृत्यों के संबंध में सहायता अथवा अथवा सहभागिता से अपने को दूर रखे एंव अपने राष्ट्र की सीमाओं को बढ़ावा देती हैं। को अपना मूक समर्थन न प्रदान करें।'[2] यह अन्य बात है कि ऐसे निर्णय सिर्फ विधान पुस्तकों तक ही सीमित रहते है एवं उनका अनुशीलन एवं क्रियान्वयन शायद हो किया जाता है।

सही मायनों में आतंकवाद ने वर्तमान काल में विश्वव्यापी रूप धारण कर लिया है एवं विभिन्न आतंकवादी गुटों एवं संगठनों के बीच निरंतर बढ़ने एवं आसानी से पहचाने जाने योग्य संबंध नजर आते है। वह एक दूसरे के क्षेत्रों का प्रयोग नई भर्ती एवं उनके प्रशिक्षण हेतु करते है, अवैध हथियारों के लेन देन में संलग्न है। संयुक्त योजनाओं का निर्माण कर सामूहिक रूप से उनका क्रियान्वयन करते है तथा एक दूसरे को सामरिक सहयोग भी प्रदान करते है। विभिन्न देशों के आतंकवादी गुटों के बीच अन्तर्राष्ट्रीय संबंधों की सीमा इजराइल के लार्ड हवाई अड्डे के सामूहिक नरसंहार में देखी जा सकती है। उक्त कृत्य में संलग्न आतंकवादी जापान के थे उनका प्रशिक्षण कोरिया में हुआ था, हथियारों की खरीद इटली में की गई थी तथा आर्थिक सहायता, समर्थन एवं सहानभूति अरब देशों की थी । आतंकवादी गतिविधियों के इस वैश्वीकरण की विडम्बना इस तथ्य में निहित है कि यह सब कुछ बहुत न केवल आपस में विद्वेष रखने वाले राष्ट्रों एवं सरकारो के खुले समर्थन बल्कि वैज्ञानिक शोध के क्षेत्र में हुई तकनीकी उन्नति से भी बहुत सरल बना दिया है। बहुत देखा गया है कि आतंकी गुट अपने आतंकवादी कृत्यों के नियोजन एवं अंजाम देने में जिन वैज्ञानिक तकनीकों का सहारा लेते है। वह सरकारी मशीनरी से एक कदम उन्नत ही होती है।

अगर हम फिलिस्तीनी मुक्ति संगठन की गतिविधियों लंदन में लीबिया एवं इराक के आतंकवादी कृत्य,पेरिस में यहूदी धर्म स्थल पर आतंकवादी हमला, नीदरलैंड में दक्षिणी मुलाकन की गतिविधियां एवं लीबिया के विरोद्ध 1986 में अमेरिका का हवाई हमला जैसी घटनाओं पर नजर डालें तो आतंकवाद हमें अपने विश्वव्यापी रूप में नजर आवेगा। विशेषज्ञ मतानुसार सूडान वर्तमान समय में आतंकवादियों का सुरक्षित आश्रय स्थल बन गया है।

राष्ट्रातीत आतंकवाद का शिकार शांत हिमालय की गोद में बसा भूटान भी हो गया है। 7 नवम्बर 1998 को राजधानी थिंपू के चागलीमिठान स्टेडियम में हुये बम विस्फोट ने वहां के अधिकारियों को चिंता में डाल दिया । जांच करने पर वहां के शासन ने पाया कि यह घटना उन छोटी–छोटी आतंकवादी कृत्यों से जुड़ी हुई थी। जिनका प्रारंभ अस्सी के दशक के उत्तरार्द्ध में भूटान के दक्षिणी हिस्से से हुआ था।

आतंकवाद के वैश्वीकरण के लिए सबसे महत्वपूर्ण उत्तरदायी कारण मादक पदार्थो का अवैध व्यापार है। इस तथ्य के बावजूत भी कि मादक द्रव्यों के व्यापारियों का प्राथमिक उद्धेश्य सरलतम तरीके से जल्द से जल्द पैसा कमाना है एवं इनके और आतंकवादियों के क्रियाकलापों के मध्य प्रगटन कोई संबंध नजर नहीं आता या इस हेतु गहन खोजबीन की जरूरत होती है, तथापि दोनों के बीच सांकेतिक संबंधों के लेकर अब कोई संदेश नहीं रह गया है। आतंकवाद एवं मादक द्रव्यों के अवैध व्यापार के बीच यह अपकारी विवाद विश्वव्यापी अराजकता हेतु एक नहीं बल्कि अनेक कारणों से उत्तरदायी है। इन दोनों के बीच का संबंध अन्तर्राष्ट्रीय सीमाओं पर ज्यादा प्रखर नजर आता है,जहां एक के क्षरा आधार प्रदान किया जाता हैं तथा

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत

दूसरा उसे सुरक्षा कवच देता है।

आतंकवाद को और अधिक शक्ति देने वाला मादक व्यापार का जुड़वा भाई अवैध हथियारों का व्यापार है। तथाकथित हथियारों के बाजार जैसे डारा' एवं लांदीकोटाल में पाए जाते है। मध्य पूर्व के कुछ देशों मे भी क्रियाशील है तथा अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवादियों के लिए 'मक्का' के समान है। आतंकवाद में मादक प्रदार्थो एवं अवैध हथियारों की भूमिका पर सबसे प्रमाणिक दस्तावेज अमरीकी खुफिया ऐजेंसी 'सीआईए' की 'पाकिस्तान में हेरोइन शीर्षक वाली अध्ययन रिर्पाट है।[3] यह रिर्पाट बतलाती है कि किस प्रकार पाकिस्तान की खुफिया ऐजेंसी 'आई.एस.आई' ने अमरीकी सहायता बंद होने पर अफगानी विरोधी गुटों को मादक पदार्थो के व्यापार की अनुमति दी। इसमें यह भी कहा गया है कि आई एस आई के अधिकारियों के भी व्यक्तिगत रूप से इस व्यापार में सलग्ंन होने की जानकारी प्राप्त हुई तथा भारत में भेजे जाने वाले आतंकवादी मादक द्रव्यों के इस व्यापार से हुई आय से आर्थिक मदद पाते है। संयुक्त राष्ट्र की 1987 की एक अन्य रिर्पाट से स्पष्ट होता है कि कतिपय सुरक्षा ऐजेसिंयों के गुप्त सहयोग से चल रहे अवैध मादक द्रव्य व्यापार एवं अवैध हथियार सौदों में संलग्न गुटों की गतिविधियाँ अन्तर्राष्ट्रीय चिंता का विषय है। उक्त रिपार्ट में अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवाद को मादक पदार्थ के अवैध उत्पादन एवं तस्करी तथा हथियारों के अवैध व्यापार से जोड़ा गया है।

उपरोक्त वर्णित तथ्य आंतकवाद के बदलते स्वरूप की कहानी प्रगट करते है। संभवत: इसी वजह से वाल्टर लाकर जो संयुक्त राज्य अमेरिका के सामारिक एवं अन्तर्राष्ट्रीय अध्ययन केन्द्र की अन्तर्राष्ट्रीय परिषद के अध्यक्ष है ने कहा है कि 'आतंकवाद अपने लम्बें इतिहास में कई रूपों में प्रगट हुआ,वर्तमान में समाज एक नहीं बल्कि अनेकों आतंकवाद का सामना कर रहा है।[4] सूचना क्रांति के इस नये युग में 'इन्टरनेंट' पर उपलब्ध मेल आर्डर के प्लाग्ज' कट्टरपंथियों को आकर्षित कर रहे है, जहां से वह तत्काल उपलब्ध एवं बहुत सस्ती दरों पर पारंपरिक तथा गैर पारंपरिक तथा दोनों ही तरह के हथियार खरीद सकते है। अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवादियों क्षरा 21 वीं सदी में परमाणु एवं जैविक हथियारों के प्रयोग की सम्भावना पर वाल्टर लाकर का मत है कि तकनीकी कठिनाईयों को देखते हुए रसायनिक हथियारों के प्रयोग को देखते हुए शस्त्रों के उपयोग की संभावना बहुत कम है तथा जैविक हथियारों के प्रयोग के प्रयास की संभावना बिल्कुल नगण्य है। लेकिन लाकर चेतावनी देते है कि 'तकनीक पाने की कठिनाइयों से पार पाया जा सकता है,तथा गैर परम्परागत हथियारों का चयन अन्तत: आतंकवादियों की विशिष्टता बन जाएगी एवं यही बात उन्हें उस घातक तकनीक के प्राप्ति के मार्ग तक ले जा सकती है।[5] वर्तमान समाज,लाकर के अनुसार एक नये किस्म के आतंकवाद का शिकार हो सकता है। वर्तमान काल की विकसित समाज सूचनाओं के संगृहण पुन: प्राप्ति,विश्लेषण एवं प्रसारण हेतु 'इलैक्ट्रानिक' तंत्र पर पूर्णत: आश्रित है। रक्षा पुलिस बल, व्यापार,परिवाहन,वैज्ञानिक, शोध जैसे क्षेत्रों के कार्य तथा बड़ी संख्या में सरकारी तथा 'प्रायवेट सैक्टर' का कार्य संपादन 'ऑन लाईन' होता है। इस प्रकार राष्ट्रीय जीवन के बड़े एवं महत्त्वपूर्ण क्षेंत्र शरारत एवं गड़बड़ी हेतु किसी भी 'कम्प्यूटर हेकर' के लिए खुले है तथा गड़बड़ी करने वाले किसी संगठित समूह के क्षमतावान एंव कुशल 'हेकर ' क्षरा किसी संगठित समूह के क्षमतावान एवं कुशल 'हेकर'द्धारा किसी राष्ट्र को अक्रियाशील करने मे क्षण भर की भी देरी नहीं लगेगी। इस प्रकार लाकर निकट भविष्य में 'इन्फोटेरिज्म' और 'साइबर युद्ध' जैसे खतरों की ओर संकेत देते है।[6] पूर्ण 'सूचनायुद्ध आतंकवाद का सबसे भयानक स्वरूप होगा जिसका सामना वर्तमान समाज को करना है। आतंकवाद के वैश्वीकरण का सही 'मॉडल' होगा एवं धरती अथवा आकाश की किसी भी राष्ट्रीय अथवा अन्तर्राष्ट्रीय सीमाओं का सम्मान नहीं करेगा। इक्कीसवीं सदी का मानव जाति को आकांत करने वाले आतंकवादियों के दिनोदिन बढ़ते कौशल एवं अभिप्राय को खोजने एवं समझने हेतु हमें नवीन एवं बुद्धिमान विधियों एवं तरीकों की आवश्यकता है।इस संदर्भ में उन्नीसवीं सदी के रूकी विचारक वेलिसंकी का यह कथन सारगंर्भिम है कि मानव समाज की मुक्ति सिर्फ (वास्तविक) सभ्यता,शिक्षा एवं मानवीयता में निहित है,इस हेतु न तो प्रार्थना की जरूरत है ओर न ही उपदेशों की लोगों के भावों में मानव गरिमा की जागृति ही इसका एकमात्र उपाय है।[7]

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डी'सी.नाथ 'ग्लोबलइजेशन आफ टेररिज्म' टेरेरिज्म द ग्लोबल पर्सपेकिटव द्धारा आर.एस. नारंगई (नई दिल्ली कनिष्क प्रकाशन,2001) पेज- 37
2. डी'सी.नाथ 'ग्लोबलइजेशन आफ टेररिज्म' टेरेरिज्म द ग्लोबल पर्सपेकिटव द्धारा आर.एस. नारंगई (नई दिल्ली कनिष्क प्रकाशन,2001) पेज- 38
3. डी'सी.नाथ 'ग्लोबलइजेशन आफ टेररिज्म' टेरेरिज्म द ग्लोबल पर्सपेकिटव द्धारा आर.एस. नारंगई (नई दिल्ली कनिष्क प्रकाशन,2001) पेज- 40
4. लाकर, पेज- 118
5. लाकर,पेज- 121
6. लाकर पेज- 122
7. लाकर पेज- 124
8. डी'सी.नाथ 'ग्लोबलइजेशन आफ टेररिज्म' टेरेरिज्म द ग्लोबल पर्सपेकिटव द्धारा आर.एस. नारंगई (नई दिल्ली कनिष्क प्रकाशन,2001) पेज- 43
9. डी'सी.नाथ 'ग्लोबलइजेशन आफ टेररिज्म' टेरेरिज्म द ग्लोबल पर्सपेकिटव द्धारा आर.एस. नारंगई (नई दिल्ली कनिष्क प्रकाशन,2001) पेज- 75
10. डॉ. निशांत सिंह,अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवाद (नई दिल्ली:समय प्रकाशन,2002) पेज- 23

****

प्राकृतिक व्यवस्था एवं मानव विकास की संकल्पना

डॉ. जी.एस. वास्कले *

प्रस्तावना - विश्व प्राकृतिक व्यवस्था, राष्ट्रीय एवं मानवीय व्यवस्था में रहकर मानव विकास पर सन् 1990 के दशक में सतत् मानव विकास की संकल्पना दुनिया के देशों ने अपने लक्ष्यों में शामिल की हैं। जिसके लक्ष्य आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनितिक विकास की नीति अपनाकर प्राप्त किए जा सकते हैं। परंतु सतत् मानव विकास की संकल्पना पर्यावरण और प्राकृतिक व्यवस्था से जुड़ी संकल्पना हैं, क्योंकि मानव इतिहास में प्राकृतिक परिवर्तन समय-समय पर विश्व के देशों में होते रहे हैं और मानव ऐसे प्राकृतिक परिवर्तन से सदैव प्रभावित होते रहा हैं। फिर भी सतत् मानव विकास की संकल्पना, वह विकास की संकल्पना हैं , जो हमेशा चिरस्थायी रही हैं, क्योंकि इसके सामान्य सिद्धातों में **'वर्तमान पीढ़ी को भविष्य की पीढी की योग्यता से कोई समझौता किए बिना अपनी आवश्यकता पूरी करनी चाहिए। जिससे भविष्य की पीढ़ी भी अपनी आवश्यकता पूरी कर सकें तथा विकास होता रहे।'**

विश्व के पश्चिमी देशों में अपनाया जा रहा विकास-बाजार प्रेरित मार्ग था, और दूसरी तरफ साम्यवादी देशों द्वारा अपनाया जा रहा है, विकास-केन्द्रीय आर्थिक नियोजन था। विश्व के विकास का एक मध्य मार्ग भी था जिसके अनुसार बाजार और निजी तथा सरकारी क्षेत्रों के राज्य मिश्रण का समन्वित योग था, जो कि हमारे जैसे देशों में अपनाया जा रहा हैं। इसके अलावा भी विकास के अन्य प्रतिमान भी विश्व के देशों में निर्धारित किए गए हैं, जो अपनी-अपनी प्रकृति एवं परिस्थितियों को ध्यान में रखकर बनाए गए।

प्रकृति का सर्वमान्य नियम परिवर्तन है और विश्व के देश किसी भी दृष्टिकोण से मानव विकास की दिशा में प्रयासरत् हैं तथा भारत जैसे देशों के नागरिक सतत् विकास एवं परिवर्तन के साथ सामंजस्य में रहकर बेहतर जीवन व्यतीत करने की संकल्पना को अनवरत रूप से महत्व देते आ रहे हैं। इसके अंतर्गत शिक्षा, स्वास्थ्य, मानव विकास, उन्नति, पूर्ण रोजगार, आय की विषमताओं में कमी, निर्धनता और अभावग्रस्तता का उन्मूलन, सामाजिक न्याय, महिला शिक्षा व सषक्तिकरण आदि सहित उन्नति को स्पष्टत: विकास के लक्ष्यों के प्रमुख घटक के रूप स्वीकार किया गया।

यद्यपि दुनिया के अधिकतर लोग संयुक्त राष्ट्र को शांति और सुरक्षा देने वाला संगठन मानते हैं, लेकिन सच तो यह हैं कि इस संगठन के साधनों का बहुत बड़ा भाग-सतत मानव की संकल्पना में लगा हुआ हैं- **'उच्चतर जीवन स्तर पूर्ण रोजगार तथा आर्थिक एवं सामाजिक प्रगति व सामाजिक न्याय को प्रोत्साहित करने संबंधी संकल्प को बढ़ावा देने के प्रति समर्पित हैं।'** संयुक्त राष्ट्र के विकास प्रयासों ने संसार भर के करोड़ों लोगों के जीवन तथा उनकी सुख-समृद्धि को गहराई से प्रभावित किया हैं। संयुक्त राष्ट्र की कोशिशों का पथ-प्रदर्शन यह विश्वास ही कर रहा है कि संसार भर में सब कहीं लोगों की आर्थिक एवं सामाजिक सम्पन्नता आश्वासित हो जाने पर ही स्थायी अंतर्राष्ट्रीय शांति और सुरक्षा संभव हो सकती हैं। सतत् विकास ही विश्व के देशों एवं लोगों को शांति तथा सुरक्षा दे सकता हैं इसीलिए संयुक्त राष्ट्र भी इस सतत् विकास की संकल्पना का सार्थक करने में प्रकृतिजन्य परिवर्तनों के साथ पर्यावरण को ध्यान में रखते हुऐं सतत विकास की दिशा में प्रयासरत् हैं तथा विकास को विश्वव्यापी प्रोत्साहन देने के लिए संयुक्त राष्ट्र विकास क्रार्यक्रम विकासशील देशों की विकास एजेंसी बना हुआ हैं। इसका नेटवर्क 166 देशों में लोगों को अपनी मदद आप करने में सहायता के लिए जमीनी कार्य करता हैं। विश्व के देशों को इन चुनौतियों के समाधान के निमार्ण एवं सहभागिता में सहायता करना इस कार्यक्रम का लक्ष्य हैं।

इनकी चुनौतियाँ इस प्रकार हैं- लोकतांत्रिक शासन, गरीबी घटाना, संकट निरोध और पुनरुत्थान, चाहे वह आतंकवाद या हिंसात्मक संघर्षो से उपजा हो, या प्राकृतिक विपत्तियों से ऊर्जा, पर्यावरण, एक टिकाऊ विकास, सूचना और संचार तकनीकी, बीमारी एड्स की रोकथाम आदि प्रत्येक क्षेत्र में मानव विकास मानव अधिकार के संरक्षण, विशेषकर महिलाओं की शिक्षा और सशक्तिकरण की पैरवी करता हैं।

सतत् विकास के लिए हाल के वर्षो में शिक्षा के क्षेत्र में जबर्दस्त प्रगति की गई हैं। स्कूल जाने वाले बच्चों की संख्या में अत्यधिक वृद्धि हुई हैं लेकिन 11 करोड़ 50 लाख से भी अधिक बच्चों की जिनमें से लगभग 56 प्रतिशत विकासशील देशों की लड़कियाँ है, प्राथमिक शाला तक भी पहुँची नहीं है और अनेक बच्चे जो स्कूल जाना भी शुरु करते हैं, गरीबी या पारिवारिक सामाजिक दबाव के कारण बीच में ही पढ़ाई छोड़ने पर विवश हो जाते हैं। साक्षरता के विशाल प्रयासों के बावजूद लगभग 86 करोड़ 20 लाख वयस्क निरक्षर ही बने हुए हैं। इनमें से दो तिहाई स्त्रियाँ है।

विकास के लिए संयुक्त राष्ट्र दशक (वर्ष 2003 से 2012) इस ज्वलंत विषय पर ज्यादा ध्यान आकर्षित करता है। विभिन्न प्रकार के शोधों से पता चलता है कि शिक्षा की प्राप्ति और समुन्नत समाज सूचकों के बीच घनिष्ठ सम्बन्ध है, क्योंकि स्त्रियों पर पढ़ाई का एक विशेष गुणात्मक प्रभाव पड़ता है जैसे-एक शिक्षित स्त्री स्वस्थ होगी, उसके बच्चे भी कम होगें तथा घरेलू आय वृद्धि के लिए उसके पास अधिक अवसर होंगे। इसके फलस्वरुप उसके बच्चों की मृत्युदर भी निम्न होगी, उन्हें बेहतर पोषण आहार मिलेगा और कुल मिलाकर उनकी तन्दरुस्ती होगी। इसी कारण अनेक संयुक्त राष्ट्र एजेंसियों के शिक्षा कार्यक्रमों में लड़कियों और स्त्रियों पर ज्यादा ध्यान केन्द्रित किया गया है।

* शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सेंधवा (म.प्र.) भारत

मानव सतत् विकास की संकल्पना सार्थक तब ही हो सकती हैं, जब विश्व की आधी आबादी महिलाओं की शिक्षा पर विशेष ध्यान दिया जाएगा। यह प्राकृतिक सत्य के अधिक नजदीक सही प्रतीत होता है। सतत् विकास की दिशा में सामाजिक विकास का आर्थिक विकास के साथ अटूट सम्बन्ध है। संयुक्त राष्ट्र ने भी विकास के सामाजिक पक्ष पर जोर दिया है ताकि सभी लोगों के लिए बेहतर जीवन का उद्देश्य समस्त विकास प्रयत्नों का केन्द्रीय लक्ष्य बना रहें। सभी के सतत् विकास के लिए 1990 के वर्ष से बड़े-बड़े विश्व सम्मेलन आयोजित किए गए जो कि निम्नानुसार है -

- सभी के लिए शिक्षा पर विश्व सम्मेलन- 1990 जोमतीन थाईलैंड।
- बच्चों के लिए विश्व शिखर सम्मेलन- 1990 न्यूयार्क।
- पोषण पर अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन- 1992 रोम।
- पर्यावरण एवं विकास पर संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन- 1992 रियो-द्-जनेरियों।
- मानव अधिकार पर विश्व सम्मेलन- 1993 वियना।
- जनसंख्या एवं विकास पर अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन- 1994 काहिरा।
- लघुद्धीप विकासशील राज्यों के टिकाऊ विकास पर सम्मेलन- 1994 बारबोउस।
- सामाजिक विकास के निमित्त-विश्व शिखर सम्मेलन 1995 कोपेनहेगन।
- महिलाओं पर चतुर्थ विश्व सम्मेलन-समानता, विकास और शांति के लिए कार्य- 1995 बिजिंग।
- मानव पर्यावरण सम्मेलन- 1996 इस्तांबल।
- विश्व खाद्य शिखर सम्मेलन- 1996 रोम।
- विश्व शिक्षा मंच-2000 उकार।
- न्यूनतम विकसित देशों के लिए सम्मेलन-2001 ब्रुसेल्स।
- नस्लवाद के विरुद्ध विश्व सम्मेलन-2001 उरबन।
- विकास के लिए वित्त पोषण पर अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन-2002 मानटेरी।
- वृद्धावस्था पर द्वितीय विश्व सम्मेलन-2002 मैंड्रिड।
- टिकाऊ विकास के लिए विश्व शिखर सम्मेलन-2002 जोहांसबर्ग।

मानव विकास की संकल्पना को सार्थक करने के लिए विश्व स्तर पर अनेक सम्मेलनों के माध्यम से विभिन्न प्रकार के कार्यक्रमों को अंजाम देकर मानव विकास के विभिन्न क्षेत्रों में विभिन्न स्तरों पर कार्य करके विकास की दिशा में सतत् प्रयास किये जाते रहे हैं परन्तु पर्यावरण एवं प्रकृतिजन्य आपदाए एवं विपत्तियाँ भी समय-समय पर मानव विकास को अवरोधित करती रही हैं। फिर भी मानव विकास की दिशा में विश्व के देश सतत् प्रयत्न करते हैं और परिवर्तन के नियम को सार्थक कर सतत् मानव विकास की संकल्पना को सार्थकता की ओर अग्रसित कर रहे हैं। इससे निश्चित ही यह कहा जा सकता है कि प्रकृति में परिवर्तन होते रहेंगे और सतत् मानव विकास भी समयानुसार होता ही रहेंगा, क्योंकि प्रकृति और परमात्मा का विधान कभी गलत नहीं हो सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. फड़िया, डॉ. बी. एल. - अन्तर्राष्ट्रीय कानून, साहित्य प्रकाशन, आगरा।
2. फड़िया, डॉ. बी. एल. - अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति, साहित्य प्रकाशन, आगरा।
3. फड़िया, डॉ. बी. एल. - समकालीन राजनीतिक मुद्दें, साहित्य प्रकाशन, आगरा।
4. जैन, डॉ. पुखराज - राजनीतिक सिद्धान्त, साहित्य प्रकाशन, आगरा।
5. संयुक्त राष्ट्र संघ चार्टर।
6. स्वविवेक पर आधारित।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to September 2017, Vol. I

स्वतंत्र भारत के विकास में महिलाओं का योगदान एवं चुनौतियां (विविध क्षेत्रों में योगदान एवं चुनौतियां)

कृष्ण कुमार गुप्ता *

प्रस्तावना – भारत एक विशाल देश है, जिसमें अनेक विविधताएं हैं। हिन्द महासागर के शीर्ष पर स्थित भारत न केवल एशिया महाद्वीप का बल्कि विश्व का एक अति महत्वपूर्ण व अति प्राचीन देश है। पूर्व में भारत को सोने की चिड़िया कह कर पुकारा जाता था। आज भारत उड़ता हुआ, जगता हुआ, सदी-सदी का सबसे तेज विकास करने वाला राष्ट्र है। यहां अकूट खनिज संसाधन तो है ही उसे बड़ी संसाधन मानव संसाधन भारत की है। जिसमें पुरुश के साथ महिलाएं भी शामिल है, महिलाएं पुरुषों के साथ कंधे से कंधा मिलाते, परिवार को सहेजते हुए देश के विकास में अपना चहुंमुखी योगदान प्रदान कर रहे हैं। भारत में 1991 की जनगणना के अनुसार कुल जनसंख्या 84.63 करोड़ थी, इनमें पुरुषों की संख्या 43.923 करोड़ तथा महिलाओं की 40.707 करोड़ थी। 2001 की जनगणना के अनुसार कुल जनसंख्या 102.70 करोड़ थी। इसमें 53.12 करोड़ पुरुष व 49.57 करोड़ स्त्रियां हैं। आज भारत में पुरुषों एवं महिलाओं का अनुपात 1000:933 है। स्त्री साक्षरता प्रतिशत 54 है।

महिलाओं का विविध क्षेत्रों में योगदान – भारत में महिलाएं अब सभी तरह की गतिविधियों जैसे- राजनीति, मीडिया, कला-संस्कृति, शिक्षा, सेवा क्षेत्र, विज्ञान, अंतरिक्ष, खेल एवं प्रौद्योगिकी आदि में हिस्सा एवं भूमिका महत्वपूर्ण है, जिनमें-

कला एवं संस्कृति– लता मंगेश्कर भारत की स्वर कोकिला, स्वर सामग्री के नाम से मशहूर तथा आशा भोंसले गायिका संगीत कला जगत के क्षितिज में भारत को नई पहचान दी है। इसके अलावा एम.एस.सुब्बुलक्ष्मी, गंगवाई हंगल शामिल हैं। ऐश्वर्या राय जैसी अभिनेत्रियां जो मिसवर्ल्ड रही है उन्होंने भारत का मान पूरी दुनिया में बढ़ाया। आंजोली इला मेनन चित्रकारी की अद्‌भूत कारीगारी में अपना योगदान स्वतंत्र भारत के विकास में दिया।

खेल– भारत में खेल परिदृश्य को बुलंदी दिलाने में भारतीय महिलाओं का उल्लेखनीय योगदान है। भारत की प्रसिद्ध महिला खिलाड़ियों में पी.टी.उषा(दौड़), जे.जे.शोभा (एथलेटिक्स) कुंजरानी देवी, कर्णम मल्हेश्वरी(भारोत्तोलन), झूलन गोस्वामी(क्रिकेट), साइना नेहवाल (बैडमिंटन), सानिया मिर्जा(टेनिस), कोनेरुहम्पी(शतरंज), मेरीकॉम (बॉक्सिंग), सब्बा अंजुम(हॉकी), ओलंपिक पदक जितने वाले भारतीय महिलाएं जो स्वतंत्र भारत के विकास में अपना सबल भागिदारी दे रहे हैं।

राजनीति– भारत में पंचायती राज संस्थाओं के माध्यम से दस लाख से भी अधिक महिलाओं ने सक्रिय रुप से राजनीतिक जीवन में प्रवेश किया है। स्वतंत्र भारत में कुछ ऐसे सशक्त महिलाएं हुई जो अपने दम पर राजनीति के क्षेत्र में देश को चहुंमुखी विकास दिया। इनमें तत्कालिन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी जो दुनियां की सबसे लंबे समय तक सेवारत महिला प्रधानमंत्री है। भारत की पहली महिला राष्ट्रपति श्रीमती प्रतिभा देवी सिंह पाटिल, कांग्रेस राष्ट्रीय अध्यक्ष श्रीमती सोनिया गांधी तो विश्व की सशक्त महिलाओं में शामिल हैं।

साहित्य– भारतीय साहित्य जगत में कई ऐसी सुप्रसिद्ध लेखिकाएं, कवित्रियां और कथा-लेखिकाएं हुई हैं, जिन्होंने देश को नया आयाम दिया- जिनमें शामिल हैं- सरोजनी नायडू (भारत कोकिला), कमला सुरैया, शोभा डे, अरुधंति राय, अनिता देसाई।

वाणिज्य एवं प्रौद्योगिकी – 2013 अक्टूबर, नवम्बर में भारत की लगभग आधे बैंक व वित्त उद्योग की अध्यक्षता महिलाओं की हाथ में थी, जिन्होंने प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में अपना अमुल्य योगदान देकर स्वतंत्र भारत के विकास में अपना अमुल्य योगदान दिया।

अंतरिक्ष – भारतीय मूल के सुनीता विलियम्स, कल्पना चांवला ने अंतरिक्ष में चहल-कदमी कर अपना नाम सुनहरे अक्षरों में चिन्हित कराया जिससे स्वतंत्र भारत का नाम, विश्वपटल पर और भी स्पष्ट हो गया कि आने वाला समय हम सब भारतीयों का है।

महिलाओं का विविध क्षेत्रों में चुनौतियां – ऐसा माना जाता है कि जहां अच्छाईयां होती है, वहां बुराईयां भी होती हैं। सफलता असफलता की पूरक होती हैं। इस क्रम में जहां विकास होती वहां कई चुनौतियां भी मौजूद रहती हैं। ये चुनौतियां इस प्रकार देखी जाती हैं-

यौन उत्पीड़न –1990 में महिलाओं के विरुद्ध दर्ज की गई अपराधों की कुल संख्या का आधा हिस्सा कार्य स्थल पर छेड़छाड़ और उत्पीड़न से संबंधित थी। हाल ही में निर्भया केस यौन उत्पीड़न का जीता जागता सबूत जो देश के विकास में बाधा व समाज के सामने बड़ी चुनौतियां के रुप में होती है।

दहेज प्रथा– देश की प्रमुख चुनौतियों में दहेज प्रथा एक भयंकर कोढ़ की तरह है। जो लाडला की हद को अवैमनस्यता को दर्शाता है। 1985 में दहेज निषेध नियमों का हवाला दिया गया, कई ऐसे कानून को जिससे दहेज प्रथा का परिचालन चलन बंद हो, पर ऐसा कम ही देखने को मिला। यह भी देश की प्रगति में बाधक रुप लेते हुए चुनौतियों से कम नहीं है।

बाल विवाह– भारत में बाल विवाह परंपरागत रुप से चली आ रही है। यह प्रथा आज भी जारी है। हालांकि 1860 में बालविवाह को गैरकानूनी घोषित कर दिया गया था। परंतु आज भी यह एक आम प्रथा किसी चुनौतियों से कम नहीं।

कन्या भ्रूण हत्या और लिंग के अनुसार गर्भपात– भारत में शादी किए हुए जोड़े का बेटा पाने की चाहत में बेटी को उसके गर्भ में ही नष्ट कर देना गर्भपात, कन्या भ्रूण हत्या है। भारत जैसे विकासशील देश में विकास की सबसे बड़ी चुनौतियों में कन्या भ्रूण हत्या और गर्भपात है।

* शोधार्थी (राजनीति विज्ञान) शासकीय वि.या.ता.स्नातकोत्तर स्वशासी महाविद्यालय, दुर्ग (छ.ग.) भारत

मानव तस्करी– 1956 में पारित अनैतिक तस्करी(रोक) अधिनियम था। परंतु कहीं न कहीं अज्ञानता, बेरोजगारी के कारण मानव तस्करी के मामले आए दिन देखने को मिलते हैं। ये भी बहुत बड़े चुनौतियां है।

घरेलू हिंसा– घरेलू हिंसा कानून,2005 से महिलाओं का संरक्षण 26 अक्टूबर 2006 को अस्तित्व में आया, फिर भी आज हम देखते हैं महिलाएं कहीं न कहीं किसी वजह से घरेलू हिंसा का शिकार बनती हैं। ये भी देश के विकास में सबसे बड़ी चुनौतियां है।

सुझाव– स्वतंत्र भारत के विकास को महिलाओं के सन्दर्भ में जोड़कर देखें तो पूर्व की अपेक्षा वर्तमान में देश की प्रगति का ग्राफ बढ़ा है, उसमें महिलाओं का भरपूर योगदान रहा है। चुनौतियां विकास के आडे आती ही हैं, लेकिन चुनौतियों में ही कहीं न कहीं छिपी होती है विकास। अगर हम उपरोक्त चुनौतियों का सामना कर लेते हैं, तो हमारा स्वतंत्र भारत फिर से 'सोने की चिड़िया' बन सकती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. इन्टरनेट से प्राप्त।
2. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

History of Indigenous Inventions & Innovations

Dr. Aditi Pitaniya *

Abstract - Whenever we talk about Indigenous or Tribal traditional Knowledge we cannot overlook or steer away from Indigenous art and innovation which evolved without any help of a Hi-tech Lab. The skill with which the Indigenous people of India are able to sustain their livelihood is not only unique but utilitarian also. In other words, it's very practical and useful in daily life. Each of their product or art signifies their love and respect towards Mother Nature. In a way, they show gratitude for each of the thing they take from nature in making their living. This sentiment has often resulted in continuance of Tribal inhabited areas as less or low polluted areas in terms of Air/Chemical pollution in India. Most of the products made by the Indigenous people are eco-friendly these are either made from Trees or plant parts. In fact, these people silently teach everyone of the modern individual to be nature conservationist which is the call of the day.
Keywords - Indigenous, Inventions, Innovations, India, nature conservation etc.

Introduction - Many Native Inventions are created by the Indigenous people that are still in use today. Soon after the arrival of Columbus, detailed descriptions of the inventions of Indigenous Peoples began to make their way back to Europe. Not satisfied that "adivasi or savages" would be able to generate such innovation, rumors began to spread that most of the inventions were made by the modern races, Christians or Israelites. Such rumors still exist today and in fact continue to be discussed by archeologists. But all of this aside, indigenous cultures have created thousands upon thousands of innovations that are in use today in the most modern of practices, be it a tub of popcorn at the movies, the administering of medicines with surgical precision or the removal of tartar from teeth in modern dentistry. In order to give some more credit where credit is due to our ancestral innovators, here are some Native inventions and innovations that changed the world. These are but a few examples of indigenous ingenuity, but highlighting them serves to unveil yet another facet of hidden history.

'Innovation is nothing but invention added into implementation or commercialization'. While invention is described as the first occurrence of an idea for a new product or process, innovation is the first attempt to carry it out into practice. The emphasis here is on the 'newness' of the idea. Innovation creates new value rather than new knowledge. Innovation is not science or technology. It is about business. Innovations are, generally classified into three broad categories, ie.; incremental innovations, new-to-the-market/society innovations and breakthrough Innovations. Most innovations take place incrementally. Innovation can occur from the bottom-up or be sponsored from the top-down. Each approach will have its strengths and limitations (Gaynor 2002).

Innovation depends on four major elements: resources, infrastructure, culture and process. Innovation cannot take place if any of these four elements are missing. All four are equally important. Innovation encompasses three overlapping dimensions, which are –individual, team/teams (including you), and the organization/group. The individual/ you will be the centre of the entire process of innovation, as only an individual will have new ideas. But taking ideas to market involves team work, for, one person cannot do it on his/her own. One needs to combine several different types of knowledge, capabilities, skills and resources to convert invention/idea into innovation. The leader of the team here plays a key role to effectively coordinate this process to achieve the goal/tasks. The personality of the organization/group, known commonly as culture, plays a vital role in innovation. The innovation process generally falls under three major phases that are; generating ideas, harvesting ideas and developing and implementing these ideas. The common factor in these three phases is teamwork – synergy amongst the group. 'Innovation is about action, it isn't about perfection.' believes IDEO (Gaynor 2002), (Kelley and Littman 2004), (Adair 2003).

Indigenous Inventions & Innovations

1. Syringes, or Hypodermic Needles - In 1853, Scotsman Alexander Wood was credited with inventing the syringe. But, it has been recorded that in pre-Columbian times, South American Indians used a type of syringe made from sharpened hollow bird bones. They used to attach hollow bird bones to small bladders to inject medicine, irrigate wounds or even clean ears. Additionally, Indigenous healers also used larger and similar instruments for enemas.

* Asst. Professor, Centre for Excellence for Indigenous Knowledge, Tribal Integrated Study and Digital Translation Technology, Indira Gandhi National Tribal University (IGNTU), Amarkantak (M.P.) INDIA

2. Oral Contraception - An oral contraceptive is a substance taken usually as pills or tablets, by mouth to prevent pregnancy. Instances of Indian women taking such substances date back to the 1700s, more than 200 years before the creation of a man-made substance by western medicine. One of the herbs used was Abres precatories (Ghunghachi or Ratti, white in colour). Basically a root, it is taken orally in powdered form or as a paste. The Indigenous Healers recommend a teaspoonful after menstruation for three to five days to prevent pregnancy.

3. Cigarette - A Maya man is shown smoking a roll of tobacco leaves tied with string on a 1,000-year-old pottery vessel found in Guatemala. The Maya word for smoking was sikkar, which became the Spanish word cigarro. Likewise, British had learned from Indians how to cultivate tobacco. In India, one can easily find a roll of tobacco leaves tied with string used for smoking; commonly known as Bidi or Biri.

4. Pest Control - To combat insects such as lice infestation, the Indigenous people of Central India, for example, washed their hair in a hot infusion made from sweetroot., Indigenous people also used a hot infusion made from Azadirchta indica (Kadwa neem) or leaves of Anona squmosa (Sitafal or Chhitafal) in India. They also sprinkled ashes on their crops to thwart or squash bugs. They also used ground buffalo gourd to fend off garden pests, and Inca cotton farmers planted lemon verbena and burned it as a pesticide.

5. Machia - It is an Indigenous traditional Indian low seat or chair with symmetrical weavings. The colours are usually off white/white/cream, depending upon the material used for weaving. These Machia are attractive and utilitarian. They bring life into any seating area. These were the easy replacement of Sofa sets in the rural India.

6. Khatola or Khatoliya - It is a small bed made from the ropes of Bagai grass or Mova or Moa grass. This open patterned woven daybed is basically a traditional Indigenous daybed. It can be used it as a place to meditate, relax, or simply dry your delicate laundry. This ethical piece is comprised of Sal/Sheesham wood from replanted forests and rope made from jute or Bagai grass or Mova or Moa grass. Made by skilled artisans, pieces may slightly vary, adding to the overall special beauty of each.

It is versatile for use in the living room as a day bed or bench, or in the bedroom as an ottoman.

7. Pavsul or Pahsul - Large size sickle used for cutting hard skin fruits like jackfruit or leafy vegetables. It is also useful for cutting chicken/goat etc. it is easy to use and the art of cutting can be learnt through it if practiced properly. It was an easy replacement for modern knife.

8. Pharmaceuticals - In the United States, North American Indians have medicinal uses for 2,564 plant species. The All India Coordinated Research Project credits Indigenous communities with the knowledge of 9000 plant species out of which 7500 are used for human healing and veterinary health care. Dental care products like datun, roots and condiments like turmeric used in cooking and ointments are also tribal discoveries. Ayurvedic cures for arthritis, diabetes and night blindness owe their origin to the tribal knowledge.

9. Godna or Tatto Art - The tribal or Indigenous people are known worldwide for sporting the latest trend i.e. Tatto art on the body parts. This art dates back to the primitive age where indigenous people marked their body with interesting designs which they intend to take with them in the afterlife when they died. These tattoos vary according to the Tribes or the message they carry. In Central India, the Indigenous people known for having interesting tattoos all over their body are the Baigas.

10. Petroleum Collection and Extraction - The discovery of Petroleum or oil in the United States is usually credited to Edwin L. Drake, who drilled an oil well in Pennsylvania in 1859. But it is a known fact that Native Americans sunk pits into the ground more than 400 years ago in the Oil Creek Flats of Pennsylvania. These 15 to 20 feet deep pits were walled with vertical timbers that had been cut with stone axes. Many historians like J.A. Caldwell who wrote about the oil pits assumed the work was done by a race of people who occupied the country prior to the advance of the Indian tribes. However, the French general Montcalm, traveling to Fort Duquesne in 1750, said he observed the Seneca and other Iroquoian Indians set fire to the oil that seeped from the ground for ceremonial fires. They also slathered protective lotion (like petroleum jelly) onto their skin.

11. Musical Instruments - Some of the musical instruments which were invented by the Tribals in India are as follows –

1. Gudum
2. Nagada
3. Timki
4. Turhi

Tribals also use many things for Agriculture and related purposes ranging from sowing to grinding of seeds. The Indigenous people are also known for products like Pattal-Dona (Plate and Bowl) which are along the line of nature conservation.

Indigenous Innovations – A Way Ahead - Indigenous innovations can aid developing nations embark on a cumulative path of positive growth; thereby helping them join the ranks of the more advanced nations. Local challenges and opportunities that are as varied as the individual communities themselves provide great opportunities to stimulate economic growth by capitalizing on the local knowledge and resources residing in the communities. 'One style of innovation that really works in a country as large and diverse as ours is grassroots innovations: this includes inventions for a milieu that is quintessentially Indian. … they are critical to how Indian ingenuity can be directly used to transform our circumstances, in ways that elite corporate research laboratories never can' wrote Arindam Banerji (Banerji

2004).

The need to promote indigenous innovations as evolving alternatives to development has now been well recognized. In China, the government introduced a fifteen years plan that primarily focuses on its urgent need for expanding its capacity to create "indigenous innovations". The plan, known as "National Medium and Long Term Program for Scientific and Technological Development" was introduced in the year 2006. It identifies innovation as a new national strategy for China to advance into the ranks of innovative countries by 2020. Although the industrial sector in China is burgeoning, much of this it is low value-added, labour intensive manufacturing. Majority of the industries are large multinationals owned by foreign companies, or the state-owned corporations. Realizing the urgent need to stimulate cutting-edge indigenous innovations, so as to reduce the dependence on foreign technology, the plan aims to foster smaller, entrepreneurial companies, because they are the drivers of innovation. The term 'Indigenous Innovations' is translated by them as "independent, self-reliant, and indigenous", one that combines three distinct elements: original, or genuinely new; integrated, or combining existing technologies in new ways; and assimilated, or making improvements to imported technologies.

The Need for Revitalization - Indigenous knowledge, also referred to as traditional or local knowledge, is embedded in the community and is unique to a given culture, location or society. The term refers to the large body of knowledge and skills (Indigenous Knowledge Systems and Practices/ IKSP, Indigenous Technological Knowledge/ITK) that has been developed outside the formal educational system, and that enables communities to survive. The dominance of the western knowledge system has largely led to a prevailing situation in which indigenous knowledge is ignored and neglected. It is therefore easy to forget that, over many centuries, human beings have been producing knowledge and strategies enabling them to survive in a balanced relation with their natural and social environment.

As IK is closely related to survival and subsistence, it provides a basis for local-level decision making in:

1. Food security
2. Human and animal health
3. Education
4. Natural resource management
5. Various other community-based activities

References :-

1. Gaynor, Gerard. 2002. Innovation by Design: What it takes to Keep Your Company on the Cutting Edge. New York: AMACOM.
2. Adair, A. 1996. Effective Innovation: How to stay ahead of the competition. London: Pan Books.
3. Kelley, Tom, and Jonathan Littman. 2004. The Art of Innovation: Lessons in Creativity from IDEO, America's Leading Design Firm. London: Profile Books.
4. Banerji, Arindam. 2004. Innovation: Where Has India Succeeded And Failed. Rediff.Com, (August 12),Http://Www.Rediff.Com/Money/2004/Aug/12ariban.Htm.
5. https://indiancountrymedianetwork.com/history/traditional-societies/10-native-inventions-and-innovations-that-changed-the-world/

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to September 2017, Vol. I

Unique Architecture of Ancient Payer Temple of Kashmir

Sabeen Ahmad Sofi *

Abstract - The purpose of the present paper is to identify the well-known architecture of such elegant temple. Ancient Kashmir is splendid and wonderful ruins demonstrate that the ancient Kashmiri's were great architects and produced a beautiful and impressive temple architectural style, and distinct as compared of other parts of India. The ancient architecture of Kashmir possess some unique features in many aspects because Kashmiri architects used many own styles, designs and techniques as well as local material from base to the top for the construction of their temples . In this paper study is based on theoretically and historical understanding and examination of data, archeological materials and other sources which throws light about the developments of the temple.
Key words - Architecture, techniques, sloping knoll, shade, walnut, glimpses, charming.

Introduction - Payer is situated about 19 miles towards the south of Srinagar[1] and is famous for a smallest and is among the most elegant, and also one of the most modern examples of the style.[2] The temple is located at the sloping knoll on which it stands, the cool shade of a clump of walnut trees, and the cheerful brook running at the foot of the slop, form a charming setting to a temple which would be dwarfed by scenery of a grander scale.[3] The identification of the temple with the temple of Narendrasvami, built by Narendraditya circa A.D.483-490, proposed by General Cunningham.[4] The temple consists of ten stones only and the four corners being each a single stone.[5]

As per the local folklore, ''there were five temples in payar village built by pandavas.[five brothers described in epic Hindu text Mahabharata] one day it happened some enemy launched an attack against the pandavas to capture the temples. The pandavas decide to lift them away from payar village to some safer place .their mother ascended to the top of the table land with a drum. To keep a vigil an enemy and alarm her sons by beating the drum. Once on the table land she fell asleep and drum fell from her hands, it rolled down the plateau generating a huge sound which alarmed the pandava brothers .the pandava sensed danger. They lifted up four temples. This one was left to stand in payar as they forgot to lift it in haste.''

The temple stands on moulded platform and is dedicated to Vishnu as surya or the sun god.[6]It is about nine feet square and about six feet high, both in its exterior and interior.[7] The temple is open on all the four sides and approached by steps from on the east side.[8]

Inside the cupola is radiated so as to represent the sun,and each corner of the square the space intervening between the angle and the line of the circle is filled by a celestial attendant who seems to be sporting at the edge of its rays.[9] The roof has been partly displaced,which is said to have been the result of an attempt made by the pathans to take it down and remove it to the city.[10] The shrine has four doorways each crowned by trefoils surmounted by pediments .[11] The niche on the eastern front gate depicts lakulisa with his four disciples, the deity is seated across legged on a wicker seat.[12] The northern niche depicts bhairava,Shiva in the form of bhairava kill the elephant demon nila.[13] The western niche depicts dancing Shiva in high relief,six armed Shiva carries trident and khatvanga and dances to the tune of male drummer and female flute player.[14] The southern niche depicts three headed Shiva, the central image of Shiva is having Aghora on its right and Uma on its left side.[15] The ceiling of the temple carved out of single stone block is dome shaped and the interior is still occupied by a large stone lingam.[16]

In the interior the walls are plain, but the roof is hollowed out into a hemispherical dome of which the center is decorated by an expanded lotus flower.[17] The stones in the doorways and roof are engraved depicting various figures of Shiva and some animals such as geese, bull, elephant and decorative bands could also be seen.[18] The cult image of the Payer Temple is a Shiva linga, which has an octagonal base.[19]

Conclusion - In conclusion we can say, that Kashmir is a heaven for the artist with a romantic temperament, the stone architecture added its attraction. Ancient temple architecture of Kashmir represents a tradition of its own and some unique features in many aspects because Kashmir since antiquity has been functioning as a cultural bridge between India on the one hand and central Asia, Gandhara , Egyptian etc on the other hand. Consequently ancient temple

*Research Scholar, Department of History, R.D.V.V., Jabalpur (M.P.) INDIA

architecture of Kashmir was greatly influenced by the art of these foreign countries very much. This is the reason that the great ancient Kashmiri architects created a distinct temple architectureeffected by both India as well as central Asian art style. Payer temple is simple, attractive and impressive but smaller in size than templesin other parts of India.

References :-

1. Lawrence, R. Walter, the valley of Kashmir, London, [1895] p.176
2. Fergusson, James, History of Indian and Eastern Architecture, London, [1891] p.294
3. Morison, Margaret cotter, A Lonely summer in Kashmir, London [1904] p.18
4. Kak, R.C. Ancient Monuments of Kashmir, London, [1953] p. 126
5. Lawrence R. Walter, the Valley of Kashmir, London, [1895] P.176
6. M.D. W.Wakefield, The Happy Valley: Sketches of Kashmir and the Kashmiris, London, [1879] .p.241
7. Ibid, p. 241.
8. Kak, R.C. Ancient monuments of Kashmir, London, [1953].p.126
9. Lawrence R. Walter, The Valley of Kashmir, London, [1895] P. 176
10. Ibid, p.176.
11. Kak, R.C. Ancient Monuments of Kashmir, London, [1953] p. 126.
12. Ibid, p.126.
13. Ibid, p.127.
14. Ibid, p.127.
15. Ibid, p. 127.
16. Koul Anand , Archaeological Remains in kashmir.p.47.
17. Kak, R.C. Ancient Monuments of Kashmir, London, [1953] p.176
18. Lawrence R. Walter, the valley of Kashmir, London, [1895] p.176
19. Kak, R.C. Ancient Monuments of Kashmir, London, [1953] p.126

****

भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन में पूँजीपति वर्ग की भूमिका

पंकज कुमार मिश्र *

शोध सारांश – हमारे देश के स्वाधीनता आन्दोलन में पूँजीपति वर्ग की एक महत्वपूर्ण भूमिका थी। यह वर्ग ऐसा था जो भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के साथ मिलकर राष्ट्रीय आन्दोलन की धार को तेज करने का कार्य कर रहा था। आन्दोलन के दिग्गज नेताओं ने इन्हें प्रश्रय प्रदान कर रखा था। समय के बदलाव के साथ ही इस वर्ग की नीतियों में भी परिवर्तन हुए परन्तु कुल मिलाकर यह वर्ग आंदोलन के उद्देश्यों की पूर्ति करता हुआ दिखायी देता है। यद्यपि इस पर विभिन्न प्रकार के आरोप भी लगे परन्तु यह अपने मूल उद्देश्यों से कभी पीछे नही हटा तथा जन, धन एंव बल से स्वाधीनता संग्राम को पल्लवित ही करता रहा।

प्रस्तावना – भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन के विकास में भारतीय पूँजीपति वर्ग की अहम भूमिका थी। अधिकतर पूँजीपतियों ने अपनी एक विशेष पहचान बना ली थी तथा वे खुलकर राष्ट्रीय आन्दोलन का साथ दे रहे थे। इन पूँजीपतियों की श्रेणी में **जमनालाल बजाज, बडीलाल लल्लू भाई मेहता, सैमुएल ऐरो, लाला शंकर लाल** इत्यादि के नाम उल्लेखनीय हैं। कुछ ऐसे भी लोग थे, जो आंदोलन में प्रत्यक्ष रूप से शामिल नहीं थे परन्तु परोक्ष रूप से वे राष्ट्रीय आन्दोलन के विकास में योगदान करते थे। **घनश्याम दास बिड़ला, अंबालाल साराभाई और बालचंद हीराचंद** के नाम इसी श्रेणी में आते हैं।

औपनिवेशिक शासन में भारतीय पूँजीपति वर्ग का काफी ठोस विकास हुआ था तथा अन्य उपनिवेशों की तुलना में यह बहुत कुछ भिन्न था। भारतीय पूँजीवाद का विकास 19वीं शताब्दी के मध्य में शुरू हुआ था। भारतीय पूँजीवाद का आधार स्वतंत्र था। दूसरी तरफ भारतीय पूँजीवादी वर्ग साम्राज्यवादी हितों का पोषण करने के लिए बाध्य भी नहीं था। पूँजीवादियों ने अपने मशहूर **'बाम्बे प्लान'** (1944-1945) में बड़े पैमाने पर भूमि सुधार और उत्पादन,वित्त और विपणन के क्षेत्र में सहकारी पद्धति लागू करने की भी मॉग प्रस्तुत की थी। इस प्लान की सहमति पर **जे0 आर0 डी0 टाटा, घनश्यामदास, बिड़ला, आर्देशिर दलाल, श्रीराम, कस्तूर भाई लाल भाई, ए0 डी0 श्रॉफ तथा जॉन मथाई** के दस्तखत थे। सन् 1914 से 1947 के मध्य पूँजीपति वर्ग का विकास हुआ। सन् 1920 के बाद अधिकतर क्षेत्रों पर भारतीयों का ही कब्जा था तथा हालात ऐसे हो गए कि देशी बाजार का 72-73 प्रतिशत तक भारतीयों के पास ही था। एक रिपोर्ट के अनुसार संगठित बैंकिंग क्षेत्र की कुल जमा राशि का 80 प्रतिशत भारतीय उद्यमियों का ही था। औपनिवेशिक पूँजीपति वर्ग की यह असमान्य प्रगति उपनिवेशवाद की सहज परिणति नहीं थी। बल्कि यह परिणाम था उस संघर्ष का जो उन्होंने साम्राज्यवादी आर्थिक नीतियों के खिलाफ किया था।

घनश्याम दास बिड़ला तथा पुरूषोत्तम दास ठाकुरदास जैसे अनेक पूँजीपति भारतीय व्यवसायियों का ऐसा संगठन बनाने का प्रयास कर रहे थे जो औपनिवेशिक सत्ता के सामने अपनी माँगों को रख सके। यूरोपीय पूँजीवादियों का हित भी संगठित रूप से हो रहा था। अतएव उसका विरोध करना भी आवश्यक था। इस दिशा में पहला कदम था, सन् 1927 में **भारतीय वाणिज्य उद्योग महामंडल (फिक्की)** का गठन ।पूरे देश के व्यापरियों तथा पूँजीपतियों का इसमें प्रतिनिधित्व था। इसे कालान्तर में भारतीय पूँजीपति वर्ग का प्रतिनिधित्व करने वाला मान लिया गया। पूँजीपति वर्ग के नेता फिक्की को व्यापार, वाणिज्य तथा उद्योग का राष्ट्रीय प्रतिनिधि मानने लगे थे। धीरे-धीरे यह संगठन औपनिवेशिक भारत में भारतीयों के आर्थिक हितों का प्रतिनिधित्व करने लगा। इन्होंने अपने अभियान की शुरूआत साम्राज्यवादी आर्थिक नीतियों का बहिष्कार कर के की। कांग्रेस ने अपने अधिवेशन के माध्यम से इन माँगो का समर्थन किया। इस संगठन के नेताओं ने यह महसूस किया कि उन्हें राजनीति में घुसकर सक्रिय भूमिका निभानी चाहिए। फिक्की के दूसरे वार्षिक अधिवेशन में फिक्की के अध्यक्ष पुरूषोत्तम दास ने घोषणा की कि हम सब अपनी राजनीति को अर्थनीति से अलग नहीं रख सकते हैं। हमारा राष्ट्रीय आन्दोलन जितना मजबूत एवं विशाल होगा उसी के अनुपात में हमारा वाणिज्य एवं व्यापार भी विकसित एवं मजबूत होगा। इसके बाद घनश्यामदास बिड़ला ने भी यही बात कही, **'वर्तमान में सरकार को अपने पक्ष में मोडना असंभव है परन्तु यदि हम ऐसे लोगों को मजबूत करें जो देश की आजादी की लड़ाई के लिए लड़ रहे हैं, तो हमारा पक्ष भी मजबूत होगा।'** अपने उद्देश्यों की पूर्ति हेतु भारतीय पूँजीपति वर्ग ने संवैधानिक तरीकों के पालन का निश्चय किया। ताकि जनसामान्य में उनकी छवि घूमिल न होने पाए।

यह वर्ग अधिक लम्बे समय तक राष्ट्रीय आंदोलन को समर्थन देने से हिचकिचाता था क्योंकि इससे उसकी व्यापारिक गतिविधियाँ भी प्रभावित होती थीं। भारतीय पूँजीपति वर्ग द्वारा संवैधानिक गतिविधियों जैसे विधानसभा या वायसराय की कार्यकारिणी में हिस्सेदारी का अर्थ यह कदापि नहीं समझना चाहिए कि यह वर्ग साम्राज्यवादी नीतियों का पक्षधर था, अपितु वे इसे सत्ता पक्ष का विरोध जताने का साधन मात्र मानते थे। इस प्रकार वे इन संस्थाओं के माध्यम से सरकारी नीतियों पर प्रतिबन्ध लगा सकते थे।

उन्होंने कभी भी किसी संवैधानिक सुधार को बिना शर्त के स्वीकार नहीं किया तथा अंग्रेजी कार्यक्रमों में इनकी भागीदारी भी सशर्त थी। अपने

* शोधार्थी (इतिहास) बाबा साहेब भीमराव अंबेडकर केन्द्रीय विश्वविद्यालय, लखनऊ (उ.प्र.) भारत

सिद्धान्तों को इन्होंने अपने हितों के कारण कभी भी तिलांजलि नहीं दी। जब भी उन्हें यह प्रतीत हुआ कि सत्ता उन्हें उनकी न्यूनतम राष्ट्रीय मांगो से भी कम दे रही हैं, इन्होंने इसे स्वीकर नहीं किया। इसी कारण फिक्की ने 1934 में भारत में संवैधानिक सुधारों के लिए गठित संयुक्त संसदीय समिति की रिपोर्ट को नामंजूर कर दिया था। शुरू से ही भारतीय पूंजीपति वर्ग भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की नीतियों से बहुत प्रभावित रहा था। इस बात के स्पष्ट प्रमाण हमें 1930 में गोलमेज सम्मेलन के गठन के मौके पर प्राप्त होते हैं। एक पूॅजीवादी नेता के अनुसार–

'संवैधानिक समस्या पर कोई भी सम्मेलन तब तक सफल नहीं हो सकता है जब तक कि इसमें गॉधी जी स्वतंत्र हैसियत से भाग नहीं लेते या कम से कम इस तरह के सम्मेलन हेतु उनकी मंजूरी नहीं ले ली जाती है।'

पूॅंजीपति वर्ग यह अच्छी तरह से जानता था कि केवल कांग्रेस ही ऐसी एक मात्र पार्टी थी, जो कुछ हासिल कर सकती थी और वे नहीं चाहते थे कि गोलमेज सम्मेलन में भारत का प्रतिनिधित्व विभाजित धडो द्वारा किया जाए। उन्हें यह आभास था कि कांग्रेस के समर्थन के बिना उनकी आवाज को सुनने वाला कोई न था।

पूॅंजीपति वर्ग का लक्ष्य संविधानवाद नहीं था तथा वे लक्ष्य के लिए उतावले नहीं थे। पूजीपति वर्ग ने कभी भी संघर्ष के अन्य तरीके अपनाए जाने की संभावना से इन्कार नहीं किया। 1937 में सत्ता में हिस्सेदारी के लिए कांग्रेस को राजी करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाले घनश्यामदास बिडला ने लार्ड हैलीफैक्स और लार्ड लोथिमन को चेतावानी देते हुए कहा था कि, **'कांग्रेस महज सत्ता में शामिल होने के लिये प्रयास नहीं कर रही है बल्कि इसका लक्ष्य अंतिम परिणाम को प्राप्त करना भी है।'**

भारतीय पूँजीवादी वर्ग का रूख सविनय अवज्ञा आन्दोलन की ओर संशय से भरा था। एक ओर वे इसे ज्यादा लंबा नही चलाना चाहते थे तथा दूसरी ओर स्वतंत्रता प्राप्ति का हेतु भी मानते थे। इस सम्बन्ध में घनश्यामदास, बिड़ला का कथन उल्लेखनीय है।

'इसमें संदेह नहीं कि हमें आज जो कुछ भी दिया जा रहा है वह गॉधी जी के कारण हैं तथा यदि हम चाहते हैं कि कुछ हासिल हो तो वह सविनय अवज्ञा आंदोलन से ही संभव हो पायेगा।'

उल्लेखनीय है कि आंदोलन की दीर्घकालीन रणनीति पूँजीवादी हितों को पेरशान करती थी। इसका अर्थ यह नहीं है कि वे सत्ता के सामने आत्मसमर्पण को तैयार नहीं थे। इस प्रकार उनका उददेश्य दोहरा था समझौता हो जाए पर राष्ट्रीय आन्दोलन कमजोर न पडे। इस विषय में जनवरी 1931 को घनश्याम दास बिड़ला ने कहा था, 'हमें दो बातें ध्यान में रखनी चाहिए, पहली यह कि जब भी उचित समय आए तो हमें ऐसे समझौते के लिए प्रयास करना चाहिए। दूसरी बात हमें कोई ऐसा कदम नही उठाना चाहिए जिससे उन लागों का हाथ कमजोर हो जिनके चलते आज हम यहॉ तक पहुँचे हैं। पूँजीपति वर्ग हमेशा यही प्रयास करता था कि राष्ट्रीय आन्दोलन का कभी भी दमन न होने पाए। उन्होंने कांग्रेस और प्रेस की आजादी के लिए सरकार पर दबाव डाला। सत्ता के साथ किसी भी समझौते पर पहुँचने के लिए पूँजीपति वर्ग की यह पहली शर्त थी कि राजनीतिक बंदियो को रिहा किया जाए तथा कांग्रेस तथा प्रेस पर से प्रतिबंध हटाया जाए एवं दमनात्मक कानूनों को वापस लिया जाए। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की लडाकू ताकत वा जुझारू चरित्र से पूँजीपति वर्ग आशंकित जरूर था पर इसके चलते इस वर्ग ने कभी भी औपनिवेशिक सत्ता का समर्थन नहीं किया, न इसने कभी खुले रूप से कांग्रेस की आलोचना की तथा न ही कांग्रेस से रिश्ता तोड़ा। स्वदेशी आन्दोलन के समय यह वर्ग आंदोलन का कट्टर विरोधी था। चौथे दशक में छिड़े सविनय अवज्ञा आदोलन का अधिसंख्य भारतीयों ने समर्थन किया था। सितंबर 1930 में वायसराय ने पूँजीपति वर्ग से कांग्रेस की आलोचना करने को कहा और उन्हें विश्वास दिलाया कि इस काम में सरकार उनकी रक्षा को पूरा बन्दोबस्त करेगी। लेकिन पूँजीपति वर्ग वायसराय के झॉसे में नहीं आया। भारत छोड़ो आन्दोलन शुरू होने से कुछ दिन पूर्व ही 5 अगस्त 1942 को पुरूषोत्तम दास, जो. आर. डी. टाटा और घनश्याम दास बिडला ने वायसराय को लिखा कि –

'वर्तमान संकट से उबरने और एक नये सविनय अवज्ञा आन्दोलन से बचने का एकमात्र तरीका यही है कि भारत को राजनीतिक स्वाधीनता प्रदान कर दी जाये।'

यहाँ पर एक बात स्पष्ट है कि तीसरे दशक के अंत में भारतीय पूँजीपति वर्ग का प्रभावी तबका कांग्रेस का समर्थन जरूर करने लगा था पर कांग्रेस पर इसका प्रभाव नगण्य था। कांग्रेस बहुत हद तक पूँजीवादी वर्ग के समर्थन पर निर्भर भी नहीं थी। पूँजीवादी वर्ग ने स्वयं ही समय के बदलाव के साथ राष्ट्रीय आन्दोलन को समर्थन प्रदान किया था। पूँजीवादी वर्ग की राष्ट्रवाद की धारणा बहुत ही दकियानूसी थी। जिसके कारण राष्ट्रीय आन्दोलन को कोई मोड़ नहीं दे सके थे। लोगों का यह तर्क मिथ्या है कि उन्होंने पैसे के जोर पर कांग्रेस की आर्थिक नीतियों एवं निर्णयो को प्रभावित किया तथा उनकी राजनीतिक गतिविधियों पर भी पूँजीपतियों का प्रभाव था। राष्ट्रवदियों द्वारा उठायी गयी आर्थिक संरक्षण व वित्तीय एवं मौद्रिक स्वायत्ता की मॉंग केवल पूँजीवादियों का ही समर्थन नहीं करती थी वरन् औपनिवेशिक जनता की मॉंग का प्रतिनिधित्व करती थी।

आर्थिक राष्ट्रवाद जैसी अवधारणा का विकास तब हुआ था, जब भारतीय पूँजीवादी एक वर्ग के रूप में संगठित ही नहीं हुए थे। एक वर्ग के रूप में संगठित होने के लगभग आधी शताब्दी पहले ही तत्कालीन राष्ट्रवादियों द्वारा आर्थिक राष्ट्रवाद का खाका तैयार किया गया था।

यह तथ्य सही है कि राष्ट्रीय आन्दोलन मे वित्तीय सहायता ली गयी थी पर इस बात का कोई उदाहरण नहीं मिलता कि वित्तीय सहायता देकर पूजीवादी वर्ग ने राष्ट्रीय आदोलन को प्रभावित करने का प्रयास किया। मार्च 1939 में सरकारी खुफिया रिपोर्ट के अनुसार, **'कांग्रेस के पास नियमित धन संग्रह का एक अच्छा खासा विकल्प है। देशभक्ति की उसकी अपील पर पैसे बरसने लगते हैं। कांग्रेस को सामान्य गतिविधियों और चुनाव खर्च के लिए पर्याप्त पैसा मिल जाता हैं। गांधी जी के प्रति अंधविश्वास रखने वाली जनता से कांग्रेस को इतना पैसा मिल जाता है कि पूँजीपतियों की थैली उसके लिए कोई विशेष मायने नहीं रखती है।'**

द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान पूँजीपतियों के प्रति गॉधीजी का रूख काफी कठोर हो गया था। द्वितीय विश्वयुद्ध के समय जहॉ आन्दोलन में ठहराव था तथा जनता अकालग्रस्त थी। वहीं पूँजीपति वर्ग मुनाफा कमाने में सलग्न था। पूँजीपतियों के प्रभाव में आकर कोई आंदोलन नहीं छोडें गए। जो भी जनांदोलन छोड़े गए वे कांग्रेस तथा इसके नेतृत्व के व्यक्तिगत फैसले होते थे। कांग्रेस के भीतर नेहरू सोशलिस्टों तथा कम्युनिस्टों के नेतृत्व में वामंपथ के बढ़ते प्रभाव के कारण पूँजीपति वर्ग चिंतित हुआ तथा राजनीति में सक्रिय हिस्सेदारी क लिये बेचैन हो उठा परन्तु इस वर्ग ने साम्राज्यवाद का हाथ नहीं थामा।

सन् 1929 में कुछ पूंजीपतियों ने मजदूर संगठनों में वाम पक्ष के बढ़ते प्रभाव को कम करने के लिए यूरोप तथा भारत के पूँजीपति वर्ग के नेताओं को मिलाकर एक पार्टी बनाने की कोशिश की थी। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि भारतीय पूॅजीपति वर्ग साम्राज्यवाद विरोधी था तथा समय के अनुसार काफी परिपक्व था। वह अपना हित–अहित पहचानता था। इस वर्ग ने भारतीय राष्ट्रवाद का साथ कभी नहीं छोडा तथा अपने हितों को जनहित में समाहित किया। इस प्रकार हम देखते है कि भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन में पूॅजीपति वर्ग का योगदान अविस्मरणीय था।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. बिपिन चन्द्रा 'आधुनिक भारत में राष्ट्रवाद तथा उपनिवेशवाद' के अन्तर्गत '1947 के पूर्व भारतीय पूँजीपति वर्ग तथा साम्राज्यवाद'।
2. आदित्य मुकर्जी, 'भारतीय पूँजीपति वर्ग के विकास में औपनिवेशिक काल (1927–47) में आर्थिक राजनीतिक एवं वैचारिक पहलू'
3. रजत राय, 'भारत में औद्योगीकरण तथा निजीक्षेत्र के संघर्ष, 1914–1947', नई दिल्ली, 1997
4. बी0 चटर्जी 'भारत में व्यापार तथा राजनीति' नई दिल्ली।
5. विपिन चन्द्रा, 'भारत का स्वतन्त्रता संघर्ष' नई दिल्ली, 1992।
6. ए0के0 बागची, 'भारत में निजी निवेश', 1900–1939, कैम्ब्रिज, 1972
7. गोखले इंस्टीट्यूट, 'भारत में व्यापारिक समुदायों का उदय' नई दिल्ली, 1972

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to September 2017, Vol. I

रायगढ़ के राजनैतिक आंदोलन में स्वर्गीय श्री अमरनाथ तिवारी एवं स्वर्गीय श्री किशोरी मोहन त्रिपाठी की भूमिका

डॉ. रामरतन साहू *

शोध सारांश – ब्रिटिश कालीन रायगढ़ रियासत प्रत्येक दृष्टि से पिछड़ा हुआ जिला था। शासक रियासती नागरिकों को अनको प्रकार से प्रताड़ित करते थे। नेताओ ने जनमानस में जब कभी भी एकता के बीज बोते, रिसासती प्रशासन उसे उखाड़ फेकतें तथा नेतृत्वकर्ता को यातनायें दी जाती थी। ऐसी गंभीर परिस्थितियों में स्वर्गीय अमरनाथ तिवारी एवं श्री किशोरी मोहन त्रिपाठी के योगदान को भूलाया नहीं जा सकता, जिन्होंने रियासती तथा ब्रिटिश शासन की खूब आलोचना कि और रियासती जनताओं को एकता के सूत्र में आबद्ध कर जागृति पैदा करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

प्रस्तावना – रायगढ़ समूह की रियासत में सबसे बड़ा रियासत रायगढ़ था। यहॉं के शासक और ब्रिटिशों के प्रति नागरिकों में घोर असंतोष की भावनाए व्याप्त थी। परंतु नेतृत्वविहीनता तथा एकता के अभाव के कारण लोग जागृत नहीं थे। समय-समय पर अनेक कार्यकर्ताओं ने लोगों को जागृत करने का प्रयत्न किया, परंतु स्वर्गीय श्री अमरनाथ तिवारी एवं स्वर्गीय श्री किशोरी मोहन त्रिपाठी ने पूरी मेहनत और लगन से लोगों को प्रेरित कर जागृत किया। रियासती शासक तथा ब्रिटिश शासन के खिलाफ आवाज बुलंद करने के कारण आप दोनों को अनेकों बार प्रशासन के कोपभाजन के शिकार हुए तथा कारावास तक हो गया। परंतु आप लोग अपने लक्ष्य से पीछे नहीं हटें। अंततः आप लोगों के प्रयास से एक दिन ऐसा आया कि पूरे रियासतवासी खुशी से झूम उठे, और आजादी का जश्न मनाए।

स्वर्गीय अमरनाथ तिवारी – रियासती नागरिक को जागरुक करने में स्वर्गीय अमरनाथ तिवारी का अमूल्य योगदान रहा है। जब स्वतंत्रता आंदोलन चरम सीमा पर था, तब रायगढ़ जिले के रियासतो में राजाओं का आम नागरिकों में भय बना रहता था। जिले में आंदोलन की बात सुनाई तक नहीं देती थी। ऐसे परिस्थितियों में स्वाधीनता की अलख जगाकर आम नागरिकों को एकता का पाठ पढ़ाने वाले अमरनाथ तिवारी से रियासतों के शासक परेशान थे। राजा के तमाम प्रलोभन के बावजूद आम नागरिकों को अंग्रेजो और रियासती राजाओं के विरुद्ध एकत्र कर स्वतंत्रता के बीज बोआ।

आप अनेक समाचार पत्रों के संवाददाता थे। जिनमें प्रमुखतः जबलपुर से प्रकाशित पत्रिका शुभ चिन्तक है। आपके लेख रियासती प्रशासन के विरुद्ध समकालीन समाचार पत्र कर्मवीर में प्रकाशित होते रहे। जब कर्मवीर पर प्रशासन ने अंकूश लगाया, ऐसी स्थिति में आपने जबलपुर के शुभचिन्तक, कलकत्ता का लोकमान्य, जागृति, इलाहाबाद से प्रकाशित देशदूत तथा नागपुर से प्रकाशित सचित्र दरबार दियागंज इत्यादि समाचार पत्र पत्रिकाओं के माध्यम से रियासती प्रशासन के अत्याचारों तथा उत्पीड़नों को प्रकाशित कर नागरिकों को जागृत किया।

राजा के खिलाफ नागरिकों को भड़काने और लगातार लेख लिखने के कारण शाही गुण्डे ने आपको घूमकर कर वापस लौटते समय मुँह बंद करके पकड़कर राजमहल ले जाकर अंधेरे कमरे में बंद कर दिया। जहाँ पर नागरिकों को भड़काने से मना किया गया तथा अनेक प्रकार के प्रलोभन दिए गए। लेकिन आपने उनकी शर्तों को ठुकराते हुए कहा कि जनता जाग उठी है, राजा का अत्याचार अब नहीं चलेगा, राजा खत्म होगा और राजशाही भी खत्म होगी। इस बात को सुनकर शाही गुण्डें उनके ऊपर टूट पडे तथा उन्हें इस तरह मारा कि वह खून से लथपथ होकर बेहोश हो गये।

इधर तिवारीजी को महल के अंदर ले जाने की खबर बिजली की भॉंति पूरे शहर में फैल गयी। जनता महल की ओर उमड़ पड़ी। राजा यह सब देखकर बड़े ही नाटकीय ढंग से तिवारी जी के गिरफ्तार किए जाने के समाचार के प्रति अनभिज्ञता जाहिर करते हुए चुपके से बाहर निकाल फेकनें के संकेत दे दिये। शाही गुण्डों ने तिवारी जी को मरा समझकर महल के पीछे फेंक दिए। लेकिन भगवान का शुक्र था कि निष्ठावान देशभक्त अमरनाथ जी जीवित थे। आपके सहयोगी मनोरमा देवी के साथ मिलकर घर लाए, जहाँ बहुत दिनों तक आप विस्तर पर पडे रहे। जनताओं का आक्रोश देखते हुये बहुत दिनों बाद राजा नाटकीय अंदाज में इस घटना के जॉच के आदेश दिए तथा मुकदमा का नाटक भी खेला गया। अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी ने निष्पक्ष जॉच कराने के लिए सादिक अली को रायगढ़ भेजा। सादिक जी राजा से मिले, जिसके फलस्वरुप शाही गुण्डों को कुछ समय की सजा दी गयी।

सन् 1942 में भारत छोड़ो आंदोलन पूरे देश में अपनी चरम सीमा पर चल रहा था, तब शासन ने श्री तिवारी जी को भारत रक्षा अधिनियम 38 (अ) के तहत गिरफ्तार कर लिए। अनेक अभियोग लगाकर इन्हें दो वर्ष के कठोर कारावास की सजा दी गयी। 4 नवम्बर 1942 से 6 मई 1944 तक रायगढ़ स्टेट के कारावास में रखे गए। इनसे तेल निकालनें एवं चक्की पीसने इत्यादि कठोर कार्य लिया गया। जेल से मुक्त होने पर गाँधीजी ने पत्राचार कर आपको सपत्निक सेवाग्राम बुलाया। आप श्री गाँधीजी के साथ रचनात्मक कार्य कताई बुनाई सीखे एचं जीवन पर्यन्त अपने हाथ से काता हुआ एवं घर में आपकी पत्नि मनोरमा देवी द्वारा बुना हुआ खादी का कपड़ा पहनते रहे। आपने गॉधीजी द्वारा चलाए जा रहे रचनात्मक कार्यक्रमों को रियासत के आम नागरिकों तक पहुचॉकर उन्हें कताई बुनाई सीखाने तथा स्वयं के बुने हुए खादी कपड़ों का उपयोग करने के लिए सदैव प्रेरित किया एवं जनता को जागरुक करने का महत्वपूर्ण कार्य किया।

श्री अमरनाथ तिवारी जी के वीरता, राष्ट्रप्रेम एवं राष्ट्रभक्ति की सराहना करते हुए 15 अगस्त 1972 को दिल्ली के लालकिला में आयोजित स्वतंत्रता

*विभागाध्यक्ष (इतिहास) डॉ. सी.वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

के रजत जयंती समारोह में तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गॉधी ने ताम्रपत्र भेंटकर सम्मानित किया था।

श्री किशोरी मोहन त्रिपाठी – स्वर्गीय किशोरी मोहन त्रिपाठी का जन्म सन् 1912 में रायगढ़ जिले के सारंगढ़ तहसील में सरिया नामक ग्राम में हुआ था। आपके पिताजी का नाम बलभद्र बाल्यवस्था में आपके पिताजी का देहवसान हो गया। समूचे ग्रामवासी आपको पुत्र के समान व्यवहार करते थे, जिस कारण आपको अपने ग्राम से बहुत लगाव था। स्वयं आप कहते थे कि 'चारों धाम से बढ़कर मेरे लिए सरिया गॉव भी एक धाम है, उस गॉव की मिट्टी मेरे लिए चंदन है।'

आपका प्राथमिक शिक्षा गृहग्राम में हुआ। प्राथमिक शिक्षा पूरा करने के पश्चात् आप रायगढ़ के नटवर हाईस्कूल में दाखिला लिया। यहॉ पर मेट्रिक की पढ़ाई पूरा करने के बाद साहित्य विशारद् की शिक्षा प्राप्त किया। नगरपालिका पुस्तकालय प्रभारी पद पर कार्य करने के पश्चात् नटवर हाईस्कूल मे अध्यापक के पद पर कार्य किया।

आप बचपन से ही दृढ़ निश्चयी क्रातिकारी प्रवृति के थे। एक घटना थी जिसके बारे में आप स्वयं अपने लेख में लिखा है कि 'जब गॉधीजी रायगढ़ स्टेषन से गुजरने वाले थे, विद्यार्थियों को उनके दर्शन के लिए जाने को मनाही थी। स्कूल के मुख्य दरवाजे पर शिक्षक श्री जे.आर. बोड़े डंडा लेकर खड़े थे। ताकि कोई भी विद्यार्थी स्टेशन नहीं जा सके। लेकिन मेरे अंदर गॉधी जी को देखने की इच्छा थी, मैनें दस्त का बहाना किया। मुझे अनुमति मिल गई, मैं सीधा रेलवे स्टेशन गया। वहॉ बहुत सारे लोग पहले से एकत्र थे। मैं लोगों के बीच में अधर में लटक गया और मेरी धोती नीचे गिर गया। मैं निर्विस्त्र ही स्टेशन में खड़ा रहा। गॉधी जी को देखा, वे तृतीय श्रेणी में सफर कर रहे थे। लोगों का हुजूम कम होने के बाद पुनः मैं धोती को उठाकर पहना'। आपका यह कथन देशभक्ति की भावना को परिलक्षित करता है।

आप अध्यापक के पद पर कार्य करते हुए भी हमेशा आजादी की लड़ाई में सक्रिय रुप से कार्य करते रहे। सन् 1930–31 में सविनय अवज्ञा आंदोलन की लहर रायगढ़ जिले में पहुॅचा, उसी समय सन् 1931 में गॉजा चौक स्थित गोपाल मंदिर के समीप मिट्टी के मकान में बंशीधर त्रिपाठी एवं तीथराम थवाईत की प्रेरणा से खादी भंडार की स्थापना किए गए, जिसके आप सेल्समेन थे। इसी खादी भंडार से एक राजनीतिक जुलूस निकला जिसमें शामिल होने के कारण आपके अभिभावक को प्रशासन द्वारा अर्जीनवीसी के प्रदत्त अधिकार को निरस्त करने की धमकी दिया गया।

सन् 1936–37 में जब सुभाष चन्द्र बोस बंबई की ओर जा रहे थे, तब आप सहयोगियों के साथ रेलवे स्टेशन में मुलाकात कर राजनीतिक चर्चा की तथा राजा चक्रधर सिंह के कोपभाजन बने। राजा ने आपको राजमहल बुलाकर प्रताड़ित किया।

सन् 1942 में गॉधी जी ने भारत छोड़ो आदोंलन का शंखनाद किया और 'करो या मरो' का नारा दिया तो आपने हरिचरण साव और गनपतलाल श्रीवास्तव के साथ मिलकर टाउनहाल में तिरंगा झण्डा फहराए। सन् 1945 में शिक्षक पद से त्याग पत्र देकर खुले तौर से आंदोलन में कूद पड़े। आप गुप्त संस्था 'बेकार संघ', 'प्रगतिशील नागरिक संघ' तथा 'स्टेट कांग्रेस' के सक्रिय सदस्य थे। प्रगतिशील नागरिक संघ की ओर से श्री श्याम नारायण काश्मीरी के नाम पत्र लिखा। इस पत्र में आप पिछड़े नागरिको का उल्लेख करते हुए सक्ती जैसे छोटी रियासत को समाप्त करने का अनुरोध किया। विद्याचंद लाल वर्मा, वारेन्द्र नाथ बनर्जी, बन्दें अली फातमी नटवर बेहरा, सुरेन्द्र नाथ त्रिपाठी इत्यादि जागरुक नागरिकों के साथ मिलकर बिहार भूकम्प पीड़ितों तथा महानदी बाढ़ पीड़ितों की सहायता की।

आप कटक में आयोजित अखिल भारतीय देशी राज्य प्रजा परिषद् के सभा में रायगढ़ स्टेट कांग्रेस की ओर से सदस्य के रुप में शामिल हुए। इस सभा में क्षेत्रीय कौंसिल के उपाध्यक्ष पद पर आपका चयन किया गया। आप सन् 1947 से 1950 तक स्वतंत्रता पश्चात् संविधान निर्मात्री सभा के सदस्य के रुप में इस वनाचंल क्षेत्र का प्रतिनिधित्व किए। विलिनीकरण आंदोलन में आपका सक्रिय योगदान रहा तथा आपने इस आंदोलन का नेतृत्व किया। सन् 1950 से 1952 तक संसद सदस्य के रुप में आपका योगदान सराहनीय रहा। आप योजना आयोग के गठन का सुझाव, नागरिकता नियंत्रक कानून, सिक्कों का प्रचलन, लेखाओं के लिए दशमलव प्रणाली का ग्रहण, रिजर्व बैंक का राष्ट्रीयकरण का प्रस्ताव रखने वाले पहले संसद थे आपके ये सभी प्रस्ताव से भारतीय व्यवस्था क्रियाशील है।

आप स्पष्टवादी थे। जिस कारण आपको बहुत कष्ट सहन करना पड़ा। सन् 1952 के चुनाव में आपको हार का सामना करना पड़ा। सन 1962 के विधान सभा चुनाव में धरमजयगढ़ के राजा को परास्त कर विधायक चुने गए। अंत में राजनीति से सन्यास लेकर आप अपने गृहग्राम सरिया आ गए, जहॉ पर सन् 1994 में दीपावली के दिन देहवसान हो गया।

इस प्रकार आप दोनों ने रायगढ़ रियासत में जागृति पैदा कर नागरिकों को रियासती प्रशासन और ब्रिटिश हूकुमत के 'फूट डालो और शासन करो की नीति' के खिलाफ एकजूट कर आवाज बुलंद किए। इस कार्य के लिए अनेक प्रकार की यातनाए सहन करना पडा। अंततः रायगढ़ स्वतंत्र हुआ और आम नागरिक स्वतंत्रता से अभिभूत होकर झूम उठे। ऐसे पावन और पूनित कार्य के लिए रायगढ़वासी आज तक आप दोनों को श्रद्धापूर्वक स्मरण करते है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. रायगढ़ जिला गजेटियर।
2. केलोप्रवाह, दैनिक समाचार पत्र।
3. देशबंधु, दैनिक समाचार पत्र।
4. अग्रवाल, रामकुमार, रायगढ़ और स्वाधीनता की लड़ाई।
5. जनकर्म दैनिक समाचार पत्र(दीपावली विशेषांक)।
6. अभिलेखागार (रायगढ़ जिला कार्यलय से प्राप्त स्वतंत्रता संग्राम सेनानी सूची)।
7. शुक्ला, सुरेशचन्द्र, छत्तीसगढ़ के रियासतों का विलीनीकरण।
8. बयार, (हिन्दी साप्ताहिक समाचार पत्र) रायगढ़।
9. रायगढ़ संदेश, (हिन्दी समाचार पत्र) रायगढ़।
10. काश्मीरी, श्यामनारायण, छत्तीसगढ़ क्रांति की लपटों में।
11. मध्यप्रदेश संदेश।
12. महामाया मुद्राणालय रायगढ़ से प्राप्त दस्तावेज।
13. शर्मा कमलकिशोर, रायगढ़ दर्शन।

****

गोंड़ जनजातियों में गोत्रज व्यवस्था

डॉ. सुदामा प्रधान *

प्रस्तावना – भारतीय जनजातियों में जिस प्रकार धर्म का महत्व है, उसी प्रकार जनजातीय समाज में टोटम का विशेष महत्व देखने को मिलता है। 'टोटम' का दूसरा अर्थ गोत्र से माना जाता है। आदिवासी समाज में एक टोटम वाले व्यक्ति परस्पर विवाह नहीं करते। समान गोत्र वाले आपस में सगोत्रीय माने जाते है। इसका अर्थ है कि एक ही टोटम या गोत्र वाले स्त्री-पुरूष भाई-बहन माने जाते हैं। इस संबंध में **किसिंग** का विचार है कि – 'टोटमवाद मनुष्य तथा प्राकृतिक विषयों के बीच एक विशेष सामाजिक समैक्य की सम्पूर्ण प्रणाली है, जो कुछ अर्थो में उन सम्बन्धों के समान है जो समाज में मनुष्य एवं मनुष्य के बीच स्थापित होते हैं। टोटम की उत्पत्ति कैसे हुई इस प्रष्न के उत्तर में विभिन्न समाज शास्त्रियों में मतभेद हो सकते है, किन्तु इसकी विशेषताओं पर सभी विद्वान एकमत हैं। टोटम सदैव ही आदरास्पद होता है। यदि वह पशु है, तो उसकी हत्या नहीं की जाती। हिंसक पषु का यदि टोटम (गोत्र) है, तो ऐसा माना जाता है या यह विश्वास है कि वह उस गोत्र के व्यक्ति को हानि नहीं पहुँचाएंगा।

गोंड जनजाति के टोटम या गोत्र – गोंड़ों के सर्वाधिक प्रचलित गोत्र मरकाम, मरावी, नेताम और टेकाम है। ये सभी गोत्र गोंड़ों की उपजातियों में भी पाये जाते हैं। सभी गोत्रों के नाम 'टोटेमिक' है।

अनुसूचित जनजाति सम्बन्धी गणना (सन् 1981) के अनुसार पचास से अधिक गोंड़ों की उपजातियाँ मानी गई है। गोंड़ों की सामाजिक संगठन की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता है – विविध संगठन या अर्द्धक। प्रत्येक संगठन (अर्द्धक) अनेक गोत्र से बना है। उदाहरण के लिए पहाड़ी माड़ियाओं में (दो भागों में बंटे हैं।) क्रमश: 99 एवं 69 गोत्र हैं।

कुल समूहों के अनुसार विभाजन – गोंड़ जनजाति के प्रमुख गोत्रों को उनके कुल समूहों के आधार पर देखा जा सकता है। 'उदाहरण के लिए आदिलाबाद (आंध्रप्रदेश) के राजगोंड़ों के 4 कुल समूह मिलते है। ये कुल समूह एक संख्या विशेष के देवताओं को पूजते है। जैसे –

1. **येरूग पेंग (सात देव वाले) –** प्रमुख गोत्र धुरवा, मरावी, मर्सकोले, मशराम, सुझयान, पडरा आदि।
2. **सारूग पेंग (छ: देव वाले) –** आटरमू, डगम, एडम, उइके, बकड़, बाड़िया, आदि।
3. संसुग पेंग (पाँच देव वाले) – इष्टंग, हरका, सैयाम, टिरकम आदि।
4. नालुंग पेंग (चार देव वाले) झिकराम, पूसाम, सुरपान, टेकाम आदि।

गोंड़ जनजाति के गोत्र का वर्गीकरण के दो आधार है।

1. देव उपासना के आधार पर
2. देवगढ़ी या देव खलिहान के आधार पर।

देव उपासना के आधार पर गोंड जनजाति सात देवों के उपासक हैं – 1.पराती (हँसिया) 2. कुल्हाड़ी 3. बसूला 4. पास (बखर) 5. कुसिया (हल में लगने वाली कटिया) 6. खुरपी 7. कुदाली।

पांच सगादेव भुमकाओं के होते हैं–

आठदेव शाखा – नारायणसुर/पृथ्वी
नौ देव शाखा– कोलासुर/अग्नि
दस देव शाखा – हीरा जोति/वायु
ग्यारह देव शाखा– मनकोसुगाल/जल
बारहदेव शाखा – तुरपोडयाल/आकाश

सभी देवों की पूजा वर्ष में एक बार दशहरे के दिन होती है। पूजन के दिन ये लोग माँसाहार नहीं करते।

मध्यप्रदेश के मण्डला, जबलपुर, सिवनी, बालाघाट, छिंदवाड़ा जिले तथा महाराष्ट्र के कई जिलों में बारह देवों की गोत्रज व्यवस्था पाई जाती है। गोंड़ी पेनमी मुठवा पहांदी पारी कुमार लिंगो द्वारा कोया वंषीय गोंड़ समुदाय में गोत्रज व्यवस्था का निर्माण किया, जिससे समाज में पारी व्यवस्था तथा शादी/रिश्तेदारियां संबंध बनाने में सरलता तथा गोंड़वाना के विशाल समाज को संगठित करना आसान बना दिया, जो एक देव से बारह देव तक सगा देवताओं में विभाजित है,4 जिसमें से प्रथम सात देव शाखा में सौ-सौ और शेष पांच भुमका देव सगा शाखा में दस-दस देव शाखा गोत्र सगाओं के नाम हैं, जिनका विवरण निम्नानुसार है। **(देखे आगे पृष्ठ पर)**

विवाह, मरण या किसी उत्सव पर जिसके यहाँ जितनी अधिक संख्या में दुधभाई इकट्ठा होते हैं। वह खानदान उतना ही गौरववान तथा संगठन की दृष्टि से उतना ही बलवान माना जाता है। प्रत्येक दुधभाई अपने भाइयों का संगठन करने में सदैव सचेष्ट रहता है। दुधभाइयों का मेला इनकी देवगुड़ियों में दर्षनीय होता है। वहाँ इनकी पारम्परिक प्रीति और ममता का सुदृढ़ परिचय प्राप्त होता है।

वस्तुत: गोंड़ जनजाति में गोत्र का विशेष महत्व है। एक गोत्र के सभी गोंड़ सदस्य अपने को एक सामान्य पूर्वज की सन्तान मानते हैं। इस आशय से एक गोत्र के सभी सदस्य आपस में भाई-बहन हुए। इस कारण से गोंड़ जनजाति अपने गोत्र या समान गोत्र में विवाह नहीं करते हैं। गोत्र का प्रारंभ प्रमुख पूर्वज से होता है। उसी के नाम से परिवार के वंश का परिचय दिया जाता है। और परिवार के सदस्य पीढ़ी दर पीढ़ी उस गोत्र का पालन करते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. गोंड़वाना कैलेण्डर (दिनदर्शिका)।
2. गोंड़वाना मातृशक्ति संध मध्यप्रदेश भोपाल।
3. शोधार्थी के निजी संग्रह से।

* (समाजशास्त्र) पं.श.शुक्ल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, जिला - शहडोल (म.प्र.) भारत

1. **एक देव का नाम –** 1.ताराल गोंगोर

अंगाम	उकाम	कन्वाती	तडोपा	येलांडी	विजाम	अक्काम	उक्राम
कंगाम	ताईका	येरीयाम	विहका	अंदराम	उर्याम	गुंदाम	नयटी
सेड़गाम	चेट्आम	अरावी	उर्वाटी	गोंदराम	नगसोरी	येरमाल	वेरकाल
अर्वाल	उर्पिटाम	गीवांगा	नलीयाम	षयगुड़ा	वेलांडी	अलांडी	एराम
चट्टाम	पंडाम	रेहकाम	वेदराम	अलगाम	एन्दाम	चितकामी	पईका
रेलापाती	वराती	अर्राटी	एडकाल	चर्वाटा	पिलकाटा	लवाटी	वलामी
अर्सेडी	एकाम	चुमगोढा	मुरपाती	लगाम	संगाम	अर्राम	एन्नाका
जुग्गाम	मुर्राम	लचियाम	सडाम	अर्रारा	ओयाम	झिल्लाम	देडाम
लिंगोटा	सरपाती	अयमा	ओर्वा	टंगाम	दर्राम	वंजाम	सोरती
इंगाम	ओराटी	टिरकाटा	दिर्माका	वर्दाम	सूर्माकी	इडाम	ओर्साम
टोयका	दिगराम	वरीयाम	सुर्वेलाम	इजाम	कंगाम	तेजाम	येवनाता
वडकाल	सोगामी	इरपुंगाम	ककराम	तरावी	येर्काल	वडाम	सुईका
इमाची	कुरनाका	तरकोला	काना	———	———-	———-	———

2. **दो देव का नाम –** 1.साराल गोंगों 2.माराल गोंगों

अंगराम	कलाम	चंगाम	टकाम	तोयाम	पन्डाम	अक्राम	कचाम
चिंढाम	टीर्राम	तोहगाम	पिडगाम	आदराम	कड़ाम	चिलाम	टिंगलाम
दलांडी	पिचाम	इंगामी	कहाका	चिकाली	टुकाम	दरावी	पिरावी
इढाम	कवटाम	चुड़ाम	टोडमाती	दुर्लाम	पिराटी	इचाम	किकराम
चंदराम	डुचाम	ढुराम	पिर्साम	इडोपा	कुलनाका	चुराटी	डुरीयाम
ढुरीयाम	पुंगाम	उंगाम	कुरपाती	चुटामी	डुईका	दासेडाम	ढुईका
उलाम	कुराम	चुकराम	डुकराम	ढोराम	पेन्नाका	उचाम	केहाका
चेलकाटा	डोलाम	ढोमोकसा	बारनाका	एटाम	कोमतारी	चेर्वाटा	तिरावी
नागोताम	मिलाम	एहचाडा	कोहपाडा	चोडाम	तुर्वाडा	नर्काम	रायताम
ओटाम	कोलया	चोहका	तोराटी	पडगाम	रोनवारी	ओनाका	गडाम
जन्नाम	तोलाम	पट्टाम	लंगाम	कडाम	गढुर्काया	झीलाम	तेडगाम
पंचाम	लायसेंगा	ककाम	गोयका	टक्राम	तोर्गाम	एगाम	कोर्वाम
चेंदाम	तरपाती	नट्टाम	भादिया	———	———-	———-	———

3. **तीन देव का नाम –** 1.जुगाल गोंगों 2.मुलाल गोंगों 3.सुकाल गोंगों

अटाम	ओताम	चलका	तिर्याम	नेलकाम	रेलकाटा	अलनाका	ओरावी
चलांडी	तुराम	परामी	लोसका	ओयाम	कथराम	चीरोया	तोतला
पुरचाम	वेर्लाटी	ओयमा	कक्राम	चिर्चामी	तोर्यामी	पुसीयाम	सेलाम
इक्राम	कड़ोपा	चिस्ताम	दिननाकी	पेनढावी	पेडमा	इताम	कसेंडी
चिडोपा	ढावाम	पोंडाम	सिरसाटा	इर्काया	कींगराम	चिताम	नर्काम
पुयाम	सोरांडी	इसराम	किलाप	चिर्माटा	नतराम	पुडका	हुर्मेता
इलाम	कुन्ढाम	जुतराम	नरोमी	पेराम	वराटी	इलनाका	कुंदराम
टोर्याम	नवराती	पेसाम	विक्रा	उडाम	कोंढोम	डंगराम	नलकाम
पोंगामी	सिलाम	उटाम	कोयकाटा	उर्वाल	नायका	पेनाम	सीर्वाटा
उर्पाती	गुसराम	डेराम	निर्पाती	मंढाम	सेरपाती	उस्टाम	गेचाम
तल्लाम	निर्लाम	मिन्काटा	सुडाम	एसरा	गोयाम	तईका	नुंजाम
येसराम	एलगाम	चंढाम	तिसाम	नुतामें	रेंगाम	अड़काम	ओसराम
चेलाम	तुहाका	पुंडाम	बलपाती	———	———-	———-	———

4. चार देव का नाम– 1.माल गोंगों 2.लाल गोंगों 3.काल गोंगों 4.पाल गोंगों

अडाम	उर्षाम	कवाम	कोचरामी	तोहाकाटी	मरपाची	एडाम	अंचाम
कलाटी	कोरकाटी	तिर्काम	सीराम	अतलाम	एगाढ़ा	किजाम	कोवा
तुच्चाम	सरकाटी	अडगाम	एचाम	कींदराम	कोवाची	तुम्माम	पोयाम
अडोपा	एरावी	कीन्वाती	कोवासे	नेताम	ताराटी	अबाबा	एर्वाटी
किडगाम	गटाम	परचाकी	सुंदराम	इटावी	एर्मेन्ता	कीरकाटा	गेटाम
मंगाम	चीकराम	इंदराम	ओंगाम	कुयमा	चडाम	सरमाकी	वाल्काम
इडगाम	ओर्चाम	कुचाम	चराटी	सेडमाके	चिलाम	इर्काल	कर्वाटी
कुर्कामी	चिनगाम	सुर्पाडा	सीताम	इलांडी	कराम	कुयाम	चुलमाती
तलांजा	जालकाटा	इलगाम	कंढाम	कुयका	चर्वाटा	तलांडी	कुसराम
इरूकाम	कजाम	कुडयाम	चिलाम	हिडाम	नेयती	उंढराम	कट्राम
कचीमुरा	टोर्पाकी	हिलाम	नटोपा	उराम	कंढ्राम	कुर्राती	टोप्पाम
पुर्साम	पस्ताकी	उसराम	कराई	केडाम	तेकाम	मुर्काकी	उलांडी
कर्कामी	केटाम	टेक्का	मुरका	——–	———	——–	———

5 पांच देव का नाम– 1.अहा गोंगों 2.महा गोंगों 3.रैका गोंगों 4.मैका गोंगों5.ढोन्डाल गोंगों

अडमे	कीटाम	गारंगा	पुर्का	मित्राम	पेंडराम	हाड़े	कीसराम
कन्नाका	पुगाम	मितलाम	पोचाम	अस्टाम	केलांडी	चिगाम	बल्लामी
मिनगाम	पोयका	अलाम	कोगा	चिटराम	बग्गाम	मुगाम	पोकाम
अरमाती	कोडाम	चिडगाम	बार्पाती	मुचामी	पोटामी	अट्टामी	कोटाम
चितलाम	बिकराम	मिन्दाम	परस्ते	अक्कामी	कोटामी	चिन्हाका	बुढाम
मुयामी	पुर्रे	अर्टाम	कोंकाम	चिर्वाल	बोसाम	मुरमेन्ता	नेयटी
अर्पाती	कोकड़ा	चिलमेंता	बोर्साम	मुरपुंगा	सेडोपा	अर्काम	पढामी
चितलोका	भोजाम	मुरापा	सोंराम	अक्काल	गचाम	चुर्थाम	बुराम
मुरपाटा	सिट्राम	इस्टाम	गटराम	चोपाम	मंगलाम	सुसामी	सर्गाती
कोरोपा	गतलामी	चोलाम	मचाम	सुर्काता	नलीयाम	कंगला	गुंजाम
चोहकाम	मरापे	ढुरवा	भोजाम	कर्लाम	गोलाम	पुर्काटी	मलनाका
ढुरांडी	नेलांजी	कठोताम	गोढाम	पुलकाम	मतलामी	धुर्रे	कींगराम
गोचा	पावला	मिंगाम	कौवड़ो	——–	———	——–	———

6. छ: देव का नाम– 1.महेओढाल गोंगों 2.अहेओढाल गोंगों 3.अपाईओढाल गोंगों 4.टोपायओढाल गोंगों 5.भन्डेओढाल गोंगों 6.कोइन्दोओढाल गोंगों

अडीयाम	कडीयाम	चीचाम	तिरावी	पेन्दाम	बोढबायना	असराम	कातलाम
चीरको	तिलाम	पोरता	वेडकाल	आतराम	कीराम	चिडाम	तिलगाम
पोरेटी	वरकड़ा	अहाका	कुडोपा	चिलकाम	तिमाची	पावला	वेडमा
ओयमा	पुरयाम	पोया	तुसाम	चुलकामी	सल्लाम	अडामो	कुसराम
छदय्या	तुर्राम	बरकुटा	सींगराम	अरमों	कुलमेन्ता	जलपती	तुलाम
बगाम	सीडाम	अकोम	कुमरा	टेकाम	तुलावी	बोगामी	सरोतीया
ओलाड़ी	केराम	हर्कोला	तिरपाती	मरकाम	सींदराम	ओट्टी	कोरचा
डेगमती	नयताम	मरापा	सिरसाम	उईका	कोटनाका	तुमडाम	नगसोरी
मलगाम	सोरी	उसेंड़ी	कोडोपा	तोरे	नेताम	येलाढी	सीरसों
उरेती कोराम	सोर्साम	परतेती	रायमेन्ता	कोहचाडा	उर्रे	हिचामी	
तोड़ाम	पुराम	हिडाम	उडाम	गावडे	रायसीराम	तोडासे	जगत
लेकामी	कर्पेकोटा	एलाम	गेडाम	तिडाम	वेलाटी	वेलाढी	पुसाम
तिडगाम	नामूर्ता	वरटी	हुसेंडी	——–	——–	———	———

ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to September 2017, Vol. I

7. सात देव का नाम– 1.धनबाह गोंगों 2.धन्ठाई गोंगों 3.पिण्डेजुगा 4.रायमुद्दा गोंगों 5.चिकटराज गोंगों 6. भंडेसारा गोंगों 7. भुंइदाबोटा गोंगों

अडमाची	कोरेटी	उर्पाती	बजूमुता	करपे	सहका	अड़में	कोयतामी
तलांडी	मडावी	करपाती	सरीयाम	आरमोर	कुर्सेंगा	ताड़ाम	मराई
दरीयाम	तिर्याम	अजुर्मूजा	कोहमुंडा	तुलावा	मंगराम	धुर्वा	नंजाम
इरवाती	गोटा	तिलनाका	मरपाती	पंचराम	मुर्कासी	कंगाली	गोटामी
तुग्गाम	मसराम	पटावी	बुर्दाम	कंगाला	गोलांग	तुरीयाम	वेट्टी
पुराटी	कोकाटा	कन्नाका	गोडंगा	तर्गाम	वेरमा	पुंगाम	मंडामी
कवरती	गड़ी	ताराम	सय्याम	भूजाम	येरपाती	कटींगा	जुन्नाका
नरोती	सराटी	भलावी	तुरीया	कर्वेटाम	जीकराम	नेटी	सयाम
काषीयाम	दर्रो	कीरंगा	जड़पाती	नट्टामी	सरूता	पटावी	पुराकी
कुंजाम	जींगाम	पद्दाम	सर्टीया	करेकारी	छोट्टा	बोर्साम	सीदोवोयना
कोंडवाती	बोट्टी	जोडाम	सर्वेटा	पुर्काम	कींगराम	वेरगा	कर्पेकोटा
जुमनाती	डोडेरा	बोर्गाम	वाडीवा	पेन्द्रो	परीयाम	वोहटी	कोकोडीया
मर्सकोला	बुरसाम	खण्डाता	झिकराम	——	——-	——	——

8. आठ देव का नाम– भूमका नारायणसुर गोंगों

अंगाम	कंगला	उंद्दास	करसेंडी	ढुगास
उकाम	तोराटी	इलाम	डुर्वाल	दरावी

9. नौ देव का नाम– भूमका कोलासुर गोंगों

अडाम	तराटी	तुर्पाडा	नटोपा	चराटी
इलांडी	कुचाम	कोवा	परसों	डेगामी

10. दस देव का नाम– भूमका हीराजोति गोंगों

तुम्मा	मंडारी	बुढाम	दुरवा	कड़ता
गोरंगा	पुरका	मुरापा	पुंड़राम	कीरंगाम

11. ग्यारह देव का नाम– भूमका मानकोसुंगाल गोंगों

कलंगा	गोटा	वेरमा	धुरूवा	पटावी
कटींगा	नेटी	मुरावी	खंडाता	पंडराम

12. बारह देव का नाम– भूमका तुरपोराय गोंगों

उईका	वेढाली	कोरचा	सोरी	दडांजा
तोरा	कंगाम	सल्लाम	मरकाम	नेताम

****

समाज निर्माण की आधार शिला है , परिवार - एक सामाजिक विश्लेषण

डॉ. उमा लवानिया *

प्रस्तावना – समाज की संरचना अत्यंत जटिलता लिए हुए है। मात्र व्यक्तियों के संग्रह या झुण्ड को समाज नहीं कहा जा सकता बल्कि व्यक्तियों के मध्य पाए जाने वाले संबंधों व अन्तसंबंधो से ही समाज का निर्माण होता है और यह संबंध अन्तसंबंध परिवार रूपी संस्था के माध्यम से ही संभव है यह पूर्णत: सत्य है कि मानव समाज का इतिहास परिवार का ही इतिहास है क्योंकि मानव जीवन के प्रारंभ से ही परिवार उसके साथ है और किसी न किसी रूप में यह सांस्कृतिक विकास के सभी स्तरों पर पाया जाता है परिवार को एक ऐसा प्राथमिक समूह माना जाता है, जिसमें बच्चों के सामाजिक जीवन व आदर्शो का निर्माण होता है। इस रूप में परिवार व्यक्ति को सामाजिक प्राणी बनाने का एक प्रमुख साधन है, इसके अतिरिक्त परिवार ही समाज की प्रारंभिक इकाई है। परिवार के बिना समाज की निरन्तरता संभव नहीं है। परिवार उसी संस्था का नाम है , जिसमें कई तरह के ,कई स्तर के लोग रहते हैं। किस स्तर के लोगों की विचारधारा कैसी होती है, आवश्यकताएं कैसी होती हैं, भावना कैसी होती है, उसके साथ में तालमेल बिठा करके अपनी समझदारी को बढ़ाने का मौका केवल परिवार के बीच ही मिलता है।

परिवार सभी समाजों में किसी न किसी रूप में पाई जाने वाली संस्था है। यह मानव व्यवहार को नियंत्रित करने, सामाजिक प्राणी बनाने, बच्चों को अनेक प्रकार की सीख देने, सामाजिक व्यवहार सिखाने, सामाजिक प्रतिमान, सामाजिक आदर्श, सामाजिक मूल्यों आदि से परिचित कराकर उसके अनुकूल बनाने वाली प्राथमिक पाठशाला है। परिवार ही नये सदस्यों को जन्म देकर समाज की निरन्तरता बनाए रखता है। आदिम समय से ही मानव अमरत्व की खोज करता रहा है। इसके लिए उसने अनेक जडी बूटियों व रसायनों का भी सहारा लिया है, किन्तु परिवार ही मृत्यु और अमरत्व दो विरोधी अवस्थाओं का सुंदर समन्यवय है। एक तरफ मनुष्य को मरने का दुख है तो दूसरी तरफ उसे यह भी सुख है कि नयी पीढ़ी उसी का रूप होगी। इसलिए भारत के आखेट समाज, चरागाही समाज, गिरजन समाज, आदिम समाज, नगरीय समाज एवं ग्रामीण समाज की सामाजिक संरचना की मूलभूत इकाई एकाकी परिवार होती है। इसी से मिलकर अन्य अनेक छोटी बड़ी उप संरचनाओं जैसे संयुक्त परिवार, वंश समूह, गोत्र समूह, भ्रातृ दल, द्विदल, उप जातियां, जनजाति समाज, ग्रामीण समाज आदि का निर्माण हुआ है।

परिवार में ही बच्चे का समाजीकरण प्रारंभ होता है , समाजीकरण की प्रक्रिया से जैविक प्राणी सामाजिक प्राणी बनता है। वहाँ उसे परिवार और समाज के रीति-रिवाजों, प्रथाओं, रूढियों, और संस्कृति का ज्ञान होता है। धीरे-धीरे बच्चा समाज की कार्यकारी इकाई बन जाता है। परिवार ही समाज की संस्कृति को पीढी दर पीढी हस्तांरित करता है। परिवार में व्यक्ति शिक्षा, सहयोग, दायित्व और सुरक्षा के गुर सीखता है तथा नैतिकता, अच्छी देखभाल, अनुशासन, एकता में विश्वास एवं सामाजिक मूल्य जैसे गुण व्यक्ति परिवार में ही सीखता है।

परिवार में बच्चों में नैतिकता का बीज बढ़ता जाता है तथा आपस में बांटने की क्षमता, अपने से बडों का सम्मान और दायित्व बोध बढ जाता है। परिवार में बच्चा सामाजिक मूल्यों को समझता है। उसके मन में सीखने की इच्छा होती है विचार और निर्णय की क्षमता बढती है, वह आगे जाकर क्षमतावान बनते हैं और हर परिस्थिति में स्वयं को अनुकूल पाते हैं तथा समाज के निर्माण में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

व्यक्तित्व विकास की प्रयोगशाला है , परिवार। परिवार में व्यक्ति के व्यक्तित्व का संपूर्ण विकास होता है।व्यक्तित्व का विकास करने के लिये स्वयं में चिंतन आवश्यक है, उपासना आवश्यक है, भावना आवश्यक है, पर एक क्रिया भी होना चाहिए। अभ्यास करने के लिये कोई स्थान भी होना चाहिए। कुछ न कुछ काम करने के लिए जगह चाहिए। व्यक्तित्व का विकास करने के लिए जिस जगह की आवश्यकता है, उसका नाम है- परिवार। परिवार वह स्थान है जिसमें कि व्यक्ति अपने सदगुणों, सत्प्रवृतियों का अभ्यास करता है और इस प्रकार एक परिवार समाज के विकास के जरूरी है। परिवार के बीच रहकर बच्चों को विकास करने का मौका मिलता है। समाज का विकास करने के लिए परिवार एक बहुत अच्छा साधन है। एक आधारशिला है, इसमें हर एक को रहना चाहिए यदि व्यक्ति परिवार से अलग एकाकी रहने की इच्छा, विचार करते हैं, तब वह स्वयं परिवार व समाज से अलग हो जाएंगे अपना बौद्धिक व भावनात्मक विकास भी नहीं कर पाएंगे।

परिवार निर्माण से समाज का निर्माण होता है क्योंकि परिवार एक पूरा समाज है, समाज में अच्छे गुणों को बढाया जाए। समाज में ढेरों कुरीतियां व्याप्त हैं, इन्हें समाज से निकालना है। इन कूरीतियों को खत्म करने का कार्य हमें अपने घर से करना चाहिए **नर और नारी एक समान** नर और नारी को समानता का दर्जा मिलना चाहिए। ताकि महिलाएं भी यह अनुभव करें कि वे उसी तरीके से सम्मानित हैं। इसी प्रकार से कुरीतियां जैसे - भिक्षावृति, भ्रष्टाचार, अपराध, बालविवाह, निर्धनता, बेरोजगारी, श्वेतवसन अपराध, सायबर क्राइम अन्य अनेक इन समस्याओं के निराकरण के लिए आंदोलन चलाना चाहिए। तथा समस्याओं के समाधान के लिए सहकारिता पूर्ण बातावरण का निर्माण समाज में करना चाहिए। मिलजुल कर रहने की प्रवृति का अभिवर्द्धन व्यक्ति को मिलजुल कर करना चाहिए।

अत: हम सभी अपने स्वभाव में सदगुणों, सुसंस्कारों को समाविष्ट कर सारे समाज को सुगंधित, सुविकसित और समुन्नत बनाने में अपना योगदान दें। परिवार के प्रति, कुटुम्ब के प्रति, उत्तरदायित्वों का निर्वाह करें। जिससे हम एक स्वस्थ्य परिवार का निर्माण कर स्वस्थ्य समाज को तैयार

* सहायक प्राध्यापक, शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना (म.प्र.) भारत

कर सकें।

संदर्भ ग्रंथ सूची:-

1. भारतीय समाज एवं संस्कृति - रविन्द्रनाथ मुकर्जी
2. जनजातीय समाज का समाजशास्त्र - डॉ एम0 एल0 गुप्ता व डॉ डी0 डी0 शर्मा
3. भारत में समाज-वीरेन्द्र प्रकाश शर्मा
4. भारत में सामाजिक परिवर्तन-डॉ मनोज कुमार सिंह
5. समाजशास्त्र- डॉ ए0 पी0 श्रीवास्तव व डॉ आर0 बी0 ताम्रकार
6. भारतीय सामाजिक व्यवस्था- रविन्द्रनाथ मुकर्जी
7. भारतीय सामाजिक व्यवस्था- राम आहूजा
9. पत्रिका- 23-7-2017
10. अखंड ज्योति- अप्रैल 2017

****

भारत में बालश्रम और कानून

डॉ. ज्योति मेहता *

प्रस्तावना – बाल्यावस्था आमतौर पर सुकुमार कोमल भावनाओं और मधुर स्मृतियों से जुड़ी कल्पना को हमारे मन में उभारती है। सामाजिक ,मनोवैज्ञानिक और सांस्कृतिक दृष्टि से बाल्याकाल जीवन की सर्वाधिक महत्वपूर्ण अवस्था होती है। इसे हम राष्ट्र के भावी नेतृत्व के निर्माण का काल भी कह सकते है।

एक बार भारत के पूर्व राष्ट्रपति डॉ.ए.पी.जे अब्दुल कलाम ने एक दस वर्षीय बच्ची से पूछा था 'तुम्हारी महत्वाकाँक्षा क्या है?' यह बच्ची बालिका को उनके पास आटोग्राफ लेने आई थी। उस बच्ची ने तुरन्त उत्तर दिया, 'मै विकसित भारत में जीवन जीना चाहती हूँ। डॉ. कलाम ने विकसित भारत के बारे में अपने स्पन के बारे में लिखा, विकसित भारत वह होगा जहाँ प्रत्येक व्यक्ति जिम्मेदारी से जीवन जी सकेगा और जहाँ उसे ऐसा व्यवसाय मिलेगा जो उसे जीवन की सभी सुख सुविधाए दे सकेगा और साथ ही उसे स्वास्थ्य संबधित सुविधाए उपलब्ध हो सकेगी। 'उस बच्ची ने विकसित भारत का जो स्वप्न देखा है, क्या उसे ऐसा भारत दे पाना संभव है। अगर कोई देश बच्चों का सही विकास करने की स्थिति मे नहीं है, तो ऐसे देश को विकसित देश नहीं कहा जा सकता। बच्चों के सही विकास के लिए यह जरूरी है कि उन्हें सामाजिक असमानताओं की विभिषिका से संरक्षण प्रदान किया जाएं वर्तमान और भविष्य की जनसंख्या का एक महत्वपूर्ण भाग होता है। इसलिए यह जरूरी है कि उन्हें जन्म से ही कुछ अधिकार स्वाभाविक रूप से दिए जाएं। बच्चों को प्रदत्त किए जाने वाले अधिकारो के संबंध में संसार के लगभग सभी देश यह मानते है कि स्वास्थ्य जीवन, शिक्षा और विकास के अधिकारों सहित शोषण के विरूद्ध अधिकार जैसे कुछ जन्म जात विशेष अधिकार है जो प्रत्येक दशा में उन्हें मिलाना ही चाहते है।

अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के अनुसार बाल श्रमिक वे बालक है, जो स्थाई तौर पर व्यस्को कि तरह जीवन जी रहे है कम मजदूरी पर कई घंटे एक देसी दशाओं में काम करते है जिनसे उनका स्वास्थ्य खराब होता है तथा शारीरिक और मानसिक विकास रूक जाता है। इस कार्य के कारण कभी कभी तो उन्हें अपने परिजन से दूर रहना पड़ता है तथा प्राय: वे उस सार्थक शिक्षा और प्रशिक्षिण संबधी अनुसरो से वंचित रह जाते है। जिनके कारण उनके नए बेहतर भविष्य के रास्ते खुल सकते है।विश्व के विभिन्न देशों में कार्यरत बाल श्रमिक को की समस्याओं और उनके निराकरण हेतु विभिन्न मुद्दो पर चर्चा करने के लिए 27-30 अक्टूबर 1997 मे नार्वे की राजधानी ओस्लोय में संयुक्त राष्ट्र संघ द्धारा बालश्रम पर अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन का आयोजन संसार के लोगों का ध्यान बच्चों की समस्याओ की आरे आकर्षित करने के लिए सराहनीय प्रयास कहा जा सकता है।

भारत जैसे विकासशील देशों के साथ पश्चिमी देशों में भी बच्चों द्धारा काम लिए जाना आज उनकी संस्कृति का अभिन्न अंग बन गया हैं। यहाँ तक की सम्पन्न घरो के बच्चे भी अपनी पॉकेट मनी के लिए विभिन्न संस्थाओं में काम करने लगे है। इन बच्चों से इस प्रकार का काम लेना इन विकसित देशों को अपराध भी नहीं माना जाता है, जो अपने आप में प्रश्नचिन्ह ? है। बाजार की प्रतिस्पर्धा में आगे बढ़ने की प्रवृत्ति ने बाल मजदूरी की संस्कृति को जन्म दिया है। विकसित एंव विकासशील दोनों ही तरह के देश इसकी चपेट में है। वैश्विकरण तथा औद्योगिकरण की प्रक्रिया के तेज होने के बाद दूसरा रूप चिंतनी हो गया है। पूरे विश्व में लगभग 6 से 14 वर्ष के 25 करोड़ बच्चे खतरनाक और गैर खतरनाक व्ययवसाय उद्योग एंव व्यवसाय में बंधुआ मजदूर के रूप में कार्य कर रहे है। वे शिक्षा स्वास्थ्य तथा आजाद बचपन से वंचित है।

भारत में बालश्रम की स्थिति: बालश्रम करने वाले अधिकांश बच्चे ग्रामीण क्षेत्रों के है, और उनमें भी लगभग 6.0 प्रतिशत 10 वर्ष से कम आयु के है। व्यापार व व्यवसाय में 23 प्रतिशत व घरेलू कार्या में 37 प्रतिशत बालश्रमिक कार्यरत है।

सन् 2011 की जनगणना के अनुसार बाल मजदूरी लिहाज से उत्तरप्रदेश में 8-96 लाख बाल मजदूरी कर रहे है , बच्चे यहाँ सबसे खतरनाक जगह हैं। दूसरे नंबर पर महाराष्ट्र में 4-96 लाख बच्चे बालश्रम में लिप्त है। बिहार में 4-51 लाख बच्चे बाल मजदूरी कर रहे हैं यह तीसरे नबंर पर है।

भारत 3,10,00,000 बच्चे अवयस्क बाल मजदूरी में लगे हुए है जो कि दुनिया के किसी भी देश से सबसे ज्यादा है।
इन बच्चो की उम्र केवल 4 से 13 वर्ष के बीच में है।

राज्य	2001 के अनुसार	2011 के अनुसार
आंध्रप्रदेश	1363339	
बिहार	1117500	451590
छत्तीसगढ़	364572	
गुजराज	485530	63884
कर्नाटक	822615	250318
मध्यप्रदेश	1065259	249432
राजस्थान	1262570	252338
उत्तरप्रदेश	1927997	896301

सन् 2011 की जनगणना में दमन और द्वीप में 774 और अंडमान निकोबार में 999 बच्चें बाल मजदूरी कर रहे थे, सबसे कम बाल मजदूरी केवल 28 लक्ष्यद्वीप में पाए गए।

सरकारी आंकड़ो के अनुसार वर्ष 2011 में हुई भारत की जनगणना रिपोर्ट के मुताबिक देश में 1.26 करोड़ बच्चे ऐसे है, जो सड़को पर सामान

* प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

बेचते है, सफाई करते है या फिर होटलो, फैक्ट्रीयों और खेतों में काम करते है। वयस्क मजदूरों की तुलना में बाल मजदूरों को एक तिहाई मजदूरी मिलती है, वर्ष 2001 और 2011 की जनगणना पर आधारित श्रम एंव रोजगार मत्रंलाय भारत सरकार की रिपोर्ट के अनुसार 2001 में देश में 5-14 उम्र के कुल 25.2 करोड़ बच्चे थे ,जिनमें से 1.26 करोड़ बच्चे बाल मजदूरी को मजबुर थे

विभिन्न देशों में बालश्रम 172 देशो पर किये गए अध्ययन में भारत का नबंर 116 वा है बच्चों की बेहतर स्थिति पर 1 इस सूची में श्रीलंका, भूटान 93 वा और म्यमांर का 112 वा स्थान है, जो भारत से काफी बेहत्तर स्थिति में है।

दुनिया भर में करीब 1.5 अरब लोग ऐसे देशों में रहते है, जो संघर्ष , हिंसा ओर अराजकता से ग्रस्त है। वही 20 करोड़ लोग हर साल प्राकृतिक आपदा का दंश झेलते है। पीड़ितों को इस सूची में तीसरा नंबर आता है बच्चो का। इन देशों के 16.8 करोड़ बच्चें ऐसे है जो संघर्ष, हिंसा, अराजकता और प्राकृतिक आपदाओं के साथ ही बाल मजदूरी को विवश है, यहॉ वर्ष 2017 'द वर्ल्ड डे अगेस्ंट चाइल्ड लेबर' ऐसे ही बच्चों को समर्पित है। अफ्रीका के इस्लामिक देशों में बालश्रमिकों की संख्या ज्यादा हैं।

अन्तर्राष्ट्रीय मजदूर संघ द्वारा जारी आंकड़ो के अनुसार 60 प्रतिशत अर्थात् 10 करोड़ बाल मजदूर पूरे विश्व में कृषि कार्यो व मछली पालन में लगे है। 17.1 करोड़ बच्चे सन् 2001 में बेहत खतरनाक जगहो पर काम करते थे। वर्तमान में 8.5 करोड़ बच्चे ऐसी जगह कार्य कर रहे है।

भारत के संविधान में बाल अधिकार भारत का संविधान उस समय बनाया जा रहा था। जब संयुक्त राष्ट्र संघ मानवअधिकारो की सार्वभौमिक घोषणा को अपना रहा था । अत: भारत के संविधान में उन अधिकारों को शामिल किया गया है और संविधान में बाल अधिकारों पर भी बल दिया गया है।

अनुच्छेछ 23 – इसमें मानव का दुर्व्यापार और बेगाह तथा इसी प्रकार बालश्रम प्रतिबंधित किया गया हैं अनुच्छेद 24 – इसमें 14 वर्ष से कम उम्र के बच्चों को मजदूर के तौर पर निमुक्त करने वाले व्यक्ति को 2 साल तक की कैद और 50000 रू. तक का जुर्माना है।

अनुच्छेद 29 (ड.) – सरकार द्वारा अपनी नीति का इस प्रकार संचालन करना ताकि बालकों की सुकुमार मनोवस्था का दुरुपयोग नहीं हो।

अनुच्छेद 39 (च) – सरकार द्वारा सुनिश्चित करना कि बालकों को स्वतंत्र और गरिमाओं स्वस्थ्य विकास के अवसर उपलब्ध हो।

अनुच्छेद 41 – राज्य अपनी आर्थिक क्षमता तथा विकास की सीमा में बालकों को काम करने शिक्षा पाने और अनियोजन की स्थिति में सार्वजनिक सहायता पाने का अवसर सुनिश्चित करे।

अनुच्छेद – 45 14 वर्ष तक की आयु के सभी बच्चों को सरकार द्वारा नि:शुल्क अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था करना ।

अनुच्छेद 47 – पोषण और जीवन स्तर को उँचा उठाने का प्रावधान ।

अनुच्छेद 21(क) – संविधान के 86वे संशोधन 2002 के माध्यम से बच्चो को शिक्षा का मौलिक अधिकार प्रदान किया गया है।

बालश्रम की समस्या को समाप्त करने के सुझाव – वर्तमान में करोड़ों बच्चों की उनके मौलिक अधिकार तो दूर उन्हें अमानवीय दशाओं में जीवन गुजारने को मजबूर होना पड़ रहा है। वास्तव में इन व्यवस्थाओं को लागू करना न केवल भारत बल्कि संसार के अधिकांश देशों के लिए चुनौती बनता जा रहा है। आज समाज में व्यक्ति परिवार व समाज के स्तर पर बच्चों को वस्तु मानकार उनसे भीख मंगवाना, उनकी समता से अधिक व भारी काम करवाना, उनसे तस्करी जैसे गैर कानूनी कार्य करवाना ,विज्ञापनों में उनका प्रयोग करना जैसे कार्य करवाकर उनके विकास कैसे अवरूद्ध कर रहे है। आवश्यक है बच्चो का सही पालन पोषण कर हर पीढ़ी के बच्चो के विकास पर पूरा ध्यान देना चाहिए। इसके लिए हमें बाल अधिकारों के प्रतिकृत संकल्प होना होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. बाल श्रमिकों की ज्वलंत समस्याएँ: कुमार अजय बालषोषण और अपराध – सिंह निशांत भारत की जनगणना 2011

****

सामाजिक एकता एवं सुरक्षा की दृष्टि से संयुक्त परिवार की आवश्यकता

डॉ. मनोज वानखेड़े *

शोध सारांश – हिन्दू सामाजिक जीवन की एक मुख्य विशेषता संयुक्त परिवार प्रणाली है। यह भारतीय संस्कृति की 'वसुधैव कटम्बकम्' की धारणा का प्रतीक है तथा भारतीय संरचना में इसका अत्यधिक महत्व है। संयुक्त परिवार को हिन्दुओं की भॉति अनेक अहिन्दू समुदायों ने भी इस प्रणाली को अपना लिया है। **'सवश्री कीथ और मैक डॉनल'** जैने पाश्चाल्य विद्धान संयुक्त परिवार प्रणाली को अति प्राचीन मानते है। अनेक वैदिक मंत्र ऐसे हैं, जो इस प्रणाली की प्राचीनता को प्रभावित करते है। विवाह के समय पुरोहित वर-वधू को आर्शीवाद देते हुवे कहता है **' तुम यही घर में रहो, विमुक्त मत होओ। अपने घर में पुत्रों और पोत्रो के साथ खेलते हुए और आनंद मनाते हुवे सारी आयु का उपभोग करो'** (ऋ 10/85/42) तथा **'तु सास, ससुर ननद ओर देवर पर शासन करने वाली रानी बन'**(वही, 46) यदि विवाह के पश्चात पुत्र से माता-पिता के पृथक हो जाने की प्रथा होती, तो आशीर्वाद का कोई महत्व नहीं रहता।

संयुक्त परिवार में तीन या चार पीढ़ियों के सदस्य एक साथ रहते है। परिवार में जो सबसे अधिक आयु का व्यक्ति होता है, वह परिवार का मुखिया होता है। स्त्रियों में मुखिया की पत्नी या अन्य वृद्ध महिला होती है। परिवार के प्रधान की आज्ञा का उल्घंन भयंकर सामाजिक अपराध माना जाता है।

ग्रामीण आर्थिक सामाजिक व्यवस्था के अंतर्गत संयुक्त परिवार की उपयोगिता आज भी है, इसीलिए गाँव में इसका विस्तार और प्रभाव स्पष्टत: देखने को मिलता है और शायद भविष्य में भी ऐसा ही होगा, जब तक कि भारतीय ग्रामीण समुदाय के फलस्वरूप में कोई क्रांतिकारी परिवर्तन नहीं होता।

शब्द कुंजी – परिवार की एकता व सुरक्षा, परिवार में भाई चारे के वातावरण में है।

संयुक्त परिवार संगठन के आधार पर निकट के नाते-रिश्तेदारी की एक सहयोगी व्यवस्था है, जिसमें सम्मिलित सम्पत्ति वास, अधिकार तथा कर्तव्यों का समावेश होता है।

प्रस्तावना –संयुक्त परिवार की भाषा – संयुक्त परिवार क्या है –

1. **डॉ इरावती कार्वे** ने अपनी पुस्तक kinship organization In India p - 10 के अनुसार ' **एक संयुक्त परिवार उन व्यक्तियों का एक समूह है, जो साधारणतया एक मकान में रहते है, जो एक रसोई में पका भोजन करते है, तो सामान्य सम्पत्ति के स्वामी होते है और जो उपासना में भाग लेते है तथा जो किसी न किसी प्रकार एक-दूसरे के रक्त संबधी है'**

2. **आई0पी0 देसाई के अनुसार** हम उस परिवार को कहते है, जिसमें मूलभूत परिवार की अपेक्षा अधिक पीढ़ियों के सदस्य सम्मिलित है और जिसके सदस्य सम्पत्ति , आय तथा पारस्परिक अधिकारों और कर्तव्यों से एक-दूसरे से संबधितं है।

सयुंक्त परिवार की विशेषताएँ –

1. सामान्य निवास
2. बड़ा आकार
3. एक संगठित ईकाई।
4. संयुक्त रसोई।
5. संयुक्त सम्पत्ति।
6. सामान्य भरण-पोषण।
7. गृहस्थी का महत्वपूर्ण स्थान।
8. सांस्कृतिक निरंतरता।
9. सामान्य पूजा
10. सहयोग की भावना।
11. परस्पर कर्तव्य बोध।
12. स्थायित्व।

संयुक्त परिवार की आवश्यकता –

1. **चिन्ता की कमी –** संयुक्त परिवार में सभी प्रकार की परिस्थितियों को सहन करने की अपूर्ण शक्ति होती है, अत: उनमें साहस का विकास होता है, हरेक व्यक्ति को अपनी पत्नी, बच्चों तथा स्वयं के लिए आश्रय का विकास होता है, व्यक्तिगत परिवार में यह संभव नहीं हो सकता है।

2. **विरासत की रक्षा –** सयुंक्त परिवार में पारिवारिक विरासत और संस्कृति की रक्षा की जाती है। अनेक पीढ़ियों के सदस्य साथ-साथ रहते है, इससे बच्चे, बड़े बूढ़ों के आदेशों का अनुसरण करते है, फलस्वरूप पारिवारिक परम्पराओं का नियमित रूप से पालन होता है, जिससे वे अमिट रहते है।

3. **सुरक्षा की भावना –** संयुक्त परिवार सिर्फ वृद्धावस्था में व्यक्ति को सुरक्षा प्रदान नहीं करता, अपितु आर्थिक, सामाजिक , राजनैतिक तथा मनौवैज्ञानिक सुरक्षाएँ भी प्रदान करता है। व्यक्ति अपने को हर प्रकार से सुरक्षित समझता है।

4. **मानवीय भावनाओं का विकास –** संयुक्त परिवार की उपयोगिता यह है कि इनमें मानवीय भावनाओं के विकास के लिए अधिक अवसर रहते है। अनुशासन, सहनशीलता, स्वाभिमान, और आत्मविश्वास की भावनाओं का विकास संयुक्त परिवार में ही संभव होता है। इसके साथ ही व्यक्ति सहयोगी जीवन बिताना सीख जाता है। संयुक्त परिवार इन्हीं मानवीय भावनाओं पर

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय कन्या महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

टीका हुआ है।

5. बच्चों के पालन-पोषण का आदर्श स्थान – संयुक्त परिवार बालकों के व्यक्तित्व के समुचित विकास में भी सहायक होता है। इसमें रहतु हुए बच्चे उदारता, सहिष्णुता, सेवा, सहयोगिता, प्रेम ,सद्भाव और आज्ञाकारिता का पाठ पढ़ते है। संयुक्त परिवार में रहते हुए छोटेपन से ही बच्चा यह सीख जाता है कि उसका जीवन केवल उसी के लिये ही नहीं है, बल्कि उसके जीवन की सार्थकता दूसरों के लिये जीने मे हैं।

6. बड़े-बूढ़ों का मार्गदर्शन – संयुक्त परिवार में बड़े-बुढ़ों का एक अच्छा जमघट होता है, जिन्हें जीवन का लम्बा अनुभव होता। इनमें अनेक अच्छे उपदेश व निर्देश मिलते रहते हैं और सदस्यों को अपने जीवन को सफल बनाने में सहायता मिलती है, बड़े-बूढ़े अपने से छोटी आयु के लोगों को सदैव उचित मार्ग पर रखने का प्रयत्न करते है।

7. मनोरजनं का उत्तम साधन – संयुक्त परिवार द्वारा उनके सदस्य का पर्याप्त मनोरंजन होता रहता है। उसमें अनेक छोटे बच्चों की तोतली बाते, उनके मनोरंजन क्रिया कलाप, भाई-बहनों का प्रेम, माता का वात्सल्य आदि सदस्यों के दिल को बहलाती रहती है। साथ साथ फुर्सत में या तीज-त्यौहारों में परिवार के सदस्य मिलकर हॅसी मजाक करते, खेल, संगीत, लोकगीत , धार्मिक भजन आदि से अपना दिल बहलाते रहते है।

8. सामाजिक बीमा – संयुक्त परिवार का संगठन भी इस प्रकार का है वह अपने सदस्यों के लिए बीमा कम्पनी के रूप में कार्य करता है, क्योकि शारीरिक या मानसिक असमर्थता या दुर्घटना होने पर यह अपने प्रत्येक सदस्य की रक्षा करता है। बीमार पड़ने पर सेवा सुश्रुषा मिलती है, वृद्धावस्था या असमर्थता या बेकारी या दुर्घटना होने पर आश्रय मिलता है, खाने पहनने को मिलता है और किसी भी अवस्था में भूखों मरने का भय नहीं रहता।

9. सम्मिलित आय – संयुक्त परिवार में सम्मिलित आय और सम्मिलित खर्च होता है, इस कारण रूपये की बचत या कम खर्च में अधिक लोगो का भरण पोषण होता है, अलग-अलग परिवार बसाने में सामान्यतया खर्चा अधिक होता है, क्योंकि परिवार से सबंधित हर चीज को अलग-अलग खरीदना पड़ता है। इतना ही नहीं, संयुक्त परिवार में खर्चे पर बड़े-बूढ़ों का नियंत्रण होता है, जो कि इस संबध में काफी अनुभवी होते है।

10. राष्ट्रीय एकता की प्रोत्साहन – संयुक्त परिवार परोपकार और त्याग की भावना को उत्पन्न करता और इससे सामुदायिक जीवन की व्यवहारिक शिक्षा मिलती है। सयुंक्त परिवार के सदस्य के नाते प्रत्येक सदस्य के ह्रदय और मस्तिष्क से संकीर्ण भाव दूर होते है, जिसके फलस्वरूप उनमें अपनेपन की भावना विकसित होती है, इससे राष्ट्रीय एकता की भावना पनपती है।

11. देश सेवा का अवसर – चूॅकि संयुक्त परिवार में बीवी-बच्चों या बूढ़े, मॉ-बाप का पालन पोषण का भार किसी एक के सिर पर नहीं होता और चूॅकि उनमें से एक दो सदस्यों की अनुपस्थिति से इन कार्यो में कोई बाधा नहीं पहुंचती, इस कारण संयुक्त परिवार के सदस्यों को परिवार की चिन्ता अधिक न रखकर देश सेवा ओर त्याग करने का अवसर अधिक प्राप्त होता है।

निष्कर्ष – संयुक्त परिवार का भविष्य श्री कपडिया के अनुसार 'हिन्दु मनोवृत्तियॉ आज भी सयुंक्त परिवार के पक्ष में है' आगे लिखा है कि इतना तनाव तथा भार सहन करते हुए भी संयुक्त परिवार अब तक जीवित है तथा इसका भविष्य अंधकार नहीं है। भिन्न-भिन्न पीढ़ियों में संघर्ष होते हुए भी आने वाली पीढ़ी में सयुंक्त परिवार के लिए सुदृढ़ भावना विद्यमान है। ग्रामीण आर्थिक सामाजिक व्यवस्था के अंतर्गत संयुक्त परिवार की उपयोगिता आज भी है, इसीलिए गाँव में इसका विस्तार और प्रभाव स्पष्टत: देखने को मिलता है और शायद भविष्य में भी ऐसा ही होगा, जब तक कि, भारतीय ग्रामीण समुदाय के फलस्वरूप में कोई क्रांतिकारी परिवर्तन नही होता।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. मुकर्जी, रविन्द्रनाथ – भारतीय समाज व संस्कृति 2001विवेक प्रकाशन जवाहर नगर दिल्ली
2. डॉ. बघेल, डी.एस. एवं – भारतीय समाज 2007 कैलाश पुस्तक सदन, डॉ. बघेल, किरण, भोपाल
3. डॉ. सिहं वीरेन्द्रनाथ – ग्रामीण एवं नगरीय समाज 1995 विवेक प्रकाशन दिल्ली
4. प्रो. गुप्ता, एम.एल. एवं – समाज शास्त्र 2002 साहित्य भवन डॉ. शर्मा डी.डी. पब्लिकेशन आगरा

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to September 2017, Vol. I

जयसिंह नगर एवं जैतपुर विकासखण्ड में शिक्षा का भौगोलिक अध्ययन

डॉ. दशरथ प्रसाद साकेत *

शोध सारांश – भारत गाँवों का देश है, 2001 की जनगणना के अनुसार 72.4% लोग ग्रामों में निवास करते हैं। भारत में ग्रामों के विकास के लिए क्षेत्रीय विकास योजनाओं के अन्तर्गत विकास हेतु आधार भूत सुविधाओं–शिक्षा, पेय जल सेवा, स्वास्थ्य सेवा, विद्युत सेवा, परिवहन सेवा के विकास को महत्व दिया गया। यह सही भी था, क्योंकि उपर्युक्त सेवाओं के बहाली और किसी क्षेत्रीय इकाई के विकास की कल्पना करना संभव नहीं है। विकास योजनाओं का अर्थ जहाँ एक ओर लोगों के आर्थिक एवं सामाजिक रूपान्तरण से है, वहीं दूसरी ओर इनका सम्बन्ध आर्थिक विकास से है। विस्तृत अर्थो में यह कारकों की जटिलता के पहचान की एक प्रक्रिया है, जो सामाजिक एवं भौतिक अस्तित्व की रचना, परिवर्तन अथवा विकास में योगदान देते हैं।म आर. पी. मिश्रम एवं अन्य के अनुसार विकास योजना आर्थिक एवं सामाजिक परिवर्तन लावे ताकि संस्थागत ढ़ाँचा के निर्माण में समाज द्वारा किया गया एक जागरूक प्रयास है, जो परिवर्तन को एक सतत प्रक्रिया के रूप में चलता है। क्षेत्रीय विकास का मुख्य कार्य राष्ट्रीय, राज्यीय एवं क्षेत्रीय स्तर पर क्षेत्रीय नियोजन की योजना को नीतियों के द्वारा अन्तर्क्षेत्रीय विषमताओं को कम करना है।

प्रस्तावना – योजना आयोग विशिष्ट कार्यक्रमों के लिए राज्य में एक या दो जिलों का चयन करता है। परन्तु पिछड़े हुए क्षेत्रों के समस्याओं के समाधान का यह संतोषप्रद कदम नहीं है। पिछड़ापन एक वृहद स्थानिक स्वरूप है, जो क्षेत्रीय विभेदों के सम्पूर्ण अभिलक्षणों द्वारा परिलक्षित होता है। पिछड़े हुए क्षेत्रों की समस्याओं के समाधान के लिए योजनाकारों द्वारा व्यवस्थित नई योजना प्रक्रिया बनाई जानी चाहिए। योजना कुछ इस प्रकार की होनी चाहिए, कि पिछड़े हुए क्षेत्रों के विकास की विशिष्ठ समस्याओं के संबंध में पर्याप्त जानकारी सुनिश्चित कर सके। पिछड़े क्षेत्रों के स्थानिक कार्यक्रमों में कृषि तथा अन्य आधारभूत ढ़ाँचा में सुधार के लिए सहायता दी जानी चाहिए। इसीलिए योजना आयोग ने सातवीं पंचवर्षीय योजना में आधारभूत ढ़ाँचा, क्षेत्र के विकास को सर्वोच्च वरीयता प्रदान करने की सिफारिस की।

प्रस्तावित शोध प्रविधि – शोध पत्र में द्वितीयक सामग्री का संकलन किया गया है। व्यक्तिगत सर्वेक्षण एवं संकलन को भी शोध पत्र का आधार बनाया गया है, वास्तविक स्थिति का जयसिंह नगर एवं जैतपुर विकासखण्ड में शिक्षा का भौगोलिक अध्ययन नामक शोध पत्र का निर्माण किया गया है। इस पत्र में द्वितीयक आकड़ों का संकलन करके शोध पत्र में समाहित करने का प्रयास किया गया है। पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से भी शोध पत्र बनाने में मदद ली गई है।

उद्देश्य :

1. अध्ययन क्षेत्र जनजातीय जनसंख्या वाला क्षेत्र है। 1961 के पूर्व शिक्षा संबंधी विकास की ओर कोई ध्यान नहीं दिया गया, किन्तु बाद में योजनाओं द्वारा यह समझ गया कि जब तक इस क्षेत्र के लोगों को शिक्षित नहीं किया जाएगा, तब तक विकास संभव नहीं। अत: शिक्षा आधारित नीति के कृयान्वयन के कारण शिक्षा संस्थाओं का विकास हुआ मिलता है।
2. 1961 के बाद शिक्षा विकास संबंधी नीतियों को समग्र देश में क्रियान्वित किया गया, जिसका प्रभाव इस क्षेत्र के शिक्षा संस्थाओं के विकास का कारण बनी।
3. 1951 के पूर्व रीवा रियासत के आधीन इस क्षेत्र के समग्र विकास की कोई कल्पना नहीं की गई। स्वतंत्रता के बाद अधोसंरचनाओं में विकास की ओर ध्यान दिया गया। जैसे-जैसे अधोसंरचनाओं में विकास होता गया, उत्तरोत्तर गम्यता बढ़ती गई, जिनके प्रभाव के कारण प्राथमिक शालाओं की संख्या में विकास होता गया।
4. 1961 के पूर्व जहाँ निवास करने वाली अधिसंख्यक लोग घुमक्कड़ प्रकृति के थे। 1961 के बाद स्थाई अधिवासों में वृद्धि हुई जिसका प्रभाव प्राथमिक शालाओं के विकास में हुआ।
5. आदिवासियों को संविधान में प्रदत्त आरक्षण की सुविधाएँ जनजातीय समूह को रोजगार उपलब्ध कराने में मदद की, लोगों के रहन-सहन का स्तर बढ़ा, जिसका प्रभाव शिक्षा पर पड़ा।

आधारभूत सुविधाएं ऐसी सुविधाएं होती हैं, जिनके रूग्ण होने पर किसी प्रदेश की सामाजिक आर्थिक क्रियाएं पूर्णत: रूग्ण होकर विकास की गति को बाधित करती हैं। यदि इन सुविधाओं को बहाल किया जाता है, तो समाज का विकास अपने आप गति प्राप्त करने में सामर्थ होता है इन आधारभूत सुविधाओं के सहज उपलब्धता के बगैर किसी क्षेत्र या प्रदेश का विकास संभव नहीं है।

उपयोगिता – किसी भी देश के राष्ट्रीय जीवन में शिक्षा का महत्वपूर्ण स्थान होता है। शिक्षा के अभाव में जीवन पशु तुल्य है। शिक्षा की प्रगति राष्ट्र की प्रगति का सूचक है। स्वामी विवेकानन्द ने कहा है कि हमारा देश उन्नति क्यों नहीं कर रहा है, क्योंकि यहाँ शिक्षा का अभाव है। अत: यदि देश को समुन्नत बनाना है, तो सर्वप्रथम जनसाधारण को शिक्षित करना होगा। शिक्षा एक सामाजिक प्रक्रिया है, जिसके द्वारा मनुष्य की जन्मजात शक्तियों का विकास होता है। उसके वक्तव्य तथा विचारों में निरंतर परिवर्तन, परिमार्जन एवं परिवर्धन होता है, और वह अपनी सभ्यता, संस्कृति को समझने, सुरक्षित रखने और विकास करने में सामर्थ होता है महात्मा गाँधी के अनुसार मैं

* अतिथि विद्वान (भूगोल) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, जैतपुर, जिला–शहडोल (म.प्र.) भारत

बालक अथवा मनुष्य में आत्मा, शरीर, बुद्धि के सर्वांगीण और शिक्षा को सबसे अच्छे विकास से समझता हूँ। अरस्तु ने कहा स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मस्तिष्क का विकास ही शिक्षा है।

शिक्षा का उद्देश्य प्रत्येक व्यक्ति के ज्ञान, रूचियों आदर्शों एवं शक्तियों का विकास करना है। जिसके द्वारा उसे अपना उचित स्थान मिल सके और उस स्थान का सदुपयोग कर समाज को उच्च एवं पवित्र उद्देश्य की ओर ले जावें शिक्षा के द्वारा ही किसी देश के नवीन पीढ़ियों का समुचित एवं संतुलित विकास किया जा सकता है। साँस्कृतिक धरोहर से उन्हें अवगत किया जा सकता है। शिक्षा के द्वारा हर मानव में विश्वास, अन्तर्दृष्टि और सहयोग आदि का विकास कर सकते हैं।

आधुनिक शताब्दी में शिक्षा के नये दृष्टिकोण और जनतांत्रिक विचारधारा ने शिक्षा के क्षेत्र को बहुत व्यापक बना दिया है। आज शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति का शारीरिक, बौद्धिक, भावनात्मक, सामाजिक एवं अध्यात्मिक विकास समग्र रूप से कर व्यक्ति को वातावरण के अनुकूल करना सिखाना है, ताकि वह अपने व्यवहार में परिवर्तन कर अपने जीवन को सफल बनाने के साथ-साथ समाज एवं राष्ट्र का हित कर सके।

शिक्षा -सबका शिक्षित होना जरूरी है, ऐसी अवधारणा प्राचीन धर्म ग्रंथों एवं वेदों में मिलती है। इसीलिए भारत में शिक्षा के प्रचार-प्रसार का कार्य एक पुरातन परम्परा है। स्त्री हो अथवा पुरूष सबको शिक्षित होना चाहिए। भारतीय इतिहास में अनेको ऐसी महिलाओं का उल्लेख मिलता है,जो शिक्षा के क्षेत्र में अग्रणी रही हैं, समय के साथ विभिन्न साँस्कृतियों का पदार्पण इस देश में हुआ, जिसके फलस्वरूप शिक्षा सम्बन्धी स्वरूप पुरातन विचार भ्रान्तियों में परिवर्तित होकर शिक्षा के क्षेत्र में करारा झटका दिया। अँग्रेजों की गुलामी के कारण शिक्षा सिर्फ नगरों में निवास करने वालों की हो गयी। ग्रामीण भारत जहाँ 1951 में 82 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या निवास करती थी शिक्षा के क्षेत्र में प्राय: पीछे रहे। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद समग्र राष्ट्रीय विकास की दृष्टि से पंचवर्षीय योजनाओं के द्वारा शिक्षा विकास सम्बंधी कार्यों की प्रगति देनी चाही। जिसमें नगरीय क्षेत्र तो तेजी से विकास किए किन्तु ग्रामीण क्षेत्र पिछड़े ही रहे।

अध्ययन क्षेत्र जयसिंहनगर आदिवासी परियोजना क्षेत्र आदिवासी जनसंख्या बहुल भू-भाग है, अत: ग्रामीण क्षेत्रों की तुलना में यहाँ शिक्षा का विकास बिल्कुल ही मन्थर गति से आगे बढ़ा जैसा कि निम्नलिखित है -

शैक्षणिक संस्थाओं का विकास - शिक्षा के विकास में शैक्षणिक संस्थाओं की विशिष्ट भूमिका होती है। प्राचीन काल में शिक्षा संस्थान के रूप में गुरूकुल अथवा आश्रम हुआ करते थे, जहाँ पर विभिन्न विषयों की शिक्षा गुरूओं एवं आचार्यो के द्वारा दी जाती थी। वर्तमान समय में गुरूकुल का स्थान शासकीय एवं अशासकीय स्तर पर विभिन्न प्रकार एवं अन्य स्तर की शिक्षण संस्थाओं ने ले लिया है, जहाँ शालेय स्तर महाविद्यालयीन स्तर एवं तकनीकी स्तर पर लोगों को शिक्षित करने का कार्य किया जाता है।

अध्ययन क्षेत्र जयसिंहनगर एवं जैतपुर विकासखण्ड शहडोल जिला में स्थित ऐसे भू-भाग हैं, जो पुरातन समय से घने वनों एवं पहुँच से दूर आदिवासी जनसंख्या प्रधान भू-भाग हैं। अत: 1950 के पूर्व शिक्षा प्रदान करने वाली संस्थाओं का लगभग अभाव रहा। समीपी नगर एवं जिला मुख्यालय शहडोल में पूर्व माध्यमिक स्तर का विद्यालय था इसके अतिरिक्त अन्य स्थलों पर प्राचीन संस्कृति से सम्बन्धित गुरूकुल पद्धति के कुछ केन्द्र रहे स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद राष्ट्रीय विकास के प्रयासों के अन्तर्गत शिक्षा के विकास में सर्व- प्रथम ध्यान दिया गया, जिसके अन्तर्गत बुढ़ार एवं जयसिंहनगर में 1951 में क्रमश: 05 एवं 03 पूर्व माध्यमिक विद्यालय तथा 07 एवं 05 प्राथमिक विद्यालयों की स्थापना की गई। 1957 में शिक्षा विकास के लिए उपर्युक्त पाठशालाओं का उन्नयन क्रमश: हाईस्कूल एवं पूर्व माध्यमिक शाला के रूप में किया गया तथा दोनों विकासखण्डों में क्रमश: 12 एवं 08 प्राथमिक शालाएँ खोली गईं। दूसरे क्रम में जैतपुर एवं जयसिंहनगर दोनों ही विकासखण्डों में रात्रि कालीन पाठशालाएं खोली गयीं, जिन्हें 1961 में प्राथमिक आवासीय, पाठशाला के रूप में परिवर्तित किया गया। इस प्रकार 1961 की स्थिति में जयसिंहनगर एवं जैतपुर विकासखण्डों (तत्कालीन समय में विकासखण्ड का दर्जा नहीं मिला) में समस्त प्रकार की शालाओं की संख्या क्रमश: 17 एवं 21 हो गई। 1961 से 2007 की अवधि तक विद्यालयों की संख्या एवं उनमे पदानुक्रम में लगातार अभिवृद्धि होती गयी, जैसा कि निम्नांकित सारणी क्र. 1 से स्पष्ट है।

सारणी क्रमांक -1**(देखे अगले पृष्ठ पर)**

सारणी क्र. 1 से स्पष्ट होता है कि विभिन्न शासकीय योजनाओं तथा केन्द्र एवं राज्य शासन के सतत प्रयासों के कारण अध्ययन क्षेत्र में शिक्षा का लगातार विकास हुआ मिलता है। 1961 में समस्त प्रकार के विद्यालयों की कुल संख्या 38 थी, जो 2007 की स्थिति में 1001 हो गयी। इस प्रकार शिक्षा संस्थानों में 25.34 प्रतिशत की वृद्धि हुई मिलती है। किन्तु जयसिंहनगर एवं (जैतपुर) बुढ़ार दोनों ही विकासखण्डों में वृद्धि का स्वरूप एक समान नहीं पाया जाता जैसा कि उपर्युक्त (सारणी क्र. 1 में स्पष्ट है।)

निष्कर्ष - विभिन्न सम्वर्ग के संस्थाओं में विकास की संख्या अलग-अलग मिलती है। सन् 1961 में प्राथमिक विद्यालय की दोनों विकासखण्डों की सम्मिलित संख्या 20 थी, जो 1971 में 72 हो गई। इस प्रकार 52 प्राथमिक शालाओं में अभिवृद्धि हुई। 1971-81 दशक में 72 प्राथमिक शालाओं में अभिवृद्धि हुई। 1981 आधार वर्ष 1999 में 214 प्राथमिक शालाओं के अभिवृद्धि के साथ इनकी संख्या 428 हो गई। अगले दशकों 2001 एवं 2007 में प्राथमिक शालाओं की संख्या क्रमश: 509 एवं 758 हो गई। इस प्रकार 1961 आधार वर्ष पर कुल प्राथमिक शालाओं में 3690 गुना की अभिवृद्धि हुई। प्राथमिक शालाओं की भाँति पूर्व माध्यमिक माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक एवं महाविद्यालयों की संख्या में क्रमश: 1537 गुना, 2450 गुना विकास हुआ मिलता है। निष्कर्ष रूप में शिक्षा लोंगों के जीवन के आवश्यकताओं एवं आकाँक्षाओं से सम्बन्धित है जो आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक और साँस्कृतिक विकास करते हुए राष्ट्र के उन्नत का मार्ग प्रस्तत प्रस्तुत करती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. W.R. Lassay – Planning in rural Environmants. Megrow Hill Book, co. New Delhi p.2
2. RP Mishra – et al. – Regional devlopment Planning in India, Vikas publising house, New Delhi, 1974, 9391
3. VKV Rao – New apporaches to Indian planning -1 Yojana May-1, 1984,p.9.
4. सामाजिक अनुसंधान के मूल तत्व, म.प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, रवीन्द्रनाथ ठाकुर मार्ग, वालगंगा, भोपाल म.प्र., अष्टम संस्करण 2003.
5. डॉ. प्रमिला कुमार, मध्यप्रदेश, एक भौगोलिक अध्ययन, द्वितीय संस्करण, म.प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी भोपाल (म.प्र.).
6. म.प्र. सामान्य ज्ञान, उपकरण प्रकाशन 2/11 ए. स्वदेशी वीमानगर आगरा-2.

7. एस.डी. कौशिक एवं शर्मा, ए.के., भौगोलिक विचारधाराएं एवं विधि तंत्र, सप्तम संस्करण 1990, रस्तोगी प्रकाशन शिवाजी रोड, मेरठ.
8. डॉ. सी.वी. भामोरिया, भारत का वृहद भूगोल, 1994.
9. मध्यप्रदेश में औद्योगिक विकास की समस्यायें, उद्योग संचालनालय, भोपाल 1999, 2005.

सारणी क्रमांक -1 :जयसिंहनगर एवं (जैतपुर) बुढ़ार (विकासखण्ड) में शिक्षा संस्थाओं के विकास का स्वरूप (1961-2007)

क्र.	वर्ष	प्राथ.विद्यालय संख्या	वृद्धि संख्या	पूर्व मा. वि. संख्या	वृद्धि संख्या	उ.मा. वि. संख्या	वृद्धि संख्या	अन्य	कुल विद्या. संख्या	वृद्धि का अन्तर	वृद्धि का प्रतिशत
1.	1961	20	-	08	-	02	-	8	38	-	-
2.	1971	72	52	15	7	04	2	25	123	88	231.6
3.	1981	214	142	28	13	12	8	04	360	234	185.7
4.	1991	428	214	66	38	26	14	23	543	183	50.83
5.	2001	509	295	148	82	42	16	53	754	211	38.85
6.	2007	758	249	179	31	51	9	13	1001	247	32.75

स्त्रोत:- जिला शिक्षा अधिकारी शहडोल से प्राप्त जानकारी पर आधारित वर्ष 2007

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to September 2017, Vol. I

इक्कीसवीं सदी के प्रथम दशक के हिन्दी उपन्यास - सांस्कृतिक परिवेश में भूमण्डलीकरण

विनोद कुमार *

प्रस्तावना - भूमण्डलीकरण एक सतत् वैचारिक प्रक्रिया है। इस वैचारिकी ने समस्त विश्व को उद्धेलित किया। बीसवीं सदी के अन्तिम दशक व इक्कीसवीं सदी के प्रथम दशक की वैचारिक परिचर्चाओं में भूमण्डलीकरण विमर्श का प्रमुख मुद्दा बन कर सामने आया। भूमण्डलीकरण ने विश्व स्तर पर राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, साहित्यिक प्रत्येक क्षेत्र में क्रान्तिकारी परिवर्तन उपस्थित किए। वैश्विक संकल्पना में नवीन विचारधाराओं व अवधारणाओं की सरणियां उत्सरित होने लगी।

भूमण्डलीकरण -शाब्दिक अर्थ- भूमण्डलीकरण, वैश्वीकरण, विश्वयान, संसारीकरण, जगतीकरण आदि शब्द परस्पर पर्याय रूप में प्रचलित हैं। हिन्दी में भूमण्डलीकरण शब्द पाश्चात्य जगत् से आयतित है। आंग्ल-भाषा के शब्द "Globalization' के हिन्दी रूपान्तरण के रूप में 'भूमण्डलीकरण' शब्द का आविर्भाव हुआ।[1]

भूमण्डलीकरण - परिभाषाएँ - राजनीति शास्त्री गोपाल गुरु के अनुसार- 'भूमण्डलीकरण ऐसे विचार और व्यवहार का नाम है जो अपनी सार्वभौमिकता के जरिए व्यक्तियों और समुदायों को उनकी पारिवेशिकता का अतिक्रमण करने का आश्वासन देता है।'[2]

पुष्पपाल सिंह के अनुसार - 'भूमण्डलीकरण मूलत: एक आर्थिक नियमन की व्यवस्था के रूप में अस्तित्व में आया किन्तु इसके बाज़ारवादी पक्ष ने इसे सांस्कृतिक रूपान्तरण की प्रक्रिया में डाल दिया। इस अवधारणात्मक रूप में इसके दो पक्ष हैं, आर्थिक तथा सांस्कृतिक पक्ष।'[3]

डॉ0 कौमुदी श्रीवास्तव के अनुसार- 'वैश्वीकरण की आँधी, विविधता, स्थानिक सहभागिता और सहकारिता के परखचे उड़ाती चलती है। भाषाओं, बोलियों, संस्कृतियों, व्यवस्थाओं, कार्यपद्धतियों और जीवन धाराओं पर वैश्वीकरण की महाशक्तियों द्वारा थोपी जा रही एकरूपता अपसंस्कृति एवं हीन ग्रंथि का ग्रहण लग जाता है।'[4]

सच्चिदानंद सिन्हा के अनुसार- 'भूमण्डलीकरण दरअसल पूँजीवाद की तात्कालिक एकछत्रता का उद्घोष है।'[5]

प्रभा खेतान के अनुसार- 'भूमण्डलीकरण तो वह बिजली है, जिससे आपका घर रोशन भी हो सकता है और आपके घर में आग भी लग सकती है।'[6] प्रभा खेतान भूमण्डलीकरण को जोड़ने और बिखराव की क्रिया मानती हुई कहती है- 'जातीयता और राष्ट्रीयता पर भूमण्डलीकरण के प्रभाव से कोई इंकार नहीं कर सकता। सामान्यत: भूमण्डलीकरण जोड़ने और तोड़ने वाली बिखराव भरी प्रक्रिया या परिघटना है।'[7]

'विश्व की प्राचीनतम सभ्यता एवं संस्कृति में से एक भारतीय संस्कृति परिवर्तन के कई थपेड़ों से जूझती एवं निखरती रही है। समयांतर में विभिन्न कारकों एवं कारणों ने इसके समक्ष नई चुनौतियाँ पैदा की हैं, ऐसे ही इक्कीसवीं सदी में भूमण्डलीकरण ने भारत को एक नए सांस्कृतिक दोराहे पर खड़ा कर दिया है।'[8] इक्कीसवीं सदी के हिन्दी उपन्यास सांस्कृतिक परिवेश में भूमण्डलीय संस्कृति की इन्द्रधनुषीय छटा को प्रकट करने में सक्षम हैं। विश्व के एकीकरण में विभिन्न संस्कृतियों के सांझे मंच पर आने से सांस्कृतिक मेल-जोल बढ़ा। सांस्कृतिक आदान-प्रदान की प्रक्रिया में पश्चिमी संस्कृति का प्रभुत्व उभरा, क्योंकि पश्चिम द्वारा नियन्त्रित भूमण्डलीकरण ने पूरे विश्व की संस्कृति को उद्धेलित किया।

उदारीकरण के चलते सीमाओं का अतिक्रमण करके विकसित राष्ट्रों ने अन्य राष्ट्रों में अपनी व्यावसायिक गतिविधियाँ को बढ़ावा दिया। बाज़ार की शक्तियों ने किसी भी राष्ट्र की आर्थिक-व्यवस्था को प्रभावित करने के साथ-साथ वहाँ की संस्कृति पर अपनी छाप छोड़ी। स्थानीय संस्कृति पश्चिमीकरण के रंग में रंगी जाने लगी। 'ज़ीरो रोड' उपन्यास में दुबई के सांस्कृतिक परिवेश का चित्रण इस यथास्थिति का परिचायक है-

'पश्चिमी देशों ने किस बुरी तरह छोटे कमज़ोर राष्ट्रों का दोहन किया था। इसमें वे भी देश शामिल थे, जिनके पास सभ्यता एवं संस्कृति का सुनहरा इतिहास है, जिन्होंने वास्तव में आज के आधुनिक संसार की नींव डाली थी। आज की तकनीक ने, खासकर खतरनाक हथियारों ने साहित्य व कला को नकार कर यह साबित करना शुरू कर दिया कि संवेदना का कोई महत्तव दिमाग़ी दुनिया में नहीं रह गया है।'[9]

विकास प्रक्रिया में सीमाओं का अतिक्रमण होने से संस्कृति भी वैश्विक यात्रा करती है। दुबई जो कभी रेगिस्तान था, आज वहाँ ईमारतें, उद्योग, रेस्टोरेंट, बाज़ार, और व्यापारिक गतिविधियों के चलते पब्लिक पार्क, स्वीमिंग पूल पनप चुके हैं। व्यापारिक गतिविधियों ने दुबई का नक्शा ही बदल दिया। वर्तमान दुबई में नगरीकरण का विकास हुआ और रेगिस्तान के साथ-साथ वहाँ की स्थानीय बद्दू संस्कृति आयातित संस्कृति की भेंट चढ़ गयी।[10]

संस्कृति के इस संक्रमणकालीन दौर में पुरानी पीढ़ी नव-संस्कृति को ग्रहण करने के पक्ष में नहीं हैं, वही नयी पीढ़ी के लिए नव-संस्कृति आधुनिकता का प्रतीक है। भोगवादी संस्कृति ने नयी पीढ़ी को आकर्षित किया। ए.बी.सी.डी. उपन्यास में चित्रित हरदयाल व शील पुराने संस्कारों का प्रतिनिधित्व करते हुए पश्चिमी संस्कृति को अपसंस्कृति कहकर मुँह मोड़ते हैं, परन्तु नयी पीढ़ी की शीनी के लिए भोगवादी संस्कृति सहज रूप में ग्राह्य है। लड़के और लड़की के प्रेम-मिलन यानी 'डेट' की संस्कृति आधुनिक नवयुवाओं की पहली पंसद है। शीनी अपने मित्र निक के साथ 'डेट' पर

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) भाग सिंह खालसा कॉलेज फॉर विमिन, काला-टिब्बा, अबोहर (पंजाब) भारत
शोधार्थी (हिन्दी) पंजाब विश्वविद्यालय, चण्डीगढ़ (पंजाब) भारत

जाकर भारतीय संस्कृति का प्रतिनिधित्व करने वाले अपने माता-पिता हरदयाल व शील के विचारों को झटका देती है-

'पहला झटका उसने तब दिया था जब वह विधिवत घोषित रूप से 'डेट' पर गयी थी। नेहा उन दिनों स्कूल में पढ़ती थी।'[11]
शील अपने बच्चों में पनप रही पश्चिमी संस्कृति के लिए कनाडा के परिवेश और लड़कियों की शिक्षा को दोषी ठहराती है। रवीन्द्र कालिया ने संस्कृतियों के संक्रमण को शीनी व शील के माध्यम से प्रस्तुत किया है। शील मर्यादावादी और नैतिकतावादी भारतीय संस्कृति की उपज है, तो शीनी उच्छृंखल व भोगवादी पश्चिमी संस्कृति की। पश्चिमी संस्कृति के खुले संबंधों का यथार्थ इस प्रकार व्यक्त हुआ है-

'यहाँ शिष्टाचारवश भी चुम्बन लिया जाता है और एक दूसरे को छूकर बात करना एक सामान्य सी बात है, आत्मीयता प्रदर्शित करने का सबसे सरल उपाय। इस मामले में तो हिन्दुस्तानी बहुत अर्थ खोजता है। इस दृष्टि से तो वह फ्रायड का बाप है।'[12]

पश्चिमी जगत् की चकाचौंध में भटकाव की स्थिति है और वहाँ यौन-शुचिता का कोई स्थान नहीं है, जबकि भारतीय परिवेश में यौन-शुचिता को मूल्यवान माना जाता है-

'हमारी संस्कृति में तो यह हीरे जवाहरात से भी ज्यादा मूल्यवान है। हीरा खो जाए तो दुबारा खरीदा जा सकता है, मगर इसे नहीं। यह स्त्री का ऐसा आभूषण है जो खो जाने पर दुबारा हासिल नहीं किया जा सकता।'[13]
पश्चिमी फैशन के वर्चस्व के सामने भारतीय पहनावा मजाक का विषय बनता जा रहा है। ग्रामीण व स्थानीय पहनावे को आज तिरस्कार की दृष्टि से देखा जाता है। भारतीय स्त्रियों के परंपरागत पहनावा विदेशी संस्कृति के सामने घृणा की वस्तु बन चुका है। रवीन्द्र कालिया का कथन इस यथास्थिति का प्रमाण है-

'दो किलो का जूड़ा बना कर ये औरतें सोचती हैं, वे बहुत आधुनिक हैं। दरअसल जब ये बीसियों साल पहले भारत से यहाँ आयी थीं, उन दिनों हेमा मालिनी, आशा पारिख और नंदा जैसी अभिनेत्रियाँ ऐसे जूड़े बनाया करती थीं। ये आज भी उसी युग में जी रही हैं। इन बेचारियों को पता ही नहीं कि भारत की आधुनिकाएँ अब जूड़ा नहीं बनाती, कंधों पर बाल डाले मस्ती से घूमती हैं। ये औरतें अपने तथाकथित स्तनों को बार बार दुपट्टे से ढाँपती रहती है।'[14]

आभूषणों की परंपरागत शैली अब आधुनिकता की चपेट में आकर अपनी अर्थवत्त खो चुकी है। आधुनिक फैशन की दुनिया में गहनों का महत्त्व कम होता जा रहा है-

'ये पंजाबी औरतें कब समझेंगी कि इनके गहनों का फैशन पुराना पड़ चुका है। अब भारत में भी कोई औरत फानूस की तरह झूलने वाले बुंदे नहीं पहनती।'[15]

हर व्यक्ति जवान और सुन्दर दिखना चाहता है। व्यक्ति की इस मानसिकता को परख कर सौन्दर्य बढ़ाने का दावा करने वाले अनेक उत्पाद बाज़ारू संस्कृति ने पेश किए। सौन्दर्य प्रतियोगिता की प्रत्येक वस्तु (प्रोडॅक्ट) एक फोन कॉल के जरिए घर मँगवाए जाने की सुलभता आधुनिक समय की देन है-

'इस पोस्ट-ग्लोबल दुनिया में जवान दिखना, सुन्दर दिखना और वजन घटाना अरबों-डॉलरों का कारोबार है।...घर बैठे मालिश करने वाला तकिया आ जाए, सेंक करने वाली बिजली की थैली आ जाए, बाल उगानेवाला लोशन आ जाए, गोरा करने की क्रीम आ जाए, तो और क्या चाहिए?'[16]

ब्रांडिड संस्कृति ने पूरे विश्व की तस्वीर बदल डाली। विभिन्न कम्पनियों ने अपने-अपने ब्रांड बाज़ार में उतार का व्यक्ति के सामने विकल्प पैदा किए। बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ विश्व के हर कोने में अपने ब्रांड की बिक्री हेतु बाज़ार की खोज में यात्राएँ करती है। एडीडास, नाइक, मोण्टी कारलो, प्यूमा, ओनली, न्युमेरो, पेपे इत्यादि अनेक ब्रांड नाम आज के युवाओं की प्राथमिकता है। विदेशी ब्रांडों के सामने क्षेत्रीय लघु उद्योग (खादी भंडार) टिक नहीं पाए। आज सुदूर क्षेत्र के छोटे से गाँव में विदेशी वस्तुओं की भरमार है।

व्यक्ति के व्यक्तित्व को उसके गुणों से नहीं, वरन् पहनावे से सम्बद्ध करके आंका जाने लगा। व्यक्तित्व को उच्च स्तरीय बनाने के लिए कीमती ब्रांडों का अपना दावा है। 'सादा जीवन उच्च विचार' अब बीते ज़माने की बात हो गयी है-

'मुझे यह बात किसी भी तरह नहीं जँचती थी कि अगर मैंने वुडलैण्ड के जूते नहीं पहने, पीटर इंग्लैण्ड की कमीज़ नहीं पहनी, जोएडिक की टाई नहीं लगायी, ली की पतलून नहीं पहनी, एंकर के कफलिंक नहीं लगाए, ओल्डस्पाइस का आफ्टरशेव नहीं थोपा और टाइटन की घड़ी नहीं बाँधी तो मैं कुछ कम आदमी हूँ या हो जाऊँगा। मुझे नहीं लगता कि इसकी कोई तुक या सीमा है। कलाई घड़ी सौ रुपये से लेकर एक लाख रुपये तक की मिलती है। तथाकथित स्तरीय सामान अक्सर से ज्यादा घटिया साबित होता है। ब्राण्ड बनानेवाले उनका विज्ञापन भी हमीं से करवाते हैं। मैं समझ नहीं पाता था कि क्यों मुफ्त में अपने चश्मे पर रेबेन, टीशर्ट पर नाइके या एडिडास, बारामूडास पर रेंगलर या मार्क एण्ड स्पेन्सर का नाम या बिल्ला चिपकाए घूमूँ ? इन्सान की कदर उसके गुणों के कारण होती है या उन वस्तुओं के कारण जिन्हें वह इस्तेमाल करता है ? कल यदि मैं महँगे से महँगे और अनौचित्यपूर्ण महँगे सूट आदि पहनकर दफ़्तर जाऊँ और दिन भर काम न करूँ, या काम में गलतियाँ कर करके दूसरों को परेशानी में डालता जाऊँ तो क्या मुझे काम पर रखेंगे ? सिर्फ इसलिए कि मैंने बहुत अच्छे कपड़े पहन रखे हैं ?'[17]

खान-पान की परिवर्तित संस्कृति में 'मैक्डोनाल्डस' की एकल संस्कृति का वर्चस्व कायम हो चुका है। हर शहर में, हर समय में मैक्डोनाल्डस की गुणवत्ता समान रहने के दावे विज्ञापन के जरिए पूरे विश्व में फैल चुके है। छोटे-छोटे बच्चे भी 'मैक-डी' के खान-पान के प्रति उत्सुक है। चित्रा मुद्गल का कथन इसकी पुष्टि करता है-

'जूते पंसद करने दोनों अप्पू के साथ मार्केट चलेंगी। खरीददारी के बाद अप्पू उन्हें मैकडोनल्ड्स में खिलाएंगे भी। चिकन बर्गर, फ्रेंच फ्राइ के साथ। बर्गर के संग कोई उपहार भी मुफ्त मिलेगा। उन्हें टी.वी. पर बताया गया है। वहां से वह आइसक्रीम खाने 'निरुलाज' भी जाएंगी।'[18]

खान-पान की पश्चिमी शैली में दूध, लस्सी की जगह कोल्ड ड्रिंक्स, रोटी की जगह पिज्जा के प्रचलन ने पूरे विश्व को प्रभावित किया। हर व्यक्ति 'फास्ट फूड' की ओर लालायित है।

भूमण्डलीकरण के अत्याधुनिक परिवेश में सांस्कृतिक संक्रमण के साथ-साथ परंपराओं का जमकर दोहन हुआ। लाभ और लोभ की आधुनिक दौड़ में भागता हुआ व्यक्ति परंपराओं से कट चुका है। लोक जीवन की सहज और स्वाभाविक प्रवृत्ति 'आधुनिकता' की धारा में बह चली।

महानगरों तक ही नहीं, बल्कि ग्रामीण अंचल में भी पाश्चात्य संस्कृति ने अपनी उपस्थिति दर्ज करवा दी है। गाँव के रस्म-रिवाज, पर्व-त्यौहार, धार्मिक-कृत्य, रीति-परम्परा, आचार-व्यवहार, रहन-सहन आदि में एक

नया परिवर्तन परिलक्षित होने लगा। 'रेहन पर रग्घू' में पंचैया (नागपंचमी) का पर्व बड़े उत्साह से मनाया जाता था। नाच-गाना, खान-पान का अपना एक विशेष सौन्दर्य था। इस अवसर पर कुश्ती के दाँव-पेंच चलते थे, परन्तु अब हालात बदल चुके है। पंचैया मात्र एक रस्म थी -

'दूसरे गाँवों में पंचैया मात्र धार्मिक त्योहार रह गई थी लेकिन पहाड़पुर में अभी चल रही थी-रस्म के रूप में ही सही !'[19]

कम्पनी के पैकेज पाकर महानगर में काम कर करने वाला नरेन्द्र अपनी माँ की मृत्यु पर बाल उतरवाने से स्पष्ट मना कर देता है क्योंकि आधुनिक समय में इस प्रथा का कोई महत्तव नहीं है। साथ ही उसे चौथे दिन कम्पनी में हाजिर होकर कम्पनी विजिट करने वालों का सामना भी करना है। बाल उतरवा कर वह स्वयं को रूढ़िवादी नहीं कहलाना चाहता-

'अम्मा के लिए अतिशय प्रेम बघारने वाले बेटे नरेंद्र ने उनके काम में बाल उतारने से मना कर दिया था। बालों में क्या रखा है। आडंबरों में उसे विश्वास नहीं। कंपनी विजिट करने बाहर से लोग आ रहे। चौथा करके दिल्ली चला जाएगा। तेरहवीं की सुबह लौट आएगा।'[20]

भूमण्डलीकरण की अर्थ-नीतियों के साथ ही अंग्रेजी भी विश्व-भाषा बन गयी। भारत में अंग्रेजी शासनकाल के दौरान अंग्रेजी भाषा उतनी समृद्ध नहीं थी, जितनी भारतवर्ष में आज प्रभावी है। वर्तमान समय में अंग्रेजी का भाषिक-ज्ञान व्यक्ति के व्यक्तित्व का परिचायक है। हिन्दी पढ़ने-बोलने वाले को अंग्रेजी के सामने कमतर आंका जाता है। फलस्वरूप भारतीय जनमानस प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से अंग्रेजीपन से प्रभावित है। अंग्रेजी की इस सत्ता को अभिव्यक्त करते हुए अजय नावरिया लिखते है-

'अंग्रेजी!...आज अंग्रेजी का वर्चस्व वैसा ही है, जैसा डेढ़ हजार साल पहले, ब्राह्मणों की संस्कृत का था।...यह वक्त आज भी अज्ञात कारणों से स्वर्णयुग कहा जाता है...'[21]

इस प्रकार कहा जा सकता है कि वैश्वीकरण की प्रक्रिया ने सांस्कृतिक परिवेश को गहरे रूप में प्रभावित किया है। पश्चिमी संस्कृति ने पूरे विश्व पर अपनी छाप छोड़ी, वहीं पश्चिमी संस्कृति भी अन्य संस्कृतियों से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Oxford English-English-Hindi Dictionary
2. गुरु, गोपाल, भारत का भूमण्डलीकरण, अभय कुमार दुबे,(सं0), पृष्ठ-255
3. सिंह, पुष्पपाल, भूमण्डलीकरण और हिन्दी उपन्यास, पृष्ठ-17
4. सिंह नीलिमा, भूमण्डलीकरण और भारत में मानवाधिकार, पृष्ठ-22
5. सिन्हा सच्चिदानंद, भूमण्डलीकरण की चुनौतियां, भूमिका से उद्धृत।
6. प्रभा खेतान, बाजार के बीच : बाजार के खिलाफ (भूमण्डलीकरण और स्त्री के प्रश्न), पृष्ठ-24
7. खेतान, प्रभा, भूमण्डलीकरण : ब्रांड संस्कृति और राष्ट्र, पृष्ठ-31
8. सिंह, अमित कुमार, भूमण्डलीकरण और भारत : परिदृश्य और विकल्प, पृष्ठ-81
9. शर्मा, नासिरा, ज़ीरो रोड, पृष्ठ- 135
10. शर्मा, नासिरा, ज़ीरो रोड, पृष्ठ- 59
11. कालिया, रवीन्द्र, ए.बी.सी.डी., पृष्ठ- 7
12. कालिया, रवीन्द्र, ए.बी.सी.डी., पृष्ठ- 32
13. कालिया, रवीन्द्र, ए.बी.सी.डी., पृष्ठ- 14
14. कालिया, रवीन्द्र, ए.बी.सी.डी., पृष्ठ- 56
15. कालिया, रवीन्द्र, ए.बी.सी.डी., पृष्ठ- 56
16. सरावगी, अलका, एक ब्रेक के बाद, पृष्ठ- 120
17. स्वयं प्रकाश, ईंधन, पृष्ठ- 46
18. मुद्गल, चित्रा, गिलिगडु, पृष्ठ- 32
19. सिंह, काशीनाथ, रेहन पर रग्घू, पृष्ठ-74
20. मुद्गल, चित्रा, गिलिगडु, पृष्ठ- 52
21. नावरिया, अजय, उधर के लोग, पृष्ठ- 9

****

विनय - पत्रिका में भक्ति -दर्शन

निर्मला निठारवाल *

प्रस्तावना - 'विनय-पत्रिका' में भक्ति का सांगोपांग वर्णन किया गया है। यह सभी भक्ति-ग्रन्थों में एक परमोत्कृष्ट ग्रन्थ है। इसमें तुलसीदास ने अपने हृदय को विनय से भिगोकर प्रस्तुत किया है। तुलसीदास ने विनय पत्रिका के माध्यम से अपने आराध्य श्रीराम के चरणों में एक अर्जी पेश की है, जिसमें भक्ति के अनेक अंगों एवं उपागों सहित अपनी व्यथा सुनाकर कलियुग से अर्थात् सांसारिक कष्टों से बाहर निकालने तथा भगवान् श्रीराम के चरणों में शरण पाने की बार-बार प्रार्थना की गई है। भक्ति में निमग्न व्यक्ति को तो यह ग्रन्थ जीवन का सार ही लगता है। तुलसीदास ने विनय-पत्रिका के माध्यम से व्यक्ति को इस भवसागर से पार होने का जो रास्ता दिखाया है, वह रास्ता है-भक्ति। विनय-पत्रिका की आधार भूमि ही भक्ति है। 'विनय-पत्रिका भक्तिकांड का एक परमोत्कृष्ट ग्रन्थ है, अनुराग महोदधि का एक दिव्य रत्न है। भक्तों के सरस हृदय का तो यह ग्रन्थ जीवन सर्वस्व है। भक्तिपथ की सांगोपांग पद्धति इसमें दिखाई गई है। इस प्रेमरत्न-मंजूषा के भीतर सुरसिक जौहरी कैसे-कैसे विलक्षण रत्न पा सकता है यह कहने की बात नहीं, अनुभव करने की है। जब समग्र ग्रन्थ ही भक्ति-रस से परिप्लुत है तो भक्ति-सिद्धान्त ही सर्वत्र प्रतिपन्न मिलेगा लेकिन किसी के मत से तुलसीदास विशिष्टाद्वैतवादी और किसी की सम्मति से अद्वैतवादी सिद्ध किए गए हैं। हमारी दृष्टि में तुलसीदास का भक्ति-दर्शन रामानुजाचार्य के विशिष्टाद्वैतवाद से मेल खाता है।'[1] विशिष्टाद्वैतवाद में ब्रह्म तथा जीव में अंतर होता है। ब्रह्म विशिष्ट होता है तथा जीव तुच्छ होता है। जीव ईश्वर की शरण में जाकर ही ईश्वर (ब्रह्म) का सानिध्य प्राप्त कर सकता है। जीव भक्ति के माध्यम से ही इस माया रूपी आवरण को काट सकता है तथा ईश्वरमय हो सकता है। यह संसार जो सत्य प्रतीत होता है, वह माया के ही कारण प्रतीत होता है। जब मनुष्य ईश्वर की शरण में जाता है तो यह मायाजाल कट जाता है तथा जीव को जो सत्य लग रहा था वह मिथ्या जान पड़ता है। इस प्रकार हरिभक्ति से ही भवबन्धनों से मुक्त हुआ जा सकता है। तुलसीदास भी राम को विशिष्ट तथा जीव को तुच्छ समझते हैं तथा राम भक्ति से ही जीव ईश्वर का सामिप्य प्राप्त कर सकता है। रामानुजाचार्य ने शंकरवाद का खण्डन कर भक्तिप्रधान श्रीसंप्रदाय की स्थापना की थी । इसी संप्रदाय में आगे चल कर रामानन्द जी हुए। जिन्होंने भक्ति को जाति-पाँति के बन्धन से निकालकर जन-जन तक पहुँचाया। 'आचारी वैष्णवों में कुछ संकीर्णता देखकर श्री रामानन्द स्वामी ने एक पृथक ही अपना संप्रदाय चला दिया। इन्होंने श्रीरामनाम और राम-भक्ति को ही प्राधान्य दिया। जाति-पाँति का विचार एकदम तोड़ दिया। जुलाहे, चमार और कसाई भी इनके चेले हो गए। भक्ति-भागीरथी सुविस्तीर्ण-क्षेत्र में होकर बहने लगीं। नभो मण्डल श्रीरामनाम की मधुर-ध्वनि से गूँज उठा।'[2] तुलसीदास भी इसी श्रीसंप्रदाय के अनन्य वैष्णव थे। आचार्य रामानुज या विशिष्टाद्वैतवाद या श्रीसंप्रदाय के अनुसार- जीव व ब्रह्म एक नहीं होते। ब्रह्म (ईश्वर, सगुण) विशिष्ट होता है तथा चित् (जीव) व अचित् (जगत्) ब्रह्म का अंश मात्र है। जीव व ब्रह्म दोनों ही सत्य है किन्तु दोनों समान रूप से स्वतंत्र नहीं हैं। जीव ब्रह्म से भिन्न उसका अंश मात्र है। ईश्वर, जीव और जगत् तीनों ही सत्य हैं तथा भक्ति द्वारा जीव को मोक्ष प्राप्त होता है। जीव को ईश्वर का सादृश्य प्राप्त हो जाता है लेकिन 'जीव व परमात्मा का ऐक्य सम्पन्न नहीं होता।'[3] जीव जब तक भगवान् की शरण में नहीं जाता, तब तक उसका परम कल्याण हो नहीं सकता। इस प्रकार तुलसीदास का भी यही मानना है कि ईश्वर विशिष्ट है तथा जीव तुच्छ है लेकिन जीव ईश्वर की शरण में आकर धन्य हो जाता है। भगवान् का सादृश्य प्राप्त हो जाता है। इसी बात को तुलसीदास ने अग्र लिखित पद्य से इस प्रकार प्रस्तुत किया है-

'तू दयालु, दीन हौं, तू दानी, हौं भिखारी।
हौं प्रसिद्ध पातकी, तू पाप- पुंज-हारी।।
नाथ तू अनाथ को, अनाथ कौन मोसो।
मो समान आरत नहिं, आरतिहर तोसो।।
ब्रह्म तू, हौं जीव, तू है ठाकुर, हौं चेरो।
तात-मात, गुरु-सखा, तू सब बिधि हितु मेरो।।
तोहिं मोहिं नाते अनेक, मानियै जो भावै।
ज्यों त्यों तुलसी कृपालु! चरन-सरन पावै।।'[4]

अर्थात् हे नाथ! तू दीनों पर दया करने वाला है, तो मैं दीन हूँ। तू अतुल दानी है, तो मैं भिखमंगा हूँ। मैं प्रसिद्ध पापी हूँ, तो तू पाप-पुंजों का नाश करने वाला है। तू अनाथों का नाथ है, तो मुझ-जैसा अनाथ भी और कौन है? मेरे समान कोई दुःखी नहीं है और तेरे समान कोई दुःखों को हरने वाला नहीं है। तू ब्रह्म है, मै जीव हूँ। तू स्वामी है, मैं सेवक हूँ। अधिक क्या, मेरा तो माता, पिता, गुरु, मित्र और सब प्रकार से हितकारी तू ही है। मेरे-तेरे अनेक नाते हैं; नाता तुझे जो अच्छा लगे, वही मान ले। परन्तु बात यह है कि हे कृपालु! किसी भी तरह यह तुलसीदास तेरे चरणों की शरण पा जावे। इस प्रकार तुलसीदास अपने आराध्य श्रीराम से अपनी दीनता का वर्णन करते हुए कहते हैं कि हे प्रभु मैं दीन हूँ । कुछ भी करने का मेरे में सामर्थ्य नहीं है। मैं भिखारी की तरह हर समय आप से कुछ न कुछ माँगता ही रहता हूँ। मैं तो केवल पापी ही नहीं सभी पापियों में अग्रगण्य हूँ। लेकिन आपकी सामर्थ्य में मुझे पूर्ण विश्वास है। आप दीनों पर दया करने में आगे रहते हैं। आप अतुल दानी हैं, भक्त को बिन माँगे सब कुछ दे देते हैं। आप पाप-पुंजों को पलक-झपकते ही नष्ट कर देते हैं। आप सभी अनाथों के नाथ हैं अर्थात सहारा हैं जिसका इस संसार में कोई सहारा नहीं उसका ईश्वर अपने आप सहारा बन जाते हैं। भगवान् स्वयं सारथी बन कर उसके रथ को हाँकते हैं। आप दुखों

* सहायक प्रवक्ता (हिन्दी) डी.ए.वी. महाविद्यालय, अबोहर (पंजाब) भारत

का हरण करने वाले हैं। तू ब्रह्म है, मैं जीव हूँ। तू स्वामी है, मैं सेवक हूँ। तुलसीदास लिखते हैं कि ईश्वर ब्रह्म है अर्थात् विशिष्ट हैं, मनुष्य जीव है जो माया के अधीन है अर्थात् तुच्छ है। जीव भक्ति के माध्यम से ईश्वर की शरण में आकर ही इस संसार से तर सकता है। इस प्रकार तुलसीदास ने ब्रह्म को विशिष्ट तथा जीव को तुच्छ माना है। वे ब्रह्म तथा जीव को अलग-अलग मानते हैं। उन्होंने रामनाम की महत्ता और सर्वप्रधानता को ही प्रमुख माना है। जीव प्रभु की शरण पाकर ही धन्य हो सकता है। उन्होंने अपने सारे संबन्धों को भगवान् श्रीराम में ही देखा है। वे अपने आप को पापी तथा अनाथ मानते हैं लेकिन भगवान् की सामर्थ्य में पूर्ण विश्वास है तभी तो भगवान् को अपना सब प्रकार से हितकारी समझते हैं। नि:सन्देह उन्होंने कहीं-कहीं अद्धैतवादियों की तरह जगत् को असत्य माना है। उसे मृगजल, रज्जु-सर्प, रजत-सीप आदि कहकर भ्रमरूप बताया है। किन्तु तुलसीदास का प्रयोजन अद्धैतवादियों के प्रयोजन से भिन्न है। जहाँ अद्धैतवादि जगत् को असत्य समझते हैं, वहीं तुलसीदास केवल उसी जगत् को असत्य समझते हैं। जहाँ राम का निवास नहीं है। 'हरिशून्य जगत्' को ही उन्होंने इन सब विशेषणों से विभूषित किया है 'हरिमय जगत्' को नहीं। विषयोपभोग में लिप्त जीव को विरक्त बनाने के लिए संसार के मिथ्यात्व का निर्देश किया गया है, विषयोपरत एवं भगवदनुरक्त महा-भाग को नहीं। जो जीव स्वार्थ को ही संसार समझते है; उनके लिए अवश्य ही गोसांईजी द्वारा 'जगन्नमिथ्या' का सिद्धान्त प्रतिपादित किया गया है, किन्तु जो परार्थ एवं परमार्थ में जगत् की सत्ता स्वीकार करते हैं, उन निष्काम अनासक्त कर्मयोगियों के लिए आपने संसार को यजगत् सचाई-सार' कहकर पुकारा है।'[5] इस प्रकार तुलसीदास ने सिद्धान्तरूप से तो विशिष्टाद्धैतवाद को ही स्वीकार किया है-

'जो तुम त्यागों राम हौं तौ नहिं त्यागो। परिहरि पाँय काहि अनुरागों।।
सुखद सुप्रभु तुम सो जगमाहीं। श्रवन-नयन मन -गोचर नाहीं।।
हौं जड़ जीव, ईस रघुराया। तुम मायापति, हौं बस माया।।
हौ तो कुजाचक, स्वामी सुदाता। हौं कुपूत, तुम हितु पितु-माता।।
जो पै कहुँ कोउ बूझत बातो। तौ तुलसीदास बिनु मोल बिकतो।।'[6]

अर्थात् हे रामजी! यदि आप मुझे त्याग भी देंगें, तो भी मैं आपको नहीं छोडूँगा। क्योंकि आपके चरणों को छोड़कर मैं और किसके साथ प्रेम करूँ? आपके समान सुख देने वाला सुन्दर स्वामी इस संसार में आजतक न कानों से सुना है, न आँखों से देखा है और न मन से अनुमान में ही आता है। हे रघुनाथजी! मैं जड़ जीव हूँ और आप ईश्वर हैं। आप माया के स्वामी हैं (माया आपके वशमें है) और मैं माया के वश होकर रहता हूँ। मैं तो एक कृतघ्न याचक हूँ और आप बड़े उदार स्वामी हैं। मैं आपका कुपूत हूँ और आप हित करने वाले माता-पिता हैं। भाव यह है कि लड़का कुपूत होने पर भी माँ-बाप उसका हित ही चाहते हैं, ऐसे ही आप भी सदा मेरा पालन-पोषण ही किया करते हैं। यदि कहीं कोई भी मेरी बात पूछता, तो यह तुलसीदास बिना ही मोल (उसके हाथ) बिक जाता। (परन्तु आपके सिवा मुझ-सरीखे नीच को कौन रखता है? अत: मैं आपको कभी नहीं छोडूँगा)। इस प्रकार तुलसीदास अपने आपको जड़ जीव तथा भगवान् श्रीराम को विशिष्ट ईश्वर समझते हैं और यह भी जानते हैं कि जीव ईश्वर की शरण में आकर कृतकृत्य हो जाता है अत: भगवान् से कहते हैं कि मैं आपके चरणों को छोड़कर और किसके साथ प्रेम करूँ? आपसा समर्थ इस संसार में कोई है ही नहीं। तुलसीदास अपने आराध्य श्रीराम को माता-पिता मानते हैं तथा अपने आपको उनका कुपूत पुत्र। लेकिन भगवान् पर पूर्ण विश्वास है कि कुपूत होते हुए भी भगवान् मेरा हित ही करेगें। इस प्रकार तुलसीदास लिखते हैं कि अनन्य भाव से प्रभु की शरण में जाना ही जीव के लिए श्रेयस्कर है तथा यही जीवन की सार्थकता है। इस प्रकार तुलसीदास राम-नाम की महिमा का बखान करते हुए थकते नहीं है वे लिखते हैं कि भगवान् राम तो बिना ही कारण दूसरे का हित कर देते हैं। उनके समान दूसरा कौन हो सकता है-

'अकारन को हितू और को है।
बिरद यगरीब-निवाज' कौनको, भौंह जासु जन जोहै।।
छोटो-बड़ो चहत सब स्वारथ, जो बिरंचि बिरचो है।
कोल कुटिल, कपि-भालु पालिबो कौन कृपालुहि सोहै।।
काको नाम अनख आलस कहें अध अवगुननि बिछोहै।
को तुलसीसे कुसेवक संग्रह्यो, सब सब दिन साईं द्रोहै।।'[7]

अर्थात् बिना ही कारण हित करने वाला (श्रीरामचन्द्रजी को छोड़कर) दूसरा कौन है? गरीबों को निहाल कर देने का विरद किसका है कि जिसकी (कृपामयी) भृकुटी की ओर भक्त ताका करते हैं।। छोटे या बड़े जो भी ब्रह्मा के रचे हुए हैं, वे सभी अपना स्वार्थ सिद्ध करना चाहते हैं (बिना स्वार्थ के कोई किसी का हित नहीं करता)। भला भील, बंदर और रीछ आदि का पालन-पोषण करना (श्रीराम जी के सिवा) दूसरे किस कृपालु स्वामी को शोभा देता है? ऐसा किसका नाम है, जिसे आलस्य या क्रोध के साथ भी लेने पर पाप और अवगुण दूर हो जाते है? (श्रीराम-नाम ही ऐसा है)। जिसने मूर्खतावश सदा अपने स्वामी से द्रोह किया है, उस तुलसी-सरीखे नीच सेवक को भी अपना लिया। (इससे अधिक अकारण हित करना और क्या होगा?)। इस प्रकार तुलसीदास को केवल अपने राम-नाम पर ही भारी भरोसा है, जो अकारण ही दूसरे का हित कर देते हैं।

तुलसीदास ने विनय-पत्रिका में जिस सिद्धान्त को अपनाया है वह रामानुजाचार्य के विशष्टाद्धैतवाद से मेल खाता है। विनयपत्रिका में उनका रूप भावात्मक है और वे सिद्धान्त तुलसी के प्रेम, विश्वास तथा भक्ति को पाकर जगमगा उठे हैं। 'भक्ति उनके लिए कोई 'पद्धति या पन्थ' नहीं, उनका जीवन ही है।'[8] भक्ति जब जीवन की साधना बन जाती है तब वह भक्त को पूर्णकाम, तृप्त, अमर और सिद्ध बना देती है। भक्त समस्त जीवन-द्वन्द्वों से मुक्त हो जाता है। वह भगवान् से अहेतुक प्रेम करता है। वह जगत् के सारे रागात्मक सम्बन्धों को अपने इष्टदेव में ही लय कर देता है। सारा संसार उसके लिए प्रभुमय हो जाता है। उसके समस्त सांसारिक सम्बन्ध इष्टदेव के नातेसे ही मानने योग्य रह जाते हैं भगवदीयता का लक्षण है प्रभु के प्रति सहज आसक्ति सर्वतोभावेन समर्पण। तुलसी के लिए समस्त सांसारिक सम्बन्धों का लक्ष्य रामोन्मुखता ही है। इस एकान्त समर्पण में भक्ति की अनन्यता और निष्ठा का रूप दर्शनीय है :-

'यह बिनती रघुबीर गुसाईं।
और आस-बिश्वास-भरोसो,हरो जीव-जड़ताई।।
चहौं न सुगति, सुमति, संपति कछु,रिधि-सिधि बिपुल बड़ाई।
हेतु-रहित अनुराग राम-पद बढ़ै अनुदिन अधिकाई।।
कुटिल करम लै जाहिं मोहि जहँ जहँ अपनी बरिआई।
तहँ तहँ जनि छिन छोह छाँडियो, कमठ-अंडकी नाईं।।
या जगमें जहँ लगि या तनुकी प्रीति प्रतीति सगाई।
ते सब तुलसिदास प्रभु ही सो होहिं सिमिटि इक ठाईं।।'[9]

अर्थात् हे श्रीरघुनाथजी! हे नाथ! मेरी यही विनती है कि इस जीव को दूसरे साधन, देवता या कर्मो पर जो आशा, विश्वास और भरोसा है, उस मूर्खता को आप हर लीजिये। हे राम! मैं शुभगति, सद्बुद्धि, धन-सम्पत्ति, ऋद्धि-सिद्धि और बड़ी भारी बड़ाई आदि कुछ भी नहीं चाहता। बस, मेरा तो

आपके चरण-कमलों में दिनोंदिन अधिक-से-अधिक अनन्य और विशुद्ध प्रेम बढ़ता रहे, यही चाहता हूँ। मुझे अपने बुरे कर्म जबरदस्ती जिस-जिस योनि में ले जाए, उस-उस योनि में ही हे नाथ! जैसे कछुआ अपने अंडों को नहीं छोड़ता, वैसे ही आप पलभर के लिए भी अपनी कृपा न छोड़ना। हे नाथ! इस संसार में जहाँ तक इस शरीर का (स्त्री-पुत्र-परिवारादिसे) प्रेम, विश्वास और सम्बन्ध है, सो सब एक ही स्थान पर सिमटकर केवल आपसे ही हो जाए। इस प्रकार तुलसीदास अपने आराध्य श्री राम से बार-बार यही प्रार्थना करते हैं कि हे प्रभु अगर मैं किसी और को अपना सहारा मानने लगूँ तो आप मेरी उस मूर्खता को दूर कर देना। हे प्रभु मुझे कुछ भी नहीं चाहिए इस संसार से केवल आपके चरणों की भक्ति तथा आपसे अनन्य प्रेम चाहिए। मुझे जिस भी योनि में जगह मिले हे नाथ! आप अपनी कृपा मुझ पर बनाए रखना। मेरा जितना भी प्रेम सांसारिक वस्तुओं में है, वो सब एकत्रित होकर केवल आपसे हो जाए अर्थात् आपसे प्रेम करूँ और किसी से भी नहीं। इस प्रकार तुलसीदास जगत् के सारे रागात्मक सम्बन्धों को अपने इष्टदेव में ही लय कर देना चाहते हैं। तुलसीदास ने विनय-पत्रिका में ब्रह्म को विशिष्ट तथा सर्वव्यापक माना है तथा जीव को तुच्छ तथा निम्न माना है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. वियोगीहरि, 'विनय - पत्रिका', (हरितोषिणी टीका), पृ. 32
2. वही, पृ.22
3. उपाध्याय, बलदेव, 'भारतीय - दर्शन', शारदा मन्दिर 29/17 गणेश दीक्षितलेन, बनारस, चतुर्थ संस्करणः 1949, पृ. 476
4. तुलसीदास, 'विनय - पत्रिका', पृ. 113-114, (पद-79)
5. वियोगीहरि,'विनय - पत्रिका', (हरितोषिणी टीका), पृ. 22
6. तुलसीदास, 'विनय - पत्रिका', पृ. 222 (पद - 177)
7. वही, पृ. 286, (पद - 230)
8. तिवारी, गोपीनाथ (सं.) 'तुलसीदास विभिन्न दृष्टियों का परिप्रेक्ष्य', विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, प्रथम संस्करणः 1973 ई. पृ. 121
9. तुलसीदास, 'विनय - पत्रिका', पृ. 135, (पद - 103)

****

साहित्याकाश में चमकने वाले दो चाँद, बंकिमचंद्र एवं प्रेमचंद

डॉ. कोयल विश्वास*

प्रस्तावना – समाज, साहित्य एवं संस्कृति, सभ्यता नामक माला में गूँथे हुए अलग-अलग पुष्प है। इनके पारस्परिक मेल से ही मानव जीवन में सुगंध फैलता है। इनका संबंध अटल एवं अटूट है।

जब मानव सामूहिक रूप से जीने लगे तब समाज का निर्माण हुआ। मनुष्य सामाजिक प्राणी कहलाने लगे। उस समाज में भाषाओं का प्रचार होने लगा। भाषा ने कथित से लेकर लिखित का रूप धारण किया। भाषा-भाषी समाज ने अपना अस्तित्व कायम रखने के लिए साहित्य का निर्माण किया। साहित्य की आराधना से समाज में संस्कृति का एक दिव्य रूप उभरने लगा।

संस्कृति का सीधा संबंध, उस समाज के लोगों के संस्कारों से जुड़ा है। उनमें से कुछ संस्कार जन्मजात है और कुछ समाज से चयनित। जो संस्कार लोग अपने परिस्थिति के अनुरूप सीखते है, अधिकतर उसमें साहित्य का गहरा प्रभाव पड़ता है। इसलिए संस्कृति के निर्माण में साहित्य का महत्वपूर्ण योगदान है।

जहाँ सत्यम, शिवम, सुंदरम रूपी समाज, साहित्य एवं संस्कृति का मिलन होता है, वहाँ चेतना का सूर्योदय होता है। एक स्वस्थ एवं सभ्य राष्ट्र के ये तीन अंग शक्ति, आधार तथा जीवन स्वरूप है।

जब सभ्यता का प्रकाश विस्तरित होकर संपूर्ण मानवजाति को आलोकित किया, तब हर क्षेत्र में इसके स्पर्श ने जीवन को और अधिक सुखमय बना दिया।

भिन्न-भिन्न प्रदेशों की निजी भाषा में उसकी अपनी सभ्यता का विकास हुआ। धीरे-धीरे पारस्परिक मेल से इन सभ्यताओं का आदान-प्रदान होने लगा।

'साहित्य' के माध्यम से एक भूखण्ड से दूसरे भूखण्ड में, एक प्रदेश से दूसरे प्रदेश में तथा एक समाज से दूसरे समाज में विचार, भाव एवं संस्कृति का आदान प्रदान होने लगा।

इस प्रसंग में रविंद्रनाथ ठाकुर का यह कथन कितना सत्य है- 'साहित्य' शब्द से 'मिलने' के भाव का बोध होता है। वह केवल भाव-भाव का, भाषा-भाषा का, ग्रंथ-ग्रंथ का मिलन नहीं अपितु मानव के साथ मानव का, अतीत के साथ वर्तमान का, दूर के साथ निकट का अत्यंत अंतरंग मिलन भी है, जो कि साहित्य के अतिरिक्त किसी अन्य विधा में मिलना संभव नहीं है।

भारत देश की भिन्न भिन्न जाति, भाषा एवं परंपरा का अपना एक निराला रंग है। इन रंगों की होली आकाश, वायु और धरती में फैलकर एकाकार हो गया है। चाहे वह रंग बँगाल का हो या उत्तर प्रदेश का, पारस्परिक मिलन से ही भारत की संस्कृति को अखण्डता प्राप्त हुआ है।

बंकिमचंद्र एवं **प्रेमचंद** जैसे महान साहित्यकारों ने अपनी रचनाओं के माध्यम से इसी अखण्डता पर प्रकाश डाला है।

जब विदेशी शासन के कारण भारतीय संस्कृति की नींव डगमगाने लगी थी तब राजनैतिक एवं साहित्यिक क्रान्तिकारियों ने इसके पुनर्प्रतिष्ठान की जिम्मेदारी अपने कंधों पर ले लिया था। भारत में दूसरा महाभारत युद्ध हुआ। साहित्यिक क्रान्तिकारियों ने इस युद्ध में, कलम को धनुष बनाकर, शब्दों के बाण से निशाना लगाया। रक्तधारा के स्थान पर अश्रुधारा बहने लगे थे। शवों के स्थान पर मनुष्य का अहंकार धराशायी होने लगा था। इस युद्ध को **'पुनर्जागरण'** का नाम दिया गया। 'पुनर्जागरण' के महायुद्ध में साहित्यिक रणभूमि में **बंकिमचंद्र** एवं **प्रेमचंद** जैसे कई वीर महारथी अवतरित हुए।

बंकिमचंद्र एवं प्रेमचंद के उपन्यासों के तुलनात्मक अध्ययन में राष्ट्रीय पुनर्जागरण पर प्रकाश डालने का प्रयत्न किया गया है। उस युग से लेकर इस युग तक भारत में जितना विकास हुआ है उतना विकार भी हुआ है।

तुलनात्मक कार्य में दो स्वतंत्र लेखों की साम्यताओं एवं वैषम्यताओं को लिया जाता है। अधिकतर साम्याताओं से ही यह अध्ययन प्रारंभ होता है। दो निबंध या लेखों की तुलना करना असाध्य तो नहीं है परंतु सफलता तब मिलती है, जब एक कार्य दूसरे पर प्रभाव डालने में सफल हुआ हो।

बंकिम एवं प्रेमचंद के विचारों में भावात्मक एकरूपता अवश्य है। बंकिम के उपन्यासों ने जिस साहित्यिक संग्राम को छेड़ा, राष्ट्र प्रेम का बीजोरोपन किया तथा निरस साहित्य को रस से प्लावित कर दिया, प्रेमचंद साहित्य ने उस संग्राम को एक शांत अहिंसात्मक दिशा प्रदान किया, उन्मुक्त प्रेम को मर्यादा की श्रृंखला में बद्ध किया तथा साहित्य में यथार्थवाद एवं आदर्शवाद का अद्भुत सुंदर समन्वय किया।

बंकिमचंद्र एवं प्रेमचंद का मानव एवं समाज के प्रति दृष्टिकोण – बंकिम एवं प्रेमचंद दोनों ने भारत के नवयुग तथा उससे जुड़ी समस्याओं को अत्यंत निकटता से देखा। युग संकट एवं युग चिंतन में समन्वय रखने के लिए जिस प्रतिभा की आवश्यकता होती है, वह तथ्य एवं तत्व इन दोनों साहित्यकारों में था।

एक और शक्ति ने इन दो साहित्यकारों की चेतना को एक रूपता प्रदान किया । बंकिम और प्रेमचंद में 'प्रेम-भाव' का समावेश ने इनके साहित्य को एक अखण्ड रूप प्रदान किया। प्रेम नामक वस्तु नवीन नहीं है। इसका बीज मनुष्य के प्रकृति में विद्यमान है। प्रकृति के ध्वंसलीला को मनुष्य ने प्रेम के माध्यम से युगों-युगों तक पराजित किया है।

एक तरफ मृत्यु, दूसरी तरफ जीवन, कहीं संहार है, तो कहीं रक्षण। कहीं हिंसा है, तो कहीं करूणा। इस प्रकार समाज के नित्य संग्राम में प्रेम, दया एवं करूणा की विजय हुई। प्रेम ही सृष्टि का मूलाधार है। बंकिम एवं प्र

* व्याख्याता (हिन्दी) माउण्ट कार्मल महाविद्यालय ऑटोनोमस, बैंगलुरू (कर्नाटक) भारत

प्रेमचंद के अंत:करण में देश के प्रति, समाज के प्रति तथा मानवजाति के प्रति प्रेम ने उनके व्यक्तित्व को आलोकित किया। उनके उपन्यासों में उन मूल्यों का प्रतिपादन हुआ जो व्यक्ति समाज के लिए उत्तम एवं श्रेयकर है।

पहले साहित्य की विशाल भूमि पर बंकिम अवतरित हुए। देश, काल एवं वातावरण को देखकर उन्होंने देश एवं समाज में व्याप्त असमंजस्यता के कारण को पहचानने का प्रयास किया। उन्होंने इतिहास का आँचल थामकर, वर्तमान के लिए शांति एवं भविष्य के लिए समृद्धि का सपना देखा। उनकी प्रतिभा असामान्य एवं निरपेक्ष थी।

बंकिमचंद्र की चिन्ताधारा, उनका ध्यान, ज्ञान एवं कर्म स्वजाति के कल्याण चिन्तन पर ही केन्द्रित था। उनके साहित्य तपस्या में कहीं पर एक पंक्ति का भी उल्लेख नहीं है जहाँ पर उन्होंने आत्मभाव या आत्म चिंतन के प्रचार का प्रयास किया है। स्वजाति, स्वसमाज और स्वदेश इन तीनों को एक तत्व मानकर उन्होंने अपनी साहित्यिक जीवन को अंत तक निभाया। उन्नीसवीं शताब्दी के इस वृहाताकार युग समस्या के आगे बंकिम प्राय: अकेले ही खड़े हो गए थे। प्रत्यक्ष रूप से उन्होंने राष्ट्र, समाज या धर्म के क्षेत्र में किसी भी प्रकार का नेतृत्व नहीं किया। केवल भाव एवं चिंतन के क्षेत्र में उन्होंने सिद्धि प्राप्त किया। उन्होंने अपनी जाति के चित्र को आकर्षित करने की जिम्मेदारी ली और जातीय संस्कृति को एक नवीन मार्ग में परिवर्तित करना चाहा।

इस क्षेत्र में उनकी सफलता कहाँ तक हुई इसका प्रमाण भी है। बंकिम के केवल विचार उनके काल में ही नहीं, बल्कि भविष्य में भी कार्यशील बनें। उन्होंने देशवासियों के मन में नवीन भाव चिंतन, आशा–आकांक्षा की प्रेरणा को जगाया। मनुष्य में पुनर्जागरण की प्रवृत्ति का उजागर इसी प्रेरणा के कारण हुआ। आधुनिक काल के राजनैतिक तथा अर्थनैतिक समस्या की चिंता उन्होंने नहीं किया। उन्होंने समाज के और भी गंभीर विषयों पर अपना चिंतन प्रकट किया। जिस युग को हम आधुनिक युग कहते हैं, उस युग को युगोचित जीवन दर्शन उन्हीं की प्रतिभा ने प्रभावित किया।

उस युग में संपूर्ण भारतवर्ष में उनका एक महत्वपूर्ण स्थान था। तत्कालीन एक मनीषी ने बंकिमचंद्र को – 'The greatest man of the Nineteenth Century' कहकर संबोधित किया था। बंकिम ने सदैव सामाजिक मुक्ति को ही व्यक्ति का यथार्थ मुक्ति माना। अपनी जाति एंव देश के भविष्य के विषय में उनकी चिंता ही वास्तव में उनके साहित्य का विषयवस्तु बना।

बंकिम के द्वारा रेखांकित किए हुए पथ पर उनके अनेक अनुयायी या मतावलंबी चल पड़े थे। प्रेमचंद भी उनमें से एक थे। जहाँ अन्य आधुनिक युग के साहित्यकार सिर्फ पुनर्जागरण के महत्व से प्रभावित थे वहीं प्रेमचंद ने इस युद्ध को आगे बढ़ाने का सफल प्रयास किया।

अब प्रश्न यह उठता है कि क्या कोई साहित्यकार अपने युग के माहौल और समस्याओं से तटस्थ रहकर सृजन कार्य कर सकता है ? भावुकता के प्रवाह में बहने वाला कवि भी युग–जीवन से अप्रत्याशित रह जाय, यह संभव होता हुआ दिखाई नहीं देता। अत: प्रेमचंद के काल में भी उन्हें प्रभावित करने वाली समस्याएँ भी यही थी; साथ ही साथ चल रहा स्वतंत्रता आन्दोलन, जो महात्मा गाँधी के नेतृत्व में पूरे जोर–शोर से भारत में फैला हुआ था।

प्रेमचंद एक स्वतंत्र लेखक के साथ–साथ सामाजिक समस्याओं के चिन्तक भी थे। वस्तुत: तत्कालीन भारतीय समाज, जिसके प्रति कोई भी हिन्दू लेखक या समाज–सुधारक चिन्तित था, वह मुख्य रूप से हिन्दू समाज था। भारत में उत्तर से लेकर दक्षिण तक हिन्दू जाति में अछूतों का बाहुल्य था। इसलिए अछूत हिन्दू या तो ईसाई धर्म लेते या मुसलमान धर्म।

प्रेमचंद के सामाजिक समस्या प्रधान उपन्यासों में मुख्य रूप से वे ही समस्याएँ ली गई हैं, जो आर्य समाज आन्दोलन का प्रधान अंग था। यदि काल परक दृष्टि से न देखकर सार्वजनिक दृष्टि से देखा जाए तो ज्ञात होगा कि ये समस्याएँ आज भी विद्यमान हैं। इसका ऐतिहासिक विश्लेषण यही बताता है कि यह समस्याएँ मुस्लिम आक्रमण तथा उनके शासन का परिणाम था। हिन्दू जन–जीवन की यही दशा अंग्रेजी शासन के आने के बाद भी रही। अंग्रेजों के शासन ने हिन्दू समाज के स्वाभाविक रूप को बदलने का मार्ग प्रशस्त कर दिया था। वह युग, स्वयं में ही एक नये युग के आगमन–रूप में उपस्थित हुआ था। प्रेमचंद उसी युग की देन थी।

जहाँ बंकिमचंद्र ने अधिकतर उच्चवर्गीय परिवार पर प्रकाश डाला, वहीं प्रेमचंद ने मध्यवर्ग तथा उनकी समस्याओं पर अधिक बल दिया। प्रेमचंद ने मध्य वर्ग की धार्मिक आडम्बर प्रियता और रूढ़िवादिता के विषैले परिणामों पर भी अपनी कलम चलाई।

वास्तव में प्रेमचंद जी क्या थे, इस बात का अनुमान लगाने के लिए उन्हीं के कहे हुए शब्द कुछ इस प्रकार हैं–

'मुझे अभी तक यह मालूम नहीं हुआ कि कौन–सी तरजे–तहरीर (रचना–शैली) अख्तियार करूँ ? कभी तो बंकिम की नकल करता हूँ, कभी आजाद के पीछे चलता हूँ, तब से कुछ इसी रंग की तरफ तबियत मचली (हुई) है। यह कमजोरी है और क्या ?'[1]

इससे स्पष्ट है कि प्रेमचंद बराबर प्रयोग करते रहे, परन्तु उन्होंने चाहे कितने प्रयोग किए हों, अपने पात्रों को उन्होंने भारतीय संस्कृति और परम्पराओं की मर्यादाओं के आदर्शवाद की ओर ही उन्मुख रखा। वह किसी वाद में बँधे नहीं थे, अपितु जिस क्षेत्र में भी कार्यरत थे, उसमें फैल जाने का उन्होंने प्रयास किया।

बंकिम और प्रेमचंद में कहीं–कहीं पर कई चीजे समान लगती है। वे दोनों किसी न किसी रुप में भारतीय सामाजिक जीवन की हर समस्या को छूने की कोशिश करते हुए नज़र आते है। दोनों अपनी–अपनी काल्पनिक संसार में उड़ान भरने में सिद्धहस्त थे। अंतत: दोनों राजनीति से जुड़े नहीं थे परन्तु सचेत अवश्य थे।

बंकिमचंद्र एवं प्रेमचंद कालीन परिस्थितियाँ आज भी मौजूद है। अंतर केवल यह है कि उस समय द्वंद स्वदेशी एवं विदेशी के बीच में था , और अब द्वंद हृदय एवं मस्तिष्क के बीच में है।

बंकिमचंद्र का युग(1838–1894) तथा प्रेमचंद का युग (1880–1936) था। प्रेमचंद बाल्यावस्था से लेकर किशोरावस्था तक आते आते बंकिम रूपी चंद्र अस्त हो चुका था। भारतभूमि में 'वन्देमातरम' की गूँज का प्रभाव प्रेमचंद पर अवश्य पड़ा होगा। प्रेमचंद ने भी राष्ट्र को संवेदनात्मक दृष्टि में देखना प्रारंभ किया और बंकिमचंद्र के युग में जो असंभव था प्रेमचंद ने अपने युग में उस दुस्साध्य को कर दिखाया।

साहित्याकाश में चमकने वाले दो चाँद, बंकिमचंद्र एवं प्रेमचंद की देन भारतीय इतिहास में चिरस्मरणीय बनी रहेगी। भारत चिर गौरवमयी धरती बनी रहेगी जिनकी कोख से इन महान पुत्र रत्नों ने जन्म लिया 'साहित्य' जगत की इन विभूतियों को कोटी कोटी प्रणाम।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. मुंशी दयानारायण निगम, प्रेमचंद: जीवन और कृतित्व – पृ.सं. 3

पं. दीनदयाल उपाध्याय का व्यक्तित्व एवं उनके धार्मिक विचारों की प्रासंगिकता

डॉ. भारती शर्मा *

प्रस्तावना – यह पूर्णरूपेण सत्य है कि कुछ व्यक्ति जन्म से महान् होते है, तो कुछ अपने कर्मो के द्वारा महान् बनते है। हमारे भारत वर्ष में अनेक महापुरूष हुए जिनकी कोई पृष्ठभूमि न होते हुए भी वे अपने विचारों एवं कर्मो से महाकवि, संत, समाज सुधारक एवं राजनेता बने। कबीर, तुलसी, स्वामी विवेकानन्द, स्वामी दयानन्द सरस्वती, महात्मा गाँधी, ईश्वर चन्द्र विद्यासागर,ऐसे अनेक उदाहरण हमारे सामने है, जिनको महान् बनाने के लिए कोई पारिवारिक, राजनैतिक या आर्थिक पृष्ठभूमि न होने के बाद भी वे महान् बने। इसी क्रम में यदि हम पं. दीनदयाल जी उपाध्याय के जीवन का आकलन करे तो इस निष्कर्ष पर पहुँचते है कि वे जन्म से महान् तथा कर्म से, राजर्षि थे। राष्ट्र तथा समाज सेवा हेतु अपना सम्पूर्ण जीवन समर्पित करने वाले राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के समर्पित सेवक पं. दीनदयाल उपाध्याय ने राष्ट्रीय आवश्यकता के अनुकूल डॉ. श्यामा प्रसाद मुखर्जी के नेतृत्व मे भारतीय जनसंघ की स्थापना के साथ राजनीति में प्रवेश किया। उनके जीवन का मूल उदेश्य व्यक्ति के निर्माण के साथ समाज तथा राष्ट्र में व्याप्त बुराईयों एवं रूढियों से संघर्ष कर उन्हें समाप्त करना तथा नयी दिशा प्रदान करना रहा है। इस कार्य में वे सफल भी रहे है।

पं. दीनदयाल उपाध्याय जी का जन्म 25 सितम्बर 1916 को उत्तारप्रदेश के मथुरा जिसे में नाग्ला चन्द्रभान ग्राम में एक सामान्य परिवार में प्रसिद्ध ज्योतिषी पं. हरिराय उपाध्याय के वंश में हुआ था। बचपन में उन्हें दीना कहकर पुकारते थे। उनके पिता पं. भगवती प्रसाद रेल्वे के कर्मचारी थे। दीना की जन्म पत्रिका देखकर ज्योतिषियों में कहा था कि –'लड़का विद्वान होगा। निस्वार्थ कार्यकर्त्ता बनेगा। दीन दुखियों से प्यार करेगा। जन नायक बनेगा।' विद्यार्थी जीवन से ही वे कुशाग्र बुद्धि के ऐसे मेधावी छात्र थे, जिन्होंने राजस्थान के सीकर कल्याण हाईस्कूल से अजमेर बोर्ड की मैट्रिक परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की तथा प्रथम स्थान पाकर स्वर्ण पदक प्राप्त किया। इसी क्रम में पिलानी राजस्थान से इन्टर एवं सनातन धर्म कॉलेज कानपुर से बी0 ए0 की परीक्षा प्रथम श्रेणी में प्राप्त की साथ ही प्रयागराज से बी0 टी0 की परीक्षा पास की। विलक्षण प्रतिभा, अभूतपूर्व स्मरण शक्ति एवं लेखन शैली के कारण उन्हें विद्यार्थी जीवन में सदैव छात्रवृत्ति मिलती रही।

साधारण शरीर, गोल चेहरा, विशाल आँखे, लंबी नाक, बडे-बड़े कान, विशाल भाल, भरी आवाज, सिर पर साधारण से लम्बे बाल। मोटे कपड़े का हल्का कुर्ता वैसी ही सफेद धोती, कभी-कभी उस पर शाल इस तरह का साधारण पहनावा, हमेशा कुछ-न-कुछ विचारों में चिन्तन में मग्न मुख भाव। सौम्य,आत्मीतापूर्ण रूप, भाषाणों मे अपने बारे में जानकारी कम से कम देना। भीड़ या मंच पर सामने प्रदर्शित न करने का स्वभाव। वक्ता, सेवक, पत्रकार,राजनीतिज्ञ साथ में चिन्तक। जीवनभर देश जनता और उसकी समस्या इन्हीं चिन्ता में मग्न। आजन्म ब्रहाचारी। स्नेह शील, विनोदप्रिय बच्चों से बूढो तक सभी के मित्र। मधुर वाणी, घमण्ड, बडप्पन प्रतिष्ठा को अपने पास फटकने न देने वाले पं. दीनदयाल उपाध्याय का ऐसा अभूतपूर्व व्यक्तित्व था। उनके भाषण एवं लेखन में मौलिक विचार रहा करते थे। वे रूचिपूर्ण भी होते थे। उनके विचारों को सुनते वाला संतुष्ट होता था। 'बातों में अमृत बरसना' यह सत्य प्रतीत होता था। पं. दीनदयाल उपाध्याय कुछ वाक्यों को बार-बार दोहराते हुए रहते थे। ये वाक्य थे– 'सोने वाला कलियुग का, बिस्तर से उठने वाला द्वापर का, उठकर खडे होने वाला त्रेता युग का और आगे चलने वाला कृतयुग का यह हमारा वैदिक यंत्र। इसलिए चलते रहो रहो, चलते रहो। चरैवेति, चरैवेति।'

वैदिक सूत्र चरैवेति, चरैवेति के प्रेरक पं. दीनदयाल उपाध्याय बिना रूके आगे और आगे चलते ही गए, कभी हार नही मानी, पीछे मुडकर नहीं देखा। ऐसा कहा जाता है कि दुनिया में अच्छे लोग जल्दी ही भगवान को प्यारे हो जाते है। 11 फरवरी 1968 की रात्रि में वे लखनऊ से पटना जा रहे थे। दूसरे दिन मुगलसराय स्टेशन पर कपड़ों से लपेटा उनका शव मिला। उनकी मृत्यु का समाचार सुनकर सारा राष्ट्र हतप्रद रह गया था ! भाव विभोर कार्यकर्ताओं एवं भारत के जनमानस का हदय फूट-फूट कर रो पड़ा। अनेक स्थानों पर श्रद्धांजलि दी गई। तत्कालीन भारत के गृहमंत्री चव्हाण ने उन्हें एक 'आदर्श नागरिक' कहकर श्रद्धांजलि दी। अटल बिहारी वाजपेयी, आचार्य जे.पी. कृपलानी, प्रो0 राजेन्द्र सिंह आदि अनेक लोगों के साथ पूर्व प्रधानमंत्री इन्दिरा गाँधी ने श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए कहा था – 'श्री उपाध्याय देश के राजनीतिक जीवन में एक प्रमुख भूमिका अदा करते थे। जनसंघ व कांग्रेस के बीच मतभेद चाहे जो भी हो मगर श्री उपाध्याय जी सर्वाधिक सम्मान प्राप्त नेता थे। उन्होंने अपना जीवन देश की एकता एवं संस्कृति को समर्पित कर दिया था।'

निष्कर्षत: महामनीषी पं. दीनदयाल उपाध्याय एक मौलिक चिंतक, आदर्श राजनेता, कुशल लेखक एवं पत्रकार थे। वे अन्तयोदय के पक्षकर एवं एकात्म मानव दर्शन के प्रणेता थे। उन्होंने भारत की सनातन विचारधारा की युगानुकूल व्याख्या करते हुए समाज को एकात्म मानव दर्शन जैसा अनूठा विचार दिया। उक्त विचार के बल पर उन्होंने भारतीय राजनीति में त्याग और शुचितापूर्ण राजनीति का आदर्श प्रस्तुत किया।

पं. दीनदयाल उपाध्याय की धार्मिक विचारधारा– सृष्टि के प्रारम्भ से लेकर आज तक विश्व के मानव के लिए सर्वाधिक पवित्र, पूज्य शब्द या विषय धर्म है। विश्व की सभी जातियाँ उपासना या पूजा पद्धति पर विश्वास रखती है। धर्म को अपना आधार बनाकर वैक्तिगत एवं सामाजिक जीवन का निर्धारण करती है। ये सभी लोग ईश्वरीय सत्ता में विश्वास रखते हुए उस

* अध्यापक (हिन्दी) शासकीय उत्कृष्ट उच्च माध्यमिक विद्यालय, रघुराज क्र. - 2, शहडोल (म.प्र.) भारत

परमात्मा या स्वर्ग तक पहुंचने का एकमात्र मार्ग धर्म को मानते है। यह निर्विवाद सत्य है कि धर्म के प्रति मान्यता का सिद्धांत सृष्टि, व्यष्टि एवं समष्टि के जीवनकाल से प्रलय तक यथावत जारी रहेगा।

हमारे भारत देश की संस्कृतिक पृष्ठभूमि के आधार पर पं. दीनदयाल उपाध्याय लिखते है–

'धर्म में हमारा विश्वास केवल उसकी साधना के कारण नहीं। स्पष्ट है कि श्री उपाध्याय मानव जीवन के सम्पूर्ण विकास के लिए धर्म एवं धर्म पर आधारित आचरण को स्वीकार करते है। धर्म को अपने आचरण में उतारना, आचरण का अंग बनाना, सानद के कर्तव्य आधारित आधारभूत पुरूषार्थ है।

धर्म हमारा प्राण है – पं. दीनदयाल उपाध्याय जी ने धर्म को प्राण कहा है। उनके शब्दों में 'धर्म हमारा प्राण है।' पं. उपाध्याय जी राज्य की उत्पत्ति का कारण एक निश्चित लक्ष्य को प्राप्त मानते है और वह लक्ष्य है, धर्म की रक्षा तथा धर्म की स्थापना। अत: राज्य सर्वोपरि नहीं है बल्कि उसका लक्ष्य जिसके साथ उसका जन्म हुआ वह सर्वोपरि है जो राज्य का आदर्श हैं। उनका कथन है–

'राज्य राष्ट्र की रक्षा के लिए पैदा होता है। राष्ट्र के आदर्शो को व्यवहार में लाने या लाने की अवस्था पैदा करने तथा बनाये रखने के लिए पैदा होता है। राष्ट्र का आदर्श अर्थात् चिति गहन है। उसकी अभिव्यक्ति और व्यवहार के नियमों को राष्ट्र का धर्म कहते है। अत: महत्ता किसी चीज में है, तो वह धर्म की है, यदि हमारा प्राण कहीं है तो वह धर्म में है। धर्म गया कि प्राण गया इसलिए जिसने धर्म छोड़ा वह राष्ट्रच्युत हो गया।'

धर्म रिलीजन या मजहब नहीं – पं. दीनदयाल उपाध्याय धर्म को 'रिलीजन' या 'मजहब' के पर्याय के रूप में नहीं मानते है। उपासना पद्धति व्यक्तिगत धर्म का एक अंग है। मंदिर, मस्जिद, गुरूद्वारा, गिरिजाघर आदि लोगों के धर्माचरण का प्रभावी माध्यम रहा है।

'रिलीजन' अंग्रेजी शब्द का अनुवाद धर्म के रूप में करके लोगों ने धर्म को अत्यधिक विवादास्पद बना दिया है। श्री उपाध्याय जी के शब्दों में–

'अपने धर्म और जीवन का अज्ञान तथा यूरोपीय जीवन का अधिकाधिक ज्ञान हमारी शिक्षा का बिषय बन गया। फलत: रिलीजन के जितने सहचारी भाव हैं वे हमने धर्म पर आरोपित कर दियेय। वस्तुत: धर्म रिलीजन या पंथ या मत मजहब नहीं है, धर्म से प्रकृति तथा सृष्टि के साथ समाज, संस्कार एवं संस्कृति की धारणा होती है।

धर्म के तत्व शाश्वत, सनातन, सर्वव्यापी – भारतीय आध्यात्मिक चिंतको ने धर्म को शाश्वत, रूप में देखा है। उनके अनुसार प्रवृत्ति के शाश्वत नियम धर्म है। पं. दीनदयाल जी इसे सनातन, सार्वभौम तथा सर्वव्यापी रूप में देखा जिनका व्यवहार देशकाल, परिस्थिति सापेक्ष होता है। पं. उपाध्याय जी के शब्दों में –

'धर्म के जो नियम हैं , उनका व्यवहार समय के साथ युग के साथ बदलता रहता है, इसलिए देश काल के आधार पर इन नियमों का पालन करना चाहिए।'

पं.उपाध्याय जी के विचारों में उक्त नियमों मे कुछ तात्कालीक, कुछ अल्पकालिक तथा कुछ दीर्घकालिक हैं। उदाहरण के लिए किसी बैठक में यदि कोई बोल रहा है,जो सभा में उपस्थित लोगों का शांतिपूर्वक सुनना धर्म माना जाता है।

धर्म का आधार तर्क नहीं विश्वास है। इसका निर्धारण का मापदण्ड 'श्रद्धा' है। जो नीतिगत आचरण, सदव्यवहार, सदुपयोग, संस्कार, सहभागिता संस्कृति की कसौटी के मापदण्ड पर अन्याय, अत्याचार, अराजकता, असमाजिकता, उदण्डता, बेकारी, भुखमरी तथा बुराइयों से सतत युद्ध करने की प्रेरणा प्रदान करती है। पंडित दीनदयाल उपाध्याय जी ने जीवन के इन नियमों को नीतिशास्त्र के नियम कहा है। वे लिखते है–

'जीवन के जो नियम होते है, इन नियमों को नीति शास्त्र के नियम कहते हैं। ये नियम कोई तय नहीं करता, ये नियम किसी ने बनाए नहीं हैं, ये नियम ढूँढे जाते हैं। इन नियमों का पालन, जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में न्यायपालिका का न्याय है, जिसमें न्यायाधीश हम स्वयं हैं'

आगे वे लिखते हैं–

'इस प्रकार के ढूँढकर निकाले हुए जो नियम हैं , उनको ही हमारे यहाँ पर धर्म कहा गया है। मानव जीवन को स्थिर करने वाला मानव जीवन की धारणा करने वाला और मैं इस समय मानवता की बात कर रहा हूँ, बाकी चीजें छोड़ रहा हूँ, धर्म का संबंध सबके साथ आता है, सम्पूर्ण सृष्टि के साथ आयेगा, जितने नियम हैं, सब धर्म हैं। उक्त धर्म का आधार लेकर हम सम्पूर्ण जीवन पर विचार करें'।

श्री उपाध्याय जी के विचारों का प्रत्यक्ष दर्शन हमें अपने देश के दो अवतारी महापुरूषों श्रीराम एवं श्रीकृष्ण के जीवन में तथा उनके द्वारा लडे गए युद्धों में अपनाए गए नीति तथा साध्य को प्राप्त करने के साधन के रूप में देखने को मिलता है।

राज्य की धारणा और धर्म – राज्य संस्था का निर्माण धर्म की स्थापना एवं उसकी रक्षा के लिए हुआ है। दूसरे शब्दों में कहे तो राज्य की धारणा धर्म में है। अत: राज्य का आदर्श एवं आराध्य तथा साध्य धर्म है। व्यक्ति का धर्म है कि राज्य के लिए वह सहयोगी हो। वस्तुत: हमारी संस्कृति, धर्म एवं धर्म की धारणा है जो राष्ट्रधर्म के रूप में परिलक्षित होती है। श्री उपाध्याय जी लिखते है–

'धर्म राज्य के व्यक्ति के विकास, उसके सुख और शांति में मजहब का स्थान स्वीकार करता है। इसलिए राज्य का यह कर्तव्य है कि वह ऐसी अवस्थाएं पैदा करे जिससे व्यक्ति अपने मतानुसार जीवन यापन कर सके, अपने मत को मानने की स्वतंत्रता में दूसरे के मत के प्रति सहिष्णुता स्वयमेव आता है।'

निष्कर्ष रूप से हम कह सकते है कि पं. दीनदयाल उपाध्याय द्वारा मानव कल्याण हेतु उद्घाटित धर्म का विचार दर्शन भारतीय संस्कृति की सुदृढ़ नींव पर आधारित है। धर्म भारतीय संस्कृति की महत्वपूर्ण विशेषता है। भारतीय संस्कृति दूसरे मतावलंबियों के प्रति सहि सहिष्णुता का भाव रखती है। इस प्रकार हम यह पूर्ण विश्वास के साथ कह सकते है कि पं. दीनदयाल उपाध्याय जी का धार्मिक विचारों का दर्शन भारत के साथ– साथ विश्व की समस्त समस्याओं के समाधान एवं विश्व शांति एवं मैत्री के संदर्भ में आज भी प्रासंगिक है और कल भी रहेगा इसी विश्वास के साथ.................

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. एकात्म मानव दर्शन एवं पाश्चात्य चिंतन – लल्लू सिंह (पूर्व विधायक) अर्चना प्रकाशन भोपाल 2001
2. दीनदयाल उपाध्याय– न. मध्वराव, अनुवादक के. आर. के, भारत भारती प्रकाशन नागपुर (महाराष्ट)

****

मोहन राकेश के नाटकों में सामाजिक यथार्थ

शक्ति नेमा *

शोध सारांश – मोहन राकेश के नाटकों में सामाजिक यथार्थ और मौलिकता का दिग्दर्शन होता है। वे एक सजग शिल्पी व आस्थावान रचनाकार थे और उनका समस्त लेखन गवाह है कि वे कभी भी अपने परिवेश से कटे नहीं। राकेश के नाट्य साहित्य में निरूपित स्थितियों का सीधा संबंध यथार्थ से है और यह यथार्थ उनके समय और परिवेश का यथार्थ है। व्यक्ति लाख प्रयत्न करे परन्तु वह आंतरिक संवेदना को छुए बिना न तो जीवन की विचित्रताओं से परिचित हो सकता है, न जीवन के सामाजिक यथार्थ से। राकेश जी के नाट्य साहित्य में हमें समाज के प्रति विद्रोह की भावना, सामाजिक समस्याओं के प्रति जागरूकता व सामाजिक रूढ़ियों और मान्यताओं के विरूद्ध पनपती एक टकराहट देखने को मिलती है। उन्होंने समाज में रहकर समाज की विभिन्न समस्याओं को स्वयं भोगा था, यही कारण है कि उनका सम्पूर्ण नाट्य साहित्य सामाजिक समस्याओं का पिटारा है।
शब्द कुंजी – भावना, समस्याएं, प्रेम, आधुनिकता, परिवेश, संवेदना।

प्रस्तावना – मनुष्य समाज में रहकर ही विभिन्न परिस्थितियों से अनुभव प्राप्त करता है। सुंदर मुखौटों में छिपी सामाजिक कुरूपता का परिचय मोहन राकेश को अपने जीवन काल में अनेक स्थलों पर हुआ। इनके नाटकों के कथ्यों में विसंगत परिस्थितियों में घुटते मानव का तनाव, साथ जीने की विवशता, अस्तित्व की तलाश व व्यक्ति का अकेलापन और द्वन्द्व देखने को मिलता है।

आषाढ़ का एक दिन, लहरों के राजहंस, आधे–अधूरे तथा पैर तले की जमीन (अपूर्ण) – ये चार नाटक मोहन राकेश ने लिखे। चौथे नाटक 'पैर तले की जमीन' को राकेश की मृत्य उपरान्त कमलेश्वर जी ने पूर्ण किया। 'आषाढ़ का एक दिन' और 'लहरों के राजहंस' का अतीत के कथानक से संबंध है। मोहन राकेश ने इन चारों नाट्य कृतियों में व्यक्ति के द्वारा विभिन्न संदर्भों में अपने अस्तित्व की सार्थकता की तलाश की है।

सामजिक यथार्थ का तात्पर्य है, समाज का सत्य। सामजिक समस्याओं, विषमताओं, भ्रष्टाचारों तथा व्यैक्तिक स्वार्थों से आक्रांत, पीड़ित समाज की दयनीय परिस्थितियों को उसके वास्तविक रूप में समाज के सामने प्रस्तुत करना सामाजिक यथार्थ का प्रधान लक्ष्य है। 'आषाढ़ का एक दिन' मोहन राकेश का सर्वप्रथम मौलिक तीन अंकी नाटक है। यह नाटक नाटकीय संघर्ष, कला और प्रेम, सृजनशील व्यक्तित्व और परिवेश, भावना और कर्म, कलाकार और राज्य आदि कई स्तरों को छूता है। यथार्थ का संघर्ष मल्लिका और कालिदास से आरंभ होकर मल्लिका और कालिदास की वास्तविकता के धरातल पर आकर समाप्त होता है। इनके प्रेम को गोविंद चालक जी ने इस प्रकार व्यक्त किया है –

'कालिदास के लिए मल्लिका अनेक मूल्यों में से एक मूल्य है। वह उसके लिए अपना सर्वस्व न्यौछावर नहीं करता, किंतु मल्लिका के लिए वह सम्पूर्ण अस्तित्व है, एक बिना शर्त समर्पण और आत्मदान।'

नाटक में प्रेम त्रिकोण है। मल्लिका कालिदास से प्रेम करती है और विलोम मल्लिका से। मल्लिका की भावनाओं का, मानसिक आवेगों व कष्टों का निदर्शन इस नाटक में हुआ है। जिस घर में कोई पुरूष कर्ता नहीं होता केवल नारियां ही हों, उसके घर की हालत किस प्रकार बिगड़ती है, इसका यथार्थ चित्रण इस नाटक में हुआ है। मल्लिका की माँ भौतिकवादी यथार्थ में विश्वास करने वाली व्यवहारिक दृष्टि रखती है। मल्लिका का कालिदास के प्रति अटूट प्रेम देख वह चाहती है कि वे दोनों विवाह कर लें। किंतु समय कालिदास को उज्जयिनी का महाकवि बनाकर मल्लिका से दूर कर देता है। निस्वार्थ प्रेम को अभिव्यक्त करते हुए मल्लिका कहती है –

'आज जब उनका जीवन एक नयी दिशा ग्रहण कर रहा है, मैं उनके सामने अपने स्वार्थ की घोषणा नहीं करना चाहती।'

नाटक में कालिदास बड़ा क्षुद्र और आत्म केन्द्रित स्वार्थी व्यक्तित्व लेकर उभरा है। राज्य की ओर से सम्मान और निमंत्रण मिलने पर वह नहीं–नहीं करता हुआ उज्जैन चला जाता है। कश्मीर का शासक बनने पर गांव में आकर भी मल्लिका से मिलने नहीं आता और अंत में मल्लिका की दु:खद परिणति देखकर भी चुपचाप चला जाता है। कालिदास का मल्लिका से दूर चले जाने से निर्मित हुआ अभाव एवं अम्बिका की मल्लिका की चिंता में हुई मृत्यु दोनों घटनाएं मल्लिका तो तोड़ देती हैं और वह विलोम से जुड़ जाती है।

व्यक्ति को समय के साथ चलना पड़ता है। न तो वह उससे आगे भाग सकता है और न ही उससे पीछे रूक सकता है। विविध भाषाओं द्वारा मोहन राकेश ने आषाढ़ का एक दिन नाटक में हमारे समकालीन जीवन के परिवेश को यथार्थता से उद्घाटित किया है।

राकेश जी का दूसरा तीन अंकी नाटक 'लहरों के राजहंस' है। 'आषाढ़ का एक दिन' की भाँति इसका भी कथानक ऐतिहासिक है। नाटक में नाटककार ने अतीत के माध्यम से समसामयिक युग मानव की उलझन और आत्म संघर्ष को सम्प्रेषित किया है। नंद और सुंदरी के माध्यम से मानव मन की द्वन्द्वात्मक स्थिति और नर नारी कें अंतर्विरोध को पूर्ण संवेदना के साथ उजागर करना चाहा है। यह बौद्ध कालीन ऐतिहासिक परिवेश पर रचा गया है। नंद सुंदरी संबंधों का जिस प्रकार नाटककार ने विश्लेषित किया है, वह आधुनिकता व सामाजिक यथार्थ का ही परिणाम है।

लहरों के राजहंस के माध्यम से मुख्य पात्र नंद की अस्थिर मन: स्थिति

* शोधार्थी, रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत

की ओर संकेत किया गया है। मोहन राकेश ने नंद सुंदरी को जिस प्रकार से प्रस्तुत किया है, वह पूर्णतः आधुनिक हैं। उनके संबंधों को जिस प्रकार विश्लेषित किया गया है, वह आधुनिकता और सामाजिक यथार्थ का ही परिणाम हैं। यह बौद्धकालीन ऐतिहासिक परिवेश के आधार पर रचा गया नाटक हैं। नंद के केश रहित मुख को देखकर सुंदरी अपने यथार्थ का सामना नहीं कर पाती। वह आहत होती है। नंद भी अपनी दिशा व दशा के संबंध में कुछ निश्चित नहीं कर पाता। इस प्रकार नाटक में अंत तक नंद की द्वन्द्व स्थिति बनी रहती है और नंद आधुनिक मानवीय यथार्थ का प्रतीक बन जाता है। नंद के माध्यम से आज के आधुनिक व्यक्ति के अस्तित्व की तलाश को सजीवता से प्रकट किया है।

नाटक में नंद और सुंदरी तथा गौतम बुद्ध के संबंध सामाजिक परिप्रेक्ष्य में स्त्री पुरूष के दाम्पत्य संबंधों को उजागर करते हैं। नंद सुंदरी या बुद्ध किसी के भी मार्ग को अपनाना नहीं चाहते। अपने लिए वह एक स्वतंत्र मार्ग चाहता है। नंद और सुंदरी के माध्यम से आधुनिक स्त्री पुरूष संबंधों की जटिलता, तनाव एवं नियति की विडम्बना को नाटकीय अभिव्यक्ति मिलती है।

'आधे-अधूरे' नाटक राकेश जी का बहुचर्चित नाटक है। यह समकालीन संवेदना को प्रकट करता है। मध्यमवर्गीय पारिवारिक जीवन के विभिन्न पहलुओं को नाटक में उभारा गया है। आर्थिक विषमता का प्रभाव पारिवारिक विघटन का कारण बनता है। वह केवल पति-पत्नि के संबंधों को ही विघटित नहीं करता बल्कि परिवार के अन्य सदस्यों के संबंधों के बीच भी कई दायरे डाल देता है। यह नाटक सामाजिक धरातल एवं यथार्थवादी शैली पर आधारित है।

नाटक में मानवीय असंतोष अधूरेपन को रेखांकित करता है। जीवन में जो व्यक्ति बहुत कुछ पाने की चाह रखता है वह प्रत्येक वस्तु नहीं पा सकता। नाटक की नायिका सावित्री को हर बार कुछ नया पाने की कोशिश में निराशा के साथ आधा-अधूरा ही हाथ लगता है। वह कहती है-

'सब के सब .... सब के सब! एक से। बिल्कुल एक से है आप लोग। अलग-अलग मुखौटे पर चेहरा? चेहरा सबका एक ही।'

मोहन राकेश के नायकों की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता है - अपने समय और समाज की संवेदनाओं का प्रमाणिक रूप से उद्धाटन। इस नाटक में मोहन राकेश ने केवल मध्यमवर्ग के समृद्ध स्तरों के मानदण्डों और दोगलेपन का पर्दाफाश नहीं किया, बल्कि महेन्द्रनाथ एवं उनके परिवार के माध्यम से निम्न-मध्यमवर्ग की महत्वाकांक्षा और पारिवारिक विघटन के कारण का भी चित्रण किया है।

बदलते परिवेश में आज के विडम्बनाग्रस्त मध्यमवर्गीय परिवार की तस्वीर प्रस्तुत करता यह नाटक मोहन राकेश की सामाजिक यथार्थ चेतना की गहरी पकड़ दर्शाता है।

राकेश जी का अंतिम और अपूर्ण नाटक है यपैर तले की जमीन', जिसका सिर्फ प्रथम अनुवर्तन राकेश ने लिखा है। दूसरा अनुवर्तन उनके नोट्स, दृश्यबद्ध के रेखाचित्रों और आधे-अधूरे संवादों के आधार पर उनके मित्र एवं सुप्रसिद्ध कथाकार कमलेश्वर द्वारा पूरा किया गया।

यह नाटक आधुनिक जीवन की विसंगति, अवसाद एवं घुटन को लेकर लिखा गया नाटक है। नाटककार ने समकालीन जीवन की समस्याएं - बेकारी, मूल्यों का विघटन, पूंजीपति वर्ग इत्यादि को इस नाटक में अभिव्यक्त किया है। नाटक में मृत्यु साक्षात्कार के क्षणों में व्यक्ति के भय, निरर्थकताबोध, पीडा, जीवन की चरम व गहन अनुभूति को प्रमाणित किया गया है।

सामाजिक यथार्थवादी रूपबंध पर आधारित यह नाटक वर्तमान जीवन की सामयिकता, विसंगति और आधार हीनता को मार्मिक रूप से प्रदर्शित करता है। यह नाटक जीवन की उस विसंगति का जहां आधारभूत आस्थाएं और परम्परागत विश्वास भूमिगत हो चुके हैं, जहां धर्म और नीति की मान्यताएं ध्वस्त हो चुकी है जिसके कारण मनुष्य जीवन की निरर्थकता, अजनबीपन और यंत्रणा को असहाय ढो रहा है, का सजीव चित्रण है।

'पैर तले की जमीन' किसी पात्र विशेष की केन्द्रीय धुरी पर आधारित नहीं है, बल्कि यह नाटक स्थिति प्रधान है और वह स्थिति अचानक आयी बाढ़ से उत्पन्न हो जाती है। मृत्यु को सामने देखकर सभी चरित्रों के चेहरों से एक-एक करके मुखौटा उतरने लगते हैं।

सुंदरलाल कथुरिया ने लिखा है-

'वर्तमान जीवन की विसंगतियों के कारण मनुष्य अजनबीपन, जीवन की निरर्थकता और बेतुकेपन की यंत्रणा का असहाय बोझ ढो रहा है। नाटक में इस पृष्ठभूमि पर वर्तमान जीवन की सामयिकता, विसंगति और आधारहीनता मार्मिक रूप से रेखांकित हुई है।'

मनुष्य को उसके वास्तविक रूप का बोध कराने वाला यह नाटक अपने आप में जीवन की विसंगतियों का जीवंत प्रतीक है। मोहन राकेश के नाट्य साहित्य के सभी चरित्र जीवंत हैं और वर्तमान जीवन में मनुष्य के अस्तित्व की ओर उद्घाटित करने में सक्षम हैं। राकेश जी ने यथार्थ जीवन को तटस्थता के साथ प्रस्तुत किया है। इनके नाटक आधुनिक मनुष्य की विसंगतियों, समाज के खोखलेपन, राजनीतिक तथा अन्य क्षेत्रों में आने वाली निष्क्रियता एवं भ्रष्टाचार की ओर संकेत करते है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. आधुनिक नाटक का मसीहा - डॉ. गोविंद चातक, पृष्ठ -47,48
2. आषाढ़ का दिन - मोहन राकेश, पृष्ठ-25
3. लहरों के राजहंस - मोहन राकेश, पृष्ठ -76
4. आधे-अधुरे- मोहन राकेश, पृष्ठ- 93
5. नाटककार मोहन राकेश-डॉ. सुंदरलाल कथूरिया, पृष्ठ- 197

****

राष्ट्रीय आन्दोलन और भारतीय पत्रकारिता

डॉ. गुरविन्दर सिंह गिल *

प्रस्तावना – 1857 का स्वतंत्रता संग्राम असफल होने के बावजूद भारतीयों का उत्साह कम नहीं हुआ। उनके इस आत्मविश्वास और उत्साह में भाषायी पत्रों का योगदान महत्वपूर्ण था।[1] भारत का शासन कम्पनी के हाथ से ब्रिटिष पार्लियामेंट के हाथ में चला गया। सरकार की नीति में उदारता अब भी नहीं थी। समाचार-पत्रों पर पुन: प्रहार हुआ और 13 जून, 1857 को लार्ड केनिंग के गलाघोंटू प्रेस एक्ट को प्रेस सम्बन्धी एक कानून बनाकर स्वाधीनता कुंठित कर दी गई। सन् 1829 में राजाराममोहन राय ने साप्ताहिक 'बंगदूत' का प्रकाशन किया।[2] राजाराममोहन राय द्वारा प्रवर्तित भारतीय सांस्कृतिक आन्दोलन निरन्तर प्रगति कर रहा था और उसका नेतृत्व कर रहे थे- रामकृष्ण परमहंस, ब्रह्मानंद केशवचंद्र सेन, दयानंद सरस्वती और विवेकानंद। रामकृष्ण परमहंस अत्यन्त सरल थे। उनका कोई समुदाय नहीं था और शैव, शाक्त, वैष्णव, तांत्रिक सभी सम्प्रदायों में वे दीक्षित थे। रामकृष्ण ने अपने युग के श्रीमंतों को पीड़ित और भूखे समुदाय की सहायता के लिए प्रेरित किया।

सन् 1857 में ही ब्रह्मानंद केशवचन्द्र सेन ने ब्रह्म समाज में प्रवेश किया था। ईसा मसीह के आदर्शों व चरित्र से वे प्रभावित थे। राष्ट्रीय जागरण के लिए उन्होंने शोषित और उपेक्षित वर्ग के उन्नयन का प्रयास किया। भारत के पुनरूत्थान को ध्यान में रखकर आपने 'सुलभ समाचार' नामक समाचार-पत्र बंगला में निकाला। लोगों की गरीबी को ध्यान में रखकर उसका मूल्य एक पैसा रखा गया था। आप कोरे समाज सुधारक नहीं थे, एक समाजवादी चिन्तक भी थे। केशवचन्द्र सेन पहले राष्ट्रीय नेता थे, जिन्होंने सर्वप्रथम हिन्दी को राष्ट्रभाषा घोषित किया। 'सुलभ समाचार' पत्र में आपने राष्ट्रीय एकता के लिए हिन्दी की व्यापकता को लक्ष्य कर प्रबल समर्थन किया था। उन्नीसवीं शताब्दी भारतीय मानस मनीषा के जागरण की शती रही है।[3] इसी बीच एक नवीन ज्योति का विवेकानंद के रूप में उदय हुआ। वे अंग्रेजी और संस्कृत के प्रकाण्ड पण्डित थे। प्राचीनता और नवीनता का उन्हें भली प्रकार ज्ञान था। वे रामकृष्ण परमहंस के प्रिय शिष्य थे। उनका स्पष्ट मत था कि 'मैं प्राचीन हिन्दू समाज को ही पसंद करूँगा, क्योंकि अज्ञ होने पर भी, कुसंस्कार से घिरे होने पर भी हिन्दू के हृदय में एक विश्वास है, उसी विश्वास के बल पर वह अपने पैरों पर खड़ा हो सकता है, किन्तु विलायती रंग में रंगे सर्वथा मेरूदण्ड विहीन बाबू लोग अपरिपक्व, श्रृंखलाशून्य, बेमेल विभिन्न भावों से भरे होते हैं।' वे पाश्चात्य सभ्यता के पक्षधर नहीं थे। उनकी मान्यता थी कि, 'एकमात्र ईश्वर ही सत्य है, एकमात्र आत्मा ही सत्य है, एकमात्र धर्म ही सत्य है। इसी सत्य को पकड़े रहो।' धर्म परिवर्तन को आप हिन्दू जाति के लिए घातक मानते थे।19वीं शती की समग्र चेतना विवेकानन्द में मुखर हो उठी थी। वे भारत के ज्ञान के पर्याय बन गए थे। उनके द्वारा जागृत चेतना ने भारतीय राजनीति को गहरे तक प्रभावित किया।

धार्मिक आन्दोलनों से दूर ईश्वचन्द्र विद्यासागर तथा बंकिमचन्द्र ऐसे महापुरुष थे, जिन्होंने राष्ट्रीय आन्दोलन को तीव्र गति प्रदान की। ईश्वरचंद्र विद्यासागर एक प्रगतिशील समाज सुधारक थे, शास्त्रज्ञ थे। आप नारी शिक्षा के पक्षधर थे तथा आपने 1857 से 1858 के बीच 35 बालिका विद्यालयों की स्थापना की। बहुविवाह और बाल विवाह का भी आपने विरोध किया। आपने 'विधवा विवाह' आन्दोलन चलाकर समाज में क्रांति ला दी। विरोध के बावजूद आप सक्रिय बन रहे और 7 दिसम्बर, 1856 ई. को आपके ही निरीक्षण में पहली बार वैधानिक रीति से हिन्दू विधवा का पुनर्विवाह हुआ। ईश्वरचंद्र विद्यासागर एक मनीषी, उदार तथा विशाल हृदय व्यक्ति थे। प्रादेशिक सीमाओं से वे बहुत ऊपर थे। हिन्दी की शक्ति आप अच्छी तरह समझते थे। पं. द्वारिकानाथ विद्याभूषण के साथ मिलकर आप 'ओमप्रकाश' बंगला पत्र सोमवार को प्रकाशित करते थे। 'उदन्त मार्तण्ड' और 'सामदन्त मार्तण्ड' अस्त हो चुके थे। कार्तिक प्रसाद खत्री का 'हिन्दी दीप्ति प्रकाश' कई वर्ष पहले बुझ चुका था। कलकत्ते से हिन्दी का कोई पत्र नहीं निकलता था। इसी समय दुर्गाप्रसादजी तथा छोटूलालजी के प्रयास और सहयोग से 'भारतमित्र' का प्रकाशन प्रारम्भ हुआ।

भारतीय पत्रकारिता की जन्मभूमि बंगाल की हिन्दी पत्रकारिता के नींव निर्माण और स्तर उन्नयन में बड़ी भूमिका रही है।[4] महान् साहित्यकार व ऋषि तुल्य बंकिमचंद्र ने भारतवासियों को 'वन्दे मातरम्' का मंत्र दिया। यह मंत्र चेतना का प्रेरक था। उस चेतना का जो देश को स्वतंत्रता की ओर आकृष्ट कर रही थी। 7 अगस्त 1905 को कलकत्ता टाउनहाल में विदेशी बहिष्कार तथा स्वदेशी आन्दोलन के लिए हुई सभा में हजारों व्यक्तियों ने इस महामंत्र का उद्घोष किया था।

इसी युग में ब्रह्म समाज की ही तरह महादेव गोविन्द रानाडे के संरक्षण में 'प्रार्थना सभा' की स्थापना की गई। रानाडे जी सामाजिक तथा राजनैतिक विषयों में समान रूचि रखते थे। समाज सुधारक के साथ ही वे राजनीतिक सुधार पर भी बल देते थे। रानाडे जी ने महाराष्ट्र में राष्ट्र भक्ति की वह मजबूत नींव डाली जिस पर तिलक और गोखले ने देश की राजनीति का भवन खड़ा किया। उसी समय विदेशी महिला एनी बेसेन्ट ने जातीय उत्थान में बहुत सहयोग दिया। हिन्दू धर्म के प्रति उनमें असीम अनुराग था। राष्ट्रीय शिक्षा के क्षेत्र में भी एनी बेसेन्ट का कार्य सराहनीय था। 1917 की कलकत्ता कांग्रसे के सभापति पद पर उन्हें प्रतिष्ठित किया गया। वे 'आल इण्डिया होमरूल लीग' की संचालिका थी। यह संस्था तिलक की 'होमरूल लीग' से अलग थी।

देश के अभ्युत्थान में सबसे बड़ी बाधा थी-पराधीनता और जातीय संघशक्ति की दुर्बलता।[5] तत्कालीन जातीय परिवेश में चेतना जाग्रत करने का महत्वपूर्ण कार्य सर सुरेन्द्रनाथ बेनर्जी ने किया। आपकी ओजस्वी वाणी ने सर्वत्र चेतना की लहर जगा दी। 1877 में आपने दिल्ली दरबार में शामिल राजाओं से भेंट की थी। लार्ड लिटन के दुष्कृत्यों और इलबर्ट बिल की

*सहायक प्राध्यापक (वरिष्ठ) एवं विभागाध्यक्ष (भाषा) एम.बी. खालसा महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

प्रतिक्रिया के रूप में प्रकटित अंग्रेजों की स्वार्थी वृत्ति ने पूरे भारत को असंतुष्ट कर दिया था। इस असंतोष को सुरेन्द्रनाथ बेनर्जी ने ही राष्ट्रीय रूप दिया था।

सुरेन्द्रनाथ की वाणी में ओजस्विता थी। वे अपने पत्र 'बंगाली' के माध्यम से सरकारी साम्राज्यवादी नीतियों का विरोध करते थे। फलस्वरूप आपको 1883 में सरकार ने दो माह की कैद का आदेश सुनाया। इस दण्ड को आपने बड़े गौरव के साथ स्वीकार किया। उस सजा का पूरे भारत में विरोध हुआ। 1876 में आपने 'इण्डियन एसोसियेशन' नामक अखिल भारतीय राजनीतिक संगठन की स्थापना की। राजनीतिक जागरण की प्रबल लहर चल रही थी। इंग्लैण्ड में दादा भाई नौरोजी के प्रयास से 'ईस्ट इंडिया सोसायटी' की स्थापना 1861 में हुई। इस संस्था के माध्यम से इंग्लैण्ड में राजनीतिज्ञों के रूप में सहानुभूति जगाने के लिए मि. ह्यूम ने 'इण्डियन नेशनल कांग्रेस' की स्थापना की। मि. ह्यूम सहृदय तथा भारतीय जनता के प्रति उदार भाव रखते थे। वे जब जिला मजिस्ट्रेर रहे, तब शिक्षा प्रसार, पुलिस सुधार, मदिरा निषेध, **देशी भाषाओं के समाचार-पत्रों की प्रगति,** बाल अपराधियों के सुधार आदि के लिए आपने काफी प्रयास किए। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना से हिन्दी अखबारों की नैतिक ऊर्जा बढ़ गई। वह सरकार के गलत निर्णयों, नीतियों तथा कदमों के विरूद्ध जनमानस को संघर्ष के लिए प्रेरित करने लगी थी।[6]

अब उस पीढ़ी का जन्म हो चुका था, जिसे स्वदेशी आन्दोलन की बागडोर संभालनी थी। इसी युग में श्री अरविन्द और तिलक का प्रादुर्भाव हुआ। 1894 ई. में बम्बई से प्रकाशित होने वाले 'इन्द्र प्रकाश' में श्री अरविन्द ने 'न्यू लेम्प फार ओल्ड' शीर्षक से राजनीतिक लेख लिखना शुरू किए। इन लोगो में कांग्रेस के प्रति असन्तोष व्यक्त होता था, इसलिए रानाडे के दबाव के कारण लेखों का प्रकाशन बंद हो गया।

हिन्दी पत्रकारिता की तेजस्विता का अभिनंदन करते हुए जगदीश प्रसाद चतुर्वेदी ने लिखा है- 'जहाँ तक क्रांतिकारी आंदोलन का संबंध है, भारत का क्रांतिकारी आंदोलन बंदूक और बम से नहीं, समाचार पत्रों से शुरू हुआ।[7] तिलक का राजनैतिक जीवन प्रारम्भ हो चुका था। 'केसरी' और 'मराठा' के तीखे तेवर नये राजनीतिक परिवर्तन का संकेत दे रहे थे। 4 जनवरी, 1881 को 'केशरी' का पहला अंक प्रकाश में आया और 'मराठा' उससे दो दिन पहले निकला था। तिलक ने गणपति उत्सव को 1893 में राष्ट्रीय ऐक्य के संदर्भ में प्रस्तुत किया। तिलक ने व्यावहारिक राजनीति के क्षेत्र में तब राष्ट्रीयता के आदर्श उपस्थित किए। 'स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार' का उनका सिंहनाद विदेशी ताकतों के होंसले पस्त करने लगा था। वैधानिकता की दुहाई देकर अंग्रेजों के आगे हाथ पसारने की राजनीतिक भिक्षावृत्ति समाप्त प्राय: हो गई थी। पूर्ण स्वराज्य का भाव जन-जन में जाग चुका था। लोकमान्य तिलक के सहयोगियों में विपिनचन्द्र पाल, अरविन्द घोष और लाला लाजपत राय थे। राजनीति के धारा को मोड़ने में सक्षम सभी नवयुवक उनके साथ थे। ये नवयुवक ही समय आने पर स्वतंत्रता संग्राम के प्रमुख सेनानी बने।

राष्ट्रीयता की धारा सतत् विकास पा रही थी। उस विकास में पत्रकारिता का भी अमूल्य सहयोग था। भारतीय पत्रकारिता के इतिहास में उन्नीसवीं सदी का उत्तरार्द्ध और बीसवीं सदी का प्रारम्भ अर्थात् लगभग बीस वर्ष तेजस्वी पत्रिका का युग है। इस काल में अनेक महत्वपूर्ण पत्र प्रकाशित हुए। जैसे- सोम प्रकाश, सुलभ समाचार, अमृत बाजार पत्रिका, साधना, आर्यदर्शन, बंगला, मराठा, केसरी, ट्रिब्यून, इण्डियन मिरर आदि। 1891 में पत्रकारिता के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण व्यक्तित्व उभरा- रामानंद चटर्जी। इन्होंने दासी, प्रदीप, प्रवासी और माडर्न रिव्यू आदि कई पत्र निकाले। केवल बंगाल से ही 38 पत्रों का प्रकाशन हुआ। इस कालावधि में हिन्दी के अनेक पत्र प्रकाशित हुए। जैसे- हरिशचन्द्र चंद्रिका, भारतमित्र, हिन्दी प्रदीप, सार सुधानिधि और उचित वक्ता। 1890 में 'हिन्दी बंगवासी' का भी प्रकाशन हुआ।

लार्ड लिंटन के शासनकाल में वर्नाक्यूलर प्रेस एक्ट 1878 पास हुआ, जो 14 मार्च को कानून बना और मद्रास के अलावा सभी प्रान्तों पर लागू हुआ। यह ऐसा समय था जब भारत में 644 पत्र-पत्रिकाएँ प्रकाशित हो रही थी और उनमें 400 पत्र भाषायी पत्र थे। इनकी पाठक संख्या भी लगभग एक लाख थी।[8] इस कानून का पूरे देश में विरोध हुआ। विरोधी स्वरों के प्रकाशन को रोकने के लिए यह नियम बना था। इसी की प्रतिक्रिया के रूप में मद्रास से हिन्दू का प्रकाशन हुआ। सभी पत्रों ने इसका खुलकर विरोध किया।

19वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध अर्थात् 16 जुलाई, 1893 ई. को बाबू श्याम सुन्दर दास, रामनारायण मिश्र, ठाकुर शिवकुमारसिंह के अथक प्रयासों से 'नागरी प्रचारिणी सभा' की स्थापना हुई। नागरी प्रचारिणी सभा भाषा और संस्कृति के क्षेत्र में हमारे राष्ट्रीय विद्रोह की प्रथम प्रतीक थी। हिन्दी साहित्य का यह भारतेन्दु युग था। भारतेन्दु स्वयं स्वदेशी के पक्षधर थे। कालान्तर में गाँधी जी ने यंग इंडिया, नव जीवन, हिन्दी नव जीवन पत्रों को **हरिजन** संज्ञा दी। गाँधीजी ने स्वतंत्रता आंदोलन का नेतृत्व किया तथा सत्याग्रह, असहयोग आंदोलन को एक नई दिशा दी। भारत छोड़ो आन्दोलन, करो या मरो की उद्घोषणा कर उन्होंने सारे देश को उद्वेलित कर दिया। जिसका परिणाम सन् 1947 में भारत की आजादी के रूप में सामने आया। 1920 में कांग्रेस अधिवेषन में हिन्दी को राजभाषा स्वीकार किया गया। अत: हिन्दी की पत्रकारिता को नई भूमि तथा नई दिशा मिल गई। उसका प्रभाव क्षेत्र भी विस्तृत हुआ। इस संदर्भ में डॉ. रामरतन भटनागर का कथन महत्वपूर्ण है-' कांग्रेस ने जनता के पास पहुँचने के लिए हिन्दी भाषा को अपनाया। फलत: हिन्दी पत्रकारिता द्रुतगति से बढ़ी। जैसे-जैसे राष्ट्रीय आन्दोलन तीव्र हुआ, हिन्दी पत्रकारिता सशक्त एवं तेजस्वी हुई।[9]भारतीय राष्ट्रीयता का विकास और पत्रकारिता का विकास न केवल समानान्तर हुआ है अपितु दोनों एक-दूसरे के सहयोगी रहे हैं। पत्रकारिता ने राष्ट्रीय विकास को गति प्रदान की तथा राष्ट्रीयता ने पत्रकारिता के स्वरूप को और अधिक निखारा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. विनोद गोदरे, हिन्दी पत्रकारिता-स्वरूप एवं संदर्भ, पृष्ठ 156
2. डॉ. विनोद गोदरे, हिन्दी पत्रकारिता-स्वरूप एवं संदर्भ, पृष्ठ 50
3. कृष्णबिहारी मिश्र, पत्रकारिता-इतिहास और प्रश्न, पृष्ठ 140
4. कृष्णबिहारी मिश्र, पत्रकारिता-इतिहास और प्रश्न, पृष्ठ 145
5. कृष्णबिहारी मिश्र, पत्रकारिता-इतिहास और प्रश्न, पृष्ठ 31
6. डॉ. विनोद गोदरे, हिन्दी पत्रकारिता-स्वरूप एवं संदर्भ, पृष्ठ 159
7. डॉ. रमेशचन्द्र जैन, हिन्दी पत्रकारिता का आलोचनात्मक इतिहास, पृष्ठ 122
8. एम. चेलापति राव, दी प्रेस, पृष्ठ 69
9. डॉ. रामरतन भटनागर, दी राइज एण्ड ग्रोथ ऑफ हिन्द जर्नलिज्म, पृष्ठ 357-58

'वेद' अध्ययन की मूल अवधारणा अनुशासन और अधिकार

डॉ. राजश्री नरवणे *

प्रस्तावना – वेद अध्ययन के संदर्भ में कहा जाता है कि ऋषि, देवता एवं छंद को जाने बिना मंत्रार्थ खुलते नहीं हैं। महर्षि कात्यायन प्रणीत सर्वानुक्रमणी (1. 1) तथा महर्षि शौनक मृत बृहदेवता (8.132) में स्पष्ट लिखा है कि ऋषि, देवता एवं छंद समझे बिना वेदार्थ का प्रयास करने वाले श्रम निरर्थक जाता है अथवा पापमूलक हो जाता हैं।

यहाँ ऋषि का अभिप्राय है – कहने वाले (यस्य वाक्यं स ऋषि:) का व्यक्तित्व। देवता का भाव है – प्रकृति की किस शक्तिधारा को लक्ष्य करके बात कही गयी है (या तेनोच्यते सा देवता)। छन्द का अर्थ है कि इसमें काव्यात्मकता किस शैली की है (यद् अक्षर–परिमाणं तच्छन्द – ऋ0 सर्वा0 2.6)।

ऋषि – यह अभिव्यक्ति किसकी है, यह बात बहुत महत्व रखती है। 'मत्सम: पातकी नास्ति' (मेरे जैसा पापी कोई नहीं) यह वाक्य किसी अपराधी या कुण्ठित व्यक्ति का है तो बात और है, किन्तु जब जगद्गुरू आचार्य शंकर यह वाक्य बोलते हैं, तो अध्येता एकदम चौंकता है। आचार्य के स्तर को वह जानता है, इसलिए वाक्य का अर्थ हीन प्रसंग में नहीं, उच्च आध्यात्मिक संदर्भ में निकालता है। यदि वक्ता का स्तर पता न हो, तो गूढ़ उक्तियों के बारे में मतिभ्रम स्वाभाविक है। वेद गड़रियों के गीत हैं या तत्वदर्शियों के कथन ? इस अवधारणा से हमारी अन्त: चेतना की जागरूकता में जमीन–आसमान जितना अंतर पड़ जाता है।

देवता – प्रत्येक गूढ़ क्रिया के मूल में स्थित दिव्य शक्ति प्रवाह को समझे बिना सूत्र कैसे समझ में आ सकते हैं। किसी देवता से यह प्रार्थना करे कि हे देव ! सैकड़ों योजन दूर उत्पन्न ताप को लाकर हमारा आवास गर्म कर दे ।तो यह बात पागल का प्रलाप जैसी लगेगी, किन्तु विद्युत के शक्ति प्रवाह को 'देवता' कहकर यह प्रार्थना की जाए तो एक सर्वमान्य सत्य प्रकट होता है। दूरस्थ ताप विद्युत गृह में जल रहे कोयले की गर्मी से हमारे घर गर्म होते ही हैं। अस्तु ऋषि जिस देवता (शक्तिधारा) को लक्ष्य कर रहे है, उसका आभास हुए बिना उक्ति निरर्थक लगती है। किसी ने सूर्य या अग्नि से भयभीत होकर प्रार्थना की है अथवा उस दिव्य कल्याणकारी देवशक्ति का साक्षात्कार करके सूत्र दिए हैं ? इस मान्यता से चिन्तन का आधार ही बदल जाता है।

छन्द – काव्य के छन्द विशेष में किसी भाव विशेष को व्यक्त करने की सामर्थ्य होती है। वीर रस के छन्द से करूण रस के भाव नहीं जगते। छन्द की सामर्थ्य शब्दों से भिन्न है। वे भावों को स्पष्ट करने में कहीं–कहीं शब्दों से अधिक प्रभावी सिद्ध होते देखे जाते हैं। अस्तु भावों की गहराई तक पहुँचने में छन्द भी सहायक होते है। 'चींटी पाँवे हाथी बाँध्यों' उक्ति सामान्य रूप से एक उपहास जैसी लगती है, किन्तु यह कबीर की उलटबासी है, यह सोचते ही बुद्धि के कपाट स्वत: खुल जो हैं।

अधिकार – अधिकारी संबंधी बात भी अनुशासनपरक ही हैं। किसी अनुभवी से उसके अनुभव प्राप्त करने के लिए उसके अनुशासन में दीक्षित (संकल्प पूर्वक प्रवृत्त) होना पड़ता है। ब्राम्ही चेतना के अनुशासन को समझकर तदनुसार जीवन जीने के संकल्प के साथ समर्थ गुरू का वरण करने पर साधक को 'द्विज' की संज्ञा दी जाती थी। 'द्विज' का अर्थ होता है – दुबारा जन्म लेने वाला। माँ के गर्भ से शरीर के जन्म के साथ शारीरिक शक्तिधाराओं का विकास होने लगता है। जब साधक अन्त:करण की शक्तिधाराओं के विकास के लिए समर्थ गुरू से जुड़ता है, त बवह उसका दूसरा जन्म कहलाता है। वेद ब्रम्हविद्या के संवाहक हैं। उन्हें समझने के लिए ब्रम्हनिष्ठ जीवन का संकल्प आवश्यक है।

उक्त संदर्भ में द्विजों को ही वेद अध्ययन फलेगा, यह बात विवेकसंगत एवं सार्थक है। जन्म–जाति विशेष से उसे जोड़ने से ही भ्रम फैले हैं। वे प्रसंग सर्वविदित है कि 'जबाला' के पुत्र सत्यकाम तथा इतरा के पुत्र ऐतरेय को ब्रम्हविद्या में प्रवेश भी मिला और वे ऋषि स्तर तक पहुँचने में सफल भी हुए। इसलिए किसी को जन्म–जाति गत भ्रमों में न उलझ कर पात्रता के विकास द्वारा वेदाधिकार प्राप्त करने का प्रयास करना चाहिए।

वेद ज्ञान को ऋषियों ने नेति–नेति कहकर अपनी श्रद्धा व्यक्त की है। उसे पूरा न समझ पाने से न तो निराश होना चाहिए और न उसे निरर्थक कहकर तिरस्कृत करना चाहिए। निरूत्कार यास्क ने भी वेद के लगभग 400 ऐसे शब्द गिनाए, जिनका अर्थ उन्हें नहीं पता था। जब शब्दार्थ का यह हाल है, तो भावार्थ तो और गूढ़ होते हैं। वे तो साधना के अनुपात से ही खुलते हैं। अस्तु, विश्वासपूर्वक कहा जा सकता है कि ऋषियों के निर्धारित अनुशासन के अनुसार वेद का अध्ययन करने वालों को वेद भगवान के अनुग्रह से जीवनोपयोगी सूत्र प्राप्त होते रहे हैं और सदैव प्राप्त होते रहेंगे।

वेद विशिष्ट ज्ञान–विज्ञान के भण्डारगार हैं। किसी भी विशिष्ट विद्या को प्राप्त करने के लिए उसके विशिष्ट अनुशासनों का पालन करते हुए एक न्यूनतम स्तर तक व्यक्तित्व को ले जाना पड़ता हैं। उससे कम में हर कोई, किसी मनचाहे ढंग से उसका उपयोग करने अथवा लाभ पाने में समर्थ नहीं हो सकता।

बाँस की पोली नली से अग्नि को फूँक मारकर प्रज्वलित करने का ढंग थोड़े से संकेत से कोई भी सीख सकता हैं, किन्तु पोले बाँस को बाँसुरी के रूप में विकसित करने तथा उससे संगीत की मधुर ध्वनियाँ निकालने का कार्य संगीत का ज्ञाता ही कर सकता हैं। बाँसुरी सुरीली बने, इसके लिए छेदों के आकार तथा उसकी परस्पर दूरियों का निर्धारण कितनी सावधानी से करना पड़ता और उसका कितना महत्व हैं, यह बात कोई कनसुरा (जिसके कान स्वरों का अंतर ही नहीं समझते–ऐसा) व्यक्ति नहीं समझ सकता। इसी

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) रूकमादेवी पन्नालाल लड्ढ़ा माहेश्वरी महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

प्रकार कद्दू के खोल, प्लाई और तार के संयोग से सितार की और उसके जादू भरे संगीत की बात कोई ऐसा व्यक्ति कैसे समझ सकता है, जो संगीत विद्या से सर्वथा दूर ही रहा हो ?

वेद मंत्रों में पराचेतना के गूढ़ अनुशासन का समावेश है। शब्दार्थ और व्याकरण आदि तो उसके कलेवर मात्र हैं। वे मंत्रों के भाव समझने में सहायक तो होते हैं, किन्तु केवल उन्हीं के सहारे गूढ़ तत्वों को समझा जाना संभव नहीं। स्वयं वेद में इस तथ्य को प्रकट किया गया हैं। जैसे – ऋग्वेद1. 164. 39 में कहा गया है – 'ऋचो अक्षरे परमे व्योमन् यस्मिन् देवा अधि विश्वे निषेदुः' अर्थात् ऋचाएँ परम व्योम में रहती हैं, जिसका देवत्व अपरिवर्तनीय है। आगे कहा गया है – 'स्तन्न वेद किमृचा करिष्यति' जो उस अपरिवर्तनीय सत्य को नहीं समझता, उसके लिए मात्र ऋचा क्या करेगी ? यह कथन उसी तरह सत्य हैं। जिस प्रकार यह कथन कि जो संगीत का ज्ञाता नहीं, उसके लिए मात्र बाँसुरी क्या करेगी ? इसी प्रकार भाषा की सीमा बतलाते हुए ऋ. 10.71.1 में कहा गया हैं – बृहस्पते प्रथमं वाचो अग्रं यत् प्रैरत नामधेयं दधानाः। देशां श्रेष्ठं यदरिप्रमासीत् प्रेणा तदेशां निहितं गुहाविः।। हे बृहस्पते! सर्वप्रथम पदार्थो के नाम आदि का भाषा ज्ञान प्राप्त होता हैं। यह वाणी का प्रथम सोपान है। ज्ञान का जो दोष रहित–श्रेष्ठ–शुद्ध स्वरूप है, वह गुफा में छिपा है, जो दिव्य प्रेरणा से प्रकट होता हैं।

भाषा ज्ञान वाणी का प्रथम सोपान है। उससे प्रेरित होकर पदार्थो को देखा–पहचाना जा सकता है, किन्तु विचारों और भावनाओं की गहराई (गुफा) तक पहुँचने के लिए तो विशेष अन्तःस्फुरणा आवश्यक होती है। यदि किसी प्रभावशाली राग की सरगम (स्वरलिपि) लिख दी जाए, तो उससे राग को समझने में सहायता तो मिलेगी, किन्तु संगीत–निपुण व्यक्ति के निर्देशन में साधना करके ही उसे पाया जा सकता है।

वेदवाणी के संदर्भ में भी ऋषियों का यही मत है यज्ञेन वाचः पदवीयमायन् तामन्वविन्दऋशिशु प्रविष्टाम्। तामाभृत्या व्यदधुः पुरूत्रा तां सप्त रेभा अभि सं नवन्ते (ऋ0 10.71.3)। ज्ञानी लोग श्रेष्ठ वाणी को यज्ञ से ही प्राप्त करते है। उन्होंने तत्वज्ञानी ऋषियों के अन्तःकरण में प्रविष्ट वाणी को प्राप्त करके उस ज्ञान को संपूर्ण विश्व में प्रसारित किया। इसी वाणी (दिव्य ज्ञान) को सात छन्दों में स्तुति रूप में प्रस्तुत किया। वेद वाणी को यज्ञ के माध्यम से पाया गया— यह वाक्य गूढ़ार्थक है।

यज्ञ – यजन का अर्थ है – देवपूजन, संगतिकरण, दान........। विद्या के विशेषज्ञ – दाता, देवता का पूजन–श्रृद्धा युक्त अनुगमन पहली शर्त है। उसके निर्देशानुसार स्वयं साधना – अभ्यास रूप में संगतिकरण करके ही व्यक्ति विद्याविद् बनता है। इससे कम से किसी विशेषज्ञ के अन्तःकरण में संचित अनुभवजन्य विद्या को प्राप्त करना संभव नहीं है। इतना करके ही कोई व्यक्ति दान रूप में विद्या का विस्तार करके उसे सार्थक बना सकता है।

यहाँ एक बात और भी ध्यान देने योग्य है – वेद वाणी जड़ नहीं है। वह चेतन का प्रतिनिधित्व करती है और स्वयं भी चेतन है। चेतन में स्वयं भी चयन करने की क्षमता होती है। यह सत्पात्रों को पहचान कर स्वयं अपना प्रभाव उसके सामने खोल देती है। ऋ0 10.71.4 के अनुसार – उत त्वः पष्यन् न ददर्श वाचमुत त्वः शृण्वन् न शृणोत्येनाम्। उतो त्वस्मै तन्वं वि सस्त्रे जायेव पत्य उषती सुवासाः।। कुछ लोग उस वाणी को सुनने के पश्चत् (अर्थ न समझ पाने के कारण) न सुने के समान ही रह जाते है। कुछ (धारणा शक्ति के अभाव में) मन से देखने पर भी न देख पाने (अद्रष्टा) जैसे रह जाते हैं। वह वाणी किसी अधिकारी के पास ही अपने स्वरूप को वैसे ही स्पष्ट करती है, जैसे सुन्दर वस्त्रों में लिपटी पत्नी अपने पति के पास ही अपना शरीर (वास्तविक रूप) प्रकट करती है। जो लोग तप द्वारा श्रद्धा एवं मानस के परिष्कार के बिना वेदज्ञान का अनुभव करना चाहते हैं, वे शब्द जंजाल की माया में ही भटककर रह जाते है। यह भाव उक्त मंत्र से अगले (10.71.5) में स्पष्ट किया गया है। कहा है कोई–कोई स्थिर मति वाला ही वेद वाणी को ठीक से समझ पाता है। अन्य तो पुष्प एवं फल रहित शब्दों की माया में ही भटकते रह जाते हैं।

यही कारण है कि बड़ी संख्या में शौकिया वेद अध्येता मंत्रों के तत्व तक नहीं पहुँच पाते। श्री अरविन्द ने वेद रहस्य में यह बात स्पष्ट करते हुए लिखा है कि उपनिषद् काल (जब साधकों के अन्तःकरण पर्याप्त शुद्ध थे) में भी उन्हें तत्वज्ञान प्राप्त करने के लिए तपक रने और दीक्षित होने के लिए कहा जाता था। अब जब जीवन लगभग पूरी तरह पदार्थोन्मुख हो गया है, तक पराचेतन के सूत्र स्वरूप वेदवाणी की गहराई कैसे समझ में आए ? इसका अर्थ यह नहीं कि वेदों में दिए गए सारे मंत्र सामान्य बुद्धि से परे हैं। कहीं–कहीं ऋषिगण व्यावहारिक–अध्यात्म के जीवन निर्माण के मार्मिक सूत्र प्रकट करते हुए कहते हैं – 'जिव्हा अग्रे .... भूयासं मधुसंदशः' (अथर्व0 1.34) अर्थात् 'मेरी जिव्हा के अग्र भाग में मधु हो, जिव्हा का मूल मधुर हो, मेरा आचरण और व्यवहार मधुर हो। मैं वाणी से मीठा बोलू और मधुर बन जाउँ।' इसी प्रकार ऋषिगण लोकशिक्षण का महत्व समझाते हुए कहते हैं – 'यदन्तरं तद् बाह्यं यद् बाह्ं तदन्तरम्' (अथर्व0 2.30.6) अर्थात् 'जो तुम बाहर से हो, वही अन्दर से भी बन जाओ, जो अन्दर हो, वही बहिरंग में प्रकट हो' इस प्रकार व्यक्तित्व को कैसे सुव्यवस्थित रखा जाय, यह एक महत्वपूर्ण सूत्र भी वे दे देते हैं।

इस प्रकार सर्वसुलभ मंत्रों का भाव समझने में भी यदि मधु का अर्थ मात्र शहद लिया जाए तो जिव्हा के अग्र भाग पर मधु का अर्थ शहद चाटने के संदर्भ में चला जाएगा और आगे का क्रम बकवास जैसा लगेगा। मधु का अर्थ मधुरता ही लेने से बात बनेगी। कथन की काव्यात्मकता को ध्यान में रखकर ही चलना होगा।

उक्त संदर्भो से यह स्पष्ट होता है कि पाश्चात्य विद्वान वेदार्थ के अनुशीलनन में एक सीमा तक ही सफल हो सके। उन्होंने एक ओर जहाँ वेद को प्रकाशित करके उस ओर विज्ञ समाज का ध्यान खींचने का स्तुत्य प्रयास किया वहीं दूसरी ओर वे उसके गूढ़ तत्व तक न पहुँच सकने के कारण स्वयं तो भटके ही, अन्य भोले–भोले जिज्ञासुओं के मन में भ्रामक धारणा पैदा कर दी। अपनी बौद्धिक क्षमता के नशे में गूढ़ अर्थो में सायण जैसे आचार्यो की निन्दा करने में भी वे नहीं चूके। जबकि वैदिक साहित्य के मर्मज्ञ विद्वान आचार्य बलदेव उपाध्याय लिखते है कि 'हमारा तो यह निश्चित मत है कि वैदिक सम्प्रदाय के सच्चे ज्ञाता होने के कारण सायण का वेदभाष्य वास्तव में वेदार्थ की कुंजी है और वेद के दुर्गम दुर्ग में प्रवेश कराने केलिए यह विशाल सिंह द्वार हैं' इसी कारण कई भारतीय विद्वान उन पाश्चात्य विद्वानों पर यह आक्षेप लगाने लगे कि वे वेद के प्रति छद्मरूप से अश्रद्धा उत्पन्न करना चाहते हैं। पाश्चात्य विद्वासनों की नीयत क्या थी ? इस झमेले में न पड़े, तो भी यह तो मानना ही पड़ेगा कि वेदाध्'न के लिए ऋषियों की दृष्टि का ही अनुगमन करना आवश्यक हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. ऋग्वेद – संहिता भाग–1 पं. श्रीराम आचार्य।
2. वैदिक संहिता और संस्कृति पृ. 53

समकालीन काव्य की राजनीतिक पृष्ठभूमि

डॉ. कला जोशी * रेमी जायसवाल **

प्रस्तावना – साहित्य की उत्पत्ति परिवेश से होती है। प्रत्येक काव्यधारा अपने युग की परिस्थितियों के अनुसार अपना स्वरूप बदलती जाती है। कविता का यह स्वरूप विकास की दृष्टि से ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में विशिष्ट परिस्थितियों की देन होता है। अत: किसी भी काव्य धारा के मूल या उसमें निहित मूल चेतना को समझने के लिए उस युग विशेष की पृष्ठभूमि का विश्लेषण करना आवश्यक होता है।

सम सामयकिता के तत्व प्रयोगवाद एवं नयी कविता में प्रगाढ़ रूप से प्रखर होते गए। मात्र सौंदर्य को अखंड, निरपेक्ष एवं शाश्वत मानने की परिपाटी पर नये प्रश्न चिन्ह लगाकर आधुनिक हिन्दी काव्य में नव संदर्भ एवं दृष्टिकोण के साथ नया सौंदर्यबोध उद्‌भाषित हुआ।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद जहाँ मुक्ति का, खुलेपन का उल्लास होना चाहिए था, वहीं भारत विभाजन ने जन–जन को आंतकित कर दिया परिणामत: आजादी का हर्ष विभाजन की पीड़ा और उससे उपजे दंगों, दुर्घटनाओं में दुख में परिवर्तित हो गया। सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक मानवीय मूल्यों का ग्राफ तेजी से गिरने लगा। इस संत्रास को प्रयोगवाद से नयी कविता की धाराओं में देखा जा सकता है। इस प्रवाह ने समकालीन के आधुनिक भाव बोध के रूप में आम आदमी के स्वर एकाएक फूट पड़े और साहित्य सृष्टि में नयी लहर का जन्म हुआ।

स्वाधीनता के समय देश की मन:स्थिति पूर्णत: अस्थिर रही। यही नहीं कि सिर्फ विभाजन के परिणाम बहुत कुत्सित एवं वीभत्स रूप में हमारे ही सम्मुख आए वरन् ऐसी महान घटना को आत्मसात करने जैसे चरित्र बल का हममें नितांत अभाव था।

समकालीन काव्य की राजनीतिक परिस्थितियाँ – 15 अगस्त 1947 को भारत फिरंगियों के शासन से मुक्त तो हुआ लेकिन केवल प्रशासनिक दृष्टि से। स्वतंत्रता का जो रंगीन स्वप्न भारतीय जन साधारण देख रहा था। वह टूटकर छिन्न–भिन्न हो चुका था। वही शोषण, वही अन्याय, वही दमन, वही अत्याचार सत्ताधारियों की विलासिता, नेताओं की कथनी और करनी में विशाल अंतर। सन् 1960 का भारत नेहरू युग से गुजर रहा था। 1962 में चीन के साथ भारत के युद्ध ने इस देश की जनता का मोहभंग कर दिया। भारत को पराजय का मुहँ देखना पड़ा।

पंचशील के सिद्धांत व्यर्थ सिद्ध हुए, यह विश्वासघात की अत्यन्त भयानक घटना थी। आजादी के पूर्व देखे गए बुद्धिजीवितयों के स्वप्न जल्दी तिरोहित हो गए। राजनीतिक अवमूल्यन ने जनता को भ्रमित कर दिया। सामंतवादी शासन व्यवस्था के स्थान पर वयस्क मताधिकार पर आधारित धर्मनिरपेक्ष लोकतत्रीय शासन प्रणाली को लागू किया गया, किन्तु यह शासन व्यवस्था ऊपरी तौर पर आकर्षक थी, व्यवहारिक रूप में उतनी ही असफल मानी गयी, जिससे भारत का समृद्ध वर्ग ही लाभांवित हो सका। संविधान लागू होने के साथ–साथ पंचवर्षीय योजनाएँ भी बनी, जिनके सामान्य व्यक्ति के हित की बातें भी मात्र कागजों पर सिमट गई, इन योजनाओं में विदेशी ताकतों से सहयोग की अपेक्षाएं थी, शेष योजनाओं में स्वार्थी तत्वों के हित सर्वोपरि थे। बड़े–बड़े नवाबों, जमींदारों अवकाश प्राप्त सरकारी पदाधिकारी लोकतंत्र के जमाती हो गए।

स्वतंत्र भारत में साम्प्रदायिकता का सबसे घृणित रूप उभर कर आया। यद्यपि संविधान के आधार पर छुआछूत और जातिवाद समाप्त कर दिए गए थे, किन्तु व्यवहारिकता में इनमें वृद्धि ही हुई। इसका प्रमुख कारण तात्कालिन राजनीतिज्ञ थे, जो जनता के समक्ष जातिवाद की भर्त्सना करते थे किन्तु मत एवं शक्ति हथियाने के लिए उन्होंने ही जातिवाद को बढ़ावा दिया। हिन्दू महासभा, राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ, अकाली पंथ, मुस्लिम लीग जैसी साम्प्रदायिक शक्तियों का वर्चस्व बढ़ने लगा।

तत्कालीन राजनीतिक परिवेश में व्याप्त परिस्थितियों को डॉ जगदीश गुप्त के वक्तव्य से भलीभांति समझा जा सकता है –

'अपने देश के साथ मदांध शासन की गद्दारी, अनुशासन की मक्कार पैंतरेबाजी, सुविधाभोगी उच्च वर्ग को छोड़कर शेष वर्गों में व्याप्त मजबूरी, लाचारी, कमरतोड़ महंगाई में डूबी निराशा, कालेधन से खींच कर मिलावटों में फलता फूलता विषाक्त व्यापार, कर्ज की नींव पर ऊँची उठती आलीशान इमारतें, उनकी कठोर छाया में जानवर की तरह हांफता–खींचता बौना आदमी, पसलियों के निरंतर असंतोष से पागल खुद ही अपना घर फूंकती तरूणाई, राजनीतिक स्वतंत्रताओं निरर्थक बनाती अनेकमुखी दासता, शिक्षितों–अशिक्षितों की सांस्कृतिक रिक्तता, परम्परा को नया अर्थ देकर अपनाने और सहेज पाने में असमर्थ बुद्धिजीवी वर्ग, छद्म आधुनिकता की आंधी से उन्मूलित कलाकार, स्वार्थ शासन के लिए जाति तथा धर्म की संकीर्णता को बढ़ावा देने वाली दिखावटी धर्म निरपेक्षता, सरकारी दफ्तरों में असत्य की खूँटी पर टँगा हुआ आर्ष वाक्य 'सत्यमेव जयते कर्तव्य को पैरों से रौंदकर की जाने वाली अधिकारों की एकांगी लड़ाई, झूठे वायदों से सुवासित चुनाव की चालबाजियाँ, खोखली नारेबाजी के दलदल में फंसे वोटरों की किंकर्त्तव्यमूढ़ता, नेताओं की कपट–प्रपंचभरी बोझिल अस्थिर नीतियों के नीचे कुचली जनता का हाहाकार और ऐसी न जाने कितनी विषाक्त चीजें समकालीन कवित के संवेदनशील मानस को कोंचती कचोटती हुई उसकी वाणी की तेजस्विता और अस्मिता को ललकारती रहती है।'[1]

इस प्रकार अशांति और अराजकता राष्ट्रीय परिवेश में फैलती चली गयी। प्राय: प्रत्येक विभाग में भष्ट्राचार ने अपनी जड़े जमा ली थी। दण्ड व्यवस्था पर शक्तिशाली वर्ग का एकाधिकार होने से निर्दोष जनता के लिए स्थितियां कष्टप्रद होती गयी, पक्षपात खुले आम होने लगा था किन्तु इन सभी स्थितियों के विरोध के लिए एकता का भाव नहीं बन पाया।

* प्राध्यापक (हिन्दी) श्री अटल बिहारी वाजपेयी शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (हिन्दी) श्री अटल बिहारी वाजपेयी शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

भारत वर्ष में अब आजादी के साथ उठा सारा जोश ठंडा होता जा रहा था। प्रशासनिक दुर्बलताओं के साथ राजनीतिक अवमूल्यन का स्तर तेजी से नीचे आने लगा। इन मूल्यों के अवमूल्यन से पीड़ित जनता की पीड़ा को तत्कालीन कविताओं में देखा जा सकता है। स्वाधीनता के प्रति मोहभंग हो गया था। आजादी जनमानस के समक्ष एक प्रश्नचिन्ह की तरह उभरकर सामने आगई जिसे हम 'धूमिल' की इन काव्य पंक्तियों में समझ सकते है।

क्या आजादी सिर्फ तीन थके हुए रंगों का नाम है,
जिन्हें एक पहिया होता है
या इसका कोई खास मतलब होता है ?[2]

स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी काव्य में राजनीतिक मूल्यों को सर्वाधिक महत्व प्राप्त हुआ है। सम सामयिक जीवन पूर्णत: राजनीति से प्रभावित है अत: राजनीति परिवेश से जुड़ना प्राय: सभी कवियों का रचना परिवेश बनता गया। राजनीतिक सुझबूझ लिए इस दौर के कवियों का कृतित्व आम आदमी के राजनीतिक है। सत्य की पीड़ा की कथा सुनाता है। इस संदर्भ में कवि सर्वेश्वरदयाल सक्सेना जी का कथन दृष्टव्य है –

'रचनाकार यदि ईमानदारी से अपने रचना कर्म को करता है, तो वह राजनीतिक परिदृश्य से कटकर नहीं रह सकता। आज की जटिल एवं क्रूर परिस्थितियों से जूझने–लड़ने वाले कोई भी रचनाकार जिन्दगी के अर्थ को पाने के लिए अंतत: इस प्रश्न से कतराकर नहीं रह सकता कि देश में 'क्या होगा, क्या नहीं होगा' के साथ पूरा मानव भविष्य के साथ राजनीति से जुड़ गया है।'[3]

समकालीन कविता की पृष्ठ भूमि में अनेकानेक काव्य आंदोलन जन्में तेजी से प्रवाह में आए और स्वत: तिरोहित होकर नये युग की नयी विचार धारा में विलीन होते गए, किन्तु समकालीन कविता में विचार भूमि का प्राधान्य है। मनुष्य की यथार्थता के अंतिम छोर तक जुड़ी समकालीन कविता मनुष्य की वास्तविक स्थिति का बखान करती है और अपने उत्तरदायित्व का सजगता से निर्वाह करती है। गांव और शहर के बीच बटती/टूटती, घटती मानवीय संवेदना को बचाने की अधिक पुरजोर कोशिश समकालीन कविता में ही दिखलाई पड़ती है। समकालीन कविता की सबसे बड़ी विशिष्टता है कि समकालीन मनुष्य पूर्ववर्त्ती धारणाओं एवं चिंतन तथा परम्परा से नहीं बल्कि समकालीन विचारों एवं निष्कर्षो की समाधानों की यथार्थ एवं प्रयोग की परख से परखता है। हर पूर्वधारणा को भलीभांति चिंतन कर उसमें से सत्य एवं विकास के बीज निकाल लेता है। समकालीन कविता की सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक पृष्ठभूमि में समय के साथ वैचारिक भाव भूमि का प्राधान्य है और यथार्थ का उदात्त रूप। इसके समाधान की अभिव्यक्ति का केन्द्र भी मनुष्य का मनुष्य के लिए किया गया सार्थक प्रयास है जिसमें उसकी वेदना, निराशा और कुंठा तथा टूटन तथा उसके साथ ही उनके समाधान एवं सहयोग की संवेदना, बैचेनी भी समाहित है।

सामाजिक परिस्थितियाँ – साहित्य के भाव समाज से पूर्णत: प्रभावित होते है। सामाजिक जीवन से ही साहित्य की रचना सामग्री तैयार होती है क्योंकि सामाजिक भावों की प्रत्येक छाया प्रतिच्छाया हमें साहित्य में देखने को मिलती है। प्रत्येक युग का जीवंत साहित्य अपने युग के सामाजिक संबंधों और जनविश्वासों को व्यक्त करता है।

स्वतंत्रता प्राप्ति का समय वह समय था, जब समाज के सामने कई संकट एक साथ ही आ गए थे। परिणामत: सामाजिक धरातल बदला और नवीन परिप्रेक्ष्य में नयी मान्यताओं और परिस्थितियों ने जन्म लिया, जिससे समाज में निराशा, संघर्ष, गतिरोध और अनास्था का वातावरण तैयार हो गया।

1960 तक पहुँचते–पहुँचते मूल्यहीनता, लोलुपता, भष्ट्राचार तथा स्वार्थाधता ने भारतीय समाज को अनुशासनहीन एवं अव्यवस्थित बना दिया। आंतरिक संघर्षो ने व्यक्ति एवं परिवार को तथा बाह्य संघर्ष ने सामाजिक व्यवस्था को मूल्यहीन बना दिया था। झूठी नारेबाजी, आधारहीन व कोरे आश्वासनों से युवा पीढ़ी में लगातार असंतुष्टि बढ़ रही थी।

स्वतंत्र भारत में बुद्धिजीवियों की जो नई पीढ़ी उभरकर आई, उसने स्वयं को तथा समाज को घोर निराशा में डूबा पाया। निम्नवर्गीय तथा मध्यमवर्गीय समाज को विवश देखकर और उच्च वर्ग को घोर स्वार्थ में डूबा पाकर उस समय का साहित्यकार धैर्य नहीं रख पा रहा था। समाज में एक समस्या से दूसरी समस्या बढ़ी। बढ़ती जनसंख्या में बेरोजगारी बढ़ने लगी। स्वतंत्र भारत में आंदोलन की लहर धीमी पड़ती जा रही थी। समाज में निम्न स्तर की दशा शनै: शनै और नीचे जाने लगी। महँगाई और मुद्रा स्फीति के भीषण रूप से सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था और लचर होती गयी। चीन और पाकिस्तान के युद्धों ने इन समूची परिस्थितियों को अस्त व्यस्त कर दिया। इस समय के रचित साहित्य में अपने समय की चेतना एवं संवेदना को महसूस किया जा सकता है।

स्वातंत्र्योत्तर भारत में शिक्षा के बड़े–बड़े केन्द्र स्थापित किए गए, किन्तु उन पर अधिकार केवल निजी हाथों में सिमट गया था, कालांतर में शिक्षा के क्षेत्रों पर भी धर्म, जाति, वर्ग सम्प्रदायों का वर्चस्व देखा गया। इन स्थितियों के परिणाम स्वरूप प्रबुद्ध सामाजिक वर्ग में जो विक्षोभ उत्पन्न हुआ उसे राष्ट्रीय कवि रामधारी सिंह दिनकर द्वारा लिखित पुस्तक शुद्ध कविता की खोज की इन पंक्तियों द्वारा समझा जा सकता है – 'व्यवहारिक मनुष्य के लिए ईमानदारी कोई आवश्यक गुण नहीं है। प्रेमभावुक लोगों की बीमारी का नाम ही सिधाई, वीरता, सच्चाई और बलिदान उतने अच्छे नहीं, जितनी अच्छी चालाकी हो सकती है। सबसे बड़ा मूल्य वह है, जिसके सहारे गाड़ी चलती रहती है।'

स्वातंत्र्योत्तर कवि का सामाजिक बोध पूर्वक कवियों के सामाजिक बोध से परे था। स्वाधीनता के बाद हुई भारी उथलपुथल ने इन कवियों के प्रगतिवादी सामाजिक भावमूल्यों के भाव बोध को भी पूर्णतया बदल दिया। तत्कालीन सामाजिक स्थिति की गंभीरता को डॉ. रामदरश मिश्र के वक्तव्य में भलीभांति समझा जा सकता है – 'मामूलियत के प्रति गौरव का जो ज्वार उमड़ा पड़ा था, वह लौट गया। लोग फिर अपने–अपने स्वार्थ में संलग्न हो गए। सरकार और समाज के बीच जो मामूलियत का पठार उभरा था, वह पुन: धीरे–धीरे धसक गया और अफसर, नेताओं, पूँजीवादियों का अभिजात गौरव मामूलियत के खून से सींची धरती को बोने काटने लगा।'

1960 के बाद से विभाजन की समस्या मानों व्यक्ति की समस्या बनती गयी। क्योंकि वह प्राचीन एवं रूढ़िगत मान्यताओं का निर्वाह नहीं कर पा रहा था। समकालीन कविता का परिवेश अपने समय के सामाजिक अंर्तविरोधों का ताना बाना है। कविता के स्वर में यहीं से समकालीन कविता में सामाजिक मूल्यों के प्रति चिंता एवं इन मूल्यों के प्रति चेतना का प्रकटीकरण हुआ।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. त्रयी : एक 1974, त्रयी : एक नयी शुरूआत, पृ. 11, 12
2. धूमिल और उनका काव्य संघर्ष, साठोत्तरी हिन्दी कविता और धूमिल, पृ. 34
3. कवि के साथ अंतरंग साक्षात्कार, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, पृ. 249
4. शुद्ध कविता की खोज, (दिनकर) पृ. 218
5. हिन्दी कविता तीन दशक पूर्व, पृ. 205

मुक्तिबोध के गद्य साहित्य पर एक दृष्टि

डॉ. अनसूया अग्रवाल *

प्रस्तावना – पर्वत हो रही पीर को पिघलाने के लिए दृढ़ संकल्पित विलक्षण व्यक्तित्व का नाम है 'मुक्तिबोध!' 13 नवम्बर 1917 को श्योपुर, ग्वालियर (म. प्र.) में जन्में गजानन माधव का उपनाम था..... 'मुक्तिबोध।' हिन्दी के विलक्षण रचनाकार मुक्तिबोध- एक ऐसे बहुआयामी व्यक्तित्व के स्वामी हैं, जिन्होंने हिंदी की विविध विधाओं-कविता, कहानी, निबंध, इतिहास और आलोचना आदि का लेखन ही नहीं किया अपितु आलोचना, कविता और कहानी में युग बदल देने वाला काम भी किया है। संकल्पधर्मा रचनाकार व्यक्तित्व के धनी मुक्तिबोध को प्रगतिशील कविता और नयी कविता के बीच का एक पुल माना जाता है। समष्टिगत् सामाजिक संदर्भो को सीधे-सीधे साहित्य में उकेरने वाले; साहित्य जगत् के इस सशक्त स्तम्भ ने अपने लेखन की शुरूआत छायावादी युग से प्रभावित होकर की और फिर नई कविता पर काव्य सृजन करते हुए जनवादी संदर्भो में यथार्थवादी दृष्टि का विकास करते हुए अग्रणी रचनाओं से साहित्य भंडार को समृद्ध किया। मूल रूप में कवि रहे मुक्तिबोध की आलोचना उनके कवि व्यक्तित्व से ही नि:सृत और परिभाषित है।

हिंदी कविता में मुक्तिबोध का पदार्पण उस समय हुआ जब छायावाद का अवसान हो रहा था और प्रगतिवाद अपने वर्चस्व को स्थापित करने के लिए प्रयासरत् था। डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार- 'समाज में गतिशीलता का बना रहना अच्छा है। प्रवाह सर्वत्र शोध शक्ति का काम करता है- नदी में भी, जीवन में भी, साहित्य में भी।' ('सम्मेलन' पत्रिका संवत् 2009, आधुनिक लेखकों का उत्तरदायित्व, डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी) प्रवाह, गति यानि प्रगति आगे बढ़ने का संकेत है। साहित्य के क्षेत्र में छायावादोपरांत समय प्रगतिवाद कहलाया। 'प्रगतिवाद' जीवन के भौतिक संघर्षो को व्यापक धरातल प्रदान करने वाला हिन्दी काव्य की मुख्य धारा है। प्रगतिवादी साहित्य एंजेल्स और मार्क्स के यथार्थवादी सिद्धांतों से प्रभावित है। मुक्तिबोध की भी मार्क्सवादी दर्शन के प्रति आस्था है। और यह आस्था भावुकतावश न होकर उनके चिंतन और गंभीर अध्ययन तथा उनकी अनुभूत वास्तविकताओं के आधार पर विकसित हुई है। ''उनके आंतरिक विनष्ट शांति के और शारीरिक ध्वंस के उस समय में व्यक्तिवाद कवच की भांति काम करता था किंतु इसी काल में एक अनुभव व्यवस्थित तत्व प्रणाली अथवा जीवन दर्शन आत्मसात् कर लेने की दुर्दुम प्यास भी उनके मन में हमेशा रहा करती थी। परिणामत: स्वयं उन्हीं के शब्दों में- 'क्रमश: मेरा झुकाव मार्क्सवाद की ओर हुआ। अधिक वैज्ञानिक, अधिक मूर्त और अधिक तेजस्वी दृष्टिकोण मुझे प्राप्त हुआ।'[1]

मुक्तिाबोध के लिए साहित्य आत्मसंघर्ष और सामाजिक रूपान्तरण का एक हथियार है। कथाकार, निबंधकार और समीक्षक के अतिरिक्त युग के महान कवि के रूप में भी अपनी पहचान बनाने वाले कद्दावर साहित्यिक व्यक्तित्व मुक्तिबोध के गद्य साहित्य में 'एक साहित्यिक की डायरी', 'नयी कविता का आत्मसंघर्ष' और 'नये साहित्य का सौंदर्यशास्त्र' जैसे प्रतिबद्ध विचारों के कोश ग्रंथों का नाम प्रमुखता से लिया जाता है। वहीं शमशेर और सुमित्रा नंदन पंत पर केंद्रित उनके निबंध तथा 'कामायनी एक पुनर्विचार' नामक समीक्षा कृति उनके श्रेष्ठ विचारक होने के परिचायक हैं। उनके कहानी संग्रह 'काठ का सपना' और 'सतह से उठता आदमी' उनके चिंतक व्यक्तित्व तथा उनका लघु उपन्यास 'विपात्र' उनके आत्ममंथन की कृति कही जा सकती हैं।

'साहित्य जीवन की प्रतिच्छाया है, तो युग का दिशा निर्देशक भी है। किसी भी कृति से पहले विचार की उत्पत्ति होती है और विचार के निर्माण में साहित्य का बड़ा भारी हाथ होता है।'[2] साहित्य अपने नाम के अनुरूप सबके हित की बात करता है। साहित्य सबके कल्याण का भाव लेकर विकसित और परिपुष्ट होता है; उसकी परिधि विस्तृत होती है। वह सबको साथ लेकर चलता है। विचारक, कथाकार मुक्तिबोध का साहित्य भी सामाजिक जागरूकता एवं समाज हित के लिए प्रतिबद्ध है। उनका साहित्य विश्व के सर्वहारा वर्ग, मजदूर वर्ग, किसान वर्ग के हित चिंतन के लिए कटिबद्ध हैं। मुक्तिबोध साहित्य को रोजगार की सामग्री नहीं मानते। उनकी दृष्टि में साहित्य आत्मसंघर्ष और सामाजिक रूपान्तरण का हथियार है। राजनैतिक रूझान भी उनके साहित्य में भरपूर है। उनका साहित्य समाज से उपजा और समाज के शोषित- दलित जीवनधारा से जुड़कर परिपुष्ट हुआ। उन्होंने विश्व दृष्टि के आलोक में अपने रचनात्मक उद्देश्य को तय किया- 'नई कविता के वस्तु तत्व जो प्राय: व्यक्तिगत, सामाजिक यथार्थ से पृथक, स्वायत्त और व्यक्तिपरक हुआ करते थे और शीतयुद्ध से निर्धारित होते थे, मुक्तिबोध ने उस वस्तु तत्व को विकसित करते हुए समाज से, समाज के शोषित- दलित जीवनधारा से जोड़ा और विश्व दृष्टि के आलोक में अपने रचनात्मक उद्देश्य को तय किया था।'[3] पर उनके साहित्य को पढ़कर ऐसा लगता है कि एक ही पात्र अलग- अलग नामों, अलग- अलग रूपों में तथा लिंग बदलकर उपस्थित होता है। कभी लगता है, वह पात्र और कोई नहीं मुक्तिबोध ही हैं। उनके कहानी संग्रह 'सतह से उठता आदमी' का पात्र मध्यवर्गीय समाज का पक्षधर है। इस संग्रह के प्रमुख पात्र रामनारायण के अनेक रूप हैं। अनेक रूपों में अपनी उपस्थिति दर्ज करता हुआ यह पात्र एक अजीब तरह का खौफ और भय उत्पन्न करता है। स्वयं कहानीकार के शब्दों में- 'उसे लगा कि रामनारायण में अजीब रहस्य है, एक अजीब भुतहापन है, बाबापन है। उसे देखकर श्मशान की याद आती है, श्मशान की राख नंगी देह पर मलने वाले तांत्रिक योगियों की सी झलक दिखाई देती है।'[4] यह पात्र मध्यवर्गीय

* प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (हिन्दी) शासकीय म. व. स्नातकोत्तर महाविद्यालय, महासमुंद (छ.ग.) भारत

आध्यात्मिक संकट का पक्षधर है, भोक्ता है और विरोधी भी है। यही एक पात्र अलग- अलग रूपों में लिंग परिवर्तन कर उपस्थित होता सा प्रतीत होता है। मृतप्राय से लगने वाले ये खौफनाक पात्र कहानी के अंतिम प्रभाव में एक व्यवस्था के प्रति भयंकर नफरत पैदा करते हैं। यही पात्र कहानियों में नहीं अपितु डायरी और कविताओं के अतिरिक्त निबंधों में मौजूद दिखाई देता है। रामनारायण में जो अजीब रहस्य है, वहीं मुक्तिबोध की कविता- कहानी 'ब्रह्मराक्षस' में भी है, बह्मराक्षस मुखौटाधारी है। कविता में यह ब्रह्मराक्षस एक बुद्धिजीवी है तो कहानी में अभिशप्त बुद्धिजीवी। ब्रह्मराक्षस कविता में जहां मुक्तिबोध ने ब्रह्मराक्षस मिथक के जरिए बुद्धिजीवी वर्ग के द्वंद्व और आम जनता से उसके अलगाव की पीड़ा का कारूणिक चित्रण किया है वहीं कहानी का बुद्धिजीवी अच्छे एवं बुरे के संघर्ष से भी उग्रतर; अच्छे और उससे अधिक अच्छे के बीच का संघर्ष है। यानि कविता हो या कहानी- यह अभिशापग्रस्तता कहीं भी पीछा नहीं छोड़ती। बौद्धिक वर्ग के इर्द- गिर्द मुक्तिबोध की कलम लगातार घुमती है। एक साहित्यिक की डायरी में सड़क को लेकर एक बातचीत में मुक्तिबोध लिखते हैं- 'अपना भाव दबा डालने की मुझे आदत है, यह मेरी बौद्धिक संस्कृति है। इसकी दो विशेषताएँ हैं। एक भीतर- ही- भीतर दूसरों की सूक्ष्म अवमानना करना। दूसरी, हमेशा अविश्वास लेकर चलना, संश्यात्मा बने रहना।'(5) हर समय संश्यग्रस्त रहना और अविश्वास में जीना ही शायद बुद्धिजीवी का अभिशाप है। निरंतर अंदर और बाहर का द्वंद्व। डॉ. सुरेश गौतम के अनुसार-''तमसो मा ज्योतिर्गमय' की आकांक्षा तो उसके मन में है, लेकिन उसका आचरण व्यवहार ठीक इसके उलट है, जिसका परिणाम होता है अंतर- बाह्यका द्वंद्व, संघर्ष।'(6) इस तरह यदि कहें कि उनके गद्य साहित्य में निम्नवर्गीय विडम्बनाओं के बीच बुद्धिजीवियों के यथार्थ से जुड़े समाजिक सवाल हैं; तो गलत नहीं होगा।

हिन्दी आलोचना में महत्वपूर्ण योगदान देने वाले रचनाकार मुक्तिबोध की आलोचनात्मक श्रेष्ठ कृति का नाम है- 'कामायनी: एक पुनर्विचार।' मुक्तिबोध ने इस ग्रंथ के जरिए कामायनी पर चली आ रही पूर्व की बहसों को एक नये स्तर तक उठा दिया। यह ग्रंथ सांस्कृतिक विरासत के प्रश्न को उपस्थित करता हैं। मुक्तिबोध के अनुसार कामायनी की कहानी एक विशाल फैंटेसी है, जिसमें ढहते हुए सामंती मूल्यों की छाया को स्पष्टत: देखा जा सकता है। उनकी आलोचन दृष्टि का पैनापन और मौलिकता असंदिग्ध है। उनकी सैद्धांतिक और व्यवहारिक समीक्षा बेजोड़ है। जयशंकर प्रसाद, कुंवर नारायण बैचेन, शमशेर जैसे कवियों पर उन्होंने जो आलोचना दृष्टि प्रस्तुत की है; उसमें न केवल तेजस्विता और विचारोत्तोजकता है अपितु विरोधी दृष्टि रखने वाले भी बहुत कुछ सोच सकते हैं। अपनी आलोचना द्वारा उन्होंने उन तथ्यों का उद्धाटित किया जिनकी ओर जन साधारण का ध्यान नहीं जाता। 'जड़ीभूत सौंदर्याभिरूचि' तथा 'व्यक्ति के अंत:करण के संस्कार में उसके परिवार का योगदान' उदाहरण के रूप में गिनाए जा सकते हैं। उन्होंने साहित्य की रचनाप्रक्रिया के बारे में भी महत्वपूर्ण लेखन किया। रचना प्रक्रिया के संदर्भ में 'कला का तीसरा क्षण' हिन्दी साहित्य की बड़ी उपलब्धि है। खासकर फैंटेसी का जैसा विवेचन उन्होंने किया है, वह अत्यंत गहन और तात्विक है। उन्होंने रामधारी सिंह की कृति 'उर्वशी' पर चली बहस में भी सार्थक हस्तक्षेप करते हुए उर्वशी को महिमामंडित करने का तीक्ष्ण प्रतिवाद किया। भक्ति आंदोलन पर उनका मूल्यांकन भी नयी तरह का था जिसमें उन्होंने स्थापित किया कि भक्ति आंदोलन मूलत: शोषित जातियों का शोषक जातियों के खिलाफ विद्रोह था। बाद में संपन्न वर्ग ने इस आंदोलन पर नियंत्रण कर लिया। जिससे भक्ति आंदोलन पूरी तरह बिखर गया।

वहीं मुक्तिबोध की कहानियाँ उनकी कविताओं का ही विस्तार लगती हैं। जटिलता और संश्लिष्ट बिंबों वाली भाषा उनकी कविता की विशिष्टता रही है, वही कहानियों में भी दिखाई देती है। उनकी भाषा बड़ी जटिल है। उनकी रचनाएं सरस नहीं है, सुखद नहीं हैं। वे हमें झकझोर देती हैं, गुदगुदाती या सहलाती नहीं हैं। वे मात्र अर्थग्रहण की मांग नहीं करती, अधिकार पूर्वक आचरण की भी मांग करती हैं। ''उनकी रचनाओं में बैचेन मन की अभिव्यक्ति है। उनका सत्य और मूल्य उसी जीव- स्थिति में छिपा है।'(7) उनके अनुसार मानव से बढ़कर कोई शक्ति नहीं है। परमात्मा पर आरोपित समस्त अद्भूत और महान् विशेषताओं का स्वामी केवल मानव है और उससे जुड़े प्रश्नों का उत्तर या समाधान उससे बाहर और कहीं प्राप्त होने वाला नहीं है।

कुल मिलाकर मुक्तिबोध एक क्रांतिदर्शी रचनाकार हैं। युगीन प्रभावों को ग्रहण कर प्रौढ़ मानसिक प्रतिक्रियाओं के कारण उनकी रचनाएँ ज्ञान और संवेदना के स्तर पर सशक्त है। शायद इसलिए ही उनमें अंतर्द्वन्द्वों से उत्पन्न भय, संत्रास, आक्रोश और विद्रोह के अतिरिक्त संघर्ष भावना के विविध रूप है। जन मुक्ति और जनसंघर्ष के प्रबल पक्षधर मुक्तिबोध का यथार्थ दर्शन अत्यंत परिपक्व है। अशोक बाजपेयी के शब्दों में- 'अपने समय के अंधेरे को टटोलना और उस अंधेरे में अपनी हिस्सेदारी, अपनी शिरकत को, आत्म- निर्ममता को स्वीकार करना, मुक्तिबोध से सीखा जा सकता है। बीसवीं सदी के महान भारतीय लेखकों में मुक्तिबोध का नाम हमेशा रहेगा।'(8)

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. समकालीन काव्य संकलन- श्री महावीर प्रकाशन, ग्वालियर, पृ. 68
2. मार्क्स, प्रेमचंद, प्रसाद, मुक्तिबोध- डॉ. सुरेश गौतम, पृ. 386, दिव्यम् प्रकाशन दिल्ली
3. आधुनिक हिन्दी कविता और गीत परंपरा- योगेन्द्र गोयल, पृ. 60, वर्धमान महावीर ओपन विश्वविद्यालय, कोटा
4. सतह से उठता आदमी- मुक्तिबोध, पृ. 134
5. एक साहित्यिक की डायरी- मुक्तिबोध, पृ. 54
6. मार्क्स, प्रेमचंद, प्रसाद, मुक्तिबोध- डॉ. सुरेश गौतम, पृ. 412, दिव्यम् प्रकाशन दिल्ली
7. मुक्तिबोध की कविता- मध्यवर्गीय संघर्ष और विषमताओं की ताकत का आख्यान- शैलेन्द्र चौहान, जन चेतना की पत्रिका फाल्गुन विश्व। 23 दिस. 2014
8. मुक्तिबोध: एक गोत्रहीन कवि- अशोक बाजपेयी, बीबीसी हिन्दी, 25 दिस. 2014)

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to September 2017, Vol. I

बादल सरकार और मोहन राकेश का नाट्य चिंतन - तुलनात्मक अवलोकन

डॉ. कौशल्या शर्मा *

शोध सारांश - नाटककार समाज का अभिन्न हिस्सा है। अत: अपने वातावरण एवं तत्कालीन समाज, सामाजिक परिस्थितियों से जो कुछ ग्रहण करता है, वो नाटक के रूप में उनके साहित्य में स्वत: ही अभिव्यक्त हो जाता है।

प्रस्तावना - नाटक एक साहित्यिक विद्या होने के कारण सामाजिक एवं तत्कालीन वर्ग बोध से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता। इसी कारण भारतीय नाट्य साहित्य ने समय-समय पर अपनी आत्मा, रूप और रंग को बदला है। यह कभी भी भाषा के बंधन में बंध ना सकी, तभी तो चाहे वह हिन्दी नाट्य हो अथवा बंगला, भाषा के विभेद में बंधने के बजाए अपने उदेश्यों को साहित्य के माध्यम से समाज में प्रतिष्ठापित करने में अधिक प्रयासरत दिखती है। वास्तव में व्यक्ति और समाज का संबंध बाहरी कम आंतरिक अधिक है। व्यक्ति स्वयं समाज, उसके रीति-रिवाज का निर्माण करता है एवं स्वयं ही उसके कठोर नियमों के विरूद्ध आवाज उठाता है। हम ऐसे दो प्रसिद्ध नाटककारों को उनकी सोच एवं प्रयासों के साथ आस-पास रखकर देखते है कि दोनों में भाषा एवं साधनों की कितनी भी दूरी रही हो पर दोनों ने अपने आत्मिक स्वरों को मुखरित करने के लिए नाटक का ही सहारा लिया है।

विषय प्रवेश - बंगाल के बादल सरकार आज किसी परिचय के मोहताज नहीं। उन्होंने भारत में एक अलग किस्म के थिएटर को जन्म दिया, जिसे थर्ड थिएटर और साइको फिजिकल थिएटर (मनो-शारीरिक रंगमंच) के नाम से जाना जाता है। उन्होंने परिक्रमा कार्यक्रम के माध्यम से बंगाल के अनेक जिलों में जाकर नाटक किया एवं स्वयं वहॉ के ग्रामीण जनों से सीधा रंग संपर्क बनाया, उन्होंने देशी नाट्य विद्या के माध्यम से अभिजात्य नाट्य जगत को भी चुनौती दी स्वयं उनके शब्दों में - ''मेरे नाटक संदेश मेरा संदेश देते हैं। परन्तु मैं महसूस करता हूँ कि इन नाटकों को यदि मैं आज लिखता तो इनका फार्म और नेरेशन दूसरा होता। जिस पथ पर मैं अब तक चला और जो नवाचार मैंने भारतीय रंगमंच में किया, उस पर मुझे आज भी विश्वास हैं।'[1]

उदेश्य - बादल सरकार ने आंगन, छत, नुक्कड़ और गॉवों में नाटकों को पहुंचाकर नाटक को व्यापक बनाया। उनके नाटकों में कलाकारों और दर्शकों के बीच कोई फर्क नहीं होता है। उन्होंने थिएटर की शुरूआत अपने परिवार वालों के साथ मिलकर किया था। अपने घर से साड़ी-कपड़े ले जाकर उसी से स्टेज बनाकर पूरी लगन से नाटक तैयार करते थे। इतने सादे एवं जमीन से जुड़ा हुआ व्यक्ति बंगला नाट्य जगत को इतनी उपलब्धि के आस्मां तक पहुँचा दिया, यह बादल सरकार जैसे उच्च व्यक्तित्व का ही कमाल है।

सन् 1963 में उन्होंने दो नाटकों का निर्देशन किया। ये नाटक थे - एवम् इंद्रजीत और वल्लभपुर की रूपकथा। इन नाटकों के साथ ही बादल सरकार का नाम हर रंगकर्मी के लिए आदर्श बन गया। नुक्कड़ नाटक के उनके मुहावरे को राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय तक में सम्मान मिला। बादल सरकार का नाट्य व्यवस्था के विरूद्ध उद्घोष है। उनकी ऊर्जा हर युवा को आकर्षित करती है। तभी तो उनके नाटक समाज में अत्याचार और बिखरती समाज व्यवस्था के विरूद्ध तीखा प्रतिरोध करते हैं। समाज और राजनीति को विद्रूपताओं पर उनके नाटक गहरी चोट करते हैं।

विषय विस्तार - बादल सरकार के नाटक एवम् इंद्रजीत का भारतीय रंगकर्म में एक विशिष्ट स्थान है मूलत: बांग्ला में लिखे इस नाटक का अनेक भारतीय भाषाओं में अनुवाद हो चुका है। विभिन्न भाषाओं के रंगकर्म में इस नाटक ने बार-बार मंचित होकर प्रशंसा और प्रसिद्धि बटोरी है। इस नाटक की लोकप्रियता का कारण इसके कथा एवं शिल्प में निहित है। युवा वर्ग की महत्वाकांक्षा, परवर्ती कुंठा एवं निराशा का यथार्थपरक चित्रण इसमें किया गया है। नाटक अपनी निष्पति में रेखांकित करता है कि मृत्यु का वरण समस्या का समाधान नहीं है। यह जानते हुए भी कि हमारे पास कोई संबल नहीं, हमें जीना है। नाटक का कथ्य अत्यंत यथार्थवादी होते हुए भी शिल्प प्रतीकात्मक है। ''जीवन के दस-पंद्रह वर्षो की अवधि को समेटे हुए यह नाटक जीने की जिद का तर्क है। बादल सरकार की काव्यात्मक भाषा सम्प्रेषण और अर्थ दोनों को समृद्ध करती है। नए कलेवर में प्रस्तुत यह प्रसिद्ध नाटक पाठकों एवं रंगकमियों को खूब भाएगा, ऐसा विश्वास किया जा सकता है। प्रसिद्ध रंगकर्मी डॉ0 प्रतिभा अग्रवाल ने बड़े ही मनोयोगपूर्वक एवम इन्द्रजीत का अनुवाद किया है। एवं अपने इस कार्य को उन्होंने खुद ही सर्वश्रेष्ट माना है।' ....मेरे द्वारा किए गए अनुवादों में यह सर्वश्रेष्ठ है।'[2]

बादल सरकार के अनुसार शहरी रंगमंच पश्चिम से प्रभावित है और ग्रामीण रंगमंच पारंपरिक शैलियों से और दोनों में ही अंतर्वस्तु की कर्मी है। 'शहरी रंगमंच अपने प्रोसिनियम दायरे में बंधा है, जबकि ग्रामीण या पारंपरिक रंगमंच अपनी पुरानी शैलियों में बंधा रहता है, जिसमें प्रखर राजनीतिक चेतना का अभाव है। बादल सरकार ने आधुनिक रंगमंच को प्रोसिनियम दायरे से बाहर निकालकर आम लोगों के बीच पहुँचाया।' [3] दूसरी और मोहन राकेश ने 'लहरों के राजहंस' में एक ऐसे कथानक का नाटकीय पुनराख्यान किया है, जिसमें सांसारिक सुखों और आध्यात्मिक शांति के पारस्परिक विरोध तथा उनके बीच खड़े हुए व्यक्ति के द्वारा निर्णय लेने का अनिवार्य इन्द्व निहित है। इस द्वंद का दूसरा पक्ष स्त्री और पुरूष के पारस्परिक संबंधों का अंतर्विरोध है। जीवन के प्रेय और श्रेय के बीच एक कृत्रिम और आरोपित

* सहायक प्राध्यापक, दोराण्डा महाविद्यालय,रांची (झारखण्ड) भारत

द्वन्द्व है, जिसके कारण व्यक्ति के लिए चुनाव कठिन हो जाता है और उसके चुनाव करने की स्वतंत्रता भी नहीं रह जाती। अनिश्चित, अस्थिर और संशयी मन वाले नंद का यही चुनाव, यातना ही इस नाटक में उलक्षे हुए ऐसे ही अनेक प्रश्नों का इस कृति में नए भाव–बोध के परिवेश में परीक्षण किया गया है।

दूसरे पक्ष से देखे तो मोहन राकेश का यह नाटक 'लहरों के राजहंस' कुछ अंशों में का एक दिन' की उपलब्धियों को अधिक और गहरा करता हैं। 'इसमें भी सुदूर अतीत के एक आधार पर आज के मनुष्य की बेचैनी और अन्तर्द्वन्द्व संप्रोषित है। हर व्यक्ति को अपनी मुक्ति का मार्ग स्वयं ही तलाशनी पड़ती है। दूसरों के द्वारा खोजा गया पथ चाहे जितना श्रद्धास्पद हो, चाहे जितना आकर्षक और मोहक हो, किसी संवेदनशील व्यक्ति का समाधान नहीं कर सकता। इसलिए नाटक के अंत में नंद बुद्ध द्वारा बलपूर्वक थोपा गया भिक्षुत्व अस्वीकार कर देता है, यही नहीं वो सुंदरी के आत्मसंतुष्ट और छोटे वृत में आबद्ध किन्तु आकर्षक जीवन को भी त्यागकर चला जाता है। अपनी मुक्ति का मार्ग उसे स्वयं ही रचना होगा।

नाटक में मोहन राकेश कार्य–व्यापार को दैनंदिनी क्रियाकलाप से उठाकर एक सार्थक अनुभूति और उसके भीतर किसी अर्थ की खोज के स्तर पर ले जा सके हैं। किन्तु इसकी विषय व्स्तु में कहीं–कहीं पर्याप्त सधनता, एकाग्रता और संगति की कमी भी खलती है। 'शुरूआत में नंद का चरित्र कमजोर, एक लुब्ध मुग्ध, किसी हद एक संयोजित और संतुलित युक्त, पति मात्र लगता है, जबकि दूसरे अंक में वह अंत: संधर्ष से धिरा हुआ आत्मवेदना से पीड़ित पात्र बनकर उभरता है। नाटक के तीसरे अंक में संधर्ष की आकृति तो स्पष्ट होने लगती है, किन्तु वह किसी तीव्रता या गहराई का आयाम प्राप्त करने के बजाय अकस्मात ही नंद और सुंदरी के बीच एक प्रकार की गलतफहमी में खो जाता हैं दोनों एक दूसरे के संघर्ष का, व्यक्तित्वों के विस्फोट का सामना, नहीं करते और नंद बड़ी विचित्र सी कायरता से प्ररित होकर चुपचाप घर छोड़ कर चला जाता है।'[4]

मोहन राकेश, हिन्दी जगत के लिए, कभी न भुला सकने वाला नाम है। कथात्मक विद्या और नाट्य–विद्या दोनों पर ही उनकी गहरी और अद्भुत पकड़ भी लहरों के राजहंस, आधे–अधूरे जैसे अपने लोकप्रिय नाटकों के कारण ही संक्षिप्त से जीवन काल में ही दुर्लभ ख्याति अर्जित कर ली थी उन्होंने। उनकी नाट्यकृतियों से साहित्य तो समृद्ध हुआ ही, भारतीय रंगमंच भी धनवाह हुआ है।

'हिन्दी नाट्य क्षितिज पर मोहन राकेश का उदय उस समय हुआ, जब स्वाधीनता के बाद पचास के दशक में सांस्कृतिक पुनर्जागरण का ज्वार देश में जीवन के हर क्षेत्र को स्पन्दित कर रहा था। उनके नाटकों ने न सिर्फ नाटक का आस्वाद, तेवर और स्तर ही बदल दिया, बल्कि हिन्दी रंगमंच की दिशा को भी प्रभावित किया। हिन्दी नाटक इसके पहले प्रतिभावान रचनाकारों के बावजूद सस्ते मनोरंजन का साधन बना हुआ था। पचास के दशक में उसे एक अत्यंत ही समर्थ किन्तु जटिल और परिश्रम तथा प्रशिक्षण–साध्य कला माध्यम के रूप में स्वीकृति मिलनी शुरू हुई।'[5]

निष्कर्ष – बंगला नाट्य संसार में जिस अभिव्यक्ति एवं अनुभूति का परिचय बादल सरकार ने दिया है. हिन्दी नाट्य जगत में वहीं कार्य मोहन राकेश ने सम्पन्न किया। दोनों ही रचनाकारों ने अपने संपूर्ण जीवन उपलब्धियों को नाट्य रचना के संसार में होम करने (आहुति देने) का कार्य किया है।

चाहे वह बादल सरकार की एवम् इंद्रजीत हो अथवा मोहन राकेश की लहरों के राजहंस दोनों ही नाटकों में भाषा में ऐसा नाटकीय प्रयोग है साथ ही साथ शब्दों की अपूर्व मितव्ययता भी है। दोनों ही नाटकों में अलग–अलग स्तरों पर चलने वाले पारस्परिक आकर्षण उद्धेग तथा उसके तनाव की बड़ी सूक्ष्मता, संवेदनशीलता और कुशलता के साथ प्रस्तुत किया गया है। दोनों ही नाटक एवं नाटककार 20 वीं सदी के साहित्य को अनमोल धरोहर है।

संदर्भ ग्रथ सूची :-

1. नितप्रिया प्रलय, परिवर्तन: साहित्य, संस्कृति और सिनेमा की वैचारिकों ISSN 2455–5169, सितंबर 2016, (त्रैमासिक ई–पत्रिका)
2. हषकिश, सुलभ, रंगमंच का जनतंत्र, राजकमल प्रकाशन समूह, दिल्ली – 6।
3. सुब्रामनियम लक्ष्मी, तीसरी दृष्टि: बादल सरकार का थियेटर, हर आनंद पब्लिकेशन, झरसश – 61, वर्ष–2002।
4. ज्योतिश्वर मिश्रा, स्वातंत्र्योतर हिन्दी नाटक मूल्य–संक्रमण, पृष्ट–210, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली – 6
5. बच्पन सिंह, हिन्दी नाटक, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली – 6।

****

राष्ट्र की जरूरत के रचनाकार - राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त

डॉ. सरोज जैन *

प्रस्तावना - भारत में राष्ट्रकवि तो अनेक हुए हैं पर राष्ट्रकवि के नाम से केवल एक ही व्यक्ति का बोध होता है और वह नाम है - श्री मैथिलीशरण गुप्त। उनकी एक पुस्तक भारत-भारती ने न केवल भारत बल्कि जहाँ-जहाँ भारतीय गए थे, फीजी हो या मारीशस, वर्मा हो या मलाया सभी में अपनी अपूर्व देश-भक्ति जागृत कर दी। संसार में लेखक तो अनेक हुए जो अपनी एक ही कृति से विख्यात हो गए। हिंदी के चन्द्रधर शर्मा गुलेरी की एक कहानी ने उन्हें अमरता प्रदान कर दी। अंग्रेजी कवि ग्रे की एक एलेजी उन्हें अमर कीर्तिदायिनी हुई। इस दृष्टि से यदि मैथिलीशरण गुप्त जी ने भारत-भारती के अलावा कुछ न लिखा होता तो भी उनकी कीर्ति सर्वत्र व्याप्त रहती।

राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त जी का जन्म श्रावण माह की हरियाली तीज और अंग्रेजी माह की 3 अगस्त 1886 को चिरगाँव जिला झाँसी में हुआ था। गुप्त जी की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि उन्होंने वह लिखा जिसकी राष्ट्र को आवश्यकता थी। ब्रज भाषा प्रेमी होते हुए भी उन्होंने खड़ी बोली में साहित्य सृजन किया जिसे हम आधुनिक हिंदी के नाम से जानते हैं। गुप्त जी ने जिस समय साहित्य के क्षेत्र में पदार्पण किया उस समय गद्य की भाषा खड़ी बोली थी और पद्य की बृजभाषा थी। ऐसे समय जब खड़ी बोली का रूप स्थिर न था उस समय उन्होंने उसे शैशवावस्था में उंगली पकड़ कर चलना सिखाते हुए स्थिरता, प्रौढ़ता और प्रांजलता प्रदान कर डॉ. ग्रियर्सन के इस कथन को निर्मूल सिद्ध कर दिया कि खड़ी बोली में काव्य-रचना संभव नहीं। उन्होंने खड़ी बोली को काव्य की भाषा बनाकर अपने विचारों को जन-जन तक पहुँचाया।

गुप्त जी को संस्कृत, बंगला, उर्दू भाषा का ज्ञान था। अंग्रेजी के जानकार होते हुए भी अपने आपको उससे अपरिचित बताते थे। यह उनकी देश-भक्ति का ही सूचक है। उनके साहित्य में बंगला साहित्य का लालित्य, संस्कृत की गरिमा और उर्दू की रवानगी का समावेश है। राष्ट्रीय रचनाओं को छोड़कर उनकी शेष रचनाएँ रामायण, महाभारत, श्रीमद्‌भागवत या बुद्ध चरित्र पर आधारित हैं। इन रचनाओं को पढ़ने से हमें न केवल मूल रचनाओं के मूल अर्थ ही प्राप्त होते हैं बल्कि उनकी गरिमा वर्णन शैली और भी एक नए रूप में प्राप्त होती है। इससे ज्ञात होता है कि उन्होंने पूरे साहित्य को आत्मसात्‌ कर लिया था।

बहुभाषाविद्‌ मैथिलीशरण गुप्त जी में सभी धर्मों कि प्रति आदर भाव था। इसीलिए उन्होंने हिन्दुओं के आराध्य देव राम-भक्तों के लिए साकेत, कृष्ण भक्तों के लिए 'द्वापर', मुसलमानों की 'काबा-कर्बला' और सिख गुरुओं की गौरवशाली परंपरा को गुरु कुल' में वर्णित किया है। गुप्त जी लोक कवि हैं, जनवादी कवि हैं, मानवता वादी और समन्वय वादी कवि हैं। उन्होंने लोकनायक तुलसीदास और लोकगायक कबीरदास की विचार धारा को एक साथ हृदयंगम किया। समन्वय का यह अभूत पूर्व संगम किसी कवि में देखने को नहीं मिलता। उनका संपूर्ण चिंतन मानवीय धरातल लिए हुए है। वे राम के अनन्य भक्त थे तभी तो उन्होंने अपने आराध्य देव राम से कहलाया है -

भव में नववैभव व्याप्त कराने आया।
नर को ईष्वरता प्राप्त कराने आया।
संदेश यहाँ मैं नहीं स्वर्ग का लाया।
इस भूतल को ही स्वर्ग बनाने आया।

हिंदी काव्य-जगत्‌ में दद्दा के नाम से प्रसिद्ध, राष्ट्रगौरव मयी व्यक्तित्व के धनी, राष्ट्रीय चेतना के संवाहक गुप्त जी का हिंदी काव्य जगत्‌ में पदार्पण उस समय हुआ जब देश विषम परिस्थितियों से गुजर रहा था। समाज का एक विशिष्ट वर्ग पाष्चात्य सभ्यता और संस्कृति से प्रभावित था जबकि सामान्य जन ब्रिटिश शासन के अत्याचारों और शोषण से मुक्ति पाने के लिए छटपटा रहा था। ऐसे समय में गुप्त जी ने सामान्य जन के स्वर मिलाकर ब्रिटिश शासन के विरुद्ध शंखनाद किया -

'उत्पीड़न अन्याय कहीं हो दृढ़ता सहित विरोध करों।'

वे सच्चे अर्थों में जन-कवि थे। जन सामान्य से जुड़े और घुले मिले रहे। उनका यह कथन कितना समसामायिक है कि-

राज्य को यदि हम बना लें भोग।
तो वह बनेगा प्रजा का रोग।

प्रजातंत्र में उनकी गहन आस्था थी। उनके अनुसार राजा प्रजा का पात्र है। वह एक प्रतिनिधि मात्र है। यदि वह प्रजापालक नहीं तो त्याज्य है।

राष्ट्र भाषा के प्रति उनकी स्पष्ट धारणा थी। उनके अनुसार देश में भावनात्मक एकता तथा देश के स्वाभिमान और गौरव की रक्षा विदेशी राष्ट्र भाषा से संभव नहीं। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद इतनी लम्बी अवधि बीत जाने पर भी हिंदी को राष्ट्रभाषा का दर्जा न दिए जाने पर उन्होंने क्षोभ प्रगट किया था कि दिल्ली की कालिंदी में हिंदी न डूब जाए।

गुप्त जी ने नारी पात्रों की कल्पना नहीं की है। उन्होंने प्राचीन कथानक की नारी पात्रों का नवीनीकरण किया है। उनमें नया भावबोध भरा है। इनमें उर्मिला प्रमुख है। कविवर रवीन्द्रनाथ टैगोर की प्रेरणा से महावीर प्रसाद द्विवेदी जी द्वारा लिखित कवियों की उर्मिला विषयक उदासीनता लेख से प्रभावित होकर गुप्त जी ने साकेत का पूरा नवम सर्ग उर्मिला को सौंप दिया। इसके पूर्व उर्मिला एक नगण्य पात्र थी। गुप्त जी ने उसके विरहिणी जीवन को अपनी कल्पना के विविध रंगों से भरकर उसे राम कथा का अविस्मरणीय पात्र बना दिया। उन्होंने उर्मिला के विरह ताप में कर्त्तव्य निष्ठा का और मिलन की आतुरता में वीर बाला का भाव समाहित कर दिया। उसे

* प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना (म.प्र.) भारत

अपने विरह संताप में भी परदु:ख कातर बनाकर रीतिकालीन कवियों से अलग भारतीय नारी का रूप दिया। उर्मिला सूर की गोपियों से भी अलग है। सूर की गोपियाँ मधुवन के हरे-भरे रहने से खिन्न हो जाती हैं -

'मधुवन तुम कत रहत हरे।
विरह वियोग श्याम सुंदर के ठाड़े क्यों न जरे।'

पर उर्मिला प्रकृति के हरे-भरे रहने की कामना करती है -

'रह चिर दिन तू हरी-भरी
बढ़ सुख से सृष्टि सुंदरी।
सुख प्रियतम का मिले मुझे,
फल जन-जीवन दान तुझे।'

विरह से संतप्त उर्मिला को वेदना भी अच्छी लगने लगती है। वह कहती है-

वेदने तू भी भली बनी।
पाई आज तुझी में अपनी चाह धनी।

गुप्त जी के नारी पात्र विरह से संतप्त तो हैं पर स्वाभिमान की भावना उनमें निहित है। यशोधरा को दु:ख है कि प्रिय उसे छोड़कर गए हैं। पर इससे ज्यादा दु:ख इस बात का है कि वह कह कर नहीं गए-

सखि वे मुझसे कहकर जाते।
कह तो क्या मुझको वे अपनी पथ-बाधा ही पाते।

गुप्त जी ने प्रेम के उभय पक्षीय समर्पण को स्वीकारा है-

'दोनों ओर प्रेम पलता है।
सखि पतंग भी जलता है हा दीपक भी जलता है।

निश्चय ही गुप्त जी हिंदी साहित्य के अतीत के सूत्रधार, वर्तमान के प्रेरणा केन्द्र और भविष्य के दृष्टा थे। साहित्य सृजन उनके लिए स्वान्त: सुखाय नहीं था। वह तो उनकी श्वास- प्रश्वास में विद्यमान था। राष्ट्र का निर्माण एवं उत्थान तथा भारतीय संस्कृति का विकास कवि के काव्य और जीवन का परम लक्ष्य था। उनकी भावना थी इस भूतल को स्वर्ग बनाने की। देशवासियो को आह्वान करते हुए वे कहते हैं-

हम कौन थे, क्या हो गए
और क्या होंगे अभी।
आओ विचारें आज मिलकर
ये समस्याए अभी।

ऐसे विराट व्यक्तित्व के धनी, राष्ट्रभक्ति से पूर्ण रचना करने वाले, नारी को नये रूप में प्रस्तुत करने वाले इतिहासवेत्ता, देश भाषा से प्रेम रखने वाले राष्ट्र के उन्नायक मैथिलीशरण गुप्त जी व्यक्तित्व और कृतित्व अविस्मरणीय है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. शिवमंगल सिंह सुमन,नई दुनिया दैनिक समाचार पत्र ।
2. डॉ. सिया राम शरण शर्मा, दैनिक जागरण दि.3.8.1986
3. जगदीश प्रसाद चतुर्वेदी, हिन्दुस्तान दि.3.8.1986
4. हिंदी साहित्य कोष भाग-2 सं.डॉ. धीरेन्द्र वर्मा ।

****

आदिवासियों में 'गुदना' प्रथा

डॉ. एम. सिंह मरकाम * बिरज मुवेल **

प्रस्तावना –भारतीय लोक-संस्कृति में 'तिल' और 'गुदना', ये दोनों ही सौंदर्य के प्रमुख उपादान माने गए हैं। इनसे 'सुंदरता' में पर्याप्त अभिवृद्धि होती है तथा ये ही खुबसूरती के सागर में ऐसा अनोखा 'तूफान' लाते हैं, जिससे सौंदर्य-प्रेमियों के सरस मानस में, कभी आसानी से 'बेचैनी' उत्पन्न हो जाती है, तो कभी 'सलोनी रमणीयता' इठलाने लगती है।'

प्राचीन संस्कृति के अभ्यास वेत्ताओं का मानना है कि, 'गोदने' की प्रथा अत्यंत प्राचीन है। भारत के संपूर्ण आदिवासी और ग्रामीण क्षेत्र में 'गोदना', एक शारीरिक अलंकरण के रूप में प्रचलित है। भारत के पूर्व से लेकर पश्चिम तक और उत्तर से लेकर दक्षिण तक, प्राय: सभी क्षेत्रों में 'गोदना' अलंकरण विद्यमान है।

मध्य प्रदेश के ग्रामीण क्षेत्र में बसने वाली 'कृषक' एवं 'दस्तकार' ज़ातियों में भी, गोदने का प्रचलन व्यापक रूप से प्रचलित था। व्यावहारिक तौर पर, आजकल 'गोदने' की प्रथा बंद जैसी हो गई है। यद्यपि, इसका प्रचलन आज भी आदिवासी समाज में परम्परागत रूप से चल रहा है।

ग्रामीण तथा शहरी जनता, अब इसे पसंद नहीं करती है। यद्यपि, इनका प्रचलन आज भी आदिवासी समाज में चल रहा है। ग्रामीण तथा शहरी जनता, अब इसे पसंद नहीं करती है।

यद्यपि, 'टेटू' याने गोदना करवाने की आधुनिक तकनीक से अस्थायी रूप से गोदना करवाने की मेथड़ आने से, आज 'फैशन' के तौर पर युवा वर्ग इसका उपयोग कर रहा है। 'सौंदर्य-प्रसाधनों को कई दृष्टियों से चित्रित किया गया है। लेकिन, लोक-कवियों की रसीली अनुभूतियों से चर्चित, ये दोनों सौंदर्य-उपकरण अद्‌भुत रसिकता से अंकित हुए हैं।

'अंग-आलेखन' (गोदने) की प्रथा, अत्यंत पुरातन है। गोदने का मुख्स उद्देश्य, सौंदर्य वृद्धि का रहा है। कुछ आदिम कबीलों में यह प्रथा, नितांत भिन्न स्तर पर 'आनुष्ठानिक' महत्व रखती है।

किसी समय, बिना 'गुदा अंग', स्त्रियों के लिए 'लज्जा' का विषय था। अर्द्ध समय एवं आदिम ज़ातियों में, आज भी इस 'प्रथा' का प्रचलन है। चित्रांकन की सहज प्रवृत्ति की भाँति, शिक्षा और संस्कार के बाद भी, 'गुदना' ने मनुष्य की ललक और विश्वास को बाँधा है।

शरीर पर प्रिय और उपास्य वस्तुओं को अंकित करने के 'मोह' से मनुष्य की प्रवृत्ति, कभी भी 'मुक्त' नहीं हो पायी है।

बीसवीं सदी के नेतृत्वविदों का दृढ़ विश्वास है कि आदिम मानव, वस्तुओं का प्रतीकांकन, इसी आशय से करता होगा कि, अंकित वस्तुओं की अभिवृद्धि हो। चित्रगत वस्तुएँ, जीवन के क्षेत्र में उपादेय वस्तुओं का प्रतिनिधित्व करती हैं। किंतु, ऐसा लगता है कि, यह मुख्य रूप से 'पहचान' के उद्देश्य से ही इनका प्रचलन हुआ है।

'गुदना' चिन्हों के सामाजिक महत्व को भी कुछ ज़ातियों का समूह स्वीकार करता है। चिन्हित आकृतियाँ, ज़ातीय प्रतीकों के रूप में पहचानी जाती है। मध्य प्रदेश और राजस्थान की 'भील' स्त्रियाँ, आँखों के दोनों ओर किनारों पर, 'चिरल्यों' नामक दो आड़ी लकीरें गोदती हैं।

ये लकीरें, अवश्य ही आँखों को पैना बनाती हैं और लम्बी आँखों के सौंदर्य-बोध को तृप्त करती हैं। इनका प्रचलन, मात्र 'भील' स्त्रियों में ही इसलिए है क्योंकि, कहा जाता है कि, भगवती पार्वती के पति, भगवान् नीलकंठ आकर विराज गए हों। इस प्रकार चंद्रमुखी राधा के मुख पर 'तिल', बड़ा ही सुहावना लगता है।'

विवाह के बाद 'गुदवाना', अच्छा नहीं समझा जाता है। आदिवासी और कृषिजीवी वर्गों में ज़ातीय महत्व की रक्षा, 'वैयक्तिक उपलब्धि' मानी जाती है। 'गुदना' के माध्यम से ऐसी ज़ातियाँ, वस्तुत: 'प्रतीकात्मक संतोष' अनुभव करती हैं।

हर व्यक्ति, ज़ाति से जुड़ा रहना चाहता है। 'गुदना' इस मायने में उसे, 'सुरक्षा भाव' से सम्पृक्त करता है। कुछ 'गुदना चिन्ह' शताब्दियों से अपने आदिम रूप में ही स्वीकृत चले आते हैं, जो ज़ाति-विशेष के प्रिय होते हैं।

'लोक-कवि, मूलचंद (ग्राम छिकहरा, मोहना के निवासी) की फागों तिल का बहुरंगी चित्रण हुआ है। 'गोरी' के गोरे गाल पर अंकित 'तिल', इन्हें अधिक मनभावना लगता है। कुछ समय के लिए, उसे जी-भरकर देखने के लिए, वे घूँघट के पट को मुख से अलग करने हेतु संकेत कर रहे हैं।

मृदुल-मुस्कान के साथ चितवन में यह 'काला तिल', बड़ा मोहक लगता है, जिसे देखकर 'मन' भर जाता है।' उन्हें, दूसरी ज़ातियों में नहीं देखा जाता है। भीलों के कतिपय 'गोदने' उनके ही समाज में परस्पर प्रोषित देखे गए हैं। उन चिन्हों में, अरण्य जीवी ज़ाति के सभी प्रभाव स्पष्ट हैं।

घर की वस्तुएँ, जिनका जल, अन्न और पारिवारिक मूल्यों से संबंध है, प्राय: कृषि जीवी ज़ातियों में 'गुदना' का रूप ले लेता है। आभूषण, वृक्ष, कुँआ, बावड़ी, कुड़ी, अनाज, चाँद, सूरज, जल-पात्र, नेज आदि मध्यवती भारत के ग्रामों की प्रमुख गोदना विषयक सामग्री है। 'मनुष्य के दाहिने अंग में 'तिल' का होना, लक्ष्मी देवी की प्रसन्नता का द्योतक है। इसी प्रकार, नारी के बाँये अंग में इसका अस्तिव 'लाभदायक' बताया गया है।'

'गोदने' की कला का हमारे विषय से संबंधित प्रजातियों में इसका प्रचलन नहीं है। साथ ही पहले भी इस गोदने गुदवाने के पीछे सामान्यतया, मनुष्य की विशेष तौर पर स्त्रियों की पहचान के लिए गोदने के रूप में स्त्री का नाम, उसके पति के नाम से अंकित कर दिया जाता है।

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) श्री अटल बिहारी वाजपेयी शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (हिन्दी) श्री मध्य भारत हिन्दी साहित्य समिति, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत

'बाँये गाल पर तिलों से भी हल्की तिल की झलक, बड़ी प्यारी लगती है कि, कमल पर भौंरा ही आकर बैठ गया हो। अथवा, चंद्रमा के ऊपर यमुना जल की एक बूँद गिर पड़ी हो। उसे देखकर तो ऐसी पीड़ा होती है, मानो दिलों पर संहारक 'आरी' का किसी ने प्रहार ही कर दिया हो।'

उस समय स्त्रियों की बौद्धिक स्थिति बहुत सामान्य स्तर की होती थी ताकि उन्हें घरों पर ही रखा जाता था। अपनी इस स्थिति के कारण से महिलाएँ, कई बार घर के रास्ते ही भूल जातीं। ऐसे समय पर, उनके हाथ पर लिखा 'नाम', उनकी 'पहचान' का कार्य करता था। 'गंगाधर, राधा के गोरे गाल पर 'तिल' को देखकर कहते हैं कि, यह तो ऐसा लगता है कि मानो, पूर्ण चंद्र में काली रात का अंकुर, अंकुरित हो गया हो, अथवा निर्मल दर्पण के ऊपर अलसी का फूल गिर गया हो, अथवा फारसी के कवियों के मानस में इस काले तिल के (ख्याल) ने अनेक चमत्कार प्रदर्शित किए हों।'

विधवा स्त्रियों के कपाल पर भी गोदना कर दिया जाता था, ताकि यह पहचान में आ जाए कि, यह स्त्री विधवा है। गोदने, केवल स्त्रियों के शरीर पर ही किये जाते थे। पुरूष वर्ग के लिये इसकी आवश्यकता नहीं मानी जाती थी।

पुरूष वर्ग में से किसी की इच्छा हो गई, तो वह गोदने कर लेता था। किंतु, इस तरह गोदने करवाने वाले पुरूषों की संख्या नगण्य होती है। कभी-कभी, किसी सीधे आदमी या बालक के साथ क्रूर मज़ाक भी कर दिया जाता है। 'गोदना (गुदना), सौंदर्य-वृद्धि का तो एक विशिष्ट साधन माना गया है, लेकिन इसके साथ, कई पुरातन मान्यताएँ, लोक-विश्वास, मूढ़ाग्रह, कुल-देवी-देवता-प्रतीक आदि भी संबद्ध हैं। गुदना का प्रचलन अनुसूचित जातियों में ही है। समस्त भारतीय प्राचीन एवं अर्वाचीन साहित्य में भी गोदना का यथाअवसर उल्लेख हुआ है।'

'गोदना गुदवाने की प्रथा स्त्री वर्ग में बहुत अधिक प्रचलित है। पुरूष, गोदना नहीं गुदवाते। स्त्रियाँ, इसे 'गहना' समझती हैं और उनका विश्वास है कि, मृत्यु के समय अन्य आभूषण तो हटा दिए जाते हैं, परंतु 'गोदना' ही एक ऐसा आभूषण है, जो मृत्यु के बाद भी साथ रहता है।

इसे दो बार गुदवाया जाता है। पहली बार, शादी के पहले छोटी अवस्था में, लड़कियाँ गुदवाती हैं। इस समय, केवल तीन बिंदु लगाए जाते हैं। पहला व दूसरा, नाक के पास तथा तीसरा मस्तक पर।

दूसरी बार, शादी के समय, जब लड़की गौने से पहले अपने मायके में ही रहती है, अपने शरीर के अंगों में 'गोदना' गुदवाती है। गोदने के लिए प्रत्येक वर्ष शरदकाल में 'गोधारिन' या 'अगरनी', गाँव में आती है। गोदने में लगाने के लिए 'स्याही' गोधारिन ख़ुद बनाकर लाती है। वह एक 'सुई' भी रखती है, जिसमें छेद करने के बाद स्याही लगा देती है।

गुदवाते समय काफी पीड़ा होती है, पर बाद में यह ठीक हो जाती है। स्त्रियाँ, दोनों पाँवों में अँगूठे से लेकर छोटी अंगुली तक, तीन स्थानों में तीन-तीन बिंदुएँ लगवाती हैं। एड़ी से ऊपर, चारों ओर तीन-तीन बिंदु लगाए जाते हैं।

दोनों हाथों में, हथेली के पीछे, तीन बिंदु वाले छह निशान व अँगूठे के नीचे 'बिच्छू' का निशान बनवाया जाता है। कलाई के चारों ओर, कोहनी के नीचे बाजू में थोड़ी-थोड़ी दूरी पर 'त्रिभुज' आकार में निशान लगवाए जाते हैं। बाज़ू के ऊपर, एक चीतल या दो चीलों की आकृति बनवाई जाती है।

उससे ऊपर, ठीक कंधों के नीचे, भुजा में फिर 'त्रिभुज' आकार के पाँच या छह चिन्ह अंकित किए जाते हैं। कभी-कभी स्त्रियाँ, बाज़ार में गोदने गुदवाती हैं और पति का नाम तथा 'सीता-राम' आदि लिखवाती हैं। यह गोदना मशीन द्वारा गोदा जाता है। प्राचीन संस्कृति के विद्वानों की मान्यता है कि, 'गोदने' की प्रथा, अत्यंत प्राचीन है। वस्तुत: अंग को सुंदर बनाने की भावना ही 'गोदने' में निहित है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. 'आदिवासियों के बीच' - श्रीचंद्र जैन - प्रथम संस्करण, 2007, पृ. 19.
2. वही पृ. 19.
3. वही पृ. 19.
4. वही पृ. 19.
5. वही पृ. 19.
6. वही पृ. 19-20.
7. वही पृ. 20.
8. वही पृ. 20.
9. वही पृ. 20-21.

****

The Concept Of Chastity And Naga - Mandala

Dr. Anurodh Chadar *

Introduction - Classical origin- The word derives from the Latin castitas, the abstract form of castus, which originally meant a pure state of conformity with the Greco-Roman religion. As the etymological link suggests, castigation, chastisement, and in the extreme case, even castration originally relate to the use of harsh means to preserve or restore this state of purity. This meaning is preserved fully in the parallel term "chastening."

In ancient times, the value of chastity was highly debated in both the homosexual and heterosexual spheres. In particular, Socrates was an advocate of chastity between male teachers and their students, in opposition to the sexually expressed pedagogic relationships prevalent in his time. Plato, having transmitted many of these teachings, has become the eponym for this type of chastity, known today as Platonic love (as opposed to romantic love).

Inter-religious view of chastity -

Marriage - Religious teachings maintain that fidelity within marriage is vital to the health of the marriage and ensuing family. Beliefs in the sacredness of marriage and human sexuality provide reasons for abstinence prior to marriage, fidelity to one's spouse after marriage, and lifelong abstinence if a person does not marry.

In the context of traditional marriage, the spouses commit to a lifelong relationship which excludes the possibility of sexual intimacy with other persons.

Virginity- Virginity, the physical state of innocent sexual purity, has often been a requirement for certain religious functions, especially as priests and priestesses. For example, Vestal Virgins in Ancient Rome were required to be virgins, and remain so until they left office at about age 40.

The status of virginity is respected and valued in certain societies, particularly when there are religious views regarding sexual conduct before marriage. A woman who is a virgin is also sometimes referred to as a maiden.

Female virginity is closely interwoven with personal or even family honor in many cultures. Traditionally in some cultures, there has been a widespread belief that the loss of virginity before marriage is a matter of deep shame. In some cultures (for example the Bantu of South Africa), virginity testing or even surgical procedures guaranteeing premarital abstinence (infibulation—The stitching together of the vulva, often after a clitoridectomy, leaving a small opening for the passage of urine and menstrual blood, or the similar stitching of the prepuce) are commonplace. This would typically involve personal inspection by a female elder.

In Western marriage ceremonies, brides traditionally wear veils and white wedding dresses, which are believed by many to be symbols of virginity. In fact, wearing white is a comparatively recent custom among western brides, who previously wore whatever colors they wished or simply their best dress. Wearing white became a matter first of fashion and then of tradition over the course of the nineteenth century.

Celibacy -Celibacy refers to an individual having decided to refrain from sexual activity (sexual abstinence), or to remain unmarried. Also known as "consecrated virginity," celibacy usually refers to ordained clergy or persons in religious orders, and is an avowed way of living in which the person forsakes all sexual gratification.

Some religions require celibacy of their priests, regarding sexual purity as essential in order to perform the rites and rituals that connect the people to heaven. Others regard the priestly function more in terms of ministering to the people, and thus a healthy marriage is considered as good if not better than celibacy. In monastic orders, a vow of sexual abstinence is often viewed as essential in order to align one's mind and spirit to the path of spiritual growth, renouncing cares of the physical world, which include sexual relationships. Philosophers, too, have taken this path.

The Roman Catholic Church requires a promise of celibacy prior to ordination to the diaconate by both secular clerics and "religious" in perpetual vows. Married men can be ordained only by dispensation of the Holy See. By contrast, marriage is accepted or even encouraged for priests in the Anglican and many Protestant churches. In the Eastern Orthodox Church traditions, celibacy is not required of secular priests but is required in monastic orders, from which bishops are selected. In virtually all Christian traditions, celibacy is usually required of monastics—monks, nuns, and friars.

Vows of chastity (celibacy) can also be taken by laypersons, either as part of an organized religious life (such as Roman Catholic Beguines and Beghards) or on an individual basis, as a voluntary act of devotion and/or as

*Varishta Adhyapak (English) Govt. Excellence H.S.S. Silwani, Distt. - Raisen (M.P.) INDIA

part of an ascetic lifestyle, often devoted to contemplation. The voluntary aspect has led it to be included among the counsels of perfection.

In some religions, celibate monastic life is commonly practiced as a temporary phase, as by many men in Buddhism.

Abrahamic religions - Traditionally, acts of a sexual nature are prohibited outside of marriage in Islamic and Judeo-Christian ethical contexts, and are considered sinful. Since offenses against the virtue of chastity are most often expressed as fornication or adultery, the term has become closely associated with sexual abstinence in common usage throughout most of the English-speaking world.

In Roman Catholic teaching, chastity is one of the Seven holy virtues, opposing the deadly sin of lust. Everyone is called to chastity be they married, single, or in a religious order. Chastity is a function of one's respect for the dignity of another especially in a sexual context. Sex with one's spouse is not against chastity so long as both remain open to having children—using contraceptives violates true chastity. The Roman Catholic Church also regards as unchaste masturbation and use of contraceptives, even within the confines of marriage, while most Protestant Christian denominations disagree.

According to Jewish law, sex and acts that are likely to lead to sex are only allowed within the context of a marriage. Sex is not merely a means of physical gratification, but an important act that requires commitment and responsibility. The requirement of marriage before sex ensures that sense of commitment and responsibility. Out of respect for a woman's body, Jewish law also forbids sexual relations among married persons during or shortly after menstruation, and for a period of time after the birth of a child.

The Quran states, "the believers are… those who protect their sexual organs except from their spouses… Therefore, whosoever seeks more beyond that… are the transgressors". Muslim scholars say this statement makes it very clear that any sexual gratification outside marriage is considered a transgression of the law of God.

Eastern religions -

Hinduism - Hinduism's view on premarital sex is rooted in its concept of the stages of life. The first of these stages, known as brahmacharya, roughly translates as chastity. Celibacy is considered to be the appropriate behavior for both male and female students during this stage, which precedes the stage of the married householder. Many Sadhus (Hindu monks) are also celibate as part of their ascetic discipline. At the same time, it should be noted that prior to the arrival and spread of Islam in India, Hinduism was, by and large, a religion that celebrated the practice of sexuality within the context of marriage, producing famous manuals on the art of lovemaking such as the Kama Sutra. In classical Hinduism, sexual intercourse was seen as a sacred act.

Jainism - Although the Digambara followers of Jainism are celibate monks, most Jains belong to the Shevtambara sect, which allows spouses and children. The general Jain code of ethics requires that one do no harm to any living being in thought, action, or word. Adultery is clearly a violation of a moral agreement with one's spouse, and therefore forbidden, and fornication too is seen as a violation of the state of chastity.

Buddhism - The teachings of Buddhism include the noble eightfold path, involving a prohibition against sexual misconduct. All Theravada and most Mahayana Buddhist orders of monks and nuns are expected to be celibate, and the violation of this state is considered to produce very negative karmic consequences. The Vajrayana orders allow exceptions to this rule as an upaya (skill in means) in achieving higher stages of enlightenment. These orders may permit monks and nuns to marry and practice Tantric sex between them. Promiscuous and unskillful relations tainted by lust would be against the dharma. Hence, almost all Buddhist societies hold to traditional views about marriage and family life, considering both adultery and fornication to be unchaste acts.

Paganism - Pagans have no set rules against premarital sex, homosexuality, masturbation, or nudity. However, sex is viewed as the generative force in nature and is seen by most pagans as something utterly sacred. The physical act of love is to be approached with great respect and responsibility. While pre-marital sex is not forbidden, adultery may violate a sacred trust between man and woman, unless both parties stipulate otherwise.[1]

Chastity As a virtue - Chastity is the virtue which excludes or moderates the indulgence of the sexual appetite. It is a form of the virtue of temperance, which controls according to right reason the desire for and use of those things which afford the greatest sensual pleasures. The sources of such delectation are food and drink, by means of which the life of the individual is conserved, and the union of the sexes, by means of which the permanence of the species is secured. Chastity, therefore, is allied to abstinence and sobriety; for, as by these latter the pleasures of the nutritive functions are rightly regulated, so by chastity the procreative appetite is duly restricted. With chastity is often confounded modesty, though this latter is properly but a special circumstance of chastity or rather, we might say, its complement. For modesty is the quality of delicate reserve and constraint with reference to all acts that give rise to shame, and is therefore the outpost and safeguard of chastity. It is hardly necessary to observe that the virtue under discussion may be a purely natural one. As such, its motive would be the natural decency seen in the control of the sexual appetite, according to the norm of reason. Such a motive springs from the dignity of human nature, which, without this rational sway, is degraded to brutish levels. But it is more particularly as a supernatural virtue that we would consider chastity. Viewed thus, its motives are discovered in the light of faith. These are particularly the words and example of Jesus Christ and the reverence that is owing to the human body as the temple of the Holy Ghost, as

incorporated into that mystic body of which Christ is the head, as the recipient of the Blessed Eucharist, and finally, as destined to share hereafter with the soul a life of eternal glory. According as chastity would exclude all voluntary Carnal pleasures, or allow this gratification only within prescribed limits, it is known as absolute or relative. The former is enjoined upon the unmarried, the latter is incumbent upon those within the marriage state. The indulgence of the sexual appetite being prohibited to all outside of legitimate wedlock, the wilful impulse to it in the unmarried, like the wilful impulse to anything unlawful, is forbidden. Moreover, such is the intensity of the sexual passion that this impulse is perilously apt to bear away the will before it. Hence, when wilful, it is a grave offence of its very nature. It must be observed too, that this impulse is constituted, not merely by an effective desire, but by every voluntary impure thought. Besides the classification already given, there is another, according to which chastity is distinguished as perfect, or imperfect. The first-mentioned is the virtue of those who, in order to devote themselves more unreservedly to God and their spiritual interests, resolve to refrain perpetually from even the licit pleasures of the marital state. When this resolution is made by one who has never known the gratification allowed in marriage, perfect chastity becomes virginity. Because of these two elements — the high purpose and the absolute inexperience — just referred to, virginal chastity takes on the character of a special virtue distinct from that which connotes abstinence merely from illicit carnal pleasure. Nor is it necessary that the resolution implied in virginity be fortified by a vow, though as practised ordinarily and in the most perfect manner, virginal chastity, as St. Thomas, following St. Augustine, would imply, supposes a vow. (*Summa Theologiæ* II-II.152.3 ad 4) The special virtue we are here considering involves a physical integrity. Yet while the Church demands this integrity in those who would wear the veil of consecrated virgins, it is but an accidental quality and may be lost without detriment to that higher spiritual integrity in which formally the virtue of virginity resides. The latter integrity is necessary and is alone sufficient to win the aureole said to await virgins as a special heavenly reward (St. Thomas, Suppl., Q. xcvi, a. 5). Imperfect chastity is that which is proper to the state of those who have not as yet entered wedlock without however having renounced the intention of doing so, of those also who are joined by the bonds of legitimate marriage, and finally of those who have outlived their marital partners. However in the case of those last mentioned the resolution may be taken which obviously would make the chastity practised that which we have defined as the perfect kind.[2]

Chastity is a virtue concerning the state of purity of the mind and body. Chastity includes abstinence from sexual intimacy for the unmarried, and faithfulness to a marriage partner. Pre-marital virginity (abstinence) is the form of chastity expected of young people. Sexually active married couples are also considered to practice chastity if they remain faithful to their marital vows. Finally, chastity includes abstention from all sexual activity (celibacy).

Chastity is seen as undergirding marriage; sexual acts outside of marriage are considered sinful, both because they are spiritually damaging to the individual and because they undermine and destroy the family.

Traditional societies enforced the norms of premarital virginity and marital fidelity backed by strong community sanctions and even by force of law. These norms of chastity have been expected of the faithful of all the major religions, including Christians, Muslims, Buddhists, Hindus and Confucianists. However, in the modern West, particularly since the sexual revolution of the 1960s, these norms have fallen by the wayside, replaced by widespread acceptance of casual sex before marriage, cohabitation in place of marriage, and extra-marital affairs even when they lead to divorce. In the current cultural climate, some see sexual restraint as unnatural, even unhealthy.

In attempting to combat the current permissive climate, social conservatives in the United States are advocating abstinence-based sex education, and municipalities and churches are promoting marriage education to prepare newlyweds for the challenges of maintaining faithful marriages. These efforts aim at restoring a “marriage culture” where chastity is prized. Strong marriages, undergirded by the virtue of chastity, provide economic, psychological, and social benefits to both the married couple and their children.[3]

Chastity is such a value invented by patriarchal culture and accepted by women. It is one of the most powerful yet invisible cultural fetters that have enslaved women for ages since the dawn of patriarchy. There has been enough literature both oral and written glorifying this enslaving value and deifying the women characters who observed it faithfully. The *Ramayana* in which Sita undergoes the fire ordeal to prove her chastity to Rama has been a cultural guide to Indians for more than two thousand years. The concept of chastity goes with, and gets its indispensable support from, another morbid concept that sex is mean and sinful. Prostitution and erotic literature, the morbid inventions of patriarchy, have been a safety value protecting the unnatural ideal of chastity from the excess pressure of libido. Every mother along with father and other elders enslaves her daughters to patriarchy by teaching them verbally and non –verbally that chastity is more important than life and that its loss which brings an unbearable social stigma is worse than death .Many women lose their lives to protect their chastity and many other women bear in silence all the oppression and violence of their sadistic husbands. If any brave woman violates these values, she is not only looked down upon but also culturally excommunicated. Another major harm of these values is that they have weakened natural spontaneous love among human beings which is feared to lead to ‘immoral’ sex. In spite of pernicious nature of these values, neither men nor women can tolerate attack on these values. Therefore, any sensible intuitive

writer has to use a kind anaesthesia while operating on culture to remove the morbid tissue.[4]

A Hindu husband can enjoy any liberty but his wife is not to cross the threshold of her house, the Lakshaman-Rekha of social inhibitions and prohibitions and if she does, she does on the pain of social ostracism. Everybody knows that Appanna goes to a concubine but none dares ask him to desist from going there, but he keeps his wife under lock and key lest she should get a company to abate her suffering. Hindu wives have no voice in anything. She is exhorted to follow the dictates of her husband. She is further told that lucky is the wife whose dead body is to pyre by her husband, implying that she has to live and die in her husband's house irrespective of the treatment she receives from her husband and in-laws. Rani, therefore, bears all the sufferings without speaking a word of revolt. She is left by her loving parents also to fend for herself in her husband's house. "A Cobra is better than such a husband" is therefore a correct observation.[5]

The play questions the double standard of the Indian society, the liberal standpoint that it takes in the case of a man contravening the social norms, while implementing the same mercilessly the case of a woman.

The patriarchal society that invented chastity as a value to be rigorously observed, eulogizing the women who have cherished such enslaving impositions through myth, literature and folklore giving us models like Sita who had to undergo the fire ordeal to prove her chastity to Rama, eventually succeeded in providing us with excellent sculpts that served as a moral guide to our ethnicity for years. Those with fortitude to rebel against this daunting custom were deplored or anathematized.[6]

Girish Karnad's play Naga Mandala is dense with literary allusions and mythical references and evocative sensual images that stimulate the sensory perceptions of the readers. They prove to be instrumental in weaving a thematic nexus and for the progression of the plot. The artist, keeping in view the treatment of mythin and the historical narrative, tries to reinstate them by applying them aesthetic structure of his writings. The mythical plot and structure of the play is presented in a four dimensional matrix: thesis, antithesis, static harmony and final consummation.

The play commences with an enigma. The opening lines of the prologue suggest that "the presiding deity of the temple cannot be identified". In the light of Hindu mythology it can be infered that the broken idol is that of Ganesha because he "removes obstacles and vouchsafes wisdom. He is propitiated at the beginning of any important enterprise and is evoked at the commencement of books". As we have given an identity to the nameless deity, similarly we shall acknowledge the identity of the female central character, Rani. The character of Rani is not a woman in person but a woman in effect. Therefore it was unstable and had no identity. The writer suggests her a proper name. The opening lines of Act One say: "A young girl. Her name…it does not matter. But she was an only daughter , so her parents called her Rani".

Joan Riviere,a psychoanalyst, in "Womanliness as a Masquerate" argued that "women adopt a public mask of 'womanliness' or feminity in accordance with a male image of what a woman should be. Thus they conform to the stereotypes of patriarchy". In simpler words they acquire an imposed female identity. The first strand of the broader mythical design is the development of the thesis point.

Rani's husband, Appanna, takes her to his house after marriage. Appanna treats her as a care taker and servant. They have no physical union. Their marriage is incomplete because he is interested in a "concubine". So he spends his nights with a "bazar woman" instead of his wife. He only comes home to satisfy his basic instincts like bathing and eating. Rani sacrifices her pleasures and serves her husband faithfully. In "The Arsonist" Bapsi Sidhwa portrays Jerbanoo being advised that "it was their duty as women to win their men folk…She might try to do those little things men liked so much".

Every night Rani is left alone by her husband so she pines for liberty and reunion with her parents. As Appanna locks her every night so her dreams become a source of relief for her. She dreams of an Eagle and asks him:

"Where are you taking me?" And the Eagle answers: "Beyond the seven seas and seven isles. On the seventh island is a magic garden. And in that garden stands the tree of emeralds. Under that tree, your parents wait for you". So Rani says: "Do they? Then please, please take me to them —immediately. Here I come". So the Eagle carries her clear across the seven seas. Her soliloquy works as an alternative to her dreams to escape from her isolation. She talks to herself as:

Then Rani's parents embrace her and cry. They kiss her and caress her. At night she slept between them. So she is not frightened any more…In the morning, the stag with the golden antlers comes to the door. He calls out to Rani. She refuses to go.' I am not a stag,' he explains, 'I am a prince'….

In a nutshell, the dream and monologue serve as an escape mechanism for Rani. The span of the plot progresses further with the introduction of the characters of Kurudavva and her son Kappana. Their appearance highlights the theme of peer support which serves as a lifeline in her hard times. Kurudavva's character and actions can be classified into three steps. The first step is that of Kurudavva's being a silent observer and inspecting the house through the eyes of Kappanna. After learning about the presence of Rani in the house she adopts the role of an informer when she informs Rani about her beauty. She discloses the affair of her husband with a whore. In the last phase Kurudavva provides her with a magical root to cast a spell on her husband. The taste of the root will open Appanna's eyes and "he won't go sniffing after that bitch. He will make you a wife instantly". The theme of resourcefulness of women is highlighted in Fahmida Riaz's

short story "The Daughters of Aai" as well. The village woman are termed as "active collaborators" and they 'did not abandon Fatu' in her tough times. They explained "Fatu's departure and reappearance in the village" in her pre and post delivery period.

A proverb by Charlotte Bronte in Villette compliments Rani's situation. She said:"Peril, loneliness, an uncertain future, are not passive evils, so long as the frame is healthy and the faculties are employed; so long, especially, as liberty lends us her wings, and hope guides us by her star".

The enchanting root is a sign of hope for Rani. Later on, while cooking curry with the paste of the root she observes it "boils over, red as blood". She hesitates to serve the curry to her husband and "puts it in that ant-hill". A cobra dwells in this ant-hill. It eats that curry. Thus the miraculous root that was aimed at Appanna cast a spell on the cobra. This action leads to the first appearance of Naga. As "Nagas are serpent-genii figures in the Hindu mythology. They have a friendly disposition and are a symbol of fertility and regeneration". So Naga takes on Appanna's shape and approaches to Rani at midnight. He acknowledges her beauty, calls her a 'tender bud', and tries to come close to her. Rani looks confused and hesitant. She constantly questions herself about the binaries in her husband's persona triggered with the change of hours. Here Rani's situation is akin to that of Zaitoon in the novel The Bride. In it the author, Bapsi Sidhwa, describes the perplexity of the character thus -

"She had a vague recollection of an unpleasant dream: she had been standing by the river, admiring its vivid colors, when a hand had come out of the ice-blue depths and dragged her in, pulling her down, down…Now her experiences of the previous day crowded confusedly into her mind".

The meeting of Naga and Rani continues in the same fashion. She is on a rack of indecision and calls it a dream. And as the play suggests:"they make love". Later Rani acknowledges that she is "not fantasizing" about these nocturnal meetings. She then utters "I am pregnant".

The second strand of the mythical plot is the antithesis. Rani's innocent utterance invites a tough time for her. Appana brands her as a "harlot", a "slut". He questions her about her chastity and 'the bloated tummy'. He says: "I locked you in, and yet you managed to find a lover! Tell me who it is? Who did you go to with your sari off". In the night Naga visits Rani and informs her about the Elders' judgment which will be going to be held in the morning. Rani pleads him to save her from the humiliation and take his words back.

RANI: Why are you humiliating me like this? Why are you striping me naked in front of the whole village? ...Look at the way you talk—as if you were referring to someone else...After you complained to the Elders about me. Now you can go and withdraw the complaint. Say my wife isn't a whore.

Although myths seem to uphold traditional values, they have also been the means of questioning these values. These myths focus and question the patriarchal moral code that demands the faithfulness of a woman to her husband but not the faithfulness of a man to his wife. Naga's words bring frustration for her when he informs her that 'it can't be done'. He advises her to 'undertake the snake ordeal'. She trembles with fear while she hears this. She says: "won't the Cobra bite the moment I touched it? I will die like your dog and your mongoose". But Naga informs her that the Cobra will not bite you unless you tell a lie. When Rani refuses to do so Naga gets angry and says: "I can't help it; Rani. That's how it has always been. That's how it will always be". Through these lines of Naga, Karnad shows the practice of male companion in the Hindu society in particular and on a universal level in general. Through these lines he beautifully projects the sufferings of the female gender in the male dominating society.

Appana goes to the village Elders. Next day a huge crowd gathers in front of Rani's house. The Elders suggest Rani to take her oath by holding red-hot iron in her hand. The village Elders evokes the theme of peer pressure and victimization of women in the hands of old customs and traditions. Appana proposes to the Elders to throw Rani and her illegitimate child into boiling oil. The advice of Naga comes into Rani's mind. Rani is left to confront the conflicting impulses related to the difficult decision which she has to take regarding her future. She strikes a deal with the village Elders and decides to undergo the snake test to save her image. Rani shows uncanny strength, indomitable courage and remains firms and resolute turning down the alternative offer of the village Elders. She goes to the ant-hill, puts her hand into it and takes the Cobra out. The Elders advise her to 'be quick' in taking her oath. So she swears by the Cobra that: "I have not touched any one of the male sex. Nor have I allowed any other male to touch me. If I lie, let the Cobra bite me". The Cobra does not bite her and it "slides up her shoulder and spreads its hood like on umbrella over her head". It becomes submissive and "moves over her shoulder like a garland". The third strand of the mythical pattern is the static harmony where contraries in Rani's life balance. The Elders call it something supernatural. One of the Elders says: "A miracle! A miracle"! Rani is taken to be a Devi who in Hindu mythology appears "to hold the universe in her womb: she lights thee lamp of wisdom". Everybody present there immediately recognizes the role reversal and this lead to her transformation from terrestrial creature to celestial creator. This event portrays myth leading to ethnic cleansing of the society at large. The Elders "prostrate before her" .Mubarak Ali writes in his article "History and Morality" that "… great people were above ordinary moral values. Therefore, they should not be judged on these bases". Appanna repents on his past unjust behavior to his wife. But one of the Elders tells him that: "…your wife is not an ordinary woman. She is a goddess incarnate. Don't grieve that you judged her wrongly and treated her badly. That is how goddesses reveal

themselves to the world.”. Appanna goes to his wife and begs for forgiveness from her. She forgives him and “takes him in her arms”. When Appanna’s concubine watches this miracle she “feels ashamed of her sinful life and volunteered to do menial work in Rani’s house”. After sometime Rani gives birth to a beautiful baby boy and in this way the play leads to the fourth strand that is desire consummation.

One day Naga thinks of Rani .He wishes to see his “queen”. He visits her in the same old fashion. When he watches her sleeping with her husband and son, he feels jealous. He decides to kill her but stops because his “love has stitched up ‘his lip”. He decides to live in her hair and so he “becomes their size now. Enter her tresses! Make love to them”. Rani feels something heavy in her hair. She asks her husband to comb her hair. When he combs, a Cobra falls down. Both of them are frightened to see it. Appanna acknowledges Rani’s goddess like qualities and says that: “Your long hair saved us”. Appanna goes out to find a stick in order to kill the snake. Rani recognizes the snake and let it “climb into” her hair because the relationship between Rani and Naga is like a lifeline that sustains her through the heartache of marriage. She can neither leave nor betray Naga.

Conclusion - The play Naga mandala (play with a cobra) portrays the commoditization of women in a society where women are not valued as objects of individuality but as objects of possession. They are subjected to social indoctrination and their voices are marginalized. The place of women is shaped by topical references and the idea of a woman holding power of any sort over a man attackes the male ego. Girish Karnad has facilitated the projection of his vision with the aid of historical myths and legends. He wants to empower the female gender and strives for the recognition of their individualistic identity; he feels it is mandatory to reinstate coherent order to the word beyond the self that is the world of human relationships, of nature, of society as a totality.[7]

References:-

1. Newworldencyclopedia.org/entry/chastity
2. Newadvent.org/cathen/03637d.htm
3. Newworldencyclopedia.org/entry/chastity
4. M. Sarat Babu, The Concept of Chastity and *Naga-Mandala*, The Plays of Girish Karnad, Critical perspectives, ed. J. Dodiya, p. 237.
5. Prem Sagar, Karnad’s *Naga-Mandala*, p. 20.
6. Kaustav Chakraborty, ‘Indian Drama In English’, p. 205.
7. http://www.academia.edu/7089919/mythical_elements_in_nagamandala

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to September 2017, Vol. I

Use of Negative capability in the odes of John Keats

Twishampati De *

Abstract - John Keats, a Romantic poet is regarded as one of the most influential creative geniuses humanity has produced. In a letter to his brothers, George and Thomas, in a December 1817 found in 'Selected Letters' (Public Library), Keats has coined the phrase of his entire surviving correspondence, even though he only makes mention of it once:"Negative Capability''.
Key Words - Uncertainties, Mysteries, doubts, negation.

Introduction - Keats fascinates us with the help of Negative capability. The famous maxim "Only the good die young", certainly applies to the English poet, John Keats who had faced much loss, beginning with the death of a brother who died in infancy. After this, he had lost his father who was thrown from a horse and killed. Just later years his mother died of tuberculosis. Then after four years one of his beloved died of some illness. He had mentioned two words ('Negative 'and 'Capability') in a letter to his brother.

These two words are an odd juxtaposition given that their meanings seem to cancel each other out, making the phrase more like Eastern mysticism than wisdom. As with some of those peculiar Taoist saying like, "Act without doing, work without effort", the term "Negative capability" presents us with a logical paradox. What could Keats have possibly meant by this, Negative capability? Perhaps this is what Keats was simply getting at with the expression, suggesting that negativity is no ability at all; that it amounts to nothing or, maybe he meant the ability to remain capable, to remain positive, in the midst of negative circumstances. Certainly, this ability to accomplish extraordinary things in the face of great difficulties proved true of him. But Keats himself suggested something much deeper and profound than even this in the letter he wrote to his brother on October 27, 1818, in which he said that the entire notion struck him suddenly while wondering, "what quality went to form a Man of Achievement in Literature and which Shakespeare possessed so enormously - I mean negative capability, that is, when a man is capable of being in uncertainties, mysteries, doubts, without any irritable reaching after the fact and reason?

As a literary concept, negative capability as explained by Keats is the state when man is "capable of being in uncertainties, mysteries, doubts, without any irritable reaching after facts and reason". This state, according to Keats, must be the main trait of poets to make good poetry. Hence, the negative space of the poet's mind, which is free from the troubles, conflicts and uncertainties of real life, acts as a container for a particular purpose. Brought together, Negative capability refers to the space in one's mind which is free from life's troubles, and can be used and developed for certain purpose.

Negative capability describes the ability of the individual to -

1. Perceive, think and operate beyond any conjecture, speculation.
2. Reach 'a sort of transmission of (one's) consciousness to identify (oneself) with the object.
3. experience phenomenon free from epistemological (logical scientific knowledge) bounds.
3. Contemplate the world without the desire to close it into rational systems, feeling empty to reach a deeper understanding of Beauty and Truth.
4. Remove one's intellectual self while writing (or reading) poetry.
5. Experience the emotion of the language and pass over the half truths in silence.
6. Go beyond the precise definition of words that causes contradiction.

Keats applied the 'Negative capability' in two of his poems ("Ode to a nightingale" and "Ode on a Grecian Urn"). Hearing the song of the bird at Night', Keats admits that:

"My heart aches, and a drowsy numbness pains
My sense, as though of hemlock I had drunk,
Or emptied some dull opiate to the drains
One minute past, and Lethe-wards had sunk."

The ache that the poet feels is not only the soul desire but also it is the soul desire to experience the beauty of nature which the bird is part of ;hence, "It's not through envy of thy happy lot, /But being too happy in thine happiness".

The speaker's desire to experience the nightingale's "happy lot" is linked to his desire for a "draught of vintage!"

* Guest lecturer, Sukumar Sengupta Mahavidyalaya, Keshpur, Paschim Medinipur (W.B.) INDIA

that has been "cooled long age in the deep-delved earth". Furthermore, the poet adds one more quality of wine that may represent the meaning of that bird's singing to him by comparing wine to the waters of Hippocrene, the fountain of poetic inspiration.

"O, for a beaker full of warm south,
Full of the true, the blushful Hippocrene."
Or,
"Tasting of Flora and the country green,
Dance, and Provencal song, and sunburnt mirth!

It is through negative capability power that the poet gets the ability to dissolve with the bird's world rather than escaping to it. The poet is united with the bird, flying with her in that night; and in a bird's – eye perspective, the narrator says that he

"..... Cannot see what flowers are at my feet,
Nor what soft incense hangs upon the boughs,
But, in embalmed darkness, guess each sweet
Wherewith the seasonable month endows
The grass, the thicket, and the fruit tree wild;
White hawthorn, and the pastoral eglantine;"

Visualising the picture painted picture on the Urn in "Ode on a Grecian urn", Keats's worries seem to be vanished. The speaker (poet himself) starts to address the urn by applying atmosphere:

"Thou still unravished bride of quietness,
Thou foster- child of silence and slow time,
Sylvan historian, who canst thus express
A flowery tale more sweetly than our rhyme".

The poet goes further to wonder about the dynamic life depicted on the frozen urn:

"What leaf – fringed legend haunts about thy shape
Of deities or the dales of Arcady?
What men or gods are these? What struggle to escape?"

To conclude, negative capability is such important theory originated by Keats who meant it to be a fundamental quality of poets; yet, it has been applied in many fields of knowledge in modern age; like Philosophy, psychology, and politics.

References :-

1. Robert Gittings, John Keats (London: Heinemann, 1970), 173.
2. The Letters, 71.
3. Oxford Advanced Learner's Dictionary, edited by Sally Wehmeier and others (London: Oxford University Press, 2005), see under "negative" and "capability."
4. The Letters, 71.
5. W.J. Bate, John Keats (Cambridge: Harvard university press,1962), 236-7.

The Letters, 70.

6. Gittings, John Keats, 171.
7. From a letter to Miss Jeffrey, 9th June 1819. The Letters, 346. For more information about Shakespeare impact on Keats, please see Caroline F.E. Spurgeon, Keats's Shakespeare: A Descriptive Study Based On New Material. London: Oxford University Press, 1929).
8. Susan J. Wolfson ed., The Cambridge Companion to Keats (London: Cambridge university press, 2001), 157. Actually, Keats wrote this review on 19 or 20 December, 1817, and it was published in the Champion, on 21 December. Hence, it is written just few days before the negative capability letter.
9. Andrew Motion, Keats (USA: University of Chicago Press,1999),333.
10. John Cook ed., William Hazlitt: Selected Essays (New York: Oxford University Press, 2009), PP. 266-70. Hazlitt's "On Gusto" was first published in *The Examiner*, May 26th, 1816.
11. Ibid, 67.
12. M. H. Abrams, The Mirror and the Lamp: Romantic Theory and the Critical Tradition (New York, oxford university press, 1971), 136.
13. The Letters, 71.
14. Quate in Gittings, John Keats,174.
15. The Letters, 226-7.
16. Gittings, John Keats, 143.
17. Journal of Thi-Qar University number2 Vol.6 March/ 2011
18. Robert Gittings, John Keats: The Living Year (London: HEINEMANN,1978), 131.
19. The text of the two odes under discussion are taken from Maurice Buxton Forman ed., The Poetical Works of John Keats (London: Oxford University Press,1950). "Ode to a Nightingale,"pp.230-233; And Ode on a Grecian Urn,"pp.233-35.
20. Albert Guerards, "Prometheus and the Aeolia Lyre," Yale Review, XXXIII (New Haven: Yale University Press, 1944),495.
21. Ibid.
22. David Perkins, "The Ode to a Nightingale" in Walter Jackson Bate, Keats: A Collection of Critical Essays (United States of America: Printice-Hall,Inc.,1964),103-112.
23. Ian Jack, Keats and the mirror of arts (Oxford: The Clarendon Press, 1967), 140.
24. Ibid, 141.
25. Earl Wasserman, "The Ode On A Grecian Urn" in Walter Jackson Bate, Keats: A Collection of Critical Essays (United States of America: Printice-Hall, Inc., 1964), 113-141. Hereafter referred to as Wasserman followed by page number.
26. Ian Jack, 214.
27. Wesserman, 132.
28. Ibid.
29. Ibid, 134.
30. K. Muir, "The meaning of Hyperion" in K. Muir (ed.), John Keats: A reassessment, (Liverpool: Liverpool University Press, 1958),107.
31. John S. Hill, Imagination in Coleridge (London: MacMillan press, 1978),188. This letter was written November 1819to Peter Morris the pseudoname for John Gibson.

32. R. G. Howarth ed. The Letters of Lord Byron (London: dent&sons LTD, 1962), 323. Byron had written this in a letter to Thomas Moore in the 4th march.
33. T. S. Eliot," Tradition and the Individual Talent" in T. S. Eliot, The sacred wood: Essays on poetry and criticism(London: Methuen &CO LTD, 1960),53 .
34. Journal of Thi-Qar University number2 Vol.6 March/ 2011
35. Abrams, M. H. The Mirror And The Lamp: Romantic Theory and the Critical Tradition. New York, oxford university press, 1971.
36. Bate, Walter Jackson. John Keats. Cambridge: Harvard university press,1962
37. Keats: A Collection of Critical Essays. United States of America: Printice-Hall,Inc.,1964.
38. Cook, John ed. William Hazlitt: Selected Essays. New York: Oxford University Press, 2009.
39. Eliot, T.S. The sacred wood: Essays on poetry and criticism. London: Methuen&CO LTD, 1960.
40. Forman, Maurice Buxton ed. The Poetical Works of John Keats. London: Oxford University Press, 1950.
41. The Letters of John Keats. London: Oxford University Press, 1948.
42. Gittings, Robert. John Keats. London: HEINEMANN, 1968.
43. John Keats: The Living Year. London: Heinemann, 1978.
44. Hill, john S. Imagination in Coleridge. London: MacMillan press,1978.
45. Howarth, R.G. ed. The Letters of Lord Byron. London: Dent&Sons LTD,1962.
46. Jack, Ian. Keats and the Mirror of Arts .Oxford: The Clarendon Press, 1967.
47. Maurice Buxton Forman ed., The Letters Of John Keats. London: oxford university press, 1948.
48. Motion, Andrew. Keats. USA: University of Chicago Press, 1999.
49. Muir, K. ed. John Keats: A reassessment. Liverpool: Liverpool University Press, 1958.
50. Spurgeon, Caroline F.E. Keats's Shakespeare: A Descriptive Study Based On New Material. London: Norwood Editions, 1976.
51. Wehmeier, Sally and others ed. Oxford Advanced Learner's Dictionary. London: Oxford University Press, 2005.
52. Wolfson, Susan J. ed. The Cambridge Companion to Keats London: Cambridge university press, 2001.

****

Elaboration Of Wisdom In Essays Of Charles Lamb

Dr. Jalaj Dixit *

Abstract - Charles lamb the greatest of the essayists. He was a English essayist, poet, and antiquarian, but known for his Essays of Elia and for the children's book Tales form Shakespeare, co-authored with his sister, Mary Lamb. Charles Lamb (10 Feb. 1775-27 December 1834) was at the center of a major literary circle in England.

Introduction - Lamb's "Elia" essays have been nearly universally extolled by reviewers since their initial appearance. While some scholars have considered Lamb's style imitative of earlier English writers, the majority now accept that quality as one of "Elia's" distinctive hallmarks, along with his fondness for the obscure and other idiosyncrasies. In addition to the elegant prose of his essays, works that have delighted generations of readers, Lamb's critical writings testify to his versatility and insight, although some commentators have faulted his unsystematic critical method. During the nineteenth century, Lamb's collected writings tended to elicit highly polarized critical reactions. By the beginning of the twentieth century, however, Lamb's status as one of England's most beloved writers was affirmed, and today he is remembered as a perceptive critic and the finest practitioner of the familiar essays form in English.

Charles Lamb had managed beautifully the mental imbalance of his own, due to certain family clashes.

Elaboration Of Wisdom In Essays Of Charles Lamb - Pope's wise maxim that there are "nameless graces of a work of art that no methods teach" is not to flout methodology, but to insist that "graces" are more important than "methods". But order to be able to interpret and specifically pin point the place and contribution of Charles Lamb to the development of the traditional essay-form, it is imperative that a close survey of essay and essayists since Bacon's times is undertaken, which will enable us to focus our attention on Lamb and his achievements. It is also apparent that no writer can be examined critically without historical perspective. This will help us to suggest in what way Lamb was inferior to many writers and in what way he was superior to many of them finally helping us in determining his place and rank in literature. Such assessment made of Lamb's place in the development of the essay-form is directed to unfold the literary aspects, with which essay as a typical literary genre is concerned its development, contemporary relevance and prospects. The essay writing has a very thought provoking and involving history, without the study of which it would not be possible for us to justify our estimate of Charles Lamb. With this end in view an attempt has been made to collect the relevant facts to trace a systematic evolution of the essay form prior to Lamb.

"An essay by Bacon consists of a few pages of concentrated wisdom, with little elaboration of the ideas expressed; an essay by Montaigne is a medley of reflections, quotations, and anecdotes; in an essay by Addison, the thought is thin and diluted, and the tendency is now towards light didacticism and now towards personal gossip; Locke's Essay Concerning Human Understanding is a ponderous volume, close-packed with philosophic matter; the essays of Macaulay and Herbert Spencer are really small books." 1

Dr. Johnson defines an essay to be "a loose sally of the mind, an irregular, undigested piece, not a regular and orderly performance." 2. The Oxford English Dictionary makes the definition more comprehensive by explaining the essay as "a composition of moderate length on any particular subject, or branch of a subject; originally implying want of finish, but now said of a composition more or less elaborate in style, though limited in range."3 Sainsbury loosely describes it as "a work of prose art." 4

The art of the essay may be said to consist in the artistic form, that the writer gives to his subject, by adopting a method which may imply various devices employed by him. His peculiar manner of introducing his subject, his ability to choose his sentences, loose or periodic, simple, complex or compound, to establish a clear connection between the paragraphs framed, his technique to dilate upon them, his gift to bring home the point to his artistic presentation.

In his treatment of the subject the writer may have occasion to describe, narrate, expose, argue or philosophies. Accordingly, he casts his thoughts in the mould of his power for description, narration, exposition or argumentation. Accordingly, as any of these powers

* Principal,Savita Devi Jaiswal Memorial College,Shamgarh, Distt. Mandsaur (M.P.) INDIA

predominate in the essay, it is designated as descriptive, narrative, expository, argumentative or philosophical.

Bacon, who is supposed to have initiated the English essay, is said to have followed Montaigne's style in his writings. There is no doubt that Bacon's essays abound in short pithy sentences, which look like precepts. They are clear, forceful and brief and thereby become aphorisms to be cited at different departments of knowledge. His essays are wanting in personal element, so much to be seen in modern writers. They are a jumble of ideas written down in short paragraphs, as if the ideas strike the mind of Bacon and he hurries to jot them down, thereby omitting to establish logical connection between paragraphs. However, they are full of practical wisdom and appear to be the results of hisb observation on various interests of life. They are as said by Bacon himself, "brief notes set down rather significantly than anxiously." His aphoristic style and practical wisdom are evident from :

"Revenge is a kind of wild justice, which the more a man's nature runs to, the more ought law to weed it out. For as for the first wrong, it doth but offend the law; but the revenge of that wrong putted the low out of office."8

In the exploitation of their prose-pattern it seems that these writers have used the essay as a vehicle for writing character-sketches of their times. Such writings, in modern days, come under Narrative Essay, which treats of autobiographies and biographies, travels, anecdotes and daily occurrence of interest in newspapers. An examination of these authors and others who came after, proves the essay to be far more technically evolved than before.

Richard Steele narrates the story of Alexander Selkirk, who chose to live all alone on the island of Juan Fernandez, having been put ashore from a leaky vessel in a crazy vessel under a disagreeable commander. Mark into the style of the author in the following sentences from his narrative essay :

"The person I speak of is Alexander Selkirk, who chose to live all alone on the island of Juan Fernandez, having been put ashore from a leaky vessel in a crazy vessel under a disagreeable commander. Mark into the style of the auther in the following sentences from his narrative essay:

" The person I speak of is Alexander Selkirk whose name is familiar to men of curiosity from the fame of his having four years and four months alone in the island of Juan Fernandez." 13

" The writer unfolds that Alexander had an irreconcilable difference with the captain of the ship and so chose to live alone in the island of Juan Fernandez."

References :-

1. Jerrold, W. : Charles Lamb. London, 1905
2. Walker, Hugh : The English Essays and Essayists. Delhi 1961
3. Ainger, A. : Charles Lamb. London ,1882
4. Albert, E. : A History of English Literature, 1965
5. Ashe, T. : Table Talk and Omniana. London, 1884/1909

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to September 2017, Vol. I

परमऋषियों के आत्मज्ञान का तत्विक अनुशीलन

डॉ. मृगेश कुमार निरत *

शोध सारांश – वृत्ति ज्ञान की जिस दशा में यह निश्चय हो जाता है कि जितने भी स्थूल और सूक्ष्म रूप प्रतीत होते हैं, यह सब प्रत्यक् चैतन्या भिन्न ब्रह्मतत्व के अज्ञान से ही अपने आप में प्रतीत होते हैं। यह वस्तुत: सत्य नहीं है और अपने स्वरूप का दृढ़ अपरोक्ष साक्षात्कार हो जाने पर जब इनका नितान्त निषेध, अपवाद अथवा बाध हो जाता है, तब उस अविद्या तत्कार्य निवर्तक ज्ञान ही ऋषि संज्ञा प्रदान करती है। श्री शुकदेव स्वामी परीक्षित जी से कहते हैं–

अमुनी भगवद्रूपे मया ते अनुवर्णिते।
उभे अपि न गृह्णन्ति मायासृष्टे विपश्चित:।।[1]

प्रस्तावना – मैंने तुम्हें भगवान् के स्थूल और सूक्ष्म व्यक्त और अव्यक्त जिन दो रूपों का वर्णन सुनाया है। ये दोनों ही भगवान् की माया के द्वारा रचित है। इसलिए विद्वान पुरुष इन दोनों को ही स्वीकार नहीं करते। प्रथम स्कन्ध में त्वं पदार्थ की प्रधानता से प्रप0च का निषेध है और द्वितीय स्कन्ध में तत् पदार्थ की प्रधानता से। तृतीय स्कन्ध में कपिल जी कहते हैं–

ज्ञानमात्रं परं ब्रह्म परमात्मेश्वर: पुमान्।
दृश्यादिभि: पृथग्भावैर्भगवानेक ईयते।।[2]

अद्वितीय अर्थात् ज्ञाता ज्ञेय में द्वैत से रहित ज्ञान ही निर्गुण ब्रह्म है। वर्हिमुख इन्द्रियों के कारण वह शब्द स्पर्शादि से युक्त पदार्थों के रूप में प्रतीत होता है और भ्रान्ति से वे पदार्थ सत्य माने जाते हैं। जैसे एक ही वस्तु विभिन्न इन्द्रियों के द्वारा पृथक–पृथक रूप में अनुभव का विषय होती हैं। इसी प्रकार शास्त्रोक्त विभिन्न साधन पद्धतियों से एक ही भगवान् अनेक रूपों में अनुभव के विषय होते हैं। जड़भरतोपाख्यान में विशुद्ध अद्वय ज्ञान को ही परमार्थ कहा गया है और उसी का नाम भगवान् और वासुदेव भी है। पुर0जनोपाख्यान में ईश्वर ने अपने सखा से कहा–

अहं भवान्न चान्यस्त्वं त्वमेवाहं विचक्ष्व भो:।
न नौ पश्यन्ति कवयश्छिद्रं जातु मनागपि।।[3]

श्रीमद् भागवत में सन्यासियों के आत्मचिन्तन की जो प्रकृया है विशेषकर मृत्यु के समय उसका स्वरूप यह है।

परिकल्पना –किसी भी तथ्य पर किये गये चिन्तन की मानसिक भूमिका को परिकल्पना कहा जाता है। जिससें जिस प्रकार से सामाजिक घटनाओं की खोज करने के साथ उस विषय वस्तु को जानने की अविरल जिज्ञासा को ही परिकल्पना की समस्या के समाधान का प्रयास करती है। जिसे शोध पत्र निमार्ण करने में अह्म भूमिका होती है।

शोध प्रविधि – शोध पत्र का शीर्ष **परमऋषि के आत्मज्ञान का तत्विक अनुशीलन** द्वितीयक स्त्रोतों के माध्यम इस तथ्य का प्रयोग किया गया है। इसमें संदर्भ ग्रन्थों हेतु पुस्तकालय एवं धार्मिक ग्रन्थों का आधार बनाया गया है। इन्हीं तथ्यों को विश्लेषणात्मक विधि के द्वारा द्वितीयक तथ्यों का प्रयोग किया गया है।

उद्देश्य – महापुरुषों की अन्तिम गति के श्रीमद्भागवत में अनेक वर्णन हैं। भगवान् के विशेष अनुग्रह भाजन अजामिल, अघासुर आदि कुछ व्यक्तियों को तो अन्तिम गति के रूप में भागवत देह की प्राप्ति हुई है। परन्तु उनके अतिरिक्त जिन–जिन महापुरुषों की अन्तिम गति का वर्णन है, ब्राह्मी स्थिति अथवा ब्रह्मनिर्वाण के रूप हैं। महात्मा भीष्म **आत्मन्यत्मान मावेश्य सोऽन्त:श्वास उपारमत** अर्थात् आत्मस्वरूप श्रीकृष्ण में अपने आपको मिलाकर वे निष्प्राण उपरत हो गए। इसका अर्थ है कि उनके सूक्ष्म शरीर का कहीं गमन नहीं हुआ। **न तस्य प्राणा उत्क्रामन्ति** इस श्रुति के अनुसार उनके प्राण श्रीकृष्ण में लीन हो गये। इसलिए कहा गया कि **सम्पद्यमानमाज्ञाय भीष्मं ब्रह्माणि निस्कलेय** महात्माओं ने देखा कि भीष्म निरवयव ब्रह्म से एक हो गए। इसी प्रकार अर्जुन भी तत्वज्ञान के द्वारा लिू शरीर से मुक्त होकर पुनर्जन्म रहित गति को प्राप्त हुए–

विशोको ब्रह्म सम्पत्या संछिन्नद्वैतसंशय:।
लीनप्रकृतिनैर्गुण्यादलिूत्वादसम्भव:।।[4]

युधिष्ठिर जी ने भी–

सर्वमात्मन्यजुहवीद् ब्रह्मण्यात्मानमव्यये।।[5]

भगवद्भक्त जो महात्मा हैं, उनके जीवन में एकरूपता दिखाई देते है, श्रीकृष्णमयी सृष्टि राममयी, अपने–अपने इष्टाकार वृत्ति से जगत् उन्हें दिखाई देता है। यदि सृष्टि जो दिखाई देती है, यदि यह इष्टाकार नहीं तो भ्रम, मृषा, माया भान मात्र ही है। पृथिवी भगवान् श्रीकृष्ण से कह रही है–

अहं पयो ज्योतिरथानिलो नभो मात्राणि देवा मन इन्द्रियाणि।
कर्ता महानित्यखिलं चराचरं त्वय्यद्वितीये भगवन्नयं भ्रम:।।[म]
सत् इदमुत्थितं सदिति चेन्ननु तर्कहतं, व्यभिचरति स्व च वव च मृषा न तयोभुक्।
व्यवहृतये विकल्प इषितोऽन्धपरम्परया भ्रमयति भारती त उरुवृत्तिभिरुक्थ जडान्।।

जैसे मिट्टी से बना हुआ घड़ा मृत्तिका रूप ही होता है, वैसे ही सत् से बना हुआ

* अतिथि विद्वान (संस्कृत) शासकीय इंदिरा गांधी गृहविज्ञान कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शहडोल (म.प्र.) भारत

जगत् भी सत् ही है यह बात युक्ति संगत नहीं है क्योंकि कारण और कार्य का निर्देश ही उनके भेद का द्योतक है। यदि केवल भेद का निषेध करने के लिए ही ऐसा कहा जा रहा हो तो पिता और पुत्र में, दण्ड और घटनाश में कार्य कारण भाव होने पर भी वे एक दूसरे से भिन्न हैं। इस प्रकार कार्य कारण की एकता सर्वत्र एक सी नहीं देखी जाती यदि कारण शब्द से निमित्त कारण न लेकर केवल उपादान कारण लिया जाए जैसे कुण्डल का स्वर्ण तो भी कहीं-कहीं कार्य की असत्यता प्रमाणित होती है, जैसे रस्सी में सर्प। यहाँ उपादान कारण के सत्य होने पर भी उसका कार्य सर्प सर्वथा असत्य है। यदि यह कहा जाए कि प्रतीत होने वाले सर्प का उपादान कारण केवल रस्सी नहीं है उसके साथ अविद्या का भ्रम का मेल है, तो यह समझना चाहिए कि अविद्या और सत वस्तु के संयोग से ही जगत् की उत्पत्ति हुई है। इसलिए जैसे रस्सी में प्रतीत होने वाला सर्प मिथ्या है, वैसे ही सत वस्तु में अविद्या के संयोग से प्रतीत होने वाला नाम रूपात्मक जगत् भी मिथ्या है। यदि केवल व्यवहार की सिद्धि के लिए ही जगत् की सत्ता अभीष्ट हो, तो उसमें कोई आपत्ति नहीं क्योंकि वह पारमार्थिक सत्य न होकर केवल व्यावहारिक सत्य है। यह भ्रम व्यावहारिक जगत् में माने हुए कील की दृष्टि से अनादि है और अज्ञानीजन बिना विचार किए पूर्व-पूर्व के भ्रम से प्रेरित होकर अन्ध परम्परा से इसे मानते चले आ रहे हैं। ऐसी स्थिति में कर्मफल को सत्य बतलाने वाली श्रुतियाँ केवल उन्हीं लोगों को भ्रम में डालती हैं, जो कर्म में जड़ हो रहे हैं और यह नहीं समझते कि इनका तात्पर्य कर्मफल की नित्यता बतलाने में नहीं बल्कि उनकी प्रशंसा करके उन कर्मों में लगाने में है। या?

संगम विरह विकल्पे वरमिह विरहो न संगमस्तस्य।
संगे सैव तथैका त्रिभुवनमपि तन्मयं विरहे।।[5]

इस प्रकार केवल भगवद् विप्रलम्भ जन्य तीव्र ताप ही जीव को होता है या मिलन भी हो सकता है। तब श्रुति कहती है समानं वृक्षं परिषस्वजाते जहाँ हृदय में जीवात्मा, वहीं हृदय में परमात्मा। भगवान् सर्वव्यापी है। इस प्रकार तीन सम्बन्ध हो गए। साजात्य, सख्य, सादेश्य, सम्बन्ध। फिर जीव को मिलने में क्या समस्या है? यहाँ शङ्का होती है, वेदों ने भगवान् को असू कहा है- **ह्यं पुरुषः**म भगवान् अस्त हैं। जल में कमल पत्र रहता है, परन्तु निर्लेप रहता है, उसी प्रकार जीव के पास रहता हुआ भी भगवान् निर्लेप है। इसीलिए- **असख्नग्द्यह्य न हि सज्जते** यह मानना ही उचित है। भगवान् शंकराचार्य निर्गुण ब्रह्म की स्तुति की है-

उदासीनः स्तब्धः सततमगुणः सू रहितो, भवांस्तातः कांतः परमिह भवेज्जीवन गतिः।
अकस्मादस्माकं यदि न कुरुषे स्नेहमथतद्, वसस्वीयान्तर्विमल जठरेऽस्मिन्पुनरपि।।[6]

हम तो दुख भोगने अभ्यासी हैं। जन्म-जन्मान्तर न जाने कितने दुख भोग चुके हैं और भोग लेंगे हमको इसकी चिन्ता नहीं है- **किन्तु त्वदग्रे शरणागतानां पराभवो नाथ न तेऽनुरुपः** जो आपके शरणागत हैं, उनका पराभव आपके अनुरूप नहीं है। तो जो असंग है, उसको इस बात की क्या चिन्ता? इसलिए इस असंगता के होने से जीव का भगवान् के द्वारा कल्याण होना असम्भव है।

तो श्रुति कहती है- सयुजौ- भगवान् असंग है! परन्तु अनात्मा से असंग हैं। अनात्मा का आत्मा के साथ संसर्ग नहीं है, तुम तो आत्मा ही हो। आत्मा-आत्मा के संसर्ग में क्या कठिनाई है।

उपयोगिता - तत्पदार्थ की प्रधानता से विचार करते हैं, तत् पद सर्वनाम भी है और ईश्वर का नाम भी है। ॐ तत् सत् प्रसिद्ध है। धात्वर्थ है, का विस्तारक-तनोति। उसके स्वरूप का चिन्तन, स्मरण, श्रवण, कीर्तन, सब तत्प्रधान पदार्थ है। जिससे मन उसमें लगे उस पर मनः कल्पित आवरण भू से। वह तत्पदार्थ प्रधान धर्म है। लोकभाषा में उसे ही भक्ति कहते हैं। संसार को ईश्वर को विभाग पूर्वक पृथक-पृथक करके ईश्वर का अनुसंधान करना। भाग-विभाग भक्ति है। भजन भक्ति है। संसार भजन भक्ति। त्वं पदार्थ के चिन्तन में आत्म अनात्म विवेक का जो स्थान है, वही तत्पदार्थ के चिन्तन में भक्ति का स्थान है। अपरोक्ष का विवेक परोक्ष की भक्ति। प्रत्यक्षानुमानवादी चार्वाक, बौद्ध आत्मा परमात्मा की सत्ता स्वीकार नहीं करता। जैन सश्वोच विकासशील आत्मा को मानते हैं परमात्मा को नहीं। न्याय वैशेषिक में मुक्ति सिद्ध परमात्मा है। योगदर्शन में साधन सिद्धि में सहायक प्रयोजसिद्ध परमात्मा है। तत्व दृष्टि से संख्य-योग में परमात्मा को दृश्य विभाग या द्रष्टा विभाग में अन्तर्भूत करना पड़ेगा या द्रष्टा दृश्य से विलक्षण महाद्रष्टा की कल्पना करनी पड़ेगी। पूर्वमीमांसा में आत्मा कर्ता है, फलदाता परमात्मा स्वीकार नहीं है। कर्म स्वयं अपना फल दे देता है। वेदान्त दर्शन में परमात्मा माया उपाधि से युक्त होकर जगत् का कर्ता भी है और जीवों के कर्म का फलदाता भी है। यह केवल मुक्त सिद्ध या भाव कल्पित नहीं श्रुति सिद्ध है।

चार्वाक भूत चतुष्टय से सृष्टि मानते हैं, उन्हें उत्पत्ति प्रलय स्वीकार नहीं अतएव कर्म या ईश्वर रूप निमित्त की आवश्यकता नहीं होती। जैन सृष्टि की उत्पत्ति तो नहीं मानते परन्तु पुद्गल को उपादान एवं कर्म को निमित्ता मानकर पदार्थों के जन्म-मृत्यु की संगति लगाते हैं। भूत चतुष्टय और पुद्गल दोनों वहिरंग है, कर्म अन्तर है। न्याय वैशेषिक परमाणु को उपादान ईश्वर को निमित्त और कर्मादि को सहकारी मानते हैं। इसका उपादान भी वहिरंग है। बौद्ध अन्तरू कारणवादी हैं। उनका विज्ञान चित्ता, शून्य, कर्म सब कुछ अन्तर है। उनके कार्यकारणवाद में परमात्मा के लिए कोई स्थान नहीं है। सांख्य योग में प्रकृति उपादान एवं निमित्त दोनों ही है। वह स्वयं बनती है और स्वयं बनाती है। बुद्धि और पुरुष के बीच में स्थित होने के कारण वह अन्तरू है। पूर्वमीमांसाकर सृष्टि को अनादि अनन्त मानते हैं, इसमें कर्म निमित्तक विविधता है। आत्मा कर्ता भोक्ता है, सृष्टि बहिरंग है परन्तु कर्म एवं कर्ता अन्तर ही है।

निष्कर्ष - वेदान्त तत्पदार्थस्वरूप परमात्मा का निरूपण करता है। उसमें दो धारा बन गयी है- सगुणवादी और निगुर्णवादी। सगुणवादी में वैष्णव, शैव, शाक्त और गाणपत्य आदि अनेक अवान्तर भेद हैं। परन्तु आश्चर्य है कि ये सब के सब परमात्मा को अभिन्ननिमित्तोपादान कारण मानते हैं। कोई विशेष्य विशेषण, कोई स्वाभाविक, कोई औपाधिक कोई विवर्त कोई परिणाम मानते हैं।

यह परमात्मा यदि आत्मा से पृथक हो जाए तो प्रत्यक्ष होने पर दृश्य, कार्य जड़ एवं भोग्य हो जाएगा परिच्छिन्न मानना पड़ेगा। यदि परोक्ष हो तो केवल कल्पित होगा। परमात्मा की प्रत्यक्ष परोक्ष से विलक्षण साक्षात् अपरोक्षता, अभेद को स्वीकार किए बिना हो नहीं सकती। परमात्मा आत्मा से पृथक होकर कल्पित होगा, सत्ताा शून्य जड़ होगा। आत्मा, परमात्मा से अलग होकर मृत्युग्रस्त होगा दुःखी होगा। अतः श्रुति सिद्ध परमात्मा अद्वितीय है। एक का दो तीन में अन्वय होता है, उनसे व्यतिरेक भी होता है। एक में वृद्धि हास विभाग संयोग पृथकत्व आदि हैं परन्तु अद्वितीय में यह सब कुछ नहीं है। अतः निश्यचय ही तत् तथा त्वं पदार्थ का निरूपण करने के लिए बहुत से वेदान्त वाक्य हैं, उन्हें अवान्तर वाक्य कहते हैं। उन सब के

द्वारा निरुप्य तत्त्वं का समानाधिकरण्य असि पद के द्वारा सांकेतिक एकता दोनों पदार्थों की उपाधि का निषेध करके स्वरूप की अद्वितीयता बोधित करती है। अद्वितीयता में उपाधियाँ बाधित हो जाती हैं, फिर प्रयोजन पूर्ति हो जाने से निषेध्य भेद– सम्पर्क एवं तन्निवर्तक वाक्य, महावाक्य भी बाधित हो जाते हैं। सत्य प्रत्यगात्मा से अभिन्न एवं अद्वय ब्रह्म है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. भाग0 – 2.10.35
2. 3.32.26 भा0
3. भाग0 – 4.28.62
4. भाग0 1.15.31
5. वहीं – 42
6. 10.59.30 भा0
7. भागवतसुधा – पृ0 112
8. वृहद0 4.3.15
9. वृहदारण्यकोपनिषद – 4/5/15
10. प्रबोध सुधाकर – 245

****

श्रीमद्भागवत महापुराण में उपमामूलक अलंकार का विवेचन

जितेन्द्र ठाकुर *

प्रस्तावना – **'तदा भारवती भूमिर्गो रूपयं कमाश्रयेत्।।'**

जब घोर कली युग आयेगा जिनके तब भार से गोरूपिणी पृथ्वी किस के शरण में जाएगी। ऐसा उद्धवजी ने श्रीकृष्ण भगवान् से कहा।

रूपक **'निगमकल्पतरुरोर्गलितं फलम्।'**

यह श्रीमद्भागवत् वेद रूप कल्पवृक्ष का पका हुआ फल है। (जिसमेंभागवत् रस का निरन्तर पान किया जा सकता है।)

उपमा **'यथा नभसि मेघौघो रेणुर्वा पार्थिवोऽनिले।**
एवं द्रष्टरि दृशत्वमारोपितमबुद्धिभिः।'

जैसे बादल के वायु के आश्रय में रहने से धूसरपन धूल में होता है, परन्तु अल्पबुद्धि मनुष्य धूसरपन को वायु मेंआरोपित करते हैं, वैसे ही अविवेकी पुरुष सब के साक्षी आत्मा में स्थूल दृश्य रूप जगत् का आरोप करते हैं।

उपमा **'ईशस्य हि वशे लोको योषा दारुमयी यथा ।'**

जैसे कठपुतली नचाने वाले की इच्छा अनुसार ही नाचती है, वैसे ही यह सारा संसार ईश्वर के अधीन है।

उपमा **'भवसिन्धुप्लवो दृष्टो हरिचर्यानुवर्णनम् ।'**

भगवान् की लीलाओं का कीर्तन संसार–सागर से पार जाने का जहाज है।

उपमा **'तत असाद्य तरसा दारुणं गौतमीसुतम्।**
बबन्धामर्षताम्राक्षः पशुः रशनया यथा।।'

क्रोध से लाल अर्जुन की आखों देख अर्जुन ने क्रूर अश्वत्थामा को रस्सी से बांधे गए पशु की भाँति झपटकर उसे बांध लिया। (क्योंकि सोते हुए पाण्डु पुत्रों का हत्या की थी। इतना ही नहीं अश्वत्थामा ने अर्जुन पर ब्रह्मास्त्र भी छोड़ा) तब अर्जुन ने अश्वत्थामा को पकड़ लिया।)

उपमा **'यथा पङ्केन पङ्काभ्यः सुरसा वा सुराकृतम्।**
भूतहत्यां तथैवैकां न यज्ञैर्मार्ष्टुर्पहति।।'

जैसे कीचड़ से गंदला जल स्वच्छ नहीं किया जा सकता, मदिरा से मदिरा की अपवित्रता नहीं मिटाई जा सकती वैसे ही यज्ञों में हिंसात्मक पशु बलि से यज्ञ हत्या का प्रायश्चित नहीं मिटाया जा सकता।

उपमा **'सपालो यद्वशे लोको वायोरिव घनावलिः।।'**

जैसे बादल वायु के वश में रहते है, वैसे ही सारा संसार काल भगवान् के अधीन है।

उपमा **'परैत्यनिच्छतो जीर्णो जरया वाससी इव।।'**

पुराने वस्त्र की तरह बुढ़ापे से गला हुआ आपका शरीर आपके न चाहने पर भी क्षीण हुआ जा रहा है। अर्थात् शरीर आपकी इच्छा से जीना या मरना नहीं हो सकता। वह ईश्वरेच्छा पर निर्भर है।

उपमा **'यथा गावो नसि प्रोतास्तन्त्यां बद्धाः स्वदामभिः।**
वाक्तन्त्यां नामभिर्बद्धा वहन्ति बलिमीशितुः।।'

जैसे बैल बड़ी रस्सी में बँधे और छोटी रस्सी से नथे रह कर अपने स्वामी का भार ढोते हैं। उसी प्रकार के नामों से वेद रूप रस्सी मेंबंध कर ईश्वर की ही आज्ञा का अनुसरण करते हैं।

उपमा **'कालकर्मगुणाधीनो देहोऽयं पाञ्चभौतिकः।**
कथमन्त्रांस्तु गोपायेत्सर्पग्रस्तो यथा परम्।।'

यह पंचभौतिक शरीर काल, कर्म और गुणों के वश में है। अजगर के मुँह में पड़े हुए पुरुष के समान यह पराधीन शरीर दूसरों की रक्षा ही क्या कर सकते है?

रूपक **'आहुः शरीरं स्थमिन्द्रियाणि**
हयानभीषून् मन इन्द्रियेशम्।
वर्त्मानि मात्रा धिषणां च सूतं
सत्वं बृहद् बन्धुरमीशसृष्टम्।।
अक्षं दर्शप्राणमधर्माधर्मौ
चक्रेऽभिमानं रथिनं च जीवम्।
धनुर्हि तस्य प्रणवं पठन्ति
शरं तु जीवं परमेव लक्ष्यम्।।'

उपनिषदों में कहा गया है कि शरीर रथ है, इन्द्रियाँ घोड़े हैं। इन्द्रियों का स्वामी मन लगाम है, शब्दादि विषय मार्ग है। बुद्धि सारथी है, चित्त ही भगवान् के द्वारा निर्मित बांधने की विशाल रस्सी है, दस प्राण धुरी है, धर्म और अधर्म पहिए हैऔर इसका अभिमानी जीव रथी कहा गया है। ऊंकार ही उस रथी का धनुष्य है, शुद्ध जीवात्मा बाण और परमात्मा लक्ष्य है।

उपमा **'नव–मूढ मायाभिर्मायेशान् नो जिगीषसि।**
जित्वा बालान् निबद्धाक्षान् नटे हरीत तद्धनम्।।'

मूर्ख! जैसे नट बच्चों की आँखे बांधकर अपने जादू से उनका धन ऐठ लेता है, वैसे ही तू माया की चालों से हम पर विजय प्राप्त करना चाहता है। तुझे पता नहीं कि हम लोग माया के स्वामी है, वह हमारे कुछ नहीं बिगाड़ सकती।

उपमा **'अनामकाः शत्रुबलेन निर्जिता**
वणिक्पथा भिन्ननवो यथार्णवे।।'

उस समय देवताओं की ठीक वैसी ही अवस्था हो रही थी जैसे बीच समुद्र में नाव टूट जाने पर व्यापारियों की होती हैं। प्रस्तुत प्रसङ्ग देवासुर संग्राम में कहा है। जम्भासुर नामक असुर की मृत्यु पर उसके भाई बंधु नमुचि ने देवताओं के साथ युद्ध किया।

उपमा **'न जातु कामः कामानामुप भोगेन शाम्यति।**

* शोधार्थी, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

हविषा कृष्णत्मेव भूय एवाभिवर्धते।।'

विषयों के भोगने से भोग वासना कभी शान्त नहीं हो सकती। बल्कि जैसे घी की आहुति डालने पर आग और भड़क उठती हैं, वैसे ही भोग वासनाएँ भी भोगों से प्रबल हो जाती है।

उपमा **'ज्योतिर्यथैवोदकपार्थिवष्वद: समीर वेगनुगतं।**
एवं स्वमायारचितेष्वसौ पुमान् गुणेषु रागानुगतो विमुह्यति।।'

जैसे सूर्य, चन्द्रमा आदि चमकीली वस्तुएँ भरे हुए घड़ों में तेल आदि तरल पदार्थों मेंप्रतिबिम्बित होती है और हवा के झोके से उनके जल आदि के हिलने डुलने पर उनमें प्रतिबिम्बित वस्तुएँ भी चंचल जान पड़ती हैं- वैसे ही जीव अपने स्वरूप के अज्ञान द्धारा रचे हुए शरीरों में राग करके उन्हेंअपना आप मान बैठता है और मोह वश उनके आने जाने को अपना-अपना आना-जाना मानने लगता है।

पूतना के उद्धार के समय भगवान् कृष्ण ने पूतना की दुष्टचाल को भलीभाँति परख लिया था, क्योंकि भगवान् जो स्वयं दुष्टों के काल होते हैं। इसलिए पूतना ने कालरूप भगवान् कृष्ण को अपनी गोद मेंउठा लिया। इस घटना को उपमा के रूप मेंभागवतकार ने इस प्रकार व्यक्त किया है-

'अनन्तमारोपयदङ्कमन्तकं यथोरगं सुप्तमबुद्धिरज्जुधी:'

जैसे कोई पुरुष भ्रमवश सोये हुए साँप को रस्सी समझकर उठा ले, वैसे ही कालरूप भगवान् श्रीकृष्ण को पूतना ने अपनी गोद मेंउठा लिया।

पूतना के विकराल वध की उपमा इन्द्र द्धारा वृत्र वध के सम तुल्य बताई है- यथा-

'प्रसार्य गोष्ठे निजरूपमास्थिता
वज्राहतो वृत्र इवापतन्नृप।।'

पूतना के विशाल मृत शरीर की कल्पना भी उपमा के रूप में दर्शाई गई है जैसे-

'ईषा मात्रोग्रदंष्ट्रास्यं गिरिकन्दरनासिकम्।
गण्डशैलस्तनं रौद्रं प्रकीर्णारुणमूर्धजम्।।
'अन्ध कूप गभीरा पुलिनारोह भीषणम्।
बद्धसेतु भूजोर्वङ्घ्रि शून्यतोयह्रदोदारम्।।'

उसका मुँह हल के समान तीखी दाँतों और भयानक दाढ़ों से युक्त था। उस के नथुने पहाड़ की गुफा के समान गहरे थे और स्तन पहाड़ से गिरी हुई चट्टानों की तरह बड़े-बड़े थे। लाल-लाल बाल चारों और बिखरे हुए थे। आँख अंधकूप के समान गहरी नितम्ब नदी के करार की तरह भंयकर भुजाएँ, जांघे और पैर नदी के पुल के समान तथा पेट सूखे हुए सरोवर की भाँति जान पड़ता था।

भगवान् श्रीकृष्ण ने तृणावर्त का वध किया तब उसकी देह 'पुरं यथा रुद्र शरेण विद्धम्' की तरह कहा गया। अर्थात् जैसे भगवान् शंकर की तरह कहा गया। अर्थात् जैसे भगवान् शंकर के बाणों से आहत से त्रिपुरासुर गिर कर चूर-चूर हो गया।

वर्षा ऋतु और शरद ऋतु के वर्णन में कवि ने रामचरितमानस की अनुकृति के समान वर्षा और शरद ऋतु के उपादानों से भिन्न-भिन्न उपमाओं के रूप में प्रदर्शित किया है। जैसे संक्षेप मेंइस प्रकार व्यक्त किया है- यथा-

अस्पष्टज्योतिराछिन्नं ब्रह्मेव सगुणं बभौ।

आकाश ऐसे बादलों से ढँक जाता है, जैसे ब्रह्म स्वरूप होने से गुणों से ढक जाता है।

'निशामुखेशु खद्योतास्तमसा भान्ति न ग्रहा:।
यथा पापेन पाखण्डा न हि वेदा: कलो युगे।।'

बादलों के घिर जाने से अंधेरा इस तरह छा जाता हैं जैसे कलियुग में पाप की प्रबलता से पाखण्ड मतों का प्रचार बढ़ जाता है और वैदिक सम्प्रदाय लुप्त होने लगता है।

'गिरयो वर्षधाराभिर्हन्यमाना न विव्यथु:।
अभिभूयमाना व्यसनैर्यर्थथा धोक्षजचेतस:।।'

जैसे मूसलाधार वर्षा की चोट से पर्वतों को कोई व्यथा नहीं होती इस प्रकार भगवान् के प्रति समर्पित चित्त पर दु:खों की भरमार का कोई प्रभाव नहीं पड़ता।

'निश्चलाम्बुरभूत्तूर्ष्णी समुद्र: शरदागमे।
आत्मन्युपरते सम्यङ्मुनिर्व्युपरतागम:।।'

शरद ऋतु मेंसमुद्र जल स्थिर हो जाता हैं वैसे ही आत्माराम पुरुष कर्मकाण्ड छोड़कर शांत हो जाता है।

अन्त मेंभ्रमर गीत के माध्यम से कृष्ण के आचरण को व्यंग्यार्थ में उपालम्ब दिया है, यद्यपि इस उपालम्ब मेंभी कृष्ण लीला ही व्यक्त करने का भाव गोपियों में सघन रूप मेंदिखाई देता है।

'अन्येष्वर्धकृता मैत्री यादवर्थविडम्बनम्।
पुम्भि: स्त्रीकृता यद्धत् सुमस्स्बिव षट्पदै:।।'

भौरों का पुष्पों से और स्त्रियों से स्वार्थ का प्रेम सम्बन्ध होता है।

'खगा वीतफलं वृक्षं भुक्त्वा चातिथयो गृहम्।
दग्धं मृगास्तथारण्यं जारो भुक्त्वारतां स्त्रियम्।।'

पक्षी फल खाने पर उड़ जाते हैं। वन मेंआग लगने पर पशु भाग जाते हैं वैसे ही जार पुरुष भी अपना काम हो जाने पर स्त्रियों के प्रति उपेक्षा से भर जाते हैं।

इस प्रकार श्रीमद्भागवत में सादृश्यमूल अलंकार के रूप में रूपक और उपमा का विवेचन किया गया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भाग. महात्म्य 3/57
2. भाग. 1/3
3. भाग. 1/31
4. भाग.1/6/7
5. भाग. 1/6/35
6. भाग.1/7/33
7. भाग. 1/9/52
8. भाग. 1/9/14
9. भाग. 1/13/24
10. भाग.1/13/41
11. भाग. 1/13/45
12. भाग. 7/15/41-42
13. भाग. 8/11/4
14. भाग. 8/11/25
15. भाग. 9/19/14
16. भाग. 10/1/43
17. भाग.10/6/8
18. भाग. 10/6/13
19. भाग.10/6/15-16
20. भाग.10/20/8
21. भाग. 10/20/15
22. भाग. 10/20/40
23. भाग. 10/47/6
24. भाग.10/20/4
25. भाग. 10/47/8

****

Study of Vocational Guidance Needs in Relation to Social Value and Nature of School of Higher Secondary School Students of Indore District

Dr. Pallavi Acharya *

Abstract - The objective of the research was to study the influence of Social Values, Nature of school and their interaction on Vocational Guidance Needs of the students. The hypothesis of the study was there is no significant influence of Social Values, Nature of school and their interaction on Vocational Guidance Needs of the students. The research was survey in nature. 500 students of Higher Secondary School of Indore City were selected randomly as a sample. Personal Values Questionnaire (1972) by Sherry and Singh was used for assessment of Value. 'Vocational Guidance Needs Scale' (VGNS) was developed and standardized by researcher for assessment of student's Vocational Guidance Needs. The reliability coefficient of VGNS was found 0.87. Content validity was also ensured. The data was analyzed with the help of 2x2 ANOVA. The findings of study were : (1) The students of high and low SV group were found to have Vocational Guidance Need to same extent. (2) Government School students were found to have more Vocational Guidance Need as compared to Private School. (3) The Vocational Guidance Needs of the students was found to be independent of interaction between Nature of School and SV.
Key Words - Vocational Guidance Needs, Values, Social Value and Nature of School etc.

Introduction - "Vocational guidance is the process of assisting the individual to choose an occupation, prepare it enter upon and progress in it." – National Vocational Guidance Association, USA(1954)

Vocational guidance is the assistance given to students in choosing and preparing for a suitable vocation. It is concerned with the selection of vocation and preparation for it. According to the International Labour Organization, vocational guidance is the assistance rendered by an individual to another in the later solving of problems related to his progress and vocational selection keeping in mind the individual's peculiarities or special abilities and their relations with his occupational opportunity. Vocational guidance may be defined as the process to help an individual to choose an occupation, prepare for it, enter upon it and progress in it. In other words it helps a person to have satisfactory vocational adjustment.

A value concept is accepted in philosophy, ethics, aesthetics and sociology and characterizing the socio – historical significance for society and personalized meaning for individual of certain realities. Marxist – Leninist philosophy sees the sources of axiological attitude in the social characters of human activity. The whole variety of human object oriented activity and social relation are the object of that attitude. The value assessment criteria for different phenomenon are of concrete historical nature. Values are important factors of social regulation of individual behaviour and human interrelations.

Review of Related Literature - Related to Vocational Guidance & Needs some researches have been conducted by Geroge (1968), Dasgupata(1972), Reddy (1972), Mehta(1977), Yadav(1979), Bhatnagar(1983), Mowji(1983), Tulsi(1983),Fernandes(1984),PremLata (1984),Gupta (1985), Kamat(1985) Singh(1985), Sharma(1986), Tripathi (1986),Venkatramana (1988), Gaikwad (1989), Gupta (1991), Kottiyaniyil (1994), Fazel (1996), Das (1998) and Mehata, Bajaj & Kumar (2006). Related to Vocational Guidance & Value some researches have been conducted by Mann (1978), Saraswat (1982), Chinara (1992), Dadu (1992) & Gupta (2000).

Objective - The objective of the study was : (1) To study the influence of Social Values, Nature of school and their interaction on Vocational Guidance Needs of the students.

Hypothesis - The hypothesis of the study was : (1) There is no significant influence of Social Values, Nature of school and their interaction on Vocational Guidance Needs of the students.

Methodology - The research was survey in nature. 500 students of Higher Secondary School of Indore City were selected randomly as a sample. Personal Values Questionnaire (1972) by Sherry and Singh was used for assessment of Value. This questionnaire included ten values for the assessment and consisted of 40 items of 'mostly like' and 'mostly dislike' type. The coefficient of correlation was found 0.64. Only Social Value was taken in the study. 'Vocational Guidance Needs Scale' (VGNS) was

* Associate Professor, Victoria College, Indore (M.P.) INDIA

developed and standardized by researcher for assessment of student's Vocational Guidance Needs. The reliability coefficient of VGNS was found 0.87. Content validity was also ensured. The data was analyzed with the help of 2x2 ANOVA.

Result & Analysis - The objective was to study the influence of Social Value (SV), Nature of School and their interaction on Vocational Guidance Needs of the students. There were two categories of SV that is high SV and low SV, and there were two categories of Nature of School that is Government School & Private School. The results are given in table 1.

Table 1 : Summary of 2 x 2 Factorial Design ANOVA for Vocational Guidance Needs, Social Value and Nature of School

Source Of Variance	Type III Sum of Squares	df	Mean Square	F-value
Social Value (A)	0.311	1	0.311	0.00
Nature of School (B)	3820.430	1	3820.430	4.339*
A X B	129.779	1	129.779	0.147
Error	436700.765	496	880.445	
Total	12149637.000	500		

*Significant at 0.05

It is evident from table 1that F-value for SV is 0.00 with df equal to 1/496 which is not significant at 0.05 level of significance. It indicates that the mean score of low and high SV group students did not differ significantly. So there was no significant influence of SV on Vocational Guidance Needs of the students. In this context, the null hypothesis that there is no significant influence of SV on Vocational Guidance Needs of students is not rejected. It may, therefore be, said that the students of high and low SV group were found to have Vocational Guidance Need to same extent.

The F value for School is 4.339 with df equal to 1/496 which is significant at 0.05 level of significance. It indicates that the mean score of Government School and Private School students differ significantly. So there was significant influence of Nature of School on Vocational Guidance Needs of the students. In this context the null hypothesis that there is no significant influence of Nature of School on Vocational Guidance Needs is rejected. The mean score of Vocational Guidance Needs of Government School is 150.26 and Private school students are 155.83. It shows that Government School students were found to have more Vocational Guidance Need as compared to Private School.

The F value for interaction between Nature of School and SV is 0.147 with df equal to 1/496 which is not significant at 0.05 level of significance. It shows that there is no significant influence of interaction between Nature of School and SV of the students on Vocational Guidance Need. In this context, the null hypothesis that there is no significant influence of interaction between Nature of School and SV of the students on Vocational Guidance Needs is not rejected. . It may, therefore be, said that the Vocational Guidance Needs of the students was found to be independent of interaction between Nature of School and SV.

Findings - The findings of study were : (1) The students of high and low SV group were found to have Vocational Guidance Need to same extent. (2) Government School students were found to have more Vocational Guidance Need as compared to Private School. (3) The Vocational Guidance Needs of the students was found to be independent of interaction between Nature of School and SV.

Delimitations - To conduct this study some instructions were followed which were stated as following : (1)The study was limited to only six schools of Indore district. (2) The study was subjected to only 500 students. (3) Only Social Value aspect of Personal Value Questionnaire was taken in the study. (4) The present study was restricting to study the variable vocational guidance need and value.

References :-

1. Buch, M.B.(ed.): First Survey of Research in Education, National Council of Educational Research and Training, New Delhi, Studies upto1972.
2. Buch, M.B.(ed.): Second Survey of Research in Education, National Council of Educational Research and Training, New Delhi, 1972 – 78.
3. Buch, M.B.(ed.): Third Survey of Research in Education, National Council of Educational Research and Training, New Delhi, 1978 – 83.
4. Buch, M.B.(ed.): Fourth Survey of Research in Education, National Council of Educational Research and Training, New Delhi, 1983 – 88.
5. Buch, M.B.(ed.): Fifth Survey of Research in Education, National Council of Educational Research and Training, New Delhi, 1988 – 92.
6. Chinara, B.D.: Effect of Stratigeis Inculcation of Democratic Values among Adolescents in Relation to Introversion – Extraversion and Value Related Behavioural Types, Ph.D.(Edu.), Punjab U., 1992
7. Dadu, P.: A Study of Personality Values and Religious attitudes of Urban and Rural Males and Female in the Purview of Socio – Economic Status, Ph.D.(Psy.), Agra U., 1992.
8. Das, J.: Designing developing and try out of Guidance Services for Students and Community. Ph.D. (Edu.), Devi Ahilya Vishwavidyalya, 1998.
9. Faizal, A.: A Study of Cultural and Gender Deficiency on Need for Achievement, Locus of Control and Vocational Choice of Gifted and Average Students, Ph.D.(Psy.), Punjab U., 1996.
10. Gupta, S.: A Comparative Study of Alienated and Unalienated Students in Relation to their Personality Traits, Values, Socio – Economic Status and their Attitudes Towards their Teachers, Ph.D.(Edu.), M.L.S. U., 2000.
11. Jaiswal, S.R.: Guidance and Counselling – An Effective Approach, Prakashan Kendra, Lucknow, 1968.

12. Kaur, M.: Self – Concept in Relation to Intellectual Variables, Journal of Educational Research and Extension, Vol. 38. No. 1, 2001.
13. Koottiyaniyil, Therese: The Effect of Student Centered Counselling on the Low – Achievers in Secondary Schools Ph.D. (Edu.), Mahatma Gandhi University, 1994.
14. Mehta, M., Bajaj, S. and Kumar, V.V.: Effect of Personality Intervention and Career Intervention Programmes on Vocational Indecision among Adolescents Boys, Indian Educational Reviews, Vol. 42. No. 2. pp. 81-98, 2006.
15. Myers, G.E.: Principles and Techniques of Vocational Guidance, McGraw Hill Book Company Inc., Tokyo, 1941.
16. Sherry, G.P. & Verma, R.P.: Vocational Value Questionnaire, National Psychologival Coporation, Agra, 1972.
17. Torrance, E.P.: Guiding Creative Talents, Prentice Hall New Jursey, 1966.

****

आचार्य शंकराचार्य एवं टेम्बे स्वामी - एक तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. प्रेम छाबड़ा * डॉ. भारती भट ** धनराज पाटील ***

शोध सारांश - आचार्य शंकराचार्य व आचार्य टेम्बे स्वामी दोनों ने ही शिव व विष्णु एक ही है, इस मत का स्वयं के दार्शनिक सिद्धांतों से प्रतिपादन किया है, दोनों ने ही इस अद्वैत दर्शन के प्रतिपादन के लिए सतत संघर्ष व अखण्ड भारत भ्रमण कर सामान्य जनता के लिये ज्ञान, वैराग्य व भक्ति की त्रिपुटी साध्य करने के लिए सर्वसामान्य को स्वीकृत वर्णाश्रमधर्म से अंतिम मोक्षपद की प्राप्ति कैसे हो, इसी उत्कट तीव्र व्यग्रता से ग्रंथ संपदा निर्मित की है। इसमें विविध उपाय व मार्गदर्शन दे, मनुष्य मात्र के अंत:करण से माया-मोहादि षड्विकार नष्ट कर शुद्ध अंत:करण से ईष्वर-प्राप्ति कैसे हो इसी मत का प्रतिपादन किया है। यह सामर्थ्य केवल आद्य शंकराचार्य व आचार्य टेम्बे स्वामी का ही है।
शब्द कुंजी - शंकराचार्य - परमहंस परिब्रजाचार्य आद्य जगद्गुरू आचार्य शंकराचार्य।
टेम्बे स्वामी - परमहंस परिव्राजकाचार्य श्रीवासुदेवानंद सरस्वती टेम्बे स्वामी।

प्रस्तावना - इस दृश्य जगत के पीछे एक सूक्ष्मतम जगत भी है, इस मान्यता को आज का भौतिक शास्त्र भी समर्थन कर रहा है। रिलेटीविटी का अन्वेषक स्वयं आलबर्ट आईनस्टाईन भी कहता है कि 'धर्म प्रथम है और विज्ञान बाद मे.....'। इसी धर्म को ध्यान में रखते हुए भारत के इतिहास में जो असंख्य विभूतियों के प्रादुर्भाव हुए है उन्हीं में से श्री आद्यशंकराचार्य का स्थान सर्वोत्कृष्ट है। उपनिषदों में जीव-जगत व ब्रह्म से संबंधित दिव्य दार्शनिक ज्ञान को ऋषियों-मुनियों ने प्रतिपादित किया है व स्वअनुभव के आधार पर ही किया है। आद्य शंकराचार्य ने मात्र 32 वर्ष की आयु में इस दिव्य तत्वज्ञान को अतिशय योग्य व समर्थक रीति से सर्व सामान्य के लिए उपलब्ध करवा दिया है। यदि शंकराचार्य नहीं होते तो वेदान्त का स्वरहस्य वैसे ही रह जाता व सर्वसामान्य वर्ग इससे अछुता ही रह जाता। साथ ही इसमें निहित रहस्य विश्व को ज्ञात ही नहीं होता। ईश केन, कठ आदि बारह उपनिषदों, श्रीमद्भागवत गीता व ब्रह्मसूत्र- इस प्रस्थान त्रयी पर मार्मिक, प्रासादिक, गंभीर, आदर्श भाष्यग्रंथों की रचना कर 'ब्रह्म सत्यं, जगत् मिथ्या' 'ब्रह्म नापरं' इस रहस्यात्मक अद्वैत सिद्धान्त को श्रुति व युक्ति इन विविध प्रमाणों के आधार पर प्रतिस्थापित किया है। इन भाष्य ग्रंथों से प्रतिपादित जीव-ब्रह्म एक्य सिद्धांत यह वैश्विक मानव धर्म का आधार भूत सिद्धांत है।

प्राचीन काल में आद्य शंकराचार्य ने जो वैश्विक मानवधर्म के प्रवर्तन का कार्य सद्गुरू कृपा से किया है, वही कार्य आधुनिक काल में टेम्बे स्वामी ने अद्वैत सिद्धांत का प्रतिपादन दर्शन व आध्यात्म निष्ठा के आधार पर किया है। इस आधार के बिना वैश्विक मानव धर्म की नींव की स्थापना असंभव है। अध्यात्म विद्या का बोध जनसामान्य व सुशिक्षित साधुजनों तक भी पहुँचे ऐसी उत्कट इच्छा जैसी आचार्य शंकराचार्य की थी, वैसी ही व उतनी ही तीव्र उत्कट इच्छा टेम्बे स्वामी की भी थी।

शोध के उद्देश्य - इस शोध के प्रमुख दो उद्देश्य निम्नानुसार है -

1. शोध का मुख्य व प्रथम उद्देश्य आचार्य शंकराचार्य व टेम्बे स्वामी के तत्वज्ञान मीमांसा व दार्शनिक विचारों की तुलना करना।
2. शोध का मुख्य द्वितीय उद्देश्य जगद्गुरू शंकराचार्य व टेम्बे स्वामी के अद्वैत सिद्धांतों की तुलना करना।

शोध विधि - शोध विधि दो प्रकार के संमकों पर आधारित होती है-

1. प्राथमिक 2. द्वितीयक

इस शोध पत्र में कहीं प्राथमिक व कही द्वितीयक समंकों का प्रयोग किया गया है। इंटरनेट वेबसाइट के समंक भी शामिल किए गए है।

शोध परिकल्पना - किसी भी शोध कार्य में पूर्णता एवं सिद्धी के लिए परिकल्पना के महत्व को नकारा नहीं जा सकता। इस विषय पर निम्न परिकल्पनाएँ निर्मित की गयी है -

1. शंकराचार्य व टेम्बे स्वामी के दार्शनिक विचारों में कोई विशेष अंतर नहीं होगा।
2. शंकराचार्य व टेम्बे स्वामी के अद्वैत सिद्धांतों में कोई विशेष अंतर नहीं होगा।

धर्म व विज्ञान के इस युग में जगतगुरू शंकराचार्य व टेम्बे स्वामी की रचनाओं के विस्तृत अध्ययन से यह ज्ञात हुआ है कि वैदिक धर्माचरण पर उनकी दृढ़ निष्ठा व प्रेम था। इसके पालन के लिए वे सदैव तत्पर थे। उनकी कथनी व करनी में कोई अंतर नहीं था। उन्होंने अपने आचरण द्वारा ही उपदेश दिए। किन्तु यही दृढ़निष्ठा, प्रेम व सदाचरण धर्म पालन करने की तीव्र उत्कट इच्छा सर्वसामान्य में प्राय: लुप्त हो चली थी। इसी लुप्त व मृतप्राय: हो चली वैदिक सनातन सत्य प्रचीती के पुनरूजीवन व पुनर्उत्थान के लिए व वैदिक धर्म को समाज में पुन: आरूढ़ कर चिरंतन करने के लिये ही उनका अवतार हुआ है। भाष्य रचनाओं के साथ-साथ उन्होंने अन्य काव्य रचनाओं की भी निर्मिती की। इन्हीं रचनाओं के माध्यम से शंकराचार्य ने धर्म जागरण का कार्य किया। इनमें प्रमुख विवेक चुड़ामणी, तत्वबोध, उपदेश सहस्त्र इत्यादि महत्वपूर्ण ग्रंथों की निर्मिती की है। इसके पश्चात् बिना विश्राम के वे

* प्राचार्या, लोकमान्य तिलक शिक्षा महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
** प्राचार्या, स्वामी विवेकानंद शिक्षा महाविद्यालय, सेंधवा (म.प्र.) भारत
*** व्याख्याता, स्वामी विवेकानंद शिक्षा महाविद्यालय, सेंधवा (म.प्र.) भारत

स्तोत्र रचना की ओर मुड़े। इनमें प्रमुख सौंदर्य लहरी, आनंद लहरी, विष्णु शिव केशवादि वर्णन, चर्पट मंजरी, शटपदी, हरीमीड, दक्षिणमूर्ति, साधन पंचक इत्यादि विपुल स्तोत्र है।

इन रचनाओं में अद्वैत अध्यात्म ज्ञान का विशुद्ध वर्णन हुआ है। शंकराचार्य ने 'श्री विश्वनाथाष्टक' नामक बहुत ही सुदंर स्तोत्र की रचना की है, जिसमें वे कहते है–

'आशां विहाय परिहृत्य परस्य निन्दां
पापे रतिं च सुनिवार्य मन: समाधौ।
आदाय हत्कमलमध्यगतं परेशं
वाराणसीपूरपतिं भज विश्वनाथम्' ।। 8।।

मूलत: जगद्गुरू 'जगतमिथ्या' सिद्धांत के प्रतिपादक होते हुए साहित्य सृष्ट व समाज सेवी रहे है। अभेद ज्ञान मूलक ब्रह्मवाद के प्रवर्तक होते हुए भी वे भक्तिभाव से विभोर कर देने वाले स्तोत्रों के रचियता भी थे। उच्च कोटि के दार्शनिक विद्वान होते हुए भी वे माँ की वत्सलता और गुरू की आत्मीयता के सदा कायल रहे। निवृत्तिमार्गी होते हुए थी वे जीवनभर सामान्य जन से जुड़े रहे अर्थात् सैद्धांतिक दृष्टि से अद्वैतवादी होने पर भी व्यवहार में वे द्वैतवादी से प्रतीत होते रहे क्योंकि आध्यात्मिक सत्ता में परमार्थिक की प्रधानता स्वीकार करते हुए भी उन्होंने व्यवहारिक सत्ता को महत्व दिया है। जगद्गुरू ने अलग से किसी सिद्धांत का निरूपण नहीं किया। उन्होंने वेदान्त में निरूपित सिद्धांतों की व्याख्या करके ही प्रचार–प्रसार करते रहे। वेदान्तों की अत्यंत दुर्बोध, दुष्कर व दुर्गम माने जाने वाले सिद्धांतों को अपनी बुद्धि और हृदय के संगम द्वारा अत्यंन्त ही सरस, सरल और सहज बनाकर अलंकारिक भाषा में सभी के सम्मुख इस रूप में प्रस्तुत किया कि वे सर्वसामान्य को भी ग्राह्य हो गए। विश्व गुरू आद्यशंकराचार्य ही ऐसे दार्शनिक थे जिन्होंने दर्शन जैसे नीरस विषय को काव्य में प्रस्तुत किया। उनकी रचनाओं में भाषा का चमत्कारिक सौंदर्य है, जैसे उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, काव्यलिंग अर्थालंकार, अनुप्रास, यमक, शब्दालंकार आदि की सुंदरता पढ़ने को मिलती है। दर्शन की रेगिस्तानी शुष्कता में उनकी रचनाएं हरितभूमि वन नीरस मन में कोमल भक्ति के बीज अंकुरित कर देती है।

जीवन में उच्च स्थिति प्राप्त करने के लिए प्राणी को अनेक सीढ़ियां चढ़नी पड़ती है। इस स्थिति को पाना अत्यंत दुष्कर कार्य है, लेकिन शंकराचार्यजी ने इसे इतनी सरल और आकर्षक भाषा में व्यक्त किया है कि देखते ही बनता है–

'सत्संगत्वे निस्संगत्वं, निसंगत्वे निर्मोहत्वम,
निर्मोहित्वे नि:श्चलतत्वम्, निष्चलतत्वे जीवन मुक्ति:'

वेदान्त में प्रतिपादित शुद्ध ब्रह्मवाद ही उनका सिद्धांत था। जगद्गुरू शंकराचार्य ने तो यत्र–तत्र बिखरे हुए वेद वाक्यों को अद्वैत में पर्यावसित करके कर्म और उपासना की धाराओं को उनमें मिलाकर गंगा, यमुना और सरस्वती के संगम जैसा बना दिया है। 'तत्वमसि' 'अयमात्मा ब्रह्म' प्रज्ञानं ब्रह्म', 'अहम् ब्रह्मस्मि' आदि वैदिक महावाक्यों द्वारा अखंड और शुद्ध ब्रह्म के अभिन्न आत्मरूप का साक्षात् करना ही जीव का प्रथम लक्ष्य हैं। यही औपनिषदक और शांकर–सिद्धांत है।

शंकराचार्य पर शोध करते–करते स्वाभाविक ही उनके अनुसरणकर्ता श्री टेम्बे स्वामी के कार्य भी शोध का विषय हो गये। उनके संपूर्ण साहित्य में अद्वैत तत्वज्ञान व ब्रह्म–विष्णु–महेश का एकत्रित रूप, अत्रि–अनुसुया के नंदन दत्त प्रभु से संबंधित ग्रंथ ही है। टेम्बे स्वामी का जीवन कार्य व साहित्य भारतीय परम्परा का मानस दर्शन है। इसमें वेद, उपनिषद, स्मृतिग्रंथ, महाकाव्य, पुराण आदि के संदर्भ तो प्राप्त होते ही है साथ ही साथ भक्तिसूत्र, योगसूत्र, श्रीमद्भागवत, श्रीमद्भगवतगीता, योगवशिष्ठ, प्रस्थान–त्रयी आदि के भी उल्लेख यत्र–तत्र व्याप्त है। दर्शन व व्यवहारिकता का समन्वय इनके साहित्य में झलकता है। गीता अध्याय 16 में वर्णित दैवी संपदा से युक्त, परिव्राजक जीवन के कठोर तप से संयमित इनका–सा जीवन सांप्रत दुर्लभ हैं, टेम्बे स्वामी का संपूर्ण जीवन सर्वसामान्य की ऐहिक व पारलौकिक उन्नति के लिये ही था।

इनके साहित्य में चिंरतन, शाश्वत, सनातन, नित्यनूतन व विवेक जाग्रतपरक तत्वज्ञान परिणत प्रज्ञा के दर्शन होते है। भारतीय परम्परा में अद्वैत तत्वज्ञान को सर्वश्रेष्ठ स्थान प्राप्त है व टेम्बे स्वामी का साहित्य भी अद्वैत तत्वज्ञान पर ही आधारित है। 'द्विसाहस्त्री गुरू चरित्रम्' संस्कृत भाषा में एक अद्वितीय चमत्कार है। इसमें लेखक की परतत्वस्पर्षी प्रज्ञा व तात्विक मर्मदृष्टि प्रकट हुई है। उपनिषद, गीता आदि ग्रंथों का भी उल्लेख है। इस ग्रंथ का सारांश समझ लिया तो मान लो कि हमने भारतीय दर्शनशास्त्र व अद्वैत सिद्धांत का योग्य परिचय प्राप्त कर लिया है। टेम्बे स्वामी के अनुसार–

'मोक्षोज्ञानं विनानस्यात्। न ज्ञानं जगद्गुरू विना।
सद्गुरू न ईश कृपा बिना। कोऽपि इह विन्दति।।'

अर्थात् ज्ञान व जगद्गुरू कृपा बिना मोक्ष नहीं है। जगत्गुरू आचार्य शंकराचार्य की भांति ही टेम्बे स्वामीजी ने भी अनन्य स्तोत्रों की रचना की है जिसमें जीवन का कोई भी विषय अछूता नहीं है। इसमें उनकी परतत्वस्पर्शी काव्यछटा है। हिमालय से लेकर रामेष्वर तक विविध क्षेत्रों पर व नदियों पर अव्यक्त उत्कट भक्ति से ओत–प्रोत स्तोत्रों को लिखकर राष्ट्रीय एकता का परिचय दिया है। श्री टेम्बे स्वामी ने आद्य जगद्गुरू शंकराचार्य के समान ही धर्म स्थापना का कार्य किया है। अनेक जीवों को मार्गदर्शन दिया है। आसेतुहिमालय पैदल भ्रमण कर ज्ञान, कर्म व योग उपासना को मार्ग दिखा समाज–जागरण का कार्य किया है।

'बहुजनहिताय बहुजन सुखाय' – यही उनका जीवनसार है।

टेम्बे स्वामी की रचनाओं– 'योग रहस्य' व 'बोध रहस्य' में ब्रह्म चिंतन दिया है, जिसमें पिंड, ब्रह्माड, मीमांसा व जीव ब्रह्म आत्मैक्य ये सभी उपनिषदों का ही विषय है। 'बोध रहस्य' में सर्व उपनिषद सार अद्वैत वेदान्त–दर्शन तत्वज्ञान की जीवन दृष्टि प्रकट हुई है। टेम्बे स्वामी अनुसार परब्रह्म तत्व का स्मरण कुछ इस प्रकार है–

'इत्यत्रैजति निर्गुणोऽपि गुणीवन्नित्योऽमना मायया।
सर्वात्मा विभुरेकधपि बहुधा भात्यप्शशीवानया'।।
नानाख्यात्मककुण्डलादिषु सदा सत्कांचनत्वं यथा।।
प्राङभ्य्यान्तत एश सन्निकृतिषु। कूटस्थ एकस्तथा।। 70।। वृद्धशिक्षा

उपरोक्त श्लोक में टेम्बे स्वामी ने जीव ब्रह्म, जगत, आत्मा व माया के जिस एकत्व पर बल दिया है, वही शंकराचार्य का भी मत है। जिस प्रकार सुवर्णालंकारों में विविधता होते हुए भी सबमें एक ही स्वर्ण विराजमान है, उसी प्रकार पात्र की भिन्नता होते हुए सभी में एक ही द्रव्य एक ही ब्रह्म है। सुवर्णालंकारों में सुवर्ण की विविधता भासती हैं किन्तु वस्तुत: सोना एक ही है। टेम्बे स्वामी के अनुसार ब्रह्म, जीव, जड़ स्तम्ब तृण आदि में वही उपनिषदों में वर्णित श्रीदत्त एक ही है।

इसके अतिरिक्त टेम्बे स्वामी की मुख्य विशेषता यह है कि भारतीय संस्कृति अनुसार पुराणों की संख्या 18 ही है किन्तु टेम्बे स्वामी द्वारा रचित 'श्रीदत्त पुराण' 19 वाँ पुराण है। यह उनका भारतीय संस्कृति में बहुत बड़ा योगदान है। इनके ग्रंथों का अध्ययन करने पर इनके काव्य की एक विशेषता

ध्यान में आती है, कि गद्य-पद्य साथ में ही है, जिसे चंपुकाव्य कहते है। 'श्रीदत्तचम्पु' इसका श्रेष्ठ उदाहरण है। अन्य ग्रंथों के अध्ययन के पश्चात् यह रहस्य उद्घाटित हुआ है कि ग्रंथों की पंक्तियों के प्रथमोक्षर उच्चार से मंत्रों की निर्मिती हुई है, तो कहीं पंक्तियों के तीसरे अक्षरों के उच्चारण से गीता के पंद्रहवे अध्याय का गुंफन प्राप्त हुआ है। ऐसे कई अन्य काव्य अलंकार व चमत्कार इनके साहित्य में यत्र-तत्र बिखरे पड़े है।

अत: निष्कर्ष के रूप में कह सकते है कि टेम्बे स्वामी ने दत्त तत्वज्ञान (ब्रह्म विष्णु महेश का एकत्व) व शंकराचार्य ने विष्णु व शिव में एकत्व की उपासना से अद्वैत का मार्ग सर्वमान्य जन के लिये सुकर कर दिया है। शोध का सारांश यही है कि दोनों का तत्वज्ञान, अद्वैत सिद्धांत, दार्शनिक विचार व जीवन उद्देश्य समान ही है। सिर्फ मार्ग व उपासना भिन्न है। धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष प्राप्ति के साधन व प्राप्ति कैसे हो ? यहीं दोनों के जीवन-कार्य व साहित्य का सार है। मानव-मात्र को धर्म, अर्थ, काम मोक्ष की प्राप्ति कैसे सहज व सौम्य रूप से हो, यही दोनों विचारकों, दार्शनिकों, शिक्षाविदों व संतों का कार्य है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. शर्मा, र.प्र. (2006) 'आद्य जगद्गुरू शंकराचार्य',
2. टेम्बे स्वामी, वा.स. (2014) समग्र ग्रंथ संपदा,
3. web Bibliography
4. www.shrivasudevanandsaraswati.com
5. www: shrivasudevanandsaraswati.org.com
6. www:mahagoga.org.
7. www:kundalivishakipatayoga.net
8. www: kundalivishakipatayogaswamidham.com
9. www:prabhaba.org
10. www:shivdham.org

****

NSS Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to September 2017, Vol. I

ऑटिज्म (आत्मकेन्द्रितता)

डॉ. जयबाला गुप्ता *

शोध सारांश – ऑटिज्म एक प्रकार का जेनेटिक मेंटल डिसार्डर है। ऑटिज्म से ग्रस्त बालक का संवेदी तंत्र अव्यवस्थित होता है। ऐसा बालक अपनी निजी जिन्दगी, रिश्तों और सामान्य गतिविधियों तक तालमेल नहीं बैठा सकता। ऑटिज्म से पीड़ित बच्चों मेंअकसर पेट सम्बन्धित बीमारियाँ होती हैं। ऐसे बालक बहुत ज्यादा जिद्द करते हैं और अपनी हरकतों को बार-बार दोहराते हैं। ये बालक अकसर चीजों को पटकते और तोड़-फोड़ भी करते हैं। इस रोग सेग्रसित बालक बचपन से ही परिवार और समाज से जुड़े रहने की क्षमता खो देता है। इस प्रकार के लक्षणों पर ध्यान देकर बच्चे को शान्त करने के प्रयास किए जाने चाहिए।
शब्द कुंजी– ऑटिज्म, संवेदना, मस्तिष्क, ऑटिष्टिक।

प्रस्तावना – 'आटिज्म' याने आत्मकेन्द्रितता एक बीमारी है। दुनिया में एक हजार बच्चों में से दो बच्चे जन्मजात ऑटिज्म के शिकार पाए जाते हैं। वस्तुत: ऑटिज्म एक प्रकार का जेनेटिक मेंटल डिसॉर्डर है। याने इस प्रकार का बालक जन्मजात मानसिक अव्यवस्था का मनोरोगी होता हैं, जिसे हिन्दी में आमतौर पर आत्मकेन्द्रितता कहा जा सकता है।

ऑटिज्म से ग्रस्त बालक का संवेदी तंत्र अव्यवस्थित होता है। परिणामस्वरूप ऐसा बालक अपनी निजी जिन्दगी, रिश्तों व सामान्य गतिविधियों तक तालमेल नहीं बैठा सकता। बालक अपनी संवेदनाओं के माध्यम से ही आसपास की दुनिया की खोजबीन करता हैं, उसके बारे में सीखता है और अपने आसपास की दुनिया से परिचित होने लगता है। सामान्य बच्चे अपने माता-पिता, दादा-दादी, निकटस्थ रिश्तेदारों तथा आसपास में निवासरत हम उम्र के बालकों और बालिकाओं से अपने सम्बन्धों के बारे में काफी कुछ जानने और समझने लगता है। इस प्रकार उसका मानसिक विकास होता हैं, किन्तु ऑटिज्म से ग्रस्त बच्चों में इन संवेदनाओ में स्पर्श, गति, शरीर के प्रति सचेतना व दृष्टि, ध्वनि और गुरुत्वाकर्षण का खिचाव सम्मिलित होता है। दिमाग में इन संवेनाओं को व्यवस्थित करने पर ही बालक का सम्पूर्ण व्यक्तित्व निर्मित होता है।

आमतौर पर सामान्य बच्चों में उम्र के साथ-साथं सहज ढंग से संवेदनाएँ विकसित हो जाती हैं। कुछ बच्चों में यह प्रक्रिया तीव्र होती हैं और कुछ बच्चों में धीमी हो सकती हैं। इस प्रकार बालक में व्यवस्थित तरीके से उठना-बैठना, चाल ढाल, हाव-भाव, भाषा, भावात्मक परिपक्वता, सामाजिक अन्तर्क्रिया और कुशलता का विकास होता है।

इसके विपरीत ऑटिज्म से पीड़ित बच्चों में संवेदी तंत्र अल्प सक्रिय या अतिसक्रिय प्रतिक्रिया दे सकता है। उदाहरण के लिए स्पर्श संवेदनाओं का मसला हो तो मुलायम 'ऊन' भी किसी अतिसक्रिय संवेदी तंत्र वाले बच्चों को काँटों की चादर जैसी महसूस होने लगती हैं। दूसरी ओर यदि बालक का संवेदी तंत्र अल्प सक्रिय संवेदी तंत्र वाला हो तो ऐसे बालक को कॉफी ऊँचाई से गिरने पर भी कोई दर्द की अनुभूति न हो।

स्पर्श, संतुलन, गति तथा शरीर की संधियों से प्राप्त सूचनाएँ, श्रवण, दृष्टि और गुरुत्व को संवेदना कहते हैं। इस प्रकार विभिन्न संवेदी तंत्र हमारे दिमाग में सूचनाओं के साथ उचित तालमेल बनाकर चलता है और तद्नुसार वह शरीर के अंगों मेंआवश्यक क्रियाएँ करने के लिए मस्तिष्क को आदेश देता है और इसके आदेशानुसार शरीर उचित हलचल करता हैं, किन्तु ऑटिज्म के पीड़ित बच्चे का संवेदी तंत्र ठीक से काम नहीं करता, जिसके कारण वह न तो संवेदनाओं से उचित आदेश उपलब्ध कर पाता है और न ही वह शरीर के प्रति कोई सक्रियता प्रदर्शित करता है।

ऑटिज्म से पीड़ित कुछ बच्चों की स्पर्श संवेदना अति सक्रिय होती हैं, ऐसे बच्चे को बाल या नाखून कटवाने या स्पर्श से संबंधित अन्य गतिविधियों तक में काफी परेशानी होती हैं।

सन्तुलन तंत्र जन्म के कुछ सप्ताह बाद विकसित होता है। ऐसे बच्चों में प्रारंभिक अवस्थाओं में गतिविधियों की भूमिका अच्छी होती हैं, किन्तु ऑटिज्म पीड़ित बच्चों में सन्तुलन या गति संबंधी मामलों में ऐसा बच्चा शारीरिक गतिविधियाँ सही ढंग से सम्पन्न नहीं कर पाता। ऐसा बच्चा शारीरिक हलचलों से या तो दूर रहता है या अनावश्यक रूप से सुस्त रहता है। इस प्रकार के बालक मेंकई समस्याएँ रहती हैं।

1. सामान्य गतिविधियों में उचित तालमेल नहीं होना।
2. पूर्वापर सम्बन्धों मेंसमझ नहीं होना।
3. बोर्ड पर लिखी बातों की नकल न कर पाना।
4. इस प्रकार बालक अधिक समय तक सुस्त या शारीरिक हलचल करने में इच्छुक नहीं होना।
5. भाषा की सही समझ की काफी न्यूतना।
6. सन्तुलित भावात्मक अभिव्यक्ति में बाधाएँ, जिसकी प्रतिक्रिया अनियंत्रित होती हैं। उदाहरण के लिए अनावश्यक हँसना, घंटों झूले में झूलते रहे, लेकिन चक्कर नहीं आते, चाय का प्याला पकड़ते समय, लिखते समय, दूरी बनाए रखते समय ऐसे बच्चे सहज नहीं रहते।
7. ऑटिज्म बच्चों मे शारीरिक हलचलों में तालमेल नहीं बना रहता।

* प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (शिक्षा) योगेश्वर शिक्षा महाविद्यालय, पिपलाज, बड़वानी (म.प्र.) भारत

8. बोलते समय पीड़ित बच्चे बोलने में संतुलन नहीं रख पाते।

ऑटिज्म के पीड़ित बच्चों मेंअक्सर पेट संबंधी बीमारियाँ होती हैं। उनके शरीर में पारे जैसी भारी धातु सामान्य बच्चों की तुलना में ज्यादा होती हैं। वांशिगटन स्थित शोधकर्ताओं के एक अध्ययन के अनुसार जैव प्रिजरवेटिव्ह 'थीमोरोसल'(एक प्रकार का पारा) को शिशु बहुत तेजी से बाहर निकाल देते हैं, शरीर में यह खतरनाक धातु ज्यादा समय तक टिक नहीं पाती, जिससे ऑटिज्म का खतरा कम हो जाता है।

अकसर पीड़ित बच्चा यदि पेट संबंधी शिकायत करता हैं, तो शरीर में मौजूद अधिक पारा निकालकर हाइपर बेटिक ऑक्सीजन थेरेपी दी जाए, जिससे बच्चा काफी हद तक ठीक हो सकता है।

दिल्ली स्थित इंस्ट्रीट्यूट फॉर न्यूरोडेवलेपमटल डिसेबलिटीज इंटरवेंशनल इंस्टीट्यूट डॉ. अरुण मुखर्जी ने एक कांफ्रेस मेंजानकारी दी कि भूजल में, प्रदूषण में, वेक्सीनों में किए जाने वाले प्रिजरवेटिव और माँ के डेंटल इमलगम आदि की समस्याओं के कारण शरीर में 'भारी धातु' की मात्रा बढ़ जाती हैं।

ऑटिज्म बच्चों में इन खनिज पदार्थो का निकलने का तरीका विकसित नहीं होता और ये उनके टिश्यू में जगह बना लेते हैं, ये शरीर में लाभदायक इंजाइम को स्थानान्तरित करते हैं, जिसके बाद प्रतिरोधक तंत्र की प्रतिक्रिया के फलस्वरूप इनके पेट में तमाम तरह के इन्फैक्शनस हो जाते हैं। 95 प्रतिशत बच्चों का पेट खराब रहता है। यदि इनके पेट ठीक हो जाए, तो समस्या काफी हद तक नियंत्रण में आ सकती हैं।

नार्थ कैरोलिना यूनिवर्सिटी के डॉ. रशीद बुटेर ने एक खोज में पता लगाया कि ऑटिष्टिक बच्चों के बालों के सैम्पल परीक्षण में पता चला कि उनके बालों में पारे की सामान्य से कम मात्रा मिलेगी। इससे यह सिद्ध होता है कि उनके शरीर पारे जैसे खतरनाक खनिज निकाल नहीं पा रहे हैं। डॉ. रसीद बुटेर के स्वयं के पुत्र को यह बीमारी हुई। जहाँ उन्होंने इसी पर खोज की और 70 प्रतिशत बच्चे ठीक होने लगे। अमेरीकी अदालत में जब इस तथ्य को चुनौती के रूप में उसी के बेटे को गवाही के रूप में बुलाया गया और परीक्षण के अध्ययन से पता चला कि उनकी थेरेपी सही पाई गईं।

वैज्ञानिकों ने इस थेरेपी पर आगे अपना कार्य जारी रखा। इस थेरेपी में पहले चार महीने के बच्चो की पेट संबंधी बीमारियों का इलाज किया गया, फिर एक साथ पारा निकालने के केप्सूल दिए गए। इस प्रकार एक साल तक के इलाज के 1.25 लाख रुपए तक का खर्च किया गया। इसके बाद उसको एचबीओटी थेरेपी दी गईं, जिसमें एक चेम्बर मेंऑक्सीजन का दबाव बढ़ा दिया गया, जिससे रक्त में मौजूद पानी की मात्रा ज्यादा हो गई और दिमागी कोशिकाओं से निकाल कर वह पानी और उसमें मौजूद ऑक्सीजन मृत कोशिकाओं तक पहुँच कर उन्हें जीवित करती हैं। यह थेरेपी तीन साल तक के बच्चों को देने पर अच्छे नतीजें निकलने की उम्मीद है। क्यूबा की सरकार ने इस थेरेपी को मान्यता दी है।

समय पर ऑटिज्म के मरीज का ठीक ढंग से इलाज किया जाए, तो मरीज के ठीक होने की संभावना बढ़ जाती हैं। ऐसे बच्चे जो ऑटिज्म से पीड़ित है, असामान्य रूप से बहुत ज्यादा जिद्द करते हैं। अपनी हरकतों को बार-बार दोहराते हैं। जल्दी कुछ सीखने को तैयार नहीं होते, अकसर चीजों को पटकते हैं, तोड़ फोड़ करते हैं। इस प्रकार के लक्षणों पर ध्यान देकर बच्चे को शांत करने के प्रयास किए जाने चाहिए।

ऑटिज्म एक ऐसा रोग हैं, जिससे बच्चा बचपन से ही परिवार और समाज से जुड़ने की क्षमता खो देता है। इस प्रकार के बच्चों में एक टाईप का ऑटिष्टिक स्पैक्ट्रम डिसआर्डर होता हैं, जिसमें सामान्य बच्चे से अलग तरह के लक्षण पाए जाते हैं। इनमें से कुछ बच्चे तो बहुत जीनियस होते हैं। चूंकि ऑटिष्टिक बच्चों में सहानुभूति का अभाव होता है। वे एक दूसरे की भावनाओं को समझ नहीं पाते।

इस प्रकार अभिभावकों को चाहिए कि वे अपने ऑटिष्टिक बच्चे के साथ अधिक बोलचाल करें। सही बोलना सीखाने पर जोर दें। बच्चों को अपनी भावनाएँ ठीक ढंग से व्यक्त करने में अधिक सक्रिय करना चाहिए।

ऑटिज्म को स्वलीनता, मानसिक रोग, स्वपरायणता आदि नामों से जाना जाता है। दरअसल यह मस्तिष्क के विकास में बाधा डालने और विकास के दौरान होने वाले विकार है। ऑटिज्म से ग्रसित बालक बाहरी दुनिया से अनजान अपनी ही दुनिया मेंखोया रहता है।

सन् 2010 तक विश्व मेंकरीब 7 करोड़ लोग ऑटिज्म से प्रभावित है। प्रति दस हजार बच्चों में 20 व्यक्ति इस रोग से प्रभावित है। ऐसे व्यक्ति अपने बदलाव मेंकोई परिवर्तन नहीं चाहते। वे एक जैसी गतिविधियों मेंही सदा डूबे रहते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. शिवानी गुप्ता।
2. डॉ. अंजली जोशी- 31 अगस्त 2006 का आलेख।
3. अमृता प्रकाश।
4. ओंकारसिंह जनोटी, सम्पादक ईशा भाटिया।
5. सैप लैब्स इण्डिया की वेब साइट।
6. अरविन्द गौरव- ब्लॉग आर्चिव्ह- अक्टू. 2008 ऑटिज्म।
7. http:// austism re sorce cemter.
8. http// w.w.w. autism-india.org.
9. w.w.w autism- societ.org.
10. http//w.w.w. austism.com.

****

Bail , Its Type & Cancellation in India

Deeksha Dubey *

Abstract - Bail may be regarded as a mechanism whereby the state devolutes upon the community the function of securing the presence of the prisoners and at the same time involves participation of the community in administration of justice.

The object of arrest and detention of the accused person is primarily to secure his appearance at the time of trial and to ensure that in case he is found guilty he is available to receive the sentence. It his presence at the trial could be reasonably ensured otherwise than by his arrest and detention.

Introduction - Bail is one of the cherised rights, claims or privileges of an accused person . It is one of the most dignified institutions in any civilized society in which human values, such as faith and trust, take precedence over everything else the release on bail is crucial to the accused person. The jailed accused, subjected to the psychological and physical deprivations of jail life, loses his job and is prevented from contributing effectively to the preparation of his defence.

Definition of Bail - Bail has been defined in the Law Lexicon as "Security for the appearance of the accused person, on giving which, he is released pending trail or investigation" The word "bail" means to set at liberty a person arrested or imprisoned on security being taken of his appearance in the court on a particular day.

The word "bail" covers release on one's own bond.

The definition of bail as given in Webste's Third new international Dictionary.

"The process by which a person is released from custody"

Classification - The Cr.P.C. has classified all offences into "bail able" and "non bail able" offences. The distinction between them is as follows –

Bailable offence means an offence which is shown as bailable in the first schedule or which is made bailable by any other law for the time being in force.

Non bailable offence means any other offence (Sec. 2(a))

Generally, seriouos offences, have been considered as non bailable offences. While petty offences as bailable.

A person accused of bailable offence has a right to released on bail (Sec. 50(2)) makes it obligatory for a police officer arresting such a person to inform him of his right to be released on bail.

In what cases Bail to be taken – Sub-Sec (1) where there are no reasonable grounds to believe that the accused was involved in the commission of non-bailable offence. the accused shall be released on bail under sec. 436(1).

Amendment of sec. 436 (by- 2005 Amendment) In respect of bailable offences, a person has to remain in Jail for his inability to furnish bail till the case is disposed of Sec 436(1) has been amended to make a mandatory provision that if the arrested person is accused of a bailable offence and he is an indigent and cannot furnish surety, the court shall release him on his execution of a bond without securities. Thus the amendment has made it compulsory for the police to relies a person accused of a bailable offence if he or she cannot afford to furnish surety.

The right to claim bail granted by sec. 436 in a bailable offence is an absolute and indefeasible right.

Has a long history In medieval England, the custom grw out of the need to free untried prisoners from disease-ridden jails while they were waiting for the delayed trails conducted by traveling justices. Prisoners were bailed, or delivered, to reputable third parties of their own choosing who accepted responsibility for assuring their appearance at trial. from this grew the modern practice of posting a money bond through a commercial bondsman . Bail has not been defined under the Cr. P.C. 1973.

"Bail connotes the process of procuring the release of an accused charged with certain offence by ensuring his future attendance . In the court for trial and compelling him to remain within the jurisdiction of the court.

The Cr.P..C. has classified all offences into "bailable" and "non-bailable" offences.

1. Bailable offence means an offence which is shown as bailable in the first schedule or which is made bailable by any other law for the time being in force.
2. Non bailable offence means any other offence (Sec. 2(a))
3. Generally, seriouos offences, have been considered as non bailable offences. While petty offences as

* L.L.B. IX Semester, Global Indina Law University, Sonipat (Haryana) INDIA

bailable.

4. A person accused of bailable offence has a right to released on bail (Sec. 50(2)) makes it obligatory for a police officer arresting such a person to inform him of his right to be released on bail.

Where there are no reasonable grounds to believe that the accused was involved in the commission of a non-bailable offence, the accused shall be released on bail under sec. 436(1).

In respect of bailable offences a person has to remain in jail for his inability to furnish bail, till the case is disposed of sec. 436(1) has been amended to make a mandatory provision that if the arrested person is accused of a baiable offence and he is an indigent and cannot furnish surety, the court shall release him on his execution of a bond without sureties.. Thus the amendment has made it if he or she cannot afford to furnish surety.

The right to claim bail granted by sec. 436 in a bailable offence is an absolute and indefeasible right.

The court cannot impose any condition in a bail-order under Sec. 436. The only exception to this rule is states in sub-sec. (2)

It provides that a person who absconds or has broken the condition of his bail-bond (e.g. failed to appear before the court on the date fixed) when he was released on bail in a bailable case on a precious occasion shall not, as of right, be entitled to bail when brought before the court on any subsequent date thought the offence may be bailable further, the court can call upon any person bound by such bond to pay the penalty thereof under sec. 446.

Where a person has during the period of investigation inquiry or trial under this code of an offence under any law (not being an offence for which the punishment of death has been specified as one on the punishments under that law) undergone detention for a period extending up to one-half of the maximum period of imprisonment specified for that offence under that law he shall be released by the court on his personal bond with or without sureties.

Other Mandatory Bail Provisions - Where the accused has completed 60 or 90 days in detention and there is no formal charge-sheet framed against them, the court is under constitutional and procedural mandate to ask the detenu if he desire to be released on bail and if he can furnish bail, he must be released on bail forthwith. Mere submission of charge-sheet cannot be a ground for cancellation of bail granted under Sec. 167(2).

No reasonable grounds for believing the accused guilty of a non-baiable offence but sufficient for further inquiry- The accused shall be released on bail in such a case, according to Sec. 437(2)

If , in any case triable by a magistrate, the trial of a person accused of any non-bailable offence is not concluded within a period of 60 days from the first date fixed for taking evidence in the case, such person shall, if he is in custody during evidence in the of the said period, be released on bail to the satisfaction of the magistrate, unless for reasons to be recorded in writing the magistrate otherwise directs for believing that the accused is not guilty of any such offence, it shall release the accused (Sec. 437(7))

Sec. 437. Cases of Non-bailable offences - Such person shall not be so released if there appear reasonable grounds for believing that he has been guilty of an offence punishable with death or life-imprisonment.

Such person shall not be so released if such offence is a cognizable offence and he had been previously convicted of an offence punishable with death, life-imprisonment or imprisonment for 7 years or more, or he had been previously convicted on two more occasions of.

16 years or any women or any sick or infirm person accused of such an offence be released on bail . The proviso applies to both clauses.

Be released on bail if it is satisfied that it is just and proper so to do for any other special reason.

The mere fact that an accused person may be required for being identified by witnesses during bail only after giving an opportunity of hearing to the prosecution that such person attend in accordance with the conditions

That such person shall not commit an offence similar to the offence of which he is accused or suspected of the commission of which he is suspected and that such person shall not directly or indirectly make any inducement, threat or promise to any person acquainted with the facts of the case so as to dissuade him from disclosing such facts to the court or to any police office or tamper with the evidence.

Any officer or court releasing any person on bail in a case or non-bailable offence is required to record in writing his or its reasons for so doing. This requirement would enable the High Court or Court of Session to see whether the discretion in the matter of bail was properly exercised. A bail order must be reasoned, while considering bail application the court must consider among other the following circumstance.

Sec. 437-A (Inserted by 2008 Amendment) - A new Sec. 437-A to provide for the court to require accused to execute bail bonds with sureties to appear before the higher Court as and when such Court issues notice in respect of an appeal against

437-A Bail to require accused to appear before next Appellate Court - Before conclusion of the trial and before disposal of the appeal, the court trying the offence or the appellate court , is the case may be, shall require the accused to execute bail bonds with sureties. Court and such bail bonds shall be in force for six months. Sec. 445 shall apply.

Sec. 439. Special power of High Court/Court - The powers of the High Court or the court of session are considerably wider than the powers of the magistrate in Sec. 437.

Under Sec. 439, no distinction is made between various kinds of offences for the purpose of granting of bail, and bail can be given even if the offence is most serious in

character.

Though there is no specific provision for appeal against the orders refusing to grant bail under Sec. 436(1) the High Court or Court of session can be moved under Sec. 439 for bail.

The Proviso to Sec. 439(1) requires the High Court/ Sessions Court to give notice to the public Prosecutor of the application made by the accused before granting bail in cases where the person making an application is.

Temporary/Interim Bail - If a court has authority to decide the bail matter, it has authority to consider a temporary bail or 'parole' or dealing with the custody of the accused and manner of it till the required material is collected.

Offences of trivial nature in which bail is generally granted, (ii) release of women, children, minors and aged person, (iii) Studens whose examination are to commence should also be given interim relief, and (iv) cases in which accusations appear to be frivolous or mala fide.

Cancellation of Bail (Secs. 437 (5) and 439 (2)) - Even after bail has been granted it can be cancelled under Sec. 437(5) or Sec. 439(2). According to Sec. 437(5) any court which has released.

person on bail under Sec. 437(1) or (2) may, if it considers it necessary so to do, direct that such person be arrested and committed to custody.

5. The person on bail commits the very offence for which he is being tried or has been convicted, and thereby proves his utter unfitness to be on bail.
6. if he hampers the investigation and foreibly prevents the search of places under his control for the corpus delicti or other incriminating things
7. if he tampers with the evidence as by intimidating the prosecution witnesses, interfering with the scene of the offence in order to remove traces or proofs of crime.
8. if he absconds i.e. runs away to a foreign country, or goes underground, or beyond the control of his sureties and
9. if he commits acts of violence (in revenge) against the police and the prosecution witness and those who have booked him or are trying to book him.

Concluding Remarks - Release on bail is crucial to the accused as the consequences of pre-trial detention are grave. If release on bail is denied to the accused it would mean that though he is presumed to be innocent till the guilt is proved beyond reasonable doubt he would be subjected to the psychological and physical deprivation of jail life. The jailed accused loses his job or source of income and is prevented from contributing effectively to the preparation of his defence.

Bail is a right and refusal is an exception. However, the courts can impose the conditions while granting bail. But the conditions should not be unreasonable. Court have also power to cancel bail but power to cancel bail in non-bailable offences must be used sparingly. It is the duty if the Magistrate to dispose of the application as early as possible.

References :-

1. Encyclopedia Braitannica, Vol, I, P. 736(15th Edn).
2. Clearly bring out the changes that have been made in the law of bails in the Cr.P.C.1973 by the Cr.P.C. (Amendment) Act, 2005 bringing out clearly the object sought to be achieved by the Amending Act of 2005/ (D.U. 2011/2012)
3. Nanha V State, 1993 CrLJ 938 (All)
4. T.K. Dutta, 1995 CrLJ 3274(Cal).
5. http://www.lawersclubindia.com/articles/Discretion-in-granting-Bail-in-non-Bailable-offences-5262.asp# VQcLENKUe8A
6. http://shodhganga.infilbnet.ac.in/bitstream/1060/7790/ 10/10_chapter%204.pdf.
7. http:/criminallawyersindia.wordpress.com…/bail-in-ndps-cases-in-india.
8. http://www.shareyouressays.com/119377/provisions-of-bail-under-section-12-of-the-juvenile-justice-care-and-protection-of-children.

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर विकलांगों के मानव अधिकारों का संरक्षण - एक अध्ययन

डॉ. जैनेन्द्र कुमार पटेल * शशाँक कुमार उपाध्याय **

शोध सारांश – विकलांग व्यक्ति का तात्पर्य ऐसे व्यक्ति से है, जो कि शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक या संवेदनात्मक बाधाओं के कारण अन्य लोगों के साथ समानता के आधार पर प्रभावशाली सहभागिता निभाने में एवं अपनी आन्तरिक प्रतिभा का पूर्ण उपयोग करने में असमर्थ है। वर्तमान समय में विश्व में लगभग 500 करोड़ व्यक्तियों से अधिक जो कि विश्व की जनसंख्या का 10 प्रतिशत भाग है, विकलांग व्यक्तियों की है। इनमें से अनुमानित रूप से 80 प्रतिशत व्यक्ति विकासशील देशों में रहते है, तथा वे शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक या संवेदनात्मक विकलांगता से ग्रस्त है। समाजिक दृष्टिकोण विकलांग व्यक्तियों को सांस्कृतिक जीवन तथा समान्य सामाजिक संबंधो से अलग कर देता है, विकलांग व्यक्ति बुनियादी शैक्षणिक अवसरों से वंचित हो जाते है तथा उन्हें तुच्छ अथवा कम वेतन वाला कार्य प्राप्त होता है। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर विकलांगों के मानव अधिकारों के संरक्षण और संवर्धन पर पहल 1980 के दशक से प्रारंभ हुआ तथा 9 दिसम्बर 1975 को विकलांग व्यक्तियों के मानव अधिकारों की घोषणा को संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा अंगीकार किया गया। संयुक्त राष्ट्र महासभा ने 19 दिसम्बर 2001 को विकलांग व्यक्तियों की गरिमा एवं मानव अधिकारों की अभिवृद्धि एवं संरक्षण के लिए तदर्थ समिति की स्थापना की और समिति को विकलांग व्यक्तियों के मानव अधिकारों में अभिवृद्धि और संरक्षण के लिए अंतर्राष्ट्रीय अभिसमय के प्रारूप को तैयार करने का कार्य संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा सौपा गया। समिति ने जून 2003 में अंतर्राष्ट्रीय अभिसमय का मूल पाठ तैयार किया, जिसे महासभा ने 13 दिसम्बर 2006 को सर्वसम्मति से विकलांग व्यक्तियों के मानव अधिकरों के रूप में अंगीकार किया तथा अभिसमय 3 मई 2008 को लागू किया गया। इस शोध पत्र के द्वारा अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर विकलांग व्यक्तियों के मानव अधिकारों की अभिवृद्धि एवं संरक्षण के लिए किए गए प्रावधानो का अध्ययन प्रस्तुत है।

शब्द कुंजी – विकलांग, मानव अधिकार, अंतर्राष्ट्रीय

अध्ययन का उद्देश्य – इस शोध पत्र का मुख्य उद्देश्य अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर विकलांगों के मानव अधिकारों की अभिवृद्धि एवं संरक्षण के लिए किए गए प्रावधानों का अध्ययन कर मूल्यांकन करना है।

शोध प्रविधि – यह शोध पत्र पूर्णत: सैद्धांतिक विधि पर आधारित है, जिसमें विषय से संबंधित सर्वमान्य ग्रंथ एवं प्रशासकीय दस्तावेजों से प्राप्त सूचनाओं को आधार मानकर अध्ययन किया गया है।

विवेचना – मानव एक विवेकपूर्ण प्राणी है और इसी कारण मानव को कुछ ऐसे मूल तथा अहरणीय अधिकार प्राप्त रहतें है, जिसे सामान्यतया मानव अधिकार कहा जाता है। चूँकि ये अधिकार उनके अस्तित्व के कारण उनसे संबंधित रहते हैं अत: वे उनमें जन्म से ही निहित रहते है। इस प्रकार, मानव अधिकार सभी व्यक्तियों के लिए होते हैं, चाहे उनका मूल वंश, धर्म, लिंग तथा राष्ट्रीयता कुछ भी हो। ये अधिकार सभी व्यक्तियों के लिए आवश्यक है क्योंकि ये अधिकार उनकी गरिमा एवं स्वतंत्रता के अनुरूप हैं तथा शारीरिक, नैतिक, सामाजिक और भौतिक कल्याण के लिए सहायक होते है।

मानव अधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा 1948 में घोषित किए गए तथा सिविल एवं राजनैतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय प्रसंविदा तथा आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय प्रसंविदा 1976 के द्वारा प्रदत्त सभी अधिकार विश्व के समस्त व्यक्तियों को प्राप्त है परन्तु व्यक्तियों के कुछ ऐसे समूह होते है जो प्रकृति अथवा सुस्थापित रूढ़ियों के कारण निर्बल होते हैं, जैसे बच्चे, महिलायें, विकलांग व्यक्ति, वृद्ध व्यक्ति, प्रवासी कर्मचारी अथवा किसी विशिष्ट मूल वंश से संबंधित व्यक्ति। दुर्बल समूह के ये व्यक्ति भी मानव होने के कारण मानव अधिकार एवं मूलभूत स्वतंत्रताओं को धारण करते है। किन्तु इनके अधिकारों का उल्लंघन समाज के प्रबल वर्ग द्वारा समय-समय पर किया जाता रहा है, समाज में उनके लिए स्थान सुरक्षित करवाने के लिए विशेषाधिकार प्राप्त न करने वाले एवं वंचित वर्गो के आन्दोलन ने, मानव अधिकारों के संदेश फैलाने में बहुत अधिक योगदान किया है। दुर्बल व्यक्तियों के अधिकारों के संरक्षण के लिए संयुक्त राष्ट्र के तत्वाधान में बहुत से अभिसमय बनाए गए है।

विकलांग व्यक्ति भी दुर्बल व्यक्तियों का एक वर्ग है, संयुक्त राष्ट्र महासभा ने विकलांग व्यक्तियों के अधिकारों के संबंध में 9 दिसम्बर, 1975 को विकलांग व्यक्तियों के अधिकारों की घोषणा को अंगीकार किया था। महासभा ने 19 दिसम्बर, 2001 को विकलांग व्यक्तियों की गरिमा एवं अधिकारों की अभिवृद्धि एवं संरक्षण के लिए एक तदर्थ समिति की स्थापना की। समिति को विकलांग व्यक्तियों के मानव अधिकारों में अभिवृद्धि और संरक्षण के लिए अंतर्राष्ट्रीय अभिसमय के प्रारूप को तैयार करने का कार्य संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा सौपा गया। समिति ने जून 2003 में अंतर्राष्ट्रीय अभिसमय का मूल पाठ तैयार किया, जिसे महासभा ने 13 दिसम्बर 2006 को सर्वसम्मति से विकलांग व्यक्तियों के मानव अधिकरों के रूप में अंगीकार किया तथा अभिसमय 3 मई 2008 को लागू किया गया।

यह अभिसमय विकलांग व्यक्तियों के लिए बहुत से अधिकारों को

* सहप्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (विधि)डॉ. सी. वी. रमन विश्वविद्यालय, करगी रोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत
**शोध छात्र - एम. फिल. (विधि) डॉ. सी. वी. रमन विश्वविद्यालय, करगी रोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

उपलब्ध कराने के लिए अभिकथित करता है जैसे – जीवन का अधिकार, विधि के समक्ष समान व्यवहार, न्याय तक पहुँच, व्यक्ति की स्वतंत्रता एवं सुरक्षा, निर्दयतापूर्ण एवं क्रूर व्यवहार से स्वतंत्रता, अमानवीय एवं अपमानजनक व्यवहार एवं दण्ड तथा शोषण से मुक्ति, हिंसा से मुक्ति, राष्ट्रीय भ्रमण की स्वतंत्रता, सलाह एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, सूचनाओं की जानकारी एवं व्यक्तिगत एवं एकान्तता की स्वतंत्रता आदि। अभिसमय ने यह भी निश्चत किया कि असमर्थ व्यक्तियों को शिक्षा, स्वास्थ्य एवं काम पाने का भी अधिकार होगा। वे सार्वजनिक एवं राजनीतिक एवं सांस्कृतिक गतिविधियों में दूसरे लोगों के साथ समानता के आधार पर सहभागिता कर सकेंगे। यह उल्लेखनीय है कि अभिसमय असमर्थ व्यक्तियों के लिए किसी नए अधिकार की रचना नहीं करता हैं। अभिसमय इन अधिकारों को विशेष रूप से इसलिए वर्णित करता है ताकि राज्य पक्षकार समाज में अभिसमय के प्रति जागरुकता उत्पन्न कर सकें एवं असमर्थ व्यक्तियों की गरिमा एवं अधिकारों को समाजिक प्रोत्साहन दे सकें।

अभिसमय सभी विकलांग व्यक्तियों के लिए पूर्ण मौलिक स्वतंत्रता एवं मानवाधिकारों के उपयोग करने के लिए राज्य पक्षकारों पर सामान्य बाध्यता अधिरोपित करता है। उदाहरणार्थ, राज्य पक्षकार वचनबद्ध होंगे कि –

1. अधिकारों के प्रयोग के लिए अन्य मानकों एवं प्रशासनिक तथा उपयुक्त विधियों को स्वीकार करेंगे,
2. समस्त प्रकार के ऐसे कानूनों, विधियों, परम्पराओं एवं प्रथाओं को हटाने एवं निरस्त करने का पूरा प्रयास करेंगे जो असमर्थ व्यक्तियों के साथ भेद–भावपूर्ण व्यवहार को मान्यता प्रदान करते है,
3. अपनी समस्त नीतियों एवं कार्यक्रमों में असमर्थ व्यक्तियों के अधिकारों के अभिवृद्धि एवं संरक्षण के लिए पूरा प्रयास करेंगे,
4. जो भी अधिनियम या प्रथा अभिसमय से असंगत होगी उसको समाप्त करने की कोशिश करेंगे तथा आश्वासन देंगे कि सार्वजनिक प्राधिकारी एवं संस्थाएं अभिसमयों के साथ राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक अधिकारों के संरक्षण के लिए सहयोग करेंगे,

प्रत्येक पक्षकार, जहाँ आवश्यकता होगी, अपने उपलब्ध अधिकतम संसाधनों के साथ, अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग के कार्यक्रमों के मध्य, इन अधिकारों के पूर्ण एवं उन्नतिशील उपलब्धियों की दृष्टि से सहयोग करने के लिए बाध्य होगा एवं बिना किसी पूर्वाग्रह के ये बाध्यताएँ वर्तमान अभिसमय में सम्मिलित की गयी हैं, जो कि अन्तर्राष्ट्रीय विधि के अनुसार प्रयोज्य हैं।

विकलांग व्यक्तियों के अधिकारों के लिए एक समिति की स्थापना की गयी है। यह समिति अभिसमय के अंतर्गत अपने उत्तरदायित्व के निर्वहन के लिए अपनाएँ गए मानकों पर एवं इस संबंध में हुई उन्नति पर राज्य पक्षकार जो रिपोर्ट देंगे उस पर विचार करेगी। राज्य पक्षकारों के लिए यह आवश्यक होगा कि वे अपनी रिपोर्ट अभिसमय के लागू होने के पश्चात् दो वर्ष के अवधि के भीतर प्रस्तुत करें। यह समिति सुझाव दे सकती है तथा यदि उपयुक्त समझे तो रिपोर्ट पर संबंधित राज्य पक्षकारों के लिए सामान्य संस्तुति भी कर सकती है।

विकलांग व्यक्तियों के अधिकारों के अभिसमय पर ऐच्छिक नयाचार महासभा द्वारा 13 दिसम्बर, 2006 को अंगीकृत किया गया। ऐच्छिक नयाचार 3 मई, 2008 को लागू हुआ। नयाचार को इसलिए अंगीकृत करने का उद्देश्य व्यक्तियों द्वारा समिति को संसूचना देने का अधिकार प्रदान करना था।

ऐच्छिक नयाचार का अनुच्छेद 1 पैरा 1 यह प्रावधान करता है कि विकलांग व्यक्तियों के अधिकारों को समिति ऐसे व्यक्तियों या व्यक्तियों के समूह की ओर से संसूचना प्राप्त करने एवं विचार करने के लिए सक्षम होगी जो यह दावा करते हैं कि उनके अधिकारों का राज्य पक्षकार द्वारा उल्लंघन किया गया है। समिति ऐसी संसूचनाओं को स्वीकार नहीं करेगी जो बिना नाम की हो या जब सभी उपलब्ध घरेलू उपायों का उपयोग नहीं कर लिया गया हो। समिति संसूचना को राज्य पक्षकार को अवगत कराएंगी। राज्य पक्षकार 6 महीने के अन्दर लिखित कथन द्वारा समिति को मामले के संबंध में अपना स्पष्टीकरण पेश करेंगे। यदि अभिसमय में लिखित अधिकारों का गम्भीर अथवा व्यवस्थित उल्लंघन की विश्वसनीय सूचना समिति को प्राप्त होती है तब समिति उस राज्य पक्षकार को मामले के संबंध में विस्तृत जानकारी प्राप्त करने के लिए आमन्त्रित कर सकती है। राज्य पक्षकारों से यह अपेक्षा की जाती है कि वे समिति को सहयोग प्रदान करेंगे। समिति एक या एक से अधिक सदस्यों को मामले की जाँच के लिए नियुक्त करेगी तथा उनसे अविलम्ब अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत करने के लिए कहेगी। समिति रिपोर्ट को संबंधित राज्य पक्षकार को अवगत कराएगी जिसे राज्य पक्षकार ऐसे निष्कर्ष, टिप्पणी अथवा अनुशंसा पर अपनी प्रक्रिया समिति को पेश करेंगे।

अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर विकलांगों के मानव अधिकारों के संरक्षण और संवर्धन के लिए विकलांग व्यक्तियों के अधिकारों की घोषणा, विकलांग व्यक्तियों के अधिकारों के संरक्षण एवं अभिवृद्धि के लिए अंतर्राष्ट्रीय अभिसमय, विकलांग व्यक्तियों के अधिकारों के लिए समिति तथा विकलांग व्यक्तियों के अधिकारों के अभिसमय पर ऐच्छिक नयाचार के माध्यम से संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा विकलांग व्यक्तियों के मानव अधिकारों के संरक्षण एवं संवर्धन के लिए कार्य किया गया है।

उपसंहार – प्रस्तुत शोध पत्र में अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर विकलांगों के मानव अधिकारों के संरक्षण एवं संवर्धन के लिए किए गए प्रयास का सैद्धातिक रूप से अध्ययन कर किया गया है। विकलांगों के मानव अधिकारों की घोषणा एवं अंतर्राष्ट्रीय अभिसमय में शामिल मानव अधिकार उसी प्रकार के ही अधिकार है, जो कि मानव अधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा 1948 में घोषित किये गये है, तथा सिविल एवं राजनैतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय प्रसंविदा एवं आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय प्रसंविदा 1976 के द्वारा सभी व्यक्तियों को प्रदत्त किए गए है। समाज के सक्षम वर्ग द्वारा दुर्बल विकलांग व्यक्तियों के अधिकारों को दबाया न जा सके और विकलांग व्यक्तियों के दुर्बल समूह को राज्य पक्षकारों द्वारा विशेष संरक्षण प्राप्त हो सके इस उद्देश्य से विकलांग व्यक्तियों के अधिकारों को पृथक से घोषित किया गया है। ऐच्छिक नयाचार के माध्यम से व्यक्तिक संसूचना प्रणाली का अधिकार विकलांग व्यक्तियों को देकर यह सुनिश्चित करने का प्रयास महासभा द्वारा किया गया है कि राज्यपक्षकार की उपेक्षा पर संसूचना के माध्यम से विकलांग व्यक्तियों के अधिकारों के हनन के प्रकरण से समिति को अवगत कराकर कार्यवाई करने के लिए अभ्यावेदन प्रस्तुत किया जा सके। विकलांग व्यक्तियों के अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय अभिसमय के माध्यम से राज्यपक्षकारों के ऊपर विकलांग व्यक्तियों एवं समाज के अन्य वर्गो के मध्य समता स्थापित करने के उद्देश्य से विभिन्न प्रकार के दायित्व अधिरोपित किये गये है। इस प्रकार संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर विकलांग व्यक्तियों के मानव अधिकारों के संरक्षण

एवं संवर्धन हेतु महत्वपूर्ण एवं व्यापक प्रयास किया गया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अग्रवाल, डॉ. एच. ओ., मानव अधिकार एवं अंतर्राष्ट्रीय विधि, सेन्ट्रल लॉ पब्लिकेशन, इलाहाबाद.
2. कपूर, डॉ. एस. के., मानव अधिकार एवं अंतर्राष्ट्रीय विधि, सेन्ट्रल लॉ एजेंसी, इलाहाबाद.
3. Karna, G.N., United Nations and the Rights of Disabled Persons: A Study in Indian Perspective (New Delhi: APH Publications Co., 1999).
4. Narasimham, R.K., Human Rights and Social Justice (New Delhi: Commonwealth Publishers,1999).
5. Borgohain, Bani, Human Rights: Social Justice and Political Change (New Delhi: Kanishka Publishers, 1999).

****

Assessment of awareness regarding eco-friendly garments among students of fashion designing

Dr. Sonal Bhati *

Abstract - Among the fashion designing student community, a word like eco friendly (Ecology friendly) must be a very common term due to the Government movements, awareness program run by NGO's, campaigns of WHO or UNICEF and involvement of fashion brands in this era. The objective of this paper is to study the factors affecting awareness regarding eco friendly garments among students of fashion designing. On a basic level, eco friendly garments being part of the education process may give us a considerable edge in the industry, while learning to incorporate eco friendly practices at process inception will add both, a competitive advantage and encourage eco-design. The purpose of the study is to examine the awareness of eco friendly garments among fashion educated students. This paper also aims to asses the economic status independently responsible for awareness in case of students studying fashion designing .The three levels of income, i.e. high, medium and low were studied in the study. Employing the random sampling technique, finally 85 students of diploma level from different colleges of Indore city were selected to serve as subject in the present study. After statistical analysis, results were found that there is significant difference between factors (emoluments status) affecting awareness regarding eco-friendly garments among students of fashion designing.

Key Words - Eco Friendly; NGO; WHO; NICEF; Emolument;

Introduction - In this fashion era, student community is more inclined towards fashion. Eco friendly garments are part of sustainable fashion and play a vital role in the market. So many big brands have already started their clothing lines with the name of Green garments, Eco friendly garments, Organic fashion and so on, As a moral responsibility toward sustainability. One step ahead some universities have started related courses such as sustainable fashion designing course, eco friendly garment manufacturing course and eco friendly textile engineering course at worldwide level. These courses are running sucessfully because of good job opportunities in manufacturing units for the passout students. In India, there are many programmes/courses running related to fashion designing at ITI and Diploma level. The basic qualification to take admission in these courses is 10th pass out . After completion of these courses, students are able to get job on technician level or supervisory level. When we talk about eco friendly term, these courses contain very few information regarding fashion sustainability. To asses students learning these courses it is required to find out their awareness regarding eco friendly garments.

Review Of Literature - 1.Assessment of sustainable design practices in the fashion industry: experiences of eight small sustainable design companies in the Northeastern and Southeastern United States Erin Lawless & Katalin Medvedev Published online: 30 Nov 2015 The primary purpose of this research was to gain an understanding of designers' knowledge of sustainability and investigate current practices in sustainable fashion design in order to discover what variables influence designers' decisions during the design and product development process of sustainable fashion apparel. 2. Fashion Design Industry Impressions of Current Sustainable Practices. Noël Palomo-Lovinski & Kim Hahn .Pages 87-106 | Published online: 27 Apr 2015 in this research findings indicate that Designers are, however, responsible for as much as 80 percent of any product that is introduced and have the ability to influence . This article explores professional fashion designers' understanding and awareness of the current best practices in sustainable design. Thirty-five design professionals were surveyed about sustainability in fashion to assess what was missing in their education. The results are interpreted and analyzed as a basis for a new focus on curricula within the American college system and to create lasting and substantive change in the fashion industry.3. The Branding of Ethical Fashion and the Consumer: A Luxury Niche or Mass-market Reality? Nathaniel Dafydd Beard Pages 447-467 | Published online: 21 Apr 2015 This article seeks to address the branding and marketing of eco fashion or ethical fashion, juxtaposing the experiences of today's, often confused, fashion consumers, against the promotional methodologies used by, sometimes equally confused, fashion brands. Looking at the rise of ethical fashion, this article takes into consideration the factors that have influenced this. In addition, the lifestyle and societal indicators that effect consumer behavior in relation to purchasing eco fashion are also investigated. Further to this theoretical discussion, this article concludes with a reflection on today's practical manifestations of the branding and promotion of eco fashion, and the challenges ahead that both fashion brands, and consumers, face in the continuation and sustainability of ecofashion.4. A Study of a Social Content Model for Sustainable Development in the Fast Fashion

*H.O.D. (Fashion Technology) Govt. Women's Polytechnic College, Indore (M.P.) INDIA

Industry Junghyun Jang , Eunju Ko , Eunha Chun & Euntaik Lee Pages 61-70 | Received 21 Mar 2012, Accepted 11 May 2012, Published online: 12 Dec 2012 Due to an increase in clothes consumption and a decrease in the trend cycle, middle-class consumers generally prefer clothes that are cheap and trendy. The present study is a timely investigation because there has been an increase in the social awareness of benefit sharing. Moreover, consumer perception of the environment is on the rise in South Korea. This study is a pioneer in applying social sustainability, which has until now been used in the fields of environmental, economic, and social research, to fashion social content. The implications for fast fashion firms that care about the ecological consumers are discussed, as are opportunities for further research. 5. Sustainable practices and transformable fashion design – Chinese professional and consumer perspectives Osmud Rahman & Minjie Gong Pages 233-247 | Received 25 Dec 2015, Accepted 14 Mar 2016, Published online: 06 Apr 2016 Many consumers are contented with the fast fashion styles, abundant choices, and affordable price. However, other consumers and environmental advocates began to question about this fast fashion system, including the problems of overconsumption and disposable clothing. As a result, many fashion practitioners and scholars have been developing different strategies and methods to minimise the fabric waste, and prolong the product lifespan through innovative design. The objectives of this study are twofold: (1) to explore various techniques for creating transformable clothing and (2) to gain a deeper understanding of how individuals (entrepreneurs, designers, professors, and consumers) respond to their perceptions of transformable clothing, and issues of sustainability in China., According to our results, many informants and online participants supported the concept of sustainable fashion as well as the idea of transformable garments. However, many professionals had numerous concerns regarding the production cost, practicality, adaptability, and saleability. An analysis on developing a common CSR labeling system in the fashion industry. year of publication :2015 Author :Nurunisa Çizmeci The literature review exposes that the negative effect of the industry on the society and the environment evokes the consumer awareness and demand for the CSR approach. Surely, the expectation of CSR leads to the fashion companies to regulate their operations. But the further step of CSR approach is communication.

Objective - To study the factors affecting awareness regarding eco friendly garments among students of fashion designing.

Hypothesis – $H0_1$ There will be no significant difference between factor affecting awareness regarding eco friendly garments among students of fashion designing.

Methodology - In this present study, Assessment of awareness regarding eco-friendly garments among students of fashion designing, the respondents were selected by random sampling technique on the basis of high, medium and low income group. The sample size ranges from about 85 students from different diploma level colleges and divided into three groups on the basis of their family income criteria. The location selected for this study was Indore, Madhya Pradesh. For qualitative analysis, questioner were framed to explore the propose of study. Data was collected and after tabulating the information, chi square test & percentage were applied. This research work belongs to the year 2017.

Result And Discussion

Table 1 (See in last page)

Chi- value for the awareness regarding eco friendly garments among high, medium and low income group students as per information and knowledge obtained 0.282 from peer group, 0.400 from Advertisement/Social media, 0.094 from educational institute. This is not significant, while information and knowledge gathered from government campaign obtained .000 is significant. Maximum students of low income group spent most of their time with peer group and therefore they gather most of their knowledge for eco friendly garments from them, whereas there are very few differences found between medium and high income group. As per information from Advertisement/social media, all the three income groups scored approximately the same percentage, which shows that the social media has become lifestyle which is the cause of negative as well as positive impact. As we know, students spent their maximum time and give attention to education but only high income group scored higher than medium and low income group because of seriousness and family facilities provided to them. Government is trying hard to aware society regarding eco sustainability. As a results, only middle income group got maximum score that shows middle class families are the target group of government movements related to social and environment issues and it is playing a vital impact on them.

In Chi-value for the definition of eco-friendly garments, four statements were applied to reach near to the defined results. Garments made by locally sourced material obtained .000, garments produced with eco-resources obtained .000, slow fashion garments and hand crafted textiles/artisanship also obtained .000 which is significant. To produce a garment locally sourced material required less transportation expenses as well as less fuel and energy. Only low income group students scored maximum because of their information and search of material which bounds them to purchase local and second hand material. That's why they are aware about the local market that is in their income limit rather than reason behind subject. Garments produced with eco sources, contain ''eco'' word to understand the meaning itself. So, medium and high income group respondents got 100% score whereas low income group got only 47.5% which results because of less opportunities due to income criteria they were less aware about eco term. Knowledge about hand crafted textile and its artisanship got results of low and medium which were near to each other while high income group scored maximum because of income level difference. The purchasing capacity is higher as compared to both the groups that give them an opportunity to more exposure to the market segments. So, those higher income groups acquire knowledge about artisanship as well as traditional textiles and craft.

Sustainability of garment in the community asses us regarding fashion sustainability and slow fashion as well as ethical value of a garment. The results obtained are .675 which is not significant. The percentage of the subject found

minimum difference because in Indian tradition women keep their wedding dresses and gifted apparels with them for the next generation more than 10 to 20 years. Traditional, emotional and cultural bonds are the measure factors behind this.

Many Fashion Brands have already started their eco friendly clothes line for customer, few of them are working only on fashion sustainable and eco friendly garments. Indore city is a commercial capital of Madhya Pradesh, National and International brands can be seen in the mall and other outlets. To capture knowledge about eco-friendly garment brands, the chi-square results obtained .000 that is significant. The results of percentage found that only high income group students ie. 23% have knowledge regarding eco friendly fashion brands whereas medium and low income group has no knowledge about it Because the availability of eco friendly fashion brands are very few in the city and other international fashion brands have no display or outlet of eco friendly clothing line. Income of the family is a basic requirement of purchasing behavior of customer. So, high income group has options to search garments according to their need.

Conclusion - On the basis of obtained results;

$H0_1$ There will be no significant difference between factors affecting awareness regarding eco friendly garments among students of fashion designing.

In level of knowledge H01 was not found accepted for Information from govt. campaigns, Knowledge related garment made by locally sourced material, Knowledge related to the garment produced with Eco-resources, Knowledge about slow fashion garment, Knowledge about hand crafted textile and its artisanship, Knowledge about Eco-friendly fashion brands. Whereas for the level of information Information from peer group, Information from Advertisement/ social media, Information from educational institute, Garments in the family since 10+ years" H01 were accepted.

Recommendations - To a significant extent, students of fashion designing from different levels of family income group took education in same platform but the results explain that the grasping level of students vary according to their exposure of the eco-friendly subject in terms of knowledge, education, social media responsibility toward society and actual government movements execution. This is the moral responsibility of education system to inculcate ethical knowledge as well as moral values in the curriculum relating to eco-sustainability.

References :-

1. Assessment of sustainable design practices in the fashion industry: experiences of eight small sustainable design companies in the Northeastern and Southeastern United States Erin Lawless & Katalin Medvedev Published online: 30 Nov 2015.
2. Fashion Design Industry Impressions of Current Sustainable Practices. Noël Palomo-Lovinski & Kim Hahn .Pages 87-106 | Published online: 27 Apr 2015.
3. The Branding of Ethical Fashion and the Consumer: A Luxury Niche or Mass-market Reality? Nathaniel Dafydd Beard Pages 447-467 | Published online: 21 Apr 2015.
4. A Study of a Social Content Model for Sustainable Development in the Fast Fashion Industry Junghyun Jang , Eunju Ko , Eunha Chun & Euntaik Lee Pages 61-70 | Received 21 Mar 2012, Accepted 11 May 2012, Published online: 12 Dec 2012.
5. Sustainable practices and transformable fashion design – Chinese professional and consumer perspectives Osmud Rahman & Minjie Gong Pages 233-247 | Received 25 Dec 2015, Accepted 14 Mar 2016, Published online: 06 Apr 2016

Table 1 : Assessment of awareness regarding eco-friendly garments among students of fashion designing

S.	Title	Income Group			Total %	Value	Asymp. Sig. (2-sided)	Sig.
		Yes						
		Between 40000/-	41000-70000/-	70000/- Above				
1	Information from peer group	92.5%	87.5%	84.6%	64.6%	.842[a]	.656	.282[b]
2	Information from Advertisement/ social media	95%	93.75%	92.3%	94.1%	.141[a]	.932	.400[b]
3	Information from educational institute	45%	40.62%	76.92%	48.23%	5.195[a]	.074	.094
4	Information from govt. campaigns	20%	31.25%	92.30%	35.29%	22.830[a]	.000	.000
5	Knowledge related garment made by locally sourced material	75%	25%	0%	44.70%	30.388[a]	.000	.000[b]
6	Knowledge related to the garment produced with Eco-resources	47.5%	100%	100%	75.29%	31.377[a]	.000	.000[b]
7	Knowledge about slow fashion garment	10%	21.87%	69.23%	23.52%	19.208[a]	.000	.000[b]
8	Knowledge about hand crafted textile and its artisanship	35%	40.62%	100%	47.05%	17.491[a]	.000	.000[b]
9	Garments in the family since 10+ years	90%	84.37%	92.30%	88.23%	.787[a]	.675	.541[b]
10	Knowledge about Eco-friendly fashion brands	0%	0%	23.07%	3.52%	17.223[a]	.000	.000[b]

संचार अनिवार्यता की वैयक्तिक और अंतर्वैयक्तिक तत्वों में भूमिका

डॉ. दीपमाला गुप्ता *

शोध सारांश – संचार अनिवार्यता जीवन की अमूल्य निधि है। यही अनिवार्यता जीवन को चलायमान बनाए रखने के लिए अति आवश्यक हैं। संचार अनिवार्यता जीवन मूल्यों और नैतिकता को बनाए और बचाए रखने के लिए अतिआवश्यक है।

संचार की अनिवार्यता विश्व में सूचनाओं के आगमन और निगमन को सुचारू और अबाधित रूप से संचालित करने के लिए अतिआवश्यक है। कोई भी संचार तभी सफल होता है। जब उसमें अनिवार्यता का तत्व होता है। अनिवार्यता संचार का वो तत्व है, जो संचार को मिनिंगफूल अर्थपूर्ण और सफल बनाता है। संचार अनिवार्यता जीवन को औचित्यपूर्ण बनाता है। संचार अनिवार्यता जीवन को समाज और देश, विश्व, समाज और परिवार को जोड़ने की इकाई है। संचार अनिवार्यता जीवन की महत्वपूर्ण इकाई के रूप में जीवन को संचालित करने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करती है। जब यही संचार अनिवार्यता संचार के माध्यमों से जूड़ जाती है, तो विस्तारित रूप ग्रहण करके जीवन को ज्ञान, सूचना और मनोरंजन से भर देती हैं।

संचार अनिवार्यता संचार के माध्यमों से जुड़कर समाज को विकसित बनाने में मतहत्वपूर्ण योगदान देती है। जिसमें सबसे महत्वपूर्ण अधिकार है। अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता। अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता संचार अनिवार्यता का महत्वपूर्ण पहलू है। जो अनिवार्यता को नैतिकता के मूल्यों के साथ बांधकर नए आदर्श स्थापित करने में मदद करती है।

'संचार संप्रेषण की गतिशील प्रक्रिया है, जो संबंधो पर आधारित है। यह परस्पर संबंधो के निर्माण की एक सर्वाधिक बड़ी विधि होती है, यह एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति को, एक समूह से दूसरे समूह और एक देश से दूसरे देश को जोड़ने का कार्य करता है। अत: संचार समाज की पारस्परिक क्रिया की गतिशील प्रक्रिया है, और जीवन की सबसे बड़ी अनिवार्यता के रूप में जीवन में अभिन्न रूप से शामिल हैं। वह अनिवार्यता जीवन को अर्थ-पूर्ण और गतिशील बनाता है।'

संकेत शब्द – संचार अनिवार्यता, टेलीविजन।

प्रस्तावना – संचार अनिवार्यता जीवन को गतिशील बनाने का कार्य करता है, संचार अनिवार्यता के बिना मनुष्य जीवन की कल्पना भी नहीं कि जा सकती। संचार अनिवार्यता की एक बड़ी भूमिका मानव सभ्यता के विकास में रही है। अत: संचार अनिवार्यता एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसमें एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति को पारस्परिकता के आधार पर भावनाओं तथा विचारों का आदान-प्रदान करता है। यह एक दोहरा प्रवाह है। जिसमें एक ओर संप्रेषक एवं उसका संदेश होता है तथा दूसरी ओर प्राप्त करता और उसकी अनुक्रिया है। इस प्रकार ज्ञान की बातों, भावनाओं, विचारों तथा सूचनाओं के आपस में आदान-प्रदान की क्रिया को संचार अनिवार्यता कहते हैं। संचार अनिवार्यता क्रिया द्वारा एक व्यक्ति के विचारों, मनोवृत्तियों तथा सूचना भाग होता है।

वैयक्तिक संचार – यह संचार का एक ऐसा प्रकार है, जिसमें व्यक्ति अपने आप से ही संचार करता है। यह अंतर्मुखी संचार है। इसमें व्यक्ति अपने द्वारा ही ऐसे विचारों के संकेतों को ग्रहण करता है और उसी के अनुरूप संचार की स्थिति निर्मित होती है। वैयक्तिक संचार, संचार अनिवार्यता का ऐसा रूप है, जो हर मनुष्य अपने जीवन भर करता है। वैयक्तिक संचार के बिना जीवन को संचालित कर पाना अत्यंत मुश्किल है।, वैयक्तिक संचार हर मनुष्य के जीवन की अनिवार्यता है और जीवन में उसी रूप में शामिल हैं। जैसे बैठे-बैठे किसी व्यक्ति को विचार आया की एटीएम से रूपये निकालने हैं। आप हाथ में एटीएम कार्ड लेकर बैंक के एटीएम की तरफ निकल पड़ते हैं। यह आवश्यक नहीं की इस प्रकार का संचार केवल आपके अंतर्मन में हो उसका प्रभाव अधिक निकट संबंधी पर पड़ सकता है। अनेक बार किसी को मिलने की इच्छा होने पर वही आपसे मिलने अनायास ही उपस्थित हो जाता है। इस संचार में, भाषा संकेत अथवा प्रत्यक्ष रूप से किसी संप्रेषण की आवश्यकता नहीं होती। यह अंतर्मुखी होता है। यह एक मन का दूसरे पर प्रभाव पड़ने के कारण संभव होता है। इसे अॅग्रेजी में टेलीपैथी (ज्मसमचंजील) कहते हैं।

वैयक्तिक संचार, संचार अनिवार्यता का अभिन्न अंग है। दुनिया में ऐसा कोई भी व्यक्ति नहीं है, जो इस संचार से अछूता हो। कोई गूँगा, बहरा व्यक्ति भी वैयक्तिक संचार करता ही है, ये उसके जीवन का भी अभिन्न अंग है। इस अनिवार्यता के बिना तो सामान्य व्यक्ति का जीवन भी चलायमान नहीं रह सकता। वैयक्तिक संचार में अनिवार्यता जीवन को गतिशील बनाने के लिए अतिआवश्यक है।

अंतर्वैयक्तिक संचार – एक व्यक्ति का दूसरे व्यक्ति से विचारों, मतों, भावनाओं आदि के आदान-प्रदान को अंतर्वैयक्तिक संचार कहते हैं। यह आमने-सामने होता है। यह जीवन में अनिवार्यता के रूप में शमिल हैं, जिससे जीवन चलायमान होता है। यह संचार आमने-सामने होता है। चूंकी यह दो व्यक्तियों के संपर्क से होता है, इसलिए यह कहीं भी स्वर, शाब्दिक, संगीत, चित्र, ड्रामा, लोक कला आदि माध्यमों से हो सकता है। यह संचार जीवन की अनिवार्यता है। इस प्रकार के संचार से दो लोगों के व्यक्तिकाल एवं सामाजिक संबंधो का भी गहरा असर दिखाई देता है। इस प्रकार का संप्रेषण विशिष्ट व्यक्ति अथवा वर्ग के लिए होता है।

* सहायक प्राध्यापक (पत्रकारिता एवं जनसंचार) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

संचार अनिवार्यता को इस उदाहरण के द्वारा भी समझा जा सकता है, बच्चे के रोने के अंदाज से माँ में यह संप्रेषण होता है कि उसका बच्चा भूखा है अथवा कान, पेट दुख रहा है। इस संप्रेषण से प्रेरित होकर उसमें उपयुक्त संचार होता है, वह उसे दूध पिलाती है, कान अथवा पेट सेकती है या दवा देती है।

संचार अनिवार्यता का अभिन्न अंग अंतर्वैयक्तिक संचार है। जब तक दो लोग आपस में बात करते है, तो तब ही विकास का कृमिक क्रम चलता है और हम विकसित समाज की श्रेणी में आते हैं।

शोध-उद्देश्य – 'संचार अनिवार्यता' संचार की अनिवार्यता विकास की एक स्वाभाविक प्रक्रिया है। इस प्रक्रिया के तहत् मेरा शोध विषय **संचार अनिवार्यता की वैयक्तिक और अंतर्वैयक्तिक तत्वों में भूमिका** मे संचार के समस्त माध्यमों का मानव-जीवन, दिनचर्या, सोच विचार, सामाजिकता, मनोविज्ञान और मनुष्य के जीवन दर्षन पर क्या प्रभाव पड़ रहा है, इसी का विस्तृत अध्ययन और शोध किया गया है।

इसके तहत् निम्न लिखित उद्देश्य हैं –

- संचार अनिवार्यता की वैयक्तिक और अंतर्वैयक्तिक तत्वों में भूमिका पर शोध आवश्यक है।
- सूचना अनिवार्यता को वैयक्तिक और अंतर्वैयक्तिक तत्वों के विविध पक्षों और प्रभावों का अध्ययन जानने के लिए प्रस्तुत शोध किया जा रहा है।
- वर्तमान में विश्व में जो परिस्थितियां हैं , उससे उभरने के लिए भी संचारअनिवार्यता में वैयक्तिक और अंतर्वैयक्तिक तत्वों पर विशेष शोध की आवश्यकता है।
- वैयक्तिक और अंतर्वैयक्तिक तत्वों और संचार अनिवार्यता का जीवन में प्रभाव व स्थान जानने हेतू।

शोध-विधि – प्रस्तुत शोध में सर्वेक्षण अनुसंधान के लिए, प्रश्नावली, साक्षात्कार, अनुसूची, अवलोकन, अंतर्वस्तु विश्लेषण और मनोवैज्ञानिक प्रभावों का व्यक्तिगत स्तर पर अध्ययन किया गया है।

शोध क्षेत्र / सीमा – शोध सीमा/ क्षेत्र की जब बात की जाती है, तो शोध-कार्य के विषय क्षेत्र में आने वाले सभी विषयों का गहन अध्ययन किया जाता है। मेरा विषय **संचार अनिवार्यता की वैयक्तिक और अंतर्वैयक्तिक तत्वों में भूमिका** विषय पर **संचार अनिवार्यता** मेरे विषय की महत्वपूर्ण विषयवस्तु है और संचार अनिवार्यता का क्षेत्र इसमें समाहित है। मेरी विषयवस्तु में संचार में टेलीविजन का विस्तृत वर्णन है और उस पर शोध मेरे विषय का क्षेत्र है। सभी माध्यमों का विस्तृत वर्णन और सभी परिप्रेक्षों में आकलन ही इस विषय की शोध सीमा है।

परिकल्पना – किसी भी शोध में परिकल्पना उस शोध में नक्शे में निर्माण की तरह कार्य करती है। जिस प्रकार किसी मकान को बनाने के पूर्व उस मकान का इंजिनियर के द्वारा एक नक्शा तैयार किया जाता है, उसी प्रकार हम अपने कार्यो के दिनभर की योजनाओं का एक आकलन दिमाग में तैयार करते हैं। उसी प्रकार किसी भी शोध के पहले एक परिकल्पना या उपकल्पना का निर्माण किया जाता है और उन प्रश्नों को तैयार किया जाता है और उनका जवाब शोध कार्यो के दौरान तलाशा जाता है। परिकल्पना में रास्ता तय होता है, और उस रास्ते पर चलकर शोध के आगे की दशा और दिशा तय होती है जो शोध को नए चरण प्रदान करती है और सामाजिक परिवर्तन में नए दृष्टिकोण का उदय करती है। संचार अनिवार्यता जीवन में आने वाले परिवर्तनों की नींव है, जो संचार को पूष्ट बनाने के साथ ही समाज में परिवर्तन का भी काम करती है।

सामाजिक दृष्टिकोण से परिकल्पना ने इन प्रश्नों को जन्म दिया है।

- संचार अनिवार्य जीवन के लिए कितनी उपयोगी हैं?
- संचार अनिवार्यता ना हो तो जीवन कैसा होगा?
- क्या संचार अनिवार्यता की वैयक्तिक और अंतर्वैयक्तिक तत्वों के द्वारा जीवन की दिशा में बदलाव लाया जा सकता है?
- संचार अनिवार्यता वैयक्तिक और अंतर्वैयक्तिक तत्वों से कितना प्रभावित होती है?

इन प्रश्नों का आधार ही शोध का संपूर्ण निष्कर्ष होगा।

निष्कर्ष – संचार अनिवार्यता जीवन की महत्वपूर्ण इकाई के रूप में जीवन को संचालित करने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करती है।

अनिवार्यता संचार का वो तत्व है, जो संचार को अर्थपूर्ण और सफल बनाता है। संचार अनिवार्यता जीवन को औचित्यपूर्ण बनाती है। संचार अनिवार्यता परिवार, समाज, प्रदेश, देश, विश्व को जोड़ने की इकाई है।

आप किस तरह बात करना या संवाद/संचार करते हैं , तो आज भी अधिक से अधिक लोग अंतर्वैयक्तिक संचार को ही पसंद करते हैं। मोबाईल, इंटरनेट ओर पत्र व्यवहार भी उतना ही प्रासंगिक है, सीधा सा अर्थ है, संचार मनुष्य के जीवन का वह अनिवार्य अंग है, जो उसके जीवन की आधारषिला है। ऐसे में सिर्फ संचार होना आवश्यक है। ऐसे में माध्यम गौण हो जाता है, लेकिन उसकी महत्ता हर समय बरकरार रहती है। और सिर्फ बचता है संचार, जो किसी भी रूप में हो, बस दूसरे मनुष्यों तक सार्थक रूप में पहुॅच जाना चाहिए। संचार में इसके अलावा दूसरी ओर कोई बात इतना महत्व नहीं रखती, सिर्फ संचार का गंतव्य पर पहुॅचना और उसकी सही और संपूर्ण प्रतिक्रिया संप्रेषक तक पहुॅचना चाहिए।

संचार जब बाधित होने लगता है, संप्रेषक जब अपनी बात प्रापक तक नहीं पहुॅचा पाता, या नहीं पहुॅचाना चाहता तो इस प्रक्रिया के कई दुष्परिणाम संप्रेषक और प्रापक दोनों को ही भुगतने होते हैं।

इस प्रक्रिया में संप्रेषक और प्रापक दोनों मनोवैज्ञानिक रूप से तनाव का सामना करते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भानावत, डॉ. महेन्द्र, जुगनू, डॉ. श्रीकृष्ण – भारतीय लोक माध्यम, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर
2. भानावत, डॉ. संजीव – पत्रकारिता का इतिहास एवं जनसंचार माध्यम, युनिवर्सिटी पब्लिकेशन, जयपुर, 2000
3. चतुर्वेदी, जगदीश्वर, सिंह, सुधा : जनमाध्यम सैद्धांतिकी, अनामिका पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्युटर्स लिमिटेड, 2002
4. दुबे, श्यामाचरण – विकास का समाज शास्त्र, साक्षरा प्रकाशन, दिल्ली, 110032
5. डॉ. तिवारी, अर्जुन – आधुनिक पत्रकारिता, वाराणसी इलेक्ट्रॉनिक्स, 2008
6. डॉ. रत्तू, कृष्ण कुमार – दृश्य श्रव्य एवं जनसंचार माध्यम, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, 2010
7. डॉ. तिवारी, अर्जुन – संपूर्ण पत्रकारिता, विश्वविद्यालय प्रकाशन, 2010
8. डॉ. शर्मा, बेला रानी – आधुनिक पत्रकारिता एक नज़र में, राधा पब्लिकेशन, 1996
9. डॉ. आलोक, टी डी एस – सांस्कृतिक पत्रकारिता, हरियाणा साहित्य

अकादमी, 2003
10. डॉ. सुलेमान, मोहम्मद – असामान्य मनोविज्ञान, विषय और व्याख्या, मोतीलाल बनारसीदास पब्लिकेशन, 2011
11. डॉ. श्रीवास्तव, डी एम – आधुनिक सामान्य मनोविज्ञान, श्री विनोद पुस्तक मंदिर, 2013
12. डॉ. तिवारी, भोलानाथ – भाषा विज्ञान, किताब महल एजेंसी, इलाहाबाद, 1999
13. डॉ. शर्मा, अशोक कुमार – आधुनिक पत्रकारिता चुनौतियां एवं संभावनाएं, आदर्श प्रिंटर्स, शहादरा दिल्ली, 2006
14. डॉ. सिंह, देवव्रत – भारतीय इलेक्ट्रॉनिक मीडिया, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली, 2007
15. गुप्ता, प्रशांत : कम्प्यूटर किंग, बिल गेट्स, प्रभात पब्लिकेशन, 2011
16. हरियाल, विजेन्द्र, पिल्लई आनंदन – सोशल मीडिया सिम्फ्लीफाइड, ओसीएम पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 2011
17. जैन, रमेश – संपादन, पृष्ठ सज्जा और मुद्रण, मंगलदीप पब्लिकेशन, जयपुर, 2005
18. जनमाध्यम संप्रेषण और विकास – इन्द्रप्रस्थ प्रकाशन, के–72 कृष्ण नगर दिल्ली, 110051
19. कोठारी, गुलाब – संप्रेषण, अवधारणा और स्वरूप, राजस्थान पत्रिका प्रकाशन, जयपुर, 2005
20. कुमार, पंकज – प्रेस कानून एवं संविधान, डायमंड बुक्स, 2009
21. कुमार, विनित – मंडी में मीडिया, वाणी प्रकाशन, 2012
22. लाल, बंशीधर – भारतीय स्वतंत्रता और हिन्दी पत्रकारिता, विद्याग्रंथ कुटीर पब्लिकेशन
23. मिश्र, के.के. मिश्र – विकास का समाज शास्त्र, वैशाली प्रकाशन, गोरखपुर
24. मिश्र, कृष्णबिहारी : हिन्दी पत्रकारिता इतिहास व प्रश्न, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली
25. मलिक, अशोक – सूचना प्रौद्योगिकी एवं पत्रकारिता, हरियाणा साहित्य अकादमी, 2002
26. मिश्र, कृष्णबिहारी – हिन्दी पत्रकारिता, भारतीय ज्ञानपीठ पब्लिकेशन, लोधी रोड़ नई दिल्ली, 2011
27. पटेल, योगेश – सोशल मीडिया, फ्रेंडशीप पोर्टल्स और अतिरिक्त इनकम स्त्रोत, पुस्तक महल, नई दिल्ली 2012
28. पाठक, किंशुक – नया मीडिया नया आयाम, के.के. पब्लिकेशन, पटना उत्तर प्रदेश, 2009
29. प्रियदर्शिनी, रचना, धारीवाल, गीता – जनसंचार एवं पत्रकारिता, अरिहंत पब्लिकेशन इंडिया लिमिटेड, 2012
30, पचौरी, सुरेश – दूरदर्शन दशा और दिशा, प्रकाशन विभाग, प्रबंधक भारत सरकार, फोटोलियो मुद्रणालय, दिल्ली 1994
31, प्रसाद, जगदीश – हिन्दी पत्रकारिता के किर्तिमान, साहित्य संगम, इलाहाबाद।
32, प्रसाद सिंह, डॉ. नारायण – सामाजिक मनोविज्ञान, भारती भवन, एक्जीबिशन रोड़ पटना बिहार।
33, पारख, जवरीमल्ल – जनसंचार माध्यमों का वैचारिक परिप्रेक्ष्य, क्वालिटी प्रिंटर्स, दिल्ली, 2000
34, राव, चेलापति – द प्रेस, नेशनल बुक ट्रष्ट, नई दिल्ली।
35. सिंह, डॉ. ओमप्रकाश – संचार माध्यमों का प्रभाव, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय द्वारा प्रकाशित, क्लासिक पब्लिकेशन, 1993
36. सिंह, डॉ. श्रीकांत – संप्रेषण प्रतिरूप एवं सिद्धांत, भारतीय पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्युटर्स, लेखेश्वर कॉम्पलेक्स, फैजाबाद, उत्तर प्रदेश, 1998
37. सिंघी, नरेन्द्र कुमार, गोस्वामी, वसुधाकर – समाजशास्त्र विवेचना, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर, 1995
38. सिंह, डॉ. महावीर – भारत में जनसंवाद, दिल्ली पब्लिकेशन, 2000
39. सामाजिक मनोविज्ञान – रतन प्रकाशन मंदिर, 1/185, ए प्रोफेसर्स कॉलोनी, दिल्ली गेट, आगरा – 2
40. सिंह, डॉ. सोना – विकास संचार आषा पब्लिशिंग कंपनी, आगरा, 282004
41. श्रीवास्तव, अखिलेश – व्यवहारिक मनोविज्ञान, अर्जुन पब्लिकेशन, 2013
42. सिंह, अरूण कुमार – मनाविज्ञान समाज शास्त्र तथा शिक्षा में शोध विधियां, मोतीलाल बनारसीदास पब्लिकेशन, दिल्ली 2008
43. सिंह, अरूण कुमार – उच्चतर सामान्य मनोविज्ञान, मोतीलाल बनारसीदास पब्लिकेशन, दिल्ली, 1997
44. शर्मा, राधेश्याम – जनसंचार, हरियाणा साहित्य अकादमी, पंचकुला, 1999
45. शुक्ला, डॉ. अजय – विकास का मनोविज्ञान, मानवीय विकास संस्था, भोपाल, 2011
46. त्यागी, मनोरमा – विकासात्मक मनोविज्ञान, अविष्कार पब्लिकेशन 2007

****

मीडिया के बाजार में पीछे छूटता सामाजिक सरोकार

संकर्षण परिपूर्णन *

शोध सारांश – भारतीय मीडिया की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि आमजनों का आईना हुआ करती थी, जिसमें वे सब सामाजिक मुद्दों की झलक देखा करते थे। उस वक्त खबरों में असर भी थी और मीडिया पर विश्वसनीयता भी। पर समय की मांग और मीडिया की बदलती जरूरतों ने एक ऐसी परिस्थितियों को जन्म दिया जिससे कई अनगिनत सवाल खड़े होते चले गए। मीडिया का सामाजिक संदर्भ क्या है? क्या बाजार और मीडिया के बीच कोई रिश्ता है? और न जाने ऐसे कितने सवाल जो मीडिया की विश्वसनीयता पर प्रश्नचिन्ह खड़ा करते हैं। लेकिन इन प्रश्नों से मीडिया के विशेषज्ञ प्रभावित नहीं होते हैं, बल्कि बुद्धिजीवी और जन-समाज को ये कचोटता है।

शब्द कुंजी– आमजन, सामाजिक संदर्भ, मीडिया कवरेज, ट्रेंड, विज्ञापन, पत्रकारिता शिक्षण, *बाजार,* सरोकार, प्रशिक्षु पत्रकार, टीआरपी, खुलापन, बाबा पत्रकारिता ।

प्रस्तावना – सन् 2000 के बाद मीडिया कवरेज के बढ़ते प्रचलन के कारण विश्व के कई देशों के साथ-साथ भारतीय मीडिया भी सशंकित हो उठा। 11 सितंबर 2001 को न्यूयार्क और वशिंगटन के आर्थिक ढांचे को नेस्तनाबूद करने की घटना हो या फिर 2008 में भारत की आर्थिक राजधानी मुम्बई के विभिन्न इलाकों पर आतंवादियों का हमला हो। मीडिया ने लाइव कवरेज देकर हमलावरों की पूरी मदद की। शायद उनके लिए चमकते स्क्रिन पर एक्सक्लूसिव खबरों की बानगी पेश करना देश भक्ति से ज्यादा प्रिय थी। लेकिन सनसनाती खबरों में आपको आगे रखने के बजाय वे पीछे छूटते चले गए और पहले हम वाली पत्रकारिता से देशहित भंवर में फंसता चला गया।

आज के दौर में मीडिया के क्षेत्र में नये-नये ट्रेंड विकसित हो रहे हैं, जहां उनका जुडाव प्रत्यक्ष तौर पर पूंजी से हो रही है।

हम क्या करते, किस राह चलते
हर राह में कांटे विखरे थे
उन रिश्तों के जो छूट गए
उन सदियों के, यारानों के
जो एक-एक कर टूट गए,[1]

विज्ञापनों का भी मीडिया से एक अलग गठजोड़ रहा है, इसके बिना वह अपने अस्तित्व को बचाए रखने में अक्षम है। यही करण है कि जब मीडिया विश्लेषक अपराध, व्यापार, खेल, राजनीति एवंम सिनेमा के बदलते समीकरणों को हल करने में लगे थे, वहीं दूसरी ओर विभिन्न चैनलों पर और अखबारों में अध्यात्म् और धार्मिक प्रवचनों की बयार बहने लगी। आजकल **बाबा पत्रकारिता** मीडिया की एक शक्ल है, जो विभिन्न धर्म गुरूओं के प्रवचनों को हमारी आंखों पर चश्पा कर देता है। ये सब रोचक पात्र है, मीडिया के इस फील्ड के, और वैसे भी मीडिया के अर्थशास्त्र में विज्ञापन के बिना लेजर तो नहीं बन सकता है।

ऐसी विषय वस्तु का अनुसरण करने वाले दर्शकों या पाठकों के लिए तकनीकी या नैतिक खामियों को नजरअदांज करना आसान होता है, लेकिन आस्था सर्वोपरि होती है। ऐसा भी नहीं कि इसका रसास्वादन करने वाले टूटे दातों एवं उजले बालों की शक्ल में होते हैं।

शोध कहता है कि लगभग 55 फीसदी दर्शक 35 वर्ष से पार और बाकी 15 से 24 वर्ष की आयु वाले होते हैं।–[2]

भारतीय लोकतंत्र में चुनाव एक अत्यंत महत्वपूर्ण पक्ष है। पहले चुनाव प्रचार के लिए पारंपरिक तौर-तरीकों का प्रयोग किया जाता था, पर मीडिया के बढ़ते प्रभाव को देखते हुए राजनीतिक दलों ने इसको मुफीद औजार के रूप में इस्तेमाल करना शुरू कर दिया। मीडिया एक रेफरी के माफिक महासंग्राम की तैयारी करता है। अवसर को हुए मीडिया भी विज्ञापन की दर को बढ़ा देता है।

जिस पार्टी की जेब सहमति देती है, वह चुनाव प्रचार पर करोड़ों खर्च करते हैं और जिसकी नहीं देती वो विज्ञापकीय दुर्बलता का शिकार होकर निर्दलीय बन जाते हैं। कुछ वर्ष पहले दिल्ली विधानसभा चुनाव और लोकसभा चुनाव इसका सही उदाहरण है।

स्त्री देह बजार निर्मित करने का सर्वाअधिक अनुकूल मुफीद माध्यम बनायी गयी है [3]- समय-समय पर ऐसे विज्ञापनों की इंट्री होती है, जिसमें नंगई है,खुलापन है और बजार अभी खुला उसके खुलेपन में। ये सब कारनामा आखिर बाजार के लिए ही तो है, पर वो प्रशिक्षु पत्रकारों के अनुकूल नहीं जो लाखों रूपये पत्रकारिता शिक्षण पर खर्च करते हैं और कुछ रूपयों की नौकरी पर अपनी जिंदगानी लिख जाते हैं। दूसरा प्रश्न सांस्कृतिक एंव सामाजिक क्षरण का भी तो है।

जिस टीआरपी को लेकर होड़ मची है, वो कुछ चुनिंदा शहरों तक ही सीमित है। अत: वैसे इलाकों में भी पीपुल्स मीटर लगाने होंगें जहां सिर्फ विज्ञापनदाता न हो। ऐसे कई कांड इतिहास के गर्भ में है, जहां पुलिस और मीडिया के दावों में फर्क होने से आपस में एक असमंजस की स्थिति बनती रही है। ऐसे प्रकरणों में बेबाकी से सच दिखाने के बजाय एक दूसरे पर कीचड़ उछलाने की प्रक्रिया का जारी रहना एक लाभ और हानि के गणित की ओर इशारा करता है।

* सहायक प्राध्यापक (पत्रकारिता एवं जनसंचार) रांची विश्वविद्यालय, रांची (झारखण्ड) भारत

निष्कर्ष – उपरोक्त तथ्यों एंव संदर्भों से मीडिया को बाजार से एक ऐसे रिश्ते के रूप में जोड़ा जा सकता है, जहां नैतिकता, जिम्मेदारी हाशिए पर है।

ऐसे में जरूरत है, एक अच्छे पत्रकारों के फौज की। पर ये उम्मीद भी बेमानी प्रतीत होती है क्योंकि जो मीडिया पहले प्रशिक्षु पत्रकारों को प्रशिक्षण देती थी। उसे भी अब पका-पकाया माल और जन्म से प्रशिक्षित पत्रकार चाहिए। ऐसे में स्कूल, कॉलजों और विश्वविद्यालयों की भूमिका प्रासंगिक लगती है।

जब खबर प्रोडक्ट, उद्देश्य लाभ हो जाए और रंगों की होली मीडिया की बहुरंगी संरचना का कारण बन जाए तो सरोकार की आशा करना कहां तक जायज है, फिर वहीं बात आखिर बाजार है।

दिवंगत पत्रकार प्रभाष जोशी के शब्दों में......

***बाजार अगर मनुष्य की नियति तय करेगा तो उममें एक मूल खोट आने वाला है, क्योंकि बाजार भाव से चलता है, बाजार मूल्य से नहीं चलता और मूल्यों के बिना समाज की कल्पना नहीं की जा सकती है। मानव समाज भाव से नहीं चल सकता, मूल्य से ही चल सकता है।*[4]**

अब विचारणीय बिंदु यह है कि भारतीय मीडिया इससे कैसे निपटेगी, क्योंकि इतिहास साक्षी रहा है कि इस देश को छोड़कर जहां भी बाजारवाद का प्रवेश हुआ है। वह उसकी सामाजिक शर्त्तो पर गया है और हम बाजार की शर्तो पर।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. संस्कृति, जनसंचार और बाजार- नंद भारद्धाज- सामयिक प्रकाशन- नई दिल्ली- 20.प्रिंट
2. मीडिया और जनसंवाद- वर्त्तिका नंदा एवं उदय सहाय- सामायिक प्रकाशन, नई दिल्ली- 131.प्रिंट
3. दूरदर्शन – संप्रेषण एवं संस्कृति- सुधीश पचौरी- आसाराम एवं सन्स, नई दिल्ली-118. प्रिंट
4. मीडिया और बाजावाद- राम शरण जोशी(संपादन)- राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली- कवर पेज. प्रिंट

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to September 2017, Vol. I

डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन् का परम सत्

नमिता कुमारी *

प्रस्तावना – अपने ही समय में विश्व भर में स्वामी विवेकानंद के बाद जिस व्यक्ति ने अत्यधिक मान-सम्मान पाया वे थे 'डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन्'[1]। मद्रास के 'तीरूतनी'[2] नामक एक छोटे से कस्बे में दिनांक 05-09-1888 को सर्वपल्ली राधाकृष्णन् का जन्म हुआ। प्रारम्भिक जीवन 'तीरूतनी तथा तीरूपटी'[3] जैसे तीर्थस्थलों में व्यतीत होने के वजह से ही शायद उनकी अभिरूचि धर्म के प्रति बढ़ी। मद्रास के मिशनरी स्कूलों में अपनी शिक्षा ग्रहण करने पश्चात वे वहीं के प्रेसिडेंसी कॉलेज में दर्शन शास्त्र के प्राध्यापक के पद पर नियुक्त होकर एक लंबी अवधि तक अध्ययन एवं अध्यापन से ही जुड़े रहे। उनके मन में हिन्दु मत के विवेकानंद जैसे प्रबल प्रतिपादको के लिए बड़ा आदर भाव था। 'जिस वेदांत का प्रसारण स्वामी विवेकानंद ने अमेरिका तथा इंग्लैंड में किया था, वही उनका प्रिय विषय था।'[4] हर मंच पर किसी न किसी रूप में वेदांत का प्रसारण करना राधाकृष्णन का मानो मिशन ही बन गया था। आदि शंकर के साथ-साथ वे महावीर, महात्मा बुद्ध, महात्मा गाँधी, कवि रवीन्द्र नाथ ठाकुर जैसे महान चिन्तकों से बहुत प्रभावित थे। इन सभी के अन्यतम भावों को आत्मसात कर वे भारतीय संस्कृति की अन्यतम गहराईयों पर इतना सुंदर विचार देते थे कि सुनने वाले चकित हो जाते थे। पूर्व तथा पश्चिम दोनों दृष्टिकोणों की असहिष्णुता को समाप्त कर दोनों को एक दुसरे के निकट लाने के अथक प्रयास के कारण ही राधाकृष्णन् को पूर्व तथा पश्चिम के मध्य 'संपर्क अधिकारी'[5] कहा जाता है। उनका दर्शन कोरे चिंतन का दर्शन नहीं अपितु उन्होंने दर्शन को मानव जीवन से संबद्ध करने की चेष्टा की है। आज जो विश्व की स्थिति है, उसका अवलोकन करते हुए उनका कहना है कि इतनी सारी औद्योगिक और नई-नई तकनीकी प्रगति के बावजूद मनुष्य अपने आप को असहाय और असुरक्षित महसूस कर रहा है। बुद्धि के चतुर्दिक विलास और अप्रत्यासित सफलताओं की वजह से मनुष्य का विश्वास पुरातन मूल्यों नीति और अध्यात्म से सहज ही नष्ट हो गया प्रतीत होता है। परिणामस्वरूप वह अन्दर से खोखला और निष्प्राण हो चुका है। अत: हमे अपने जीवन को सक्रिय एवं सशक्त बनाना है, तो आध्यात्म की ओर हमें पुन: प्रेरित होना होगा। वही मानव अपने जीवन को सही दिशा प्रदान कर सकेगा जो आध्यात्मिक आकांक्षाओं से युक्त होगा।

परम सत् – सभी दार्शनिक अन्वेषण का मुख्य लक्ष्य होता है, इस जगत व जीवन की व्याख्या प्रस्तुत करना। इस जगत व जीवन की व्याख्या जिस मूल तत्व के आधार पर की जा सकती है, उसे ही 'परम सत्' कहा जाता है जो कि प्रत्येक वास्तविक सत् तत्वो की व्याख्या का आधार होता है। इस प्रकार, जिस विचार में जगत संबंधी क्यों तथा कैसे प्रश्नों का समुचित समाधान मिल जाए, वही विचार 'परमसत्' का रूप लेता है। राधाकृष्णन का कहना है कि 'परमसत्' विचार में व्याख्या की दो मांगो पर ध्यान देना आवश्यक है- पहला तो जगत की संपूर्ण व्याख्या प्रस्तुत हो तथा दूसरा यह कि जिसके द्वारा व्याख्या प्रस्तुत की जा रही है, उसकी अलग से व्याख्या करने की आवश्यकता न हो। अर्थात् परमसत् वही हो सकता है, जो संपूर्ण विश्व की व्याख्या कर सके तथा जो अपने में स्वत: स्पष्ट हो। राधाकृष्णन् कहते हैं कि भौतिक जगत में ऐसा कुछ भी नही है, जो दूसरी शर्त को पूरा कर सके अर्थात इस जगत में कुछ भी ऐसा नही है, जो अपनी व्याख्या स्वयं ही दे सके। इस भौतिक जगत में तो एक भौतिक तत्व की व्याख्या के लिए दूसरे भौतिक तत्व का सहारा लेना पड़ता है। वास्तव में संपूर्ण भौतिक जगत की व्याख्या का कोई साधन भौतिक जगत में उपलब्ध नहीं। यही कारण है कि परमसत् के विचार के लिए हमें भौतिक जगत के परे जाना अनिवार्य हो जाता है। इसके साथ ही यह भी आवश्यक हो जाता है कि परमसत् के स्वरूप को ही भौतिक तत्वों के स्वरूप से भिन्न समझा जाए। इसी आधार पर राधाकृष्णन परमसत् को अभौतिक तथा आध्यात्मिक कहते है।

परमसत् के दो रूप – राधाकृष्णन ने अपने परमसत् के विचार को दो रूपों में स्पष्ट किया है। एक रूप को वे निरपेक्ष कहते है तथा दूसरे को 'ईश्वर' के रूप में स्पष्ट करते है।

निरपेक्ष सत् – अपने परमसत् विचार में राधाकृष्णन वेदांत का समुचित उपयोग कर परमसत् को ब्रह्म अथवा निरपेक्ष सत् (Absolute) कहते है। वे कहते है कि ब्रह्म ही समस्त वास्तविक एवं अस्तित्ववान तत्व का तार्किक आधार है। पाश्चात्य परम्परा के अनुरूप वे इसे निरपेक्ष सत् (Absolute) कहते हैं तथा भारतीय परम्परा के अनुरूप ब्रह्म से सम्बोधित करते है। उनके ब्रह्म के विचार मे 'कुछ अंश अद्धैत वेदांत के हैं, तो कुछ हेगेल-परम्परा से प्रभावित है।'[6] अद्धैत वेदांत के समान ही वे भी ब्रह्म को पूर्ण अद्धैत यानि 'एक' मानते है। हेगेल के समान उनका यह भी मानना है कि ब्रह्म एक पूर्ण अमूर्त भाव नही है, और न ही अमूर्तिकरण की प्रक्रिया से प्राप्त भाव है बल्कि सब कुछ का वास्तविक मौलिक आधार है। राधाकृष्णन 'निरपेक्ष सत्' को 'शुद्ध चेतना' (Pure Consciousness) 'शुद्ध स्वतंत्रता' (Pure Freedom) तथा 'अनन्त सम्भावना' (Infinite Possibility) कहते है।'[7] निरपेक्ष सत् को 'शुद्ध चेतना' कहने का कारण यह है कि चेतना ही वो तत्व है, जो अमिट है, जिसका पूर्ण निषेध नहीं किया जा सकता। अस्तित्व के किसी भी ऐसे आयाम की हम कल्पना नहीं कर सकते जो चेतनारहित हो। निरपेक्ष को 'अनन्त सम्भावना' इसलिए कहा गया है क्योंकि इसकी अभिव्यक्ति अनन्त जगतों में हो सकती है। यह जगत अनन्त सम्भावनाओं में से एक है। जब भी जगत की कोई संभावना रूप लेती है-व्यक्त होती है तो वह एक स्वतंत्र क्रिया होती है, जो कि किसी निर्धारक तत्व से निर्धारित न होकर निरपेक्ष की स्वतंत्रता का परिणाम होती है। इसी कारण निरपेक्ष सत्

* शोधार्थी (दर्शनशास्त्र) पं. रविशंकर शुक्ला विश्वविद्यालय, रायपुर (छ.ग.) भारत

को शुद्ध स्वतंत्रता कहा गया है। राधाकृष्णन् की यह मान्यता है कि इस विश्व की जो समुचित एवं अन्तिम व्याख्या हो सकती है, वह एकवादी व्याख्या ही हो सकती है। अतः निरपेक्ष सत् तो एक ही है। उसमें अनेक रूपता हमें तभी प्रतीत होता है, जब हम सृष्टि की ओर से और सृष्टि के परिप्रेक्ष्य में उसे देखते है। इस सृष्टि में हमे जो भी दिखाई देता है, वह उसी निरपेक्ष सत् की ही अभिव्यक्ति है। सत् अपने में पूर्ण अद्धैत ब्रह्म है, जो कि इन अभिव्यक्तियों से प्रभावित नहीं होता।

डॉ. राधाकृष्णन् जब परम सत्त् को ब्रह्म कहते हैं, तो उनका अभिप्राय है कि केवल एक ही सत्य का अस्तित्व है। यह एक सत्ता अद्धैत वेदांत का ब्रह्म है और यही विश्व के अनेक रूपों में व्यक्त होता है। ब्रह्म के अनेक रूप हैं। इसे ब्रह्म, विष्णु, महेश कहा गया है। इसी प्रकार विधि, आत्मा और सत्य कहा गया है। ये समस्त नाम कर्मो के आधार पर दिए गए हैं। जहाँ सृष्टि निर्माण के समय ब्रह्म को ब्रह्मा कहा गया तो वही जगत के पालन-पोषण करने के रूप में ये 'विष्णु'कहलाए। जगत के निर्माता तथा पालन पोषण करने के साथ साथ ब्रह्म को सृष्टि के संहारक के रूप मे 'महेश' की संज्ञा दी गई है। इस प्रकार हमारे अस्तित्व को नियंत्रित करने वाला एक नियम है- 'ब्रह्म'। यह सर्वोच्च आदर्श के साथ-साथ हमारी आध्यात्मिक आवश्यकता भी है। ब्रह्म ही वह शक्ति है जो मनुष्य की आध्यात्मिक पिपासा को शांत करती है।

ईश्वर - डॉ. राधाकृष्णन् के अनुसार व्यक्तिगत ईश्वर विशुद्ध उपासना और आदर का केन्द्र है। आध्यात्मिक जीवन के रूप में परम सत् को 'ईश्वर' कहा गया है। ईश्वर के रूप में ही एक सीमित आत्मा ब्रह्म अथवा परम सत् की अनुभूति करता है। हमारी सभी प्रकार की धार्मिक और आध्यात्मिक आवश्यकताओं की पूर्ति ईश्वर से ही होती है। ईश्वर का आदर सृष्टि के सृजनकर्ता, शासक और न्यायकर्ता के रूप में किया जाता है। शक्ति, न्याय, सच्चाई और दयालुता ईश्वर के गुण हैं। ईश्वर सर्वव्यापी, सर्वशक्तिमान एवं सर्वज्ञ है। वह ब्रह्म का ही एक रूप है। डॉ. राधाकृष्णन् के अनुसार 'इस सम्भावना (जगत्) के स्त्रोत और सृजनकर्ता के सन्दर्भ में ईश्वर ही ब्रह्म है।'[8] इस प्रकार राधाकृष्णन् ने ब्रह्म और ईश्वर के अभिन्न रूप को स्वीकार किया है। जगत को बनाने वाला, उसको पालने वाला तथा अंत में उसका संहार करने वालो के रूप में हम ब्रह्म को ही ईश्वर के रूप में पाते हैं। अर्थात् ब्रह्म ही वह ईश्वर है, जो जगतकर्ता, जगत-पालक तथा जगत संहारक है। ब्रह्म चरम सत्ता का ब्रह्माण्ड प्रकिया के पूर्व का नाम है किन्तु ईश्वर इस प्रकिया के साथ ही आता है। डॉ. राधकृष्णन् अपनी पुस्तक 'ऐन आइडियलिस्ट व्यू ऑफ लाइफ' में ब्रह्म की व्याख्या कुछ इस प्रकार करते हैं 'सर्वोच्च सत्ता को जब हम ब्रह्माण्ड से पृथक करके देखते हैं', तो उसे हम पूर्ण ब्रह्म कहते हैं और उसे ब्रह्माण्ड से सम्बद्ध रूप में देखते हैं तो उसे ईश्वर कहते हैं। पूर्ण ब्रह्म ईश्वर की ब्रह्माण्ड की सृष्टि के पहले की प्रकृति है और ईश्वर ब्रह्माण्डीय दृष्टिकोण से पहले पूर्ण ब्रह्म का रूप है।'[9] यथार्थ ज्ञान की प्राप्ति के लिए ईश्वर के प्रति विश्वास अत्यन्त आवश्यक है। डॉ. राधाकृष्णन् के अनुसार ईश्वर रहित जीवन असम्भव है। ईश्वर तथा जीवन का बहुत गहरा सम्बन्ध है। बिना ईश्वर के जीवन सम्भव नहीं और न ही जीवन बिना ईश्वर सम्भव है। दोनों एक दूसरे के लिए परम आवश्यक तत्व है। अतः इस दृष्टिकोण से हम कह सकते हैं कि ईश्वर ही जीवन है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सक्सेना, लक्ष्मी : समकालीन भारतीय दर्शन, पृ.-179
2. गंगाधर डी. ए. : डॉ. सर्वेपल्ली राधाकृष्णन् का धर्म एवं दर्शन, पृ.-89
3. लाल बसन्त कुमार : समकालीन भारतीय दर्शन, पृ.-313
4. राधाकृष्णन् एस. : भारतीय दर्शन, पृ.-28
5. वही, वही
6. सक्सेना, लक्ष्मी : समकालीन भारतीय दर्शन, पृ.-179
7. लाल बसन्त कुमार : समकालीन भारतीय दर्शन, पृ.-314
8. वही पृ.-318

****

डोगरी क्हानियें च बजुर्गें उप्पर आधुनिकीकरण दा असर

शिव कुमार खजूरिया *

प्रस्तावना – आधुनिक युग अस्त-व्यस्तता दा युग ऐ। इत्थै मती हारियां स्थितियां ते परिस्थितियां अपने बदलोए दे रूप च मिला करदियां न। आधुनिकीकरण नै माह्नू ते उसदे विकास गी बड़ा प्रभावित कीता ऐ। किश विद्धान इस बदलाऽ गी विकास मनदे न जद्के किश हारे दुए विद्धान इसी विकास नेईं मन्निये केईयें चाल्लियें दे ह्रास दी संज्ञा दिंदे न। भारती समाज ते भारती संस्कृति इस आधुनिकीकरण करी सभने शा मती प्रभावित होई ऐ। भारती संस्कृति ते भारती समाज च हून वैसा नेईं होआ करदा जैसा पराने समें च होंदा हा। बजुर्गें दे प्रति परिवार ते समाज दा नजरिया बड़ा बदलेआ ऐ। कुतै मान-सम्मान मिला करदा ऐ, जेहड़ी केह् पैह्लें कोला बेह्तर स्थिति ऐ। कुतै उंदे मान-सम्मान च फर्क आया ऐ। पराने समें च जित्थै बजुर्गें दा मान-सम्मान करने दी परम्परा बी ही ते मजबूरी बी। पर, आधुनिक युग च परिस्थितियां ऐसियां प्रतिकूल होई चुकी दियां न जे बजुर्ग अपने गै परिवार च ओपरे होंदे जा करदे न। समाजी मूल्लें च आई दी गिरावट आधुनिकीकरण कारन बी ऐ ते पच्छमी जगत दे असर कारण बी।

भारती संस्कृति ना सिर्फ चढ़दे गी सला करदी ऐ बल्के घरोंदे गी बी पूजदी ऐ। पच्छमी जगत च जित्थै परानी जां उपायोग कीती दी चीजें गी नकारी दित्ता जंदा ऐ, वैसा भारत नेईं ऐ। इत्थै नां सिर्फ पराने लोक, सगुआं उंदे कन्नै जुड़ी दियें चीज़ें ते गल्लें गी साम्भी-सम्भाली रक्खने दी परम्परा ऐ। बजुर्गें दा मान-सम्मान करना, परिवार ते समाज च उंदा मनासब थाह बनाई रक्खना, उंदी रोजमर्रा दी जिंदगी च औने आह्ली जरूरतें गी पूरा करना, उंदे प्रति सेवा दी भावना आदि विशेषता भारती संस्कृति च गै दिक्खने गी मिलदियां न। पर, वक्त दे कन्नै-कन्नै भारती समाज ते भारती जनमानस च बी बदलाऽ आवै करदा ऐ।

'डुग्गर समाज' बी भारती समाज दा गै इक हिस्सा ऐ। पच्छमी जगत दे प्रभाव कारण उद्यौगीकरण, बजारवाद ते शैहीकरण दे अंघड़े भारत ते डुग्गर दे परिवारिक ते समाजिक ढाचें गी पैह्ले जनेहा नेईं रौह्ण दित्ता ऐ। अज्ज सांझे परिवार दे थाह लौह्के परिवार गी म्हता दित्ती जान लगी पेदी ऐ। जिस कारण डुग्गर समाज च बी बजुर्ग पीढ़ी गी नज़रअंदाज़ करने दे कन्नै-कन्नै उंदी सांभ-संभाल आह्ली बक्खी बी घट्ट ध्यान दित्ता जा करदा ऐ।

'बजुर्ग' कुसी आखेआ जा इस बारै बी केईं मत न कीजे किश मनुक्ख जीवन दी खीरली पड़ाऽ उप्पर पुज्जियै बी अपने आपै गी बजुर्ग मन्नने गी त्यार नेईं होंदे न। उंदी सोच ते जज़्वा जुआने आह्ला होंदा ऐ। किश बजुर्ग अपने बाहले व्यक्तित्व कोला बजुर्ग लगदे गै नेईं। उंदा पैह्नावा नौजुआने गी मात देने आह्ला होंदा ऐ। चमकीले-भड़कीले लिवास, बालें गी बसमां ते चाल-ढाल नै नेईं आह्ली गल्ल-बात दा लैह्जा बी उ'नेंगी नौजुआनें आह्ली पंगताली च खड़ेरी दिंदा ऐ। सरकार पासेआ बी बजुर्गें आस्तै किश अलामतां निधारित होई चुकी दियां न जियां नौकरी थमां सेवा निवृत होने आह्ले आस्तै इक खास उमर तैऽ ऐ। बक्ख-बक्ख योजनाएं जियां यात्राएं च आर्थिक छूट, बृद्ध अवस्था पैंशन ते बैंके च सुविधाएं दा लाह् लैने आस्तै बी उमरी दा इक चेचा स्तर मन्नेआं जंदा ऐ। समाजी तौर उप्पर बी जिसलै कोई बजुर्ग टब्बरदारी दी खीरली पौढ़ी उप्पर पुजदा ऐ अर्थात् दादा-दादी जां नाना-नानी बनदा ऐ तां ओह् बजुर्गें दे वर्ग च शामल होई जंदा ऐ। प्राचीन ग्रंथें च ते इत्थूं तगर आए दा ऐ जे इक व्यक्ति दे केश जिसलै तौले होन लगी पौन तां उसनै अपने आपै गी बजुर्ग मन्नी लैना चाहिदा ऐ ते उसदे जानू-पछानू लोक बी उसी बजुर्ग मिथियै मनासब मान-सम्मान देना शुरू करी देना चाहिदा ऐ। तुलसीदास हुंदे पासेआ रचित रामचरितमानस च जिसलै राजा दशरथ शीशे च अपने सिरै दे बाल चिह्टे दिखदें न तां उंदे मनै च बी इयै भाव औंदा ऐ। रामचरितमानस च आए दा एह् दोहा इस गल्लै दी पुश्टी करदा ऐ-

'श्रवन समीप मए सित केसा। मनहुँ जरठपनु अस उपदेसा।।
नृप जुबराजु राम कहुँ देहू। जीवन जनम लाहु किनि लेहू।।
कानों के पास बाल सफेद हो गए हैं मानो बुढ़ापा ऐसा उपदेश कर रहा है कि हे राजन! श्रीराम चन्द्र जी को राज-पद देकर अपने जीवन और जन्म का लाभ क्यों नहीं लेते।।4।।[1]

'डोगरी क्हानी' दा सफर अज्जै कोला लगभग 70 बरें पैह्ले 'पैह्ला फुल्ल' नामक क्हानी संग्रैह् कन्नै शुरू होआ हा। अज्ज इक्कसवीं सदी च दुए दशक दे खीरा तगर पुजदे-पुजदे डोगरी च लगभग 100 क्हानी संग्रैह् प्रकाशत होई चुके दे न। शुरूआती दौर दियां क्हानियां परिवारिक समस्यां, आर्थिक तंगी ते समाजिक कुरीतियें जनेह् विशे उप्पर लखोइयां। पर, भूमंडलीकरण दे इस दौर च डोगरी क्हानी परानी रूढ़िए ते विचारधाराएं गी त्रोड़दी नमें विशे जियां आधुनिकता, उत्तर-आधुनिकता, बजारबाद, उद्योगीकरण ते शैहीकरण आदि उप्पर तस्सली बक्श लखोआ करदी ऐ।

'आधुनिकीकरण' अंग्रेजी दे मार्डनाईजेशन दा पर्याय ऐ। एह् शब्द पच्छमी सभ्यता दी देन ऐ। कुसै परम्परागत जां परानी कम्म करने दी प्रणाली, व्यवस्था गी नमें ढंगै कन्नै करने दा भाव गै आधुनिकीकरण खुआंदा ऐ। इसदा सरबंध भौतिकता कन्नै ऐ। एह् परम्परा थमां जलदी आवा करदी रूढ़ीवादी विचारधारा दा खंडन करदी ऐ। आधुनिकीकरण विज्ञान ते तकनीकी सिद्धांत उप्पर अधारत ऐ। विज्ञान नै मशीन गी जनम दिता जेह्दे कन्नै मनुक्खै दा कम्म करने ते सोचने दा ढंग-तरीका बदली गेआ। पर, इ'नें सारियें चीज़ें दा बजुर्गें उप्पर बड़ा डुंह्गा असर पेआ ऐ। डोगरी क्हानियें च इस चाल्ली दे असर उप्पर तफसीली चर्चा इस चाल्ली कीती जाई सकदी ऐ-

* शोधकर्ता (डोगरी विभाग) जम्मू विश्वविद्यालय (जम्मू) भारत

'इंटरव्यूह' व्हानी च मुक्ख बजुर्ग पात्तार राकेश दी मां ऐ। पराने समें च जागतें-कुड़ियें दा ब्याह् कराने कोला पैह्लें उ'नेंगी पुच्छना जरूरी नेईं हा समझेआ जंदा। इत्थूं तगर जे ब्याह् दे बाद बी दोऐ जी केईं-केईं म्हीने आपूं-चें गल्ल-बात नेईं हे करदे। पर, अज्ज ऐसा नेईं ऐ। समां बदली गेदा ऐ। जिंयां-जियां इंसान तरक्की दियां मजलां तैह् करदा जा करदा ऐ उ'आं-उ'आं गै उसदी सोच ते समझ च बी बदलाऽ आवै करदा ऐ। अज्ज जागत-कुड़ियां आपूं जाइयै पुच्छ-परतीत करी औंदे न। इस कारण घरै दे बजुर्गें उप्पर केह् असर पौंदा ऐ, इसदा गै नमूना पेश करदी ऐ इंटरव्यूह व्हानी।

प्रस्तुत व्हानी च राधा ग्रैह्नी ऐ। ओह्दे जागतै दे रिश्ते आस्तै चम्पा ते ओह्दी धीऽ निशा उसदे घर जंदियां न। उसी केईं चाल्ली दे सुआल पुच्छदियां न। जि'यां उमर किन्नी ऐ? बमारी केह्ड़ी-केह्ड़ी ऐ? झांकने दी आदत ते नेईं आदि। उंदा इस चाल्ली दा बरताऽ दिक्खियै राधा परेशान होई जंदी ऐ। इस थमां बी मती रहानगी राधा गी इस गल्लै दी होंदी ऐ जे इस थमां पैह्ले बी ओह् दोऐ जवियां केईं बुड्डियें दा इंटरव्यूह लेई चुकी दियां न। राधा बड़ी मुश्कलें उंदे थमां खलासी करोआंदी ऐ। व्हानी च आई दियां एह् सतरां दिक्खो-

''राधा सोचा करदी ही नेहियां जनानियां ते उ'ऐ पैह्ली बारी दिक्खियां न। ओह् अंदरो-अंदरी घाबरी दी सोचा करदी ही जे कोश ओह् इस बेल्लै घर कल्ली नेईं होंदी।''[2]

'रबारा बदली गेआ' व्हानी च बजुर्ग पात्तार पंत ऐ। ओह् लोकें दे टिबड़े दिक्खियै उंदे व्याह् करोआंदा ऐ। पंत ग्रांऽ दे भोल-भाले लोकें गी मत्तु बनांदा ऐ। ओह् ग्रांऽ दी कुड़ियें गी शैल घर रिश्ता करोआने दा लालच देइयै उंदा शारीरिक शोशन करदा ऐ। पर, पंत दा एह् धंधा मता चिर नेईं चलदा ऐ। सारिका नांऽ दी कुड़ी पंत दे मरक्खे गी आखर तुआरने च कामजाब होई जंदी ऐ ते इलैक्ट्रानिक मीडिया गी मौके उप्पर बलाइयै पंत दी कारस्तानियें गी बेनकाब करी दिंदी ऐ। व्हानी च आई दियां ऐह् सतरां इस गल्लै दी पुश्टी करदियां न-

''पंत हरिस्सियै अगड़ा होआ गै हा जे चबक्खेआ रोशनियें कन्नै कमरा जगमगाई उट्ठेआ। पंत घाबरी गेआ। उसदे कमरे च टैलीविजन चैनल आह्ले न। लाइटां पंत उप्पर सुट्टी दियां हिंया ते कैमरे आन हे। पंत ठंड च बी परसीनो-परसीना होई गेआ।''[3]

'फफड़ताल' व्हानी च मुक्ख बजुर्ग पात्तार चाची ऐ। चाची अन पनपढ़ ऐ। ओह्दी कोई लुआद नेईं ऐ। प्रस्तुत व्हानी च चाची में पात्तार गी पढ़ांदी-लखांदी ऐ। उंदी पढ़ाई दा असर चाची उप्पर बी पौंदा ऐ। चाची दिन-ब-दिन पढ़ी-लिखी भाषा दा इस्तेमाल करन लगी पौंदी ऐ। व्हानी च आई दियां एह् सतरां दिक्खो-

''पोतरूएं दे स्कूल पढ़ने करी चाची जी पर समें दा प्रभाव पवै करदा हा। मिगी अजें तगर याद ऐ, जिसलै बी साढ़े ग्राएं चा कोई कुसै कम्मै गी करै करदा होंदा तां कोलें लंघदियां गलाई जंदिया छुट्टी जागा रैस्ट बी करै कर ते जि'यां उ'नेंगी रैस्ट दा मतलब बिना पढ़े गै आई गे...।''[4]

'अपना-अपना कुरूखेतर'[5] व्हानी च बजुर्ग पात्तार रटैर कर्नल ते ओह्दी घरा-आह्ली ऐ। आधुनिकता दे इस दौर च दाज लैने ते देने दी कुप्रथा समाजिक ते कानूनी तौरा पर अपराध ऐ। इस कुप्रथा नै पता नेईं किन्ने घर जुआड़ी दित्तो न। पर, अज्जै दी नौजुआन पीढ़ी इस कुप्रथा गी नकारने ते मकाने च चेची भूमिका नभाऽ दी ऐ। इसदी गै मसाल पेश करदी ऐ व्हानी 'अपना-अपना कुरूखेतर'।

प्रस्तुत व्हानी च कर्नल दे दो जागत न। ओह्दी घरै-आह्ली जागतें गी सौखे घर व्याह्वा चाह्दी ऐ। तां जे मते कोला मता दाज थ्होऐ। पर, कर्नल दाज लैन कोला नकद पैसे लैने दी सोचदा ऐ। इ'यै गल्ल ओह् जागतें कन्नै बी सांझी करदे न। पर, जागत मां-प्योऽ दी मूंहां उप्पर गै दाज लैने कोला मना करी दिंदे न। ओह् दाज लैना पिछड़ेपन दी नशानी समझदे न। जागतें दा जबाव सुनियै दोऐ जीऽ र्हान-परेशान होई जंदे न। कर्नल सोचदा ऐ जे अज्ज दे समें च पैसा गै सब-किश ऐ। पर, इ'दें जागतें गी पैसे दा लुभ-लालच गै नेईं ऐ।

इसदे इलावा बी डोगरी च मतियां व्हानियां लखोई दियां न जिंदे च बजुर्गें उप्पर आधुनिकीकरण दा प्रभाव पौंदा लभदा ऐ। जि'यां 'सच्च जड़ा त्रामें दे पटें पर नईं लखोआ', 'मोह', 'रिश्तें', 'रूख बदलदा समां' ते 'पंते दी हवेली' व्हानियें दे बजुर्ग पात्तार।

निश्कर्श दे तौर पर गलाया जाई सकदा ऐ जे इ'नें व्हानियें दे बजुर्गें उप्पर आधुनिकीकरण दा माढ़ा प्रभाव पेदा लभदा ऐ। आधुनिकता दे इस दौर च नौजुआन पीढ़ी पासेआ परानी रूढ़ियें ते रीति-रवाजें गी त्रैड़ियै, मनमर्जी दा व्याह्, व्याह् आस्तै आपूं पुच्छ-पड़ताल करनी ते अंतरजाति ब्याह् करने दा फैसला बजुर्गें दी मानसिकता उप्पर गैहा असर पांदा ऐ। उंदे मनै दे चाऽ ते हीखियां मेदां अंदर गै दबोइयै रेही जंदियां न। उ'नेंगी सकार करने दा नां ते मौका मिलदा ऐ ते नां गै नमीं पीढ़ी ऐसा होन दिंदी ऐ। किश व्हानियें दे बजुर्ग अपनी उपर दा ख्याल नेईं रखियै समाजी ते नैतिक मर्दाएं गी त्रोड़दे बी लभदे न किश व्हानियें च ऐसे बजुर्गें गी बेनकाब बी कीता गेदा ऐ।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. रामचरितमानस, तुलसीदास, अयोध्याकाण्ड, दोहा-2, चौपाई-4, सफा-309
2. हैलो, माया, प्रो.ललित मगोत्रा, सफा-43
3. खौ'दल, राजेश्वर सिंह राजू, सफा-37
4. चाननी दा सेक, नरसिंह देव जम्बाल, सफा-97
5. बर्लिन दी दिवार, ओम गोस्वामी

****

डोगरी लोकगाथाएं च कर्मफल सिद्धांत

डॉ. प्रीति रचना *

प्रस्तावना - 'कर्म' दा शाब्दिक अर्थ ऐ 'कम्म' जा 'क्रिया'। मुट्टे तौरा पर एह् क्रिया ते प्रतिक्रिया खुआंदा ऐ, जेह्दे बारे च धारणा प्रचलत ऐ जे एह् सब चेतनाएं गी बस्स च करदा ऐ। कर्म भाग्य नेईं ऐ। माह्नू कर्म करदा जंदा ऐ, जिं'दे कन्नै ओह्दे भाग्य दी रचना होदी ऐ।

भारती संस्कृति दी बी मानता ऐ जे अज्ज माह्नू जिस बी सुख-दुख दी परिस्थिति च ऐ ओह् ओह्दे पराने जनमें दे कर्में दा परिणाम ऐ। माह्नू दा कोई भी कर्म निष्फल नेईं होंदा। देर-सवेर ओह्दा फल उस्सी थ्होंदा गै। किश कर्में दा फल इस्सै जनम थ्होई जंदा ऐ ते किश दा अगले जनम च। इस्सै करी माह्नू गी कर्मफल सिद्धांत गी म्हेशां ध्यान च रखना चाहिदा ऐ तां जे म्हेशा स्हेई रस्ते पर र'बै, म्हेशां चंगे कर्म करै।

डुग्गर-प्रदेस बी भारत दा गै इक अंग ऐ ते इस्सै करी भारती संस्कृति दियां मूल प्रवृत्तियां डुग्गर संस्कृति च भी दृष्टिगोचर होंदिया न । शुरू थमां गै डुग्गर वासियें दी बी कर्मफल च गूढ़ आस्था रेही ऐ। उं'दी धारणा ऐ जे कर्में दा फल भोगना गै पौंदा ऐ भामें कर्म चंगे होन ते भामें माडे। कर्में मताबक गै सुरग-नरक बी थ्होंदा ऐ ते कर्में करी गै सुख-दुख। एह् धारणा बी डुग्गर च प्रचलत ऐ। इस गल्लै दा प्रमाण डोगरी लोक-गाथाएं च बी बखूवी नज़री औंदा ऐ।

'दाता रणपत', गाथा च एह्दा उदाहरण लभदा ऐ। दाते रणपत गी सच्च बोलने करी बांगी चाड़क मारी दिंदा ऐ ते दाते दी मां बी इस्सै दुखै करी सती होई गेई। उं'दी दौने दी मौती दा पाप बांगी गी लगदा ऐ। बांगी दे कर्में दा फल बांगी दे कन्नै-कन्नै सारे चाड़के गी थहोंदा ऐ, जेह्दा जिकर गाथा दी इ'ने सतरें च होए दा ऐ-

''लोढै बेल्लै दिन घरोन्दे गी मिलदे लाम्बे आई।
कन्ने 'पग्गा' दै सती होन्दियै सुरग लोकें गी जाई।
मिलदे लाम्बे आई जिसलै, द्रालै अग्ग लगाई।
'कौलड' ते चूही चक्क सड़ी गे, अग्ग कोह्ल पचेला आई।
नस्सी-नस्सी जंदे चाड़क हुन जिंद बचदी नाई।
अन्ने ते कोढे होई गे, लैन्दे जातां बटाई।''[1]

'बाबा जित्तो ते बुआ कौड़ी' गाथा च बूआ कौड़ी मरने परैंत अपने कन्नै ते अपने प्योऽ कन्नै होई दी ज्यादती दा, बेन्याईं दा बदला उस मैह्ते वीर सिंह कन्नै लैंदी ऐ, जेह्दे करी ओह्दे प्योऽ गी अपने प्राणें दा बलिदान देना पेआ। मैह्ता वीर सिंह अपने भैड़े कर्में दी सजा पांदा ऐ। ओह्दे पूरे बैंस दा नाश होई जंदा ऐ, ते पूरा पिंड तबाह् होई जंदा ऐ।

''सुरग लोकें दा हुकम लैंदी मात लोग गी आई।
अग्नि दे 'खोह्ड़' फगड़े दे बूआ वीरसिंहै दे पिंड आई।
गलियें खेढ़दे जागत मारे, कपड़े सड़े पटारें।
कप्पड़े सड़े पटारे, बुआ कोप थुआड़े।''[2]

'बाबा भोतोय, गाथा च नायक भोतो गी मारने आह्ले जनेआर जिसलै ब्याह् आह्ले घर रूट्टी खान लगदे न तां भोतो रोहै कन्नै उं'दी रुट्टी गी लहू, पाक ते कीड़े च बदली दिंदा ऐ। भैड़े कर्में दा फल म्हेशां भैड़ा गै होंदा ऐ, एह्दा उदाहण इस गाथा दी इ'नें सतरें च बी लभदा ऐ-

''बड्डे बेल्ले दा लगन थापेआ जान्नी गीभत्ता खलाई।
जान्नी भत्ता जे खान लगी तां भोतो ने कला दबाई।
चौलें थाह उस कीड़े टोरे, पानी गी रत्ता बनाई।''[3]

'बाबा थोलू', गाथा च थोलू दी जबरदस्ती बलि देने आह्ले राजे मैह्ताबसिंह गी बी ओह्दी करनी दी सजा थ्होंदी ऐ। ओह्दा राजपाठ खूसी जंदा ऐ ते सारा बैंस बी खत्म होई जंदा ऐ। एह्दा उदाहरण गाथा दी इ'नें सत्तारें च नज़री औंदा ऐ-

''करनियें दे फल परमेश्वर दिंदा बरवशदा कुसै गी नाई।
थोलू दी बलि देइयै राजा सुख भोगी सकेआ नाई।
औत्तार गै मैह्ताबसिंह मरेआ बैंस्स बधेआ नाई।
बुरी दा फल बुरा लोको, बुरी करदें बी करनी नाईं।''[4]

'दाता रंगू', गाथा च रंगू गी माजबे जाति दे करसान मारने गी औंदे न। उं'दे कन्नै लड़दे-लड़दे इक मजबा दाते रंगू दी धोखे कन्नै मुंडी बड्डी दिंदा ऐ ते दाता रंगू मरी जंदा ऐ। पर इस जुल्म दी सजा माजबे बी पांदे न, जेह्दा वर्णन गाथा दी इ'नें सतरें च होए दा ऐ-

''हत्या लग्गी उ'नें बाजवे इक बी जींदा नाई,
लग्गी हत्या हीरे गी हुन, खेड्डै दाता जाई।''[5]

'बाबा रणिया', गाथा च मालिया नेईं देने करी लखनपुर दा राजा रोहै च आइयै भटवालें गी आक्खियै बावे रणिये गी मरोआई दिंदा ऐ। उस हत्या करी ओह् सारे अपनी करनी दी सजा पांदे लभदे न-

''संञा पेइयां तरकालां पेइयां रणिए नै हाक लगाई।
हक्क पौंदी जिस घलोचै गी ओ फ्ही बचदा नाईं।''[6]

'दाता बीजोय, गाथा च दाते दा दोस्त इक सलारियां दाते गी धोखे कन्नै मारी दिंदा ऐ। ओह्दे उस पाप दी सजा सभनें सलारिएं गी भुगतनै पौंदी ऐ। दाते दी रूह् उनेंगी सजा दिंदी ऐ-

''बिच्च बाडमै पुज्जा दाता घर सलारियै दै आई।
हक्कां मारदा दाता बीजो सलारियें गी छोड़दा नाईं।''[7]

'बाबा बंगी', गाथा च बावा लोकें दी गल्लें च आरयै अपनी घरैआह्ली गी कुलच्छनी समझियै मारी दिंदा ऐ। ओह्दी घरैआह्ली मरदे-मरदे उसी आखदी ऐ जे उसी ओह्दे इस कर्म दा फल जरूर थ्होग जेह्ड़ा के सच्च बी होंदा ऐ ते बाबा बंगी बी उ'आं गै मरदा ऐ जि'यां उन्नै मुंडी बड्डियै अपनी घरैआह्ली गी

* गाँव बकोर, तहसील अखनूर (जम्मू) भारत

मारेआ हा–

''बड्डी दा मुंडी गल्लां करदी जे करदी राम–राम ध्याई।
जैसी मेरे कन्नै तूं कीती वैसी तेरे कन्नै होई।
............बाबा बंगी गी सुर्ग भेजी देआ जींदा छोड़ओ नाई।
बेचाई नेईं केरआं चौधरी तड़फी–तड़फी मरगी।
रमैन सुनी लै म्हाभारथ सुनी लै– दुश्ट बचदा नाई।
.....त्रीआ फट्ट मारेआ राठी नै मुंडी दित्ती तुआरी।''[8]

इस्सै गाथा च कर्मफल थ्होने दा इक होर उदाहरण दृष्टिगोचर होए दा ऐ। बावे बंगी गी मारने आह्ले गी बावा बंगी उस पापै बारै सोह्गा बी करदा ऐ पर फ्ही बी ओह् बावे दी मुंडी बड्डी दिंदे न। बावे गी माने परैंत्त ओह् राठी बी अपना कर्म फल भोगदे नज़री औंदे न। अपने पापै दी सजा उ'नेंगी बी थ्होंदी ऐ ते ओह् अपनी जान मुआंदे न।

''बड्डी दी मुंडी गल्लां करदी रामो–राम ध्याई।
जैसी कीती सुखदेई कन्ने बैसी करनी पाई।
पाप दा फल में चक्खेआ तुस चक्खो घर जाई।
ब्राह्मन हत्या लग्गी राठियो, जनाना मां बनाई।
संञा पेइयां त्रकालां पेइयां बंगी ने हाक लगाई।
हक्क पौंदी जिस राठी गी ओ– ओ दिनें बचदा नाई।''[9]

'बूआ अमरोय, गाथा च बूआ अमरो दी हत्या करने आह्ली बूआ दी सस्स बी अपने कर्में दा फल पांदी लभदी ऐ। बूआ दी रूह् रोहै च अपने सोह्रिये गी तबाह् करी दिंदी दृष्टिगोचर होई दी ऐ–

''सुरग लोकें दा बूआ अमरो नै अपनी कला दबाई।
मिगी मारियै कोल्है सुट्टेआ परोह्ता, अन्न–जल करेआ नाईं।
फुक्की टकाया इनें अडोतरें गी, घर प्योकियें दे आई।
बोलै बूआ वचन करै, सुत्त गी बात गलाई।''[10]

दाता बाल्ला, दाता अरजो दी गाथा च बी एह्दा उदाहरण लभदा ऐ।

निश्कर्श – आखर च एह् गलाया जाई सकदा ऐ जे मनुक्खी जीवन इक खेत्तरै आंगू ऐ, जेह्दे च कर्म बाए जंदे न ते उं'दे गै चंगे–माड़े फल कप्पे जंदे न। जेह्ड़ा चंगा करोग ओह् चंगा फल पाग ते जेह्ड़ा भैड़ा कर्म करोग ओह् बुराई गै पाग, जेह्दा उदाहरण इ'नें गाथाएं च बी होए दा ऐ।

एह् डोगरी लोकगाथा बी सिद्ध करदियां न जे हर माह्णू गी कर्मफल भोगना गै पौंदा ऐ। माह्णू जीवन च जो बी चंगी–माड़ी परिस्थिति औंदी ऐ ओह् ओह्दे अपने कर्में दा गै फल ऐ। इस्सै करी माह्णू गी परमात्मा दे अस्तित्व ते कर्मफल सिद्धांत गी म्हेशां चेत्त रखना चाहिदा ऐ, जेकर एह्दे शा अक्खां फेरने दी कोशश करोग तां सिर्फ अपने–आपै गी धोखा दिंदा रोह्ग। इस करी माह्णू गी भामें रस्ते च किन्नियां बी तकलीफां, रुकावटां की नेईं औन पर उस्सी म्हेशां चंगा कर्म गै करना चाहिदा ऐ।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. डुग्गर की लोगाथाएं, शिव निर्मोही, सफा–76,77
2. डोगरी लोकगाथा, ओम गोस्वामी, सफा–45
3. मढ़ ब्लाक दे शहीद श्री सुरेन्द्र गडलगाल सफा–50,61
4. डोगरी लोकगाथा, ओम गोस्वामी, सफा–167
5. मढ़ ब्लाक दे शहीद श्री सुरेन्द्र गडलगाल सफा–,46
6. डोगरी लोकगाथा– इक विश्नलेश्नात्मक अध्ययन (शोध प्रबंध), नसीबसिंह मन्हास, सफा–355
7. डोगरी लोकगाथा– इक विश्नलेश्नात्मक अध्ययन (शोध प्रबंध), नसीबसिंह मन्हास, सफा–352
8. डोगरी लोकगाथा, ओम गोस्वामी, सफा–146,148
9. डोगरी लोकगाथा, ओम गोस्वामी, सफा–148,149
10. डोगरी लोकगाथा, ओम गोस्वामी, सफा–57

****

Social Change and Processes in India

Dr. Gouri Shanker Meena*

Abstract - Social change in India is a dynamic and intricate process shaped by a myriad of factors. From historical legacies like the caste system to contemporary dynamics of globalization and technological advancements, the nation experiences an ongoing evolution in its societal fabric. Challenges such as economic inequality, caste-based discrimination, and gender disparities coexist with opportunities driven by youth engagement, technological advancements, and civil society activism. Political processes, enshrined in a democratic framework, play a pivotal role in shaping policies that address societal issues. Education emerges as a key catalyst, empowering individuals to challenge norms and fostering inclusivity. Grassroots movements, global collaborations, and entrepreneurship contribute to the diverse landscape of social change. The journey is marked by complexities, but with a commitment to values of justice, equality, and sustainability, India is forging ahead. The interplay between challenges and opportunities creates a tapestry where the nation's rich diversity becomes a source of strength, propelling it toward a future that embraces positive social transformation.
Keywords: Historical Inequalities, Economic Disparities, Cultural Renaissance, Social Change, Youth Engagement.

Introduction - India, a land of myriad cultures, languages, and traditions, is at the crossroads of a profound societal transformation. The dynamics of social change in this vast nation are shaped by a complex interplay of historical legacies, contemporary challenges, and the aspirations of a diverse population. As the second-most populous country globally, India's journey towards a more equitable and inclusive society is both compelling and intricate.India's history is marked by a tapestry of civilizations, each leaving an indelible mark on its societal structure. The ancient caste system, with its rigid hierarchies, has had a lasting impact, influencing social relations and shaping the distribution of resources. Centuries of colonial rule further added layers of complexity, influencing educational systems, governance structures, and economic policies.

Despite significant strides in various domains, India grapples with pressing challenges. Economic inequality persists, creating disparities in access to opportunities. Caste-based discrimination, a historical artifact, lingers in social interactions and hinders the realization of true equality. Gender disparities, though under scrutiny, remain a focal point for transformative efforts. The youth, comprising a substantial demographic, emerge as key catalysts for social change. With increasing access to education and information, the younger generation is challenging traditional norms, advocating for environmental sustainability, and demanding inclusive policies. The digital era has empowered the youth to voice their concerns, shaping the narrative of societal progress.

Technological advancements are redefining the social landscape. The rapid penetration of digital platforms has amplified connectivity, providing a space for dialogue, activism, and information dissemination. From rural villages to urban hubs, technology acts as a bridge, reducing traditional barriers and fostering a sense of interconnectedness. India's democratic governance plays a pivotal role in steering social change. Political processes, elections, and policy formulations are mechanisms through which societal aspirations are translated into action. Affirmative action policies, reservation systems, and legislative reforms aim to address historical injustices and create a more inclusive society.

India's integration into the global economy brings both opportunities and challenges. While exposure to diverse ideas and cultures fosters openness, it also raises questions about preserving indigenous identities. Balancing global influences with the preservation of local traditions becomes a nuanced aspect of the ongoing social metamorphosis.Education emerges as a cornerstone for social change. Efforts to enhance literacy rates, promote skill development, and address gender-based disparities in education are instrumental in reshaping mindsets. Education not only imparts knowledge but serves as a catalyst for questioning societal norms and fostering critical thinking.

Historical Perspective of Social Change: India's historical narrative serves as a rich tapestry woven with threads of social change, each epoch leaving an indelible mark on

*Lecturer (Sociology) S. B. P. Govt. College, Dungarpur (Raj.) INDIA

the nation's societal fabric. Colonialism, a significant chapter, wrought profound transformations. British rule not only disrupted traditional socio-economic structures but also seeded the discontent that culminated in the struggle for independence. The post-independence era marked a quest for societal reconstruction. The framers of the Indian Constitution envisioned a democratic, egalitarian society, enshrining principles that sought to eradicate age-old inequalities based on caste, religion, and gender. However, historical injustices persisted, necessitating ongoing social movements for the assertion of rights and justice. Movements like the Bhakti and Sufi, advocating for religious tolerance, and the Dalit movement, challenging caste hierarchies, exemplify historical catalysts for social change. As we traverse through India's historical landscape, it becomes evident that the nation's journey towards social transformation is deeply rooted in the struggles, movements, and adaptations that have defined its past. Understanding these historical dynamics is fundamental to deciphering the contemporary contours of social change in India.

Cultural Diversity and Social Change: India, often celebrated as a mosaic of cultures, languages, and traditions, presents a unique backdrop for the interplay between cultural diversity and social change. The coexistence of numerous linguistic groups, religious practices, and regional customs contributes to a dynamic cultural landscape that continually shapes and is shaped by social processes. The linguistic diversity in India is exemplified by the multitude of languages spoken across its vast expanse. From Hindi in the north to Tamil in the south, each language is not just a means of communication but a repository of distinct cultural identities. Language, therefore, becomes a powerful medium through which cultural nuances are expressed, fostering a rich tapestry of literary, artistic, and intellectual traditions.Religious diversity adds another layer to India's cultural complexity. Hinduism, Islam, Christianity, Sikhism, Buddhism, and various indigenous faiths coexist, each with its set of rituals, beliefs, and practices. This diversity has historically shaped the socio-cultural landscape, influencing art, architecture, and societal norms. The interplay of festivals, rituals, and ceremonies provides a continuous rhythm to the societal heartbeat, reflecting the fusion of traditions and modernity. In the context of social change, cultural diversity acts as both a catalyst and a constraint. On one hand, it fosters a vibrant, pluralistic society, encouraging the exchange of ideas and practices. On the other hand, it can contribute to the perpetuation of traditional norms, hindering rapid shifts in societal attitudes. The challenge lies in striking a balance that preserves cultural heritage while allowing for progressive transformations. Moreover, the evolving nature of cultural diversity is closely intertwined with globalization and modernization. Exposure to external influences, through media, travel, and technology, has led to the blending of global and local cultures. This fusion is evident in contemporary art, music, and fashion, where traditional forms coalesce with modern expressions, creating a dynamic cultural landscape that mirrors the ongoing processes of social change.

Economic Transformations and Social Dynamics: India's journey through economic transformations has been a pivotal force shaping its social dynamics. From the agrarian societies of ancient times to the challenges posed by colonial exploitation, and the subsequent phases of industrialization and globalization, economic shifts have left an indelible mark on the nation's social fabric. The Green Revolution of the mid-20th century stands as a landmark in India's agricultural history, transforming traditional farming practices and significantly increasing food production. While this revolution led to improved livelihoods for many, it also brought about disparities in access to resources and modern agricultural practices, contributing to socio-economic inequalities.

The economic liberalization of the 1990s marked a significant turning point, opening India's doors to globalization and ushering in an era of rapid economic growth. The information technology boom that followed brought about urbanization and a shift towards a knowledge-based economy. This transformation not only altered economic structures but also had profound implications for social structures, particularly in urban areas.Urbanization, a direct consequence of economic changes, has led to the emergence of new social classes and a reconfiguration of traditional hierarchies. The migration from rural to urban areas has not only reshaped the demographic landscape but has also brought about changes in lifestyle, aspirations, and societal expectations. As people move away from agrarian lifestyles, social norms and values undergo a continuous process of adaptation.

Moreover, economic changes have influenced notions of social mobility. Education and employment opportunities in urban centers have become key drivers of upward mobility, challenging traditional caste and class structures. However, it is essential to address the barriers that hinder equal access to these opportunities, ensuring that economic transformations lead to widespread social progress.

Technological Advancements and Social Transformation: In the contemporary era, technological advancements stand as a driving force behind social transformation in India. The rapid integration of technology into various aspects of daily life has ushered in a new era, influencing communication, information dissemination, and societal attitudes. The advent of the internet, coupled with the widespread availability of smartphones, has revolutionized the way people connect and access information. The digital age has facilitated increased connectivity, breaking down geographical barriers and enabling real-time communication. Social media platforms, in particular, have emerged as powerful tools for expression, mobilization, and the dissemination of information.

Digitalization has not only transformed communication

but has also become a catalyst for social movements. Online platforms provide spaces for marginalized voices to be heard, fostering activism and advocacy for social change. Movements addressing issues such as gender equality, environmental sustainability, and social justice find resonance in the digital sphere, transcending traditional boundaries. However, the digital divide remains a challenge, with disparities in internet access and technological literacy persisting across different socio-economic groups and geographic regions. Bridging this gap is crucial to ensure that the benefits of technological advancements are inclusive and reach all segments of society.

The impact of technology on societal attitudes is evident in the way information is consumed and opinions are formed. The accessibility of diverse perspectives through online platforms has the potential to challenge traditional narratives and foster a more inclusive understanding of societal issues. Simultaneously, the rise of misinformation and digital echo chambers presents challenges, highlighting the need for digital literacy and critical thinking skills. In the realm of education, technology has transformed learning methodologies. E-learning platforms, online courses, and digital resources have expanded educational access, particularly in remote areas. However, ensuring equitable access to technology and addressing the digital divide in education remains a pressing concern.

Education and Social Change: Education plays a pivotal role in catalyzing social change in India, acting as both a reflection of societal values and a powerful force for transformation. The historical evolution of the education system, from ancient centers of learning to the contemporary formalized structure, mirrors the shifting priorities and aspirations of Indian society. The traditional Gurukul system, where students lived with their teachers to receive holistic education, shaped early educational practices in India. The advent of formalized education during the colonial era laid the foundation for a modern system, emphasizing English-language instruction and a curriculum tailored to colonial needs. Post-independence, the emphasis shifted towards a more inclusive and comprehensive education system, aligned with the principles of social justice and equity.

Education not only imparts knowledge but also shapes attitudes and values. The curriculum and teaching methods influence how societal norms are transmitted across generations. Efforts to integrate diverse perspectives into curricula, promoting inclusivity and cultural sensitivity, are essential for nurturing a more tolerant and understanding society. Furthermore, education has a profound impact on gender dynamics in India. Initiatives to promote girls' education have been instrumental in challenging traditional gender roles and empowering women. Education equips women with the skills and knowledge to participate more actively in economic, political, and social spheres, contributing to a more gender-equitable society.

The digital revolution has further transformed the educational landscape. E-learning platforms, online courses, and digital resources have expanded educational access, particularly in remote and underserved areas. However, the digital divide poses challenges, requiring concerted efforts to ensure that technology enhances rather than exacerbates existing educational disparities. As India grapples with the evolving role of education in social change, there is a need for reforms that address both quality and inclusivity. Equipping students with critical thinking skills, fostering creativity, and instilling values of empathy and social responsibility are integral components of an education system that actively contributes to positive societal transformation.

Gender Dynamics and Social Change: The evolution of gender dynamics in India is a dynamic and multifaceted aspect of social change, reflecting a complex interplay of cultural traditions, socio-economic shifts, and evolving aspirations. Traditionally characterized by patriarchal structures, India has witnessed transformative movements and legislative reforms that aim to redefine gender roles and foster greater gender equality. One of the pivotal movements contributing to this shift is the women's empowerment movement. Activism, both at the grassroots and national levels, has sought to address issues such as violence against women, unequal access to resources, and discriminatory practices. Organizations and campaigns advocating for women's rights have gained momentum, amplifying the voices of women across the country. Legislative reforms have played a crucial role in reshaping gender dynamics. Laws addressing dowry, domestic violence, and workplace harassment have been enacted to provide legal recourse for women facing discrimination and abuse. The representation of women in politics has also seen improvements, with increased participation in local governance and legislative bodies.

However, challenges persist, and the fight for gender equality continues. Deep-seated patriarchal attitudes, reinforced by cultural norms, still influence societal expectations. Issues like female infanticide, child marriage, and unequal opportunities in education and employment underscore the need for sustained efforts to challenge and change entrenched beliefs. Economic shifts have both influenced and been influenced by changing gender dynamics. The rise of the service sector, particularly in information technology, has created new opportunities for women in the workforce. However, occupational segregation and gender wage gaps persist, reflecting broader societal attitudes towards women's roles. Education emerges as a critical factor in challenging traditional gender norms. As more women receive education, their aspirations and roles within society undergo transformation. Education empowers women to challenge stereotypes, assert their rights, and participate actively in economic and political spheres. The media, too, plays a dual role in shaping and reflecting gender dynamics. While it can perpetuate stereotypes, it also serves as a powerful tool for raising

awareness and challenging ingrained prejudices. Positive portrayals of women in the media can contribute to changing societal perceptions and fostering a more inclusive narrative.

Political Processes and Social Change: The political landscape of India is both a reflection of and a catalyst for social change. The post-independence period witnessed the framing of a progressive constitution, establishing the foundations for a democratic and inclusive society. The political processes that have unfolded since then, including governance structures, political movements, and policy decisions, play a crucial role in shaping the nation's social dynamics. The Constitution of India, adopted in 1950, encapsulates principles of justice, liberty, and equality, laying the groundwork for an inclusive society. The reservation system, a unique feature of Indian politics, aims to address historical inequalities by providing representation to marginalized communities in legislative bodies and government jobs. This affirmative action has contributed to political empowerment and social mobility for historically disadvantaged groups.

Political movements have been instrumental in advocating for social change. The anti-caste movements, such as those led by Dr. B.R. Ambedkar, sought to challenge the deeply entrenched caste-based discrimination prevalent in society. Similarly, the environmental and anti-corruption movements of recent years highlight the role of political activism in addressing contemporary issues and influencing societal values. The role of governance in promoting or hindering social change cannot be overstated. Policies related to education, healthcare, employment, and social welfare shape the opportunities and experiences of citizens. Effective governance can act as a catalyst for positive social transformation by addressing inequalities and promoting inclusivity.

However, challenges persist within the political landscape. Caste-based politics, regional disparities, and issues of governance efficiency are factors that impact social change. The nexus between politics and socio-economic factors often influences policy decisions and resource allocations, shaping the trajectory of development and social progress. The political processes in India also reflect the diversity of opinions and ideologies. Pluralistic democracy allows for the representation of various voices and perspectives, contributing to a vibrant and dynamic political discourse. However, it also necessitates negotiation and compromise to address the diverse needs of the population.

Challenges and Opportunities for Social Change: As India traverses the path of social change, it encounters a myriad of challenges and opportunities that shape the trajectory of its development. Acknowledging and addressing these factors is essential for fostering inclusive and sustainable transformations across various dimensions of society.

Challenges:

1. Historical Inequalities: Deep-rooted historical inequalities, particularly along lines of caste, class, and gender, pose significant challenges. Overcoming centuries-old social hierarchies requires concerted efforts to dismantle discriminatory practices and promote inclusivity.

2. Economic Disparities: Despite economic growth, the gap between the rich and the poor remains pronounced. Income inequality and disparities in access to resources hinder the realization of a more equitable society, necessitating comprehensive economic reforms.

3. Cultural Resistance to Change: Cultural norms and traditions, while providing richness to the social fabric, can also act as impediments to rapid social change. Overcoming resistance to progressive ideas, especially in conservative pockets, is a persistent challenge.

4. Digital Divide: The rapid pace of technological advancement has led to a digital divide, with urban areas and privileged sections of society benefiting more than rural and marginalized communities. Bridging this gap is crucial to ensure that the benefits of technology reach all segments of society.

5. Educational Inequities: Despite strides in education, inequities persist in access to quality education. Rural-urban divides, gender-based disparities, and variations in educational infrastructure present challenges that hinder the transformative potential of education.

6. Gender-based Violence: Despite advancements, gender-based violence remains a pervasive issue. Addressing deeply ingrained patriarchal attitudes and ensuring the effective implementation of laws aimed at protecting women's rights are ongoing challenges.

Opportunities:

1. Youth Engagement: The youthful demographic in India presents a significant opportunity for driving social change. Engaging the youth in educational, political, and community initiatives can harness their energy for positive transformations.

2. Policy Reforms: Proactive policy reforms in areas such as education, healthcare, and social welfare can create an enabling environment for social change. Focused policies addressing historical injustices and contemporary challenges are essential.

3. Technology for Inclusion: Leveraging technology to bridge gaps and promote inclusivity offers immense potential. Digital platforms can be harnessed for education, awareness, and amplifying marginalized voices.

4. Civil Society Activism: Civil society activism and non-governmental organizations play a pivotal role in advocating for social change. Their efforts in addressing specific issues, mobilizing communities, and holding authorities accountable contribute significantly to progress.

5. International Collaboration: Collaborative efforts with international organizations and learning from global best practices provide opportunities for cross-cultural exchange and innovative solutions to shared challenges.

6. Cultural Renaissance: India's diverse cultural heritage

can be a source of strength in promoting social change. Celebrating cultural diversity, while fostering an inclusive national identity, can contribute to a more harmonious and tolerant society.

In navigating the complex landscape of challenges and opportunities, a holistic and multi-faceted approach is essential. By addressing historical injustices, promoting inclusive policies, leveraging technological advancements, and fostering a culture of positive change, India can navigate the complexities of social transformation, working towards a future characterized by equity, justice, and unity.

Conclusion: In conclusion, the journey of social change in India is a dynamic interplay of historical legacies, cultural nuances, economic shifts, technological advancements, educational endeavors, political processes, and societal aspirations. While the nation grapples with persistent challenges rooted in centuries-old inequalities, the opportunities for positive transformation are equally abundant. India's rich cultural diversity, often regarded as a double-edged sword, can be harnessed as a source of strength in fostering unity amid diversity. The youthful demographic, armed with education and connectivity, holds the potential to drive innovative solutions and progressive ideologies. Proactive policy reforms, supported by inclusive governance and civil society activism, offer pathways to address pressing issues.As India navigates this complex landscape, a holistic approach that integrates cultural sensitivity, economic justice, educational inclusivity, and technological innovation is imperative. By leveraging its strengths and addressing systemic challenges, India can chart a course towards a more equitable, tolerant, and vibrant society, embodying the principles of social change that resonate with the nation's diverse and dynamic identity.

References:-

1. Davis, Kingsley (1980), Human Society, The Macmillan India Ltd., Delhi.
2. Dube, S.C. 1974. Contemporary India and it'sModernisation. New Delhi: Vikas Publication.
3. Dube, S.C., 1996, Understanding Change: Anthropological and Sociological Perspectives, Vikas Publishing House, New Delhi
4. Gillin and Gillin (1950), Cultural Sociology, The Macmillan Company, New York.
5. Hasnain, Nadeem. 2006. Indian Society and Culture: Continuity and Change. New Delhi: Jawahar Publishers and Distributors.
6. Koening, S. (1981), Sociology: Man and Society, Balnes and Noble, New York
7. Panikkar, K. N. 1966. A Survey of Indian History. Bombay: Asia Publishing House.
8. Singh, Yogendra. 1996. Modernisation of Indian Tradition. Jaipur: Rawat Publication.
9. Smelser, Neil J. (1993), Sociology, Prentice Hall of India Private Ltd., New Delhi.

****

Semiconductor Devices & their Importance

Ashok Kumar Verma*

Abstract - A semiconductor device is an electronic component that relies on the electronic properties of a semiconductor material (primarily silicon, germanium, and gallium arsenide, as well as organic semiconductors) for its function. Its conductivity lies between conductors and insulators. Semiconductor devices have replaced vacuum tubes in most applications. They conduct electric current in the solid state, rather than as free electrons across a vacuum (typically liberated by thermionic emission) or as free electrons and ions through an ionized gas.
Keywords-semiconductor, devices, electronic, importance, conductivity, vacuum, gas.

Introduction -Semiconductor devices are manufactured both as single discrete devices and as integrated circuit (IC) chips, which consist of two or more devices—which can number from the hundreds to the billions—manufactured and interconnected on a single semiconductor wafer (also called a substrate).

Semiconductor materials are useful because their behavior can be easily manipulated by the deliberate addition of impurities, known as doping.

Semiconductor conductivity can be controlled by the introduction of an electric or magnetic field, by exposure to light or heat, or by the mechanical deformation of a doped monocrystalline silicon grid; thus, semiconductors can make excellent sensors. Current conduction in a semiconductor occurs due to mobile or "free" electrons and electron holes, collectively known as charge carriers. Doping a semiconductor with a small proportion of an atomic impurity, such as phosphorus or boron, greatly increases the number of free electrons or holes within the semiconductor. When a doped semiconductor contains excess holes, it is called a p-type semiconductor (p for positive electric charge); when it contains excess free electrons, it is called an n-type semiconductor (n for a negative electric charge). A majority of mobile charge carriers have negative charges. The manufacture of semiconductors controls precisely the location and concentration of p- and n-type dopants. The connection of n-type and p-type semiconductors form p–n junctions.

The most common semiconductor device in the world is the MOSFET (metal–oxide–semiconductor field-effect transistor),[1] also called the MOS transistor. As of 2013, billions of MOS transistors are manufactured every day.[2] Semiconductor devices made per year have been growing by 9.1% on average since 1978, and shipments in 2015 are predicted for the first time to exceed 1 trillion,[3] meaning that well over 7 trillion have been made to date.

Diode: A semiconductor diode is a device typically made from a single p–n junction. At the junction of a p-type and an n-type semiconductor, there forms a depletion region where current conduction is inhibited by the lack of mobile charge carriers. When the device is forward biased (connected with the p-side, having a higher electric potential than the n-side), this depletion region is diminished, allowing for significant conduction. Contrariwise, only a very small current can be achieved when the diode is reverse biased (connected with the n-side at lower electric potential than the p-side, and thus the depletion region expanded).

Exposing a semiconductor to light can generate electron–hole pairs, which increases the number of free carriers and thereby the conductivity. Diodes optimized to take advantage of this phenomenon are known as photodiodes. Compound semiconductor diodes can also produce light, as in light-emitting diodes and laser diode

Transistor

Bipolar junction transistor: Bipolar junction transistors (BJTs) are formed from two p–n junctions, in either n–p–n or p–n–p configuration. The middle, or base, the region between the junctions is typically very narrow. The other regions, and their associated terminals, are known as the emitter and the collector. A small current injected through the junction between the base and the emitter changes the properties of the base-collector junction so that it can conduct current even though it is reverse biased. This creates a much larger current between the collector and emitter, controlled by the base-emitter current.

Field-effect transistor: Another type of transistor, the field-effect transistor (FET), operates on the principle that semiconductor conductivity can be increased or decreased by the presence of an electric field. An electric field can increase the number of free electrons and holes in a semiconductor, thereby changing its conductivity. The field may be applied by a reverse-biased p–n junction, forming

* Lecturer (Physics) Govt. College, Dholpur (Raj.) INDIA

a junction field-effect transistor (JFET) or by an electrode insulated from the bulk material by an oxide layer, forming a metal–oxide–semiconductor field-effect transistor (MOSFET).

Metal-oxide-semiconductor: The metal-oxide-semiconductor FET (MOSFET, or MOS transistor), a solid-state device, is by far the most used widely semiconductor device today. It accounts for at least 99.9% of all transistors, and there have been an estimated 13 sextillion MOSFETs manufactured between 1960 and 2015.[4]

The gate electrode is charged to produce an electric field that controls the conductivity of a "channel" between two terminals, called the source and drain. Depending on the type of carrier in the channel, the device may be an n-channel (for electrons) or a p-channel (for holes) MOSFET. Although the MOSFET is named in part for its "metal" gate, in modern devices polysilicon is typically used instead.

Semiconductor device materials: By far, silicon (Si) is the most widely used material in semiconductor devices. Its combination of low raw material cost, relatively simple processing, and a useful temperature range makes it currently the best compromise among the various competing materials. Silicon used in semiconductor device manufacturing is currently fabricated into boules that are large enough in diameter to allow the production of 300 mm (12 in.) wafers.

Germanium (Ge) was a widely used early semiconductor material but its thermal sensitivity makes it less useful than silicon. Today, germanium is often alloyed with silicon for use in very-high-speed SiGe devices; IBM is a major producer of such devices.

Gallium arsenide (GaAs) is also widely used in high-speed devices but so far, it has been difficult to form large-diameter boules of this material, limiting the wafer diameter to sizes significantly smaller than silicon wafers thus making mass production of GaAs devices significantly more expensive than silicon.

Gallium Nitride (GaN) is gaining popularity in high-power applications including power ICs, light-emitting diodes (LEDs), and RF components due to its high strength and thermal conductivity. Compared to silicon, GaN's band gap is more than 3 times wider at 3.4 eV and it conducts electrons 1,000 times more efficiently.[5][6]

Other less common materials are also in use or under investigation.

Silicon carbide (SiC) is also gaining popularity in power ICs and has found some application as the raw material for blue LEDs and is being investigated for use in semiconductor devices that could withstand very high operating temperatures and environments with the presence of significant levels of ionizing radiation. IMPATT diodes have also been fabricated from SiC.

Various indium compounds (indium arsenide, indium antimonide, and indium phosphide) are also being used in LEDs and solid-state laser diodes. Selenium sulfide is being studied in the manufacture of photovoltaic solar cells.The most common use for organic semiconductors is organic light-emitting diodes.

Discussion

Semiconductor device applications: All transistor types can be used as the building blocks of logic gates, which are fundamental in the design of digital circuits. In digital circuits like microprocessors, transistors act as on-off switches; in the MOSFET, for instance, the voltage applied to the gate determines whether the switch is on or off.Transistors used for analog circuits do not act as on-off switches; rather, they respond to a continuous range of inputs with a continuous range of outputs. Common analog circuits include amplifiers and oscillators.Circuits that interface or translate between digital circuits and analog circuits are known as mixed-signal circuits.

Power semiconductor devices are discrete devices or integrated circuits intended for high current or high voltage applications. Power integrated circuits combine IC technology with power semiconductor technology, these are sometimes referred to as "smart" power devices. Several companies specialize in manufacturing power semiconductors.

Component identifiers: The part numbers of semiconductor devices are often manufacturer specific. Nevertheless, there have been attempts at creating standards for type codes, and a subset of devices follow those. For discrete devices, for example, there are three standards: JEDEC JESD370B in the United States, Pro Electron in Europe, and Japanese Industrial Standards (JIS).

History of semiconductor device development

Cat's-whisker detector: Semiconductors had been used in the electronics field for some time before the invention of the transistor. Around the turn of the 20th century they were quite common as detectors in radios, used in a device called a "cat's whisker" developed by Jagadish Chandra Bose and others. These detectors were somewhat troublesome, however, requiring the operator to move a small tungsten filament (the whisker) around the surface of a galena (lead sulfide) or carborundum (silicon carbide) crystal until it suddenly started working.[7] Then, over a period of a few hours or days, the cat's whisker would slowly stop working and the process would have to be repeated. At the time their operation was completely mysterious. After the introduction of the more reliable and amplified vacuum tube based radios, the cat's whisker systems quickly disappeared. The "cat's whisker" is a primitive example of a special type of diode still popular today, called a Schottky diode.

Metal rectifier: Another early type of semiconductor device is the metal rectifier in which the semiconductor is copper oxide or selenium. Westinghouse Electric (1886) was a major manufacturer of these rectifiers.

During World War II, radar research quickly pushed radar receivers to operate at ever higher frequencies and the traditional tube-based radio receivers no longer worked

well. The introduction of the cavity magnetron from Britain to the United States in 1940 during the Tizard Mission resulted in a pressing need for a practical high-frequency amplifier.On a whim, Russell Ohl of Bell Laboratories decided to try a cat's whisker. By this point, they had not been in use for a number of years, and no one at the labs had one. After hunting one down at a used radio store in Manhattan, he found that it worked much better than tube-based systems.

Ohl investigated why the cat's whisker functioned so well. He spent most of 1939 trying to grow more pure versions of the crystals. He soon found that with higher-quality crystals their finicky behavior went away, but so did their ability to operate as a radio detector. One day he found one of his purest crystals nevertheless worked well, and it had a clearly visible crack near the middle. However, as he moved about the room trying to test it, the detector would mysteriously work, and then stop again. After some study he found that the behavior was controlled by the light in the room – more light caused more conductance in the crystal. He invited several other people to see this crystal, and Walter Brattain immediately realized there was some sort of junction at the crack.

Further research cleared up the remaining mystery. The crystal had cracked because either side contained very slightly different amounts of the impurities Ohl could not remove – about 0.2%. One side of the crystal had impurities that added extra electrons (the carriers of electric current) and made it a "conductor". The other had impurities that wanted to bind to these electrons, making it (what he called) an "insulator". Because the two parts of the crystal were in contact with each other, the electrons could be pushed out of the conductive side which had extra electrons (soon to be known as the emitter), and replaced by new ones being provided (from a battery, for instance) where they would flow into the insulating portion and be collected by the whisker filament (named the collector). However, when the voltage was reversed the electrons being pushed into the collector would quickly fill up the "holes" (the electron-needy impurities), and conduction would stop almost instantly. This junction of the two crystals (or parts of one crystal) created a solid-state diode, and the concept soon became known as semiconduction. The mechanism of action when the diode off has to do with the separation of charge carriers around the junction. This is called a "depletion region".

Development of the diode: Armed with the knowledge of how these new diodes worked, a vigorous effort began to learn how to build them on demand. Teams at Purdue University, Bell Labs, MIT, and the University of Chicago all joined forces to build better crystals. Within a year germanium production had been perfected to the point where military-grade diodes were being used in most radar sets.

Development of the transistor: After the war, William Shockley decided to attempt the building of a triode-like semiconductor device. He secured funding and lab space, and went to work on the problem with Brattain and John Bardeen.The key to the development of the transistor was the further understanding of the process of the electron mobility in a semiconductor. It was realized that if there were some way to control the flow of the electrons from the emitter to the collector of this newly discovered diode, an amplifier could be built. For instance, if contacts are placed on both sides of a single type of crystal, current will not flow between them through the crystal. However, if a third contact could then "inject" electrons or holes into the material, the current would flow.

Actually doing this appeared to be very difficult. If the crystal were of any reasonable size, the number of electrons (or holes) required to be injected would have to be very large, making it less than useful as an amplifier because it would require a large injection current to start with. That said, the whole idea of the crystal diode was that the crystal itself could provide the electrons over a very small distance, the depletion region. The key appeared to be to place the input and output contacts very close together on the surface of the crystal on either side of this region.

Brattain started working on building such a device, and tantalizing hints of amplification continued to appear as the team worked on the problem. Sometimes the system would work but then stop working unexpectedly. In one instance a non-working system started working when placed in water. Ohl and Brattain eventually developed a new branch of quantum mechanics, which became known as surface physics, to account for the behavior. The electrons in any one piece of the crystal would migrate about due to nearby charges. Electrons in the emitters, or the "holes" in the collectors, would cluster at the surface of the crystal where they could find their opposite charge "floating around" in the air (or water). Yet they could be pushed away from the surface with the application of a small amount of charge from any other location on the crystal. Instead of needing a large supply of injected electrons, a very small number in the right place on the crystal would accomplish the same thing.

Their understanding solved the problem of needing a very small control area to some degree. Instead of needing two separate semiconductors connected by a common, but tiny, region, a single larger surface would serve. The electron-emitting and collecting leads would both be placed very close together on the top, with the control lead placed on the base of the crystal. When current flowed through this "base" lead, the electrons or holes would be pushed out, across the block of the semiconductor, and collect on the far surface. As long as the emitter and collector were very close together, this should allow enough electrons or holes between them to allow conduction to start.

First transistor: The Bell team made many attempts to build such a system with various tools but generally failed. Setups, where the contacts were close enough, were invariably as fragile as the original cat's whisker detectors

had been, and would work briefly, if at all. Eventually, they had a practical breakthrough. A piece of gold foil was glued to the edge of a plastic wedge, and then the foil was sliced with a razor at the tip of the triangle. The result was two very closely spaced contacts of gold. When the wedge was pushed down onto the surface of a crystal and voltage was applied to the other side (on the base of the crystal), current started to flow from one contact to the other as the base voltage pushed the electrons away from the base towards the other side near the contacts. The point-contact transistor had been invented.

While the device was constructed a week earlier, Brattain's notes describe the first demonstration to higher-ups at Bell Labs on the afternoon of 23 December 1947, often given as the birthdate of the transistor. What is now known as the "p–n–p point-contact germanium transistor" operated as a speech amplifier with a power gain of 18 in that trial. John Bardeen, Walter Houser Brattain, and William Bradford Shockley were awarded the 1956 Nobel Prize in physics for their work.

Etymology of "transistor": Bell Telephone Laboratories needed a generic name for their new invention: "Semiconductor Triode", "Solid Triode", "Surface States Triode" [sic], "Crystal Triode" and "Iotatron" were all considered, but "transistor", coined by John R. Pierce, won an internal ballot. The rationale for the name is described in the following extract from the company's Technical Memoranda (May 28, 1948) calling for votes:

Improvements in transistor design: Shockley was upset about the device being credited to Brattain and Bardeen, who he felt had built it "behind his back" to take the glory. Matters became worse when Bell Labs lawyers found that some of Shockley's own writings on the transistor were close enough to those of an earlier 1925 patent by Julius Edgar Lilienfeld that they thought it best that his name be left off the patent application.

Shockley was incensed, and decided to demonstrate who was the real brains of the operation. A few months later he invented an entirely new, considerably more robust, bipolar junction transistor type of transistor with a layer or 'sandwich' structure, used for the vast majority of all transistors into the 1960s.

With the fragility problems solved, the remaining problem was purity. Making germanium of the required purity was proving to be a serious problem and limited the yield of transistors that actually worked from a given batch of material. Germanium's sensitivity to temperature also limited its usefulness. Scientists theorized that silicon would be easier to fabricate, but few investigated this possibility. Former Bell Labs scientist Gordon K. Teal was the first to develop a working silicon transistor at the nascent Texas Instruments, giving it a technological edge. From the late 1950s, most transistors were silicon-based. Within a few years transistor-based products, most notably easily portable radios, were appearing on the market. "Zone melting", a technique using a band of molten material moving through the crystal, further increased crystal purity.

Metal-oxide semiconductor: In the 1950s, Mohamed Atalla investigated the surface properties of silicon semiconductors at Bell Labs, where he proposed a new method of semiconductor device fabrication, coating a silicon wafer with an insulating layer of silicon oxide so that electricity could reliably penetrate to the conducting silicon below, overcoming the surface states that prevented electricity from reaching the semiconducting layer. This is known as surface passivation, a method that became critical to the semiconductor industry as it made possible the mass production of silicon integrated circuits (ICs). Building on his surface passivation method, he developed the metal oxide semiconductor (MOS) process, which he proposed could be used to build the first working silicon field-effect transistor (FET).[8][9] The led to the invention of the MOSFET (MOS field-effect transistor) by Mohamed Atalla and DawonKahng in 1959.[10][11] With its scalability,[12] and much lower power consumption and higher density than bipolar junction transistors,[13] the MOSFET became the most common type of transistor in computers, electronics,[9] and communications technology such as smartphones.[14] The US Patent and Trademark Office calls the MOSFET a "groundbreaking invention that transformed life and culture around the world".[14]

CMOS (complementary MOS) was invented by Chih-Tang Sah and Frank Wanlass at Fairchild Semiconductor in 1963.[15] The first report of a floating-gate MOSFET was made by DawonKahng and Simon Sze in 1967.[16] FinFET (fin field-effect transistor), a type of 3D multi-gate MOSFET, was developed by DighHisamoto and his team of researchers at Hitachi Central Research Laboratory in 1989.[17][18]

Results: Reliability of a semiconductor device is the ability of the device to perform its intended function during the life of the device in the field.There are multiple considerations that need to be accounted for when developing reliable semiconductor devices:

1. Semiconductor devices are very sensitive to impurities and particles. Therefore, to manufacture these devices it is necessary to manage many processes while accurately controlling the level of impurities and particles. The finished product quality depends upon the many layered relationship of each interacting substance in the semiconductor, including metallization, chip material (list of semiconductor materials) and package.
2. The problems of micro-processes, and thin films and must be fully understood as they apply to metallization and wire bonding. It is also necessary to analyze surface phenomena from the aspect of thin films.
3. Due to the rapid advances in technology, many new devices are developed using new materials and processes, and design calendar time is limited due to non-recurring engineering constraints, plus time to market concerns. Consequently, it is not possible to base new designs on the reliability of existing devices.

4. To achieve economy of scale, semiconductor products are manufactured in high volume. Furthermore, repair of finished semiconductor products is impractical. Therefore, incorporation of reliability at the design stage and reduction of variation in the production stage have become essential.
5. Reliability of semiconductor devices may depend on assembly, use, environmental, and cooling conditions. Stress factors affecting device reliability include gas, dust, contamination, voltage, current density, temperature, humidity, mechanical stress, vibration, shock, radiation, pressure, and intensity of magnetic and electrical fields.

Design factors affecting semiconductor reliability include: voltage, power, and current derating; metastability; logic timing margins (logic simulation); timing analysis; temperature derating; and process control.

Methods of improvement: Reliability of semiconductors is kept high through several methods. Cleanrooms control impurities, process control controls processing, and burn-in (short term operation at extremes) and probe and test reduce escapes. Probe (wafer prober) tests the semiconductor die, prior to packaging, via micro-probes connected to test equipment. Final test tests the packaged device, often pre-, and post burn-in for a set of parameters that assure operation. Process and design weaknesses are identified by applying a set of stress tests in the qualification phase of the semiconductors before their market introduction e. g. according to the AEC Q100 and Q101 stress qualifications.[1] Parts Average Testing is a statistical method for recognizing and quarantining semiconductor die that have a higher probability of reliability failures. This technique identifies characteristics that are within specification but outside of a normal distribution for that population as at-risk outliers not suitable for high reliability applications. Tester-based Parts Average Testing varieties include Parametric Parts Average Testing (P-PAT) and Geographical Parts Average Testing (G-PAT), among others. Inline Parts Average Testing (I-PAT) uses data from production process control inspection and metrology to perform the outlier recognition function.[2][3]

Bond strength measurement is performed in two basic types: pull testing and shear testing. Both can be done destructively, which is more common, or non destructively. Non destructive tests are normally used when extreme reliability is required such as in military or aerospace applications.[4]

Failure mechanisms:

Failure mechanisms of electronic semiconductor devices fall in the following categories

1. Material-interaction-induced mechanisms.
2. Stress-induced mechanisms.
3. Mechanically induced failure mechanisms.
4. Environmentally induced failure mechanisms.

Material-interaction-induced mechanisms

1. Field-effect transistor gate-metal sinking
2. Ohmic contact degradation
3. Channel degradation
4. Surface-state effects
5. Package molding contamination—impurities in packaging compounds cause electrical failure

Stress-induced failure mechanisms

Electromigration – electrically induced movement of the materials in the chip

1. Burnout – localized overstress
2. Hot Electron Trapping – due to overdrive in power RF circuits
3. Electrical Stress – Electrostatic discharge, High Electro-Magnetic Fields (HIRF), Latch-up overvoltage, overcurrent

Mechanically induced failure mechanisms

1. Die fracture – due to mis-match of thermal expansion coefficients
2. Die-attach voids – manufacturing defect—screenable with Scanning Acoustic Microscopy.
3. Solder joint failure by creep fatigue or intermetallics cracks.
4. Die-pad/molding compound delamination due to thermal cycling

Environmentally induced failure mechanisms

1. Humidity effects – moisture absorption by the package and circuit
2. Hydrogen effects – Hydrogen induced breakdown of portions of the circuit (Metal)
3. Other Temperature Effects—Accelerated Aging, Increased Electro-migration with temperature, Increased Burn-Out

Conclusion: Semiconductor device fabrication is the process used to manufacture semiconductor devices, typically integrated circuits (ICs) such as computer processors, microcontrollers, and memory chips (such as NAND flash and DRAM) that are present in everyday electronic devices. It is a multiple-step photo-lithographic and physio-chemical process (with steps such as thermal oxidation, thin-film deposition, ion-implantation, etching) during which electronic circuits are gradually created on a wafer, typically made of pure single-crystal semiconducting material. Silicon is almost always used, but various compound semiconductors are used for specialized applications.

The fabrication process is performed in highly specialized semiconductor fabrication plants, also called foundries or “fabs”,[1] with the central part being the “clean room”. In more advanced semiconductor devices, such as modern 14/10/7 nm nodes, fabrication can take up to 15 weeks, with 11–13 weeks being the industry average.[2] Production in advanced fabrication facilities is completely automated, with automated material handling systems taking care of the transport of wafers from machine to machine.[3]

A wafer often has several integrated circuits which are called dies as they are pieces diced from a single wafer. Individual dies are separated from a finished wafer in a process called die singulation, also called wafer dicing. The

dies can then undergo further assembly and packaging.[4] Within fabrication plants, the wafers are transported inside special sealed plastic boxes called FOUPs.[3] FOUPs in many fabs contain an internal nitrogen atmosphere[5][6] which helps prevent copper from oxidizing on the wafers. Copper is used in modern semiconductors for wiring.[7] The insides of the processing equipment and FOUPs is kept cleaner than the surrounding air in the cleanroom. This internal atmosphere is known as a mini-environment and helps improve yield which is the amount of working devices on a wafer. This mini environment is within an EFEM (equipment front end module)[8] which allows a machine to receive FOUPs, and introduces wafers from the FOUPs into the machine. Additionally many machines also handle wafers in clean nitrogen or vacuum environments to reduce contamination and improve process control.[3] Fabrication plants need large amounts of liquid nitrogen to maintain the atmosphere inside production machinery and FOUPs, which are constantly purged with nitrogen.[5][6] There can also be an air curtain between the FOUP and the EFEM which helps reduce the amount of humidity that enters the FOUP and improves yield.[9][10]Companies that manufacture machines used in the industrial semiconductor fabrication process include ASML, Applied Materials, and Lam Research.

References:-

1. Golio, Mike; Golio, Janet (2015). RF and Microwave Passive and Active Technologies. CRC Press. p. 18-2. ISBN 9781420006728.
2. "Who Invented the Transistor?". Computer History Museum. 4 December 2013. Retrieved 20 July 2014.
3. "Semiconductor Shipments Forecast to Exceed 1 Trillion Devices in 2015". www.icinsights.com. Retrieved 2015-04-16. Annual semiconductor unit shipments (integrated circuits and Opto-sensor-discrete, or O-S-D, devices) are expected to grow 9% For 2015, semiconductor unit shipments are forecast to climb to 1,075.1 billion, which equates to 9% growth for the year. Starting in 1978 with 32.6 billion units and going through 2015, the compound annual growth rate for semiconductor units is forecast to be 9.1%, a solid growth figure over the 40-year span. [..] In 2015, O-S-D devices are forecast to account for 70% of total semiconductor units compared to 30% for ICs.
4. "13 Sextillion & Counting: The Long & Winding Road to the Most Frequently Manufactured Human Artifact in History". Computer History Museum. April 2, 2015. Retrieved 28 July 2014.
5. "Gallium nitride semiconductors: The Next Generation of Power | Navitas". Retrieved 2013-05-02.
6. "What is GaN? Gallium Nitride (GaN) Semiconductors Explained". Efficient Power Conversion. Retrieved May 2, 2013.
7. Ernest Braun & Stuart MacDonald (1982). Revolution in Miniature: The History and Impact of Semiconductor Electronics. Cambridge University Press. pp. 11–13. ISBN 978-0-521-28903-0.
8. "Martin Atalla in Inventors Hall of Fame, 2009". Retrieved 21 June 2013.
9. "DawonKahng". National Inventors Hall of Fame. Retrieved 27 June 2014.
10. "1960 - Metal Oxide Semiconductor (MOS) Transistor Demonstrated". The Silicon Engine. Computer History Museum.
11. Lojek, Bo (2007). History of Semiconductor Engineering. Springer Science & Business Media. pp. 321-3. ISBN 9783540342588.
12. Motoyoshi, M. (2009). "Through-Silicon Via (TSV)" (PDF). Proceedings of the IEEE. 97 (1): 43–48. doi:10.1109/JPROC.2008.2007462. ISSN 0018-9219. S2CID 29105721. Archived from the original (PDF) on 2014-07-19.
13. "Transistors Keep Moore's Law Alive". EETimes. 12 December 2015. Retrieved 18 July 2014.
14. "Remarks by Director Iancu at the 2014 International Intellectual Property Conference". United States Patent and Trademark Office. June 10, 2014. Retrieved 20 July 2014.
15. "1963: Complementary MOS Circuit Configuration is Invented". Computer History Museum. Retrieved 6 July 2014.
16. D. Kahng and S. M. Sze, "A floating gate and its application to memory devices", The Bell System Technical Journal, vol. 46, no. 4, 1967, pp. 1288–1295
17. "IEEE Andrew S. Grove Award Recipients". IEEE Andrew S. Grove Award. Institute of Electrical and Electronics Engineers. Retrieved 4 July 2014.
18. "The Breakthrough Advantage for FPGAs with Tri-Gate Technology" (PDF). Intel. 2014. Archived (PDF) from the original on 2013-10-09. Retrieved 4 July 2014.

****

Employee Turnover: Reasons, Impacts and Retaining Approaches in the Indian Organizations

Dr. Monika Jain* Juned Nagori**

Abstract - Employee turnover always a challenge in industries and also one of the biggest challenges to the Personal Managers in the Companies either service or manufacturing Industry and the organisation's employers in any fast-rising economies including the India. Most of the companies in the India are not aware of why their workforces leave their organizations and what is the reason for their long sustenance in organizations. Frequent labour turnover can create serious operating and producibility issue in any organization for their overall productivity. It impacts badly departmental performance, team work and organizational working dynamics. High attrition in any organization impacts as cost burden. However, to sustaining their productive work force or best performers in the organizations either lower staff or managers organizations should focus on proper retaining their best employees. Creating employee friendly policy, proper reward and recognition schemes, work environment clear set of expectations about rewardsand efficiency standards and then commitment and effectiveness of output. It is well known fact Employee attrition is serious issue in not only Delhi NCR region but in India also. Still there are very less researches from the researchers to analyse cause and impact on employee and organizations. Thisresearch paper evaluates & scrutinizes the grounds of worker turnover, consequences and also suggests some approaches on how to decreaseworker turnover within India business context.

Introduction - It impacts badly departmental performance, team work and organizational working dynamics. High attrition in any organization impacts as cost burden. However, to sustaining their productive work force or best performers in the organizations either lower staff or managers organizations should focus on proper retaining their best employees.

If an organization has made significant investment in training and developing its employees, that investment is lost when employee leaves (Mello, 2011).

In adding to extreme or high employee fluctuation or turnovermay cause of serious decline in growth and productivity of an organization even generates other complexities.

In addition to that all organization struggles to have good productivity level, minor turnovers of employees and all-outcost-effectiveness. Managing turnover successfully is a must to achieve the above goals.

Abassi and Hollman (2000) stressed that the managers must recognize that employees as major contributor to the efficient achievement of the organization's success. Besides, extremelyinspired and performing charactersor employees are the much essential factors of the organizational productivity. Consequently, there is need to be analysed the gap and develop a go through strategy to manage the high employee turnover under control or reduced attrition as much as possible for better and improved productivity. The succeedingsegment discusses some of the definitions of employee turnover.

The Characterization Of Operative Staffturnover Or Employee Turnover: Employee turnover in Organizations has been defined as ''the ratio of the number of organizational members who have left during the period being considered divided by the average number of people in that organization during the period'' (Price, 1977) and it is often detrimental to the effective functioning of an organization.

On the other side, Adams and Beehr (1998) provided a definition of organizational turnover "turnover involves 'leaving any job of any duration' (Feldman, 1994) and is usually thought of as being followed by continued regular employment''.

Likewise, Line supervisorsanalyse and evaluate the employee turnover as the wholeprocedureaccompanying with fulfilling a job vacancy. Every occasion whenever job position is evacuated, either willingly or unwillingly, a new skilled member must be employed and trained. This replacement cycle is known as turnover (Woods, 1995). This term, employee turnover, is also often utilized in efforts to measuring relations of employees in an organization as they leave, regardless of reason (Gustafson, 2002).

Types Of Turnover : In addition Heneman and Judge

* Associate Professor, SRIITM Collage, Gwalior (M.P.) INDIA
** Assistant Professor, SGSIM Collage, Ujjain (M.P.) INDIA

(2009) have described four types of employee turnover under two categories. It can be seen that turnover is either voluntary being initiated by the employee, or involuntary, being initiated by the organization.

Involuntary Turnover : Involuntary turnover is split into discharge and downsizing types.

Discharge Turnover: Discharge turnover is aimed at the individual employee, due to discipline and/or job performance problems.

Downsizing Turnover: It occurs as part of an organizational restructuring or cost-reduction program to improve organizational effectiveness and increase shareholder value.

Voluntary Turnover : Voluntary turnover, in turn, is broken down into avoidable and unavoidable turnover.

Avoidable turnover: Avoidable turnover is that which potentially could have been prevented by certain organizational actions, such as pay raise or new job assignment.

Unavoidable turnover: A turnover that happens in unavoidable circumstances is called as unavoidable turnover. For instance, Employee's death or spouse's relocation

Therefore, there are few important factors needs to be under consideration and those are in fact out of management control, such as the incapacity of aassociate of staff. Similarly Further factors have been characterized involuntary turnover in the past as the need to provide care for children or looking after aged relatives. Today such factors should not be seen as involuntary turnover as both government regulations and company policies create the opportunities for such staff to come back to work, or to continue to work on a more flexible basis (Ongori, 2007).

Diagram of Reasons for Employee Attrition

Objectives:

1. To study the concept of Employee Turnover.
2. To find out the factors responsible for potential turnover.
3. To focus on various retention strategies management can adopt to preserve valuable employees.
4. To study the influence of job satisfaction on employees' & their intention to stay in the organization.

Employee Turnover In The Delhi NCR Based Organizations : In Delhi NCR Gurgaon Manesar is major hub of automobile sector of India and also some ancillary automobile unites in Delhi area, Delhi NCR is a major area of manufacturing units of automobile industry and Information Technology based services and exporting its services in various countries of worked like USA, UK, Australia etc. The Indian government acting a major role in the country's economic growth and development, but its part will be inadequate after joining the World Trade Organization. As become global market hub India after entry of multiple industries from various countries even trading organizations, it become a very big challenge to Indian Industries to keep sustaining in market in front of very much competitive price and quality challenges from global supplier. Even approval for FDI (Foreign Direct investment) also plays a crucial role as challenge to cope with latest technology, advancement of products on reasonable rates. Moreover, India is hardly trying to restructuring its economy to cope up with new trends and challenges in the global marketplace. Organizations those having skilled employees, competent & competitive workforce it helps to organizations to compete globally aim to gain a large market share, but it depends on less worker turnover and their more devotion, on job also which is accompanying with hard work, productivity, and high quality (Al-Kahtani, 2002).

In Indian industry various organizations, it is getting necessary to track regularly eye on manpower turnover for both Public and Private sectors. In Government / PSUs or Public divisions, even though some additional fringe benefits are given to the employees regularly do not satisfy them sufficiently. In comparison of Public or government sector in private sectors, though remuneration and additional benefits are more but job security is less. Company growth in private sectors also depends on various outside factors like economy growth, cost of raw material, cost of transportation, relation with importer or facilitator country responsible for importing raw material, Dollar price verses countrycurrency rates, any recession due to natural calamity or pandemic like covid 19 now days.

Due to these reasons turnover rate in private sectors is higher than public sectors. Some researchers explored Indian Industries, but still adequate research and analysis need to be done in future to get clearer picture how many ways employee turnover impacts to organization's growth and how. Turnover rate also differsin service industry to Manufacturing industry. Literature on the employee turnover in Indian organization is limited so far. The Companies it's owners and business line managers do not pay attention on this critical issue. They are not properly aware about how adversely or negatively the effect of turnover impacts productivity of their establishments. In recent years, various scholars are conducting study on turnover and it's impact on organization productivity.

The significance of this research is:

1. To research and examine the grounds of the turnover
2. To identify and analyse the significances of employee turnover on organizational productivity

3. To find out the probableresolutions of dropping turnover.

The Employee Motivation Study was conducted by bayt.com to understand how the current economic climate in the Middle East is impacting the satisfaction levels of Middle East employees and to identify the drivers that motivate professionals to stay longer in an organization as well as the factors that make them want to refer their work place to others. Online data collection was done between the 3-17th August 2009 and the total number of respondents achieved was 13,376 (Anonymous, 2009). According to survey 11% of respondents were planning to leave their current job, another 30% were in the process of actively looking for other jobs and 29% were willing to leave their current job. This survey on Kingdom of Saudi Arabian (KSA) market indicates overall unrest in the market as far as employees are concerned (Anonymous, 2009b). This is such an alarming situation for the employers and policy makers in the Kingdom.

Causes Of Employee Turnover

Personal Factors and Employee Attitude : Of the possible predictor of employee turnover intention, work related attitudes of employee have received the most attention by researcher (Bhuian and Al-Jabri, 1996). The one work related attitudes receiving the greatest research attention as a predictor of employee turnover tendency is job satisfaction (Johnson, Parasuraman, Futrell and Black, 1990). Researchers, such as Smith (1996), have generally found that the more satisfied the employees are the more committed they will be to their organizations, and the more they will be productive and effective in their organizations, whereas dissatisfied ones experience more turnover intentions and increase absenteeism.

A more recent report shows that one fourth of Saudi employees in the private sector do not regularly show up, causing a high turnover rate (Al-KibisBenkert, and Schubert, 2007). At the same time there is a major task at hand to change traditional mindset toward manual labor, which is deeply reviled (Rice, 2004). “Most of Saudis subscribe to the *Mudir* (manager) syndrome, which means that nothing less than a position of authority, status, and respect is honorable” (Rice, 2004).

Performance Appraisal and Feedback : According to Beer, Spector, Lawrence, Mills and Walton (1985), supervisors in most organizations do not give honest and candid performance reviews because they might damage the self-esteem of the employees. Gopalakrishnan (2002) noted that a candid feedback on performance might be viewed by the employees as unfriendly and hostile in Saudi Arabia. In the Arab culture, it is customary to give feedback through an intermediary to avoid conflict and sending the wrong message. According to the survey conducted by Bayt.com, 52% respondents showed dissatisfaction on the feedback system (Anonymous, 2009b). This is aggravated when the performance of the Saudi employees is compared with their expatriate counterparts, comparisons that are immediately understood as favoring the foreigners and not promoting Saudization, the term coined for nationalizing the jobs. Since Saudi Arabia’s collective culture values group work, the pay-for-performance system that recognizes individuals is undermined when management tries to downplay it by writing comforting statements on the appraisal forms to compensate for low salary increases for poor performers (Hall, 2003).

Lack of Recognition : Gallup Organization conducted an extensive study (whereby 80,000 managers gave their responses) on the factors contributing to the quality of workplace. This study has found that recognition is a critical source of employee satisfaction and retention (Buckingham & Coffman, 1999). In fact, recognition and praise ranked fourth among 12 dimensions used in this survey.

One of the key causes of employee turnover in Saudi organizations is lack of recognition. Lack of job recognition in the KSA workplaces is the biggest barrier to employee productivity and huge turnover the results of a recent poll, conducted by Bayt.com, has found. “41% of the surveyed respondents cited that little/ or the lack of credit for their efforts causes their productivity levels to wane. The ambiguity of roles at 30% also stops people from giving their best at work; while 14% felt that having no say in the decision making process negatively affects their productivity” (Anonymous, 2009b). Data for the productivity in the workplace series of polls was collected online between the 4th January and 8th February 2009 with a total of 8,289 respondents from across the Middle East (Anonymous, 2009b).

Lack of Personal and Professional Advancement : An achievement is one of the best predictors of job satisfaction and organizational commitment. Unfair promotion policies perceived by employees may negatively impact their organizational commitment (Mosadeghrad, Ferliet and Rosenberg, 2008). According to study conducted by Bayt.com, showed that 51% respondents in Saudi organizations were dissatisfied with their personal and professional growth at their existing jobs (Anonymous, 2009b).

Ineffective Communication: Charles (1981) suggested that the communication is one of the factors of employees’ turnover. He described an on-site study of a large Midwestern trucking firm. The study was made by University of Iowa researchers. The study concluded that poor communication between management and blue-collar workers contributes to a high job turnover rate. The truck plant was chosen because it had a 123% annual job turnover rate. Through interviews, the researchers discovered that a large part of drivers’ dissatisfaction with their jobs stemmed from their isolation from management, and management’s view of drivers as 2nd-class people. The drivers’ only contact with the company was via several short telephone conversations per week. Management had created a stereotype for the drivers and, with so little contact, found it impossible to recognize and deal with driver

complaints.

Wang (2008) noted that the common problem with many organizations in the KSA is that they do not establish a long term plan and make firm commitment for their organizations. Most of them do not have a philosophy for quality, or a vision or a mission. They also lack the availability of documented procedures that show how the organization is operating.

A survey of more than 500 managers and employees in the Gulf Council Countries (GCC) was conducted by leading communications consultancy firm Hill & Knowlton, using YouGovSiraj. The study concluded that the lack of effective communication by managers has led many employees to look elsewhere for the information they need. The study, further, added that although managers in Saudi Arabia realize how important it is to communicate with their employees, many of them fail to convey their message. Therefore, Managers in Saudi Arabia need to think again about communicating the objectives of their companies or organizations to their employees (Al-Kinani, 2008). "Only 53 percent of Saudi Arabia employees think their managers are very useful sources of important information, while 46 percent mainly rely on external media and friends to collect information about their job" (Al-Kinani, 2008).

Consequence Of Employee Turnover : The consequences of high turnover are both financial and non-financial. High turnover can be a serious hurdle to productivity, quality, and profitability at firms of all sizes. For the smallest of companies, a high turnover rate can mean that simply having enough staff to fulfill daily functions is a challenge, even beyond the issue of how well the work is done when staff is available (Johnson, 2009). According to Zed Ayesh, Managing Director, Flagship Consultancy :"Employee turnover has always been one of the invisible enemies of business in any growing economy; it is invisible because most costs associated with staff turnover cannot be directly itemized in the profit and loss statement or reported at the end of the fiscal year" (Anonymous, 2008). Achoui and Mansour (2007) identified both positive and negative consequences of employee turnover. Negative consequences includes cost both tangible like recruitment, selection, training and production lost and intangible cost like moral impact, workload impact and tam performance disruption. Also other negative cost associated with employee turnover is separation, replacement and both financial and non-financial. The financial costs mainly involve the cost of people's time, cost of materials and equipment, cash outlays, and productivity losses. The other costs are less discernable and harder to estimate but may entail large negative impacts on organizational effectiveness such as lost of customer, business and damaged morale (Heneman and Judge (2009).

workers in a workforce of 3,113,000 equates to a ($2.7bn) Dhs9.9bn cost to business every year. For an average business of 12 workers the annual turnover cost is approximately ($10,400) Dhs38250" (Anonymous, 2008). Despite their many potential benefits, voluntary (being initiated by the employee) turnover, are typically costly proposition (Heneman and Judge, 2009). Therefore, both voluntary and involuntary turnover can be managed strategically to allow the organization to maximize the costs incurred with the process. Retention strategies must involve the assessment of both retention costs and benefits. Retention strategies must focus not only on how many employees are retained but exactly who is retained (Heneman and Judge, 2009). An ineffective employee retention strategy can disrupt the whole organizational productivity and employee morale.

Employee Turnover Strategies : Retention of employees, particularly in a strong employment market and for those employees who are top performers, can be a significant challenge for organizations. While many employers appropriately attempt to retain top employees by offering opportunities for personal growth and development, interesting work, a congenial work environment and strong value-driven management, the reality is that many top performers still remain focused on their salary, particularly relative to the market place (Mello, 2011).

At the simplest level, one could say that the way to manage turnover is to increase the levels of satisfaction among employees. But the key is in understanding exactly how to do that (Denisi and Griffin, 2008). The significant challenge for employers in managing retention of their employees is the fact that different employees are motivated by different factors relative to their desire to stay with an employer (Mello, 2011). Therefore any retention program needs to be designed based on the needs of the employees who have been targeted for retention.

Ongori (2007) noted that the strategies to minimize employee turnover should be appropriate to the diagnosis of the problem. Employee turnover attributable to poor selection, for example, is unlikely to improve where the policy modification to focus exclusively on the induction process.

On the other hand, previous studies focus on the functional human resources activities such as recruitment and selection. Examples of these are from the previous researchers, such as Collins (2007), Dermody et al. (2004) Reynolds et al. (2004) and Martin et al. (2006), who focus on the important role that appropriate recruitment plays in retaining good staff (Deery, 2008). As the economy turns a corner, companies in gulf region need to assess their staff retention strategies. Following old retention strategies, such as money or financial incentives, will not be the way to go forward into future. So, in this case, non-financial incentives such as training and career development do become a key to retention, according to gulf region experts (Kapur, 2010). These views are consistent with the previous studies (such as Achoui and Mansour (2007); Ongori (2007)). For instance, Achoui and Mansour (2007) conducted an empirical study to identify the main turnover factors in some Saudi business companies through surveys. They found

that the majority of the respondents confirmed that their companies do not make effort to retain their employees. Thus, strategies of retention, which are based on developing human resources management systems and organizational behavior aspects such as improving communication process and networks, internal marketing policy and practicing professional exit interviews, should be implemented in order to avoid high rate of turnover and its negative consequences.

Another comprehensive study on workforce engagement and retention trends conducted by Manpower Middle East reveals the urgency of adopting more effective employee retention programs to attain both competitiveness and profitability in the regional markets. According to Manpower's findings, better employment opportunities (79.4%), career advancement (80.8%), and improved work environment (45.9%) are some of the top reasons for job mobility aside from increased pay, which is cited as the basis for 85% of respondents to leave their current jobs. The study indicates that organizations offering benefits such as experiential opportunities, a clear career path, mobility options and travel and working conditions that balance work, personal and family growth are more likely to retain their pool of talent (Anonymous, 2009c).

In short, more efforts should be done to improve retention by taking in consideration the many factors like better recruitment effort, review job content, compensation practices, leadership and supervision, career planning and development, alternative work schedule, working conditions, non-work factors, team building, centralization, organization communication and commitment, proper exit interview, counseling for leavers, flexible working hours, compressed work week, employees involvement, policies for turnover and recognition. However, employee turnover endeavor requires more investment in the area of organizational commitment and job satisfaction in the Saudi private sector companies (Achoui and Mansour, 2007). It is hoped that this paper will inspire academicians to do additional research in this areas as well as assist Saudi organizations to retain their talented and high performer staff.

Methodology: The present study is descriptive in nature and mostly based on secondary data. The secondary data consists of books, reports, newspaper articles and research journals.

Managerial Implication And Future Research : The key objective of this study is to investigate the Employee turnover in Saudi organizations. Saudis face a major problem when they search for jobs. They are challenged by the claim made by owners and managers of Saudi organizations and others that Saudis are not loyal to their employing organization. However, this claim failed to stand against the review of literature, which confirms that Saudi organizations hire expatriates from poor economies to gain higher returns on investments without regard to the well-being of Saudi nationals. This study, however, does not suggest that Saudi organizations must employ workers with no proper Knowledge, skills, abilities, and training. This review has also identified that the skills of Saudi employees may not be currently adequate to fulfill the needs of the current local labor market, but they can be developed with appropriate training. It is suggested that in many successful organizations, less employee turnover is a source of competitive advantage that must be continued to gain the edge in a competitive global market.

Generally, Saudi employees showed a higher level of loyalty to Saudi organizations, but we expect some variations due to some personal differences or demographic factors such as age, education, tenure, pay, and rank. Therefore, It is safely assumed that the difference in personal characteristic and job variables could lead to the conclusion that the loyalty of employees can differ on the basis of their demographics and job-related variables. Organizational commitment, however, is an effective response to the whole organization and the degree of attachment or loyalty of employees feel towards the organization. Job involvement represents the extent to which employees are absorbed in or preoccupied with their jobs and the extent which an individual identifies with his or her job.

The degree of commitment and loyalty can be achieved if management they enrich the jobs, empower and compensate employees properly (Ongori, 2007). Retention is about listening and working with the employees. First two years working in any organization is a challenging and critically important time that requires employees to have a special perspective and use special strategies to be survived. In order for employees to stay in the organizations that have hired them, they need to work effectively with their managers. If their managers consider them poor employees, they are unlikely to get past the probation period; if they do, they are likely to feel that they are going nowhere in the organization and will probably leave after few years because they believe they have no future there (Laroche and Rutherford, 2007).

Future research in this area can further examine the organizational commitment and its relationship with turnover construct. For example, this study argues that personal factors and organizational commitment effect employee turnover intentions. Future research in this area should measure the empirical relationships in the Saudi Private companies. Moreover, an examination of the financial and non-financial retention strategies should be carried out to investigate the effective strategies for the employees in the Saudi market.

References :-

1. Abassi, S. M. and Hollman, K.W. (2000) "Turnover: The real bottom line", *Public Personnel Management*, 2(3), Pp. 333-342
2. Achoui, M. and Mansour, M (2007), "Employee Turnover and Retention Strategies: Evidence from

Saudi Companies", *International Review of Business Research Papers,* 3(3), pp. 1-16.

3. Adams, G. A., &Beehr, T. A. (1998) "Turnover and retirement: A comparison of their similarities and differences", *Personnel Psychology*, 51, 643–665.
4. Al-Ahmadi, H. A. (2002) "Job Satisfaction of nurses in Ministry of Health hospitals in Riyadh", *Saudi Medical Journal*, 23, Pp. 645-650
5. Al-Kahtani, A. S (2002) "Organizational loyalty of Saudi employees in Saudi organizations", *Global Competitive -ness*, [Accessed on: 16th May 2010, 9:18pm] http://www.allbusiness.com/marketing/market-research/332883-1.html
6. Al-Kinani, M (2008) "Managers in Saudi Arabia come with communication problems", *Saudi Gazette*, [Accessed on 12th June 2010, 9:05pm]
7. http://www.saudigazette.com.sa/index.cfm?method=home.regcon&contentID=200805146387
8. Al-Kibsi, G, Benkert, C., and Schubert, J. (2007) "Getting labor policy to work in the Gulf", *The Mckinsey Quarterly*, Pp.19-29 [Accessed on 22nd May 2010, 9:40pm]http://www.mckinseyquarterly.com/Getting_labor_policy_to_work_in_the_Gulf_1930
9. Anonymous (2008) "Employee turnover remains regional business's invisible enemy, despite global crisis, says management expert", [Accessed on: 8th June 2010, 7:16pm] http://www.ameinfo.com/178478.html
10. Anonymous (2009) "Lack of recognition biggest barrier to productivity, say 41% of job seekers" [Accessed on: 8th June 2010, 7:48pm] http://www.ameinfo.com/187790.html
11. Anonymous (2009b) "Employee Motivation in the Middle East Study" [Accessed on: 8th June 2010, 9:10pm] http://www.bayt.com/en/research-report-5601/
12. Anonymous (2009c) "Reinforced staff retention strategies vital for Middle Eastern companies to boost market competitiveness and profitability" [Accessed on 17th June 2010, 11:50 Am] http://www.ameinfo.com/183243.html
13. Beer, M., Spector, B., Lawrence, P., Mills, D., and Walton, R. (1985) *Human resource management: A general manager's perspective*, New York: The Free Press
14. Bhuian, S. N and Al-Jabri M, I.(1996) "Expatriate Turnover Tendencies in Saudi Arabia: An Empirical examination", *The International Journal of Organizational Analysis*, 4(4). Pp. 393-407
15. Branham, L. (2005) *The 7 Hidden Reasons Employees Leave: How To Recognize The Subtle Signs and Act Before It's Too Late*: AMACOM
16. Buckingham, M. and Coffman, C.W. (1999) "Recognition or Praise: the twelve key dimensions that describe great workgroups" *Gallup Management Journal*, [Accessed on 8th June 2010, 11:07pm] http://gmj.gallup.com/content/490/Item-4-Recognition-or-Praise.aspx
17. Cappelli, P. (1997) "The new deal at work: Managing the market-driven workforce", in Luecke, R(2002) *Hiring and keeping the best people*, Boston: Harvard Business School Press
18. Charles, K. (2005) "UI Researchers Suggest Communication a Factor in Job Turnover", [Accessed on: 12th June 2010, 6:48pm]
19. http://proquest.umi.com/pqdweb?did=1322118&sid=1&Fmt=2&clientId=45596&RQT=309&VName=PQD
20. Deery, M. (2008) "Talent Management, Work-life balance and retention strategies" ,*International Journal of Contemporary Hospitality Management*, 20(7), Pp.792-806
21. Denisi, A.S and Griffin, R. W. (2008) *Human Resource Management*, NY: Houghton Mifflin Company
22. Feldman, D. C. (1994) "The decision to retire early: A review and conceptualization", *Academy of Management Review*, 19, Pp.285–311.
23. Gustafson, C. M (2002) "Employee turnover: A study of private clubs in the US", *International Journal of Contemporary Hospitality Management*, 14 (3), pp. 106-113
24. Gopalakrishnan, R. (2002) "Leading diverse teams", *Business World*. [Accessed on 13th June 2010, 7:35 pm],www.tata.com/tata_sons/media/20020408. htm
25. Hall, K. (2003) "Worldwide vision in the workplace", [Accessed on 6th June 2010, 5:45pm]
26. www.leader-values.com/ Content/detailPrint.asp?ContentDetailID=350
27. Heneman, H. G and Judge, T. A. (2009), *Staffing Organizations*, 6th ed, McGraw Hill International Edition
28. Johnson, M. W, Parasuraman, A., Futrell, C. M., and Black, W.C. (1990) "A longitudinal assessment of the impact of selected organizational influences on salespeople's organizational commitment during early employment", *Journal of Marketing Research*, 27, Pp. 333-344
29. Johnson, C (2009) "Employee Turnover: Duties, Benefits and Expenses", *Encyclopedia of Business*, [Accessed on 13th June 2010, 6:36Pm] http://www.referenceforbusiness.com/encyclopedia/Eco-Ent/Employee-Turnover.html
30. Kapur, S (2010) "Call for rethink on staff retention strategies", *Emirates Business 24/7*, [Accessed on 16th June 2010, 11:07Am]
31. http://www.business24-7.ae/economy/regional-economy/call-for-rethink-on-staff-retention-strategies-2010-06-01-1.250259
32. Laroche, L. and Rutherford, D. (2007) *Recruiting, Retaining and Promoting Culturally Different Employees*, OX: Elsevier Inc.
33. Looney, R. (2004) "Saudization and sound economic reforms: are the two compatible?" *Strategic Insights*, 3(2) [Accessed on 20th May 2010, 9:06pm]
34. http://www.nps.edu/Academics/centers/ccc/publicat-

ions/OnlineJournal/2004/feb/looneyFeb04.html
35. Mello, J. A (2011) *Strategic Human Resource Management*, 3rd Ed, OH: South-western Cengage Learning
36. Mosadeghrad A. M., Ferlie, E., and Rosenberg, D (2008) “A study of the relationship between job satisfaction, organizational commitment and turnover intention among hospital employees”, *Health Services Management Research*, 21, Pp. 211- 227
37. Ongori, H. (2007) “A review of the literature on employee turnover”, *African Journal of Business Management*, [Accessed on 19th May 2010, 23:40pm] www.academicjournals.org/ajbm
38. Pakkiasamy, D. (2004) “Saudi Arabia’s Plan for Changing Its Workforce”, *Migration Policy Institute*, [Accessed on 20th May 2010, 7:38pm]
39. www.migrationinformation.org/Feature/display.cfm ?id=264
40. Price, J. (1977) *The study of turnover*, IA: Iowa State University Press.
41. Rice, G. (2004) “Doing Business in Saudi-Arabia”, *Thunderbird International Business Review*, 46(1), pp. 59-84.
42. Smith, D. (1996) “Increasing Employee Productivity, Job Satisfaction, and Organizational Commitment”, *Hospital Health Service Administration*, 41, Pp.160-174
43. Wang, H. (2008) “Communication with Saudis”, *Asian Social science*, 4(11),Pp. 124-130 [Accessed on: 12th June 2010, 8:20pm]
44. http://www.ccsenet.org/journal/index.php/ass/article/view/825/785
45. Woods, R. H. (1995) “Managing hospitality Human Resource”, East Lansing, MI: Educational Institute of the American Hotel and Motel Associations

****

Employee Retention Strategies

Dr. Syed Saleem Aquil* Sabiha Aquil**

Abstract - Encouraging employee retention is crucial for organizations. Addressing pay disparities and creating a supportive work environment are essential in today's competitive job market. Many employees feel they should be paid more, which can lead to turnover. "To cultivate a strong and dedicated workforce, it is essential to establish a supportive work environment that nurtures a sense of belonging and fosters a culture of achievement. This will empower employees to contribute innovative ideas and drive growth."

Employee Retention: Employee retention is crucial for organizations. It encompasses policies encouraging long-term commitment from key personnel. It aims to address employee satisfaction and the potential impact of turnover on organizational costs and reputation.

The benefits of employee retention include:

1. Cost of Turnover: Estimated at around 25% of an employee's salary.

2. Loss of Institutional Knowledge: Departing employees takes valuable insights and experience.

3. Disruption to Customer Service: Impact on established customer relationships.

4. Turnover Effects: Ripple effect on staff and overall morale.

5. Company Reputation: Low attrition rates contribute to a positive company image.

6. Reinstating Efficiency: Impact of acquiring and training new talent on productivity.

Given the high costs of talent loss, organizations should prioritize retention strategies revolving around compensation, work environment, growth opportunities, positive work relationships, and sufficient support.

Compensation: Compensation is vital to employee retention, including salary, bonuses, benefits, stock options, and more. Components to consider when structuring compensation packages include:

1. Salary and Monthly Wage
2. Bonus
3. Economic Benefits
4. Long-term Incentives
5. Health Insurance
6. Post-retirement Benefits
7. Miscellaneous Compensation

Environment: Effective people management is crucial for fostering employee retention. Employees seek an environment that values their contributions, offers growth opportunities, fosters a friendly atmosphere, and ensures a sense of belonging.

The organizational environment includes culture, values, reputation, employee development, technology adoption, and trust.

A positive work environment includes adept management, supportive colleagues, challenging Work, and recognition.

Career growth and development are vital for employee retention. Aligning employees' work profiles with their capabilities is crucial for their satisfaction and retention within the organization.

Personal growth and dreams: Employee development and personal aspirations are crucial within an organization, as they contribute to a highly skilled and motivated workforce aligned with individual and organizational objectives. Providing training and development opportunities and identifying needs through performance evaluations and engagement is essential for achieving this alignment. Developing and fulfilling employees' aspirations are integral components within the organizational framework. By identifying training needs through performance evaluations, individual meetings, surveys, and ongoing employee engagement, organizations can ensure that their employees receive targeted support that aligns with personal and organizational growth. This strategic approach not only fosters the individual advancement of employees but also contributes to creating a highly skilled, motivated, and harmoniously aligned workforce capable of driving the organization towards success.

Importance of Relationship in Employee Retention Program: The quality of relationships with management and peers can significantly impact an employee's decision to leave an organization. In certain instances, the management may fail to foster a supportive work culture and a conducive environment for personal and professional relationships. Consequently, an employee may develop feelings of bitterness towards the management or peers,

* Asst. Professor, Kalyan P.G. College, Bhilai (C.G.) INDIA
** Research Scholar, Pt. Ravi Shankar Shukla University, Raipur (C.G.) INDIA

leading to decreased motivation, diminished satisfaction, and, ultimately, attrition.

A nurturing work culture is pivotal in an employee's professional growth and overall satisfaction. Management should be mindful of the following points to cultivate positive professional relationships in the workplace.

Respect for the individual: Respect for individuals is crucial in an organization. Managers should support and involve employees in work processes. It is essential to have managers who can build good relationships with their team. Encouraging teamwork among colleagues promotes healthy competition and improves relationships.

Recruit wholeheartedly: Recruit employees for suitable roles and communicate clear expectations. Foster a supportive culture, provide opportunities for individual development, and promote loyalty to retain employees.

Support: Feedback from supervisors is a powerful tool for making employees feel responsible and empowered. The lack of this support can significantly impact employee retention. Supervisors can contribute to their success and overall job satisfaction by actively supporting their subordinates. Management should prioritize employee support and recognition, offering valuable feedback that makes employees feel genuinely valued. Employers can further demonstrate their support in personal crises by providing personal loans, childcare services, and counselling.

Recognizing factors that impact employees is critical to retaining them. Tailoring employee retention approaches to different operational levels is essential. Lower-level incentives like gifts and personalized appreciation can motivate employees, while higher-level benefits like memberships and sabbatical leaves require more significant resources. At the highest level, employee retention strategies involve mentorship workshops and personalized career guidance.

The Three Rs of Employee Retention: Incorporating the three critical elements of employee retention—respect, recognition, and rewards—is essential to maintaining high employee satisfaction and retention.

Respect: Respect denotes esteem, special regard, or particular consideration directed towards individuals. As depicted in the pyramid model, respect forms the fundamental basis for retaining employees. Regardless of recognition and rewards, their impact remains minimal without genuine employee respect.

Recognition: Employee recognition involves acknowledging and appreciating an individual's efforts. Employee retention and morale challenges often result from inadequate management attention to employee needs.

Rewards: Offering rewards beyond the basics of respect and recognition motivates individuals to work harder and go beyond their duties. While rewards are a small part of retention, they are still important.

Modern Model for Employee Retention (ERC's retention model): ERC, or Employee Retention Connection, represents the latest initiative led by James Rolo and Ingrid Bens. They aim to collaborate with organizations to attract, develop, and retain their most valuable asset: their employees.

This initiative focuses on three fundamental drivers of employee retention. These drivers encompass the following key attributes:

1. Stimulating Work:

i. Diverse range of assignments
ii. Autonomy to make decisions
iii. Provision of resources and support to facilitate high-quality Work
iv. Opportunities for continuous learning
v. Regular feedback on performance
vi. Recognition of the significance of individual contributions

2. Motivational Leadership:

i. Inspiring a shared vision of the organization's direction
ii. Motivating and acknowledging contributions
iii. Cultivating the capabilities of others
iv. Exemplifying behaviours that align with the organization's values

3. Recognition & Reward:

i. Expressing gratitude for exemplary performance
ii. Reinforcement of desired behaviours
iii. Establishment of a culture that prioritizes recognition
iv. Commemoration of achievements
v. Fostering self-esteem and promoting camaraderie and teamwork

Reasons for an employee to leave an organization: Employees have expressed concerns regarding the adequacy of tools provided for their roles, feeling undervalued due to a lack of substantial feedback and sensing a disconnect between personal and corporate objectives. There is a consensus that individuals should take ownership of their career development; however, acknowledging proactive and positive actions is deemed essential. Aligning personal and company goals is crucial, necessitating individual responsibility in goal setting. Additionally, limited growth and advancement opportunities have been noted. Personality conflicts, particularly with direct supervisors, are identified as a primary reason for employee turnover, often linked to deficient communication and conflict resolution skills. Lastly, employees find exclusion from decision-making processes, especially within their areas of expertise, as a factor leading to devaluation and potential attrition.

Managing Employee Retention

The management of personnel entails a three-stage process:

1. Assessment of the cost incurred due to employee turnover
2. Comprehension of the factors leading to employee attrition
3. Implementation of strategies to retain employees

Identifying: An effective retention strategy should focus

on attracting and recruiting suitable candidates, ensuring positive initial experiences for new employees, providing development opportunities, and aligning the reward strategy with employee drivers.

Cost of employee turnover: Organisations should assess employee turnover rates and compare them with competitors to address employee turnover. Calculating the cost of turnover is crucial. According to a survey, attrition costs companies 18 months' salary for managers and professionals and six months' pay for hourly employees on average. This presents a significant organizational and financial burden, especially considering that one in three employees intends to leave their job within the next two years.

Understand why employees leave: Employee departures often need help from top management. Conducting compelling exit interviews provides valuable insights into why employees leave the organization. To address employees' reluctance to provide candid responses, consider appointing an impartial interviewer whom employees trust to express their opinions comfortably.

Conclusion : Managers understand the importance of retaining top talent, which will increase as baby boomers retire, making it easier for younger employees to find Work.

Essential Guidelines for Improving Employee Retention:

1. Streamline Feedback Mechanisms
2. Provide Competitive Compensation Packages
3. Advocate for Work-Life Balance
4. Mitigate Burnout
5. Offer Growth and Advancement Opportunities
6. Respect and Encourage Employee Input
7. Foster Interpersonal Relationships
8. Furnish Necessary Tools and Training
9. Harness Employee Expertise
10. Safeguard Job Security

References :-

1. Davis, K. and Nestrom, J.W. (1985). Human Behaviour at Work: Organizational Behaviour. 7th Edition, McGraw Hill, New York,
2. Feldman, D.C., & Arnold, H.J., (1983). Managing Industrial and Group Behaviour in Organizations McGraw-Hill, New York, p.
3. Milkovich GM, Newman JM (2004). Compensation (8th ed.). Burr Ridge, IL: Irwin McGraw-Hill.
4. Spector, P.E., (1997). Job Satisfaction: Application, Assessment, Causes and Consequences (Advanced Topics in Organizational Behavior). 1st Edition, Sage Publications, CA, pp: 104.
5. Srijan Sengupta & Anjali Ray, Employee Retention: An Indian Perspective, Lambert Academic Publishing.
6. Jack J. Phillips & Adele O. Connell, Managing Employee Retention, Butterworth-Heinemann, 2003 *(Reference: Case Study On Job Satisfaction Of Oati Employees Management Essay | CustomWritings. https://customwritings.co/case-study-on-job-satisfaction-of-oati-employees-management-essay/)*

****

A Sociological Insight into the Process of Town Planning in India

Dr. Rishi Kumar Sharma*

Abstract - Development-induced displacement is not free from dysfunctional consequences, despite state's desire to fulfill the interests of larger population. Displacement impact can be disastrous if development induced displacement happens in the midst of conflict and issues related to abuse of human rights as well as if state intentionally and arbitrarily impose disproportionate share of development cost on few people who are at the same time denied to get the justified benefits of the development project for which they made involuntary shift. However, development is inevitable and necessary for the society to grow but undoubtedly it carries threat to human life, rights and livelihood which is a paradox to its name. Displacement due to development was mostly undertaken in the less developed areas or say rural areas affecting tribal, backward and poor people in general. Occupational displacement directly impacts socio-economic life of the affected persons. This type of resettlement seems to be more challenging for both displaced people and government as the area in which shopkeepers must be relocated should be in the well established market wherein they can earn their livelihood. Rehabilitation and resettlement policies are insensitive to the gender issues which lead to a fundamentally disenfranchising experience for women. Due to the transition the women face further hardships when community support structures disintegrate and family and kinship networks break down. Women are compelled into adjusting and assimilating an unfamiliar culture as well as restrictions crated due to relocation in their social space have refrained them from recreating their day to day practices in a new scenario.

The paper is an insight into the trends of social development in various fields, and discusses the issues of displacement and rehabilitation in particular covering various causes and effects of social development, displacement and rehabilitation in terms of town planning in India. The paper has certain valuable suggestions as well for the effective rehabilitation of the replaced who face several unknown breaking problems as a result of the so-called social development.

Keywords: Development, Displacement, Rehabilitation, Inevitable, Modernization, Weaker.

Introduction -Change is inevitable whether it is in the physical features, mental features etc. Likewise, through town planning across the world including India, efforts both at the public and private levels, are being made for the sake of facilitating the people more and more. For it, on the one hand, displacement, and on the other, rehabilitation is required without which no such change is possible.

Indian cities are rarely planned and poorly governed. More than 80% of the urban population in India lives outside "planned" neighbourhoods.While cities like Delhi were at least partly planned before independence, cities like Bengaluru didn't have this luxury.From a group of small villages, Bengaluru grew into the silicon valley of India sporadically. It was a well-planned city by the standards of several decades ago, but the lethargic authorities simply didn't have the visionary outset to plan for the future. It's today a mess with headache-inducing traffic jams and buildings violating laws and norms in every nook and corner.The existing problems are purely due to issues in Urban planning and can be reduced to a large extent if the authorities hire people with the required expertise and know-how to resolve the issues.The first planned city in India was Chandigarh, which was done by one of the greatest architects in history, Le Corbusier.He conceived the Chandigarh Master Plan as analogous to the human body, with a clearly defined-

1. Head (the Capitol Complex, Sector 1),
2. Heart (the City Centre Sector-17),
3. Lungs (the leisure valley, innumerable open spaces and sector greens),
4. Intellect (the cultural and educational institutions),
5. Circulatory system (the network of roads, the 7Vs) and the
6. Viscera (the Industrial Area).

The concept of the city is based on four major functions: living, working, care of the body and spirit and circulation.Chandigarh is still one of the safest, cleanest and well-maintained cities in India. It has negligible traffic issues compared to other major cities in India. Rightly called-City Beautiful.In 2015, an article published by BBC named

*Lecturer (Sociology) Government Girls College, Karauli (Raj.) INDIA

Chandigarh as one of the few master-planned cities in the world to have succeeded in terms of combining monumental architecture, cultural growth, and modernization.

At the heights of emergency Indira enacted the Urban Land (Ceiling and Regulation) Act, 1976 and that is one of the many things that is hampering the building of new cities. It limits the amount of land any private entity can own and this means it is hard to bring private sector in building new cities.

That leaves the government. Amidst all the real and imaginary problems the politicians handle, there is very less money and time to build new stuff. Most of our government's revenues go for non-capital expenses - such as paying subsidies and salaries - and not something more productive in the long term.

Then comes a more fundamental problem: land acquisition. In India, we have a mistaken romanticism about agriculture. The laws and the fragmental land holdings make it very hard to acquire large tracts of fertile land needed to build cities.

In India, there are pretty much only two available spaces - forests and farms. The rest is all either occupied or uninhabitable. We don't want to take away forests and the only available land to build new cities is over fertile farms. That is how our past cities were built and that is how cities were built globally.

Reasons of Unplanned Towns and Cities in India: Every Indian is self centered. Because we are sold to the idea that no one would look after us in case of uncertainty. Thus it's always secure oneself well before helping others. For eg. a teacher painstakingly tutors a student who would go on to become successful in life, leaving the teacher to fend for himself with meager pension, if any.

Thus when government plans any infrastructure development projects, each individual thinks of themselves. Because a road expansion project might be beneficial to the City & Country, but for the land losers it might be a bleak future. Because the land losers might be getting X amount as compensation now, but once the project is complete, the other land owners might rake in 10X times, leaving the land losers in a lurch.

So for projects funded by government, which are of national importance, there are laws to somewhat forcefully take over the needed land, there is no such law in case of City/Town expansion. So for a planned development the basic requirement is Land. Thus land owners on the outskirts would be willing only if a good compensation is accorded. Alas the government usually offers max 2 times the current market value, which is again determined by the Government. So the well off land owners wouldn't want to part with their land, because once the project completes the price might shoot upto 5 times which may be in a couple of years.

So hence there is delay, cost escalation, etc, which significantly delays town planning and expansion.

We have issues like villages on the outskirts of major cities, which are governed by their respective Gram Panchayat and Municipal Councils. These are institutions are notorious for their corruption and town planning is non-existent. So they give permission to construct real estates, under their jurisdiction leaving rules and regulations to the wind. So a town planner, during city expansion plan, cannot simply evict these residents because they have legal sanction from their governing authority. Purchasing these real-estate would escalate the cost beyond limit. So a town planner has to include these eye sores into their plan and continue with adjustments.

Indians lack aesthetic design sense. We like to stand out, our house should make a statement, thus every house in a lane would be in different shape, size and color. Our greed, to extract maximum rental, ensures that 2 buildings would be literally inches apart from each other. And new real estate layout would be to ensure maximum plots, sacrificing the road width, the pathway, etc.

Three prime reasons of Unplanned Cities in India

Primarily a Rural nation - In 1951, India had only 5 cities with a population more than 10 lacs, and only 41 cities with more than 1 lac people. Villages were more than 5.6 lacs. Today in 2016–17, more than 65 percent of our people live in rural areas, or just-above rural towns. These are the prime focus of all governments, due to sheer numbers, and the political meaning it carries. The fact that rural folks are primarily agriculturists makes it simpler for the policy-makers to focus largely on them. The figures are tell-tale.

Random, unplanned urban growth - There was no impetus to concentrate people into better organised urban centres. The system just let it evolve on its own. We have more than 8000 urban centres today! In this area at least, we have let loose democracy's dance in full flourish. Move anywhere, settle anywhere, do whatever. Can we really make 8000 urban centres world-class? A big question. We need funds, duly-elected and capable urban local bodies and technology to help achieve this. The 14th Finance Commission has allotted huge sums to local bodies till 2020. We need to see what comes out of it. The most difficult part will be for vested interest lobbies to let go of their hold and allow the urban local bodies to effectively implement revenue-generating schemes (taxes etc.) and enforce rules and discipline.

It is reasonable to assume that smaller towns are a bridge between rural and truly urban centres. But by 2031, these 8000+ urban centres will be densely packed. They need a total overhaul in systems, processes, resources and governance.There are other striking aspects of this urbanisation. A notable one is the sheer concentration of economic activity that has happened, a fact that's also reflected in the skewed share of sector in India's GDP basket. And we plan to turn India into an egalitarian society with such figures.

Huge regional variations - This is typically Indian. The states are as different from each other as nations are in Europe.

Displacement & Rehabilitation in Town Planning: Town planning is possible only when at the government level, displacement of the people by breaking the houses, industrial units, shops and commercial units is made to make way for the desired construction of roads, streets, flyovers, underpass, government buildings, railway tracks and railway lines is made and the sufferers are rehabilitated comfortably. Developers buy up low valued properties and force the not-rich people living in them to move out, then replace the buildings with high revenue offices, shopping centers or upscale housing.

Objectives:

1. Getting feedback about the town planning status in the countries of the world.
2. Concentrating on the town planning in India.
3. Commenting on the displacement and rehabilitation in the process of town planning.
4. Enumerating the social transformation in India through town planning.

Hypothesis:

1. Town planning is essential to facilitate the life and survival of the people in the modern times.
2. The western cities have better town planning strategies than the Indian cities and towns.
3. The Indian town planning requires improvement.
4. Displacement and rehabilitation are associated to town planning.

Review of Literature

'The urban experience in India in terms of five themes should be argued that these can help to constitute anew this area in India. These themes are: uneven capitalist development and its impact on urbanisation; the nature of urban inequalities; the influence of globalisation on city forms and structures; the intervention of state policies and the impact of collective action; and the various dimensions of urban cultures and modernities. These themes can also become the building blocks for fashioning a new urban sociology not only in India but also in the South.'[1]

'Space and status are inextricably related to each other. Though space is a geographic entity, human society has a tendency to transform it into a socio-cultural phenomenon. Such a process of appropriation of space refers to trends of social change and status- formation. Space-segregation thus implies 'social distance'. Underlying a given space-segregation, one can see the structure of society in terms of the ramifications of caste, class and ethnicity. Our study of Chanderi, a small town in Madhya Pradesh, shows that segregated mohallas (neighbourhoods) and galis (lanes) largely correspond with graded social divisions based on caste and community. Space-segregation and com mensurate social divisions do not obstruct the incorporation of modernity in the social fabric of the town.'[2]

'Cities in the global south are undergoing changes in the production structure brought about by globalization and liberalization. These cities also witness significant informalities in terms of shelter and livelihoods. These phenomena are reflected in the urban land use patterns. Planning in these cities is under pressure to adapt to the dynamic urban condition but is constrained by the technical and bureaucratic process of master/development plan making. Through an empirical study of an area in the suburbs of Mumbai (India), this paper shows the wedge between planned and actual land use and discusses the reasons for this dichotomy. The master/development plans based on technical principles with micro-level detailing are unable to foresee and hence or otherwise adapt to the economic dynamics and spatial restructuring in Mumbai; they are partly undermined by "occupancy urbanism".'[3]

'In India, the principle of the Varnashrama Dharma develop a social stratification of the people in general and the functionaries of the state, led to a segregation of the classes following different pursuits; and the same caste or people same profession were placed in the ward so that a uniformity of life and consequent economic efficiency and progress were secured. So every site was divided into different blocks or plots, one being meant for each class. It also explores the moral activity concerned with the way in which people live in relation to its surrounding. The key to the individual and social ethics of Hinduism is the conception of Dharma. The affirmative attitude of Hinduism towards life has been emphasized by its recognition of four legitimate and basic desires known as "Purushartha" – Dharma, Artha, Kama, and Moksha. So forth while planning of town, location and surrounding is taken into account and further suggests that planning is the moral framework by which communities and individuals confront their relationship with the environment. '[4]

'The history of urban redevelopment is one of disruption of poor communities. Renewal historically offered benefits to the place while pushing out the people. In some cases, displacement is intentional, while in others, it is unintentional. Often, it is the byproduct of the quest for profits. Regardless of motives, traditional communities, defined by cultural connections, are often disrupted. Disadvantaged neighborhoods include vacant units, which diminish the community and hold back investment. In the postwar period, American cities entered a program of urban renewal. While this program cleared blight, it also drove displacement among the cities' poorest and was particularly hard on minority populations clustered in downtown slums. The consequences of these decisions continue to play out today. Concentration of poverty is increasing and American cities are becoming more segregated. As neighborhoods improve, poorer residents are uprooted and forced into even more distressed conditions elsewhere.'[5]

'Scholarly interest in the relationship between public investments and residential displacement dates back to the 1970s and the aftermath of displacement related to urban renewal. A new wave of scholarship examines the relationship of gentrification and displacement to public investment in transit infrastructure. Scholarship has generally conflated gentrification and displacement;

however, this review argues for a clearer analytical distinction between the two. Although the displacement discussion in the United States began with the role of the public sector and now has returned to the same focus, it will be necessary to overcome methodological shortcomings to arrive at more definitive conclusions about the relationship.'[6]

'In general, rehabilitation is the process of returning components of the built environment to a state of utility through repairing or alteration. This process enables efficient contemporary usage, preserving, where appropriate, the features that are significant due to their historical, cultural and architectural values. Many Polish towns are nowadays in a phase of renaissance thanks to the revitalization processes which restore splendour of the past of the old streets or market squares. Such revitalization is focused not only at restoring the former beauty and magnificence of the town's historic central districts, but also at their social, cultural and economic revival.'[7]

'Urban India is undergoing a transition in terms of physical form, demographic profile and socio-economic diversity. In India, migration has played an important role in accelerating urban growth resulting in transfer of rural poverty to urban areas. Rural migrants are attracted to the urban areas for economic reasons regardless of the fact that physical infrastructure in terms of housing, drinking water supply;drainage, etc; is not so adequate in the cities. Cities have been the hubs of economic growth, but planned urbanization has been marred to an extent by the excessive demand for basic amenities resulting in deterioration in the physical environment widening of the gap between demand and supply of essential services and other infrastructure in these areas. Unchecked migration, particularly, has aggravated housing problem resulting in increase in the land prices. This forces the urban poor to settle for informal solutions resulting in mushrooming of slums and squatter settlements.'[8]

Methodology: The study being descriptive and qualitative, describes and interprets the issue of town planning in India. The scholar left no stone unturned in maintaining the scientific spirit of the work through the observance of all the prescribed steps of scientific method and social science research. The selected research papers published in the reputed journals available on the internet sites enabled the scholar to study the issue of town planning in India and to draw invaluable conclusion on it.

Findings & Conclusion: India is a large and diverse country, with many different regions and cultures. Planning cities in India can be complex due to a variety of factors, including population growth, economic development, and cultural and political differences. Additionally, there may be challenges related to infrastructure, transportation, and access to resources. Despite these challenges, India has made significant progress in urban planning and development in recent years. Many cities in India have implemented plans and policies aimed at promoting sustainable urban growth and addressing the needs of residents. However, there is room for improvement and further collaboration between different levels of government, private sector and the citizens to achieve successful city planning.

India has many ancient cities which are still surviving like Delhi, Hyderabad, Varanasi, Lucknow and Surat.These cities also along with relatively new cities (made by the British) Kolkata, Mumbai and Chennai are also not well planned in the old areas as when these cities were growing people form around the city and distant places came into the cities and settled wherever they found a locality.For example in the older parts of Kolkata in the north the roads are quite narrow and there are too many century old buildings.

India is so bad at planning cities because we have no 'one' effective, central urbanisation plan at all. We do not have state-level urbanisation plans either. And till recently, we did not even have effective, functional district level comprehensive urbanisation plans. Though there have been ministries and departments, but their power to make deep dents in the system was negligible.

The only plans we have had so far have been after random, haphazard growth in Indian cities has already happened. Then, authorities would scramble to make it work, turn it revenue-positive and make it look less dis-organised. This story repeated itself countlessly over and over, time and again. It was only post 1991–92, after the 73rd and 74th constitutional amendments were carried out, that Rural local bodies and Urban local bodies gained prominence.

References:-

1. Sujata Patel, 'Doing urban studies in India: the challenges', South African Review of Sociology 40(1):31-46, January 2009. DOI:10.1080/21528586.2009.10425098
2. K.L. Sharma, 'The social organisation of urban space: A case study of Chanderi, a small town in central India', Contributions to Indian Sociology, Volume 37, Issue 3, 2003. https://doi.org/10.1177/006996670303700301
3. Abhay Pethe, Ramakrishna Nallathiga, Sahil Gandhi, Vaidehi Tandel, 'Re-thinking urban planning in India: Learning from the wedge between the de jure and de facto development in Mumbai', Cities, Volume 39, August 2014, Pages 120-132
4. Reena Patra, 'Town Planning in Ancient India: In Moral Perspective', The International Journal of Humanities and Social Studies, Volume 2, Issue 6, June 2014
5. J.M. Knight&Mohammad Gharipour, 'Urban displacement and low-income communities: The case of the American city from the late twentieth century', International Journal of Architectural Research Archnet-IJAR 10(2):6-21, 2016. DOI:10.26687/archnet-ijar.v10i2.936
6. Miriam Zuk, Ariel H. Bierbaum, Karen Chapple & Karolina Gorska, 'Gentrification, Displacement, and the Role of Public Investment', Journal of Planning

Literature 33(3):088541221771643, July 2017. DOI:10. 1177/0885412217716439

7. Andrzej Ambroziak&Pawe³ K³osowski, 'On Aspects Of Urban Areas Rehabilitation', Conference: Workshop on Rehabilitation Of Existing Urban Building Stock, At: Gdañsk, Poland, June 2004. DOI:10.13140/ 2.1.2628.8966
8. N. Jothilakshmy and R. Arul Malar, 'Inclusive Planning processes and Institutional Mechanisms for the Urban Poor: Innovations and Lessons Learnt from Different Schemes in Chennai City', Institute of Town Planners, India Journal 7 - 2, 50 - 62, April - June 2010

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to September 2017, Vol. I

समकालीन उपन्यास और अमृतलाल नागर

डॉ. सिद्धि जोशी*

प्रस्तावना – उपपति कृतो हृर्थ : उपन्यास संकीर्तित – अर्थात् किसी अर्थ को मुक्तिपूर्वक प्रस्तुत करना 'उपन्यास' हैं। संस्कृत के लक्षण ग्रन्थों में नाटक की प्रतिमुख संधि के एक भेद–विशेष का नाम भी उपन्यास: प्रसादनम् अर्थात् प्रसादन को उपन्यास कहते है। उपन्यास में 'उप' और 'नि' इसके उपसर्ग है 'अस् धातु है जिसका अर्थ है फेंकना (या सम्मुख रखना) अथवा होना। व्यत्पत्ति की दृष्टि से 'उपन्यास' शब्द का अर्थ केवल सम्मुख प्रस्तुत करना या होना ही है। साहित्य–रूप के अर्थ में इसका प्रयोग सबसे पहले बंगला में हुआ।

परिभाषाएं

(अ) भारतीय विद्वानों द्वारा – डॉ. भागीरथ मिश्र के अनुसार,'युग की गतिशील' पृष्ठभूमि पर सहज शैली में स्वाभाविक जीवन की एक पूर्ण व्यापक झांकी प्रस्तुत करने वाला गद्य काव्य उपन्यास कहलाता है।

बाबू श्याम सुन्दर दास :– उपन्यास मनुष्य जीवन के वास्तविक जीवन के वास्तविक जीवन की काल्पनीक कथा हैं।

प्रेमचन्द :– मैं उपन्यास को मानव–चरित्र का चित्र मात्र समझता हूं, मानव–चरित्र पर प्रकाश डालना और उसके रहस्यों को खोलना ही उपन्यास का मूल तत्त्व हैं।

डॉ. देवी प्रसाद गुप्त :– गद्य युग का महाकाव्य उपन्यास है।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी :– उपन्यास इस युग का बहुत ही लोकप्रिय साहित्य है। शायद ही कोई पढ़ा–लिखा नौजवान इस जमाने में मिले जिसने दो–चार उपन्यास न पढ़े हो। यह बहुत मनोरंजक साहित्योग माने जाने लगा है। आजकल इस साहित्यांग ने मनोरंजन के लिए लिखी जाने वाली कविताओं का ही नहीं नाटकों का भी रंग फीका कर दिया है। क्योंकि पांच मील दौड़कर रंगशाला में जाने की अपेक्षा पांच सौ मील दूर से ऐसी किताब मंगा लेना कहीं आसान हो गया है जो अपनारंगमंच अपने पन्नों में ही लिये हुए हो।

6. **आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी :–** उपन्यास से आजकल गद्यात्मक कृति का अर्थ लिया जाता है। पद्यबद्ध उपन्यास नहीं हुआ करते।

7. **डॉ. त्रिभुवनसिंह :–** साहित्य क्षेत्र में उपन्यास ही एक ऐसा उपकरण है, जिसके द्वारा सामूहिक मानव–जीवन अपनी समस्त भावनाओं एवं चिन्ताओं के साथ सम्पूर्ण रूप में अभिव्यक्त हो सकता हैं, मानव–जीवन के विविध चित्रों को चित्रित करने का जितना अधिक अवकाश उपन्यासों में मिलता है उतना अन्य साहित्यिक उपकरणों में नहीं।

8. **आचार्य रामचन्द्र शुक्ल :–** मानव जीवन के अनेक रूपों का परिचय कराना उपन्यास का काम है। यह उन सूक्ष्म घटनाओं को प्रत्यक्ष करने का प्रयत्न करता है जिनमें मनुष्य का जीवन बनता है और जो इतिहास आदि की पहुंच के बाहर है।

9. **सुषमा प्रियदर्शिनी :–** उपन्यास वैयक्तिक दृष्टि से वास्तवा भाषा कल्पित कथा पात्रों को लेकर जीवन के एंकागी या बहुरंगी गतिशील यथार्थ को अंकित करने में नित्य नवल रूप धारण करने में समर्थ, अपेक्षतया बड़े आकार का रोचक वर्णनात्मक गद्य रूप है।

(ब) पाश्चात्य विद्वानों के विचार

1. **राल्फ फाक्स :–** मानव जीवन की विविध सर्वागींण अभिव्यक्ति उपन्यासों में ही सम्भव है। उपन्यास केवल गद्य में लिखी हुई कथा ही नहीं है उसने उसे मानव जीवन का गद्य माना है।

2. **डॉ. मूलर :–** उपन्यास मूलत: मानवीय अनुभव का निरूपण है चाहे वह यथार्थ हो अथवा आदर्श और इस प्रकार उपन्यास में अनिवार्यत: जीवन की आलोचना रहती है।

3. **डी.एच.लारेंस :–** उपन्यास जीवन की एक उज्ज्वल पुस्तक है। पुस्तकें जीवन नहीं है, वे सिर्फ हवा में थरथराहट पैदा करती है। लेकिन उपन्यास एक ऐसी थरथराहट है, जो समूचे जीवित मनुष्य को कंपा सकती है। कविता दर्शन, विज्ञान या किसी भी पुस्तक की थरथराहट से कहीं ज्यादा जबरदस्त उपन्यास की थरथराहट है।

4. **क्रॉस :–** उपन्यास उस गद्य आरथान को कहा जाता है, जो यथार्थ जीवन का यथार्थवादी दृष्टि से अध्ययन करें।

5. **जार्ज मूर :–** उपन्यास समकालीन इतिहास के सिवा और कुछ नहीं है। जिस युग में हम जी रहे हैं, वह उसका सामाजिक परिवेश का बिल्कुल पूर्ण और सही–सही पुन: निर्माण है।

6. **टी.डब्ल्यू बीच :–** उपन्यास में पात्र के आन्तरिक आत्मस्वरूप का ज्ञान कथा का वर्णित क्रियाकलापों द्वारा प्राप्त हो और क्रिया–कलापों का उद्‌भव पात्र की आन्तरिक मनोभूमि पर हो।

7. **क्लारा रीव :–** उपन्यास यथार्थ जीवन तथा तत्कालीन सामाजिक व्यवहार का चित्र है। उपन्यास की कसौटी यह है कि वह हमारी परिचित वस्तुओं और दृष्यों का चित्रण इस ढंग से करे कि वह सामान्य हो जावे और कम से कम उपन्यास पढ़ते समय पाठक को यथार्थ का भ्रम हो जाये, पाठक उन्हें अपना समझने लगें।

8. **लार्ड डेविड सिसिल :–** उपन्यास एक ऐसी कलाकृति है जो हमें एक जीवित जगत से परिचित करा देती है। यह जगत् अनेक दृष्टियों से हमारे यथार्थ जगत् के ही समान होता है और साथ ही उसका अपना निजी व्यक्तित्व भी बना रहता है।

9. **जे.बी.प्रीस्टले :–** उपन्यास गद्य कथा है, जिसमें मुख्यत: काल्पनिक पात्र और घटनाएं रहती है।

* सह–आचार्य, राजकीय महाविद्यालय, झुंझुनूं (राज.) भारत

उपन्यास को जीवन का एक बड़ा दर्पण कहा जा सकता है। इसमें साहित्य की अन्य विधाओं की अपेक्षा अधिक विस्तारवादी दृष्टि रहती है। उपन्यास को हम अनेक रूपों में वर्णित कर सकते है। उसे सादा और सरल वर्णन सामाजिकता का चित्र, चरित्र प्रदर्शन तथा जीवन - दर्शन -यान आदि कह सकते हैं और यदि इन सारी विशेषताओं को छोड़कर उसे केवल उपन्यासकार के व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति कहें तो भी अनुचित न होगा। उपन्यास जीवन की काल्पनीक कथा है।

बीसवीं शताब्दी में उपन्यास को जो महत्तव मिला है वह कदाचित अन्य साहित्य रूप को कभी नहीं मिला है। इसमें लोकप्रियता और महनीयता का अद्‌भुत समन्वय हुआ है तथा इसने समाज के समस्त ऊँच और नीचे वर्गो को मिला दिया है। विश्व के अनेक महान् चिन्तकों ने गम्भीर मनीषा से उपलब्ध स्थायी सत्यों और मानव मूल्यों को इसी माध्यम से प्रचारित किया है।

इससे उपन्यास केवल मनोरंजन की वस्तु नहीं रहा, वह महान् सत्यों और नैतिक आदर्शों का एक अत्यन्त मूल्यवान साधन बन गया है।

भारतेन्दु युग से खड़ी बोली का सूत्रपात माना जाता है तभी से गद्य में उपन्यास का प्रादुर्भाव भी हुआ। लाल श्री निवासदास का परीक्षा गुरू (1882 ई.) प्रकाशित हुआ। यह हिन्दी उपन्यास के इतिहास की एक महत्तवपूर्ण घटना थी और यहीं से हिन्दी उपन्यास साहित्य का प्रारम्भ माने जाने लगा। सन् 1882 से 1916 तक का काल हिन्दी उपन्यास की प्रयोगावस्था घोतक है। इस काल में हिन्दी उपन्यास भाँति-भाँति के प्रयोगों के माध्यम से अपनी अलग पहचान बनाने में लगा रहा। इस युग में उपन्यास के क्षेत्र में चमत्कार-प्रियता और मनोरंजन की प्रवृत्ति क्रियाशील रही।

सन् 1916 से 1936 का काल पूर्णतया प्रेमचन्द को समर्पित किया जा सकता है। इस युग को निर्विवाद रूप से 'प्रेमचन्द युग' की संज्ञा दी जा सकती है। निसंदेह उपन्यास धारा के नैरन्तर्य को प्रेमचन्द ने भंग ही नहीं किया वरन् उसके बहिरंग को अधिक व्यापक और अधिकसार्थक बना दिया।

प्रेमचन्द के उपन्यास युग की साहित्यिक, सांस्कृतिक, सामाजिक एवं आर्थिक प्रवृत्तियों का प्रतिबिम्ब हैं, युगीन इतिहास का यथातथ्य किन्तु रसात्मक आख्यान है। प्रेमचन्द हिन्दी के प्रथम उपन्यासकार है जिनकी रचनाएं उपन्यास की कसौटी पर पूरी तरह से खरी उतरती है।

उपन्यासकार के रूप में प्रेमचन्द की सर्वप्रमुख विशेषता यह है कि उन्होंने समकालीन यथार्थ को बहुत कलापूर्ण ढंग से कथा-साहित्य से जोड़ दिया है। समसामयिक यथार्थ को बहुत ही कलापूर्ण, प्रमाणिक, विश्वसनीय एवं सार्थक रूप से कथा सूत्र में पिरोने वाले वे प्रथम हिन्दी-उपन्यासकरा थे।

सन् 1936 से 1950 के काल को प्रेमचन्दोत्तार काल से अमिहित किया जाता है। इस काल में मनोविश्लेषण तथा यथार्थवाद की प्रवृत्तियाँ प्रधान रूप से मिलती है। इनमें मनोवैज्ञानिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, वैयक्तिक एवं सामाजिक समस्याओं का विस्तार है। इस काल के उपन्यारसों में पात्रों की टूटन, यौन-कुण्ठा, चेतना-प्रवाह, प्रकृतवाद, तज्जन्य स्वप्न तथा प्रतीकात्मकता का प्रभाव कमोवेश अधिक मुखर हुआ है। इस युग में पारम्परिक विषयों और शैली दोनों के प्रति लेखकों ने विद्रोह किया है। इस दौरान समाजवादी यथार्थवादी उपन्यासों का सृजन हुआ।

उपन्यास ने इस युग में नयी भूमिका का अन्वेषण किया, नये प्रयोग किये, मानव सत्यों को पकड़ने के लिए नयी दिशाओं में कदम उठाया। इस युग के प्रमुख उपन्यासकारों में भगवती चरण वर्मा, यशपाल, जैनेन्द्र कुमार, अज्ञेय, इलाचन्द्र जोशी, उपेन्द्रनाथ अश्क, नागार्जुन, अमृतलाल नागर, रांगेय राघव, फणीश्वरनाथ रेणु, अमृत राय, विष्णु प्रभाकर, धर्मवीर भारती आदि के नाम उल्लेखनीय है।

समकालीन हिन्दी उपन्यास : विविध प्रयोग

बीसवीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध एक अजीब असन्तोष, अविश्वास, अस्वीकार बौद्धिक एवं वैचारिक संघर्ष, मानसिककषमकष और परम्परागत जीवन पद्धति के खोखलेपन के एहसास का जन्मदाता है। समकालीन उपन्यास जीवन की अनेक समस्याओं को रूपायित करते हैं जिसमें भावुकता पर कम परन्तु तर्क-वितर्क के माध्यम से बौद्धिकता पर अधिक ध्यान केन्द्रित किया गया है। समकालीन उपन्यासों में कथ्य, शिल्प एवं शैली की दृष्टि से सर्वथा नये और मौलिक प्रयोग हुए है।उपन्यासकारों ने पहली बार में शैली अपनाई है।

साठोत्तरी हिन्दी उपन्यास व्यक्ति, समाज, देश तथा विश्व परिवेश में भोगे हुए क्षणों की तीव्र अभिव्यक्ति का शक्तिशाली माध्यम है। समकालीन उपन्यासों में किए गए अभिनव प्रयोगों हम निम्न बिन्दुओं के माध्यम से देखने का प्रयास करते हैं।

मानव-जीवन की अभिव्यक्ति के लक्ष्य को पूरा करने के लिए, उपन्यासकार कुछ निश्चित विधियों व तरीकों का अवलम्बन करता है और इनकी सहायता से अपनी रचना में मानव-जीवन का सजीव चित्र खड़ा करता है। ये विधियां या तरीके ही उपन्यास की शिल्पी-विधि के नाम से पुकारे जाते है। ये विधियां या तरीके ही उपन्यास की शिल्पी-विधि के नाम से पुकारे जाते है। यदि हम उपन्यासकार की कला का और विश्लेषण करें तो हमें पता चलेगा कि इसके अन्तर्गत ये तत्व आते हैं - कथावस्तु, चरित्र-चित्रण, देशकाल, कथोपकथन उद्देश्य और भाषा - शैली। उपन्यासकार मानव - जीवन के किसी विशिष्ट पहलू को स्पष्ट करने के लिए एक ऐसी घटना-श्रृंखला को जन्म देता है जिससे वह पहलू अधिक तेजोमय और प्रभावशाली बन सके। इन घटनाओं को अधिक विश्वसनीय और कार्य श्रृंखला में बांधने के लिए जीवित पात्रों की रचना या कल्पना करनी पड़ती है। देशकाल से घटनाएं और पात्र अत्यधिक विश्वसनीय बन जाते हैं। भाषा-शैली के माध्यम से उपन्यासकार अपने विचारों को घटनाओं और पात्रों के माध्यम से मूर्त बना देता है। इन उक्त तत्वों का कुशल प्रयोग ही उपन्यास शिल्प-विधि कहलाता है।

नागर जी ने अपने उपन्यासों की कथावस्तु समाज के विशाल - प्रागंण से चुनी हैं। प्रेमचन्द ने अपनी कथा-दृष्टि मुख्य रूप से ग्राम्य जीवन पर केन्द्रित की, शहरी कथा केवल नाम मात्र के लिए है, वैसे ही नागर जी ने अपनी कथाओं को शहरी जीवन तक ही सीमित रखा। वे गांव तक नहीं पहुंचे। गांव उनकी पहुंच के बाहर थे। नगर-जीवन के विश्वस्त चित्र नागर जी द्वारा उरेहे गए हैं।

अन्धकार में डूबे हुए मूढ़, अपढ़ पात्रों के जीवन का चित्रण तो किया ही है वहां उनके द्वारा अति शिक्षित, वैज्ञानिक दृष्टि-सम्पन्न पात्रों से संबंधित घटनाओं के चित्र भी बहुत ही यथार्थ बन पड़े हैं। इसलिए उनकी सामाजिक उपन्यासों की कथा वस्तुएँ अत्यधिक विशाल फलक पर अवतरित होती हैं, समग्रतावादी उपन्यासकार होने के कारण उन्होंने समाज के उन चित्रों को भी प्रकाशित किया है जो अन्धकार में छिपे हुए थे। 'ताई' से संबंधित सम्पूर्ण कथा ऐसी ही है। उपन्यासकार ने समाज के प्रत्येक स्तर से सामग्री बतोरी है और सभी के प्रति उनकी आत्मीयता और संवेदनशीलता बनी रहने के कारण ही शहरी-समाज का पूर्ण चित्र देने में समर्थ हुए हैं।

नागरजी में कथा कहने की जबरदस्त प्रतिभा है। नागर प्रथम कोटि के किस्सा गो शैली के लेखक है। कहीं–कहीं उनके वर्णन चन्द्रकान्ता शैली की याद दिलाते हैं।

कही वे ऐसे वर्णन करते हैं जैसे घटनाएं इसी समय सामने घट रही हों, कहीं इस प्रकार जैसे अतीत में घट चुकी हो, कहीं किस्सा–गो केढंग से, कहीं मनोवैज्ञानिक विश्लेषणात्मक ढंग से। पूरे उपन्यास (बूंद और समुद्र) के रूपबन्ध में इससे विषयानुकूल विविधता के बजाय स्वर का विवादीपन और वैषभ्य, प्रभाव का ऊबड़–खाबड़पन और वातावरण का टूटना बनना ही अधिक उभरता है। इस कारण उनके कथानक शिथिल हो जाते हैं और विशेषकर 'बूंद और समुद्र' 'अमृत और विष' तथा एक दाने भिवारण्ये उपन्यासों के कथानकों में यह शिथिलता एक दम स्पष्ट रूप से देखी जा रही है।

इन उपन्यासों में नागर जी अपने ज्ञान प्रसार और किस्सा–गो प्रवृत्ति पर अंकुश लगाने में असमर्थ रहे हैं।

यह तो सत्य है कि इस किस्सा–गो प्रवृत्ति के कारण उपन्यासकार पाठक को कहीं भाषाविज्ञान, नेतृत्व शास्त्र, संस्कृतियों के सम्मिश्रण की वैज्ञानिक प्रक्रिया आदि की जानकारी बहुत अच्छी तरह देता है किन्तु कथानक के गठन में अवश्य व्यवधान पड़ता है। उपन्यासकार ने जिन उपन्यासों में इस प्रवृत्ति को नहीं अपनाया है वहां कथानक चुस्त और तीव्र गति से लक्ष्य प्राप्ति की ओर अग्रसर होते हैं। 'सुहाग के नूपुर', शतरंज के मोहरे और मानस का हंस आदि उपन्यासों के कथानकों में यह देखा जा सकता है।

बूंद और समुद्र कर मुख्य कथाएं दो हैं – प्रथम लखनऊ के मौहल्ला चौक की कथा जिससे उपन्यास का आरम्भ होता है और दुसरी चौकेतर कथा जिससे उपन्यास की समाप्ति होती है। प्रथम कथा का केन्द्र 'ताई' और उसके चहुं ओर का समाज दूसरी का केन्द्र है सज्जन और उसकी मित्र मण्डली, विषेष रूप से महिपाल तथा कर्नल। प्रथम कथा समाज व्यवस्था की परम्परागत रूढियों और जीवन–मूल्यों की कथा है। इसमें जीवन का विरोधाभास है तथा नगर जीवन की तीव्रता और क्षिप्रता प्रस्तुत की गई है। दुसरी कथा उन मनीषियों और विद्वानों की कथा है जो समाज को विचार और प्रेरणा देते हैं। यह समाज की पुरातन रूढ़ियों का निरीक्षण और अवलोकन तथा आत्मालोचन कर उनके सम्बन्ध में अपनी प्रतिक्रियाएं उपस्थित करता है। इन दोनों कथाओं के विभिन्न पात्रों की अपनी–अपनी जीवन कथाएं भी हैं किन्तु उपन्यास के मुख्य प्रतिपाद्य तथा प्रमुख चरित्रोद्घाटन तथा विकास में इनका किसी न किसी प्रकार योग अवश्य लक्षित होता है। इस कारण कथा मन्दगति से विकसित होती है। कथा में फैलाव होने के उपरान्त भी तारतम्य है।

परन्तु यह सत्य है कि ब्रजयात्रा, महिपाल के संस्कृति पर दिए गए भाषण तथा भोज आदि का अधिक विस्तारपूर्वक चित्रण नहीं होता तो उपन्यास के कथानक में अवश्य ही गठन उत्पन्न हो जाता। इन्हीं बातों का लक्ष्य कर नेमीचन्द जैन ने अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त की है– बूंद और समुद्र, के कथ्य का अन्तविरोध उसके रूप बन्ध और गठन में भी मौजूद है। कुछेक आलोचकों का मत है कि बूंद और समुद्र अत्यधिक वर्णनों के कारण विश्वकोण जैसा ग्रन्थ हो गया है और इस कारण उनके कथानक में शिथिलता आना स्वाभाविक है। इतना सब कुछ होते हुए भी उपन्यास की रोचकता को कहीं आंच नहीं आती और यही उपन्यास की सबसे बड़ी विशेषता है। एक बार उपन्यास को पढ़ना करने पर उसकी समाप्ति पर ही पाठक अपने हाथ से उसे दूर करता है। अतः कथानक शिथिल होते हुए भी रोचक है, पाठक के मन को पसंद है।

'सुहाग के नुपूर' को लेखक ने महाकवि इलंगोवन कृत तमिल महाकाव्य 'शिलप्यादिकारम' पर आधारित स्वीकार किया है। कोवलन माधवी के प्रति आकर्षित होता है, पर उससे विवाह नहीं कर पाता क्योंकि वह वेश्या–पुत्री है। कलगी से उसका पाणिग्रहण होता है। कोवलन अपना व्यापार चलाता है, परन्तु माधवी को एक क्षण के लिए भी नहीं भूलता। पान्सा से सम्बन्धित कथा उपन्यास की कथा को तीव्र और संघर्षमयी बनाती है तथा माधवी और कोवलन को परस्पर मिलाने वाली कथा है।

माधवी कन्नगी को कोवलन के घर से निकालकर स्वयं कोवलन की पत्नी बनकर रहती है और उसकी अभिलाषा है कि वह अपनी एकमात्र पुत्री को कोवलन चेट्टियार के वंश वृक्ष में सम्मिलित कर दे परन्तु कन्नगी जैसी सती साध्वी उसके प्रयास को सफल नहीं होने देती। राज्य कर्मचारी माधवी के घमंड को नष्ट कर अपनी अंकशयनी बना लेता है। माधवी का पतिव्रत धर्म का अभिमान चूर–चूर हो जाता है। अत्यन्त भयंकर बाढ़ से सम्पूर्ण नगरी तहस–नहस हो जाती है और कन्नगी अपने दरिद्र पति को लेकर दूसरे स्थान पर चली जाती है। कन्नगी के श्वसुर के द्वारा बनवाए गए सुहाग के नूपुर जिनको कन्नगी ने माधवी के मांगने पर भी नहीं दिये थे। अपने पति के व्यापार के लिए दे देती है।

भ्रमवश कोवलन राज्य कर्मचारियों द्वारा पकड़ा जाता है। समय पर पहुंच कर कन्नगी अपने पति को वध होने से बचाती ही नहीं अपितु कोवलन के लिए व्यापारिक सुविधायें भी लेती हैं।

कथा की त्रिधारा प्रवाहित होती है – माधवी– कोवलन, कन्नगी – कोवलन, पान्सा और माधवी से संबंधित। सम्पूर्ण उपन्यास में घात–प्रतिघात, संघर्ष और कथा का विकास अत्यन्त सावधानी से किया गया है। उपन्यास की कथा एक तीव्र वेगवती सरिता के समान प्रवाहित होती है जिसके बहाव में पाठक अन्त तक ऐसा बहता चलता है कि वह चाहने पर भी नहीं रूक सकता। और अन्त में ऐसी बाढ़ नहीं है कि उसे शून्य प्राप्त हुआ, वहां मिलता है उसे समुद्र जिसमें मोती ही मोती हैं और वह जीवन का अनुपम सत्य पा लेता है। शिल्प की दृष्टि से नागर जी का यह उपन्यास अत्यधिक सफल उपन्यास है।

'अमृत और विष' उपन्यास में तीन समानान्तर कथाएं – प्रथम लच्छू की कथा, द्वितीय रमेश और रानी की कथा और तीसरी स्वयं अरविन्द शंकर उपन्यासकार की कथा। समग्र उपन्यास को पढ़ने के पश्चात् यह बात अवश्य ध्यान में आती है कि लच्छू से अनुप्राणित कथा को आरम्भ में ही छोड़कर आधे से अधिक उपन्यास समाप्त होने पर चलती तो उपन्यास और अधिक रोचक और गढ जाता है। शायद कुछेक सुधी आलोचक नागरजी पर यह आक्षेप लगा सकते हैं कि अगर उपान्यासकार उक्त तीनों कथाओं को समानान्तर रूप से चित्रित करता तो उपन्यास का कथानक सुगठित और सुव्यवस्थित हो जाता और सुव्यवस्थित हो जाता और उपन्यासकार अपने लक्ष्य प्राप्त को अच्छी प्रकार कर सकता था। परन्तु ध्यान से देखने पर उनकी रचना कुशलता की ही सराहना करनी पड़ेगी।

इतने कथा स्वरों का एक साथ निर्वाह करने और उपन्यास की समग्रता के भीतर दूसरे उपन्यास की रक्षा करना नागर जी का अपूर्व कलात्मक कौशल है। नागर जी इस उपन्यास में आधुनिक में आधुनिक जीवन की विसंगतियों विविध पात्रों, उनकी मनः स्थितियों, राजनैतिक दाव–पेंच, आंदोलन अनशन, धर्म, दर्शन विचार तथा संस्कृतिगत भेदएवं स्वार्थ तथा

आस्था के बीच संघर्ष आदि को विशाल चित्र–फलक पर रूपाथित करने में सफल हो सके हैं। यद्यपि बीच–बीच में विस्तृत और अनावश्यक वर्णनों से उपन्यास के कथा–शिल्प में शिथिलता आ गई है तथापि अनेक दृष्टियों से प्रस्तुत उपन्यास 'बूंद और समुद्र' से भी महत्वपूर्ण बन गया है। यह उपन्यास स्वातंत्त्योत्तर काल में संक्रान्ति कालीन भारतीय परिस्थितियों का दर्पण बन गया है। शिल्प की दृष्टि से उपन्यासकार ने 'अमृत और विष' में एक नवीन प्रयोग किया है जिसमें उसे पूर्ण सफलता प्राप्त हुई है।

'सात घूंघट वाला मुखड़ा' समरू बेगम को आधार लेकर लिखा गया, इतिहास के आधार पर चरित्र प्रधान उपन्यास है। तिथियों और घटनाओं का क्रम परिवर्तन लेखक ने उपन्यास की रोचकता को दृष्टि में रखकर किया गया है।

बेगम समरू उसका पति वाल्टर रेनहार्ड (नबाब समरू), टॉमस, लवसूल और वषीर खां से संबंधित घटनाओं को इस उपन्यास में पिरोया गया है।

घटनाएं किंवदंतियों को आधार बनाकर भी ली गई हैं और इस कारण कहीं–कहीं विश्वसनीयता भी नहीं रही है।

कथाविन्यास की दृष्टि से अत्यधिक शिथिल उपन्यास 'सात घूंघट' वाला मुखड़ा है। उपन्यास में न कोई आदर्श है और न ही शिल्प की दृष्टि से साधना ही है।

अत: नि:संकोच कहा जा सकता है कि उपन्यास कला, विचार, गांभीर्य और भाषा आदि सभी दृष्टियों से 'अमृत और विष' की सफलता असंदिग्ध है।

इस सम्पूर्ण विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि अमृतलाल नागर की साधना उत्तरोत्तर विकासमान है। धीरे–धीरे उनका कलाकार सधता गया और कलात्मक–सौन्दर्य उनकी अभी तक अन्तिम कृत्ति 'मानस का हंस' में स्पष्ट लक्षित होता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची:–

1. महाकाल, भारत भारती, इलाहाबाद
2. सेठ बांकेमल, लोक भारती प्रकाशन, नई दिल्ली
3. बूंद और समुद्र, किताब महल, इलाहबाद
4. शतरंज के मोहरे, राज प्रकाशन, लखनऊ
5. सुहाग के नूपुर, भारत भारती, इलाहाबाद
6. अमृत और विष, भारत भारती, इलाहाबाद
7. सात घूंघट वाला मुखड़ा
8. डॉ. इन्द्रनाथ मदान – आज का हिन्दी उपन्यास
9. डॉ. शशिभूषण सिंहल – हिन्दी उपन्यास की प्रवृत्तियाँ
10. डॉ. शान्ति स्वरूप गुप्त – हिन्दी उपन्यास
11. डॉ. त्रिभुवन सिंह – हिन्दी उपन्यास : शिल्प और प्रयोग

****

बाल श्रमिकों की समस्या - एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

डॉ. आराधना सक्सेना*

प्रस्तावना - 'बाल श्रमिक जब अपनी तूलना दूसरे बच्चों से करता है तो उसे अपनी लघुता का अहसास होता है। यह अहसास ही हीन भावना है हीन भावना से ग्रसित होकर जहां बच्चा अंतर्मुखी होकर अपने आपको धोखा देता है उसमें दायित्वहीनता अपराध बोध जैसे अनेक विकास घर करने लगते हैं और ऐसे बाल श्रमिक पूरा जीवन दु:ख एवं अभावों से जीने को मजबूर हो जाते हैं। 1500 डिग्री के तापमान पर खौल रहे पिघलते कांच को ढोने वाले और खतरनाक रासायनिक घोलो में कोमल नंगे हाथ डूबों कर ताले के लिए धातु के टुकडे तैयार करने वाले बच्चों से लेकर जिस्म बेचने मजबूर बच्चों को आज नई सुबह का इंतजार है। एक प्रसिद्ध गीत की पंक्ति है-**'तुम ही भविष्य हो मेरे भारत विशाल के इस देश को रखना मेरे बच्चों संभाल के।'**

लेकिन वक्त की सच्चाई यह है कि देश का भविष्य हमारे नैनीहाल बदहाल जिंदगी जी रहे हैं। इसमें से अधिकांश बच्चों ने या तो स्कूल देखा ही नहीं अथवा पढ़ाई बीच में छोड़ दी है। बच्चों के कल्याण को ध्यान में रखकर बहुतेरे नियम-कानून भी बने है, किन्तू वे प्रभावहीन रहे हैं।

बचपन जीवन की एक ऐसी अवस्था है जिसमें बच्चा अपनी मर्जी से जीना चाहता है यह अवस्था जन्म से लेकर किशोर अवस्था तक पहुंचने की अवस्था होती हैं। इस अवस्था में शारीरिक, मानसिक और बौद्धिक विकास के लिए समुचित अवसर प्राप्त करना हर बच्चे का नैसर्गिक अधिकार है। परिवार समाज एवं राष्ट्र से यह अपेक्षा की जाती हैं कि वे बच्चों को संरक्षण प्रदान कर उन्हें विकास के समुचित अवसर प्रदान करें। संवैधानिक उपबंधों व अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों के विधिक प्रावधानों में कदाचित यह कमी दिखाई भी नहीं देती फिर भी मनुष्य की स्वार्थी प्रवृत्ति, निर्धनता, अशिक्षा, असमानता के कारण समाज में बालश्रम की समस्या विकराल रुप लेती जा रही हैं। बच्चों से उनकी इच्छा व आवश्यकता के विरुद्ध बलात् तरीके से उन्हें जीविकोपार्जन का साधन बनाता बाल-श्रम का वास्तविक उद्देश्य है। बच्चे भविष्य के निर्माता है यदि उन्हें उचित अवसर एवं संरक्षण नहीं मिला तब वे भविष्य का निर्माण कैसे करेंगे? बाल-श्रम भारत की ही नहीं बल्कि वैश्विक समस्या है।

वर्तमान समय में हमारे देश में असंगठित क्षेत्र में कार्य करने वाले बच्चों की संख्या सम्मिलित है जो घरों में कार्य करते है। बड़ी संख्या में बच्चे खतरनाक उद्योग जैसे-पटाखा एवं माचिस उद्योग, कालीन बुनाई उद्योग, रत्न कटाई एवं पालिश तथा काँच की वस्तु निर्माण ईकाईयों में काम करते है इन फैक्ट्रियों की कार्य दशाएं अस्वास्थकर एवं खतरनाक है इसमें मालिकों द्वारा सुरक्षा हेतू नियमों का पालन नहीं किया जाता है। कहीं-कहीं नियंत्रक अधिकारी भ्रष्टाचार में लिप्त है धन की लालच में गैरकानूनी शोषण को आंखे मूंदे देखते है। शिक्षा की कमी उपयुक्त एवं पोष्टिक भोजन का अभाव, स्वास्थ्य के प्रति लापारवाही इत्यादि इन बच्चों की दुर्दशा से जुडे हुए कारक है।

बाल-श्रमिक कौन ? - सामान्य तौर पर किसी उद्योग, कारखाने, खान आदि में श्रम करने वाले 14 वर्ष से कम उम्र के बच्चों को बाल-श्रमिक कहा जाता है। जेनेवा (स्विजरलैण्ड) स्थित अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (आई. एल. ओ.) में बाल-श्रम पर अपनी रिपोर्ट में बाल-श्रमिकों को परिभाषित करते हुए लिखा है -

'ये वे किशोर नहीं है जो दिन के कुछ घंटे खेल और पढ़ाई से निकालकर जेब खर्च के लिए काम करते हैं, ये वे बच्चे भी नहीं है जो पारिवारिक भूमि पर कृषि कार्य में सहायता करते है या घरेलू कामों से सहायता करते है बल्कि ये वे मासूम बच्चे है जो 10 से 18 घंटे (लगभग) काम करके कम पैसों पर अधिक श्रम बेचकर बुनियादि शिक्षा और खेल से वंचित रहते हुऐ भी कभी-कभी परिवारों से अलग रहते हुये वयस्कों की जिंदगी बिताने को मजबूर है।'

घरो-ढाबो, होटलो, बस अड्डों तथा छोटे बड़े औद्योगिक संस्थानों में ऐसे बच्चों को कार्य करते हुऐ देखा जाता है। जो अपना कार्य तो बड़ी कुशलता से करते है परन्तु शोषण के विरुद्ध संगठित होना या आवाज उठाना इन बेचारों के बस की बात नहीं है। भारत 2000 नामक पुस्तक के आकड़े बताते है कि भारत के सकल राष्ट्रीय उत्पाद में श्रमिक वर्ग करीब 20 प्रतिशत योगदान देता है। जिसमें से लगभग 7 प्रतिशत योगदान बाल-मजदूरों का होता है।

यह शर्मसार सच्चाई है संसार में सबसे अधिक बाल-श्रमिक हिन्दूस्तान में है। सरकारी आकड़े के मुताबिक लगभग 11 करोड़ 10 लाख से भी ज्यादा बाल-श्रमिक है इसमें खेतीहर मजदूर, कल-कारखाने में, अनेक प्रकार के लघु कुटीर उद्योगों, पत्थर खदानों, होटलो, चाय की दुकानों और दूसरों के घरों पर कार्य कर रहे है। अनेक ऐसे खतरनाक या जोखिम भरे उद्योग/व्यवसाय है जिनमें काफी बड़ी संख्या में बाल-श्रमिक काम कर रहे हैं। जैसे-शिव काशी आतिशबाजी (तमिलनाडु), काँच एवं चूँड़ी उद्योग (फिरोजाबाद, उ. प्र.), रत्न पॉलिश उद्योग (सूरत, गुजरात) पीतल के बर्तन व कलात्मक वस्तु निर्माण (मुरादाबाद), हस्त-निर्मित कालीन उद्योग (अलीगढ़, उ. प्र.) स्लेट उद्योग (मन्दसौर, म. प्र.) आदि सभी जगह शारीरिक एवं मानसिक कोमलता वाले बाल-श्रमिक कार्य करते देखे जाते हैं।

उक्त स्वरुप के अलावा बाल-मजदूरी का एक अन्य पहलू है जो

* व्याख्याता (समाजशास्त्र) राजकीय कला महाविद्यालय, सीकर (राज.) भारत

सामान्यत: बाल-मजदूरों के जिक्र से अछूता रह जाता है। वह है बाल मजदूरी बाल तस्करी का। हर वर्ष देश से पचास हजार के लगभग बच्चे लापता हो जाते हैं। ये गुमशुदा बच्चे बाल अनैतिक व्यापार, बंधुआ मजदूरी, जबरन भीख मंगवाना, मानव अंगों की तस्करी के अलावा लाखों बच्चों को बहला फुसलाकर माता-पिता को लालच देकर अथवा बाल-व्यापार के जरिए एक राज्य से दूसरे राज्यों में खरीदा और बेचा जाता है। संवेदनशीलता की कमी और मनुष्य की स्वार्थी प्रवृत्ति के कारण इस तरह के अपराध बढ़ रहे है। बाजारवाद इतना हावी हो गया है कि बच्चे भी वस्तु बन गए है।

भारत में यौन शोषण का कारोबार तथा जबरन श्रम के उद्देश्य बच्चों की तस्करी का कार्य देश में ही नहीं बल्कि देश से बाहर भी होता है। बच्चे की तस्करी, बच्चों की बिक्री, बलात एवं अनिवार्य श्रम, बाल वैश्यावृत्ति, बाल श्रमिकों से अश्लील फिल्मों में काम कराना, नशीली दवाओं की बिक्री आदि कार्यों हेतू बच्चे खरीदे और बेचे जाते हैं।

बाल-श्रम के अनेक कारणों में प्रमुखत: गरीबी, अशिक्षा, अज्ञानता, संयुक्त परिवार, रुढ़वादिता, क्षेत्रीय विविधता, प्रवास (प्रवर्जन), परम्परागत व्यवसाय अनैतिक व्यापार, नशीली दवाओं की बिक्री हेतू खरीदे और बेचे जाते है ऐसे बाल-श्रम के अनेक कारण है।

बाल-श्रम के परिणाम-

1. उद्योग जनित स्वास्थ्य समस्याऐ-

क्र.	व्यवसाय	बीमारी/असमर्थता
1.	माचिस एवं पटाखा उद्योग	श्वास के रोग अंगों का जलवा मांसपेशियों का क्षतिगस्त होना
2.	पत्थर खदानों अथवा स्लेट उद्योग	श्वास लेने हेतू अनुकूल वातावरण न होने से दम घुटने में असमय मृत्यु
3.	कालीन उद्योग	जहरीले कलर, रसायन, फाइवर रेशे, धूल से फेफडे की बीमारी
4.	काँच उद्योग	ज्यादा तापमान से प्रदुषित वातावरण में आयु क्षीण होने की संभावना
5.	बीड़ी उद्योग	सिरदर्द, थकान, आँख, नाक, गले एवं श्वास लेने की समस्या
6.	ताला उद्योग	अस्थमा, सिरदर्द, एसिड से जलना, ट्यूमर,क्षयरोग आदि होना
7.	ढ़ाबों पर काम करना	थकान, अत्यधिक थकान होने के कारण नशीले पदार्थो की ओर अग्रसर होना
8.	बैलून उद्योग	न्यूमोनिया एवं हृदय रोग की संभावना

2. मानसिक व शारीरिक यंत्रणा से बच्चों का विकास अवरुद्ध होना- बाल-श्रमिकों के साथ दुर्व्यवहार के कई रुप सामने आते है। उन्हें डराना, पिटाई करना, गलत कार्यों करने हेतू बाध्य करने जैसे अनेकों कार्य करवाये जाते है जिसमें-बलात्कार, बाल वैश्यावृत्ति एवं गंभीर बीमारी का शिकार साथ ही नशीले पदार्थों की तस्करी में लगाये गये बच्चों में 75 प्रतिशत बच्चे खुद इन नशीले पदार्थों का सेवन करने लगते हैं।

3. देश के विकास में बाधा - किसी भी देश के विकास में मानवीय और प्राकृतिक संसाधनों की आवश्यकता होती है। मानवीय संसाधन स्वस्थ प्रशिक्षित नहीं होगा तो विकास प्रभावित होगा। ऐसे बाल-श्रमिक जब देश के भाविक नागरीक होगे तब वे स्वयं अपने व अपने परिवार के लिए अर्थपार्जन में असमर्थ होंगे।

4. वयस्क व्यक्तियों के रोजगार की समस्या - बाल-श्रम का एक गंभीर दुष्परिणाम यह है कि नियोक्ता उद्यमिता को बाल-श्रम सस्ते दामों पर उपलब्ध हो जाते हैं। अत: वयस्क श्रमिकों को काम कम मिलता है।

5. श्रम संगठनों की निष्क्रियता - श्रम संगठन श्रमिकों के अधिकार वेतन सुविधाओं आदि के हक के लिए काम करते हैं। लेकिन यह तभी कारगर है जब उद्यम में श्रमिकों का नियोजन द्धारा पंजीकरण हो, वह प्रशिक्षित हो। बाल-श्रमिकों को अवैधानिक तरीके से रखा जाता है इनका पंजीकरण नहीं होता है। ऐसी स्थिति में श्रम संगठन कहीं न कहीं निष्क्रिय हो जाते है।

उक्त विवरण से स्पष्ट होता है कि बाल-श्रमिक के दुष्परिणाम व्यक्तिगत ही नहीं होते बल्कि राष्ट्र के हित के विरुद्ध भी है। अतएव बाल-श्रम का उन्मूलन आवश्यक है।

संविधान की धारा 24 के अनुसार 14 वर्ष से कम उम्र के किसी भी बच्चे का कारखाना अथवा ऐसे किसी काम में नहीं लगाया जा सकता जो जोखिम भरा हो। संविधान की धारा 39 में बच्चों के षोषण के विरुद्ध संरक्षण की व्यवस्था की गई हैं।

इसके अतिरिक्त बागान श्रमिक अधिनियम बना जिसके अनुसार चाय-कॉफी और रबर के बागानों में 12 वर्ष से कम आयु के बच्चों से काम नहीं लिया जा सकता। 1952 में बने खदान अधिनियम के अनुसार 16 वर्ष से कम किशोर से खदानों में काम लेने के लिए डाक्टरी प्रमाण-पत्र आवश्यक हो गया। मोटर परिवहन श्रमिक अधिनियम 1961 में 15 वर्ष से कम आयु के बच्चों को किसी भी रुप में कार्य करने पर प्रतिबंध लगा दिया गया। 1966 के बीड़ी और सिगार अधिनियम तथा राज्यों में दुकान तथा व्यापारिक प्रतिष्ठान अधिनियम पारित किया गया जिसके तहत् बीड़ी उद्योग, कालीन उद्योग, दियासलाई उद्योग, कपड़ा छपाई एवं रंगाई चमड़ा रेगजिन तथा अभ्रक उद्योग में 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों के काम करने पर पूर्ण प्रतिबंध लगा दिया 1987 में राष्ट्रीय बाल-श्रम नीति बनाई गई जिसके अन्तर्गत बाल-श्रमिकों को शोषण से बचाने, उनकी शिक्षा, स्वास्थ, मनोरंजन तथा सामान्य विकास कार्यक्रमों पर बल की व्यवस्था की गई।

भारत के उच्चत्तम न्यायालय ने रिट याचिका में (सिविल संख्या 465/1986 में) अपने अगस्त 2000 के फैसले में कुछ महत्वपूर्ण निर्देश दिए है जैसे-खतरनाक उद्योग धंधों में लगे बच्चों से काम कराने वाले मालिकों पर 20 हजार रुपये तक मुआवजे का भुगतान, बाल-मजदूरी पुनर्वास और कल्याण कोष की स्थापना खतरनाक उद्योग-धंधे से हटाए गए बच्चों के स्थान पर उनके परिवार के एक प्रौढ़ सदस्य को वैकल्पिक रोजगार देना अथवा प्रत्येक बच्चे के लिए 50 हजार रुपये तक की राशि का भुगतान, काम से हटाए गए बच्चों के लिए उपर्युक्त संस्थाओं में शिक्षा की व्यवस्था करना आदि शामिल है। सरकार ने उच्चतम न्यायालय के निर्देशों को प्रभावी बनाने के लिए पहल के रुप में अनेक कदम उठाए।

सरकारी नीतियों के अतिरिक्त विभिन्न स्वयंसेवी संस्थाओं द्वारा भी बाल-श्रम उन्मुलन के प्रयत्न किये जा रहे है। इस तमाम उपायों के बावजूद समस्या यथावत है अक्टुबर 2000 में यूनिसेफ के सम्मेलन में मानव अधिकार आयोग के अध्यक्ष और पूर्व मुख्य न्यायाधीश जे. एस. वर्मा ने बड़ी सटीक टिप्पणी की है-'भारत के कानून ने बच्चों के विकास के अच्छे प्रावधान किए है लेकिन राजनैतिक और सामाजिक इच्छा शक्ति की कमी के कारण इसे लागू करने में परेशानियॉ आती है। तुतलाते बोल, मासूम हँसी, कागज की कश्ती और हरेक को मुग्ध कर देने वाला मासूम बचपन आज उदास आँखें लिए आने वाले कल के प्रति सशंकित है और भूखे पेट ढेरों जानलेवा बिमारियों से जूझ रहा है। वक्त का तकाजा यह है कि बचपन की नाजुक हथेलियों को थामने का प्रयास ईमानदारी पूर्वक किया जाये, क्योंकि बचपन कभी दोबारा लौटता नहीं।

बाल श्रम संबंधी कानून - बाल-श्रम एक सामाजिक बुराई है। इसे रोकने के लिए बच्चों के लिए उनकी विशेष परिस्थितियों के हिसाब से संवैधानिक संरक्षण प्रदान किया गया है।

1. संविधान के अनुच्छेद 23 में किसी भी बच्चे से बलपूर्वक श्रम कराने, बेगारी कराने का मनाही है यह दण्डनीय अपराध है।
2. अनुच्छेद 24 के अनुसार 14 वर्ष की आयु से कम के बच्चों को किसी भी कारखाना, खान या अन्य खतरनाक व्यवसाय में लगाने पर प्रतिबंध लगाया है।
3. अनुच्छेद 39 (च) में यह उल्लेख मिलता है कि बालकों को स्वतंत्र और गरिमामय वातावरण में विकास, स्वास्थ्य विकास के अवसर और सुविधाए दी जाए और बालको तथा अल्प वयस्क परित्याग से रक्षा की जाएगी।
4. संविधान के अनुच्छेद 39 (3) में स्पष्ट उल्लेख मिलता है कि सरकार द्वारा नीति का इस प्रकार संचालन किया जाना सुनिश्चित हो कि बालकों की सुकुमार अवस्था का दुरुपयोग न हो और आर्थिक आवश्यकताओं से मजबूर होकर ऐसे रोजगार में न जाना पड़े जो उनकी आयु व क्षमता के अनुकूल न हो।

बाल-श्रम उन्मूलन के लिए विशेष रुप से खतरनाक उद्योगों में नीतियों और कार्यक्रमों को निर्धारित करने के लिए 1986 में नीतिगत कार्यक्रम योजना तैयार की थी इस नीति के प्रमुख बिंदु इस प्रकार है -

1. वैधानिक कार्य योजना - बाल-श्रम उन्मुलन संबंधी विधेयक अनिवार्य रुप से लागू करना।
2. बाल-श्रमिकों के सर्वांगीण विकास हेतू योजनाऐं लागू करना।
3. परियोजना आधारित कार्य योजना - इस परियोजना के अन्तर्गत बाल-श्रमिकों को औपचारिक अनौपचारिक शिक्षा का प्रावधान। बाल-श्रमिकों के अभिभावकों के आर्थिक सशक्तिकरण के लिए स्वसहायता समूह का संचालन, बच्चों के लिए पौष्टिक आहार की व्यवस्था, बच्चों के लिए नियमित स्वास्थ्य जांच। इस तरह इस परियोजना का मुख्य उद्देश्य बाल-श्रमिकों को समाज की मुख्य धारा से जोड़ना है।
4. 20 नवम्बर 1989 को संयुक्त राष्ट्र बाल अधिकार समझौता पारित हुआ। बाल-श्रम निषेध के संदर्भ में अनुच्छेद 32 में यह स्पष्ट किया गया है कि बच्चों को आर्थिक व लैंगिक शोषण से मुक्त रखा जाए। किसी भी बच्चे को काम करने के लिए बाध्य न करे बच्चों के मुक्त व सुरक्षित वातावरण उपलब्ध करना सुनिश्चित करें। 1994 में एक उच्च अधिकार प्राप्त निकाय राष्ट्रीय बाल-श्रमिक उन्मूलन प्राधिकरण का गठन किया गया। अत: इनके बगैर बच्चों की प्रतिभा विकसित नहीं हो सकती। 'प्रतिभा के मायने है, बुद्धि में नई-नई कोपले फूटते रहना। नई कल्पना, नया उत्साह, नई खोज, नई स्फूर्ति ये सब प्रतिभा के लक्षण है।'-विनोबा भावे

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. समाज शास्त्रीय निबंध - डॉ. माधवी लता दुबे, म. प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल।
2. भारतीय सामाजिक ढ़ांचा तथा समस्याएं-जितेन्द्र शुक्ला, बेस्ट फ्रेण्ड पब्लिकेशन्स, खजूरी बाजार, इन्दौर।
3. समूहिक परिचर्चा में प्रभावशाली कैसे बने-रजत अरूयर, अरिहंत पब्लिकेशन्स प्रा. लि., मेरठ।

****

संस्कृतियों और समुदाय पर वैश्वीकरण का प्रभाव

डॉ. लक्ष्मी गुप्ता *

प्रस्तावना – वैश्वीकरण वर्तमान में वैश्विक स्तर पर क्रियाशील एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया है जिसका प्रमुख उद्देश्य विश्व के सभी समाजों और संस्कृतियों को एक साथ मिला कर संयुक्त वैश्विक संस्कृति का निर्माण करना है। वैश्वीकरण समस्त विश्व में क्रियाशील है और इसको सकारात्मक रूप से देखा जा रहा है। वर्तमान वैश्विक सामाजिक परिदृश्य वैश्वीकरण से प्रभावित है। विश्व का प्रत्येक समाज वैश्वीकरण से जुड़कर वैश्विक समाज की मुख्य धारा के साथ जुड़ना चाहता है और आधुनिक प्रवृत्तियों को अपनाना चाहता है। भारतीय समाज भी विश्व के अन्य समाजों की भांति वैश्वीकरण का गवाह बन रहा है। भारत में मल्टीनेशनल कंपनियों का सफलता पूर्वक संचालन इस तथ्य को स्पष्ट करता है की भारतीय समाज में वैश्वीकरण तेज गति के साथ अपने पैर पसार रहा है। आर्थिक विकास की दृष्टि से भारतीय समाज पर वैश्वीकरण के प्रभाव को अच्छा माना जा सकता है, परंतु भारतीय समाज में इसके तेज विस्तार और प्रभाव ने भारतीय सामुदायिक जीवन और भारत की संस्कृति के सम्मुख एक खतरा उत्पन्न कर दिया है, और कालांतर में इसके अस्तित्व पर प्रश्नचिन्ह अंकित कर दिया है।

व्यक्ति और समुदाय – समाज के प्रत्येक व्यक्ति का संबंध अनिवार्य रूप से किसी न किसी समुदाय से होता है। समुदाय उसके जन्म, अस्तित्व और मृत्यु का गवाह बनता है। व्यक्ति और समुदाय का एक दूसरे के साथ घनिष्ठ संबंध है और दोनों इस अर्थ में पूरक हैं कि व्यक्तियों के समूह से समुदाय सार्थक अर्थ प्राप्त करता है, और समुदाय में रहते हुए व्यक्ति मनोवृत्तियों को अपने अंदर विकसित करता है। समुदाय मनुष्य के व्यक्तित्व निर्माण में विशिष्ट योगदान देता है और उसके अंदर सामाजिकता उत्पन्न करता है। सामुदायिक जीवन उसको न केवल स्थानीयता से जोड़ता है, वल्कि उसके अंदर सामाजिकता उत्पन्न करता है। सामुदायिक जीवन के दौरान वह विभिन्न बातों को सीखता है जो कालांतर में उसके लिए उपयोगी सिद्ध होती हैं। सामुदायिक जीवन व्यक्ति के व्यक्तित्व निर्माण में प्रमुख कारक है क्योंकि जिस प्रकार का व्यक्ति का सामुदायिक जीवन होता है, उसका व्यक्तित्व भी उसी के अनुरूप बन जाता है।

समुदाय और संस्कृति – संस्कृति व्यक्ति की पहचान होती है जो समाज में उसके महत्व को निर्धारित करती है। समुदाय और संस्कृति का एक दूसरे के साथ घनिष्ठ संबंध है। प्रत्येक समुदाय की पृथक संस्कृति होती है जिसका आत्मसातीकरण करना समुदाय के प्रत्येक सदस्य के लिए आवश्यक होता है। संस्कृति समुदाय के लिए आदर्श होती है और यह प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से समुदाय के सदस्यों के कार्य एवं व्यवहार को नियंत्रित और नियमित करती है। संस्कृति को विभिन्न परिप्रेक्ष्य में समय-समय पर परिभाषित किया जाता रहा है- यथा, समाजशास्त्रीय परिप्रेक्ष्य, मानवशास्त्रीय परिप्रेक्ष्य, साहित्यिक परिप्रेक्ष्य आदि।

शाब्दिक रूप से 'संस्कृति' शब्द की 'उत्पत्ति संस्कृत' से हुई है।संस्कृत का अर्थ होता है कृपरिष्कृत।अत: संस्कृति का सम्बन्ध ऐसे तत्वों से है जो व्यक्ति का परिष्कार कर सके।एक अन्य व्याख्या के अनुसार 'संस्कृति' शब्द संस्कार से बना है।संस्कार का अर्थ होता है कृशुद्धि की प्रक्रिया।यहाँ शुद्धि का अर्थ सामाजिकता से है।आशय यह है कि व्यक्ति एक सामाजिक प्राणी बनाने में जितने भी तत्वों का योगदान होता है।उन सभी तत्वों की व्याख्या का नाम ही संस्कृति है।यह मानव के विचारों एवं व्यवहारों के प्रतिमान को इंगित करती है।

प्रत्येक परिप्रेक्ष्य संस्कृति को सुंदरता, व्यवस्था और सभ्यता के सन्दर्भ में विश्लेषित करता है। आलेख का शीर्षक और विषय संस्कृति के समाजशास्त्रीय और मानवशास्त्रीय परिप्रेक्ष्य से सम्बंधित है। 'संस्कृति लोगों के जीने का ढंग है' (मजूमदार और मैदान), 'संस्कृति पर्यावरण का मानव-निर्मित भाग है' (हरस्कोविट्स), 'संस्कृति एक समग्र जटिलता है जिसमें ज्ञान, विश्वास, कला, आचार, कानून, प्रथा, आदतों और क्षमताओं का समावेश है जिनको मनुष्य समाज के सदस्य के रूप में प्राप्त करता है।' संक्षेप में, संस्कृति सीखे हुए वे प्रतिमान हैं जो मानव को आदर्शों की ओर निरंतर अग्रसर करते रहते हैं और जो समाज में मानव का विशिष्ट स्थान सुनिश्चित करते हैं।

समाज और समुदाय – जो तत्व समुदाय का निर्माण करते हैं, उनमें प्रमुख हैं- निश्चित भौगोलिक क्षेत्र, भौगोलिक क्षेत्र का विशिष्ट नाम, लोगों का सामान्य निवास, हम की भावना आदि। यहाँ यह स्पष्ट करना आवश्यक है कि समाजशात्रीय सन्दर्भ में समाज और समुदाय एक दूसरे से पृथक हैं। समाज अमूर्त व्यवस्था है जबकि समुदाय मूर्त। एक समाज अनेकों छोटे-बड़े समुदायों से निर्मित होता है जिनकी अपनी-अपनी अलग विशेषताएं होती हैं। इसका प्रत्यक्षत: यह तात्पर्य है कि समाज में जितने समुदाय होते हैं, उतनी ही संस्कृतियां होती हैं।

समाज के अंतर्गत संबंध ही हैं जो समाज का ताना-बाना बुनते हैं। समाज के अभाव में हम भावनाओं का प्रदर्शन नहीं कर सकते । व्यक्तित्व का विकास समाज के अंतर्गत होत है। आत्म प्रकाशन प्रत्येक व्यक्ति को संपूर्णता प्रदान करता है। समाज संबंधों को नैतिकता प्रदान करता है। समाज व्यक्ति को खुश होने की वजह प्रदान करता है, यहां तक की बहुत बार व्यक्ति समाज से प्रेरित होकर ही समाज में अपना स्थान बनाने के लिए, समाज का ध्यान आकृष्ट करने के लिए अपने व्यक्तिगत समारोह पर अनावश्यक ० भी करता है।

संस्कृति समुदाय और समाज का प्रतिबिंब होती है जिसके माध्यम से

*व्याख्याता (समाजशास्त्र) राजकीय महाविद्यालय, धौलपुर (राज.) भारत

किसी भी समुदाय और समाज के बारे में समझा और जाना जा सकता है। अन्य शब्दों में, समुदाय, समाज का एक अंग है, और यह किसी एक अथवा अनेकों जातियों, धर्मों, व्यवसायों, कलाओं, विचारधाराओं आदि का समूह हो सकता है। इसके विपरीत, समाज अनेकों समुदायों से निर्मित एक मूर्त व्यवस्था है। एक समुदाय सहयोग, समरसता, सम्मान और समर्पण की आधार पर निर्मित होना चाहिए। उच्च सामाजिक और नैतिक मानकों का पालन करना चाहिए और सामाजिक न्याय, स्वतंत्रता और समानता होना चाहिए। एक समुदाय को अपने सदस्यों की जरूरतों को पहचानने, सम्मान करने और समर्थन करने का क्षमता होनी चाहिए।और सभी विकास के कार्यो को प्रोत्साहित करना चाहिए।

वैश्वीकरणरू बहुआयामी सामाजिक-प्रक्रिया - वैश्वीकरण एक बहुआयामी अवधारणा है। इसके राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक अवतार हैं और इनके बीच ठीक-ठीक भेद किया जाना चाहिए। यह मान लेना गलत है कि वैश्वीकरण केवल आर्थिक परिघटना है। वैश्वीकरण एक ऐसे समाज की परिकल्पना करता है जिसमें किसी भी प्रकार की कोई सीमा ना हो। अत: वैश्वीकरण सम्पूर्ण विश्व को एक वैश्विक गांव के रूप में देखता है। यह विभिन्न देशों के लोगों, कंपनियों और सरकारों के मध्य वार्ता, एकता एवं परस्पर निर्भरता की प्रक्रिया को भी संदर्भित करता है। इसमें सामाजिक आर्थिक राजनीतिक और सांस्कृतिक अभिव्यक्ति भी शामिल है। यह विभिन्न उत्पादों, विचारों, दृष्टिकोणों, विभिन्न सांस्कृतिक पहलुओं आदि के आपसी विनिमय के परिणाम से उत्पन्न एक विचार है। इसके कारण विश्व में विभिन्न लोगों, क्षेत्रों एवं देशों के मध्य अन्त:निर्भरता में भी बढ़ोतरी होती है।

वैश्वीकरण की वर्तमान प्रासंगिकता - इस तथ्य से इंकार नहीं किया जा सकता कि वर्तमान में वैश्विक स्तर पर वैश्वीकरण की प्रासंगिकता है। वैश्वीकरण की प्रक्रिया के परिणामस्वरूप विश्व के विभिन्न देश सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक आदि के आधार पर एक-दूसरे से जुड़ रहे हैं, तथा, जैसा डेविड हेल्ड का विचार है, लोगों में परस्पर निर्भरता बढ़ रही है क्योंकि सामाजिक और आर्थिक संबंधों ने दुनिया को बाँध दिया है।

वर्तमान में, विश्व में वैश्वीकरण के प्रति कई दृष्टिकोण हैं, जो इसके स्वरुप,परिणाम और प्रभाव का विशद् विवेचना करते हैं। नव-मार्क्सवादी जो ये मानते हैं कि वैश्वीकरण साम्राज्यवाद का एक नया रूप है और यह उदारवादी संकीर्ण नीतियों का विस्तार है,भूमंडलीकरण की उत्पत्ति और स्वरुप के बारे में एक भिन्न दृष्टिकोण प्रस्तुत करते हैं।

उदारवादी आर्थिक संस्थायें (विश्व बैंक,आईएमएफ आदि) किसी देश को ऋण तभी देते हैं जब वह उसके शर्तो को मान ले। 1991 में अपनाया गया भारतीय आर्थिक सुधार इसका उदाहरण है। 1982 में मैक्सिको को भी इसी अनुभव से गुजरना पड़ा था। भारतीय अर्थशास्त्री अमर्त्य सेन वैश्वीकरण को ऐतिहासिक प्रक्रिया मानते हुए कहते हैं कि यह अनिवार्य रूप से पश्चिमी नहीं है। साथ ही ये इसके सुधार की आवश्यकता पर बल देते हैं। वहीं जगदीश भगवती मुक्त व्यापार के समर्थक हैं। इनका मानना है कि मुक्त व्यापार ने अर्थव्यवस्था के विकास में व्यापक रूप से मदद की है।

वैश्वीकरण से चीन और भारत जैसे कई विकासशील देशों ने फायदा उठाया है तो वही अफ्रीका के अल्पविकसित देशों को खामियाजा भी भुगतना पड़ा है। 1991 में आर्थिक सुधार को अपनाकर भारतीय अर्थव्यवस्था में कई सुधार किये गए और बाधाओं को हटाकर अर्थव्यवस्था को विश्व के लिए खोला गया। यह सुधार अपने में तीन अवयवों को समेटा हुआ है- वैश्वीकरण, उदारीकरण और निजीकरण।

अर्थव्यवस्था के विकास के दर को बढ़ाना, अतीत में प्राप्त लाभों का समायोजन करना, उत्पादन इकाइयों की प्रतिस्पर्धात्मक क्षमता को बढ़ाना इसके मुख्य उद्देश्य रहे हैं। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए कई प्रमुख परिवर्तन किये गए, जैसे कि लाइसेंस व्यवस्था की समाप्ति, निजी निवेश के लिए एमएनसी को प्रोत्साहन, विदेशी विनिमय पर लगी रुकावटों को समाप्त करना, कीमत तथा वितरण संबंधी सारे रुकावटों को हटाना और एमआरटीपी अधिनियम को समाप्त करना आदि।

वैश्वीकरण के सकारात्मक प्रभाव:

1. मध्यम वर्ग का उदय।
2. सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी का विकास।
3. नई तकनीकों जैसे लैपटॉप, एयर कंडीशनर आदि का प्रचलन।
4. उपभोक्तावाद में वृद्धि।
5. बाजार केन्द्रित वस्तुओं के उत्पाद में वृद्धि और उनका प्रचलन।
6. नए नए उद्योग धन्धों जैसे का विकास
7. एयरटेल,एचडीएफसी ,फ्लिपकार्ट, पेटीएम का उदय।
8. शिक्षा तथा रोजगार के अवसरों में वृद्धि।
9. डिजिटल लेनदेन, सोशल मीडिया, ई कॉमर्स आदि क्षेत्रों में प्रगति।
10. आवागमन, संचार, सूचना के साधन बढ़ जाने से भौगोलिक दूरियों में कमी।
11. आधुनिक जीवनशैली और आर्थिक स्तर में वृद्धि।
12. वैश्विक उत्पादों तक आसान पहुँच।
13. लाइसेंस प्रणाली से मुक्ति।
14. विदेशी प्रौद्योगिकी का सुगमतापूर्वक आयात।

वैश्वीकरण के नकारात्मक प्रभाव:

1. भारतीय उद्योग धंधों का नष्ट होना।
2. कुटीर उद्योगों का नष्ट होना।
3. भारतीय वस्तुओं और उत्पादों के प्रति भारतीय उपभोक्ताओं में उदासीनता।
4. आयात की अधिकता एवं निर्यात में कमी।
5. सुरक्षा और सैन्य उपकरणों के लिए विदेशों पर निर्भरता।
6. गरीबी और बेरोजगारी में वृद्धि।
7. डॉलर के मुकाबले रुपये के मूल्य में गिरावट।
8. भारतीय विशिष्ट प्रतिभाओं जैसे डॉक्टरों, इंजीनियरों और वैज्ञानिकों का विदेशों में पलायन।
9. मौद्रिक डिजिटलाइजेशन।
10. बाजार की अस्थिरता।
11. अपराध और सांस्कृतिक प्रदूषण में वृद्धि।

वैश्वीकरण और इसके विभिन्न प्रभावों से संबंधित साहित्य का पुनरावलोकन

1. 1990 के दशक से प्रारम्भ वैश्वीकरण के कारण भारतीय समाज, समुदाय और संस्कृति में अनेकों महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए हैं जिनके परिणामस्वरूप जहाँ एक ओर भारतीय समाज विश्व के अनेकों विकसित देशों की संस्कृति को आत्मसात कर रहा है, तो वहीं, दूसरी ओर अपनी मौलिक सांस्कृतिक विशेषताओं को खो रहा है। नगरीकरण ने भारतीय संस्कृति में अनेकों महत्वपूर्ण परिवर्तन किये हैं जिसके प्रभाव से अनेकों ग्रामीण प्रतिभाएं नगरों की ओर पलायन कर रही हैं। आर्थिक नीतियों ने भारतीय अर्थव्यवस्था की संरचना को पुनर्निर्मित किया है जिसके

परिणामस्वरूप दिन-प्रतिदिन लोगों का आर्थिक जीवन स्तर बढ़ रहा है।[1] (वाइ गुरप्पा नायडू, 2006)

2. 21 वीं शताब्दी में वैश्वीकरण उतनी ही महत्वपूर्ण अवधारणा है जितनी 20 वीं शताब्दी में आधुनिकीकरण आदि थीं। विश्व की एक वैश्विक गाँव के रूप में कल्पना एक दिवास्वप्न था, परंतु भूतपूर्व प्रधानमंत्री श्री राजीव गांधी और डॉ. मन मोहन सिंह जैसे कुछ लोगों ने 20वीं सदी के आखिरी दशक में इस प्रक्रिया को सुविधाजनक बनाने के लिए नई आर्थिक नीतियों को लागू करने में अपना सर्वश्रेष्ठ प्रयास किया। इसके परिणामस्वरूप वैश्वीकरण का सपना हकीकत में बदला। वैश्वीकरण ने वैश्विक स्तर पर समस्त समाजों में अनेकों अप्रत्याशित परिवर्तन किये हैं। भारतीय संस्कृति, समाज और समुदाय पर भी वैश्वीकरण का व्यापक प्रभाव पड़ा है। वैश्वीकरण एक ओर भारतीय समाज को वैश्विक आधुनिक प्रवृत्तियों से जोड़कर इसको प्रगतिशील बना रहा है, परंतु, साथ ही इसके प्रभाव के परिणामस्वरूप भारतीय समाज और समुदाय अनेकों नकारात्मक प्रवृत्तियों से जुड़ रहा है। इस समय ऐसा लगता है कि हम इतिहास के चौराहे पर उथल-पुथल का सामना कर रहे हैं, जहां पश्चिमीकरण, आधुनिकता, विकास आदि हमको अपनी ओर अलग-अलग तरीके से खींच रहे हैं। वैश्वीकरण के परिणामस्वरूप भारतीय संस्कृति का मूलरूप बदल रहा है और इसके सकारात्मक और नकारात्मक परिणाम सामने आने लगे हैं।[2] (के.विपिन एवं विपिन शर्मा, 2011)

3. एक वैश्वीकृत समाज वह है जिसमें राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और सामाजिक घटनाएं दूसरे समाजों की घटनाओं के परिणामस्वरूप अधिक से अधिक व्यापक और अधिक से अधिक गहराई में बदल जाती हैं। वैश्वीकरण का तात्पर्य समस्त विश्व के समाजों के एकीकरण से है। वैश्वीकरण अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के वैश्विक एकीकरण, निवेश, सूचना प्रौद्योगिकी (आईटी), और संस्कृतियों का प्रतिनिधित्व करता है। वैश्वीकरण उन अनेकों सरकारी नीतियों से प्रेरित है जो गरीब देशों में विकास को बढ़ावा देने और मानकों को बढ़ाने हेतु निर्मित की जाती हैं। यह टिप्पणी करना गलत नहीं होगा कि इन नीतियों के परिणामस्वरूप निर्मित अंतर्राष्ट्रीय मुक्त बाजार ने मुख्य रूप से पश्चिमी समाजों में बहुराष्ट्रीय निगमों को लाभ पहुँचाया है और छोटे व्यवसायों को नुकसान पहुँचाया है। वैश्वीकरण वैश्विक आबादी के बीच अधिक अंतर्संबंध का प्रतिनिधित्व करता है। सांस्कृतिक रूप से, वैश्वीकरण संस्कृतियों के बीच विचारों और मूल्यों के आदान-प्रदान और यहां तक कि एकल विश्व संस्कृति के विकास की प्रवृत्ति का प्रतिनिधित्व करता है। राजनीतिक रूप से वैश्वीकरण ने देशों की राजनीतिक गतिविधियों को वैश्विक स्तर पर स्थानांतरित कर दिया है।[3]

4. वैश्वीकरण का वैश्विक विकास की दृष्टि से व्यापक महत्व है। इसने जीवन के प्रत्येक क्षेत्र को प्रभावित किया है। वैश्वीकरण के प्रभाव से न केवल भारत में, बल्कि विश्व स्तर पर विचारों और विचारों के आदान-प्रदान के परिणामस्वरूप लोगों की जीवनशैली और जीवन स्तर में बड़ा बदलाव आया है। भारतीय संस्कृति इस परिवर्तन प्रक्रिया में कोई बाधा नहीं है। वैश्वीकरण के उद्‌भव के साथ हमारी गहरी जड़ें जमा चुकी परंपराओं और रीति-रिवाजों की पकड़ ढीली हो गई है। भारत की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि समृद्ध है और इसकी संस्कृति का गौरव पूरे विश्व में प्रसिद्ध है। वैश्वीकरण ने न केवल भारत में पश्चिमीकरण को जन्म दिया है, बल्कि इसके विपरीत भारतीय संस्कृति ने भी विश्व स्तर पर अपना प्रभाव फैलाया है। किसी भी भौगोलिक क्षेत्र की संस्कृति और परंपराएं उसकी विशिष्टता के संबंध में एक विशेष महत्व रखती हैं और यही एक भौगोलिक सीमा के भीतर की आबादी को दूसरे से अलग करने वाला कारक है।[4] (हितेश महापात्र, 2017)

5. वैश्वीकरण का भारत और इसकी संस्कृति, अर्थव्यवस्था, लिंग भूमिकाएँ, धर्म और भाषा, सामाजिक संरचनाओं आदि पर गहरा प्रभाव पड़ा है। 1990 के दशक की शुरुआत में भारतीय अर्थव्यवस्था का उदारीकरण हुआ जिसने भारतीय कंपनियों को नए बाजारों तक पहुंचने और बेहतर प्रौद्योगिकियों, उत्पादन से लाभ उठाने में सक्षम बनाया। इसका भारतीय आर्थिक विकास पर सकारात्मक प्रभाव पड़ा और इससे देश की उत्पादकता और दक्षता बढ़ाने में मदद मिली। संस्कृति के संदर्भ में, वैश्वीकरण ने भारत को अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर विश्व के अन्य समाजों और संस्कृतियों से जोड़ा जिसके परिणामस्वरूप पारंपरिक भारतीय संस्कृति अत्यधिक प्रभावित हुई है। वैश्वीकरण के कारण आर्थिक विकास, रोजगार के अवसर, लोगों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति में बदलाव, नई सामाजिक संरचनाओं का उदय, प्रौद्योगिकी और सूचना तक पहुंच, बुनियादी ढांचे में सुधार आदि दृष्टिगोचर हैं। लैंगिक भूमिकाओं और पहचान के संदर्भ में, वैश्वीकरण का विशिष्ट योगदान है क्योंकि वैश्वीकरण ने भारत में महिलाओं के लिए नए अवसर प्रदान किये हैं और साथ ही, इससे भारत में पारंपरिक लैंगिक भूमिकाओं में भी बदलाव आया है। अंत में, वैश्वीकरण के कारण धार्मिक सहिष्णुता और बहुलवाद में वृद्धि हुई है।[5]

6. वैश्वीकरण अब पहले की तरह जटिल शब्द नहीं रह गया है। इसका सबसे बड़ा कारण यह है कि अब वैश्वीकरण को उसके आर्थिक आयामों के अलावा अन्य आयामों के आधार पर भी व्याख्यायित किया जाने लगा है जिनमें राजनीतिक, सामाजिक, साँस्कृतिक और साहित्यिक आयाम प्रमुख हैं। वैश्वीकरण के प्रभावों से मानवद्जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में परिवर्तन हो रहा है। बदलाव की इस प्रक्रिया से सामाजिक और साँस्कृतिक क्षेत्र भी अछूते नहीं है। भारतीय समाज और संस्कृति के सम्बन्ध में यह बात और भी ज्यादा महत्वपूर्ण हो जाती है क्योंकि यहाँ परम्परा और आधुनिकता के बीच गजब का द्वंद मिलता है। यही कारण है कि वैश्वीकरण के प्रभावों को भारतीय समाज और समाज विश्लेषक अलग-अलग तरह से समाज के उन्नति और अवनति से जोड़कर देखते हैं।[6]

7. वैश्विक संस्कृति प्रमुखतः पश्चिमी संस्कृति है। वैश्वीकरण की प्रकृति सजातीयता लाने वाली संस्कृति है जिसका उद्देश्य है वैश्विक विविधताओं में एकरूपता स्थापित करना। भारतीय समाज, समुदाय और संस्कृति की दृष्टि से वैश्वीकरण प्रशंसनीय भी है और चुनौतीपूर्ण भी।[7] (डॉ. महेन्द्र सिंह, 2015)

8. वैश्वीकरण के सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया अत्यधिक तीव्र होगी है और वैश्विक स्तर पर सभी समाजों और देशों के लोग एक कड़ी में बंध रहे हैं। संचार के साधनों, सूचना की तकनीक व आवागमन के साधनों का विकास हुआ है। वैश्वीकरण की प्रक्रिया विश्व समाज को अंतर्राष्ट्रीय, आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक सूत्र में बाँधने का कार्य कर रही है। वैश्वीकरण ने भौगोलिक दूरियों की बाधा को समाप्त कर दिया है और दुनिया के लोगों को एक दूसरे के निकट ला दिया है। परंतु यह नहीं भूलना चाहिए कि इस प्रक्रिया ने सांस्कृतिक पहचान के संकट को उत्पन्न कर दिया है।[8] (शालिनी झा एवं तृप्ता झा, 2015)

निष्कर्ष - संस्कृति समाज और जीवन के विकास के मूल्यों की सम्यक संरचना है। यह समाज में मौजूद गुणों और उत्ताम आदर्शो के रूप का नाम है, जो उस समाज के सोचने बिचारने, कार्य करने, खाने पिने, बोलने, नृत्य,

गायन, साहित्य, वास्तु एवं कला आदि में परिलक्षित होती है। 'संस्कृति' का शाब्दिक अर्थ होता है –उत्तम या सुधरी हुई। यह किसी समाज में पाए जाने वाले उच्चत्तम मूल्यों और आदर्शो की ऐसी चेतना है जो सामाजिक प्रथावों, रीती रिवाजो ,चित्तवृत्तियों, भावनावो, मनोवृतियों, आचरण और रहन – सहन के साथ–साथ उनके द्धारा भौतिक पदार्थो को विशिष्ट रूप दिए जाने में अभिव्यक्त की जाती है।

अंग्रेजी में संस्कृति के लिए 'कल्चर' शब्द का प्रयोग किया जाता है,जो लैटिन भाषा के 'कल्ट या कल्टस' से लिया गया है, जिसका शाब्दिक अर्थ होता है –विकसित करना या परिष्कृत करना। संछेप में 'संस्कृति' अपनी वृद्धि के प्रयोग से अपने चारो ओर की प्रकृतियों और परिस्थितियों को निरंतर सुधारती और उन्नत करती रहती है। संस्कृति का अर्थ किसी समाज के विचारों और उनके रीति रिवाजों से संबंधित है तथा उस समाज के सोचने विचारने तथा कार्य करने के स्वरूप में निहित होती है।

मनुष्य एक बुद्धिजीवी प्राणी है वह अपनी बुद्धि और विवेक से अपने चारो ओर की परिस्थितियों में सुधार करता रहता है। वह अपने रितिरिवाज, अचार विचार और रहन सहन में सुधार करता रहता है जिससे मनुष्य को जंगली जानवर और पढ़ू से ऊंचा बनाता है और उन्हे सभ्य बनाता है। सभ्यता संस्कृति का अंग होती है। मनुष्य केवल भोजन से ही नहीं जीता है बल्कि शरीर के साथ मन और आत्मा भी होती है। भौतिक चीजों से शरीर की भूख तो मिट जाती है लेकिन मन और आत्मा को संतुष्टि नहीं मिलती है। इन्हे संतुष्ट करने के लिए मनुष्य अपना विकास करता है उसे संस्कृति कहते हैं।

संस्कृति एक समाज से दूसरे समाज तथा एक देश से दूसरे देश में बदलती रहती है। जैसे हमारे देश में वस्त्रों, खाने की आदतों, पारिवारिक संबंधों, धार्मिक रिति–रिवाजों में पश्चिमी सभ्यता और संस्कृति से बिल्कुल अलग हैं। संस्कृति हमे अनेक प्रकार के स्वीकृति व्योहारों के तरीकों को प्रदान करती है। कोई भी संस्कृति स्थाई नहीं होती है जैसे जैसे समय बीतता है संस्कृति भी बदलती रहती है। पुराने तरीकों में परिवर्तन हो जाता है शायद यही संस्कृति की विशेषता है।

वैश्वीकरण की वर्तमान प्रासंगिकता से इंकार नहीं किया जा सकता। इसकी प्रासंगिकता समाजशास्त्रीय दृष्टि से इस अर्थ में स्वीकार्य है कि इसने सामाजिक विविधताओं को एकीकृत कर एक ऐसे समाज का निर्माण किया है जिसमें विश्व के सभी छोटे–बड़े समाज समाहित हैं। वैश्वीकरण ने समस्त विश्व को एक बाजार का रूप दे दिया है जिसके अंतर्गत किसी क्षेत्र विशेष में मिलने वाली सुविधा या वस्तु को संसार के विभिन्न देशों के किसी भी कोने में आसानी से प्राप्त किया जा सकता है। वैश्वीकरण के परिणामस्वरूप भारतीय समाज ने पश्चिमी समाज तथा संस्कृतियों के कुछ बातों को आत्मसात् किया है, जैसे– महिलाओं की स्वतंत्रता हेतु पहल, रूढ़िवादी तत्तवों का विरोध। शिक्षा की अधिक–से–अधिक लोगों तक पहुँच सुनिश्चित हुई है। शहरीकरण, जनजागरूकता, संसाधनों की पहुँच में वृद्धि हुई है।

वैश्वीकरण के लाभ और हानि, दोनों हैं। लाभ के रूप में वस्तुओं की विविधता और वस्तु चयन हेतु एकाधिक और असीमित विकल्प होते हैं। हानि के रूप में विकसित देशों का बाजार पर प्रभुत्व होना है एवं अर्थ विकसित और अविकसित देशों के प्रति उदासीनता है। वैश्वीकरण के प्रभाव के अंतर्गत वैश्विक स्तर पर प्रत्येक व्यक्ति आवश्यकता से अधिक क्रय करता है जिससे वह अन्य लोगों की तुलना में अधिक श्रेष्ठ दिख सके। भारतीय सामाजिक दृष्टि से ऐसा करना हमको अपनी संस्कृति से अलग कर रहा है ।ऐसा सिर्फ भारत में नहीं बल्कि दूसरे देशों में भी हो रहा है। हम बाजारवाद की एक अंधी दौड़ में शामिल होते जा रहे है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. नायडू, वाइ गुरप्पा, ग्लोबलाइजेशन एंड इट्स इम्पैक्ट ऑन इंडियन सोसाइटी, दि इंडियन जर्नल ऑफ पोलिटिकल साइंस, वॉल्यूम LXVII, नंबर 1, 2006.
2. विपिन, के. एवं शर्मा विपिन, रीपेरकशन्स ऑफ ग्लोबलाइजेशन ऑन इंडियन कल्चर, रिसर्चगेट, फरबरी, 2011
3. महापात्र, हितेश, इंडियन कल्चर एंड ग्लोबलाइजेशन, रिसर्चगेट, 2017
4. सिंह, डॉ. महेन्द्र, वैश्वीकरण का समाज पर प्रभाव, इंटरनेशनल जर्नल ऑफ इनोवेटिव रिसर्च इन मल्टीडिसिप्लिनरी फील्ड, वॉल्यूम 1, इशू 3, अक्टूबर 2015
5. झा, शालिनी एवं झा, तृप्ता, वैश्वीकरण: सांस्कृतिक पहचान व संकट, इंटरनेशनल जर्नल ऑफ इनोवेटिव रिसर्च इन मल्टीडिसिप्लिनरी फील्ड, वॉल्यूम 1, इशू 3, अक्टूबर 2015

****

The Impact of De-Colonisation and Post Modernism on the Poetry of Nissim Ezekiel

Dr. Sitaram*

Abstract - Nissim Ezekiel, one of the most notable poets in the Indian English tradition, has published six collection of verse.t and Poetry in India. A renowned critic of Arts and literature, Besides writing poetry, Ezekiel has edited many books and remained active throughout his life His poems have appeared in several journals and he is well represented in many anthologies. He is the most versatile poet in the country. He experiments endlessly with form and craft. The urban theme dominates Ezekiel's poetry. He is a poet of the city Bombay. He does not hesitate to describe the dirt and squalor of the city life. The city reduces human personality to zero. The recurring note in Ezekiel's poetry is the hurt that urban civilization inflicts on modern man. The major themes of his poetry are " Love, personal integration, the Indian contemporary scene, modern urban life and spiritual values.
Keywords: Tradition, form, craft, Urban life, squalor.

Introduction - Nissim Ezekiel as a Postmodern Poet.. Nissim Ezekiel through his poetry shows his skill of high order. He is master in the use of language in his poetry. The poetry of Ezekiel is considered as an important link between pre-Independence and post-Independence Indian poetry. Contemporary poets not only follow him in his writing style but also in the selection of themes. So far as the Indian English poetry is concerned, it is the oldest form in the literature in India. In order to break down the manacles of traditional English poetic theme and style, Indian-English poets have immersed in their own Indian sensibility and their perception regarding the prevailing situations. They expressed their ideas and emotions in a new IndianEnglish style He is considered as the father of postmodern Indian English poetry who has developed great feeling towards his country India, its landscapes and its social milieu. Nissim Ezekiel through his poetry shows his skill of high order. He is master in the use of language in his poetry. The poetry of Ezekiel is considered as an important link between pre-Independence and postIndependence Indian poetry M.K.Naik's view about the poetic technique of Ezeliel is that: "Ezekiel's poetry reveals technical skill of a high order. Except in latter work where his choice .of a• open form sometimes makes for looseness, he has always written verse which is extremely tightly constructed. His mastery of the colloquial idiom is matched by a sure command of rhythm and rhyme . he employs the extended metaphor effectively in poems like "Enterprise".

'Postmodernism' is prominently a broader term which covers an ample variety of disciplines of study such as art, architecture, music, film, literature, fashion, technology etc. In relation to literary studies; it denotes certain extremely experimental works that came into being after World War II. It signifies a way of life, feeling and a state of mind. The most important characteristic trait of the postmodernism is freedom which means that postmodern writers are not bound to any rule for writing. They can write in any style and on any subject. The postmodern writers were influenced by the II world war. Modernism itself was a reaction against the traditional way of writing style. Postmodern features in the poetry of Ezekiel are associated with the theme of playfulness, satire, irony and so on. Such themes are found in the poems 'The Professor' and The Patriot'. Nissim Ezekiel not only used free verse in his poetry but also mixed it with rhymed lines. He wrote his poetry according to his own choice in terms of writing style and subject matter. His poetry shows his love for India. The poem "Night of the Scorpion," is very notable in the study of the Indian content in Ezekiel's poetry, where the poet's mother is stung by a scorpion. This is a typical family situation where the world of superstition and the world of science collide at loggerheads. His poetry collections include A Time to change (1952), Sixty Poems (1953), The Third(1959), The Unfinished Man(1960), The Exact Name(1965), Hymns in Darkness(1976), Latter Day-Pslams (1982).

His Indian sensibility brings a new charm in his poetry. Bruce King says, "His main significance is not, however, as a promoter of poetry; it is in his will to be poet, his continuing involvement in the poetry scene and the ways in which the developing body of his work expresses his quest for a satisfactory way of living in this world.. Nissim Ezekiel's poetry is full of Indianness. 'Background Casually' is one of the biographical poem written by Nissim Ezekiel which shows his loyalty towards India. Some of the lines from the

*Lecturer (English) Swami Vivekanand Govt. College, Khetri, Jhunjhunu (Raj.) INDIA

poem are as under: The Indian landscape sears my eyes I have become part of it The languages of Ezekiel's poems contain a large amount of 'Indian' English. The informal language and the frequent use of present tense is the indication of use of 'Indian English' by the native speakers. Nissim Ezekiel being the founder and father of postmodern Indian English poetry brought revolution with his writing. His poetry is full of Indianness. Postmodern features in the poetry of Ezekiel are associated with the theme of playfulness, satire, irony and so on. Nissim Ezekiel not only used free verse in his poetry but also mixed it with rhymed lines. He wrote his poetry according to his own choice in terms of writing style and subject matter The major themes of his poetry are " Love, personal integration, the Indian contemporary scene, modern urban life and spiritual values. Bombay haunts his imagination: Barbaric City sick with slums, Deprived of seasons, blessed with rains, Its hawkers, beggars, iron-lunged, Processions led by frantic drums A million purgatorial lanes, And child-like masses many tongued, Whose wages are in words and crumbs. Nissim Ezekiel, one of the major poets in Indian English literature, has expressed valuable ideas on literature and life in his letters, critical reviews and interviews. He looks at literature in relation to society. In all his writings Ezekiel stresses the centrality of man in the universe and prefers poetry of statement and purpose.

"Poetic reasonableness" is the soul of poetry. This poetry expresses " a milieu and its culture." Social reality is the recurrent theme of his poetry and appreciated by the critics. As critic and poet, Ezekiel advocates cultural synthesis. In Ezekiel's own writings a noticeable synthesis happens between the Jewish and the Indian., the Western and the Eastern, the Urban and the rural. This synthesis is nicely expressed in Latter Day Psalms: The images are beautiful birds Andcolorful fish: they fly, They swim into my Jewish consciousness. God is a presence here And his people are real. I see their sins. I hear His anger. Literature not only strengthens cultural contacts but it also promotes the understanding of humanity and its future. He says that a poet should be "authentically a creator and not a cultural inheritor. A poet, divorced from his milieu and cultural ethos, cannot create genuine poetry. He carefully avoids "the sophistication of the rootless" and "the parochialism of the native" .In his poetry, he writes I have made my commitment now, This is one: to stay where I am, As others choose to give themselves In some remote and backward place, My backward place is where is where I am. Ezekiel recognizes the primal stuff of which poetry and mysticism are made.
In Morning prayer, Ezekiel prays: Whatever he enigma The passion of the blood Gran me the metaphor To make it human good. Ezekiel's stands for simplicity, clarity, coherence, lucidity and harmony in art and literature. He is opposed to incoherence and confused thinking and expression. He is averse to obscurity in poetry. There is no justification for obscurity in poetry. The complexity of modern life can be beautifully expressed in a simple form. Ezekiel prefers simplicity of thought and language in modern poetry. In rhythm he would aim at using " the natural, he flowing, the direct and the informal or conversational idiom." Ezekiel's simplicity is evident in Poster Poems . Each prayer, emanating from the recesses of his inmost being, finds expression in simple direction, for example: Customer In the shop of the world, Tourist from another planet, Citizen of past and future, Deceiving with appearances, Passing as a human being. Ezekiel denounces poetry as propaganda and he also suspects the bonafides of " versified knowledge." Knowledge in poetry is implicit and inseparable. He emphatically says: ".In the words of K.N Daruwalla, Ezekiel "was the first Indian poet to express a modern Indian sensibility in a modern idiom." Due to bringing modernization to Indian English poetry, his influence has been considerable. . A Time to Change (1952): Poetry, love and marriage, the three major themes in Ezekiel's poetry, are properly dealt with in his very first volume. Ezekiel considers poetry as integral part of life. In " Poetry " he says that poetry is more than a poem. It is elusive and is wedded to life. A poem is an episode, completed In an hour or two, but poetry Is something more. It is the why The how, the what, the flow From which a person comes… A Time to change shows Ezekiel's skill for reconciling the opposites. A Time to Change reveals Ezekiel as a great poet of the future. It does not contain any outstanding poems but the general standards are quite high. The Third (1959): " The Third" marks a decided development in Ezekiel's poetic career and shows greater maturity both in respect of content and technique. He is a mature and thoughtful urban poet who imparts depth of meaning and artistic excellence to his favorite themes—human relationship, love, sex and city life.

In depicting the sordidness, ugliness, inhumanity, loneliness and frustration of urban life Ezekiel is matchless. Bombay is a symbol of urban life. The poet expresses the drabness and misery in the widest commonality spread through vivid, beautiful, apt and suggestive symbols and images. "Urban",and " Morning Walk" objectively express the unhappy experiences the poet personally felt in Bombay. In " Urban" the pot bewails how he lost contact with nature in Bombay: At dawn he never sees the skies Which, silently, are born again. Nor feels the shadows of the night Receive their fingers as his eyes. He welcomes neither sun nor rain, His landscape has no depth or height. A man is damned in that domestic game. " Enterprise" is a symbolic statement of the efforts, failures and frustrations of human life on earth. In these poems Ezekiel cultivates impersonality, objectivity and detachment. He skillfully universalizes the personal. To achieve impersonality he uses certain devices—the use of a person, and the use of the third person to describe that person is one of them. This device has been effectively used in " Urban" and " A Morning Walk". The use of the first person "I" in " Case Study" and " Love Sonnet" imparts immediacy of purpose .

In The Exact Name Ezekiel shows unsurpassable

ability of making poetry out of the ordinary and the common place. He has attained his authentic voice, and this gives new strength to his poetry. He substantially succeeds to elevate the commonplace to the poetic The universe is much too small to hold Your longing for a lover and a child. " Night of the Scorpion", one of Ezekiel's finest lyrics in a deeply moving poem that has often been anthologized and written about.

References:-

1. Ezekiel, Nissim: The Sixties, Span, Sept. 1971 P.9
2. "Poetry as Knowledge", Quest, May-June 1972,p.44
3. "To Poets: A.K.Ramanujan and K.N.Daruwalla." The Illustrated Weekly of India, June 18,1972, p.43
4. "Poetry as Knowledge" Quest,May-June 1972,p.43
5. "Ideas and Modern Poetry", Indian Writers in Conference, 1964,p.54
6. Eliot.T.S: A Personal Review, Quest No.45 April-June 1965,p.18-1977
7. Iyengar, Srininivasa. K.R : Indian Writing in English, 1985 p.660

****